नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं

(अध्यात्मयोगी, युगमनीषी आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म सा. का जीवन, दर्शन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं

(अध्यात्मयोगी, युगमनीषी आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा का जीवन, दर्शन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

सम्पादक

डॉ धर्मचन्द जैन

एसोशिएट प्रोफेसर, सस्कृत–विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

सम्पादक-मण्डल

डॉ मंजुला बम्ब

ज्ञानेन्द्र बाफना

प्रसन्नचन्द बाफना

डॉ सुषमा सिघवी

प्रकाशक

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

एवं

ऑल इण्डिया जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ पारमार्थिक ट्रस्ट

नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं

(अध्यात्मयोगी, युगमनीषी आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म सा का जीवन, दर्शन, व्यक्तित्व एव कृतित्व)

प्रकाशक

1 अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ
घोडो का चौक, जोधपुर--342001, फोन एव फैक्स-- 2636763, 2641445

2 ऑल इण्डिया जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ, पारमार्थिक ट्रस्ट
10--साजन नगर, (चितावद), इन्दौर--452001,
फोन न 2400121--122--123

अन्य प्राप्ति-स्थान

1 सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर--302003, फोन न 2565997

2 गजेन्द्र निधि ट्रस्ट-- 2 ए, किताब महल, प्रथम माला, 192, डॉ डी एन रोड मुम्बई--400001
फोन न 22071581--82

3 ऑल इण्डिया श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ ट्रस्ट कालाथी पिल्लई स्ट्रीट, साहुकार पेट
चेन्नई--600079, फोन न 25293001, 25297822

4 श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, गणपति नगर, जलगाव (महा) 425001
फोन न 2232315

5 श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय सघ, 3 / 356, विराट नगर, जेल के पीछे, बजरिया, सवाईमाधोपुर
फोन न 222147

6 कर्नाटक जैन स्वाध्याय सघ, 61--नगरथ पेठ, बैंगलोर
फोन न 22212381

7 मोतीलाल बनारसीदास, बगलो रोड जवाहर नगर, दिल्ली--110007

[illegible] दो सौ पचास रुपये

प्रथम संस्करण जोधपुर 2003

प्रतियोगिता हेतु प्रथम [illegible]
संयुक्त मूल्य [illegible]

[illegible] जे के कम्प्यूटर, जालोरी गेट, जोधपुर, मोबा 3117670

मुद्रण व्यवस्था श्री जैनेन्द्र प्रेस, ए--45, नारायणा, फेज--1, नई दिल्ली--110028
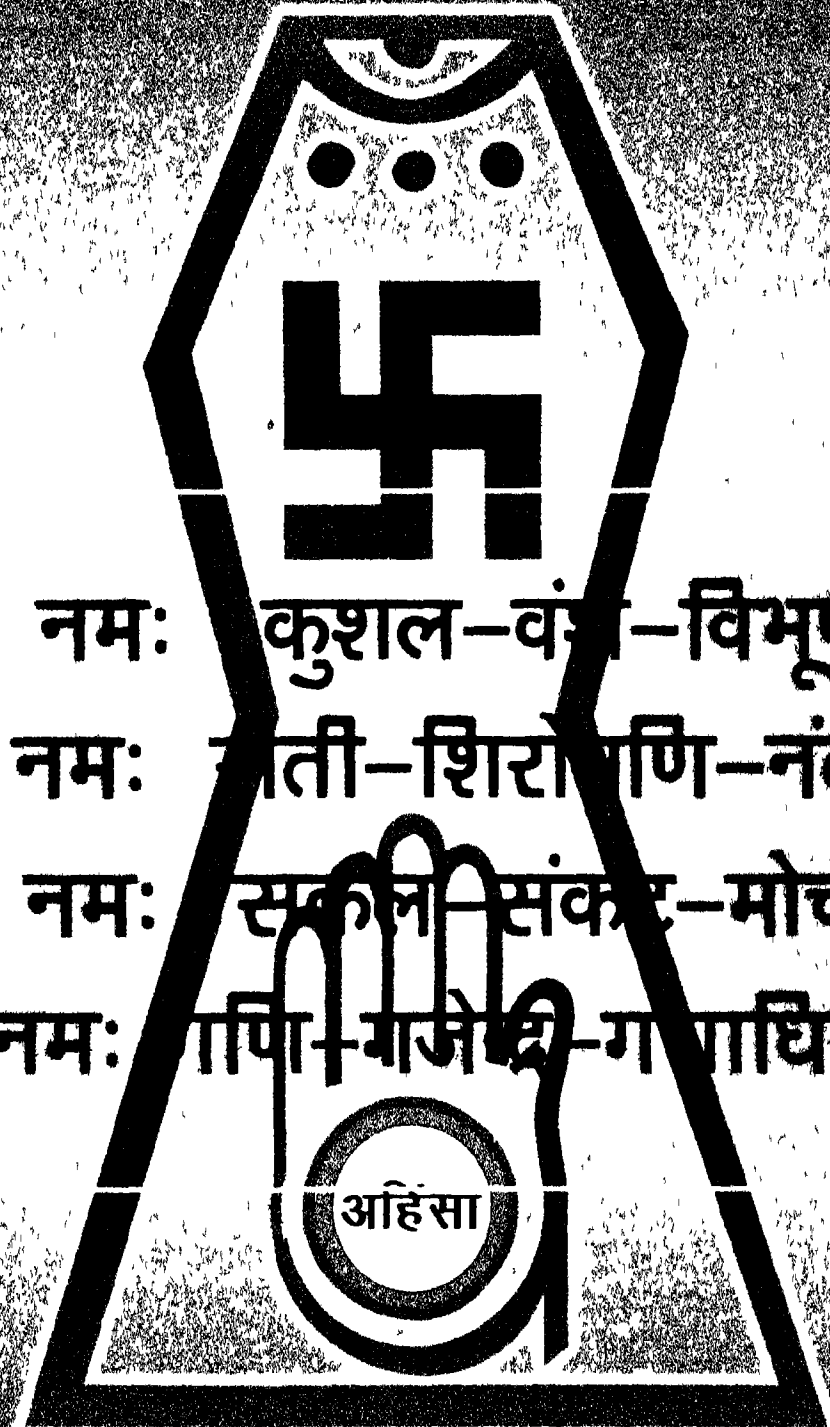
तुभ्यं नमः कुशल-वंश-विभूषणाय,
तुभ्यं नमः मोती-शिरोमणि-नंदनाय।
तुभ्यं नमः सकल-संकट-मोचकाय,
तुभ्यं नमः [illegible]ापि-गजेन्द्र-गणाधिपाय।।

अहिंसा

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

प्रकाशकीय

अध्यात्मयोगी, युगमनीषी, युगप्रभावक, युगप्रधान आचार्यप्रवर परमाराध्य गुरुदेव पूज्य 1008 श्री हस्तीमल जी म.सा के चिरप्रतीक्षित जीवन चरित्र 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीण' को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए अतीव प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

चारित्र चूडामणि, इतिहास मार्तण्ड, अखंड बाल ब्रह्मचारी आचार्य भगवन्त श्रमण भगवान महावीर की श्रमण परम्परा के ज्योतिर्मान नक्षत्र एव रत्न सघ परम्परा के देदीप्यमान भुवन भास्कर थे। मात्र साढे पन्द्रह वर्ष की वय मे आचार्य पद पर मनोनयन, उन्नीस वर्ष की वय मे आचार्य पद-आरोहण, इकसठ वर्ष तक संघ के दायित्व का निर्मल-सफल निर्वहन, जीवन की साध्य वेला मे सथारापूर्वक सजग समाधिमरण आपके जीवन के भव्य कीर्तिमान हैं, जो श्रमण भगवान महावीर की पट्ट परम्परा मे आपका यशस्वी नाम स्वर्णिम अक्षरो मे अकित करने मे सक्षम हैं। सामायिक और स्वाध्याय आपकी अमर प्रेरणाएँ है। स्मितमुस्कानयुक्त आनन, ब्रह्मतेज से दीप्त नयन, अप्रमत्त दिनचर्या, प्राणिमात्र के प्रति मैत्री एव करुणा, गुणियो के प्रति प्रमोदभाव, विपरीत परिस्थितियो मे भी माध्यस्थ भाव, ज्ञान-क्रिया से अद्भुत सम्पन्नता आदि आपके जीवन की मौलिक विशेषताएँ है। आप पद से नहीं, वरन् पद आपसे सुशोभित हुए, आप भक्तों से नहीं वरन् भक्तजन आपसे गौरवान्वित हुए।

ऐसे इतिहास मार्तण्ड, जन-जन की आस्था के केन्द्र ज्योतिपुज आचार्य भगवन्त का वि स 2048 वैशाख शुक्ला 8 दिनाक 21 अप्रेल 1991 को जब सथारापूर्वक महाप्रयाण हुआ तो समूचा सघ ही नहीं जैन एव जैनेतर जगत् स्तब्ध रह गया। कई पीढियो के गुरुदेव को लाखो भक्तो ने बचपन से ही हृदय केन्द्र मे बसा रखा था, अत जीवन पर्यन्त सचित स्मृतिया सहज ही उनके स्मृतिपटल पर उभर उठीं। साथ ही भक्त जन-मानस मे यह भावना जगी कि इन महापुरुष के जीवन के सस्मरणो, घटनाओ, विशेषताओ, आचार सबधी आदर्शो, प्रेरक प्रसगो को पढकर यह पीढी प्रेरणा ग्रहण कर अपने जीवन का निर्माण कर सके तथा आगामी पीढी के लिए विरासत के रूप मे सुरक्षित सौप सके, इस उद्देश्य से उनका पावन जीवन-चरित्र लिपिबद्ध किया जाय।

सघ के कार्यकर्त्ताओ को भी यह प्रस्ताव सहज ग्राह्य लगा। एतदर्थ प्रयास भी प्रारम्भ हुए। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के माध्यम से दो विशेषाङ्क प्रकाशित हुए- 'आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म. सा श्रद्धाजलि विशेषाङ्क' (सन् 1991) एव 'आचार्य श्री हस्ती व्यक्तित्व एव कृतित्व विशेषाङ्क'(सन् 1992)। 'झलकियाँ जो इतिहास बन गई' पुस्तक भी प्रकाश मे आई, जिसमे पूज्य गुरुदेव के जीवन के प्रेरक-प्रसग सकलित है।

विदुषी बहिन डॉ मजुला जी बम्ब ने भी महासाधक के जीवन की कडियो को सूत्रबद्ध कर ग्रन्थ का आधार बनाया। उनका यह प्रयास सराहनीय था। 'श्रेयासि बहु विघ्नानि'। उसके अनन्तर कतिपय प्रयासो के बावजूद भी कार्य अपेक्षित गति नहीं पकड पाया। इन प्रयासो की गति व प्रगति से सघ समुदाय सतुष्ट नहीं था। अ भा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ की बैठको मे सघसदस्यो ने अपनी तीव्र भावावेशित भावनाएँ भी समय-समय पर सघ के कार्यकर्ताओ के समक्ष प्रस्तुत की व कार्य मे हो रही देरी हेतु उपालम्भ भी दिये।

अतत सबकी भावना व राय यही रही कि यह लेखन मनीषी लब्धप्रतिष्ठ जैन विद्वान्, परमपूज्य गुरुदेव के अनन्य श्रद्धालु भक्त डॉ धर्मचन्द जैन को सौपा जाय। साथ ही इस कार्य-व्यवस्था को सयोजित करने तथा डॉ धर्मचन्द जी जैन को अभीष्ट सहयोग प्रदान करने, सघ व कार्यकर्ताओ से सम्पर्क-समन्वय रखने हेतु ''आचार्य हस्ती जीवन चरित्र प्रकाशन समिति'' के नाम से सघ के तत्त्वावधान मे एक समिति गठित कर

उसके अध्यक्ष का दायित्व मुझे सौपने का निर्णय लिया गया। मै किकर्तव्यविमूढ था। मै सघ मे सगठन का व्यक्ति रहा हूँ, प्रकाशन का मुझे कोई अनुभव नहीं था, फिर भी पीपाड मे मनोनीत सघाध्यक्ष माननीय श्री रतनलाल जी बाफना व सघ कार्यकर्ताओ का आदेश शिरोधार्य था। लेखन-सम्पादन कार्य डॉ धर्मचन्द जैन द्वारा स्वीकार किये जाने से मन मे सतोष व विश्वास अवश्य था कि पूज्यपाद के कृपा प्रसाद के सबल व विद्वान् सम्पादक साथी के सहयोग से मै इस परीक्षा मे अवश्य उत्तीर्ण हो पाऊँगा।

कार्य नये सिरे से प्रारम्भ हुआ। डॉ धर्मचन्द जी जैन की भावना थी कि रत्नवश पट्ट परम्परा, महापुरुषो का परिचय आदि कुछ आलेख मै लिखकर उनका सहयोग करूँ। महामनीषी महापुरुष के महनीय व्यक्तित्व व कृतित्व को शब्दो मे अभिव्यक्त करना सभव नहीं। प्रचार-प्रसार की भावना से कोसो दूर उन महापुरुष के जीवन बिन्दुओ का सहज सकलन भी उपलब्ध नहीं था। प्रामाणिकता का ध्यान रखना आवश्यक था। अत भगवन्त की दैनन्दिनियो का अवलोकन कर उन कडियो को सूत्रबद्ध करना था। न चाहते हुए भी हुई देरी का यह प्रमुख कारण रहा। तथापि मुझे हृदय से यह स्वीकार करने मे कोई सकोच नहीं है कि दीर्घ अवधि तक मैं इस दायित्व हेतु अपेक्षित समय नहीं दे पाया, इससे भी कार्य मे विलम्ब होता गया। सघ सदस्यो की भावनाएँ भी आहत हुई और मुझे समय-समय पर उनके द्वारा उपालम्भ भी मिले। कडवी दवा जीवनदायिनी होती है, सघ सहयोगियो के उपालम्भ के प्रसाद से मेरे मन मे भी एक चुनौती का भाव जगा व अपेक्षित समय, श्रम व सहयोग की भावना जगी। मै तत्परता से इस कार्य मे सन्नद्ध हो गया और आज कार्य की पूर्णता देखकर मन मे प्रमोद है। अस्तु यह कार्य- सम्पन्नता भी उन्हीं पूज्यपाद की कृपा का ही प्रसाद है। मै अपने आपको अत्यत सौभाग्यशाली समझता हूँ कि अबोध बाल्यकाल से ही उन श्रीचरणो मे बैठने का सौभाग्य मिला। जीवन मे जो कुछ पाया, यत्किचित् सघसेवा का जो लाभ ले पाया, वह परमाराध्य गुरुदेव के मगल आशीर्वाद का ही सुफल है।

मै भाई डॉ धर्मचन्द जैन के अमूल्य सहयोग का हृदय से कृतज्ञ हूँ। उन्होने अपनी विविध शैक्षिक गतिविधियो को गौण कर इस कार्य को सम्पन्न किया है। प्रत्यक्ष दायित्व न होने पर भी भाई प्रसन्नचन्द जी बाफना ने आगे होकर न केवल मेरा मार्गदर्शन किया, अपितु सम्पूर्ण ग्रन्थ का आद्योपान्त अवलोकन कर भाव, भाषा एव तथ्य की दृष्टि से भी परिष्कार सबधी अमूल्य सुझाव दिए। समूचे कार्य मे सहज कर्त्तव्यभावना से निष्ठा के साथ प्रदत्त उनकी सहभागिता के प्रति आभार व्यक्त करना अपना कर्त्तव्य मानता हूँ।

परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म सा , मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म सा एव शासनप्रभाविका श्री मैनासुन्दरीजी म सा के सान्निध्य मे बैठकर पूज्य चरितनायक के जीवन प्रसगो, सस्मरणो, उपदेशो, घटनाओ आदि के सबध मे सैद्धान्तिक विचार-विमर्श करने से अनेक अमूल्य सुझाव प्राप्त हुए। जिनसे जीवन-ग्रथ मे प्रामाणिकता एव निर्दोषता मे अभिवृद्धि हुई है। एतदर्थ हम पाठकवृन्द की ओर से भी आचार्यप्रवर, सन्तप्रवर एव शासनप्रभाविका जी के चरणो मे कोटिश वन्दन करते हुए हृदय से कृतज्ञता स्वीकार करते है।

'नमो पुरिसवरगधहत्थीण' ग्रन्थ मे इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि कोई भी घटना तथ्य विपरीत न हो। ग्रन्थ को प्रामाणिक बनाने का पूरा प्रयास किया गया है। चामत्कारिक घटनाओ पर भी यथासभव विराम लगाया गया है। ज्ञान, दर्शन एव चारित्र को पुष्ट करने वाली घटनाओ, प्रसगो, तथ्यो आदि को प्राथमिकता दी गई है। अनेक भावुक भक्तो के भावप्रवण सस्मरणो को एतदर्थ छोडना भी पडा है। उनसे हम क्षमाप्रार्थी है। जो भी तथ्य उपलब्ध हुए है, उन्हे ही ग्रन्थ मे सयोजित किया जा सका है। महासाधक के

जीवनवृत्त के कई प्रसग अनुपलब्ध होने से ग्रन्थ के भाग नहीं बन सके है, आशा है इसे भक्तजन अन्यथा नहीं लेगे।

अनेक उदारमना श्रद्धानिष्ठ गुरुभक्त श्रावक इस प्रकाशन मे सहयोगी बनने के इच्छुक थे। कइयो की भावना थी कि सम्पूर्ण प्रकाशन का लाभ उन्हे ही दिया जाय, किन्तु विचारोपरान्त यही उचित समझा गया कि विराट् व्यक्तित्व के जीवन-चरित्र के प्रकाशन-सहयोग का लाभ अधिकाधिक भक्तो को मिल सके। इस दृष्टि से अनेक नाम प्रकाशन-योजना मे सम्मिलित हुए है। हम सबके प्रति आभार ज्ञापित करते है। अर्थ-सहयोगियो की नामावली आकारादि क्रम से ग्रन्थ के अन्त मे दी जा रही है।

विदुषी बहिन डॉ सुषमा जी सिघवी, श्री लक्ष्मीकान्त जी जोशी, श्री पुखराज जी मोहनोत, डॉ महेन्द्रकुमार जी भानावत, श्री सरदारचन्द जी भण्डारी, श्री नेमीचन्द जी बोथरा, श्री नौरतन जी मेहता श्री धर्मचन्द जी जैन-रजिस्ट्रार, सुश्री मीना जी बोहरा, सुश्री श्वेता जी जैन एव श्री जितेन्द्र जी जोशी आदि सभी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोगीगण का मै हृदय से कृतज्ञ हूँ। श्री नरेद्र प्रकाश जी जैन (मैसर्स मोतीलाल बनारसीदास) नई दिल्ली ने रुचिपूर्वक ग्रन्थ का मुद्रण कार्य सम्पन्न कराया है, एतदर्थ उनका भी धन्यवाद ज्ञापित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

पूज्य आचार्य भगवन्त का जीवन-ग्रन्थ 'नमो पुरिसवरगधहत्थीण' आपके कर-कमलो मे है। आप इसका रसास्वादन करे एव अपने जीवन को सफलीभूत करे, यही शुभ भावना है।

-ज्ञानेन्द्र बाफना
अध्यक्ष
आचार्य श्री हस्ती जीवन चरित्र प्रकाशन समिति, जोधपुर

आषाढ शुक्ला चतुर्दशी
१२ जुलाई २००३

सम्पादकीय

महापुरुषो का जीवन जनसाधारण एव साधक–जनों के लिए स्पृहणीय, प्रेरक एव मार्गदर्शक होता है। इसीलिए उनके जीवन–दर्शन और व्यक्तित्व की चर्चा की जाती है। किन्तु महापुरुष जैसा जीवन जीते है, उसे दूसरा कोई पूर्णत न तो जान पाता है और न ही उसे समझ पाता है। दूसरा तो केवल बाह्य क्रियाओ को देखकर उनकी महत्ता का अनुमान करता है। बाह्य क्रियाओं से अन्तरग विचारो, मूल्यो और भावनाओं का सम्यक् आकलन हो पाना कठिन है। इसीलिए किसी महापुरुष या महामनस्वी का जीवन तब तक सम्यक् रूपेण चित्रित करना सभव नहीं, जब तक कि उनके जैसे आध्यात्मिक, वैचारिक एव आचरण सबधी मूल्यो को आत्मसात् न कर लिया जाय।

मानतुगाचार्य ने प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की स्तुति करते हुए कहा है–

वक्तु गुणान गुणसमुद्र शशाककान्तान्।
कस्ते क्षम सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या॥

उनका यह कथन अध्यात्मयोगी, उच्चकोटि के साधक, युगमनीषी आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा के गुणवर्णन के सबध मे भी उचित ही प्रतीत होता है। गुणसमुद्र आचार्यप्रवर के गुणो का कथन करना अथवा उनकी जीवनी का लेखन करना मेरे जैसे अल्पज्ञ के लिए तो कदापि सभव नहीं। दूसरी बात यह है कि गुण अमूर्त होते है। अमूर्त गुणो का स्थापन मूर्त शब्दो से नहीं किया जा सकता। किन्तु शब्दो की अपनी महत्ता होती है। सस्कृत के महाकवि दण्डी का कथन है–

इदमन्धतम सर्वं जायेत भुवनत्रय
यदि शब्दाह्वय ज्योतिरासंसारान्न दीप्यते॥

यदि शब्दरूपी ज्योति इस ससार मे दीप्त न हो तो तीनो लोक अन्धकारमय हो जाएँ, क्योकि मानव को उनके सबध मे जानकारी शब्दो से होती है। इसीलिए अमूर्त गुणो एव उच्च कोटि के साधक जीवन को यत्किंचित् समझने में सहायक जानकर शब्दो का आश्रय लिया जाता है। जैन दर्शन मे शब्द पुद्गल माने गए है, किन्तु वे भी प्रेरक निमित्त बनकर मूढ साधक को साधना मे अग्रसर कर सकते है। इसी चिन्तन के साथ आचार्यप्रवर के जीवन, दर्शन, व्यक्तित्व और कृतित्व को शब्दो मे निबद्ध करने का किंचित् प्रयास किया गया है।

मै उस समय असमजस की स्थिति मे आ गया, जब अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ, जोधपुर के तत्कालीन सघाध्यक्ष माननीय श्री मोफतराजजी मुणोत ने पीपाड मे समायोजित 10 से 12 अक्टूबर सन् 1997 की कार्यकारिणी बैठक मे मुझे युगमनीषी, चारित्रनिष्ठ, करुणानिधान, अध्यात्मयोगी, महामनस्वी आचार्यप्रवर पूज्य 1008 श्री हस्तीमल जी म सा की जीवनी का कार्य पूर्ण करने का आदेश दिया। मै अपनी क्षमताओ की सीमा से परिचित था, इसलिए मैंने अपनी असमर्थता भी प्रकट की, किन्तु उनके अगाध स्नेह एव कार्यकारिणी सदस्यों के आग्रह के आगे मेरी आवाज बेअसर रही। मै सोचता रहा कि न तो मेरा कोई आध्यात्मिक स्तर है, न मै पूज्य गुरुदेव जैसे महनीय व्यक्तित्व को समझने और उसे भाषा मे उकेरने का सामर्थ्य रखता हूँ। यह वास्तव में मेरे लिए इसलिए भी कठिन है, क्योकि न तो लच्छेदार भाषा का प्रयोग मेरे स्वभाव मे है, और न ही इस प्रकार की कृति के निर्माण का मुझे कोई अनुभव है। मै अपना सौभाग्य समझता हूँ कि प्रतिभासम्पन्न, समर्पित सघसेवी सघ के पूर्व महामत्री एव पूर्व उपाध्यक्ष मेरे अग्रज भाई श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना को संघाध्यक्ष माननीय श्री रतनलाल जी बाफना ने 'आचार्य श्री हस्ती जीवन चरित्र प्रकाशन समिति' का अध्यक्ष मनोनीत कर दिया। इससे मुझे राहत का अनुभव हुआ। अब दायित्व की चिन्ता कुछ कम हो गयी। कतिपय माह

निकलने के पश्चात् आदरणीय भाई श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना से पृच्छा करने पर उन्होने स्पष्ट किया– ''इस जीवनी रूपी रथ के सारथि तो आप ही है। मै तो उसमे सहयोग की भूमिका अदा करूँगा।''

पुन सामग्री के अध्ययन मे सलग्न हो गया एव कुछ लेखन भी प्रारम्भ किया। तभी इस कार्य को गति प्रदान करने के लिए भाई श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना के सुझाव से मैं आदरणीया विदुषी बहिन डॉ सुषमा जी सिंघवी के परामर्श, लेखन–सहयोग आदि के लिए उदयपुर गया। उदयपुर मे उनके घर पर रहकर जो कार्य हुआ वह निरन्तर आगे बढ़ता गया। डॉ सुषमा जी, उनके पति महेन्द्र जी सिघवी (अब स्वर्गस्थ) का आत्मीय भाव मैं जीवन मे कभी नहीं भुला सकता।

जीवनी लेखन का कार्य प्रभूत समय एव श्रम की अपेक्षा रखता था। जिनवाणी पत्रिका के सम्पादन–कार्य एव विश्वविद्यालय मे शिक्षण–कार्य के अनन्तर माह मे जो भी समय मिलता उसे मैं 'नमो पुरिसवरगधहत्थीण' ग्रन्थ के कार्य मे अर्पित करता रहा। बूँद– बूँद से घट भरने लगा, किन्तु कार्य की विशालता समुद्र के समान प्रतीत होती रही। विभिन्न लेखको द्वारा पूर्व मे लिखी गई सामग्री का अवलोकन, उसके आधार पर लेखन एव पूज्य आचार्यप्रवर की दैनन्दिनियो से उसका प्रमाणीकरण आदि कार्य गति पकड़ने लगे।

भक्ति एव तर्क दो विरोधी पक्ष है। इनका समन्वय मेरे लिए सदैव चुनौती का कार्य करता रहा। दर्शन का विद्यार्थी होने के कारण प्रत्येक घटना एव प्रसग को तर्क की कसौटी पर कसता, तो लेखन का प्रवाह अवरुद्ध हो जाता और जब भक्तिभाव में डूबता तो भी तर्क आकर लेखन की गति मे बाधक बन जाता। मुझे लगा जीवनी लेखन का कार्य शुद्ध भक्तिप्रवण व्यक्ति के द्वारा शीघ्र सम्पन्न हो सकता है, किन्तु उत्तरदायित्व जो ग्रहण कर लिया, उसका निर्वाह करना कर्त्तव्य था।

पूज्य आचार्यप्रवर की मुझ पर महती कृपा थी। श्री वीर जैन विद्यालय, अलीगढ़ (टोक) के छात्र के रूप मे फरवरी सन् 1968 मे मैने उनके प्रथम दर्शन किए। विद्यालय के सब छात्र रैली बनाकर महामनीषी पूज्य चरितनायक की अगवानी मे उखलाना ग्राम गये थे। तेजस्वी स्मितवदन, शान्ति एवं सौहार्द की शिक्षा देते उत्थित दक्षिण हस्त और महान् सन्त के रूप मे प्रसृत आपकी कीर्ति ने उसी समय आकर्षित कर लिया था। फिर श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण सस्थान मे अध्ययनरत रहते हुए पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य मे जो प्रेरणा मिलती उससे जीवन का सहज विकास होता गया। सस्कृत, प्राकृत एव जैन तत्त्वज्ञान के बोध हेतु आपसे सदैव प्रेरणा मिलती। अलवर, झालावाड एव भरतपुर के महाविद्यालयो में अध्यापन करते समय तथा जयपुर मे शोधकार्य मे सलग्न रहते समय आपके पावन सान्निध्य का जब भी सुयोग मिला, आपने आत्मीय भावपूर्वक आगे बढने की प्रेरणा की। वे शब्द आज भी मेरी स्मृतिपटल पर है, जब पूज्यप्रवर ने जिनवाणी के सम्पादक डॉ नरेन्द्र जी भानावत से कहा था– ''इसे अपने साथ जोडकर चलना।'' आज मै अपना अहोभाग्य मानता हूँ कि उन पूज्यवर्य गुरुदेव के जीवनवृत्त का किचित् रेखाकन करने मे निमित्त बन सका हूँ। इस कार्य मे मुझे अतुल आनन्द की अनुभूति हुई है तथा श्रम एव समय की आहुति को सार्थक मानता हूँ।

परम पूज्य गुरुदेव का यह जीवन ग्रन्थ 'नमो पुरिसवरगधहत्थीण' चार खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड 'जीवनी–खण्ड' इस ग्रन्थ का मुख्य भाग है, जिसमें अध्यात्मयोगी महापुरुष के जीवन का अथ से इति तक 25 अध्यायो मे प्रामाणिक चित्रण किया गया है। प्रथम अध्याय 'तेण कालेणं तेण समएण' में रत्नसंघ की आचार्य–परम्परा एव तत्कालीन प्रभावक सन्तो के गरिमामय व्यक्तित्व का वर्णन है। द्वितीय अध्याय 'जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे पीपाडनगरे' मे पीपाड नगर के प्रतिष्ठित बोहरा परिवार पर हुए दुस्सह वज्रपात, चरितनायक के जन्म, शिक्षा आदि के साथ माता के वैराग्य, ननिहाल पर कहर, सन्त–सतियो के प्रभाव, वैराग्य–पोषण, शिक्षा गुरु

स्वामी जी श्री हरकचन्द जी म सा एव आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा की सेवा मे चरितनायक एव माता रूपादेवी की दीक्षा–भावना का निरूपण है। तृतीय अध्याय में चरितनायक की पावन दीक्षा का, चतुर्थ अध्याय मे सवत् 1977 से सवत् 1983 तक पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा की सेवा मे रहकर श्रमणाचार के अभ्यास एव अध्ययन मे प्रौढता अर्जन के साथ सघनायक के रूप में चयन का वर्णन है। पचम अध्याय में आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा के स्वर्गारोहण के अनन्तर स्वामी जी श्री सुजानमल जी म सा के सघ–व्यवस्थापत्व एव स्वामी जी श्री भोजराज जी म सा के परामर्शदातृत्व काल (सवत् 1983–1987) के कार्यों का निरूपण हुआ है। षष्ठ अध्याय मे चरितनायक के आचार्य पद–आरोहण, सप्तम अध्याय मे उनके विहार एव चातुर्मासो के महत्त्व, अष्टम अध्याय मे सघनायक बनने के पश्चात् प्रथम चातुर्मास (सवत् 1987) का वर्णन है। इसके पश्चात् के नवम से लेकर चौबीसवे अध्याय तक सवत् 1988 से 2047 तक के विभिन्न चातुर्मासो एव विचरण–विहार का उपलब्धियो एव प्रमुख घटनाओ के साथ उल्लेख किया गया है। इन अध्यायो मे अजमेर साधु–सम्मेलन, सादडी सम्मेलन, सोजत सम्मेलन एव भीनासर सम्मेलन मे आचार्यप्रवर की भूमिका को रेखाकित करने के साथ विभिन्न सम्प्रदायो के सन्त–वरेण्यो के साथ मधुर–मिलन के प्रसगो को स्थान दिया गया है। उन्नीसवाँ अध्याय आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा की दीक्षा शताब्दी एव चरितनायक की दीक्षा अर्द्धशती पर हुए तप–त्याग के उल्लेख से समन्वित है। पच्चीसवाँ अध्याय पाली से निमाज पदार्पण एव तप–सथारापूर्वक महाप्रयाण साधना का सक्षिप्त दस्तावेज है।

द्वितीय खण्ड मे आचार्यप्रवर के दर्शन एव चिन्तन को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यह खण्ड दो अध्यायो मे विभक्त है। प्रथम अध्याय 'अमृत वाक्' मे आचार्यप्रवर के आध्यात्मिक, साधनाशील एव उर्वर मस्तिष्क मे उदित विचारो को सकलित किया गया है। आपके प्रवचन–साहित्य एव दैनन्दिनियो से चयनित ये विचार जन–जन के लिए मार्गदर्शक है तथा किकर्तव्यविमूढ और उलझे हुए मस्तिष्क को सम्यक् समाधान प्रदान करते है। अल्प शब्दो मे गहन गम्भीर भावो से भरे ये विचार अज्ञान रूपी अधकार मे भटके मोक्ष पथिक के लिए ज्योति–स्तम्भ की भाति सन्मार्ग का बोध कराते है तथा पाठक के भीतरी विकारो को दग्ध कर आन्तरिक आनन्द की अनुभूति कराने मे सक्षम है। एक–एक वचन अमृततुल्य होने के कारण इस अध्याय का नामकरण 'अमृत वाक्' किया गया है। अध्यात्म एव साधना के शिखर का स्पर्श कर लेने वाले वे महात्मा यदि स्वय अमृत वचनो का सुव्यवस्थित रीति से लेखन करते तो इन वचनो की सख्या और गुणवत्ता दोनो मे अधिक निखार आ सकता था।

इस खण्ड के द्वितीय अध्याय 'हस्ती उवाच' मे 129 विषयो पर पूज्यपाद आचार्यप्रवर के मार्गदर्शक एव प्रेरक विचारो का सकलन किया गया है। विचारो के इन विषयो का प्रस्तुतीकरण अकारादि क्रम से किया गया है। इनमे दर्शन, अध्यात्म, साधना, जीवन–निर्माण, समाज–सुधार आदि अनेक विषयो पर प्रकाश प्राप्त होता है। स्वाध्याय और सामायिक पूज्यप्रवर की प्रेरणा के प्रमुख विषय रहे है। प्रार्थना, भक्ति या स्तुति पर आपके मौलिक विचार हर भक्त या स्तुति–कर्ता को लौकिक कामनाओ के मायाजाल में भटकने से बचाते है। आपने बालक–बालिकाओ मे सस्कार, नारी–शिक्षा, युवक जागरण आदि जन–कल्याण के विषयो के साथ आत्मशक्ति, अनासक्ति, वैराग्य, ज्ञान, वीतरागता, सम्यक्त्व, आचरण, तप, ध्यान, प्रतिक्रमण, पर्युषण, परिग्रह–परिमाण, साधक–जीवन आदि आध्यात्मिक एव साधनापरक विषयो पर सुन्दर विचार प्रकट किए है। दार्शनिक विषयो पर भी आपका चिन्तन स्पष्ट एव व्यवस्थित है। अनेकान्तवाद–स्याद्वाद, कर्मवाद, कार्य–कारण सिद्धान्त, द्रव्य और पर्याय आदि विषयो पर उद्भूत आपके विचार इसके साक्षी है। श्रावको एवं श्रमणो दोनो को

अपनी साधना मे आगे बढाने हेतु आपने अमूल्य पाथेय एव ज्ञानचक्षु का उन्मीलन करने वाली औषधि प्रदान की है। आपने सामाजिक कुरीतियो एव अन्धविश्वास पर भी करारी चोट की है तथा स्वाध्याय और सामायिक को जीवन–निर्माण एव जीवन उन्नयन हेतु आवश्यक प्रतिपादित किया है। आपके विचारो को पढकर पाठक को निश्चित ही अंधी मान्यताओं के मकडजाल से निकलने की एव उच्च लक्ष्य को लेकर धर्म–साधना मे प्रवृत्त होने की प्रेरणा प्राप्त होगी।

तृतीय खण्ड चरितनायक के महान् व्यक्तित्व पर प्रकाश डालता है। आपके व्यक्तित्व पर इस ग्रथ के आमुख एव जीवनी खण्ड के अतिम अध्याय 'अध्यात्म योगी महाप्रयाण की ओर' मे सथारा और समाधिमरण के प्रसग पर सत–महापुरुषो के द्वारा प्रेषित सदेशो मे भी कुछ विचार गुम्फित हुए है, किन्तु सतो, महापुरुषो एव भक्त श्रावको के जीवन विकास मे आपके योगदान एव उनके हृदय मे आपकी छवि के दर्शन इस खण्ड के अग्राकित दो स्तबको मे परिलक्षित होते है– 1 सस्मरणो मे झलकता व्यक्तित्व 2 काव्याजलि में निलीन व्यक्तित्व। प्रथम स्तबक गद्य मे है तथा द्वितीय स्तबक पद्य मे है। आचार्यप्रवर के व्यक्तित्व की विशेषताएँ इन स्तबको के माध्यम से नव्य शैली मे प्रकट हुई है। आपके व्यक्तित्व पर सीधा लेख आमन्त्रित करने की अपेक्षा प्रथम स्तबक मे सस्मरणो को स्थान दिया गया है। सस्मरण लेखक की चेतना से सीधे जुडे रहते है, जिन्हे पढकर पाठक गुणसमुद्र आचार्यप्रवर की विशेषताओ का स्वय आकलन कर सकता है। वैसे तो सम्पूर्ण ग्रन्थ ही आपके व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करता है, किन्तु इन सस्मरणो मे जो सहज एव अनुभूत अभिव्यक्ति हुई है, उससे पाठक की श्रद्धा चरितनायक के गुणो के प्रति स्वत उमडती है। घटनाओ के माध्यम से पाठक को चरितनायक के गुणो का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। गजेन्द्रगणिवर एव आचार्य हस्ती के नामो से विश्रुत चरितनायक के व्यक्तित्व की विभिन्न विशेषताएँ इन सस्मरणो मे अभिव्यक्त हुई है। आचार्यप्रवर हस्ती एक महान् अध्यात्म योगी, उच्च कोटि के चारित्रनिष्ठ साधक सत, गहन विचारक एव युगमनीषी सत थे। आपकी इन विशेषताओ के अतिरिक्त इन स्तबको मे निस्पृहता, अप्रमत्तता, उदारता, करुणाभाव, गुणियो के प्रति प्रमोदभाव, वचनसिद्धि, भावि द्रष्टृत्व, चारित्र पालन के प्रति सजगता, आत्मीयता, असीम आत्म–शक्ति, विद्वत्ता, पात्रता की परख, दूरदर्शिता आदि अनेक गुणो का बोध होता है। सस्मरणो को पढते समय भक्त–हृदय मे आपकी गहरी पेठ एव उसके मनोभावो को बदलने की क्षमता का भी बोध होता है। सस्मरणो से यह भी स्पष्ट होता है कि आपके प्रति श्रद्धालुओ को जीवन मे बदलाव के चमत्कार का भी अनुभव हुआ और उन्हे विभिन्न अप्रत्याशित घटनाओ मे भी चमत्कार परिलक्षित हुए। प्रथम स्तबक के अनुशीलन से यह सिद्ध होता है कि आपकी साधारण सी देह मे एक महान् असाधारण सत का जीवन ओतप्रोत था।

सस्कृत एव हिन्दी भाषा मे समय–समय पर किए गए काव्यमय गुणगानो मे से कतिपय रचनाएँ द्वितीय स्तबक मे सकलित है। इनमे आपका साधनाशील एव युगप्रभावक व्यक्तित्व उजागर हुआ है। पूज्य घासीलाल जी म सा जैसे आगममनीषी सतो ने आप पर सस्कृत मे अष्टक की रचना कर आपके व्यक्तित्व को प्रणाम किया है। उपाध्याय श्री पुष्करमुनि जी, प श्री घेवरमुनि जी, प श्री रमेशमुनि जी शास्त्री, प रत्न श्री वल्लभमुनि जी आदि सत प्रवरो की काव्याजलियो एव अष्टको मे आपके प्रभावक एव व्यापक व्यक्तित्व के दर्शन होते है। हिन्दी एव मारवाडी मिश्रित काव्य–कृतियो का गान करते हुए आपके प्रति श्रद्धा, समर्पण एव कृतज्ञता के भाव जन–जन के मन मे सहज ही स्फुरित होते है।

चतुर्थ खण्ड आपकी साहित्य–साधना एव काव्य–साधना से सबद्ध है। इस खण्ड मे दो अध्याय है। प्रथम अध्याय आपकी साहित्य–साधना की महत्ता का परिचायक है। जीवन के प्रारम्भिक वर्षो मे आपने दशवैकालिक

सूत्र, नन्दी सूत्र, प्रश्नव्याकरण सूत्र, बृहत्कल्प सूत्र, अन्तगड सूत्र आदि आगमो का सम्पादन एव व्याख्या-लेखन का कार्य शासन हित की दृष्टि से किया। आप साधुमार्गी समाज में विशिष्ट साहित्य के निर्माण, मूलागमो के अन्वेषण पूर्ण शुद्ध सस्करण की पूर्ति, सूत्रार्थ का शुद्ध पाठ पढकर जनता को ज्ञानातिचार से बचाने एव आगम-सेवा की दृष्टि से इस ओर प्रवृत्त हुए। आगमो का स्वाध्याय करने की ओर जनसाधारण भी प्रवृत्त हो, इस दृष्टि से आपने दशवैकालिक और उत्तराध्ययन सूत्र का पद्यानुवाद प्रस्तुत किया तथा सस्कृत छाया, हिन्दी शब्दार्थ, विवेचन एव सबद्ध कथाओ से इन सस्करणो को समृद्ध बनाया। आगम-व्याख्या साहित्य के अतिरिक्त आपका प्रवचन, इतिहास, काव्य, कथा आदि से सबद्ध साहित्य भी उपलब्ध है। आपके अधिकाश प्रवचन असकलित एव अप्रकाशित है। कतिपय प्रवचन आध्यात्मिक साधना, आध्यात्मिक आलोक, प्रार्थना प्रवचन, गजेन्द्र मुक्तावली (भाग 1 व 2) , गजेन्द्र व्याख्यान माला (भाग 1 से 7) आदि पुस्तको मे सकलित हैं। प्रवचन आगमाधारित, अत्यन्त सहज, प्रेरणाप्रद, रोचक एव प्रभावशाली है। इतिहास को काव्य रूप मे प्रस्तुत करने मे आप सिद्धहस्त कवि थे। जैनाचार्य चरितावली इसका उदाहरण है। प्राचीन स्रोतो से जैन इतिहास को प्रस्तुत करना आपका लक्ष्य रहा, जो जैनधर्म का मौलिक इतिहास के चार भागो मे साकार हुआ। काव्य, कथा एव अन्य साहित्य से आपकी आध्यात्मिक, सैद्धान्तिक एव कल्याणकारिणी दृष्टि का परिचय मिलता है।

चतुर्थ खण्ड के द्वितीय अध्याय मे आपके द्वारा रचित पदो, भजनो एव प्रर्थनाओ का सकलन है, जो आध्यात्मिक उन्नयन एव जीवन सुधार के भावो से ओत-प्रोत है। सामायिक, स्वाध्याय, समाज-एकता, कुव्यसन-त्याग, सेवा, गुरु-भक्ति, महिला-शिक्षा, षट्कर्माराधन आदि विविध विषयो पर भावपूर्ण हृदयावर्जक पदो एव भजनो की रचना कर आपने जन-जन को जागृत करने का प्रयास किया है। तीर्थंकर शातिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर पर प्रार्थनाएँ, उनके गुणो की ओर आकर्षित करती है। 'सतगुरु ने यह बोध बताया', 'समझो चेतन जी अपना रूप', 'मेरे अन्तर भया प्रकाश', 'मै हूँ उस नगरी का भूप' आदि पद शरीर एव आत्मा मे भिन्नता से साक्षात्कार का स्पष्ट चित्राकन करते है। इस अध्याय मे आपकी 61 पद्य रचनाएँ आपके 61 वर्ष के आचार्य काल का स्मरण करातीं है।

पचम खण्ड परिशिष्ट खण्ड है। प्रथम चार खण्डो मे अविभक्त सामग्री का समावेश इस खण्ड मे किया गया है। इसमे चार परिशिष्ट है- 1 चरितनायक की साधना मे प्रमुख सहयोगी साधक महापुरुष 2 चरितनायक के शासनकाल मे दीक्षित सन्त-सती 3 कल्याणकारी सस्थाएँ और 4 आचार्यप्रवर के 70 चातुर्मास एक विवरण।

प्रथम परिशिष्ट मे पूज्य चरितनायक के गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा , शिक्षा गुरु स्वामीजी श्री हरखचन्द जी म सा , सघ-व्यवस्थापक श्री सुजानमल जी म सा , शासन सहयोगी श्री भोजराजजी म सा एव प रत्न श्री लक्ष्मीचन्द जी म सा , महासती श्री बडे धनकवर जी म सा एव माता महासती श्री रुपकवर जी म सा के योगदान का सक्षिप्त उल्लेख किया गया है। द्वितीय परिशिष्ट मे चरितनायक के शासनकाल मे दीक्षित होकर साधना मे निरतिचार रूप से सलग्न रहने वाले प्रमुख सन्त-सतियो का सक्षिप्त परिचय दिया गया है। तृतीय परिशिष्ट मे उन कल्याणकारी सस्थाओ का परिचय है जो चरितनायक के शासनकाल मे सुज्ञ, विवेकशील एव जागरूक श्रावको द्वारा उपकार की भावना से स्थापित की गई है। अन्तिम परिशिष्ट मे चरितनायक पूज्य गुरुदेव के 70 चातुर्मासो की सारिणी है, जिसमे शासनकाल की प्रमुख घटनाओ एव गच्छ के संतो के चातुर्मासों की भी सूचना सकलित है।

प्रस्तुत ग्रन्थ का नाम 'नमो पुरिसवरगघहत्थीण' विशेष प्रयोजनवत्ता एव सार्थकता लिए हुए है। आगम

महोदधि आचार्यप्रवर श्री आत्माराम जी म सा चरितनायक के लिए अपने पत्र में 'पुरिसवरगंधहत्थीण' विशेषण का प्रयोग करते थे। यह शब्द सामायिक सूत्र के 'नमोत्थुण' पाठ मे अरिहन्तो एव सिद्धो के विशेषण रूप में प्रयुक्त हुआ है। आगमज्ञ आचार्यप्रवर श्री आत्माराम जी म सा ने कुछ सोच विचार कर पूज्य चरितनायक के लिए इस विशेषण का प्रयोग किया होगा। हाथियो मे जिस प्रकार 'गंधहस्ती' की श्रेष्ठता स्वीकृत है उसी प्रकार वे पुरुषो मे श्रेष्ठ थे। आपके सयम, अनुशासन, विद्वत्ता एव साधना की सौरभ चहुँ दिशाओ को आकर्षित करती थी। इस ग्रन्थ के माध्यम से पुरुषो मे श्रेष्ठ महापुरुष पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म सा को नमन किया गया है, अत ग्रन्थ का नाम 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीण' अर्थवत्ता लिए हुए है।

उपलब्ध सामग्री ही इस ग्रन्थ का आधार बनी है, इसलिए कुछ स्थानो पर विवरण अपूर्ण भी रहा है। ग्रन्थ को प्रामाणिक बनाने का पूरा प्रयास किया गया है। इसमे पौष शुक्ला चतुर्दशी सवत् 2017 (डायरी न 2) से आचार्यप्रवर की उपलब्ध दैनन्दिनियो का यथावश्यक उपयोग किया गया है। दैनन्दिनियो मे मुख्यत प्रतिदिन की विहारचर्या, ग्रामो के नाम, दूरी, प्रमुख घटनाओं, सन्त-सतियो के मधुर मिलन, दीक्षा, समाधिमरण आदि का उल्लेख है। स्थान-स्थान पर स्वय के चिन्तन एव विचार भी अकित है, जिनका उपयोग जीवनी-खण्ड एव दर्शन-खण्ड मे किया गया है। दैनन्दिनियो की कई बाते सकेतात्मक है, जिन्हे बिना पूर्व भूमिका के समझना शक्य नहीं है।

परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म सा , मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म सा , शासन प्रभाविका श्री मैनासुन्दरी जी म सा के सान्निध्य मे बैठकर पूज्य चरितनायक के जीवन प्रसगो, सस्मरणो, उपदेशो, घटनाओ आदि के सबध मे सैद्धान्तिक विचार-विमर्श करने से अनेक अमूल्य सुझाव प्राप्त हुए। जिनसे जीवन ग्रन्थ मे प्रामाणिकता एव निर्दोषता मे अभिवृद्धि हुई है। एतदर्थ सम्पादक-मण्डल पाठकवृन्द की ओर से आचार्यप्रवर, सन्तप्रवर एव शासन प्रभाविका जी के चरणो मे कोटिश वन्दन करता हुआ हृदय से कृतज्ञता स्वीकार करता है।

जीवनी लेखन मे अपने पूर्व मे लिखित सामग्री का यथावसर उपयोग किया गया है। अत मै उन सभी पूर्व विद्वानो प श्री शशिकान्त जी झा, श्री गजसिंह जी राठौड, डॉ मजुला जी बम्ब, डॉ महेन्द्र जी भानावत, श्री लक्ष्मीकान्त जी जोशी एव श्री पुखराज जी मोहनोत का हृदय से कृतज्ञ हूँ। डॉ मजुला जी बम्ब का विशेष आभारी हूँ, क्योंकि उनके द्वारा लिखित सामग्री इस ग्रन्थ के लेखन मे मुख्य आधार बनी।

शासन सेवा समिति के सदस्य एव 'आचार्य श्री हस्ती जीवन चरित्र प्रकाशन समिति' के अध्यक्ष अग्रज भ्राता श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना ने जब नवम्बर 2002 मे जीवनी की सामग्री का पूर्ण मनोयोग के साथ निरीक्षण प्रारम्भ किया तो मैने उन्हे दूरभाष पर कहा- ''अब सिंह जाग गया है, कार्य शीघ्र सम्पन्न हो जायेगा।'' आपने जीवनी-खण्ड का स्वय पारायण करते हुए मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म सा की सेवा मे नियमित रूप से बैठकर वाचन किया तथा यथोचित तथ्यात्मक सशोधन पूर्वक इसे समृद्ध बनाया। सन् 1979 के जलगाव चातुर्मास से सन् 1990 के पाली चातुर्मास तक के विवरण का लगभग पुनर्लेखन किया। आपने 'तेण कालेण तेण समएण' अध्याय, 'कल्याणकारी सस्थाएँ' तथा 'चरितनायक की साधना में प्रमुख सहयोगी साधक महापुरुष' नामक परिशिष्ट का भी लेखन किया है। आपके असीम स्नेह, अगाध विश्वास एव परम आत्मीय भाव इस ग्रन्थ का कार्य सम्पन्न करने मे मेरे लिए सम्बल रहे है। आपका आभार मै किन शब्दों में व्यक्त करूँ, सभी शब्द छोटे पडते है।

शासन सेवा समिति के सदस्य माननीय श्री प्रसन्नचन्द जी बाफना ने अपनी व्यापारिक व्यस्तताओ के

बावजूद एकाग्रता एव सूक्ष्मेक्षिका के साथ जीवनी की सम्पूर्ण सामग्री का अवलोकन कर मूल्यवान सुझाव दिए है तथा अनेक स्थानो पर समुचित सशोधन किए हैं। आपकी पकड, सूझ–बूझ, तत्परता एव सघनिष्ठा ने मुझे प्रभावित किया है। मै आपके द्वारा प्रदत्त सहयोग हेतु कृतज्ञता प्रकट करना अपना पुनीत कर्त्तव्य समझता हूँ।

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ के सरक्षक–मण्डल के सयोजक श्री मोफतराजजी मुणोत एव सघाध्यक्ष श्री रतनलाल जी बाफना से समय–समय पर कार्य को गुणवत्ता से परिपूर्ण एव शीघ्र सम्पन्न करने की जो प्रेरणा मिलती रही है, उसके लिए मै उनकी हृदय से कृतज्ञता स्वीकार करता हूँ।

श्री जैन रत्न पुस्तकालय, घोडो का चौक, जोधपुर के सचालक सुश्रावक श्री सरदारचन्द जी भण्डारी, गुरुभक्त सुश्रावक श्री गणेशमल जी भण्डारी–बैंगलोर, श्री वर्द्धमान भवन पावटा, पुस्तकालय के सयोजक सुश्रावक श्री नेमीचन्द जी बोथरा, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ, जोधपुर के कार्यालय प्रभारी श्री नौरतन जी मेहता, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड के रजिस्ट्रार श्री धर्मचन्द जी जैन आदि से मिले सहयोग के लिए मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

अपनी सहधर्मिणी श्रीमती मधु जैन के प्रेरक एव त्यागमय सहयोग, सुपुत्रियो कनीनिका व मधुरिका तथा सुपुत्र मुदित के द्वारा प्रूफ–सशोधन आदि के रूप मे कृत सकारात्मक सहयोग से मुझे इस कार्य को इस मजिल तक पहुचाने मे जो सम्बल प्राप्त हुआ, उसकी हृदय से प्रशसा करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

सुश्री मीना जी बोहरा (एम ए सस्कृत–प्राकृत तथा जैनदर्शन ग्रुप) एव शोध छात्रा सुश्री श्वेता जैन(कोटडिया) ने प्रूफ सशोधन आदि मे तत्परतापूर्वक प्रभूत नि स्वार्थ सहयोग प्रदान किया है, एतदर्थ साधुवाद देता हुआ उनके उज्ज्वल भविष्य की मगल कामना करता हूँ।

इस ग्रन्थ को आदि से अन्त तक कम्प्यूटर–टकण के माध्यम से सज्जा प्रदान करने वाले श्री जितेन्द्र जी जोशी (प्रोपराइटर, जे के कम्प्यूटर), जालोरी गेट, जोधुपर का धन्यवाद ज्ञापन करना भी मै अपना पुनीत कर्त्तव्य समझता हूँ। उन्होने जिस श्रम एव निष्ठा के साथ कार्य का सपादन किया है, उसी से यह ग्रथ पूर्णता को प्राप्त हुआ है।

मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली के श्री नरेन्द्रप्रकाश जी जैन की सजगता एव तत्परता से इसका सुन्दर मुद्रण हुआ है, एतदर्थ उनका आभार ज्ञापन भी नितान्त आवश्यक समझता हूँ।

–डॉ धर्मचन्द जैन

3 K 24-25 कुडी भगतासनी
जोधपुर–342005 (राज0) फोन न0 0291–2730081

प्रणति

नमन उनको कोटि कोटि, जो अध्यात्म पथ के देवता,
सन्त सच्चे सरल ऊँचे, आचार जिनकी सम्पदा।
अनुभूत जिनको देह से, चैतन्य की थी भिन्नता,
मोक्ष के सच्चे पथिक, लक्ष्य जिनका था सधा।।

अप्रमत्तता व ध्यान [illegible], श्रमण जीवन का बनाया,
सत्य संयम शील [illegible], त्रिरत्न को जग में दिपाया।
जगो, उठो, आगे बढ़ो, उपदेश यही पावन दिया,
आत्म दोषों के निवारण का, ही संदेश मुखरित किया।।

कलह क्लेश और द्वन्द्व को, दूर करना ही सिखाया,
आत्म भावों के उत्थान को, धर्म जीवन का बताया।
मोह ममता आरम्भ-परिग्रह, को मूल दुःख का पढ़ाया,
स्वाध्याय और सामायिक से, निर्माण जीवन का सुझाया।।

आगमसेवी युगप्रभावक, करुणामूर्ति महात्मा,
स्वाध्याय के सत्प्रकाश से, जगमगाएँ आत्मा।
उच्च विचारों को अपना कर, बन जाएँ धर्मात्मा,
सामायिक की उत्कृष्टता से, हो जाएँ परमात्मा।।

कुव्यसन सारे छोड़ दें, तप संयम पर जोर दें,
नीति और प्रामाणिकता का, जीवन में रस घोल दे।
बाल युवा पुरुष नारी, स्व को धर्म से जोड दे,
सम्यग्दृष्टि बन कर अपने, सारे सुपथ पर मोड़ दें।।

विद्वत्ता और साधना के उच्च शिखर से भाषते,
सन्तोष शान्ति अभय मैत्री, और प्रमोद को प्रकाशते।
साधना की सुवास से, लाखों का जीवन संवारते,
गुरुदेव पूज्याचार्य हस्ती, 'धर्म'-हृदय में विराजते।।

आमुख

वीर निर्वाण की 25वीं शती के उत्तरार्द्ध एव 26वीं शती के प्रथम चतुर्थांश (पौष शुक्ला चतुर्दशी विक्रम सवत् 1967 से वैशाख शुक्ला अष्टमी सवत् 2048, दिनाक 13 जनवरी 1911 से 21 अप्रेल 1991 तक) के जैन श्रमण–सस्कृति के इतिहास मे परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म सा का नाम एक महान् अध्यात्मयोगी, उच्चकोटि के अप्रमत्त साधक, गहन विचारक, सामायिक एव स्वाध्याय के अप्रतिम प्रेरक, प्रज्ञाशील, युगप्रभावक आचार्य के रूप मे सदियो तक स्मरण किया जाता रहेगा।

'श्रमण' के लिए प्राकृत भाषा मे प्रयुक्त 'समण' शब्द के शमन, समन और श्रमण ये तीनो अर्थ आचार्य श्री हस्ती मे एक साथ प्रदीप्त थे। 'शमन' शब्द से कषायो की उपशान्ति (*उवसमसार खु सामण्ण*–बृहत्कल्प भाष्य 1 35) का बोध होता है, 'समन' शब्द समभाव की साधना (*समयाए समणो होइ*–उत्तरा 25 32) को अभिव्यक्त करता है तो 'श्रमण' शब्द सम्यग्ज्ञानपूर्वक सयम मे पराक्रम (*नाणी सजमसहिओ नायव्वो भावओ समणो*–उत्तरा निर्युक्ति 389) का अभिव्यजक है। अनुयोगद्वार सूत्र मे 'समण' शब्द का प्रयोग सु–मन वाले के लिए भी (*तो समणो जइ सुमणो*) हुआ है। आचार्य श्री हस्ती के जीवन मे क्रोध, मान, माया एव लोभ कषाय की उपशान्ति से समण का 'शमन' अर्थ सार्थक है। विषम परिस्थितियो मे भी समभाव के अभ्यास के कारण 'समन' अर्थ तथा निरन्तर निरालस और अप्रमत्त रहकर सयम मे श्रमशीलता, पराक्रम या पुरुषार्थ से 'श्रमण' अर्थ भी उनमे चरितार्थ है। मन की निष्कपटता एव निर्मलता के कारण सु–मन तो वे थे ही।

राग–द्वेष पर विजय का पथ प्रशस्त करने वाले जिनधर्म, आत्म–विकारो की ग्रन्थियो का मोचन करने वाले निर्ग्रन्थ धर्म अथवा पूज्य अर्हत् (अरिहत, अरुहत, अरहत) द्वारा उपदिष्ट आर्हत धर्म मे तीर्थंकरो के पश्चात् गणधरो एव आचार्यों की जो परम्परा चली, उसमे आचार्य श्री हस्ती का नाम युगप्रभावक आचार्यों की श्रेणि मे स्वर्णाक्षरो मे जडने योग्य है। भगवान महावीर के उपदेशो एव आगमो पर आधारित तथा बाह्य आडम्बरो की अपेक्षा आगमज्ञान एव क्रिया की शुद्धता से चेतना के रूपान्तरण पर बल देने वाली स्थानकवासी परम्परा मे धर्मप्राण लोकाशाह के अनन्तर पूज्य श्री धर्मदास जी म सा , पूज्य श्री धर्मसिह जी म सा आदि क्रियोद्धारक आचार्यों के पश्चात् पूज्य श्री भूधर जी म सा प्रभावक आचार्य हुए। आचार्य श्री भूधर जी म सा के शिष्यो मे कुशलो जी म सा की शिष्य परम्परा आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म सा के क्रियोद्धार सबधी महत्त्वपूर्ण योगदान के कारण रत्नसघ (रत्नवश) के नाम से लोक–विश्रुत हुई। इस रत्नसघ परम्परा के महनीय महर्घ्य आध्यात्मिक दिव्य रत्न थे - इस जीवन ग्रन्थ के चरितनायक आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म सा ।

आत्म–साधना के साथ जगत्कल्याण का आपमे अनूठा समन्वय रहा। प्राय जो जगत्–कल्याण मे लगते है, वे आत्म–साधना को भूल जाते है तथा जो आत्म–साधना मे लगते है वे जगत्कल्याण को गौण कर देते है, किन्तु तीर्थंकरो के अनुसर्ता आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा मे ये दोनो विशेषताएँ थीं। आत्म–साधना के शिखर को छू लेने वाले उन महान् साधक मे जन–जन के प्रति करुणाभाव एव उनके जीवन–निर्माण की प्रशस्त भावना थी। आप भगवान महावीर की निर्ग्रन्थ परम्परा के सच्चे प्रतिनिधि एव 81 वे पट्टधर होने के साथ रत्नसघ परम्परा के सप्तम आचार्य थे।

卐 卐

भारत वसुन्धरा के ललामभूत मारवाड प्रदेश के पीपाड नगर मे जन्म ग्रहण करने वाले पूज्यप्रवर आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा 'गजेन्द्राचार्य' एव काव्य साहित्य मे 'गजमुनि' नाम से भी प्रसिद्ध रहे। वीतरागता के पथ के सच्चे पथिक एव भगवान महावीर की शास्त्रधारी सेना के नायक आचार्य श्री हस्ती का जन्म पौष माह की

निवास कर लिया था। उनके हृदय-कमल मे आपकी गुणवत्ता एव योग्यता की छवि स्पष्ट अंकित हो गयी थी।

पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा का सान्निध्य आपको दीर्घकाल तक न मिल सका। सवत् 1983 के जोधपुर चातुर्मास मे श्रावण कृष्णा अमावस की अन्धेरी रात ने चरितनायक पर से गुरुदेव का साया छीन लिया। लगभग पौने चार वर्ष तक सघ-व्यवस्थापन का दायित्व वरिष्ठ सन्त स्वामीजी श्री सुजानमल जी म सा ने सम्हाला तथा स्वामीजी श्री भोजराज जी म सा उनके परामर्शदाता रहे। सघ-व्यवस्थापक स्वामीजी श्री सुजानमल जी म सा एव श्रावक-समुदाय की प्रबल भावना से सवत् 1987 की अक्षय तृतीया के अक्षय दिवस पर ज्ञान, दर्शन एव चारित्र से सुसम्पन्न, चतुर्विध सघ के गौरव मुनि श्री हस्ती को जोधपुर में आचार्य की चादर ओढाकर सघनायक का गुरुतर उत्तरदायित्व सौंपा गया। मात्र सवा उन्नीस वर्ष की वय मे योग्यता के आधार पर आचार्य पद पर आरूढ होने वाले आप जैन इतिहास मे एक विरल सन्त थे।

आचार्य-पद पर अधिष्ठित होने के पश्चात् सघ-व्यवस्था का सचालन आपने अपने वरिष्ठ सतों के बहुमानपूर्ण सहयोग के साथ प्रारम्भ किया। पच परमेष्ठी के तृतीय महान् पद पर आरूढ होने के पश्चात् भी वही विनम्रता, वही निरभिमानता और वही गुणग्राहकता आपके व्यक्तित्व-निर्माण के क्रम को आगे बढाती रहीं।

पूज्य श्री मन्नालालजी म सा के साथ मन्दसौर मे छेदसूत्रो की वाचना के समय गुणग्राहक चरितनायक ने आपसे जो नये अनुभव सीखे, वे आपके ही शब्दो मे-*''मन्दसौर मे आपके साथ रहने का अवसर मिला। आपका बहुमानपूर्ण वात्सल्य कभी भुलाया नहीं जा सकता। आपके साथ छेदसूत्र की वाचना और प्राचीन सन्तो के जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव सुने। श्रमण-व्यवहार मे नित्य उपयोगी कई नवीन बाते सीखीं।''* आपने पूज्य श्री आत्माराम जी म सा से नियमित ध्यान की अमर प्रेरणा ग्रहण की तथा स्वाध्याय की अभिरुचि दृढतर हुई। पूज्य श्री जवाहरलाल जी म सा के विचारो एव प्रवचन कला ने भी आपको प्रभावित किया, आप ही के शब्दो मे-*''आपके विचारो एव प्रवचन कला से मन अत्यधिक प्रभावित हुआ। आप जो कुछ भी कहते थे, बहुत सरल एव मिठास भरे शब्दो मे कहते और हृदयपटल पर उसका चित्र खींच देते थे। आपके अनुभवपूर्ण विचारों से भी जीवन मे बडी प्रेरणा मिली, बल प्राप्त हुआ।''* शास्त्रज्ञ श्रावक श्री लखमीचन्द जी-मन्दसौर, श्री केसरीमल जी सुराणा-रामपुरा एव धार के पोरवाल सुश्रावक से आपने कतिपय आगमिक धारणाएँ ग्रहण कीं।

आचार्यप्रवर की सरलता, गुणिषु प्रमोद की भावना, गुणग्राहक दृष्टि आदि को देखकर सद्गुणों ने सहज ही आपमे गुणसमुद्र का रूप ग्रहण कर लिया।

आपकी लघु देह मे महान् आध्यात्मिक सन्त का विशाल व्यक्तित्व पुंजीभूत हो रहा था। घण्टो एक आसन से बिना सहारे बैठे रहने की क्षमता, विहारकाल में स्फूर्तिपूर्वक ईर्या समिति सम्मत पाद-निक्षेप, निरालसतापूर्वक श्रमणाचार की प्रत्येक क्रिया मे पराक्रम आदि अनेक गुण आपकी आध्यात्मिक ऊर्जा के ही प्रतिबिम्ब थे। आपका तेजस्वी उन्नत भाल, करुणा सरसाते एव निर्विकारता का बोध देते भास्वर नयन, अध्यात्म एव साधना मे परिपक्वता दर्शाता आभामण्डल, प्रत्येक प्राणी को अभयदान का संकेत करता दक्षिण हस्त-ये सब निहार कर सेवा मे उपस्थित भक्त को दर्शनमात्र से ही आत्मसतोष एव परम-शाति का अनुभव होता। मेरुदण्ड को सीधा रखने हेतु वज्रासन, पद्मासन आदि विभिन्न आसनों के प्रयोगो से आपने शरीर को साधना का ही साधन बनाया। रुग्णावस्था में शरीर को शिथिल कर मनोबल से उसे शीघ्र स्वस्थता प्रदान करना, देह से अपने को भिन्न समझकर उसे नीरोग बनाना आपकी साधनाशीलता के साधारण कार्य बन गए थे। पद-कमल मे पद्मरेख आपके वैशिष्ट्य एव कर्मयोगी होने की प्रतीक थी। आपका विश्वास था कि पुरुषार्थ एवं पराक्रम से ही साधक अपनी मजिल तय कर सकता है। पुरुषार्थ तो भाग्य-परिवर्तन का भी प्रमुख सम्बल है, तो फिर साधना का क्यो न हो? अत मुनिजीवन मे प्रवेश करने के साथ ही आपने पुरुषार्थ किंवा सयम मे पराक्रम को अपना प्रमुख साधन

चादनी चौदस को सूर्य द्वारा कर्क रेखा से मकर रेखा पर सक्रमण करने की तैयारी के समय 13 जनवरी 1911 को हुआ जो मकर सक्रान्ति के शाश्वत दिवस की भाति आपके जीवन के शाश्वत लक्ष्य का सकेत कर रहा था। जन्म से ही महान् लक्ष्य की ओर अग्रसर बालक हस्ती ने माघ शुक्ला द्वितीय द्वितीया सवत् 1977 दिनाक 21 फरवरी 1921 को त्याग एव सेवा की प्रतिमूर्ति अध्यात्मपुरुष आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा का शिष्यत्व स्वीकार करते हुए अजमेर मे मात्र 10 वर्ष 18 दिन की वय मे प्रव्रज्या-पथ पर दृढ-श्रद्धा एव वैराग्य के साथ चरण बढाए।

माता रूपा देवी की कुक्षि से जन्म के पूर्व ही पिता केवलचन्द जी का देहावसान, माता रूपा देवी के विरक्ति भाव, दादी नौज्या बाई का स्वर्गवास, नाना गिरधारीलाल जी मुणोत एव उनके विशाल परिवारजनों की प्लेग से अकाल मृत्यु आदि एक के बाद एक दृश्यो का साक्षात्कार कर ससार की अनित्यता को गर्भ एव शैशव अवस्था मे ही समझ लेने वाले बालक हस्ती का वैराग्य साधारण वैराग्य नहीं था। यह उनके भावी महान् सन्त के व्यक्तित्व की आधारभूमि थी। माता के दुग्ध से, वचनो से, नयनो से एव व्यवहार से भी आप मे वैराग्य का ही भाव पुष्ट होता गया। शैशव अवस्था मे ही माता के साथ महासती बडे धनकवर जी म सा का सान्निध्य, महान् सत स्वामी जी श्री हरखचन्द जी म सा की आत्मीयता और पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा के मार्गदर्शन से आपका महान् व्यक्तित्व एक विशिष्ट आकृति ग्रहण करता चला गया। आपके व्यक्तित्व निर्माण मे स्वामी जी श्री हरखचन्द जी म सा का अनुपम योगदान रहा। आपके सान्निध्य मे बैठकर मुमुक्षु हस्ती ने आगम और थोकडो का अभ्यास किया, साथ ही वह मुनिचर्या के वैशिष्ट्य से भी अवगत हुआ। उत्कृष्ट साधु-जीवन का प्रथम परिचय, प्रमाद-परित्याग एव श्रम की महिमा का बोध आपको स्वामीजी श्री हरखचन्द जी म सा से हुआ। आपको स्वामीजी से अप्रमत्तता का सूत्र मिला-

[illegible]

आपके व्यक्तित्व निर्माण मे मैथिल ब्राह्मण पडित श्री दु खमोचन जी झा का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी भाषा की व्याकरण एव साहित्य का गूढ ज्ञान कराने के साथ पडितजी ने अपनी सरलता, शीतलता एव श्रमशीलता से चरितनायक को प्रभावित किया। चरितनायक के शब्दो में- *''पण्डित जी यद्यपि गृहस्थ थे, फिर भी वे साधुवत् सरल, सुशील, सतोषी एव त्याग-तप के रसिक थे। जीवन की आवश्यकताओ के बाद बचा हुआ उनका प्रत्येक क्षण हमारे लिए उत्सर्ग रहता था।''* पण्डित सदासुखजी शास्त्री का यह उपहास कि *''पढे लिखे जैन सत साधारण ब्राह्मण की भी बराबरी नहीं कर सकते है''* आपके तलस्पर्शी गहन अध्ययन के लिए प्रेरक बना। विनयशीलता, सेवा-भाव, विवेकित्व, अप्रमत्तता, स्वाध्यायशीलता, गुणग्राहकता, सयम-निष्ठा, परीषह-सहिष्णुता, निर्भयता, निर्दोष सयम-पालन के प्रति कठोरता आदि गुणो का मुनि श्री हस्ती मे आधान होता देख गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभा को परम प्रमोद का अनुभव होता। उन्होने चरितनायक मे शास्त्रवाचन एव अर्थाधिगम की योग्यता का पूर्ण सवर्धन किया तथा वात्सल्य भाव से मनोबल को पुष्ट किया। वरिष्ठ सहयोगी सन्तो के सद्गुणो ने भी आपके व्यक्तित्व निर्माण मे महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा के हृदय मे आपने इन असाधारण सद्गुणों के कारण ऐसा विशिष्ट स्थान बनाया कि पूज्य गुरुदेव ने मात्र 15 वर्ष की किशोर वय मे आपका सघ के भावी आचार्य के रूप मे मनोनयन कर दिया। यह अपने आप मे एक विस्मयकारी घटना थी।

वे शिष्य तो धन्य है ही, जिनके हृदय मे गुरु निवास करते है, किन्तु वे शिष्य और भी अधिक धन्य है, जो गुरु के हृदय मे निवास करते हैं। मुनि हस्ती का इतनी लघुवय मे आचार्यपद पर मनोनयन इस बात का प्रतीक था कि आपने अपने सद्गुणो से महान् सुयोग्य शिष्य एव उच्चकोटि के श्रमण के रूप मे अपने गुरुदेव के हृदय मे

समझा।

आपने ध्यान के साथ मौन को अपने व्यक्तित्व-निर्माण का महत्त्वपूर्ण घटक बनाया। दृढ़सकल्प, पुरुषार्थ, अप्रमत्तता, स्वाध्याय, लेखन, श्रमणाचार का निर्मल और सजगता पूर्वक पालन करने से आपका व्यक्तित्व पूजनीय एव अनुकरणीय बनता चला गया।

अपने जीवन के 50 बसन्त पूर्ण करने पर आपने पावन सकल्प किया कि आप इस वर्ष मे 50 दम्पतियो को आजीवन शीलव्रत की प्रेरणा कर सकल्पबद्ध करेगे। आपको अपने इस पावन सकल्प की पूर्ति मे आशातीत सफलता मिली। फिर आप प्रत्येक जन्म-दिवस पर शीलव्रत का सकल्प धारण करने वालो की क्रमिक सख्या बढाते रहे। आपके साधनामय व्यक्तित्व के प्रभाव से अभिवृद्ध सकल्प पूर्णता को प्राप्त करते रहे।

आपने श्रमणचर्या के अनुसार पद-विहार कर राजस्थान के मारवाड, मेवाड, ढूढाड, हाडौती, पोरवाल एव पल्लीवाल क्षेत्रो को प्रवचन-पीयूष से लाभान्वित करने के साथ मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा एव गुजरात प्रान्तो के सहस्रो ग्राम-नगरो मे धर्म को जीवन से जोडने की प्रेरणा की। ककरीले, रेतीले, पहाडी, दुर्गम मार्गो से विहार करते हुए भी मन मे वही मोद, धर्मशाला, पचायत-भवन, मन्दिर, सूने मकान एव वृक्ष के तले रात्रिवास करते हुए भी वही निर्भयता, निर्दोष आहार एव जल के न मिलने पर भी वही समभाव, श्रमण-जीवन से अपरिचित जनो के बीच भी प्रवचनामृत की वर्षा, जाट, गुर्जर, अहीर, विश्नोई, राजपूत, माली, धोबी, हरिजन, सिक्ख, मुसलमान, ईसाई-सभी जातियो के लोगो द्वारा पीयूषवाणी का पान कर व्यसनमुक्ति के साथ धर्म के प्रति निष्ठाभाव- ये सब आपकी महिमा को अभिव्यक्त करते थे। दक्षिणभारत की पद-यात्रा के समय मीलो तक ग्राम नहीं, कहीं पानी मिला तो आहार नहीं, कहीं सुबह मिला तो शाम नहीं, कई बार आपके साथ सन्त भी निराहार रहे, किन्तु आपने अभ्याहृत(सामने लाया हुआ) या उत्पादना आदि के दोषो से युक्त आहार को स्वीकार नहीं किया। साध्वाचार की परीक्षा कठिन स्थितियो मे ही होती है और उसमे आप शत प्रतिशत खरे उतरे। अपवाद मार्ग आपको अभीष्ट नहीं था। अपने प्रति अनुराग रखने वाले श्रावको को समझाते हुए आप फरमाते- *'जब तक इस सफेद चदरिया मे दाग नहीं, तब तक हर क्षेत्र एव श्रावक हमारा अपना है। अन्यथा तुम भी हमारे नहीं हो।'*

साधना एव विद्वत्ता दोनो का आपमे अद्भुत समन्वय था। आप एक ओर जहाँ साधना मे गतिशील चरण बढा रहे थे, वहाँ उत्तम क्षयोपशम तथा अप्रमत्तता के कारण आपमे विद्या का अतिशय बढता रहा। सस्कृत एव प्राकृत भाषा के गूढज्ञाता होने के कारण आपने दशवैकालिक सूत्र, नन्दीसूत्र, बृहत्कल्पसूत्र, प्रश्नव्याकरण सूत्र आदि आगमो का सम्पादन सस्कृत छाया एव विवेचन के साथ कर अल्पवय मे ही जैन-विद्वज्जगत् मे अपनी अमिट छाप छोड दी। विभिन्न ग्राम-नगरो मे विचरण करते हुए आपने अनेक ज्ञान-भण्डारो, पुस्तकालयो एव ग्रन्थागारो का अवलोकन किया तथा जैन इतिहास विषयक प्रामाणिक शोध के साथ 'पट्टावली प्रबन्धसग्रह', 'जैन आचार्य चरितावली' के अनन्तर 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास (भाग 1 से 4)' प्रस्तुत कर जैन इतिहास के प्रामाणिक ग्रन्थ के अभाव की पूर्ति की। इतिहास को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने के कारण श्रावक-समुदाय ने आपको 'इतिहास मार्तण्ड' विरुद से सबोधित किया। इतिहास-लेखन मे निष्पक्षता एव प्रमाणपुरस्सरता को ही आधार बनाया। इससे आपकी विद्वत्ता, श्रमशीलता एव सजगता की धवल कीर्ति सर्वत्र प्रसृत हो गई। आज 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' ग्रन्थ को भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों मे सदर्भ ग्रन्थ के रूप मे पढा जाता है। आपने स्वरविद्या, ज्योतिर्विद्या, सूर्यकिरण चिकित्सा विद्या आदि अनेक विद्याओ का भी अच्छा अभ्यास किया। आप लेखनकला मे भी सिद्धहस्त थे। प्राचीन पाण्डुलिपियो को पढने एव समझने मे कुशल थे। पेंसिल ही आपकी प्रमुख लेखनी थी, जिससे कागज के प्रत्येक अश को आप सुन्दर अक्षरो से चमका देते थे। आपके द्वारा लिखे

बारीक अक्षरो की बनावट आकर्षक होती थी। वस्तु के सदुपयोग, एकाग्रता एव सजगता का पाठ आपके अक्षरो को देखते ही मिल जाता है।

卐 卐 卐

'पूज्यश्री' के सबोधन से विख्यात आचार्यप्रवर साधारण सी देह मे एक असाधारण अध्यात्मयोगी एव महान सत के जीवन से ओत-प्रोत थे। आपकी अध्यात्मयोगिता का सर्वाधिक प्रसिद्ध निदर्शन है- निमाज मे आपका तेरह दिवसीय तप-सथारा। जिन उच्च आध्यात्मिक भावो के साथ शरीर से अपने को पृथक् समझते हुए आपने सलेखना के साथ समाधिमरण का योजनापूर्वक वरण किया, वह अपने आप मे एक अप्रतिम उदाहरण है। आचार्य पद पर रहकर सघ के विभिन्न दायित्वो का कुशलतापूर्वक निर्वहन करते हुए आत्मसाधना के इस उच्च शिखर पर पहुँचने के उदाहरण शताब्दियो मे भी विरल ही मिलते है। सतो और भक्त-श्रावको के अनुनय-विनय को आपने मोह का रूप समझकर उसकी उपेक्षा की तथा देह-त्याग का समय सन्निकट जानकर सर्वविध सयोगो से अपने को पृथक् कर लिया। आपने समस्त आचार्यों, श्रमणवरेण्यो, श्रमणीवृन्दो, अपने अन्तेवासी शिष्यो, शिष्याओ, श्रावको, श्राविकाओ एव 84 लाख योनियो के समस्त जीवो से क्षमायाचना करते हुए अपने को पुन पच-महाव्रतो मे आरूढ किया। सघनायको, विशिष्ट जनो को अभीष्ट हितावह प्रेरणा करके आप सघ के ममत्व एव दायित्व से भी पृथक् हो गए। आपकी अध्यात्मयोगिता आपके द्वारा युवावय मे रचित पदो एव भजनो मे भी प्रतिबिम्बित होती है। 'मै हूँ उस नगरी का भूप , जहाँ नहीं होती छाया धूप' 'समझो चेतन जी अपना रूप, यो अवसर मत हारो', 'मेरे अन्तर भया प्रकाश, नहीं अब मुझे किसी की आस', 'सतगुरु ने यह बोध बताया, नहिं काया नहि माया तुम हो' आदि पद्य इसके साक्षी है।

देह से आत्मा को भिन्न अनुभव करना अध्यात्म योगी का प्रमुख लक्षण है। शरीर आदि समस्त बाह्य वस्तुओ से अपने को पृथक् हटाकर आत्म-स्वरूप के साथ योग करना ही अध्यात्म योग है। अध्यात्म योग की ऐसी साधना के परम साधक पूज्य आचार्य श्री रात्रि के किस प्रहर मे कब ध्यानस्थ हो जाते यह अतेवासियो को भी ज्ञात नहीं होता था। निद्रा को हम सासारिक प्राणी पुन ताजगी के लिए आवश्यक मानते है, किन्तु वे अध्यात्म योगी तो *'मुणिणो सया जागरन्ति'* आगम वाक्य के साक्षात् निदर्शन थे। मध्याह्न मे भी आप नियमित रूप से ध्यान-साधना करते थे। ध्यान के साथ मौन आपकी अध्यात्म-साधना का महत्त्वपूर्ण अग था। प्रत्येक गुरुवार एव प्रत्येक माह की कृष्णा दशमी को पूर्ण मौन रखने के साथ प्रतिदिन दोपहर 12 से 2 बजे तक आप मौन-साधना किया करते थे। आपका ध्यान और मौन अध्यात्म-साधना के मजबूत सोपान सिद्ध हुए। मौन मे आप मात्र वाणी से विराम नहीं करते थे, अपितु उसे मन, इन्द्रिय आदि पर विजय के साथ जोडते थे। जब कभी आपके जीवन मे किसी प्रकार की विषम परिस्थितिया आती तो आप उद्विग्न, उत्तेजित एव असतुलित नहीं हुए। शारीरिक पीडा की स्थिति मे भी आप यही चिन्तन करते- *''पीडा शरीर को हो रही है, मै तो शरीर से भिन्न हूँ, मेरा रोग-शोक पीड़ा से कोई सबध नहीं है। मै तो आनन्दमय हूँ।''* आपने इस प्रकार के चिन्तन से तन की पीडा को विलीन होते देखा। आपने प्रवचन मे एक बार नसीराबाद छावनी का ऐसा प्रसग भी सुनाया, जो 'जिनवाणी' एव 'झलकियाँ जो इतिहास बन गई' पुस्तक मे प्रकाशित भी हुआ, यथा- *''बात नसीराबाद छावनी की है। सहसा सीने मे गहरी पीडा उठी। मुनिजन निद्रा मे थे। मैने उस वेदना को भुला देने हेतु चिन्तन चालू किया- ''पीड़ा शरीर को हो रही है, मैं तो शरीर से अलग हूँ। शुद्ध, बुद्ध, अशोक और नीरोग। मेरे को रोग कहाँ? मैं तो हड्डी पसली से परे, चेतन आत्मा हूँ। मेरा रोग, शोक, पीडा से कोई सबध नहीं है। मै तो आनन्दमय हूँ। कुछ ही पलो मे देखता हूँ कि मेरे तन की पीडा न मालूम कहाँ विलीन हो गई।''*

आप ध्यान में क्या करते थे, इसका विवरण उपलब्ध नहीं है, किन्तु एक अध्यात्मयोगी का ध्यान बाह्य

सयोगो से हटकर आत्मगुणो के साथ मन के योग की साधना ही हो सकता है। आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान तो आपसे कोसो दूर थे। अध्यात्मयोगी आचार्यप्रवर तो धर्म–ध्यान और उसके आगे शुक्ल–ध्यान के सोपानो की ओर ही चरण बढाने को अग्रसर थे।

आप आचार्य की आठ सम्पदाओ से युक्त होने के साथ 36 गुणो के धारक थे। आचार सम्पदा, श्रुत सम्पदा, शरीर सम्पदा, वचन सम्पदा, वाचना सम्पदा, मति सम्पदा, प्रयोगमति सम्पदा और सग्रह परिज्ञा सम्पदा ये आठ सम्पदाएँ आपमे सहज परिलक्षित होती थीं। पाँच महाव्रतो के पालन के साथ पाचो इन्द्रियो पर निग्रह, ज्ञानाचार आदि पाँच आचारो से समृद्ध, क्रोधादि चार कषायो के विजेता, पाँच समिति–तीन गुप्ति के शुद्ध आराधक, नववाड सहित ब्रह्मचर्य के उत्कृष्ट पालक बाल ब्रह्मचारी आचार्यप्रवर को चारित्र चूडामणि, सयम सुमेरु आदि विशेषणो से अलकृत किया जाना सयम–पथिको के लिए गौरव की ही बात कही जा सकती है।

स्थानाग सूत्र मे प्रतिपादित सयम के चार प्रकार मन–सयम, वचन–सयम, काय–सयम और उपकरण–सयम के निर्मल पालन के साथ आप उत्तराध्ययन सूत्र के वाक्य *'निम्ममो निरहकारो, निस्सगो चत्तगारवो' (19 90)* को चरितार्थ करते हुए ममत्व और अहकार से रहित थे। इससे भी अधिक आप निस्सग और गारव के परित्यागी थे। आप लाभ–अलाभ, सुख–दु ख, जीवन–मरण, निन्दा–प्रशसा, मान–अपमान आदि मे समत्व भाव रखने वाले महान साधक शिरोमणि थे। रोष या क्रोध के प्रसगो मे भी शान्ति, तथा उपसर्ग के समय भी समभाव आपके चेहरे पर झलकते थे।

चारित्र का पालन जब अध्यात्म के साथ जुड जाता है तो साधना का स्वरूप उच्च कोटि का होता है। आप उच्च कोटि के साधक सन्त थे। अप्रमत्तता, नि स्पृहता, निरभिमानता, निर्भयता, मितभाषिता, गुणियो के प्रति प्रमोद भाव, प्राणिमात्र के प्रति करुणाभाव आदि अनेक गुण आपकी साधना को दीप्तिमान एव तेजस्वी बना रहे थे। सघनायक का दायित्व वहन करते हुए आपका लक्ष्य अपनी साधना को निरन्तर उत्कर्ष की ओर ले जाने का रहा। प्रात जागरण से लेकर रात्रि–विश्राम के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग आपकी जीवनचर्या का अग बन चुका था। किस समय क्या करना, इसका आपको पूरा ध्यान रहता था। स्वाध्याय, ध्यान, मौन, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखन, शास्त्र–वाचना, सायकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् कल्याणमन्दिरस्तोत्र एव नन्दीसूत्र का स्वाध्याय आदि सभी क्रियाएँ आप निश्चित समय पर एव सजगतापूर्वक करते थे। आपकी अप्रमत्तता बाह्य क्रियाओ मे ही नहीं आत्मस्वरूप के स्मरणपूर्वक अन्तरग से जुडी हुई थी। आत्मस्वरूप के विस्मरण के साथ विषय–कषायो मे उलझना, उनके मिलने पर हर्षित होना आदि जो प्रमाद का स्वरूप है, उससे पूज्य आचार्यप्रवर कोसो दूर थे एव सबको अप्रमत्त रहने की प्रेरणा करते थे।

लोकैषणा की स्पृहा से आप सर्वथा दूर थे। भक्त–जन उनकी जय–जयकार करे, इसकी उन्हे कोई वाछा नहीं थी। एक बार चर्चा चली कि आचार्य पद के पूर्व 108 का प्रयोग किया जाए या 1008 का? आपने फरमाया– "हमारे बचपन मे सन्तो के नाम के आगे 6 का अक लगाया जाता था। 6 का मतलब होता है षट्काय प्रतिपाल।" आप ही के शब्दो मे–"क्या इससे बढकर और कोई विशेषण हो सकता है?" कैसी निस्पृहता एव निरभिमानता। आप यश कामना, भक्तसख्या आदि की स्पृहा से रहित होकर साधक–जीवन की पराकाष्ठा को ही अपना लक्ष्य समझते थे। आपके अन्तरग मे दशवैकालिक सूत्र की निम्नाकित गाथा पूर्णत स्पष्ट थी कि पूजा की वाछा करने वाला, यश की कामना करने वाला तथा मान–सम्मान की अभिलाषा करने वाला श्रमण विभिन्न प्रकार के पाप

को जन्म देता है तथा मायाशल्य का आचरण करता है–

[illegible]

आपका मन्तव्य था कि निस्पृहता मे जो आनन्द की अनुभूति होती है वह लोकैषणाओ की पूर्ति मे नहीं– "एक अकिंचन निस्पृह योगी को जो अद्भुत आनन्द प्राप्त होता है, वह कुबेर की सम्पदा पा लेने वाले धनाढ्य को नसीब नहीं हो सकता।" निस्पृहता के साथ सेवा का गहन सबध है। आप भावात्मक सेवा तो प्रतिक्षण करते ही रहते, किन्तु क्रियात्मक सेवा मे भी अवसर आने पर पीछे नहीं रहते थे।

अत्यल्प वय मे पूज्यपद का गुरुतर दायित्व, सस्कृत–प्राकृत आदि भाषाओ पर अधिकार, आगमो पर टीका– लेखन, सत–समुदाय मे बढती कीर्त्ति, विद्वत्तापूर्ण शास्त्रार्थ एव प्रश्नो के समाधान की अनूठी क्षमता वरिष्ठ आचार्यो एव सतो द्वारा प्रदत्त सम्मान, प्रतिष्ठित श्रावको की अनुपम श्रद्धा–भक्ति, सामायिक और स्वाध्याय प्रवृत्तियो की अद्भुत सफलता, नये–नये क्षेत्रो मे अपनी वाणी से हुए धर्मजागरण आदि विभिन्न निमित्तो के होते हुए भी आपमे सदैव सौम्यभाव एव निरभिमानता का सद्गुण परिलक्षित होता था। श्रावको द्वारा आपकी दीक्षा अर्द्धशती मनाये जाने का प्रसग उपस्थित होने पर आप सहमत नहीं हुए। आपके गुरुदेव पूज्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा की दीक्षा शताब्दी मनाने का जब प्रस्ताव रखा गया तो आप तप–त्याग, व्रत–नियम आदि की प्रभावना के निमित्त से श्रावको के आग्रह को स्वीकार करने के लिए तत्पर हुए। आपके जन्म–दिवस आदि पर सत–सतियो, श्रावक–श्राविकाओ द्वारा आपके गुणगान किए जाते तो उससे आप अस्पृष्ट ही रहते। उसे आप अभिमान–पोषण का निमित्त न बनाकर आत्मावलोकन एव गुण–सवर्धन का हेतु ही समझते। इस सबध मे दैनन्दिनी मे आपका स्पष्ट चिन्तन अभिव्यक्त हुआ है– *"गुणियो के गुणो का कीर्तन प्रभावना का कारण है, पर साधक को प्रशसा सुनकर खुश नहीं होना चाहिए। यही समझना चाहिए कि इसने प्रेमवश मेरे गुण देखे है, इसको मेरे दोषो का क्या पता? मुझे अपने दोषो को निकाल कर इसके विश्वास पर खरा उतरना है, ताकि इसे धोखा न हो।"* महान् साधक सतो की अपने प्रति ऐसी निष्पक्ष दृष्टि ही उनको साधना के उच्च शिखर पर ले जाने मे समर्थ होती है, अन्यथा दूसरो के द्वारा की गई प्रशसा को सुनकर व्यक्ति अपने को महान् समझने लगता है। उसको अपने सबध मे भ्रम उत्पन्न हो जाता है और वह आत्म–निरीक्षण की क्षमता को क्षीण करता हुआ दूसरो से अपना मूल्याकन कराने एव उनसे अपनी प्रशसा सुनने मे ही जीवन की सार्थकता समझने लगता है। फलत वह मूल लक्ष्य से भटक जाता है। इसलिए महान् साधक आचार्यप्रवर का चिन्तन युक्तिसगत एव सत्य ही है– *"अहकार से सत्कर्म वैसे ही क्षीण हो जाते है, जैसे मणो दूध पाव रत्ती सखिया से जहरीला हो जाता है।"*

आप प्रशान्तात्मा सन्त थे। समत्व एव शान्ति आपके सौम्य आनन से टपकती थीं। मान के साथ क्रोध, माया एव लोभ कषाय का भी आपने शमन कर लिया था। क्षमा, समत्व, आर्जव एव निर्लोभता के आप आधुनिक युग मे प्रतिमान थे। आपके समक्ष कोई सरोष मुद्रा मे भी होता तो आप उसे शीतल वचन रूपी बूदो का ऐसा अमृत पिलाते कि वह व्यक्ति तुरन्त शान्त हो जाता था। आपका चिन्तन था कि – *"उपशम भाव वह अमृत का प्याला है, जिसके पान से मन–मस्तिष्क की प्रसन्नता, हृदय की स्वच्छता और परिवार मे उत्साह बना रहता है। ज्ञान–भक्ति की निराबाध साधना होती है।"* मायाचार क्या होता है, उसके विकृत रूप से तो आप अपरिचित ही थे। कोई आपसे छलावा भी कर सकता है, यह आपके चिन्तन के परे था।

जो महापुरुष सबका कल्याण चाहते हो, जिन्हे आत्मा एव शरीर का भेदज्ञान करने का अभ्यास हो, स्वार्थ एव मोह–ममत्व से ऊपर उठे हुए हो, षट्काय के जीवो के अभयदाता हो, उन्हे किसी से किस बात का भय।

महाराष्ट्र के सतारा मे एव राजस्थान के अलवर जिले के बहाला गाव मे आपने डडे के प्रहार से चोटग्रस्त सर्पो को अपने हस्तप्रोक्षण वस्त्र से हाथ मे उठाकर जिस प्रकार प्राण दान दिया, उससे आपकी अनुकम्पा एव करुणाशीलता का परिचय मिलने के साथ उससे भी कहीं आगे बढकर आपकी निर्भयता एव स्वय के जीवन के प्रति निर्मोहता की पुष्टि होती है। जिन्हे मृत्यु से भय न हो, ऐसे महापुरुष ही इस प्रकार का असाधारण कार्य कर सकते है। सर्परक्षा की घटनाओ से यह ध्वनित होता है कि जो साधक–महापुरुष राग–द्वेष के विजयपथ पर अग्रसर हो, उनके कोमल हस्त का आश्रय पाकर चोटग्रस्त सर्प भी मानो अपने स्वभाव को भूल जाते है।

निर्भय होने के साथ आप सत्य, हितकारी एव निरवद्य वचन को अभिव्यक्त करने मे सदैव निर्भीक रहते थे। बिना लाग–लपेट के आपने हितकारी बात को स्पष्ट कहने मे एव चतुर्विध–सघ का मार्गदर्शन करने मे कभी सकोच नहीं किया।

सोच विचारकर अत्यल्प शब्दो मे निरवद्य रूप से अपनी बात प्रस्तुत करना भी आपके जीवन की प्रमुख विशेषता थी। आपका मन्तव्य था कि वचन रत्न की भाति होते है, इसलिए उन्हे सोच–विचारकर बाहर निकालना चाहिए–

वचन रतन मुख कोटडी, लाल कपाट जड़ाय।
बार बार खोलत डरू, पर हाथ न लग जाय।।

प्रवचन मे आप सहज ग्राह्य, किन्तु हृदयस्पर्शी भाषा का प्रभावी प्रयोग करते थे। सस्कृत, प्राकृत एव हिन्दी भाषा के विद्वान् होते हुए भी भाषा के आडम्बर की अपेक्षा भावो के सम्प्रेषण पर आपका विशेष बल था। प्रारम्भिक वर्षो मे आपके प्रवचन आगम–शास्त्र के विवेचन पर ही केन्द्रित रहते थे, किन्तु धीरे–धीरे आपने व्यक्ति एव समाज के समुचित उत्थान हेतु स्वाध्याय, सामायिक एव समाज–सुधार को भी अपने प्रवचनो का विषय बनाया। आपके प्रवचनो मे विषय का प्रतिपादन आगम पुरस्सर होता था। प्रवचन सुगम एव विषय का सम्यक् प्रतिपादन करने वाले होते थे। प्रवचन के अतिरिक्त जब कभी आप सन्त–सतियो, श्रावक–श्राविकाओ से तत्त्वज्ञान की चर्चा करते तब उसका सारगर्भित शैली से सुन्दर निरूपण करना भी आपकी वाणी का प्रमुख वैशिष्ट्य था।

साधारण वार्तालाप मे आप सकेतात्मक भाषा का प्रयोग करते थे। आपके सकेतो को समझना बिना अभ्यास के हर एक के लिए सभव नहीं था। हित–मित एव सत्य वाणी का प्रयोग करने वाले महान् साधक की वाणी मे मत्र सा चमत्कार था। आपके वचन श्रावको के लिए प्रमाण होते थे। भक्त आपको वचनसिद्ध योगी के रूप मे स्वीकार कर आपके वचनो की पालना करने के लिए तत्पर रहते थे। आपके कथन भावी घटनाओ के सूचक होते थे। भाषा समिति की कठोर पालना के साथ सत्य मार्ग पर चलने वाले उन महान् साधक के वचनो का सत्य होना स्वाभाविक ही था।

घटनाओ के विश्लेषण की आपमे अद्वितीय क्षमता थी। एक बार आपने रामनिवास बाग, जयपुर मे गरजते हुए सिह की गर्जना सुनकर श्रद्धेय श्री मानचन्द्र जी म सा से कहा– "मान जी! सुना आपने, 'मै हूँ मै हूँ।' चरितनायक का सकेत कर्मजाल रूपी पिजरे मे जकडी हुई सर्वशक्तिमान, अनन्तगुण सम्पन्न आत्मा की ओर था जो हुकार के माध्यम से साधक को निज–अस्तित्व 'मै हूँ मै हूँ' का प्रतिबोध देती है।

ब्रह्मचर्य की अखण्ड निर्मल साधना भी आपके प्रभावशाली साधक जीवन का हेतु रही। आपके आभामण्डल पर ब्रह्मचर्य की तेजस्विता का अद्भुत प्रभाव था। गर्भकाल से ही माता रूपादेवी से आपने ब्रह्मचर्य के सस्कार विरासत मे प्राप्त किए जिन्हे आप अपनी साधना से निरन्तर पुष्ट करते रहे। तन एव मन पर आपका

पूर्ण नियन्त्रण था। आहार भी आप अल्प ही करते थे। स्वाद पर विजय इतनी थी कि पानी मे रोटी चूरकर खा लेते थे। ब्रह्मचर्य की साधना के लिए मिर्च–मसाले युक्त आहार का वर्जन रखते थे।

स्वय गुणसमृद्ध होने के बावजूद अन्य महापुरुषो, सन्तो, सतियो, श्रावको, श्राविकाओ या जनसाधारण के गुणो का जब आप अपनी निर्मल प्रज्ञा के साथ भीतरी नयनो से अवलोकन करते या विश्वस्त आनन से उनका श्रवण करते तो आपका मुख मण्डल प्रमोद के भाव से भर जाता। गुणियो के प्रति प्रमोद का यह अनूठा रूप आपके गुणो को कई गुणा करता हुआ परिलक्षित होता था। इससे आपकी सरलता, निरभिमानता एव लघुता मे महानता का भाव झलकता था। दूसरो की निन्दा–विकथा का श्रवण करने मे न तो आपके कर्ण ही तत्पर होते थे, न मन मे ऐसे वचनो के लिए कोई स्थान होता था। धर्म एव अध्यात्म के रसिको को निन्दा का रस कीचड के समान बदबूदार एव कलकित करने वाला प्रतीत होता है।

षट्काय के प्रतिपाल, प्राणिमात्र के अभयदाता सन्त, दु खी एव अज्ञानी प्राणियो के प्रति करुणा से आप्लावित न हो, ऐसा कैसे सम्भव है। जन–जन के जीवन–निर्माण के अभिलाषी, अज्ञान–अशिक्षा और अधविश्वास से जनित अधकार को दूर करने के प्रति भावनाशील चरितनायक को कइयो ने कृपालु, कृपानाथ, करुणानिधान, करुणाकर जैसे शब्दो से सम्बोधित किया है।

आत्मचेतना के विकास के साथ सवेदनशीलता अथवा करुणा का विकास स्वत होता है। 'सत्त्वेषु मैत्रीं' के महान् साधक आचार्यप्रवर का प्राणिमात्र के प्रति करुणाभाव था। जिस प्रकार भगवान महावीर ने समस्त जीवो की रक्षा के लिए प्रवचन फरमाया, उसी प्रकार जगत के प्रत्येक प्राणी के विकास हेतु आपकी वाणी से अमृत टपकता था। दीन–दु खियो एव अज्ञानियो को देखकर आपका हृदय दयार्द्र हो उठता था तथा आप साधु–मर्यादा मे रहकर उसके कष्ट–निवारण के लिए यथोचित मार्गदर्शन करते थे। कई बार आप प्रवचन मे दीन–दु खियो की सेवा करने की प्रेरणा करते थे। आपका स्वल्प वचन ही श्रावको द्वारा कृपाप्रसाद समझा जाता था। आप मौनसाधना मे विराजे हुए भी दर्शक के अन्तर्हृदय मे प्रेरक बनकर बोलते थे। आपके सान्निध्य मे बैठने मात्र से ही चित्त मे प्रफुल्लता का अनुभव होता था एव नियम–व्रत अगीकार करने की स्फुरणा जगती थी। आचार्य श्री जब अपनी मौन साधना से उठते तो श्रद्धालु जन उनके श्रीमुख से नियमित स्वाध्याय, सामायिक या अन्य व्रत नियम अगीकार करके पुलकित हो उठते थे। वे किसी को जबरदस्ती नियम अगीकार कराने के हिमायती नहीं रहे। जो भी नियम कराते उसमे नियमकर्ता की पात्रता एव व्यावहारिकता का ध्यान रखते थे। गर्भवती महिला को उपवास कराना, किशोर बालक को माता–पिता की आज्ञा के बिना ब्रह्मचर्य के नियम दिलाना आदि कई नियम आप व्यावहारिक नहीं मानते थे। आपकी सूझबूझ, समझाइश एव साधना के कारण पामर व्यक्ति भी शरण मे आकर शान्ति का अनुभव करते। आचार्य श्री ने उनके प्रति कभी घृणा या वितृष्णा का भाव नहीं दिखाया, अपितु उनमे भी वे पात्रता की तलाश करते। यथायोग्य उनके हृदय को उर्वर बनाते और एक दिन वे भी नतमस्तक होकर गुरुदेव के चरणो में नियम अगीकार करने की अभिलाषा व्यक्त करते थे।

रत्नसघ–परम्परा के आचार्य होते हुए भी आप मूल मे भगवान महावीर के शासन या जिनशासन के सरक्षक थे। अन्य परम्पराओ के साधु–साध्वियो को समय–समय पर सहयोग कर आपने जिनशासन के प्रति अपना कर्त्तव्य सम्पादित किया तथा उनके द्वारा यदि अपनी निश्रा के सन्त–सतियो को किसी प्रकार का साध्वोचित सहयोग दिया जाता तो, आप उसके प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करना आवश्यक मानते थे। कर्त्तव्य एव कृतज्ञता का आपमे अनूठा समन्वय था।

कथनी एव करणी में एकरूपता के आप निदर्शन थे। साधक के आर्जव धर्म की यह पहचान है। कथनी एव

करणी मे भिन्नता विसवाद है, जिसे साधक का दोष माना जाता है। पूज्यप्रवर उतना ही कहते थे, जितना कर पाते थे। बढचढ कर बोलना आपको विभाव प्रतीत होता था। श्रावको को भी आप कथनी एव करणी मे एकरूपता रखने की प्रेरणा करते थे। इसी प्रकार आप अनुशासनप्रिय थे। इसके लिए आप स्वानुशासन पर बल देते थे। करुणाशील होकर भी अनुशासन एव परम्परा की रक्षा मे आप कठोर थे।

अधविश्वास, अशिक्षा, अज्ञान से आक्रान्त, किन्तु विज्ञान के कारण सुख-सुविधाओ के लिए लालायित इस युग के लोगो को धर्म का बोध किस प्रकार दिया जाए, इसे समझने वाले आप युगमनीषी सन्त थे। आपने अधी मान्यताओ मे जकडे मानव-समाज को स्वाध्याय के माध्यम से अपने भीतर ज्ञान-ज्योति प्रज्वलित करने की प्रेरणा की तथा अपरिमित इच्छाओ, वासनाओ, राग-द्वेष, अहकार, माया, लोभ आदि विकारो के कारण तनावग्रस्त मनुष्य को समभाव की प्राप्ति हेतु सामायिक की प्रयोगात्मक साधना प्रदान की। जन-जन को व्यसनो से मुक्त बनाने की आवश्यकता अनुभव की। बालक-बालिकाओ मे सत्सस्कारो के वपन के लिए समाज को सावधान बनाया। नारी-शिक्षा एव सदाचरण की महती प्रेरणा, युवको मे धर्म के प्रति आकर्षण एव समाज-निर्माण मे उनकी शक्ति के सदुपयोग को एक दिशा, समाज मे फैली विभिन्न कुरीतियो यथा-आडम्बर, वैभव-प्रदर्शन, दहेज-माँग आदि पर करारी चोट, विभिन्न ग्राम-नगरो मे व्याप्त कलह एव मनमुटाव के कलुष का प्रक्षालन, समाज के कमजोर तबके एव असहाय परिवारो को साधर्मि-वात्सल्यपूर्वक सहयोग की प्रेरणा आदि अनेक महनीय कार्य आपको युगमनीषी एव युगप्रभावक महान् आचार्य के रूप मे प्रतिष्ठित करते है।

आचार्य श्री ने मनुष्य की ज्ञान-चेतना को जागृत करने का प्रयास किया। साथ ही उन्होने मनुष्य की आदतो एव प्रवृत्तियो को भी सम्यक् दिशा प्रदान करने का बीडा उठाया। प्रदीप्त दीपक ही किसी अन्य दीपक को प्रज्वलित करने मे समर्थ होता है। आचार्य श्री ने व्यक्ति और समाज मे व्याप्त अनेक बुराइयो को दूर करने के लिए स्वाध्याय और सामायिक का शखनाद किया। ज्ञान और क्रिया को आपने स्वाध्याय और सामायिक का प्रायोगिक एव व्यावहारिक रूप दिया जिसे लोगो ने विशाल स्तर पर अपनाया। उन्होने जनता को व्यापक दृष्टि दी। तत्त्वज्ञान को समझने हेतु शिक्षित समाज को आगम शास्त्रो एव आध्यात्मिक ग्रन्थो का स्वाध्याय करने की प्रेरणा की। जैसी जिसकी पात्रता थी उसे वैसी ही प्रेरणा करना आपका स्वभाव था। थोकडो मे रुचि रखने वाले लोगो को थोकडो का मर्म समझाया। नौकरीपेशा लोगो मे सम्यक् सोच को जन्म देने एव पुष्ट करने के लिए प्रतिदिन नियमित रूप से जीवन को ऊँचा उठाने वाले साहित्य का स्वाध्याय करने की आपकी प्रेरणा सफल रही। आचार्य श्री ने लोगो की चेतना से जुडकर उन्हे निरन्तर ऊँचा उठाने का जो भावप्रवण प्रयत्न किया उससे अनेक लोग जुडते चले गए।

आचार्य श्री का चिन्तन था कि जब तक व्यक्ति स्वय सत्साहित्य का स्वाध्याय नहीं करेगा, तब तक उसमे सहज एव स्थायी वैचारिक परिवर्तन सभव नहीं होगा। स्वाध्याय को आप व्यक्ति के आन्तरिक परिवर्तन का अमूल्य साधन मानते थे। यद्यपि स्वाध्याय का अर्थ स्व अर्थात् आत्मा का अध्ययन होता है, किन्तु स्वाध्याय की इस श्रेणी तक पहुचने मे सत्साहित्य का अध्ययन सहायक होने से उसे भी स्वाध्याय कहा गया है। यह स्वाध्याय व्यक्ति मे न केवल अध्यात्म चिन्तन का बीज वपन करता है, अपितु यह उसमे नैतिक जीवन मूल्यो और पारस्परिक सौहार्द को भी विकसित करता है। आचार्य श्री जानते थे कि किसी के जीवन को अन्य कोई नहीं बदल सकता, व्यक्ति स्वय अपने जीवन का निर्माता होता है, किन्तु दूसरो का प्रेरक निमित्त उसमे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सत महात्माओ की सगति भी व्यक्ति के जीवन-निर्माण मे प्रेरक निमित्त होती है, किन्तु यह सगति सदैव सहज उपलब्ध नहीं होती। सत्साहित्य का अध्ययन भी महत्त्वपूर्ण प्रेरक निमित्त बनता है, जो कि

सबको सहज सुलभ हो सकता है। आचार्य श्री ने इस उपाय को अपनाने की जन–जन मे महती प्रेरणा की। शिक्षित स्त्री हो या पुरुष सबको स्वाध्याय का नियम कराया। प्रारम्भ मे 15–20 मिनिट स्वाध्याय करने का नियम कराते थे, किन्तु पाठक जब उसमे रसास्वादन कर आगे बढने की रुचि दिखाता तो आप उसे और अधिक समय तक स्वाध्याय करने की प्रेरणा करते। अध्ययन किए गए सार तत्त्व को अपने जीवन मे स्थान देने के लिए मनन करने की भी भावप्रवण प्रेरणा करते। आपने स्वाध्याय के प्रति जन–जन मे रुचि जागृत करने के लिए कई पदो या भजनो की भी रचना की, जिनमे 'हम करके नित स्वाध्याय ज्ञान की ज्योति जगायेगे', 'जिनराज भजो सब दोष तजो, अब सूत्रो का स्वाध्याय करो', 'ऐ वीरो निद्रा दूर करो, तन–धन दे जीवन सफल करो', 'कर लो कर लो, अय प्यारे सजनो, जिनवाणी का ज्ञान', 'कर लो श्रुतवाणी का पाठ, भविक जन मन–मल हरने को' आदि लोकप्रिय है। आपने स्वाध्याय की मशाल से अज्ञान अधकार को दूर करने की अलख जगाने का सदेश दिया–

[illegible]

[illegible]

सत्साहित्य का स्वाध्याय करने मे प्रवृत्त जनो को आपने आगमो के स्वाध्याय से भी जोडा। आगम–ज्ञान का रसास्वादन प्रत्येक जन कर सके, इसके लिए आपने आगमो का हिन्दी पद्यानुवाद भी उपादेय समझा। दशवैकालिक एव उत्तराध्ययन सूत्र के हिन्दी पद्यानुवाद इस दिशा मे उपयोगी सिद्ध हुए। आपकी अभिलाषा थी कि उत्तराध्ययन सूत्र को जैन गीता के रूप मे लोकप्रियता प्राप्त हो। आगमो का विशद विवेचन करने के साथ, जैन कथाओ, भजनो एव पदो के माध्यम से भी आपने श्रावक समुदाय को स्वाध्याय मे रस लेकर विचारो को सात्त्विक बनाने की प्रेरणा की। स्वाध्याय से जीवन– निर्माण के साथ समाज को एक नई उपलब्धि हुई। नियमित स्वाध्याय से स्वाध्यायियो का विकास हुआ और धीरे–धीरे ऐसे सैकडो स्वाध्यायी तैयार हुए जो पर्युषण पर्व मे सन्त–सतियो के चातुर्मास से विरहित क्षेत्रो मे धर्माराधन कराने लगे। इस प्रवृत्ति के सम्यक् सचालन हेतु स्वाध्याय सघ बना। इस उत्तम प्रवृत्ति की महत्ता को देखते हुए विभिन्न सम्प्रदायो ने भी इसे अपनाया और आज देश मे अनेक स्वाध्याय सघ कार्यरत है।

स्वाध्याय के क्रियात्मक पक्ष को पुष्ट करने के लिए आचार्य श्री ने सामायिक की प्रेरणा की, क्योकि स्वाध्याय और सामायिक का जीवन को ऊँचा उठाने से सीधा सबध है। सामायिक समभाव की साधना का प्रायोगिक अभ्यास है, जिसका प्रभाव सम्पूर्ण जीवन पर पडता है। यह क्रिया का उजला पक्ष है। मन, वचन और काया को नियन्त्रित करने का सामायिक एक सुन्दर साधन है। आचार्य श्री ने अपने भजनो मे स्वय फरमाया कि शरीर के पोषण के लिए जिस प्रकार शारीरिक व्यायाम उपयोगी है उसी प्रकार मन के सम्यक् पोषण के लिए शुभध्यान उपयोगी है–

[illegible]

[illegible]

सामायिक के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए आपने 'जीवन उन्नत करना चाहो, तो सामायिक साधन कर लो', 'कर लो सामायिक रो साधन, जीवन उज्ज्वल होवेला', 'अगर जीवन बनाना है तो सामायिक तू करता जा', 'करने जीवन का उत्थान, करो नित समता रस का पान', सामायिक मे सार है, टारे विषय विकार है' आदि अनेक गेय भजनो एव पदो की रचना की, जिससे सामायिक जन–जन मे प्रिय होती चली गई। लोगो को यह समझ मे आ गया कि सामायिक मे आर्तध्यान और रौद्रध्यान का त्याग करते हुए धर्मध्यान (शुभ ध्यान) का अभ्यास किया जाता है। सामायिक कोई साधारण साधना नहीं, यह अति उच्च कोटि की साधना है, जिसमे

प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, कुशील, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, पर–परिवाद, रति–अरति माया–मृषावाद और मिथ्यादर्शन शल्य इन 18 पापो का त्याग किया जाता है। अकस्मात् एक क्षण मे 18 पापो का त्याग करना पूर्णत सभव तो प्रतीत नहीं होता, किन्तु इस ओर सजगता रखकर समभाव या आत्मभावो मे रहने का अभ्यास किया जाए तो निश्चित ही शान्ति, मैत्री, क्षमा, निरभिमानता, अनासक्ति आदि सद्‌गुणो की निधि व्यक्ति के जीवन को उन्नत और मूल्यवान बना सकती है। साधु–साध्वी तो तीन करण तीन योग से जीवन पर्यन्त समभाव की साधना करने की प्रतिज्ञा करते है। आपश्री ने जब से सयम अगीकार किया, सामायिक की इस प्रतिज्ञा का विस्मरण नहीं होने दिया। आप सदैव चेतना के स्तर पर समभाव की साधना करते हुए आत्मगुणो के पोषण एव सवर्धन मे सहज सजगता पूर्वक लगे रहे। सामायिक साधना के ऐसे महान् साधक का जीवन बोलता था। आपकी वाणी का जादू सा असर होता था। आपने लोगो को अपनी रचनाओ मे सदेश दिया कि सामायिक जीवन की उन्नति का मूल है, सद्‌चिद् आनन्द का स्रोत है, जग के सब जीवो के प्रति बन्धुभाव की प्रेरक है, मोह के जोर को घटाने एव आकुलता का निवारण करने का उत्तम साधन है। यह जीवन–सुधार का आधार है तथा अपने जीवन के सुधार से देश, जाति आदि सबका सुधार सभव है–

सामायिक से जीवन सुधरे जो अपनावेला।
निज के सुधार से देश, जाति सुधरी हो जावेला।

सामायिक और स्वाध्याय के श्रेष्ठ उपायो को आपने एक–दूसरे से जोडा। स्वाध्याय के साथ जीवन मे समभावो के अभ्यास के लिए सामायिक और सामायिक के समभावो को दृढ बनाने के लिए स्वाध्याय का अमोघ उपाय आपने जन–जन को अर्पित किया। स्वाध्याय और सामायिक के व्यापक प्रसार हेतु आपने सामूहिक सामायिक करने की प्रेरणा की, जिससे अनेक स्थानो पर सामायिक–सघो का गठन हुआ। सैकडो की सख्या मे ग्राम–नगर सामायिक सघो से जुडते चले गए। स्वाध्याय को भी आप समाज धर्म बनाना चाहते थे। क्योकि स्वाध्यायशील समाज सामाजिक कुरीतियो को त्यागता हुआ तीव्र गति से विकासोन्मुख हो सकता है। स्वाध्याय को यदि समाज धर्म बनाया जाए अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति आवश्यक रूप से सत्साहित्य का स्वाध्याय करे तो अनेक सामाजिक समस्याओ से सहज ही मुक्ति सभव है। कलह, द्वन्द्व आदि का कारण अज्ञान है। स्वाध्याय से जब ज्ञान का प्रकाश मिलता है तो बहुत से कुविचार स्वत समाप्त हो जाते है। पारिवारिक एव सामाजिक व्यवहार मे भी परिवर्तन परिलक्षित होता है। सत–जीवन के प्रारम्भिक वर्षो से ही आपने स्वाध्याय और सामायिक के फल का जो स्वय रसास्वादन किया, उसे दूसरो मे वितरण करने की भावना ने ही सामायिक और स्वाध्याय की प्रवृत्तियो को वेग प्रदान किया।

गृहस्थ जहाँ द्रव्य दान करके अपने को महान् दाता समझता है, वहाँ सत–महापुरुष अमूर्त रूप मे व्यक्ति और समाज को कितना देते है इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। वे अखूट दानी होते है। जो कार्य करोडो रुपयो मे नहीं हो सकता, वह सत के एक वचन से सभव है। दूसरे शब्दो मे कहे तो सत के एक वचन से जीवन का ऐसा निर्माण हो सकता है जो करोडो अरबो रुपयो से कदापि नहीं हो सकता। इसीलिए सतो के चरणो मे लक्ष्मीपति भी श्रद्धापूर्वक अपना मस्तक झुकाते है। आचार्यप्रवर ने ज्ञानदान, अभयदान आदि के साथ सामायिक की अनूठी साधना करते हुए उसे जन–जन मे जिस भावना से वितरित किया, उसका मूल्य आकना तो सम्भव ही नहीं। प्रसिद्ध कथन है कि लाखो सुवर्ण मुद्रा का प्रतिदिन दान करने वाला व्यक्ति एक सामायिक करने वाले की बराबरी नहीं कर सकता–

दिवसे दिवसे लक्खं देइ सुवण्णस्स खंडियं एगो।
एगो पुण सामाइयं करइ न पहुप्पए तस्स॥

पूज्य चरितनायक तो सतत सामायिक की उत्कृष्ट साधना मे लीन साधक थे, अत उनके द्वारा दी गई सामायिक की प्रेरणा का मूल्य तो अकूत ही हो सकता है। आचार्य श्री ऐसे सत महापुरुष थे, जिनके चरणो मे बडे-बडे न्यायविद्, वैज्ञानिक, प्रोफेसर, डॉक्टर, राजनेता, उच्च प्रशासनिक अधिकारी, अभियन्ता आदि भी नत मस्तक होकर अपनी रिक्तता को दूर करने के लिए प्रयत्नशील रहते थे। इसमे जाति एव धर्म की दीवारे कभी आडे नहीं आई। वहॉ तो सबके लिए सदैव श्रमण मर्यादानुसार द्वार खुले रहते थे। साधारण से साधारण व्यक्ति पर भी आपकी वही कृपादृष्टि थी, जैसी समाज के अग्रगण्य लोगो पर होती है। समानरूप से सभी आगन्तुको के लिए सदैव दरवाजे खुले रहते थे। वे लोगो की बाह्य रूप सम्पदा को नहीं, उनकी अन्तश्चेतना को सवारने मे सलग्न रहते थे। इसीलिए श्रमिक से लेकर सत्ताधीश तक आपके चरणो मे बैठकर अपनी व्यथा का निवारण कर अपने को कृतकृत्य समझते थे।

卐 卐 卐 卐 卐 卐

पूज्यपाद आचार्यप्रवर का ध्यान समाज के प्रत्येक अग के समुचित विकास की ओर था। वे बालक, बालिका, युवक,नारी आदि सभी के जीवन-निर्माण और दोष निवारण के लिए सतत हृदयस्पर्शी प्रेरणा करते रहे। बालको मे प्रारम्भ से ही सत्सस्कारो का वपन हो, इस ओर माता-पिता एव अभिभावको का ध्यान केन्द्रित करते हुए आचार्य श्री फरमाते थे कि सतान को जन्म देना आसान है, किन्तु उसे सत्सस्कारी बनाने पर ही माता-पिता का दायित्व पूर्ण होता है। यदि उन्हे सत्सस्कारी नहीं बनाया गया तो वे माता-पिता के लिए भी परेशानी का कारण बन सकते है। इसके लिए आप फरमाते थे कि उपदेश देने से सस्कार नहीं आते है, उन्हे सस्कार देने के लिए माता-पिता को वैसा आचरण करना पडता है तथा धीरज से समझाना होता है। एक बार बालक हाथ से निकल गया तो फिर लाख कोशिश करने पर भी उसे समझाना कठिन होता है। बच्चो मे शिष्टाचार, सदाचार और नैतिकता के मूल्य ही सत्सस्कार के स्वरूप है। बडो के साथ किस प्रकार बोलना, घर से कहीं जाते समय बडो से पूछकर जाना, कुसगति से बचना, खान-पान मे शुद्धता एव सात्त्विकता रखना, परस्पर हिलमिल कर रहना, एक दूसरे का सहयोग करना, प्राणिमात्र के प्रति सवेदनशील होना, बिना पूछे किसी की वस्तु न लेना, अश्लील साहित्य न पढना, जुआ न खेलना, धूम्रपान-गुटखा एव मद्य का सेवन नहीं करना, मासाहारी भोजनालय मे नहीं जाना, वचनो मे प्रामाणिकता रखना, किसी कमजोर की हसी न उडाना, घर मे बडो की, बीमार की और पडौस मे असहाय की सेवा करना, मूक पशु और पक्षियो को अपने समान समझना एव उन्हे न छेडना और उनके प्राणो की रक्षा करना, अकारण वनस्पति को हानि न पहुचाना, मित्रो के साथ सहृदयता का व्यवहार करना, सतो की सन्निधि का लाभ उठाना, निन्दा-विकथा मे रस न लेना, महापुरुषो की कृतियो का अध्ययन करना, सहनशीलता का विकास करना, बडो के सामने पलटकर उत्तेजना पूर्वक जवाब न देना, स्व-विवेक का उपयोग करना, किसी की चुगली न करना, बिना आवश्यकता के वस्तुएँ नहीं खरीदना, अतिथियो का आदर करना, फैशन एव फिजूलखर्ची से बचना, प्रतिदिन परमेष्ठी स्मरण एव स्वाध्याय करना आदि सत्सस्कार के विविध रूप है। इन सत्सस्कारो से बालक के जीवन का निर्माण होता है। आचार्य श्री फरमाते थे कि शिक्षा दो प्रकार की होती है- 1 जीवन निर्वाहकारी शिक्षा 2 जीवन निर्माणकारी शिक्षा। जीवन का निर्वाह तो पशु-पक्षी भी कर लेते है, कीट-पतगे भी कर लेते है, किन्तु मानव ही ऐसा प्राणी है जो जीवन निर्वाह के साथ जीवन का निर्माण भी कर सकता है। माता-पिता बालक के जीवन निर्वाह के लिए तो चिन्तित रहते है, किन्तु जीवन-निर्माण के प्रति भी उनकी सजगता की ओर आचार्य श्री ने श्रावको का ध्यान आकृष्ट किया। इस ओर

आपकी पीडा की अभिव्यक्ति द्रष्टव्य है– *"जो माँ–बाप बच्चो के शरीर की चिन्ता करते है, किन्तु आत्मा की चिन्ता नहीं करते, उनके जीवन–सुधार की चिन्ता नहीं करते, मै कहूँगा वे सच्चे माँ–बाप कहलाने के हकदार नहीं हैं। यदि माँ–बाप को अपना फर्ज अदा करना है तो उन्हे अपने बालक–बालिकाओ के चरित्र–निर्माण की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए। आज जीवन–निर्वाह की शिक्षा के लिए वे बच्चो पर हजारो लाखो रुपये व्यय कर देते है, जीवन–निर्माण के प्रति भी उनका वैसा ही ध्यान होना चाहिए।"*

बालिका को आचार्य श्री ने देहली के दीपक की उपमा देते हुए फरमाया– *"जिस प्रकार देहली मे रखा हुआ दीपक कमरे के अन्दर और बाहर दोनो ओर प्रकाश फैलाता है, उसी प्रकार बालिका की शिक्षा और सस्कार से दो घर–परिवार सस्कारित एव प्रकाशित होते है।"* इसलिए बालक से भी अधिक बालिका को सस्कारित करना परिवार एव समाज के विकास के लिए आवश्यक है। बचपन मे ही बालक–बालिका मे जो सस्कार दिये जाते है, वे प्राय स्थायी होते है। विषम एव विपरीत परिस्थितियो मे भी उनके बचपन के सस्कार जागृत होकर उन्हे दिशा–निर्देश करते है। समाज मे कन्या का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसे प्राचीन कुरीतियो के दुष्परिणामो से अवगत कराते हुए साक्षरता के साथ जीवन–निर्माणकारी शिक्षा से जोडा जाए तो भावी समाज एक नई करवट ले सकता है। इस प्रकार के आपके युग–प्रभावी सोच से जैन समाज प्रभावित हुआ।

आचार्य श्री का चिन्तन व्यापक दृष्टिकोण को लिए हुए होता था। वे प्रत्येक जन का विकास देखना चाहते थे। जब युवको को उन्होने धर्म से विमुख देखा तो उन्हे भी जीवन को ऊँचा उठाने की प्रेरणा करते हुए धर्म से जोडा। युवको को आपने व्यसनमुक्ति के साथ विवेक को जागृत रखकर निरन्तर आगे बढने की प्रेरणा की। आपका मन्तव्य था कि युवक सगठित होकर समाज को बुराइयो से बचाने मे अग्रणी भूमिका का निर्वाह कर सकते है। आपने धर्म को पोशाक की भाति नहीं, अपितु जीवन–सुधार के आधार की भाति समझने की प्रेरणा की। आपने फरमाया कि धर्म दिखावे की वस्तु नहीं, अपितु चित्त को निर्मल बनाने का साधन है। जब भी कोई युवक उनके सम्पर्क मे आता तो आप उसमे परमेष्ठि–स्मरण, स्वाध्याय, सामायिक, सेवा आदि प्रवृत्तियो से जुडने की भाव–भूमि तैयार करते थे। युवको मे वृद्ध धर्म–जनो की काषायिक परिणितियो को देखकर जब कभी धर्म से विमुखता दिखाई पडती तो आप फरमाते कि हमे वृद्धजनो की काषायिक परिणतियो को देखकर धर्म को हेय नहीं समझना चाहिए। धर्म तो अपनी वृत्तियो पर विजय का उत्कृष्ट साधन है। धर्म केवल स्थानक तक ही सीमित नहीं है, इसका प्रयोग जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे होना चाहिए। यदि वृद्धजनो द्वारा धर्म को जीवन मे सम्यक् रूपेण स्थान दिया जाए तो प्रश्न ही नहीं उठता कि युवक धर्म से विमुख हो। धर्माचरण का सबध सम्पूर्ण जीवन से है। भगवान ने तो फरमाया है कि जब तक तुम्हारा शरीर स्वस्थ है, इन्द्रियाँ बराबर कार्य कर रही है, तब तक धर्म साधना कर लेनी चाहिए– *'जाव इन्दिया न हायन्ति, ताव धम्म समायरे'*। जब कोई बुजुर्ग भाई आचार्य श्री से कहते कि महाराज पोते का विवाह कर लूँ, कारोबार बेटो–पोतो को सभला दूँ, तब धर्म की आराधना करूँगा तो आचार्य श्री उन्हे स्मरण कराते– *"इसका क्या भरोसा कि जब पोता खडा होगा तब तक आप गोता नहीं खायेगे। इतिहास साक्षी है कि राजघराने के लोगो ने भरी जवानी मे राजवैभव के विलास और आमोद–प्रमोद को छोडकर धर्म–साधना प्रारम्भ की।"*

धर्म के सम्बन्ध मे आपने इस रूढ मान्यता पर प्रहार किया कि धर्म से मात्र परलोक सुधरता है, इस लोक के लिए धर्म नहीं है। आपने फरमाया कि भगवान महावीर द्वारा प्ररूपित धर्म परलोक के लिए तो कल्याणकारी है ही, किन्तु उससे पहले वह इहलोक के लिए कल्याणकारी है। इस लोक मे मानसिक शान्ति, कषायों के शमन से प्रशम सुख की अनुभूति, पारस्परिक कलह के स्थान पर मैत्री का वातावरण, एक–दूसरे के प्रति सहयोग का भाव, तृष्णा पर नियन्त्रण आदि विभिन्न धर्म परिणाम इहलोक मे देखे जाते है। आपका उपदेश साधारण शैली मे

अनुभूतिपूर्ण एव हृदयग्राही होता था। आपने कभी भय एव प्रलोभन से धर्म को अपनाने का उपदेश नहीं दिया, अपितु उसे इस जीवन के निर्माण, जीवन जीने की कला, शान्ति और सच्चे सुख की अनुभूति के साथ जोडा। धर्म के क्षेत्र में आप स्वावलम्बन को अपनाने की प्रेरणा करते हुए फरमाते– *''जैसे जगल के वृक्ष बागवान की देखरेख के अभाव मे भी हरे–भरे रहते है, इसी प्रकार साधु–सन्तो के बिना भी स्वाध्याय के माध्यम से धर्म–साधना हरी–भरी रहनी चाहिए।''*

आचार्यप्रवर ने युवको को आगे आने की प्रेरणा करने के साथ नारी को बाह्य आभूषणो की बजाय शील एव सयम का भूषण धारण करने की प्रेरणा की। काव्य मे आपके ही शब्द साक्षी है–

शील और [illegible]
[illegible]

नारी मे वह शक्ति है कि वह घर के प्रत्येक सदस्य को धर्ममार्ग से जोड सकती है। नारी की विभिन्न भूमिकाएँ है। माता के नाते वे सतति मे सत्सस्कारो का बीजारोपण कर सकती है, सहधर्मिणी के रूप मे वे पति की अनुचित प्रवृत्तियो पर अकुश लगा सकती है, बहिन के रूप मे भाई को वे उसी प्रकार सबोधित कर साधना मे आगे बढा सकती है, जिस प्रकार ब्राह्मी व सुन्दरी ने बाहुबली को अहकार विजय हेतु प्रेरित कर केवलज्ञान की ओर आगे बढाया। अन्य रूपो मे भी नारी प्रेरणास्रोत रही है। कई बार अधार्मिक एव व्यसन मे फसे लोग नारी के कोमल उपदेशो से प्रभावित होकर सन्मार्ग की ओर उन्मुख हुए है। कहते है कि यदि गृहिणी कटुभाषिणी, कर्कशा, कुशीला तथा अनुदार हो तो इससे परिवार का आत्म–सम्मान एव गौरव घट जाता है। वही नारी यदि उदारता, शालीनता, सुशीलता, मधुरता, कर्त्तव्य परायणता, सहनशीलता, सेवाभावना, विवेकशीलता, धर्मनिष्ठा, विनम्रता, आत्मीयता, सरलता, क्षमाशीलता आदि गुणो से सम्पन्न हो तो वह नारी घर को स्वर्ग बना देती है। आचार्यप्रवर नारी की शिक्षा पर जोर देते थे। उनका मन्तव्य था कि नारी के अज्ञान–अधकार को दूर करने से परिवार की अनेक समस्याएँ स्वत समाप्त हो जाती हैं। कई जगह समस्याओ का जन्म ही नहीं होता है। नारी को धर्मस्थान मे सादगी एव अनुशासन का पालन करना चाहिए, इसकी आचार्य श्री अक्सर प्रेरणा करते रहते थे। जब कभी महिलाएँ तपस्या के प्रत्याख्यान हेतु आभूषणो से लद कर आती तो आपको यह धर्म के अनुकूल आचरण नहीं लगता था। तपस्या के अवसर पर भोज एव आडम्बर के आप सख्त खिलाफ थे। उन्हे उसमे तीन प्रकार के दोष दिखाई पडते थे– एक तो यह कि इससे तप का असली स्वरूप धूमिल हो जाता है, दूसरा यह कि यह लोगो मे ईर्ष्या–द्वेष का कारण बनता है तथा तीसरा यह कि जो इस प्रकार आडम्बर नहीं कर सकते वे तप करने का साहस नहीं जुटा पाते, इससे तप साधना मे दूसरो को अन्तराय का अनुभव होता है। आप फरमाते थे– *''आज के समय मे इसको धर्म प्रभावना समझा जा रहा है, किन्तु ऐसा समझना बिल्कुल गलत है। आज तो यदि मै यह कहूँ कि यह प्रभावना नहीं बल्कि अप्रभावना है तो भी अनुचित नहीं होगा।'' ''आज जिस समय हजारो लाखो लोगो को भर–पेट रोटी मुश्किल से मिले और लोगो का जीवन निर्वाह मुश्किल से हो, उस समय हमारी माताएँ–बहिने धर्म प्रभावना के लिए हजारो लोगो मे प्रदर्शन करती हुई बाजार से निकले तो जैनेतर समाज के लिए ईर्ष्या का कारण बनता है।''* तप पर होने वाले प्रदर्शन एव अपव्यय पर आक्षेप करते हुए आप श्रावको को फरमाते थे कि *आप लोगों ने शादी को महगा कर दिया, मायरे को महगा कर दिया, कम से कम तपस्या को तो महगा मत बनाओ।* आचार्यप्रवर का इसके पीछे गहन चिन्तन था कि धर्म–साधना अमीर और गरीब सबके लिए समान होनी चाहिए। यही नहीं, जाति, वर्ग एव ऊँच–नीच के भेद से दूर रहकर तप का आराधन मात्र कर्मों की निर्जरा हेतु किया जाना चाहिए। श्रावको को आडम्बर से बचने एव सहयोग का भाव अपनाने की प्रेरणा करते हुए आपने फरमाया– *''आप जो प्रदर्शन मे, दिखावे मे खर्चा करते है, वही यदि कमजोर भाई–बहिनो की सहायतार्थ एव*

उनकी व्यथा दूर करने मे किया जाय तो लाभ का कारण है। अपव्यय का उपयोग स्वधर्मि–वात्सल्य मे भी लाभ का निमित्त बन सकता है।''

माताओ पर बहुत बडा दायित्व है। भावी पीढी की प्रथम शिक्षक माता ही होती है। उसके द्वारा प्रदत्त सस्कार बालक के विकास को निर्धारित करते है। आचार्य श्री का मानना था कि सतति से मोह का सबध न रखकर माता को अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए। बहिने अनेक अधविश्वासो से आक्रान्त रहती है, वे पद–पद पर अनिष्ट की आशका से ग्रस्त रहती है। इसलिए वे अनेक देव–देवियो की पूजा तथा ढोगी–पाखण्डी सन्यासियो के चक्कर मे फस जाती है। धर्म का सही स्वरूप यदि वे समझ ले तो इस प्रकार की मिथ्या मान्यताओ के भवर–जाल से बचा जा सकता है। बालको को सही सस्कार देने के लिए भी माताओ की धार्मिक योग्यता का विकास अपेक्षित है।

दहेजप्रथा पर कुठाराघात करते हुए फरमाया– *''सुनता हूँ कि जैन समाज के सदस्यो मे और समाज के अग्रगण्य कहलाये जाने वाले लोगो मे दहेज की कुप्रथा ने भयकर रूप से गहरा घर कर रखा है। दहेज की कुप्रथा के रूप मे बढे हुए मानव के लोभ से कभी कुलवधुओ को आत्महत्या के लिए विवश किया जाता है, कभी लोभियो के द्वारा सताया जाता है। इस प्रथा के कारण अनेक घरो मे 25–25 वर्ष की कुवारी कन्याएँ मिलेगी। दयालु जैन कुल मे जन्म ग्रहण करने वाले भाई–बहिन डोरे और बींटी के लिए, टीके और दहेज के लिए बोलते हुए और आग्रह करते हुए शरमाते नहीं। आप स्वय ही सोचिए कि यह आपकी कैसी दया है? समाज के अग्रणी लोग एव स्वाध्यायी जन प्रतिज्ञा कर ले कि वे अपने बच्चे–बच्चियो के लिए बींटी, डोरा या दहेज आदि कुछ न तो लेगे और न देगे ही।''* आपने अनेक प्रसगो पर स्वाध्यायियो एव जैन समाज के बधुओ को दहेज का ठहराव और दहेज की माग न करने की प्रतिज्ञा कराई। प्रदर्शन एव लोभ–लालच के कारण बढती इस बुराई का निकन्दन हो, इसके लिए गुरुदेव ने युवको को भी प्रेरणा करते हुए फरमाया कि नवयुवक दहेज, टीके आदि की कुप्रथाओ को नष्ट करने का यदि दृढसकल्प कर ले तो यह निकन्दन असम्भव नहीं। आपने अपने प्रवचनो मे फरमाया– *''यदि समाज कुछ प्रतिज्ञाओ मे आबद्ध होकर चले तो बहुत कुछ सुधार हो सकता है। जैसे– 1 दहेज की न कोई माग करनी और न ही किसी से करवानी 2 दहेज का किसी भी प्रकार का कोई प्रदर्शन नहीं करना। 3 दहेज कम मिलने पर कोई आलोचना अथवा चर्चा नहीं करनी।''*

मृत्यु के पश्चात् कई दिनो तक रोना एव मृत्युभोज या स्वामिवत्सल करना अज्ञान, अशिक्षा और असम्यक् सोच का परिणाम है। कई बार मुँह ढाकने एव रोने की प्रथा नाटकीय ढग से चलती है। जो जैन भाई आत्मा का पुनर्जन्म स्वीकार करते है और यह भी जानते है कि गया हुआ वापस नहीं आता तो फिर व्यर्थ का विलाप घर के वातावरण को दूषित ही करता है तथा आहत व्यक्ति की पीडा अधिक गहरी होती जाती है। मस्तिष्क उस घटना से उभर नहीं पाता। आचार्य श्री अपने प्रवचनो मे इन बुराइयो के निवारण हेतु प्रेरणा करते रहते थे। रोने की लोकरूढि पर आपने फरमाया– *''यह कैसी रीति है कि जो महिलाएँ थोडी देर पहले बैठी हुई आपस मे बाते करती होती है, वे आगन्तुक महिला को रोते देखकर रोना प्रारम्भ कर देती है।''* गुरुदेव ने इसे अनर्थदण्ड मानकर त्यागने का उपदेश दिया।

अखाद्य–भक्षण, अपेय–पान, अगम्य–गमन आदि विभिन्न बुराइयो का निकन्दन भी उन युगमनीषी को अभीष्ट रहा। आपका चिन्तन सकारात्मक था। नकारात्म सोच वालो को आगाह करते हुए आप फरमाते– *''मै समाज के भीतर की कमजोरियो को, बुराइयो को नगे रूप मे बाहर प्रस्तुत करना समाज की शक्ति मे, समाज के मानस मे दुर्बलता लाने का कारण समझता हूँ। इसके विपरीत मै यह सोचता हूँ कि इन दुर्बलताओ को बाहर*

प्रकट करने की बजाय इनका उपचार प्रस्तुत किया जाए, जिससे कि समाज मे ऐसे विकार प्रविष्ट ही न हो तथा जो विकार प्रविष्ट हो गए हो, वे बढे नहीं और पुराने विकारो को पुरानी बुराइयो को जो समाज मे व्याप्त है, धीरे-धीरे कारगर ढग से निकाला जाए।'' इससे यह भी स्पष्ट होता है कि आचार्यप्रवर न केवल कुशल मनोवैज्ञानिक अपितु समाज के उत्तम मनोचिकित्सक भी थे। जिस प्रकार व्यक्ति की बुराई को बार-बार प्रकट करने पर वह नहीं छोडता, किन्तु उसके दुष्परिणाम समझ मे आने पर वह छोडने के लिए तत्पर हो जाता है, उसी प्रकार समाज को विभिन्न दोषो के दुष्परिणामो से अवगत कराकर उनसे मुक्त कराना ही युगमनीषी करुणानिधान आचार्य श्री का लक्ष्य रहा।

समाज धर्म की दृष्टि से आपने सामूहिक रात्रिभोज एव उसमे जमीकद के प्रयोग को अनुचित बताया तथा श्रावको को प्रतिज्ञा ग्रहण करने के लिए तैयार किया कि वे सामूहिक भोज मे रात्रिभोजन नहीं करेगे तथा जमीकन्द का त्याग रखेगे। आपका मन्तव्य था कि नित्यप्रति न बन सके तो कम से कम समाजधर्म के प्रतीक रूप मे जैनो के द्वारा इतनी मर्यादा का निर्वाह तो होना ही चाहिए।

महापुरुष बिना किसी भेदभाव के समाज मे एकता का स्वरूप देखकर प्रमुदित होते है तो समाज मे व्याप्त कलह, मनमुटाव आदि को देखकर उनका हृदय अनुकम्पित हो जाता है। सिवाची पट्टी के 144 गावो मे व्याप्त मनमुटाव के रौद्र रूप को देखकर आपका दिल दहल उठा। ऊनोदरी तप-साधक आचार्य श्री ने समाज के इस भयावह झगडे को मिटाने का मूक सकल्प करते हुए झगडा मिटने तक दुग्ध-सेवन का त्याग कर दिया। आपने बडी सूझ-बूझ के साथ पीयूषपाविनी वाणी से समाज के अग्रणी लोगो को कषाय शमन की शिक्षा दी, जिससे सवत् 2022 के बालोतरा चातुर्मास मे यह दीर्घकालीन विवाद एव मनोमालिन्य प्रेम-मैत्री मे परिणत हो गया।

आप जहॉ कहीं भी पधारे, वहॉ व्याप्त मनमुटाव, कलह एव द्वन्द्व को दूर कर आपने समाज मे प्रेम एव एकता का सचार किया। लासलगाव (सवत् 1999), फतहगढ (सवत् 2013), पाली (सवत् 2018), किशनगढ (सवत् 2019) आदि बीसियो ग्राम- नगरो मे कलह-कलुष को धोकर आपने प्रेम एव मैत्री की सरिता को प्रवाहित किया। आप फरमाते थे- *''समाज मे एक-दूसरे पर विश्वास आवश्यक है। शरीर मे आँख मे चूक से कभी पैर मे काटा लग जाय तो क्या पैर आख पर भरोसा नहीं करेगा? और क्या आँख पैर का काटा निकालने मे सहयोग नहीं करेगी?''* इसी प्रकार के भावो से ओतप्रोत आपकी काव्यरचना के कुछ पद द्रष्टव्य है-

[illegible] सुखदाई।
[illegible]
[illegible] रही छुपाई।
[illegible]
फिर भी पैर [illegible]
[illegible]
[illegible] मान बढाई।

एकता के स्वरूप को परिभाषित करते हुए आप फरमाते थे कि समाज मे एकता नारगी की तरह नहीं खरबूजे की तरह होनी चाहिए। नारगी बाहर से एक दिखाई देते हुए भी भीतर से अलग-अलग फाक मे विभक्त होती है, जबकि खरबूजा बाहर से रेखाओ मे विभक्त प्रतीत होता हुआ भी भीतर से एक होता है। आपका औपचारिकता मे नहीं अतरगता मे विश्वास था। लोक-दिखाऊ एकता उन्हे कतई यथेष्ट नहीं थी।

एकता की स्थापना एव स्थायित्व के लिए आप फरमाते थे- *''समाज मे आपको कैची नहीं सुई बनकर*

रहना है। कैची एक बडे कपडे को काटकर अनेक टुकडे कर डालती है, जबकि सुई बिखरे हुए अनेक टुकडो को सिल डालती है।''

एकता तभी रह सकती है, जब परस्पर सहिष्णुता का भाव हो। जैन धर्मानुयायी परम्परा-भेद के कारण भले ही विभक्त हो, किन्तु वे भी सहिष्णुता के बल पर एक हो सकते है, आचार्यप्रवर ने इस सबध मे अपना चिन्तन अभिव्यक्त करते हुए फरमाया- *''आज विविध परम्परा के लोग जब एक जगह पर धर्मक्रिया करने बैठते है, तब भिन्न-भिन्न प्रकार की नीति-रीति देखकर टकरा जाते है, वाद-विवाद मे पड जाते है, जबकि धार्मिक-मच सहिष्णुता का पाठ पढाने का अग्रिम स्थान है। लोकसभा मे विभिन्न प्रकार की वेशभूषा, साज-सज्जा, बोलचाल और नीतिरीति के व्यक्ति एक साथ बैठ सकते है, तो फिर क्या लम्बी मुँहपत्ती और चौडी मुँहपत्ती वाले प्रेमपूर्वक एक साथ नहीं बैठ सकते?''*

卐 卐 卐 卐 卐 卐 卐

अध्यात्म साधना के पथ पर वही साधक अपने चरण बढा सकता है, जो वैचारिक दृष्टि से समृद्ध हो। आचार्यप्रवर आचरण पक्ष मे वज्र की भाति जितने कठोर थे उतने ही विचार पक्ष मे मजबूत एव सुलझे हुए दार्शनिक थे। आपको विचार की भूमि से ही आचार का पोषण अभीष्ट था। ध्यान, मौन एव भेदज्ञान की साधना से परिपक्व साधक मे विचारो का उदय सहज रूप से होता है, जो उनकी साधना को पुष्ट करने एव अग्रसर करने मे उपयोगी बनता है। प्रज्ञावान आचार्यप्रवर का स्पष्ट मन्तव्य था कि खगोल, भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान आदि की जानकारी आध्यात्मिक दृष्टि से ज्ञान नहीं है। ज्ञान तो अन्तर का सच्चा आलोक है जो मानव की भीतरी कालिमाओ को धोने मे समर्थ है। ज्ञान मनुष्य को बन्धन की ओर नहीं मुक्ति की ओर ले जाता है, कलह की ओर नहीं मैत्री की ओर ले जाता है, लोभ की ओर नहीं सतोष की ओर ले जाता है, भोग की ओर नहीं योग की ओर ले जाता है। ऐसा ज्ञान ही सम्यक् ज्ञान है। सम्यक् ज्ञान से गर्भित एव प्रसूत विचार से ही जीवन मे आचरण की सुन्दरता का प्रवेश होता है एव वह आचरण टिकाऊ बन पाता है। आपके शब्दो मे- *''विचार की भूमिका पर ही आचार के सुन्दर महल का निर्माण होता है। विचार की नींव कच्ची होने पर आचार के भव्य प्रासाद को धराशायी होते देर नहीं लगती।''*

आपने कभी विचारशून्य बाह्य क्रिया को प्रोत्साहित नहीं किया। आपने आगम के इस तथ्य की अनेकत्र पुष्टि की है कि सम्यक्ज्ञानी की क्रिया करोडो वर्षो के कर्मो का कुछ ही क्षणो मे क्षय कर सकती है (*त णाणी तीहिं गुत्तो, खवेइ ऊसासमेत्तेण*)। तप, सवर, दया आदि सभी धर्म-क्रियाएँ आपने ज्ञानपूर्वक सम्यक् रीति से करने की प्रेरणा की।

ज्ञानी और अज्ञानी के जीवन मे भेद का प्रतिपादन करते हुए आपने फरमाया- *''अज्ञानी और ज्ञानी के जीवन मे बडा अन्तर होता है। बहुत बार दोनो की बाह्य क्रिया एक-सी दिखाई देती है, फिर भी उसके परिणाम मे बहुत अधिक भिन्नता होती है। ज्ञानी का जीवन प्रकाश लेकर चलता है, जबकि अज्ञानी अन्धकार मे ही भटकता है। ज्ञानी का लक्ष्य स्थिर होता है, अज्ञानी के जीवन मे कोई लक्ष्य प्रथम तो होता ही नहीं, अगर हुआ भी तो विचारपूर्ण नहीं होता। उसका ध्येय ऐहिक सुख प्राप्त करने तक ही सीमित होता है। फल यह होता है कि अज्ञानी जीव जो भी साधना करता है वह ऊपरी होती है, अन्तरग को स्पर्श नहीं करती। उससे भवभ्रमण और बन्धन की वृद्धि होती है, आत्मा के बन्धन कटते नहीं।''*

भक्ति एव प्रार्थना के सबध मे चरितनायक का चिन्तन स्पष्ट था। जैन कर्म सिद्धान्त की मान्यता है कि आत्मा ही अपने सुख-दु ख का कर्ता एव भोक्ता है। फिर प्रश्न उठता है कि तीर्थंकर आदि की स्तुति क्यो की

जाए ? इस प्रश्न का समाधान चरितनायक के भक्तिप्रवण दार्शनिक मस्तिष्क ने इस प्रकार दिया – *''प्रभु भक्ति तुम्ब की तरह तारक है, मन की मशक मे प्रभु–भक्ति एव सद्विचार की वायु भरने से आत्मा हल्की होकर तिर जाती है।''* लौकिक कामना के लिए भक्ति करने का निषेध करते हुए आपने फरमाया– *''किसी लौकिक वस्तु की प्राप्ति के लिए भक्ति करने की आवश्यकता नहीं। लौकिक कामना भक्ति या तप का मोल घटाने वाली है।''* वीतराग की स्तुति की उपयोगिता प्रतिपादित करते हुए आपने निरूपित किया–*''हमारी प्रार्थना के केन्द्र यदि वीतराग होगे तो निश्चित रूप से हमारी मनोवृत्तियो मे प्रशस्त और उच्च स्थिति आएगी। उस समय सासारिक मोह माया का कितना ही सघन पर्दा आत्मा पर क्यो न पडा हो, किन्तु वीतराग स्वरूप का चिन्तन करने वाले उसे धीरे–धीरे अवश्य हटा सकेगे।''* वीतराग की स्तुति वीतराग बनने के लिए की जाती है– *'वन्दे तद्गुण लब्धये'*। आचार्यप्रवर का चिन्तन था कि जिस प्रकार शुद्ध वायु के सेवन से मनुष्य स्वत स्वस्थ बनता है इसी प्रकार वीतराग की स्तुति से मनुष्य स्वय वीतरागता को प्राप्त करता है। इसलिए आचार्यप्रवर ने वीतराग के प्रति की गई स्तुतिप्रधान प्रार्थना का वैशिष्ट्य इन शब्दो मे व्यक्त किया है– *''वीतरागता की प्रार्थना मे यह विशेषता है कि प्रार्थी प्रार्थ्य के समान ही बन जाता है। इस प्रकार की उदारता सिर्फ वीतराग मे ही है।''*

बाह्य तप के साथ आभ्यन्तर तप की साधना को आप आवश्यक मानते थे– *''आत्मा को पूर्णत विशुद्ध बनाने के लिए बाह्य तप के साथ–साथ अन्तरग तप की भी अत्यन्त आवश्यकता है। बाहर का तप इसलिए किया जाता है कि जो हमारा अन्तर विषय– कषायो की उत्तेजनाओ से आन्दोलित है, उद्वेलित है, हमारे भीतर मोह, ममता और मिथ्यात्व का प्राचुर्य है, प्राबल्य है, वह कम हो।''* आपने तप के साथ सयम पर भी बल दिया, आपका चिन्तन था– *''बिना सयम के जो तप है, वह वास्तविक तप नहीं है।''*

धर्म–साधना के लिए अमीर और गरीब को समान बताते हुए आपने फरमाया– *''धर्म साधना के लिए किसी के पास एक पैसा भी नहीं है तो भी उसके पास तीन साधन है– तन, मन और पावन वचन।''* किसी भी प्रकार की आध्यात्मिक साधना क्यो न हो, तन, मन और वचन का सुप्रणिधान आवश्यक है। आपने परिग्रह का परिमाण करने पर बल देने के साथ अनीति एव अन्याय से धन कमाने को अनुचित ठहराया– *''बिना श्रम के, बिना न्याय के और बिना नीति के जो पैसा मिलाया जाता है, उससे कोई लखपति और करोडपति तो हो सकता है, लेकिन वह पैसा उस परिवार को शान्ति व समाधि देने वाला नहीं हो सकता।''* परिग्रह को अफीम समझकर गृहस्थ से उसकी मर्यादा करने की प्रेरणा की। परिग्रह मे आपने दो बुराइयो का उल्लेख करते हुए फरमाया– *''परिग्रह का दूसरा नाम दौलत है, जिसका अर्थ है 'दो लत' अर्थात् दो बुरी आदते। उन दो लतो मे पहली लत है हित की बात न सुनना और दूसरी लत है गुणी, नेक, सलाहकार और वन्दनीय व्यक्तियों को आदर न देना।''* परिग्रह की लालसा शान्ति की शत्रु है। इस सबध मे आपका मन्तव्य था– *''लालसा के पाश मे बंधा मानव संग्रह की उधेड–बुन मे सब कुछ भूलकर आत्म–शाति खो बैठता है।''*

भगवान महावीर से गौतम गणधर ने प्रश्न किया– भगवन्! कौनसे दो कारण है जो उत्तम धर्म श्रवण मे बाधक है? प्रभु ने समाधान किया– आरम्भ और परिग्रह। आपने परिग्रह एव आरम्भ मे सबध स्थापित करते हुए कहा– *''परिग्रह आरम्भ को छोडकर नहीं रहता और आरम्भ से ही परिग्रह बढता है। आरम्भ और परिग्रह की मित्रता है, दोनों का आर्थिक गठजोड है। दोनो ऐसे भयकर रोग है जो हमारी चेतना शक्ति को विकास का मौका नहीं देते।''* इसलिए आपने सदैव आरम्भ और परिग्रह को कम करने एव त्यागने की शिक्षा दी।

इच्छा का परिमाण सुख एव शान्ति के लिए आवश्यक है। ऐसा मन्तव्य आपके इस कथन से स्पष्ट है– *''इच्छा का परिमाण नहीं किया जाएगा और कामना बढती रहेगी तो प्राणातिपात और झूठ बढेगा, अदत्तग्रहण मे भी वृद्धि होगी। कुशील को बढाने मे भी परिग्रह कारणभूत होगा। इस प्रकार असीमित इच्छा सभी पापो और*

अनेक अनर्थों की मूल है।''

धनपतियो से आपने धन के अधीन न होकर उसको अपने अधीन करने का परामर्श देते हुए कहा– *''यदि धन तुम पर सवार हो गया तो वह तुमको नीचे डुबो देगा।''* धन का सदुपयोग करने की प्रेरणा आपके प्रवचनो मे अभिव्यक्त होती रहती थी, यथा– *''चतुर कृषक जल को नाली में न डालकर बाडी मे बहाता है। इसी प्रकार 18 पापो से सचित द्रव्य को आरम्भ–परिग्रह की नाली मे न बहाकर ज्ञान–दान, अभयदान, शासन–सेवा, स्वधर्मि–सहाय, उपकरण दान आदि मे लगाने से उसका सदुपयोग हो सकता है।''*

आपका सदेश था– ''निर्व्यसनी हो, प्रामाणिक हो, धोखा न किसी जन के सग हो।'' भय एव अनिष्ट की आशका के कारण आप जीवन मे प्रामाणिकता को टालना उचित नहीं मानते थे। प्रामाणिक जीवन को आपने वास्तविक विकास का आधार मानते हुए सदेश दिया– *''प्रामाणिकता के साथ व्यापार करने वाले कभी घाटा नहीं उठाते। घाटे के भय से अधर्म और अनीति करने वालो को मै विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि धर्म किसी भी स्थिति मे हानिकारक नहीं होता। अतएव भय को त्याग कर, धर्म पर श्रद्धा रखकर प्रामाणिकता को अपनाओ। ऐसा करने से आत्मा कलुषित होने से बचेगी और प्रामाणिकता का सिक्का जम जाने पर अप्रामाणिक व्यापारियो की अपेक्षा व्यापार मे भी अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकेगा।''*

वास्तव मे धन की भूख मन मे होती है, जो बिना सतोष के नहीं मिट पाती। आपने इस तथ्य को सक्षेप मे इस प्रकार गुम्फित किया है– *''पेट की भूख तो पाव दो पाव आटे से मिट जाती है, मगर मन की भूख तीन लोक के राज्य से भी नहीं।''*

पेट की भूख शान्त करने से जुडे आहार–विज्ञान के सम्बन्ध मे भी साधको को निर्देश देते हुए फरमाया– *''जो लोग आहार के सबध मे असयमी होते है, उत्तेजक भोजन करते है। उनके चित्त मे काम–भोग की अभिलाषा तीव्र रहती है। वास्तव मे आहार– विहार के साथ ब्रह्मचर्य का घनिष्ठ सबध है।''* मनोबल को पुष्ट करने के लिए आचार्यप्रवर ने व्रतो का महत्त्व निरूपित करते हुए फरमाया– *''मनुष्य के मन की निर्बलता जब उसे नीचे गिराने लगती है तब व्रत की शक्ति ही उसे बचाने मे समर्थ होती है। व्रत अगीकार नहीं करने वाला किसी भी समय गिर सकता है। उसका जीवन बिना पाल की तलाई जैसा है, किन्तु व्रती का जीवन उज्ज्वल एव सयमित होता है।''*

व्यक्ति एव समाज मे सद्गुणो की प्रतिष्ठा हो, एतदर्थ आपका सकारात्मक चिन्तन सदैव श्रोताओ को प्रेरणा करता रहता था। आपका स्पष्ट मन्तव्य था– *''वेश–पूजा और नाम–पूजा के बदले गुण–पूजा ही समाज को श्रेय की ओर ले जा सकती है।''* गुण ग्रहण के भाव को व्यक्ति एव समाज मे प्रतिष्ठित करने के लिए आपने सरल, किन्तु प्रेरक शब्दो मे फरमाया– *''मनुष्य को मधुमक्खी की तरह बनना चाहिए न कि मल ग्रहण करने वाली मक्खी के समान।''* विरोधियो को जीतने के लिए न तो कषाय भाव बढाने की आवश्यकता है और न ही भौतिक शस्त्रास्त्रो की। उनको जीतने के लिए तो शान्ति के शीतल वचन ही सक्षम होते है– *''जो विरोधाग्नि का मुकाबला शान्ति के शीतल जल से करते है, वे विरोधी को भी जीत लेते है।''*

देश के नैतिक बल की रक्षा एव सवर्धन के लिए आप शस्त्रधारी सेना की नहीं, शास्त्रधारी सेना की आवश्यकता प्रतिपादित करते थे– *''शस्त्रधारी सेना देश का धन बचा सकती है, पर शास्त्रधारी सेना जीवन बचाती है, क्योकि हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, भ्रष्टाचार शस्त्रबल से नहीं, शास्त्र बल से छूटते है।''* आपका चिन्तन था कि सत्सगति एव शिक्षा से मनुष्य अपने जीवन का यथोचित निर्माण कर सकता है– *''मनुष्य का जीवन मिट्टी के पिण्ड के समान है, उसको जैसा सग एव शिक्षा मिले वह वैसे रूप मे ढल सकता है।''* बालक–बालिकाओ के सस्कार हेतु माता–पिता के दायित्व का बोध आपने कितने सुन्दर एव सार–गर्भित शब्दो मे

कराया है– *"बालक रत्न भी बन सकता है और टोळ भी। माता–पिता को चाहिए कि अपना दायित्व समझकर बालको के सुन्दर जीवन निर्माण की ओर लक्ष्य दे। अन्यथा हाथ से तीर छूट जाने पर इलाज मुश्किल है।"*

साधु, साध्वी, श्रावक एव श्राविका रूप चतुर्विध सघ से ही धर्मरथ आगे बढता है तथा सभी को अपने आध्यात्मिक उन्नयन एव जीवन–निर्माण का अवसर मिलता है। साधु एव साध्वी, श्रावक–श्राविका समुदाय के मार्गदर्शक होते है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि श्रावक–श्राविकाओ का सघ के प्रति कोई कर्त्तव्य नहीं होता। आपने श्रावको को कर्त्तव्य का बोध कराते हुए फरमाया– *"श्रावक का कर्त्तव्य है कि वह साधु की सयम–साधना मे सहायक बने। राग के वशीभूत होकर ऐसा कोई कार्य न करे, ऐसी कोई वस्तु देने का प्रयत्न न करे जिससे साधु का सयम खतरे मे पड़ता हो।"* जिनशासन एव धर्म के शुद्ध स्वरूप की रक्षा का दायित्व मात्र साधुओ का ही नहीं होता, श्रावको का भी इस सबध मे उतना ही दायित्व बनता है– *"शासन एव धर्म–रक्षण का कार्य केवल साधुओ का ही समझना भूल है। साधु की तरह श्रावक–सघ का भी उतना ही दायित्व है।"* श्रावको को अहिंसा, निर्व्यसनता आदि के प्रचार हेतु तत्पर होकर काम करने की प्रेरणा आपने इस प्रकार की– *"सैकडो आदमी आपके सम्पर्क मे आते है, यदि व्यवहार के साथ अहिंसा, निर्व्यसनता आदि का प्रचार करे तो अच्छा काम हो सकता है।"* स्वाध्याय, सामायिक एव साधना के साथ आपने व्यसन–त्याग और ब्रह्मचर्य की साधना पर विशेष बल दिया।

सघ एव समाज के अस्तित्व के लिए आप प्रेम एव सौहार्द का वातावरण आवश्यक मानते थे। कलह एव झगडे को आप विनाश का हेतु मानते थे, जैसा कि आपके चिन्तन से स्पष्ट होता है– *"बास भी लडकर भस्म हो जाते है, मनुष्य को इससे शिक्षा लेनी चाहिए।"* सघ के महत्त्व के सबध मे आपका चिन्तन था– *"मोक्षमार्ग के साधक को प्रमाद और कषाय आदि के कारण साधना से स्खलना या उपेक्षा करने पर योग्य प्रेरणा की आवश्यकता रहती है, जो सघ मे मिल सकती है। सघ मे आचार्य आदि के द्वारा सारणा, वारणा और धारणा का लाभ मिलता रहता है। सघ के आश्रित साधुओ की रोगादि की स्थिति मे सभाल की जाती है, ज्ञानार्थियो के ज्ञान मे सहयोग दिया जाता है, अशुद्धि का वारण किया जाता है और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा को टालकर सम्यक् मार्ग की धारणा करायी जाती है। शिथिल श्रद्धा वालो को बोध देना और शिथिल विहारी को समय–समय पर प्रेरणा करना सघ का मुख्य कार्य है।"*

परिवार मे सौहार्द का सूत्र देते हुए आपने फरमाया– *"एक का दिल–दिमाग बिगडे उस समय दूसरा सतुलित होकर मन को सभाल ले तब भी बिगडा हाल सुधर जाता है।"* सौहार्द के लिए विनय को भी आप उपयोगी मानते थे– *"घर–कुल और समाज की सुव्यवस्था और परस्पर के मधुर सबध बनाये रखने का उपाय विनय है।"* निर्व्यसनता के सबध मे आपका कैसा तार्किक एव प्रेरक कथन है– *"जिससे धनहानि हो एव जीवन दु खमय हो, वैसी कोई कुटेव (कुव्यसन) नहीं रखनी चाहिए।"* बाह्य ग्रहो से भयभीत लोगो के सद्बोध हेतु आपका यह कथन पर्याप्त है– *"भीतरी ग्रहो का शमन करने पर बाहर के ग्रहो का कोई भय नहीं रहता।"* भीतरी ग्रहो से तात्पर्य है– काम, क्रोध, मद, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष आदि काषायिक परिणतियाँ। जो इनका शमन कर विजय प्राप्त करने मे सफल हो जाता है, उसे आकाश के बाह्य ग्रह–नक्षत्रो से न तो किसी प्रकार के अनिष्ट की आशका होती है और न ही किसी प्रकार का भय। जैन धर्म की स्पष्ट मान्यता है– *'अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।'* अर्थात् आत्मा ही अपने सुख एव दु ख का कर्त्ता तथा भोक्ता है। इसलिए लौकिक कामनाओ के लिए अन्य ग्रहो की पूजा करना आदि जैन मान्यता मे कथमपि उचित नहीं है।

अध्यात्म के उच्च साधक को किसी प्रकार की लौकिक अभिलाषा पीड़ित नहीं करती है। शारीरिक आवश्यकताओ की पूर्ति उनकी स्वत होती रहती है। वे वस्तुओ के दास नहीं होते, अपितु वस्तुएँ उनकी दास

होती है। आचार्यप्रवर का कथन स्पष्ट रूप से सकेत करता है– *''यद्यपि शरीर चलाने के लिए साधक को कुछ भौतिक सामग्रियो की आवश्यकता होती है, किन्तु जहाँ साधारण मनुष्य का जीवन उनके हाथ बिका होता है, वहीं साधक की वे दास होती है।''*

समता के साधक, सामायिक के प्रेरक आचार्यप्रवर ने समता को जहाँ मोक्ष का साधन स्वीकार किया, वहाँ उसके विपरीत 'तामस' को नरक का द्वार बतलाते हुए फरमाया– *''समता मोक्ष का साधन है तो उसका उलटा तामस नरक का द्वार है।''*

मनुष्य प्राय अपने अधिकारो और दूसरो के कर्त्तव्यो के प्रति जागरूक रहता है, किन्तु इससे समाज का उतना भला नहीं होता जितना अपने कर्त्तव्य पालन के प्रति सजगता एव दूसरो के प्रति सेवाभाव से समाज का भला होता है। इस सबध मे आपका कथन साधनाशील व्यक्ति के लिए कितना मार्गदर्शक है– *''मनुष्य को परदु ख दर्शन के समय नवनीत सा कोमल और कर्त्तव्य पालन मे वज्रवत् कठोर रहना चाहिए।''*

गुरु का शिष्य के जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है, क्योकि गुरु ही शिष्य के विकारो का चिकित्सक होता है। आचार्यप्रवर के शब्दो मे– *''शिष्य के जीवन मे गुरु ही सबसे बडा चिकित्सक है। जीवन की कोई भी आन्तरिक समस्या आती है तो उस समस्या को हल करने और मन के रोग का निवारण करने का काम गुरु करता है।''*

विद्वानो का धर्म एव समाज को लाभ मिले, ऐसी आपकी भावना रही, इसी उद्देश्य से इन्दौर मे 'श्री अखिल भारतीय जैन विद्वद् परिषद्' का गठन हुआ। आपने विद्वानो को भी धर्म–क्रिया से जुडने की प्रेरणा की। आपका मन्तव्य था– *''यदि एक विद्वान् सही अर्थ मे धर्माराधन से जुड जाता है तो वह अनेक भाई–बहनो के लिए प्रेरणा का स्तम्भ बन जाता है।''* विद्वानो से आप कहते थे कि– *''विद्वान् तभी विद्वान् कहलाता है, जब वह क्रियावान भी हो– यस्तु क्रियावान्, पुरुष स विद्वान्।''* आचार्यप्रवर का इस बात पर बल था कि विद्वान् केवल शास्त्र–पठन तक ही सीमित न रहे, वरन् ज्ञान का जो सार है– अहिसा, प्रेम और सेवा–उसे भी अपने जीवन मे उतारे तथा सिद्धान्तो पर दृढ रहे। छोटी–छोटी बातो पर उत्तेजित न हो, अपने ज्ञान का अह न लाये, कठिन से कठिन विपरीत परिस्थितियो मे भी वे ज्ञान की सरसता को न छोडे। विद्वानो के लिए आचार्यप्रवर का सदेश था कि वे आधुनिक परिप्रेक्ष्य मे जैन तत्त्वज्ञान का मानव–कल्याण और विश्वशान्ति मे उपयोग करे।

जैन समाज मे सुयोग्य विद्वान् तैयार हो तथा पुरातन साहित्य का सरक्षण एव अध्ययन हो, ऐसा दूरगामी चिन्तन भी आपने समाज को दिया। श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण सस्थान, जयपुर एव श्री जैन महावीर स्वाध्याय विद्यापीठ जलगाव इसी चिन्तन के सुपरिणाम है। आपका चिन्तन था कि पुरातन शास्त्र एव साहित्य श्रावको की असावधानी से नष्ट एव काल कवलित न हो, अपितु सस्कृति एव ज्ञान की रक्षा के लिए उनका ज्ञान भण्डार के माध्यम से सरक्षण एव सवर्धन हो। जयपुर स्थित 'आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार' आपके इस श्रुतरक्षाविषयक चिन्तन की सुपरिणति है। अध्येता, शोधकर्ता एव सन्त–सती इससे सहज लाभान्वित हो सकते है। आपके शासनकाल मे ज्ञानाराधना एव साधना की दृष्टि से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, स्वाध्याय सघ, धार्मिक पाठशालाओ जैसी अनेक सस्थाएँ प्रारम्भ हुई, किन्तु किसी भी सस्था के सचालन आदि मे निस्पृह तथा साध्वाचार के निर्मल साधक ने न उनसे स्वय को जोडा और न हीं कहीं अपना नाम जुडने दिया।

शरीर के सुसचालन हेतु प्रत्येक अग का महत्त्व है। उसका कोई भी अग छोटा–बडा नहीं होता। मस्तिष्क, पेट, पैर आदि सभी पूरक बनकर कार्य करते है तो शरीर स्वस्थ एव सक्रिय रहता है। इसी प्रकार विद्वान्, धनिक एव कार्यकर्ताओ मे परस्पर समन्वय हो तो सघ एव समाज का सचालन स्वस्थ रीति से सभव है। समन्वय ही

समुन्नति का सेतु है।

नवीन धर्म-क्रियाओं मे समय-समय पर हुए समावेश के सबध में आपका स्पष्ट मन्तव्य था- *"शास्त्र मे उल्लेख नहीं होने पर भी जिस क्रिया मे आत्मा के लिए कोई दोष का कारण न हो एव कर्म-निर्जरा का लाभ होता हो, उसे सदा ही उपादेय मानना चाहिए।"*

卐 卐 卐 卐 卐 卐 卐 卐

स्थानकवासी परम्परा मे सम्प्रदाय विशेष के आचार्य होते हुए भी आपका दृष्टिकोण अत्यन्त उदार था। आप सम्प्रदाय को एक व्यवस्था मानते थे, जो अपने नेश्रायवर्ती सत-सती समुदाय के ज्ञान-दर्शन-चारित्र के सरक्षण एव सवर्द्धन हेतु प्रचलित है। इस सबध मे आप सेना की बटालियनो का उदाहरण फरमाते थे कि जिस प्रकार सेना की अलग-अलग बटालियनो की अलग-अलग व्यवस्था होती है, परन्तु सबका कार्य देश की रक्षा का होता है, इसी प्रकार अलग-अलग सम्प्रदाये व्यवस्था मात्र है, सबका कार्य जिनशासन की रक्षा एव गौरव की अभिवृद्धि करना है। स्वाध्यायियो को भी आप यही फरमाते कि आप सभी साधर्मियो को अपना भाई समझे। अन्य सम्प्रदायो के साथ पर का व्यवहार करना या उनके साथ कषाय भाव रखना, आपने कभी उचित नहीं समझा। आप तो ऐसे भक्तो को गुरु आम्नाय करने से स्पष्ट इन्कार कर देते थे, जिन्होने पहले से किसी अन्य गुरु की आम्नाय स्वीकार कर रखी हो। आपका ध्येय तो व्यक्ति को आत्म-कल्याण एव सर्व कल्याण से जोडना था। भक्तो या साधर्मियो के बीच भेद की दीवार खडी करना आपने कथमपि उचित नहीं समझा। इसलिए चरितनायक पूज्य गुरुदेव के पास सभी जैन एव जैनेतर श्रद्धालु जन भी उपस्थित होकर अपने जीवन को ऊँचा उठाने के लिए कृत-सकल्प होते थे। स्थानकवासी सत ही नहीं मन्दिरमार्गी, वैष्णव, रामस्नेही आदि परम्पराओ के सन्तो ने भी आपके दर्शन एव सान्निध्य का लाभ लेकर स्वय को कृतकृत्य समझा।

अपनी उच्च कोटि की निर्मल सयम-साधना, विद्वत्ता, सूझबूझ, समन्वयशीलता, गुणियो के प्रति प्रमोदभाव आदि अनेक गुणो के कारण आप महान् सतो एव आचार्यों की भी श्रद्धा और सम्मान के आस्पद रहे। श्रमण सघ के आचार्य आगम महोदधि पूज्य श्री आत्माराम जी म सा ने अपने पत्रो मे आपको 'पुरिसवरगन्धहत्थीण' जैसे शब्दो से सम्मानित किया। आगम टीकाकार पूज्य श्री घासीलाल जी म सा ने आपको नवकोटि मारवाड का सरताज कहते हुए अष्टक की रचना कर गुणानुवाद किया। पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा ने आपसे वय मे अतीव ज्येष्ठ होने पर भी पूरा बहुमान प्रदान करते हुए जेठाना ग्राम से विहार के समय चरितनायक से मागलिक श्रवण किया। श्रमण सम्मेलनो मे भी आपने चरितनायक की सूझबूझ एव विद्वत्ता की सराहना की। मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म सा पूज्य चरितनायक को भूधर वश का रत्न मानते थे। आचार्य श्री आनन्दऋषि जी म सा का आप पर अपने आप से भी अधिक विश्वास था। पूज्य प्रवर्तक श्री पन्नालाल जी म सा नवीन उपक्रम करने के पहले आपका मन्तव्य अवश्य लेते, इसमे आत्मीयभाव के साथ आपकी दूरदर्शिता और सूझबूझ पर भी उन्हे अटल विश्वास था। बहुश्रुत प रत्न श्री समर्थमल जी म सा भी आपके निर्मल जीवन और सयम मे तत्परता के प्रति आदर भाव रखते थे।

सभी आचार्यो एव सन्त वरेण्यो के साथ मधुर सबध एव उपयोगी विचार-विमर्श आपकी समन्वयशीलता, सरलता एव सन्त-दृष्टि के परिचायक थे। सन् 1933 मे अजमेर बृहद् साधु सम्मेलन, सन् 1952 में सादडी सम्मेलन, सन् 1953 मे मत्री-मुनिवरो के सम्मेलन एव सन् 1956 मे भीनासर सम्मेलन मे आपकी प्रभावकारी रचनात्मक भूमिका ने अनेक सन्तप्रमुखो को प्रभावित किया। आप जब श्रमणसघ मे रहे, तब भी आपने पूर्ण निष्ठा, समर्पण, ईमानदारी एवं सूझबूझ के साथ शासनसेवा के हित मे कार्य किया। आप श्रमणसघ को साध्वाचार के निर्मल पालन की ऊँचाई पर देखना चाहते थे। आप इतने सजग थे कि अजमेर

सम्मेलन के अन्तिम दिन कान्फ्रेस के अधिवेशन मे मच पर नहीं पधारकर निर्दोष बच गये। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा के शब्दो मे– *"आप सबसे चतुर निकले।"* यही सजगता एव चतुराई जीवन पर्यन्त निर्दोष सयम–साधना का विशिष्ट अग बनी रही। आपका मन्तव्य था कि श्रमण सघ का सबसे बडा बल, सबसे महत्त्वपूर्ण धन अथवा जीवन का सर्वस्व आचार बल है। ज्ञान के साथ क्रिया का आराधन करना ही उसकी सबसे बडी निधि है।

सवत् 2010 मे जोधपुर का सयुक्त चातुर्मास इतिहास की एक मिसाल है, जिसमे उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा , प्रधानमत्री श्री आनन्दऋषि जी म सा , व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म सा , कवि श्री अमरचन्द जी म सा , प रत्न श्री समर्थमल जी म सा , स्वामी जी श्री पूरणमल जी म सा आदि सन्तो से चरितनायक को बहुमान एव प्रेम मिला। चातुर्मास का वह दृश्य अपूर्व एव अद्वितीय था। इसके पूर्व सवत् 1990 मे उपाध्याय श्री आत्माराम जी म सा , व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म सा आदि प्रमुख सन्त–प्रमुखो के साथ जोधपुर मे ही सम्पन्न आपका सयुक्त चातुर्मास पारस्परिक मधुर–सबधो के साथ आपके प्रति आदर भावना की अभिवृद्धि का भी हेतु बना। विचरण–विहार मे सैकडो सत–सतियो से मधुर–मिलन के प्रसग जीवनी–खण्ड मे पदे पदे वर्णित है। मूर्तिपूजक आचार्य श्री पद्मसागर जी म सा ने आपका अनेक बार सान्निध्य लाभ लेकर प्रमोद का अनुभव किया।

श्रावको की श्रद्धा ग्राम, नगर, जाति, देश, सम्प्रदाय आदि की सीमाओ मे बधी हुई नहीं थीं। युगमनीषी सन्त के चरणो मे पहुँचने वाले श्रद्धालु भक्तो को शान्ति एव आनन्द का अनुभव होता था। कई बार उन्हे चमत्कारो का भी अनुभव हुआ। अपने जीवन मे बदलाव के चमत्कार हो या घटनाओ के चमत्कार– सबमे उन्होने पूज्य गुरुदेव के प्रति श्रद्धा को ही प्रमुख कारण समझा। प्रेतात्माओ से पीडितो, रोग–ग्रस्तो एव विभिन्न प्रकार की समस्याओ से आक्रान्त श्रद्धालुओ के द्वारा अनुभूत चमत्कार इसके साक्षी रहे। आचार्यप्रवर मे साधना का अनूठा बल था, किन्तु वे कोई चमत्कार दिखाने मे विश्वास नहीं रखते थे। पूज्य आचार्यदेव का इस सबध मे कथन था कि श्रावक जिसे चमत्कार की सज्ञा देते है, वह मात्र श्रद्धा का परिणाम है। जो कुछ होता है वह सामने वाले के पुरुषार्थ एव प्रारब्ध से होता है। श्रावको के साथ आपका केवल साधना एव आध्यात्मिक उन्नयन का सबध था। बाह्य सयोगो की चर्चा से आप सदा विलग रहते थे।

आपके सान्निध्य–लाभ को प्राप्त प्रत्येक श्रद्धालु यही समझता कि गुरुदेव की उसके ऊपर विशेष कृपा है, आपका यह वैशिष्ट्य था कि आप बिना भेदभाव के सबके जीवन को ऊँचा उठाने की प्रेरणा आत्मीयता के साथ करते थे। आपके अन्तस्तल मे प्रवाहित 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' एव 'सत्त्वेषु मैत्री' के भावो के कारण सबको यह प्रतीत होता था कि गुरुदेव उसके अपने है एव उनकी उस पर विशेष कृपा है।

विराट् व्यक्तित्व के धनी पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म सा की अब स्मृतियाँ ही शेष है, चर्म चक्षुओ से अब उनके प्रशान्त व्यक्तित्व के दर्शन सम्भव नहीं, किन्तु उनके जीवन के प्रसग, उपदेश, सदेश एव विचार आज भी अमूल्य निधि है, जो हमारा मार्गदर्शन कर सकते है। उनका जप, तप, सयम, ध्यान व स्वाध्याय आज भी साधको के लिए मार्गदर्शक है। आपकी तेजस्विता, अप्रमत्तता, एकाग्रता, सजगता, निस्पृहता, समता, श्रमशीलता, प्रशान्तता, सुमनस्कता, सरलता, निरभिमानता, करुणार्द्रता, अध्यात्मयोगिता आदि अनेक गुणो मे से हम कोई भी गुण ग्रहण करे, तो हमारा जीवन पतित से पावन होकर आत्म–कल्याण की ओर अग्रसर हो सकता है।

प्रशान्तात्मा महात्मा युगद्रष्टा तपोधनः।
विजयतां गुरुर्हस्ती श्रुताचारप्रदीपकः॥

अध्यात्मयोगी युगमनीषी आचार्य

श्री हस्तीमल जी महाराज : जीवन रेखा

[illegible]	श्री गजेन्द्राचार्य, श्री गजमुनि जी म सा.
[illegible]	विक्रम स 1967, पौष शुक्ला चतुर्दशी, 13 जनवरी 1911
जन्मस्थान	पीपाड सिटी, जिला– जोधपुर (राज)
[illegible]	सुश्रावक श्री केवलचन्द जी बोहरा 'ओसवश'
[illegible]	सुश्राविका श्रीमती रूपकवर (रूपादेवी) जी
[illegible]	सुश्रावक श्री दानमल जी बोहरा
[illegible]	सुश्राविका निवज्जाबाई (नौज्याबाई)
[illegible]	सुश्रावक श्री गिरधारीलाल जी मुणोत
[illegible]	सुश्राविका श्रीमती चन्द्राबाई मुणोत
[illegible]	वि स 1977, माघ शुक्ला द्वितीय द्वितीय गुरुवार, 10 फरवरी 1921
[illegible]	अजमेर (राज)
[illegible]	दस वर्ष 18 दिन
[illegible]	महासती श्री धनकवर जी म सा
[illegible]	स्वामी श्री हरखचन्द जी म सा
दीक्षा प्रदाता गुरु	आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री शोभाचन्द जी म सा
[illegible]	पण्डित दु खमोचन जी 'झा'
[illegible]	जैन आगम, सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी तथा जैन–जैनेतर दर्शन–शास्त्र
[illegible]	साढे पन्द्रह वर्ष
आचार्यपद आरोहण	वि स 1987, वैशाख शुक्ला तृतीया गुरुवार को जोधपुर के सिहपोल मे। (वय 19 वर्ष 3 माह 19 दिन)
विचरण क्षेत्र	राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, दिल्ली, हरियाणा आदि।
मौलिक विशेषताएँ	आध्यात्मिक आनन्द मे रमण करने वाले अद्भुत अध्यात्म–योगी।

असीम आत्म–शक्ति के धारी। जागरण से शयन पर्यन्त अप्रमत्त साधक। निष्ठावान जिनशासन सेवी। ध्यान–मौन जप के विशिष्ट साधक। आगम–मर्मज्ञ एव व्याख्याकार। जैन इतिहास के अन्वेषक एव प्रस्तोता। कुशल पारखी। वचन के धनी। काव्यकार। तेजस्वी मुखमुद्रा। दूरदर्शी। गभीर चिन्तक एव सस्कृति–रक्षक। प्राणिमात्र के प्रति करुणाशील। विनयवान। 'सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोद' की भावना से सपूरित। ज्ञान– क्रिया के अद्भुत सगम। नयनाभिराम व्यक्तित्व के धनी। प्राचीन भाषा एव लिपि के विशेषज्ञ।

[illegible] सामायिक एव स्वाध्याय के प्रमुख प्रेरक। व्यसन–मुक्त एव प्रामाणिक समाज रचना के सम्प्रेरक

[illegible] आगम साहित्य– दशवैकालिक सूत्र, नन्दीसूत्र, प्रश्नव्याकरण सूत्र, बृहत्कल्प सूत्र, अन्तगडदसासूत्र आदि आगमो एव इनकी वृत्तियो का सम्पादन, अनुवाद आदि। उत्तराध्ययन सूत्र, दशवैकालिक सूत्र का विवेचन एव हिन्दी पद्यानुवाद।

इतिहास– जैन धर्म का मौलिक इतिहास के चार भाग, जैनाचार्य चरितावली, पट्टावली प्रबन्ध सग्रह, ऐतिहासिक काल के तीन तीर्थंकर।

प्रवचन– गजेन्द्र मुक्तावली के 2 भाग, गजेन्द्र व्याख्यानमाला के 7 भाग, आध्यात्मिक आलोक, आध्यात्मिक साधना, प्रार्थना–प्रवचन आदि ग्रन्थ।

काव्य–कथा आदि– गजेन्द्र–पद–मुक्तावली, पर्युषण पर्व पदावली, स्वाध्याय माला(प्रथम भाग), अमरता का पुजारी, सैद्धान्तिक प्रश्नोत्तरी, जैन स्वाध्याय सुभाषित माला, श्रीनवपद आराधना, कुलक सग्रह आदि।

[illegible] 70

[illegible] 85 (31 सत एव 54 महासती)

[illegible] प्रथम वैशाख कृष्णा दशमी 9 4 1991 से प्रथम वैशाख कृष्णा द्वादशी 11 4 1991 तक तेले की तपस्या।

12 4 91 को सथारा स्वीकार। प्रथम वैशाख शुक्ला अष्टमी सवत् 2048 दिनाक 21 अप्रेल 1991 को रात्रि 8 बजकर 21 मिनट पर चौविहार त्याग एव 13 दिवसीय तप सथारे के साथ महाप्रयाण।

विषयानुक्रमणिका

द्वितीय खण्ड · दर्शन खण्ड

तृतीय खण्ड · व्यक्तित्व खण्ड

(I) संस्मरणों मे झलकता व्यक्तित्व

चतुर्थ खण्ड कृतित्व खण्ड

(I) आचार्यप्रवर की साहित्य-साधना

(II) काव्य साधना

(आचार्य श्री की प्रमुख चयनित रचनाएँ)

पचम खण्ड परिशिष्ट

तेणं कालेणं तेणं समएणं

(रत्नवंशीय आचार्य-परम्परा)

युगप्रभावक प्रात स्मरणीय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म सा. न केवल अपने गुरु भगवतो की यशस्वी रत्नसघ परम्परा के, वरन् समूचे जैन जगत के दिव्य दिवाकर महापुरुष थे, जिन्होने जिनशासन की कीर्ति-पताका समूचे भारत के कोने-कोने मे फहराई व सामायिक-स्वाध्याय का दिव्य घोष कर जिनवाणी की पावन-गगा से लाखो भक्तो को लाभान्वित किया।

श्रमण भगवान महावीर स्वामी के आप ८१ वे पट्टधर आचार्य हुए। प्रथम गणधर इन्द्रभूति गौतम स्वामी एव प्रथम पट्टधर पचम गणधर आर्य सुधर्मा स्वामी ने केवलज्ञान-केवलदर्शन प्राप्त कर केवली-परम्परा को आगे बढ़ाया। द्वितीय पट्टधर आर्य जम्बू इस युग के अन्तिम केवली हुए।

आर्य जम्बू के पश्चात् चतुर्दश पूर्वधर काल मे क्रमश आर्य प्रभव, आर्य शय्यम्भव, आर्य यशोभद्र स्वामी आर्य सभूत विजय एव आर्यभद्रबाहु ने जिनशासन का दायित्व अपने ज्ञान-गरिमायुक्त साधना-बल पर सभाला। आर्य भद्रबाहु के पश्चात् इस युग मे कोई भी साधक चतुर्दश पूर्वधर नही हुए। आर्य भद्रबाहु के पश्चात् क्रमश आचार्य स्थूलिभद्र, आर्य महागिरि, आर्य सुहस्ती, वाचनाचार्य बलिस्सह, वाचनाचार्य स्वाति, वाचनाचार्य श्यामाचार्य षाडिल्य , समुद्र, मगू, नन्दिल, नागहस्ती, रेवतीनक्षत्र, ब्रह्मद्वीपकसिंह स्कन्दिल, हिमवन्त क्षमाश्रमण, नागार्जुन, भूतदिन्न, लोहित्य, दूष्यगणी एव आर्य देवर्द्धि क्षमाश्रमण आदि पूर्वधर आचार्य हुए, जिनकी ज्ञान गरिमा से समूचा जैन सघ आलोकित रहा। आर्य देवर्द्धि क्षमाश्रमण के अवसान के साथ ही पूर्वों के ज्ञान का समूल विच्छेद हो गया। उनके पश्चात् समय-समय पर विभिन्न महापुरुषो ने जिनशासन का सचालन किया।

आज से लगभग ५५०वर्ष पूर्व **धर्मप्राण लोंकाशाह** ने अभिनव धर्मक्रान्ति की व शुद्ध साध्वाचार एव आगम वर्णित विशुद्ध सिद्धान्तो का दिग्दर्शन कराया। धर्मप्राण लोकाशाह द्वारा की गयी धर्म-क्रान्ति से प्रेरित होकर जिन महापुरुषो ने विशुद्ध श्रमण-परम्परा का पुनरुद्धार किया, उनमे पूज्य श्री धर्मदास जी म सा., पूज्य श्री धर्मसिंह जी म.सा एव पूज्य श्री लवजी ऋषि जी म.सा. प्रमुख थे।

पूज्य श्री धर्मदास जी म.सा. के ९९ शिष्य हुए, जिन्होने २२ टोलो मे विचरण-विहार कर भारत के कोने-कोने मे धर्मप्रचार कर जिनवाणी की पावन सरिता प्रवाहित की। पूज्य धर्मदास जी म सा के तपोधनी सुशिष्य **पूज्य श्री धन्नाजी म.सा.** ने मरु भूमि मे उग्र विचरण-विहार कर विशुद्ध श्रमण-परम्परा का प्रसार किया।

पूज्य श्री धन्ना जी म.सा. के शिष्य **पूज्य श्री भूधर जी म.सा.** सासारिक अवस्था मे पुलिस अधिकारी रहे, सोजत कोतवाल के रूप में डाकुओं का पीछा करते हुए डाकुओ की तलवार के प्रहार से आपकी ऊटनी की मृत्यु के समय हुई छटपटाहट से आपका मन द्रवित हुआ और मरणधर्मा ससार का साक्षात् बीभत्स स्वरूप प्रत्यक्ष देख कर आपमे वैराग्य भाव जागृत हुए एव आप पूज्य श्री धन्नाजी म सा की सेवा में दीक्षित हुए। आप घोर तपस्वी सतरल हुए, घटों आतापना लेते रहते। तपस्या के साथ तपस्वियो के लिये दुर्लभ क्षमा गुण आपकी अनूठी विशेषता थी।

अपने पर मारणान्तिक प्रहार करने वाले को भी सहज क्षमा कर आपने उसके प्राणो की रक्षा कर 'क्षमा' का आदर्श उपस्थित किया। आपके प्रमुख चार शिष्य हुए—**पूज्य श्री रघुनाथजी म.सा., पूज्य श्री जयमलजी म.सा., पूज्य श्री जेतसी जी म.सा.** एव **पूज्य श्री कुशलोजी म.सा.**। कहा भी है —

भूधर के सिख दीपता, चारू चातुर वेश।
धन रघुपत धन जेतसी जयमल्ल ने कुशलेश॥

पूज्य श्री कुशल चन्द जी म.सा. (कुशलोजी मसा) रत्नसघ-परम्परा के मूल पुरुष हुए।

रीयां शहर रलियामणो, सादूराम साहूकार।
कानूद मा जनमिया, धनधन कुशल कुमार॥"

युवावस्था मे ही सहधर्मिणी धर्मपत्नी के आकस्मिक अवसान से आपको ससार की असारता व विनश्वरता का बोध हुआ व आप अपने शिशु पुत्र को अपनी मा को सौप कर पूज्य श्री भूधर जी मसा की सेवा मे दीक्षित हुए। आप उच्च कोटि के साधक सन्त हुए। आपने अपने पूज्य गुरुवर्य की और उनके देवलोक गमन के पश्चात् अपने बड़े गुरु भ्राता पूज्य श्री जयमलजी मसा की अहर्निश सेवा की । जब तक पूज्य श्री जयमलजी मसा. विराजे, स्वय का सुयोग्य शिष्य समुदाय होते हुए भी आपने पृथक् विचरण विहार न कर समर्पण, सेवा, प्रेम व उदारता का आदर्श उपस्थित किया। पूज्य श्री गुमानचन्द जी मसा एव दुर्गादास जी मसा आपके प्रमुख शिष्य थे। विस १८४० मे नागौर मे ज्येष्ठ कृष्णा षष्ठी को आपका संथारापूर्वक देवलोक गमन हुआ।

पूज्य श्री कुशलचन्दजी मसा के पश्चात् उनकी पट्टपरम्परा मे **पूज्य श्री गुमानचन्द जी म.सा.** प्रथम पट्टधर आचार्य बने। आप जोधपुर निवासी माहेश्वरी गोत्रीय श्री अखेराजजी लोहिया के सुपुत्र थे। आपकी माता का देहावसान होने पर कुल-परम्परा के अनुसार आप अपने पिताश्री के साथ गंगा मे फूल प्रवाहित करने हेतु हरिद्वार गये। वहाँ से लौटते समय सयोगवश आप मेड़ता रुके। वहाँ पूज्य श्री कुशलचन्दजी मसा के पावन दर्शन व मगलमय प्रवचन सुनकर आपके शिशु मन मे वैराग्य का बीज वपित हुआ और आप अपने पिताश्री के साथ पूज्य श्री की सेवा मे दीक्षित हुए। आपकी दीक्षा विसं १८१८ मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी को मेड़ता शहर मे सम्पन्न हुई। उस समय आपकी वय १० वर्ष थी। आप प्रबल मेधा के धनी थे। गुरु सेवा मे दीक्षित होकर आपने अपने आपको ज्ञानाराधना व सयम-साधना मे समर्पित कर दिया। आप प्रबल पराक्रमी महापुरुष थे। विस १८४० मे आप चतुर्विध सघ के नायक बने एव आपके कुशल नेतृत्व मे यह यशस्वी परम्परा सुदृढ बनी। आपके आज्ञानुवर्ती सत श्री ताराचन्दजी मसा के देवलोक गमन के पश्चात् आपको स्वप्न मे आभास हुआ मानो ताराचन्दजी मसा कह रहे हो "गुरुदेव आप समर्थ पुरुष है। साधु समुदाय मे आई हुई शिथिलता को दूर करने के लिये आपके पुरुषार्थ की आवश्यकता है। आहार, वस्त्र, पात्र, स्थानक आदि की निर्दोषता की ओर अधिक ध्यान अपेक्षित है। आहारादि की विशुद्धि मे आई हुई कमजोरियो को दूर करना आप जैसे समर्थ आचार्यो का कर्त्तव्य है।"

आपने अपने शिष्य समुदाय के साथ चिन्तन-मनन कर अपने समर्थ शिष्य श्री रत्नचदजी म.सा. के सहयोग से विस १८५४ आषाढ कृष्णा द्वितीया को बड़लू (सम्प्रति-भोपालगढ) के उद्यान मे क्रियोद्धार किया एव मर्यादा के २१ बोल बनाये। तदनुसार दृढ वैराग्य व मर्यादा के अक्षुण्ण पालन के सकल्प के साथ आप व १३ अन्य कुल १४ सतों ने इस दिन नवीन दीक्षा धारण की।

पूज्य श्री ने स्वयं निर्मल सयम का पालन किया तथा साधु समुदाय का भी निरतिचार संयम-पालन मे पथ प्रशस्त किया। वि.स. १८५८ कार्तिक शुक्ला अष्टमी को मेड़ता नगर मे आपका स्वर्गगमन हुआ। आपके शिष्यों मे मुनि श्री दौलतरामजी महाराज सा., तपस्वी श्री प्रेमचन्द जी महाराज सा., मुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज सा., मुनि श्री ताराचन्दजी महाराज सा., पूज्य श्री दुर्गादास जी म.सा. एव जैनाचार्य पूज्य श्री रत्नचन्दजी म.सा. आदि प्रमुख थे।

मुनि श्री दौलतरामजी महाराज जितेन्द्रिय महापुरुष थे। आपने चालीस वर्ष तक पाँचों विगयों (घी, दूध, तेल, दही व शक्कर) तथा नमक का त्याग किया। आप रुक्ष आहार करते थे। आपने अपने सुन्दर अक्षरों में कई शास्त्रो की प्रतिया लिखी।

मुनि श्री प्रेमचन्दजी महाराज घोर तपस्वी थे। तपस्या के कारण आपको कई सहज सिद्धियाँ प्राप्त हुई। आपके जीवन की कई चामत्कारिक घटनाएँ प्रसिद्ध हैं। एक बार आप सोजत पधारे, नगर मे पहुँचते पहुँचते संध्या का समय हो गया, स्थान की गवेषणा करने पर कुछ लोगो ने कुतूहलवश आपको एक जनशून्य हवेली मे ठहरा दिया। भक्तो द्वारा आकर निवेदन करने पर भी आपने स्थान परिवर्तन नही किया। करीब डेढ प्रहर रात्रि व्यतीत होने पर ऊपर से बडे-बड़े पत्थर आने लगे। इधर-उधर कोई दृष्टिगत न होने पर आपभी ऊपर चढ़े जहा एक कमरे मे स्वच्छ शय्या पर शुभ्र वस्त्रो मे एक पुरुष को देखा। तपस्वी जी महाराज ने निडरता से कहा— "सिंघी जी! रात्रि मे क्यो उत्पात मचाते हो, हम इजाजत लेकर यहा ठहरे है। हम प्रातकाल यहा से जा सकते हैं, पर रात्रि में तो प्रलयकर उत्पात होने पर भी नही जा सकते।" आपकी निर्भीकता से देव अत्यत प्रभावित हुआ और उसने कहा —"आप यहाँ खुशी से विराजे, पर ऊपर कोई न आवे।" प्रात लोगो ने आपको सकुशल देखा तो उनके आश्चर्य की सीमा न रही। इस प्रत्यक्ष चमत्कार पूर्ण आत्मबल से आपके प्रति जनता की श्रद्धा और प्रगाढ हो गई। अब तो उसी हवेली मे व्याख्यान होने लगे, नर-नारी निडर हो आने लगे। एक दिन किसी बालक ने अशुचि कर दी तो अचानक ही वहाँ पर भयकर काला नाग निकल पड़ा। लोग आशकित थे। पर तपस्वी जी महाराज के यह कहते ही "सिघीजी! तुमने तो खुली इजाजत दी थी, फिर यह विपरीत आचरण कैसे ?" सर्प अदृश्य हो गया। इस घटना से चमत्कृत जनता मे आपके तप अतिशय व साधना की चर्चा स्वाभाविक थी।

मुनि श्री लक्ष्मीचन्द जी महाराज आदर्श साधक थे। आपने पैतीस वर्षो तक केवल एक ही चादर से निर्वाह किया।

मुनि श्री ताराचदजी महाराज बड़े तपस्वी व उत्कृष्ट क्रियापात्र सत महापुरुष थे। आपने पॉच विगयो के त्याग कर रखे थे और बेले-बेले पारणा करते थे। सयम का आप अत्यन्त सूक्ष्मता व सावधानी से पालन करते थे। स्वर्गवास की रात्रि मे ही आपने स्वप्न मे पूज्य श्री गुमानचदजी महाराज को क्रियोद्धार का निवेदन किया।

पूज्य श्री दुर्गादास जी महाराज बाल ब्रह्मचारी महापुरुष थे। आपके कठ मे माधुर्य, वाणी मे सरसता, विचारो मे परिपक्वता व हृदय मे उदारता के साथ आपको शास्त्रो का गहन अभ्यास था। आप निरन्तर एकान्तर तप किया करते थे। आप अच्छे मर्मज्ञ कवि थे। आपकी काव्य रचनाए 'दुर्गादास पदावली' के नाम से प्रकाशित हुई हैं। आप महान् भाग्यशाली व प्रभावशाली महापुरुष थे और आपका क्रियोद्धार मे महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा।

आचार्य पूज्य श्री गुमानचन्दजी म.सा के पट्ट को उनके सुयोग्य शिष्य, तीक्ष्ण प्रतिभा के धनी **पूज्य श्री रत्नचन्द जी म.सा.** ने सुशोभित किया। आपका जन्म वि.स १८३४ वैशाख शुक्ला पचमी को कुड़गाव मे धर्मप्रेमी श्री लालचन्दजी बड़जात्या की धर्मपत्नी हीरादे की रत्न कुक्षि से हुआ। वि.स १८४० मे आपको नागौर निवासी

श्रेष्ठिवर्य श्री गगारामजी ने गोद ले लिया और शिशु रत्न मा हीरादे की गोद से निकलकर मा गुलाब की गोद मे पहुंच गया।

वि.स १८४७ मे आचार्य पूज्य श्री गुमानचन्दजी म.सा का ठाणा ७ से चातुर्मास नागौर मे हुआ। आप भी अपने परिजनों के साथ पूज्य श्री की सेवा मे जाते। पूज्य श्री के सयममय जीवन के सम्पर्क व उनके वैराग्यमय उपदेशो से आपके हृदय मे वैराग्य सस्कार प्रस्फुटित हुए। इसी बीच पिता श्री गगारामजी का देहावसान हो गया, जिससे आपकी भावना मे और अभिवृद्धि हुई व आपने माँ गुलाब बाई के सामने अपनी भावना प्रस्तुत कर दीक्षार्थ अनुमति मागी, पर ममतामयी माँ अनुमति के लिए तैयार न थी।

बाबा श्री नत्थू जी से आज्ञा प्राप्त कर मुमुक्षु रत्नचन्द्र गावो मे भिक्षावृत्ति करते हुये मण्डोर पहुँचे, जहा वि.स १८४८ वैशाख शुक्ला पचमी के शुभ मुहूर्त मे आपने मुनि श्री लक्ष्मीचदजी म.सा से दीक्षा अगीकार की। दीक्षा ग्रहण कर तीन वर्ष तक मेवाड़ प्रदेश मे गुरुजनो के साथ विचरण-विहार कर आप सयम-जीवन व ज्ञान, दर्शन, चारित्र मे पारगत बन गये। आप चौथा चातुर्मास पीपाड़ कर पाचवे चातुर्मासार्थ पाली पधारे। इधर माता भी राज्याधिकारियो के साथ पहुची। आपके प्रवचनामृत एव सयम जीवन से माता भी प्रभावित हुई और उन्होने अपनी गलती के लिये मुनिजनो से क्षमायाचना की।

अल्प काल मे ही आपके साधनानिष्ठ जीवन से जन-जन ही नही स्वय गुरुदेव भी प्रभावित हो गये और वे स्वय फरमाते "रत्न! अब तो हम भी तुम्हारे नाम से पहचाने जाते है। लोग रत्नचन्दजी के साधु इस नाम से हमे जल्दी पहचान लेते है।" आप स्वाभाविक विनम्रता से निवेदन करते "सब गुरुदेव की कृपा है।"

कैसा उत्कृष्ट सयम! कितना समर्पण व कैसा पुण्य प्रभाव।

वि.स १८५४ मे पूज्यपाद आचार्य श्री गुमानचदजी म.सा ने क्रियोद्धार किया, उसमे आपकी प्रमुखतम भूमिका रही एव आज भी क्रियोद्धारक महापुरुष के रूप मे आपका ही नाम प्रख्यात है। ज्ञातव्य है कि क्रियोद्धार के समय आपकी वय मात्र २० वर्ष व दीक्षा पर्याय मात्र ६ वर्ष की थी।

वि.स १८५८ मे पूज्य श्री गुमानचन्दजी म.सा के स्वर्गवास के पश्चात् समूचे चतुर्विध सघ ने आपको आचार्य मनोनीत किया, पर आपने अपने चाचा गुरु पूज्य श्री दुर्गादास जी म.सा की उपस्थिति मे आचार्य पद स्वीकार नही किया। २४ वर्ष की सुदीर्घ अवधि तक दोनो ही महापुरुष एक दूसरे को पूज्य कहते रहे। 'राजतिलक की गेद बना कर खेलन लगे खिलाड़ी' की उक्ति चरितार्थ हो रही थी। धन्य है ऐसे निस्पृह साधक, धन्य है यह गौरवशाली परम्परा, जिसे ऐसे सतरत्नो का सुयोग्य सान्निध्य प्राप्त हुआ। अनूठी उदारता व विनय भाव का ऐसा आदर्श अन्यत्र दृष्टिगोचर होना दुर्लभ है। पूज्य दुर्गादासजी म.सा की मौजूदगी मे आपने उनके प्रतिनिधि रूप मे सम्प्रदाय का सरक्षण, सवर्धन व सचालन करते हुये शासन की प्रभावना की, पर उनके स्वर्गवास के पश्चात् आपको सघ का आग्रह स्वीकार करना ही पड़ा व सवत् १८८२ मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी को आप विधिवत् आचार्य पद पर आरूढ हुए।

आप शास्त्रो के गहन ज्ञाता, अत्युच्च कोटि के विद्वान, जिन शासन की प्रभावना हेतु सदैव सन्नद्ध, विशुद्ध साध्वाचार के धनी, कीर्ति से निस्पृह, धीर-वीर-गम्भीर महापुरुष थे। आपने साध्वाचार मे आई विकृतियो को दूर करने हेतु प्रबल पुरुषार्थ किया तथा कुरीतियो, आडबर व शिथिलता पर गहरी चोट की। शान्ति व धैर्य से विरोध का सामना करते हुये आप शुद्ध साध्वाचार पालन के अपने सकल्प पर डटे रहे। आपने श्रमण वर्ग को शिक्षा देने के

लिये उपदेश छत्तीसी, आचार छत्तीसी आदि की रचना की। आपकी काव्य-रचनाओ मे साध्वाचार की विकृति पर आपकी ह्रदय की अन्तर्वेदना व्यक्त होती है। "वेश धर यूं ही ही जन्म गमाया" _ जैसी रचनाएँ आपकी मनोव्यथा को सुस्पष्ट करती है।

प्रबुद्धजन से लेकर जन-साधारण तक सर्वमान्य, प्रखर-प्रतिभा व व्यापक-प्रभाव के धनी आप महापुरुष प्रचार व कीर्ति कामना से कोसो दूर थे। आपकी साधना आत्मोत्थान के लिये थी, लोकैषणा व कीर्ति कामना के लिये नही। नव कोटि मारवाड़ के धनी राज राजेश्वर महाराजा मानसिंह जी ने आपके उच्च सयम, प्रकाड पाडित्य व प्रखर प्रतिभा के साथ-साथ यह भी सुना कि आपके पास एक तपस्वी सत हैं जो वचनसिद्ध है तो महाराजा मानसिह ने आपके दर्शन करने के लिये आने का विचार किया। जहा पूज्य श्री विराजित थे, वहा बिछायत होने लगी। विशिष्ट तैयारी देख कर आपने पृच्छा की। ज्यो ही आपको महाराजाधिराज के आने की जानकारी मिली तो यह कहकर कि 'भाई, डोकरी के घर में नाहर को कई काम', आप विहार कर गये। आपकी निस्पृहता और फक्कड़पन देख कर महाराजा मानसिह के मुख से बरबस निकल पडा—

"काहू को न आश राखे काहू पै न दीन भाखे
करत प्रणाम जाकूं, राजा राणा जबड़ा।
सीधा सा आराम रोटी, बैठा बात कर मोटी,
आडम्बर न राखे ज्ञाणा मे पकेवड़ा ॥
धन धन कहे लोक, कबहू न राखे शोक,
आजन मस्त जग जपो माहि जो बड़ा।
कहे नृप मानसिंह दुखी तो जगत सब,
सुखी जैन सेवड़ा ॥"

आचार्य श्री की यह कीर्ति-निस्पृहता उनके जीवन को प्रतिबिम्बित कर रही है, जो एक आदर्श है।

सच्चे सुधारक के रूप मे आपने तत्कालीन परिस्थितियो को बदलने का भगीरथ प्रयास किया और अर्द्धशताब्दी पर्यन्त अपने ज्ञान और सयम की अखड ज्योति द्वारा जिनशासन की जाहो जलाली की। स्थानकवासी परम्परा के अभ्युत्थान के लिये आपके प्रयास जैन इतिहास मे सदा स्वर्णाक्षरो मे मण्डित रहेगे। आपके ज्ञान-दर्शन-चारित्र से प्रभावित होकर अनेक भव्यात्माओ ने आपके पास भागवती दीक्षा अगीकार की व सहस्रो व्यक्तियो ने आपसे सम्यक्त्व बोध प्राप्त किया। पूज्य श्री हम्मीर मलजी म.सा आपके प्रमुख शिष्य और नवकोटि मारवाड़ के तत्कालीन दीवान (प्रधानमत्री) श्री लक्ष्मीचन्दजी मुथा आपके अग्रगण्य श्रावक थे।

अपने जीवन के अन्तिम तीन माह आपने जोधपुर मे ही बिताये, जहा मुथा जी व अन्य भक्त समुदाय ने आपके सान्निध्य व सेवा का पूर्ण लाभ लिया। अपना अन्तिम समय जानकर आपने सथारा के भाव व्यक्त किये व अपने प्रमुख शिष्य पूज्य श्री हम्मीर मलजी म.सा को जो भोलावणे दी, वे आपकी आचार निष्ठा व आपके संयम जीवन को मूर्त्त रूप मे व्यक्त करती है-"१. पूज्य गुमानचन्दजी म. २१ बोल बाधिया ज्यांरी पकावट राखजो। २ मैं आचार सबधी ढाला बणाइ तिके बोल सेठा राखजे। ३ सागारी सु समभाव राखजे। ४ आरजिया सुं समभाव राखजे। ५ इसो वरतण राखजो सु इण लोक मे शोभा होवे ने परलोक रा आराधक हुवो, इसो काम करजो।"

महाप्रतापी आचार्यप्रवर ने अपने शिष्य को भोलावण देने के पश्चात् सबसे क्षमायाचना की। क्षमा का आदान-प्रदान करके पूज्य श्री ने मुनि श्री हम्मीरमलजी म. के समक्ष पूर्ण आलोचना की। सलेखना संथारा के साथ

इस महापुरुष ने वि.सं. १९०२ ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी को महाप्रयाण कर दिया। आपके सयमनिष्ठ जीवन व प्रबल पराक्रम से रत्नवंश आज भी महिमा मडित है, आज भी आपका जीवनादर्श भव्य जीवो का पथ आलोकित कर रहा है।

पूज्यपाद आचार्य श्री रत्नचंदजी म के देवलोक गमन के बाद उनके पट्ट को सुशोभित किया उनके सुशिष्य **पूज्य श्री हम्मीरमलजी म.सा.** ने । आपका जन्म नागौर मे धर्मनिष्ठ सद्गृहस्थ श्री नगराजजी गाधी की धर्मपरायणा धर्मपत्नी ज्ञानकुमारी जी की कुक्षि से हुआ। माता-पिता की वात्सल्यमयी गोद मे आपने बाल लीला के ग्यारह वर्ष व्यतीत किये। कुटिल कालचक्र ने प्रहार किया व बालक हम्मीर मात्र ग्यारह वर्ष की उम्र मे पिता श्री की छत्रछाया से वचित हो गया। माता व पुत्र दोनो ही नागौर से पीपाड़ आ गये, जहाँ उन्हे महासतीजी वरजू जी महाराज के पावन दर्शन व सान्निध्य का लाभ प्राप्त हुआ। महासतीजी के दर्शन, समागम व उपदेश श्रवण से माता-पुत्र ने संसार की असारता व क्षण-भंगुरता समझी व उनका हृदय वैराग्य रग मे रग गया। माताश्री ने अपने हृदय की भावना महासतीजी महाराज के समक्ष व्यक्त की। महासतीजी की प्रेरणा पाकर माता अपने पुत्र के साथ पूज्य आचार्य श्री रत्नचदजी मसा की सेवा मे बिराटिया पहुची और अपने पुत्र को उनके चरणो मे समर्पित कर भागवती दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की। माता की भावना के अनुसार बिराटिया मे ही सवत् १८६२ फाल्गुन शुक्ला सप्तमी को ११ वर्षीय बालक हम्मीरमल को पूज्य आचार्य श्री ने भागवती दीक्षा प्रदान की। पुत्र को दीक्षा दिलाकर माता ने भी महासती वरजूजी के पास दीक्षा धारण की।

बुद्धि, प्रतिभा, विनय, परिश्रम और गुरु कृपा से बालक मुनि हम्मीरमलजी मसा ने शीघ्र ही अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। पूज्य श्री जैसे समर्थ विद्वान आचार्य गुरु हो और मुनि हम्मीर जैसे विनय सम्पन्न प्रतिभा सम्पन्न शिष्य हो तो उस अध्ययन की बात ही क्या! आपने गुरु-सेवा मे रह कर शास्त्रो व सस्कृत-प्राकृत का गभीर अध्ययन किया। ज्ञान-साधना ही नही, आपकी तप-साधना व सयम-साधना भी विशिष्ट थी। भीषण सर्दी मे भी आप मात्र एक पछेवड़ी ही धारण करते। घृत के अतिरिक्त अन्य चार विगयो, दूध, दही, तेल व मीठा के आपके त्याग थे। यही नही पके अचित्त हरे शाक का भी आपके त्याग था।

आप अनन्य गुरु भक्त थे। पूज्य श्री रत्नचन्द्र जी मसा के विराजते आपने एक भी चातुर्मास उनसे अलग नही किया। गुरुदेव के स्वर्गारोहण के पश्चात् व्यथित हृदय से भी आपका गुणगान कैसा होता था-

[illegible]।।
[illegible]।।

आपका उपदेश अत्यन्त प्रभावोत्पादक था। आपकी वैराग्यमयी वाणी-सुधा ने अनेक भव्यात्माओ और भक्तजनो को नवजीवन प्रदान किया। आपके हृदय मे प्रभु-भक्ति का रस निरन्तर प्रभावित होता रहता। 'दीवसमा आयरिया' की उक्ति सार्थक करते हुए आपने अनेक व्यक्तियो के जीवन को भक्ति व ज्ञान से पावन किया, जिसका साक्षात् प्रमाण विनयचद चौबीसी के रचयिता, दईकडा ग्राम निवासी कविश्रेष्ठ श्री विनयचन्दजी कुम्भट का जीवन है। बाल्यकाल से ही प्रज्ञाचक्षु विनयचन्दजी ने पूज्य श्री की सेवा व समागम का स्वर्णिम सयोग मिलने पर जैन धर्म का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया व पूज्य गुरुदेव के वचन रूपी बीज आपके हृदय-क्षेत्र में अंकुरित होकर विनयचंद चौबीसी के रूप मे पल्लवित पुष्पित हुए।

चौबीस तीर्थङ्करो की भावभीनी स्तुति के अनन्तर कवि विनयचन्दजी ने कलश मे आचार्य श्री हम्मीरमल जी

महाराज के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए कहा है –

> चोबीस तीरथनाथ कीरति, गावता मन गह - गहे।
> कुम्भट गाकुलचन्द - नन्दन, ' विनयचन्द' इण पर कहे॥
> उपदेश पूज्य हमीर मुनि को, तत्त्व निज उर मे धरी,
> उगणीस सा छ के छमच्छर, महास्तुति यह पूरण करी।

पूज्य श्री हम्मीरमलजी म.सा का अन्तिम चातुर्मास नागौर मे हुआ व वि.स १९१० कार्तिक कृष्णा एकम को सथारा समाधि के साथ आपने देवलोक गमन किया।

आपके देवलोक गमन के पश्चात् आपके पट्ट पर **पूज्य श्री कजोड़ीमलजी म.सा.** विराजे। आपका जन्म किशनगढ मे ओसवाल वशीय सुश्रावक श्री शम्भूमलजी की धर्मपत्नी धर्मपरायणा बदनकवर जी की कुक्षि से हुआ। होनहारिता व बुद्धि की कुशाग्रता आपकी जन्मजात विशेषता थी। आठ वर्ष की कोमल अवस्था मे ही आपके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया। काल का कैसा अनभ्र वज्रपात ! आप किशनगढ से अजमेर आ गये। पुण्ययोग से आपको मुनि श्री भैरूमल्लजी महाराज के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुनिश्री के दर्शन और उनकी हितमित ओजस्वी वाणी से आपकी धर्म की ओर विशेष अभिरुचि हो गई और शीघ्र ही आपने सामायिक व प्रतिक्रमण का अभ्यास कर लिया। शनै शनै आपकी वैराग्यभावना बढ़ने लगी व आपने रात्रि-भोजन व हरी वनस्पति के त्याग कर दिये। शुभ योग से पूज्यपाद आचार्य श्री रत्नचदजी म.सा का अजमेर पदार्पण हुआ। पूज्य श्री की पातक प्रक्षालिनी प्रवचन सुधा ने आपके हृदय मे रहे हुए वैराग्य बीज को अकुरित व पल्लवित कर दिया व आपने उन्हे शीघ्र दीक्षा देने की प्रार्थना की। आपकी प्रार्थना पर पूज्य श्री ने आपको जीव दया की साधना करने की प्रेरणा दी। यह सुनकर आत्महित की कामना से आपने जीवन पर्यन्त आरम्भ का त्याग कर लिया। कैसा उत्कट वैराग्य ! गुरु वचनो मे कैसी आस्था ! 'श्रेयासि बहुविघ्नानि'। परिजनो ने दीक्षा के विरुद्ध प्रपञ्च फैलाना प्रारम्भ किया, पर आपने निश्चल भाव और शान्ति से विरोध का मुकाबला किया। आपकी दृढता देखकर न्यायाधीश को भी अनुमति प्रदान करनी पड़ी व वि स १८८७ माघ शुक्ला ७ के दिन अजमेर मे आचार्य भगवन्त श्री रत्नचदजी म सा के कर कमलों से आप दीक्षित हुए। आप तीव्र मेधा के धनी थे व थोड़े ही समय मे आपने सिद्धान्तो का गहन अध्ययन कर लिया। आचार्य श्री ने आपकी योग्यता के और अधिक विकास हेतु आपको अपने गुणश्रेष्ठ शिष्य श्री हम्मीरमलजी महाराज की निश्रा मे रख दिया। थोडे ही समय मे आपके ज्ञान-दर्शन-चारित्र की परिपक्वता व आत्म-शक्ति से सतुष्ट हो गुरुदेव ने आपको स्वतत्र रूप से विहार कर धर्म जागृति की आज्ञा प्रदान की। आपकी पीयूषपावनी वाणी से अनेक व्यक्ति जिन धर्मानुरागी बने। सयम के नियमो का आप कठोरता से पालन करते थे। आप एक ही चादर से शीत, उष्ण और वर्षाकाल व्यतीत करते। आपकी शारीरिक कान्ति अनुपम थी। आप गौरवर्ण, शरीर से सुडोल व कद से लम्बे थे। आपके नेत्र केहरी के समान तेजस्वी थे तो वाणी मे घनगर्जना सी गम्भीरता और अद्भुत आकर्षण था। कहना होगा आपके व्यक्तित्व और तपस्तेज के कारण आपके सम्पर्क मे जो भी आता, वह प्रभावित हुये बिना नही रहता था।

पूज्य आचार्य श्री हम्मीरमलजी महाराज के स्वर्गवास के पश्चात् सम्प्रदाय के सचालन और सरक्षण की शक्ति, आगमो की अभिज्ञता, विद्वत्ता, शरीर सम्पदा, प्रतिभा, योग्यता आदि सब दृष्टियो से चतुर्विध सघ ने आपको आचार्यपद देने का निर्णय लिया । विसं १९१० माघ शुक्ला पचमी को २४ साधु-साध्वियो और हजारो श्रावक-श्राविकाओ की उपस्थिति मे आपको आचार्य पद प्रदान किया गया। आपके सयम, पाण्डित्य व तप का इतना तीव्र तेज था कि वक्रवचनी और कुटिल बुद्धि कुतर्कियो को भी आपसे कुतर्क करने की हिम्मत नही होती

थी। एकदा आपके स्थूल शरीर व उदराकार पर पनिहारिन बहिनो द्वारा किये गये व्यग्य कि 'ढूंढिया के भी पेट है' का दिया गया प्रत्युत्तर आपकी प्रत्युत्पन्नमति, गाभीर्य व अतर्निरीक्षण का द्योतक है–

न न कहीं ऊपर म मैन परखा तन
और खटका सब मिट गया, एक रह गया पेट ॥

आपने २६ वर्ष तक कुशलतापूर्वक सम्प्रदाय का सचालन किया। आपके शासन काल मे १३ मुनियों की दीक्षा हुई। आपने विभिन्न क्षेत्रो मे ४९ चातुर्मास कर धर्मज्योति को प्रज्वलित किया। वि.स. १९३६ वैशाख शुक्ला २ को पेट मे भयकर दर्द होने लगा। दर्द की तीव्रता से आपने समझ लिया कि अब अन्तिम समय आ गया है। आपने साधुओ के समक्ष आलोचना की और पच परमेष्ठी को वदन कर सभी जीवो से क्षमायाचना की। अगले दिन पूर्ण उपयोगपूर्वक सथारे की विधि करते हुए अनशनविधि का उच्चारण करते-करते पूज्य श्री के प्राण परलोक के लिये प्रयाण कर गये, मानो वे सथारे की विधि मे पूर्णता की ही प्रतीक्षा कर रहे थे।

वादीमर्दन श्री कनीराम जी महाराज आपके प्रमुख सहयोगी सत थे, जिन्होने पजाब जैसे क्षेत्रो मे उग्र विहार कर वहा सघ मे शान्ति व ऐक्य कायम किया व वहा भी जिन शासन की महती प्रभावना की। आपने तेरापथ की मान्यताओ के खडन हेतु 'सिद्धान्तसार' ग्रन्थ की रचना की। जीवन मे आपने अनेक बार चर्चा व शास्त्रार्थ कर विपक्षियो को परास्त किया।

आचार्य श्री के शिष्यरत्नो मे उनके पट्टधरशिष्य पूज्य श्री विनयचदजी महाराज, पूज्य श्री शोभाचदजी महाराज, चदनसम शीतल श्री चदनमलजी महाराज, तीक्ष्ण मेधा के धनी स्वाध्याय प्रेमी श्री मुल्तानमलजी महाराज के नाम उल्लेखनीय है।

आचार्य श्री कजोड़ीमलजी महाराज के महाप्रयाण के पश्चात् उनके शिष्य रत्न **श्री विनयचन्दजी महाराज** रत्नवश परम्परा के आचार्य बने। आपका जन्म फलौदी मे ओसवशीय राजमान्य प्रतिष्ठित सद्‌गृहस्थ श्री प्रतापमलजी पुगलिया की धर्मपरायणा धर्मपत्नी रम्भाकुवर की रत्न कुक्षि से वि.स. १८९७ आश्विन शुक्ला चतुर्दशी के दिन हुआ। आपके चार भाई और एक बहिन थी।

सयोगवश अचानक ही माता-पिता का स्वर्गवास हो गया और परिवार की सारी जिम्मेदारी आप पर आ पड़ी। व्यापार के आरम्भ मे समर्थ सहायक की आवश्यकता अनुभव कर आप पाली (जहॉ आपके बहिन-बहिनोई निवास करते थे) आ गये। यहॉ विशेष पुण्योदय से आपको पूज्य श्री कजोडीमलजी महाराज के पावन दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आचार्य श्री की वैराग्योद्बोधक वाणी सुन कर आपके हृदय मे वैराग्य भाव का वपन हुआ और आपने अपने विचार लघु भ्राता श्री किस्तूरचदजी के समक्ष प्रकट किये। लघु भ्राता ने भी अग्रज का अनुसरण करने का संकल्प कर लिया। दोनो ही बन्धु पूज्य श्री की सेवा मे रह कर साधुता सम्बन्धी ज्ञानाभ्यास करने लगे। विस १९१२ मार्गशीर्ष कृष्णा २ को दोनो बन्धुओ ने अजमेर मे पूज्य श्री के पास श्रमण दीक्षा अंगीकार की। दोनो बधुओ ने ज्ञानाभ्यास मे अपने आपको पूर्ण मनोयोग पूर्वक सलग्न कर लिया। थोड़े ही अन्तराल मे आपने ऐसी योग्यता सम्पादित कर ली कि आप धाराप्रवाह रूप से शास्त्रों का व्याख्यान करने लगे। दुर्दैव से अनुज भ्राता मुनि श्री किस्तूरचदजी महाराज का असामयिक देहावसान हो गया। युगल जोड़ी खडित हो गई।

प्रकृति की कोमलता, विनय व समर्पण से आप पूज्य गुरुदेव व सभी के प्रीति पात्र बन गये। बुद्धि की तीव्रता और अव्याहत श्रम से आप जैनागमो के तलस्पर्शी ज्ञाता बन गये। पूज्य आचार्य श्री कजोड़ीमलजी महाराज

का स्वर्गगमन होने पर चतुर्विध संघ ने वि.सं. १९३७ ज्येष्ठ कृष्णा ५ को आपको आचार्य पद प्रदान किया। आपने ३६ वर्ष तक कुशलतापूर्वक सम्प्रदाय का सचालन किया। इन ३६ वर्षों मे पूर्व के २२ वर्ष पर्यन्त आपने विभिन्न क्षेत्रों मे उग्र विहार कर अनेकों भव्यात्माओं को सयम-जीवन का अधिकारी बनाया तो हजारों व्यक्तियो को श्रमणोपासक व सम्यक्त्वी बना कर वीर शासन की महती प्रभावना की। जीवन के अन्तिम चौदह वर्ष नेत्र ज्योति की मदता के कारण आप जयपुर स्थिरवास विराजे। पूज्य श्री मे यह विरल विशेषता थी कि आप शास्त्रों के मर्म को समझने वाले समर्थ विद्वान बहुश्रुत महापुरुष होने के साथ ही साध्वाचार के सूक्ष्म नियमों के यथाविधि परिपालक थे। जैनागम मे वर्णित कर्म-प्रकृतियों के आप विशिष्ट विवेचक थे। आपकी स्मरणशक्ति व धारणाशक्ति अद्भुत व विलक्षण थी। बीसो बरस बाद भी यदि कोई पूर्व परिचित श्रावक आकर चरण छूता तो उसकी बोली मात्र सुन कर आप उसकी पूर्व पीढियो तक की बात बता देते थे तो भगवती जैसे विशाल आगम के सदर्भो को शतक उद्देशक पत्रक वार फरमा देते थे। कौनसा विषय कहाँ प्रतिपादित है, आप हस्तामलकवत् या निजनामवत् बता देते थे।

अन्य सम्प्रदायो के प्रति आपकी उदारता अतुलनीय है। स्थानकवासी समाज के विभिन्न परम्पराओं के अनेको विद्वान् मुनिराज आपसे श्रुत धारणा के लिए जयपुर पधारते तो आप भी आग्रह पूर्वक उन्ही का प्रवचन कराते एवं उदारतापूर्वक आगम रहस्यो से उन्हे परिचित कराते। यही नही, मूर्ति पूजक श्रमणो से भी आप पूर्ण सद्भाव रखते एव उन्हे शास्त्रो के अनुशीलन हेतु प्रेरित करने व उनकी शकाओ का समाधान करने मे भी सदा तत्पर रहते। खरतरगच्छीय श्री शिवजी रामजी महाराज को भी आपने आचाराग सूत्र का स्वाध्याय करने की प्रेरणा दी व सूत्र पढ़ने की उनकी रुचि को जागृत किया, जिसका वे आजीवन उपकार मानते रहे।

धार्मिक कट्टरता के युग मे आपकी उदारता अनूठी थी। वे कभी किसी के भी मत का खण्डन किए बिना स्वमत की विशेषता प्रतिपादित करते। व्यापक दृष्टिकोण के कारण आपके प्रवचनामृत का सब धर्मावलम्बी लाभ उठाते। पजाबी मुनि श्री मयाराम जी म.सा., पूज्य श्री हुकमीचन्दजी म.सा. की परम्परा के आचार्य श्री श्रीलालजी म.सा., पूज्य श्री धर्मदासजी म. की सम्प्रदाय के पडित रत्न श्री माधव मुनि जी महाराज आदि विभिन्न परम्पराओ के महापुरुष आपकी वत्सलता, उदारता व आगम मर्मज्ञता से प्रभावित थे। पूज्य श्री ने यह नियम बना रखा था कि जब कोई शुद्ध साधु-मर्यादा का पालन करने वाले संत आपके स्थिरवास काल में जयपुर पधारते तो उनके प्रति सत्कार प्रकट करने के लिये आप अपना व्याख्यान बन्द रखते और भक्त श्रावको को नवागन्तुक सतो के व्याख्यान-श्रवण व सेवाभक्ति का पर्याप्त लाभ लेने हेतु प्रेरित करते। वयोवृद्ध, श्रुतवृद्ध, दीक्षावृद्ध एवं पदवृद्ध बहुश्रुत आचार्य पूज्य श्री विनयचदजी म. की ऐसी उदारता, निरभिमानता, वात्सल्य भाव व प्रेम परायणता दुर्लभ उदाहरण हैं।

विक्रम संवत् १९७२ मार्गशीर्ष कृष्णा १२ को ७५ वर्ष की वय मे जैन जगत के इस ज्ञानसूर्य का अवसान हो गया।

तपस्वीरत्न श्री बालचन्दजी महाराज, स्वामी जी श्री चन्दनमलजी महाराज आपके प्रमुख सहयोगी सत थे। तपस्वी श्री पजाब के निवासी थे। आपने दीक्षा के प्रथम दिन से ही व्याधि और पारणे के सिवाय चार विगयो (दूध, दही, मिष्ठान्न और तेल) का यावज्जीवन के लिये त्याग कर दिया। प्रासुक हरे साग का भी आपके आजीवन त्याग था। आप प्रतिमास कम से कम पाच उपवास तो करते ही, विशेष तपस्या भी प्रायः करते रहते। परीषहो को आगे होकर आमंत्रित करने हेतु आप गर्मी मे ग्रीष्म आतापना व सर्दी में शीत आतापना लेते, तो कई बार कर्मों के भार का मानो आकलन करने हेतु आप कठिन अभिग्रह भी धारण कर लेते, पर आपके अन्तराय कर्म इतना हलका हो चुका

था कि अक्षय तृतीया को विवाहित द्वितीय पत्नी (प्रथम पत्नी के स्वर्गस्थ होने के अनन्तर नवोढ़ा) के साथ चांदी के थाल में दाल का हलवा एक साथ जीमने हेतु बैठे दम्पती आजीवन शीलव्रत ग्रहण करे तो आहार ग्रहण करना, जैसे दुष्कर अभिग्रह भी आपके सहज ही फलीभूत हुए। जिस दम्पती के व्रत-ग्रहण से आपका यह दुष्कर अभिग्रह फला, वे थे ब्यावर के सुश्रावक श्री आनन्दराज जी शाह एव उनकी नवोढा धर्मपत्नी। यही नही जिस किसी को भी आपने तेला करने का कह दिया, उसकी विपत्ति का भी सहज निवारण हो जाता।

स्वामीजी श्री चन्दनमलजी महाराज चन्दन के समान शीतल, शान्त-दान्त-गम्भीर प्रकृति के महापुरुष थे। आपकी निष्पक्षता, गम्भीरता एव प्रशान्तता जग जाहिर थी। यही कारण था कि पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज की परम्परा मे विवाद होने पर पूज्य आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज का भी आग्रह रहा कि स्वामी श्री चदनमलजी महाराज मध्यस्थ बन कर जो भी निर्णय दे तो मै सहर्ष स्वीकार करूँगा।

पूज्य आचार्य श्री विनयचदजी महाराज के शासनकाल मे श्रेष्ठिवर्य श्री सुजानमलजी की दीक्षा ने अनाथी मुनिराज के आदर्श को मानो उपस्थित कर दिया। नित्यप्रति पुष्प शय्या पर शयन करने वाले, गोठ गूगरी के शौकीन, इत्र सेवन करने वाले, उन श्रेष्ठिवर्य ने घुटनो मे "दर्द दूर हो जाने पर पूज्य श्री के पास दीक्षा ले लूगा" ऐसा चिन्तन किया तो सहज ही पीड़ा दूर हो गयी। सकल्पधनी वह महापुरुष पीछे नही हटा व पूज्यपाद के चरणो मे दीक्षा लेकर कल का श्रेष्ठी जयपुर की गलियो मे भिक्षावृत्ति हेतु घूम कर अपने को धन्य मानने लगा। कल तक अनेको सेवको द्वारा सेव्य, राग का धनी, वह कर्मशूर आज सत महापुरुषो की वैय्यावृत्त्य कर अपने को धन्य समझने लगा। धन्य है ऐसे संकल्पधनी महापुरुष। धन्य है पूज्य आचार्य प्रवर का प्रभाव व पुण्यशालिता। ऐसे ही महापुरुषो के लिये पूज्य श्री भूधर जी महाराज ने कह दिया—

> रंग महल मे पौढते, जे कोमल सेज बिछाय।
> ते कंकरीली भूमि मे, सोवे संवर काय॥ वे गुरु
> षट रस भोजन आसन, जे सुवर्ण थाल मझार।
> भव वे सब छिटकाय ने, प्रासुक लेत आहार॥ वे गुरु

बहुश्रुत आचार्य श्री विनयचदजी म सा के पश्चात् **पूज्य श्री शोभाचदजी महाराज साहब** परम्परा के आचार्य बने। आपका जन्म मरुधरा की राजधानी, रत्नवश के पट्टनगर जोधपुर मे सवत् १९१४ कार्तिक शुक्ला पचमी को श्रेष्ठिवर्य श्री भगवानदास जी चामड़ की धर्मशीला धर्मपत्नी पार्वती देवी की रत्नकुक्षि से हुआ। सौभाग्य पचमी को जन्म लेने के कारण आपका नाम शोभा चद रखा गया। बाल्यकाल से ही आप बाल सुलभ चेष्टाओ मे चचलता के स्थान पर गभीरता धारण करने वाले थे। पाठशाला मे प्रवेश कराये जाने पर भी आप विद्यालय या घर मे अपना अधिकतम समय मौन और एकान्त मे ही व्यतीत करते थे। आपकी इन प्रवृत्तियो से खिन्न पिता ने आपको १० वर्ष की छोटी वय मे ही धन्धे मे लगा दिया, पर आपको तो सन्तो के चरणो मे अपनी जिज्ञासाओ का समाधान पाने व ज्ञान सीखने मे ही अपना समय बिताकर परम आनन्द होता। पुण्योदय से आपको पूज्यपाद आचार्य श्री कजोड़ीमलजी म.सा. के पावन दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अद्भुत व्यक्तित्व के धनी, साधना की साक्षात् प्रतिमूर्ति और ब्रह्मचर्य की अपूर्व शक्ति के धारी आचार्य श्री कजोड़ीमलजी महाराज के वैराग्यपूर्ण उपदेश को सुनकर बालक शोभाचद ने सयमपथ पर आरूढ होने का निश्चय किया, पर दीक्षा की अनुमति आसान न थी। आज्ञा प्राप्त करने मे कई अड़चने व बाधाए आईं, पर आपकी दृढ लगन और निश्चय को देखकर अन्ततः माता-पिता को आज्ञा देनी पड़ी। तेरह वर्ष की अवस्था मे एक विशाल महोत्सव मे जयपुर में वि.स. १९२७ माघशुक्ला पचमी

को आचार्य श्री कजोड़ीमलजी महाराज के कर-कमलो से आपकी दीक्षा सम्पन्न हुई। गुरुदेव का सान्निध्य तो था ही, बड़े गुरु भ्राता श्री विनयचन्द जी म.सा. का आपके ज्ञान-ध्यान मे विशिष्ट सहयोग रहा व आपका अधिक विचरण-विहार भी उन्ही के सान्निध्य मे हुआ। पूज्य श्री विनयचदजी म.सा. के प्रति आपका शिष्यवत् समर्पण भाव था। पूज्य श्री के १४ वर्ष के सुदीर्घ जयपुर स्थिरवास मे आपने पूर्ण श्रद्धा व समर्पण से उनकी अहर्निश सेवा की। कोई अनुमान नही लगा पाता था कि वे पूज्य श्री के गुरु भ्राता हैं या शिष्य। ऐसा सुना जाता है कि पूज्य श्री विनयचदजी म.सा यदि रात्रि मे करवट भी बदलते तो आप जागृत हो जाते।

पूज्य आचार्य श्री विनयचदजी म.सा के स्वर्गवास के पश्चात् स्वामीजी श्री चन्दनमलजी म.सा. के आग्रह से आपने आचार्य पद स्वीकार किया। वि.स. १९७२ फाल्गुन कृष्णा ८ को स्वामीजी महाराज एव आचार्य पूज्य श्री श्रीलालजी म.सा. द्वारा चतुर्विध सघ की उपस्थिति मे आपको आचार्य पद की चादर ओढ़ाई गई। पूज्य आचार्य श्री शोभाचदजी महाराज निर्मल निस्पृह साधक थे। आपके सयम-जीवन का मुसद्दी वर्ग व अन्य मतावलम्बियों पर भी व्यापक प्रभाव था। जोधपुर के सैकड़ो मुसद्दी परिवार व माहेश्वरी भाई आपको गुरु मानते और पूछे जाने पर बेहिचक अपने गुरु का नाम पूज्य शोभाचन्द्रजी बताते। यह आपकी उदारता, सदाशयता और विराट्ता का प्रत्यक्ष प्रमाण था। किसान परिवारो के अनेक ग्रामीण जन भी आपके भक्त थे। आपके सदुपदेशो से जैन श्रावक बने मूलजी विश्नोई की भक्ति की सराहना जैनाचार्य जवाहरलालजी ने अपने प्रवचनो मे की।

पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी महाराज महान गुणो से विभूषित थे। वे परमत सहिष्णुता, वत्सलता, गंभीरता, सरलता, सेवाभाविता, विनयशीलता, मर्मज्ञता, आगमज्ञता और नीतिज्ञता के गुणो से सम्पन्न महापुरुष थे। आपका जीवन अप्रमत्त था, कभी प्रमाद का सेवन नही करते। स्वय उनके शिष्य आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा के शब्दो मे "मेरे गुरुदेव ने कभी टेका नही लिया", वे सदा अपना समय जप, तप, साधना एव स्वाध्याय मे ही व्यतीत करते। उनका जीवनादर्श था-

खण निकम्मा रहणा नहीं, करणो आतम काम,
भणणा गुणणा सीखणो रमणो ज्ञान आराम।

आपको उत्तराध्ययन सूत्र निज नामगोत्रवत् कण्ठस्थ था, अक्षर, पद, बिन्दु की भी उच्चारण मे स्खलना नही होती। आप सदा रात्रि के पिछले प्रहर मे प्रतिदिन स्वाध्याय करते थे। आपके उपदेशो मे सरलता के साथ-साथ गभीरता का पुट भी होता था। आपके प्रवचन प्राचीन शैली मे होते हुए भी नूतनहृदय को प्रसन्न एव पुलकित बनाने मे समर्थ थे। जोधपुर के अनेको न्यायाधिपति, बैरिस्टर, शासकीय अधिकारीगण आपके परम भक्त थे।

आप व्यक्तियो को परखने के निष्णात पारखी एव जीवन-निर्माण के कुशल शिल्पी थे। बालवय मे दीक्षित अपने शिष्य बालक हस्ती को आपने जिस कुशलता से गढा एव अल्प सान्निध्य मे ही अपना ज्ञान व अपने जीवनादर्श जिस ढग से बालक हस्ती के हृदय मे उँडेले, वह गुरु शिष्य-परम्परा का आदर्शतम उदाहरण है। मात्र पाच वर्ष के दीक्षावधि वाले शिष्य के भीतर रही महान आत्मा को एव उनके भीतर रही हुई प्रतिभा को परख कर आपने जीवन के जौहरी की निष्णातता का परिचय दिया। रत्नवश के भावी आचार्य के रूप मे बालक मुनि हस्ती का चयन कर आपने रत्नवश पर महान उपकार किया। हम सबने आचार्य हस्ती के पावन सान्निध्य का लाभ लिया है, उनके गुणो एव जीवन मे हम पूज्य आचार्य शोभाचन्दजी म. के जीवनादर्शों एव साधना सम्पूरित गुणों की सहज झलक अनुभव कर सकते है। आपका

आचार्य-कार्यकाल मात्र ११ वर्ष का था, पर इस अल्प काल मे ही आपने इतिहास पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। आपके शासनकाल मे मुनि श्री लालचदजी महाराज, मुनि श्री हस्तीमलजी महाराज, मुनि श्री चौथमलजी महाराज व श्री बड़े लक्ष्मीचंदजी महाराज ने तथा केवलकुवरजी, झमकूजी आदि १६ महासतिया जी महाराज ने दीक्षा ग्रहण की।

वि.स. १९८३ श्रावण कृष्णा अमावस्या को जीवन के सच्चे पारखी इस महापुरुष ने जोधपुर मे अपनी दैहिक जीवन-लीला समेट कर महाप्रयाण कर दिया।

आपके सुशिष्य युगमनीषी प्रात· स्मरणीय **आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी महाराज** ने बालवय मे सयम ग्रहण कर एव तरुण अवस्था मे आचार्य पद पर आरूढ होकर सुदीर्घ सयम-पर्याय एव सुदीर्घ आचार्य-काल से नव-इतिहास की रचना की। वे इतिहास लेखक ही नही, वरन् इतिहास निर्माता थे। वे पद से नही, वरन् पद उनसे महिमा मण्डित हुए, वे भक्तो से नही, वरन् भक्त जन उन जैसे गुरु पाकर गौरवान्वित हुए। उनका निर्मल विमल निरतिचार अप्रमत्त सयम जीवन, गुणिजनो के प्रति प्रमोद, छोटो के प्रति स्नेह-वात्सल्य एव बड़ो के प्रति आदर भाव उन्हे महापुरुषो की शृखला मे अग्रगण्य स्थान पर अकित करता है। वे एक सम्प्रदाय मे रहते हुए भी समूचे जैन जगत मे 'पूज्य श्री' के नाम से विख्यात रहे। लघु काया मे विराट् व्यक्तित्व, अर्वाचीन मान्यताओ के पक्षधर, पर बुद्धिजीवी भक्त समुदाय के भगवान, ज्ञान, क्रिया एव पुण्यशालिता के अद्भुत सगम आचार्यदेव के जीवन मे अपने पूर्ववर्ती महापुरुषो का ही नही, वरन् आर्य स्थूलिभद्र की ब्रह्मचर्य साधना, आर्य आर्यरक्षित की मातृभक्ति व ज्ञान-पिपासा तथा बालवय मे दीक्षित आर्य वज्र जैसी मस्ती, निर्भीकता एव सयमनिष्ठा का अद्भुत समन्वय था। यह जीवन चरित्र 'नमो पुरिसवरगधहत्थीण' उन महामानव के जीवन को ही समर्पित है।

रत्नसघ पट्टपरम्परा जैन जगत की दिव्य सत-परम्परा का यशस्वी अध्याय है। रत्नसघ के सभी आचार्यो ने लघुवय मे दीक्षा अगीकार कर सुदीर्घ सयम-साधना से जिनशासन की महती प्रभावना की। सभी आचार्य भगवत ज्ञान, दर्शन एव चारित्र के अद्भुत सगम थे। सभी आचार्य एक सम्प्रदाय-व्यवस्था की परिधि मे रहते हुये भी सदा इसकी भेद-रेखाओ से परे रहे। ऐसे ही महापुरुषो के बारे मे आचार्य श्री भूधर जी महाराज द्वारा रचित ये पक्तिया सार्थक कही जा सकती है-

> [illegible], [illegible]
> [illegible], [illegible]।
> [illegible]।
> [illegible] भूधर मागे [illegible]॥

जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे पीपाड़नगरे

- पुण्यधरा : पीपाड़

परमप्रतापी प्रतिभामूर्ति चारित्रनिष्ठ आचार्य श्री हस्ती का जन्म जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित भारतदेश के मारवाड़ (राजस्थान) की पुण्यधरा पीपाड़ शहर मे हुआ। मारवाड़ की मरुधरा के मुकुटमणि जोधपुर नगर से ६० किलोमीटर की दूरी पर जोजरी नदी के तट पर अवस्थित 'पीपाड़शहर' के सम्बन्ध मे कथानक है कि इसे बप्पा रावल के वशज पीपला रावल ने बसाया था। इतिहासविदो के अनुसार यह प्राचीन नगरी शताब्दियो तक राजस्थान के वर्तमान पाली-मारवाड़ जिले मे स्थित निमाज ठिकाने के जागीरदार की जागीर का हिस्सा रही। मध्ययुग मे सन्त पीपाजी ने भी इसे धर्मप्रसार का केन्द्र बनाया।

आचार्य श्री हस्ती की जन्मभूमि पीपाड़ की वसुधा अन्न एव धन से भी समृद्ध रही है तो महान् सन्तो की पदरज से भी पावन होती रही है। इसे अनेक जैन सन्तो एव आचार्यों ने अपने जन्म, दीक्षा, विचरण एव महाप्रयाण से धन्य किया है। आचार्य श्री हस्ती जिस सन्त-परम्परा के सप्तम पट्टधर बने, उस रत्नवश के मूलपुरुष यशस्वी सन्त श्री कुशलचन्द्रजी महाराज ने इसी पीपाड़ (रिया) की धरा पर जन्म लिया। स्थानकवासी जैन सम्प्रदाय के तेजस्वी आचार्य श्री जयमलजी महाराज, महान् क्रियोद्धारक आचार्य श्री रत्नचन्द्रजी महाराज (जिनके नाम से 'रत्नवश' विश्रुत है), चारित्रनिष्ठ आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज (आचार्य श्री हस्ती के गुरु) आदि अनेक सन्तो एवं महापुरुषों ने अपने वर्षावासो एव शेषकाल-विचरण से इस धरा की पुण्यशालिता मे अभिवृद्धि की। रत्नवश-परम्परा के ही प्रखर चर्चावादी एव 'सिद्धान्तसार' ग्रन्थ के रचयिता प्रसिद्ध प्रभावशाली सन्त श्री कनीरामजी महाराज का देवलोकगमन भी इस धरा से हुआ।

आध्यात्मिक एव सास्कृतिक दृष्टि से समृद्ध यह तपःपूत पीपाड़नगरी तब और अधिक धन्य हो उठी जब लक्षाधिक लोगो के सन्मार्ग-प्रवर्तक आचार्य श्री हस्ती का जन्म भी इसी भूमि पर हुआ। यहाँ पर यह उल्लेख करना अप्रासङ्गिक नही होगा कि खरतरगच्छ की अत्यन्त प्रभावशालिनी साधिका महासती श्री विचक्षण श्री जी एव चरितनायक आचार्य श्री हस्ती के शिष्य रत्नवश के वर्तमान अष्टम पट्टधर आचार्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज की जन्म-स्थली होने का सौभाग्य भी पीपाड़ की धरा को प्राप्त है।

रियासतकाल में पीपाड़ के साथ ही रीया का नाम जुड़ा हुआ था। पीपाड़ से कच्चे रास्ते से तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित रीयाँ उस समय अत्यन्त समृद्ध ग्राम था। कहा जाता है कि मारवाड़ मे पड़े भीषण अकाल के समय जोधपुर के तत्कालीन महाराजा विजयसिंहजी को धनराशि की आवश्यकता हुई तो रीयाँ के श्रेष्ठिवर जीवनसिंह जी मुणोत ने मरुधरा की सहायता के लिए खुले दिल से स्वर्ण-मुद्रा से लदे छकड़ो की कतारे लगा दी। छकड़ो की कतार रीयाँ से जोधपुर तक जा पहुँची, जिसे देखकर जोधपुर नरेश अचम्भित रह गए।

रीयाँ का यह वर्णन कवि प्रतापमल ने इस प्रकार किया है —

परतख पीपाड़ पास, रीयाँ रंग भीनो शहर।
शक्ति की मेर सेती बस्ती गुलजार है।

विजयसिंह महाराज आय, सेठ को कही थी ऐसी
क्रोड़ एक रुपियां (मोहरा) हूँ की , मेरे दरकार है।
खोल के खजानो सेठ, छकड़ा से छकड़ा जोड़।
छोटो सो काम कीनो मुल्कां माहिजहार है॥

उस समय यह माना जाता था कि मारवाड़ मे समृद्धि की दृष्टि से कुल अढाई घर हैं। एक घर रीयाँ के सेठो का, दूसरा बिलाड़ा के दीवानो का तथा आधा घर जोधपुर दरबार का। इतनी समृद्धि होते हुए भी रीयाँ के सेठ मुणोत साहब अत्यन्त सादा जीवन व्यतीत करते थे। यह रीयॉ गॉव पीपाड़ का ही सहोदर एव आचार्य श्री हस्ती के नाना के गोत्री पूर्वजो का गॉव था।

वर्तमान काल मे रीयाँ एक साधारण ग्राम के रूप मे शेष है। पीपाड़ कृषि, वाणिज्य एव उद्योग धन्धो की दृष्टि से आस-पास के ग्रामो का केन्द्र बना हुआ है, जबकि पूर्वकाल मे हुए राज-विप्लवो आदि के कारण रीयॉ के श्रेष्ठि-परिवार पीपाड़, कुचामन, अजमेर, पूना, सातारा आदि विभिन्न नगरो मे रीयॉ की समृद्धि एव प्राचीन गौरव को साथ लेकर जा बसे। रीयाँ के खण्डहर इस बात के साक्षी है कि यह कभी एकं वैभवशाली नगर (कस्बा) रहा है।

• बोहरा कुल

पुण्यधरा पीपाड़ मे विक्रम की बीसवी शती मे ओसवाल वशीय श्रेष्ठिवर श्री दानमलजी बोहरा एक प्रतिष्ठित श्रावक थे। आपका परिणय पीपाड़ के ही श्री हमीरमलजी (सुपुत्र श्री गम्भीरमलजी गाँधी) की सुपुत्री नौज्याबाई के साथ सम्पन्न हुआ। श्री दानमलजी बोहरा की पीपाड़ एव निकटवर्ती ग्रामो मे व्यापार-व्यवसाय मे प्रामाणिकता की दृष्टि से अच्छी छवि थी। आस-पास के ग्रामो मे उनका लेन-देन का व्यवसाय था। अपने वाणिज्य-व्यवसाय के साथ आप धर्माराधन हेतु भी तत्परतापूर्वक सदैव सन्नद्ध रहते थे।

समय बीतने के साथ श्री दानमलजी बोहरा की धर्मनिष्ठ धर्मपत्नी श्रीमती नौज्याबाई की कुक्षि से दो पुत्रो रामलाल एव केवलचन्द ने तथा चार पुत्रियो सद्दाबाई, रामीबाई, सुन्दरबाई एव चुन्नीबाई ने जन्म लिया। नौज्याबाई सासारिक दृष्टि से जितनी दूरदर्शी एव कर्मठ गृहिणी थी उतनी ही सस्कार-दात्री माता के रूप मे भी सजग थी। बोहरा परिवार एक सस्कारशील परिवार था। धर्म के प्रति सबमे अगाध आस्था थी। श्री दानमलजी बोहरा जैन मुनियो और आचार्यो के चातुर्मासो मे पीपाड़ के अलावा रीया, सोजत, मेड़ता आदि स्थानो पर जाकर भी धर्माराधन-तपाराधन की क्रियाए निष्ठापूर्वक करते थे। आप पारिवारिक एव सामाजिक दायित्वो का निर्वाह भी कर्तव्य भावना के साथ यथासमय करने हेतु उद्यत रहते थे। आपने अपनी चारो अगजात कन्याओ का विवाह सुयोग्य एव कुलीन परिवारो मे किया। पुत्रो को उन्होने वाणिज्य-व्यवसाय मे निष्णात बनाने का प्रयत्न किया।

• दो असह्य आघात

ससार विचित्र है। यहा पर सब दिन सुख के नही होते है। सुख-दुःख की अवस्थाए बदलती रहती हैं। महाकवि कालिदास ने कहा भी है-

कस्यात्यन्त सुखमुपनत, दुःखमेकान्ततो वा।
नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण॥-मेघदूत

ससार मे किसी को न तो आत्यन्तिक (पूर्ण) सुख मिला है और न ही ऐकान्तिक दुःख। सुख एव दुःख की दशा रथ के चक्र की भाँति परिवर्तनशील है।

दानमलजी बोहरा एव उनके परिवारजनो ने न जाने कितने स्वप्न सजोये होंगे, एक ही पल मे वे धराशायी हो गए। परिवार के मुखिया श्री दानमलजी बोहरा का आकस्मिक निधन हो गया। परिवार पर एक भीषण वज्रपात हुआ। पत्नी नौज्या बाई पर यह असह्य आघात था। अभी दोनों पुत्रो रामलालजी एव केवलचन्दजी का विवाह भी नही हुआ था। परिवार के अनेक कार्य शेष थे। किन्तु ससार मे यह जीवन कब धोखा दे जाय, कुछ भी नही सोचा जा सकता।

बड़े पुत्र रामलालजी ने हिम्मत से काम लिया और अपनी सूझबूझ से पैतृक व्यवसाय का कार्य सम्हाला। स्वय दुकान पर बैठना प्रारम्भ किया तथा अनुज केवलचन्दजी को उगाही के लिए भेजने लगे। माता नौज्याबाई पुत्रो की सक्रियता को देखकर राहत की सांस लेती। कभी उन्हे सत्सस्कार और हिम्मत का पाठ पढ़ाती, तो कभी उनके भविष्य के सम्बन्ध मे विचार करती।

शनै शनै रामलालजी की योग्यता समाज के अग्रणी लोगो को लुभाने लगी। उनका विवाह प्रतिष्ठित परिवार मे सानन्द सम्पन्न हुआ। बोहरा परिवार मे खुशिया छा गईं। माता नौज्याबाई के दु:ख को बाटने वाली वधू का घर मे आगमन हुआ। परिवार मे अब चार सदस्य हो गए थे। उत्साह एव समृद्धि का पुन सचार हो रहा था। पीपाड़ मे रामलालजी बोहरा का घर सबकी आखों मे प्रतिष्ठा बढ़ा रहा था।

प्रकृति को यह सब स्वीकार्य नही था। बोहरा परिवार पर पुन आकाश फट गया। परिवार-सचालन मे अग्रणी एव दक्ष रामलालजी का असामयिक देहावसान हो गया। यह घटना न केवल इस परिवार के लिए, अपितु सम्पूर्ण पीपाड़ के लिए अविश्वसनीय थी। कोई सोच भी नही सकता था, कि सकट से उबरते हुए इस परिवार पर पुन भीषण कष्ट के बादल मडरा जायेगे। इस दर्दनाक घटना को न माता नौज्या बाई सहन कर सकती थी और न ही नवविवाहिता वधू। लघु भ्राता केवलचन्दजी पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी। वे सुबक सुबक कर स्वय आँसू बहाये, या माता और भाभीजी को ढाढस बधाये, कुछ भी समझ मे नही आ रहा था।

नौज्याबाई ने पहले अपना पति खोया, अब बड़ा पुत्र चल बसा। दो-दो आघात सहने की ताकत कहाँ से लाए? धर्म के प्रति आस्था ने ही उन्हे यह हिम्मत दी। पुत्र केवलचन्द के प्रति अपनी कर्तव्य भावना को समझा। पुत्रवधू को भी हिम्मत देने वाली वही थी। नवोढा पुत्रवधू के वैधव्य का दु:ख अकल्पित था। अभी उसके कोई सन्तान भी नही थी। पुत्रवधू के स्वप्नो का ससार मानो एक ही क्षण मे टूट चुका था। उसके लिए अब ससार मे आकर्षण का कोई कारण नजर नहीं आ रहा था। ससार से विरक्ति मे ही अब उसे अपना लक्ष्य दिखाई दे रहा था। मन मे यह विचार दृढ़ हो गया कि अब उसे गृहस्थ-जीवन का त्याग कर श्रमणी-जीवन को अगीकार कर लेना चाहिए। यदा-कदा पीपाड़ मे सन्त-सतियो के समागम के कारण केवलचन्दजी की विधवा भाभी के वैराग्य का बीज अंकुर के रूप मे परिणत होने लगा। वृद्धा सास, देवर केवलचन्दजी एव परिवारजनों ने खूब समझाया, किन्तु दृढ़ मनोबला को अपना हित श्रमणी-धर्म अगीकार करने मे ही दिखाई दिया। "सम्पूर्ण जीवन वैधव्य के दु:ख मे काटने की अपेक्षा तो वैराग्य की गगा में स्नान करते हुए पंच महाव्रतो का पालन सर्वोत्कृष्ट है" - इस तथ्य से परिवारजन भी परिचित थे। अतः रामलालजी की विधवा पत्नी के दृढ़ निश्चय के समक्ष सबको झुकना पड़ा और एक दिन आचार्य श्री जयमलजी म.सा की परम्परा में वे मुण्डित हो गईं।

अब स्व. दानमलजी बोहरा के परिवार में नौज्याबाई और पुत्र केवलचन्द ये दो ही सदस्य रह गए थे। माता को पुत्र का एवं पुत्र को माता का सम्बल रह गया था। केवलचन्द जी ने अपने भाई के द्वारा सचालित कारोबार को

दु:खी मन से अपने हाथ में लिया। उनके पास पिता दानमलजी बोहरा के द्वारा जो जमीन जायदाद छोड़ी गई थी, उसमे एक मकान बोहरो के बास मे था, एक हवेली एव नोहरा नयापुरा में था। इसके अलावा श्री लक्ष्मी प्रतापमलजी भसाली के मकान की बगल मे एक पोल एव दुकान थी।

• केवलचन्दजी पर दायित्व

भाई रामलालजी के असामयिक देहावसान के पश्चात् व्यवसाय का सम्पूर्ण कार्यभार केवलचन्दजी पर आ गया। दर्जियो के मोहल्ले के बाहर वे दुकान चलाते थे।

राजस्थानी सस्कृति मे तीन-तीन पीढ़ियो तक अपनी बहन-बेटियो के पावन सम्बधो के निर्वाह की परम्परा है। बोहरा केवलचन्द जी पारिवारिक दायित्वो के निर्वहन के साथ पारम्परिक व्यापार के सवर्धन मे भी परिश्रम पूर्वक लगे रहे।

केवलचन्द जी सुडौल देहयष्टि एव गौरवर्ण के धनी थे। वे हँसमुख एव स्वस्थ थे। स्वभाव से धुन के पक्के, सन्तोषी एव भजनानन्दी थे। पीपाड़ और समीपवर्ती ग्रामो मे जहाँ कही भी उन्हे आमत्रित किया जाता, वे उत्साहपूर्वक भजन-कीर्तन मे पहुँच जाते । उनके सुमधुर कण्ठ एव चित्ताकर्षक गायन के कारण आबालवृद्ध सभी श्रद्धालु भाव विभोर हो झूम उठते थे।

पीपाड़ के राजमान्य श्रेष्ठिवर श्री गिरधारीलालजी मुणोत युवक केवलचन्द जी के व्यक्तित्व एव सद्गुणो से प्रभावित थे। वे निमाज के ठाकुर का राजकार्य पीपाड़ मे सम्भालते थे। उन्होने अपनी सुपुत्री रूपकवर का विवाह केवलचन्द जी से करने का निश्चय किया। उन्होने यह प्रस्ताव नौज्याबाई एव बोहरा परिवार के अन्य सदस्यो के समक्ष रखा। प्रस्ताव सहर्ष स्वीकृत हुआ एव वैशाख शुक्ला पूर्णिमा विक्रम सवत् १९६४ को बोहरा केवलचन्द जी रूपकवर के साथ परिणयसूत्र मे बध गए।

रूपकवर के आने से नौज्याबाई का दीर्घावधि से शोकमग्न चित्त आह्लाद से भर गया। केवलचन्द जी का व्यावसायिक दायित्व तो बढ़ा, किन्तु घर के कार्यों की देखभाल का भार कुछ कम हुआ। नौज्याबाई, केवलचन्द एव रूपकवर का यह परिवार सुख की घड़ियो का आनद लेने लगा। सास-बहू, पति-पत्नी एव माता-पुत्र के रिश्ते पारस्परिक अगाध प्रेम के प्रतीक बन गए। समय बीतने के साथ सयोग से रूपादेवी गर्भवती हुई। सासू नौज्याबाई को अवरुद्ध वशवृक्ष के पल्लवित पुष्पित होने की आशा से अपार हर्ष हुआ और कई कल्पनाएँ मन मे दौड़ने लगी।

• बोहरा परिवार पर पुन अनभ्र वज्रपात

किसे पता था कि पौत्र-जन्म, वशवृद्धि एव भावी सुख की कल्पनाओ मे लीन नौज्याबाई के परिवार पर अकल्पनीय पहाड़ टूट पड़ेगा। पौत्र-जन्म के दो माह पूर्व ही पुत्र केवलचन्द जी विक्रम सवत् १९६७ के आश्विन माह मे प्लेग की महामारी की चपेट मे आ गए और वे अपनी वृद्धा माता एव तरुणी भार्या को बिलखती छोड़कर परलोक चल बसे।

इस घोर वज्रपात से बोहरा परिवार मर्माहत हो गया। परिवार मे कौन किसे ढाढस बधाये, यही कठिन हो गया। नौज्याबाई पहले से ही परिवार मे अपने पतिदेव और बड़े पुत्र की मृत्यु की दु:खान्तिका से उबर ही नही पायी थी, अब इस त्रासदी से और विचलित हो उठी। पति-परायण रूपादेवी को जीवन के उषाकाल मे ही अपने सौभाग्य सूर्य के अस्त हो जाने के कारण समग्र ससार घोर अधकारपूर्ण लग रहा था। उसका स्वप्निल मधुर जीवन श्मशान

की सी विभीषिका में बदल गया। उन्हे सम्पूर्ण प्रणय, सुख-वैभव और दाम्पत्य का नन्दन-कानन मृग-मरीचिका सा प्रतीत हुआ। कोख मे नवजीवन का अमृत प्रसून पल रहा है, किन्तु सौभाग्य का कल्पवृक्ष धराशायी हो गया। रूपा देवी शोक विह्वल हो उठी। चिन्ताओ से आच्छन्न भविष्य को देखने की उसमे हिम्मत न रही। अनेक दिन उसके भाव शून्यावस्था में बीते। एक दिन गर्भस्थ शिशु के प्रभाव से उनकी चिन्ता ने चिन्तन का मोड़ लिया। वह सोचने लगी- "क्या इस ससार मे एकमात्र मैं ही अभागिनी हूँ?" वह अनुभव करने लगी कि इस महामारी के ताण्डव ने एक नही अनेक घरो को उजाड़ा है, अगणित सुहागिनो के सिन्दूर को धूलिसात् किया है। अनेक माताओं की ममतामयी गोदें सूनी हो गई हैं। कई अबोध नन्हे बालक अनाथ हो गए है। उसे लगा—'यह ससार दु:ख-द्वद्वो से घिरा हुआ है। जिस प्रकार दिन के बाद रात और रात के बाद दिन का क्रम चलता रहता है, उसी प्रकार जन्म-मृत्यु, सयोग-वियोग और सुख-दु:ख का चक्र गतिशील है। यह अवश्यम्भावी क्रम न कभी रुका है और न कभी रुकेगा।' इस प्रकार चिन्तन करते-करते रूपादेवी के हृदय मे विशुद्ध परिणामो की विमल धारा प्रवाहित होने लगी। उन्होंने सोचा रोने, बिलबिलाने, व्यथित होने या विलाप करने से संसार के संयोग-वियोग के क्रम को रोका नही जा सकता। चिन्ता एव विलाप दु:ख को दूर नही करते, अपितु सघर्ष की शक्ति को घटाते हैं।

रूपादेवी ने ससार के इस सत्य को जान लिया कि जीवन अनित्य है, क्षण भगुर है, इसका कोई भरोसा नही है। इस सत्य को जानने के साथ ही उनमे वैराग्य के भाव जागृत हो गए। मन हुआ दीक्षा ले ली जाए। यही सही उपाय है 'न वैराग्यात् पर भाग्यम्'—वैराग्य से बढ़कर कोई सौभाग्य नही। मौसी जी फूलाजी एव भाभीजी (केवलचन्द जी के बड़े भ्राता रामूजी की धर्मपत्नी) ने भी यही मार्ग अपनाया था। वैराग्य की भावना ज्यो-ज्यो दृढ़ होती गई त्यो-त्यो रूपादेवी के दु:ख के घने बादल छंटते गए। उनमे एक हिम्मत आई जीवन को सही मार्ग पर लगाने की। वैराग्य मे बड़ी शक्ति है, किन्तु इस समय, जब दो माह पश्चात् वह माँ बनने वाली है, श्रमणी धर्म को अगीकार नही किया जा सकता। उनका अब प्रथम कर्त्तव्य सन्तति को जन्म देना एव उसका कुछ काल तक पालन-पोषण करना था। सासू नौज्याबाई की अभिलाषा का भी ध्यान रखना था।

प्रसवकाल सन्निकट जानकर पुत्री रूपादेवी को पिता श्री गिरधारी लालजी मुणोत अपने घर ले आये। मुणोत साहब का भवन निमाज ठिकाने के पीपाड़ नगरस्थ कोट के पीछे के भाग मे अवस्थित था। रूपादेवी के यहाँ आने से उनका बाहरी वातावरण भी बदल गया। ससुराल मे सासू नौज्यांबाई को देखकर पति केवलचन्द जी की दारुण स्मृति कोमल चित्त को आच्छादित कर देती थी, तो नौज्यांबाई भी बहू को देखकर पुत्र की स्मृति से शोकाकुल हो उठती थी।

रूपादेवी ने परिस्थितियो को देखकर अब यह मानस बना लिया था कि प्रसवकाल के पश्चात् भी कुछ काल तक शिशु के पालन पोषण हेतु उसका गृहस्थ जीवन मे रहना आवश्यक होगा। मातृ-कर्त्तव्य का निर्वहन करने हेतु रूपादेवी समुचित आहार-विहार का ध्यान रखती हुई बड़ी सावधानी से गर्भस्थ शिशु का सुचारु रूपेण सवर्धन करने लगी। वह अपना अधिकाश समय नमस्कार मत्र के जाप एव धर्म-ध्यान मे व्यतीत करने लगी। इसका गर्भस्थ शिशु पर गहरा प्रभाव पड़ा। प्राचीन काल मे आदर्श माता मदालसा ने अपने पुत्रों को गर्भावस्था मे ही प्रभु भक्ति का पाठ पढ़ाया था। गर्भावस्था के व्यवहार एव शिक्षा का गर्भस्थ शिशु पर अवश्य ही प्रभाव पड़ता है। सुभद्रा के गर्भस्थ बालक अभिमन्यु पर पिता अर्जुन के द्वारा सिखाई गई युद्ध विद्या का प्रभाव इसका स्पष्ट प्रमाण है। यहाँ माता के वैराग्य का प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर एव पुण्यशाली गर्भस्थ शिशु के पूर्व सस्कारो का प्रभाव माता पर फलित हो रहा

था।

• महान् विभूति का जन्म

पति केवलचन्द जी के देहावसान के दो माह पश्चात् रूपादेवी के जीवन मे सूर्य का उदय हुआ।पौष शुक्लाचतुर्दशी विक्रम सवत् १९६७ तदनुसार १३ जनवरी सन् १९११ को दिन मे १ बजकर ४० मिनट पर रूपादेवी को पिता श्री गिरधारीलाल जी मुणोत के कोट के पीछे के गृह मे पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। मुणोत परिवार एव बोहरा परिवार मे नूतन आशा का सचार हुआ। रूपादेवी के नयनो मे भी हर्ष के ऑसू छलक आए एवं दादी नौज्याबाई भी वशवृक्ष की निरन्तरता से पुलकित हो उठी।

यह शिशु विश्व की एक महान् विभूति था। गुणों के अनुरूप ही शिशु का नाम रखा गया 'हस्तिमल्ल'। यह नाम माँ रूपादेवी को गर्भकाल मे आए स्वप्न के आधार पर सुझाया गया था, जो शिशु की दादीमाँ नौज्याबाई एव नाना गिरधारी लाल जी को खूब भाया। स्वप्न मे माँ ने देखा कि एक हाथी उनके मुख मे प्रवेश कर रहा है। माँ का यह स्वप्न बालक के नामकरण का आधार बना और आगे चल कर बालक ने इस नाम को सचमुच सार्थक किया। वह अखिल जगत की एक 'हस्ती' बना। श्वेत गजराज की मस्ती गुरुदेव हस्ती में स्पष्टतः परिलक्षित होती थी। वे केवल 'हस्ती' नाम से ही नही, अपितु हस्ती के पर्यायवाची शब्दो से भी पहचाने गए, यथा 'गजेन्द्र', 'गजमुनि' आदि। (आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा स्वय अपने काव्यो मे 'गजमनि' या 'गजेन्द्र' जैसे शब्दो का प्रयोग करते थे।)

बालक हस्तिमल्ल का जब जन्म हुआ तब निखिल विश्व पर द्वितीय विश्व युद्ध के काले कजरारे बादल मडरा रहे थे। ऐसे समय मानवता की अस्मिता को अक्षुण्ण रखने हेतु १३ जनवरी को आपका जन्म एक और विशेषता लिए हुए था। इस दिन सूर्य कर्क रेखा से मकर रेखा की ओर गमनशील था। मकर संक्रान्ति एक शाश्वत दिवस है। हिन्दी, अग्रेजी सभी पचागो के अनुसार मकर-सक्रान्ति सदैव १४ जनवरी को होती है। इस शाश्वत दिवस की तैयारी से जुड़ा हुआ आपका जन्म शाश्वत लक्ष्य की प्राप्ति का सकेत दे रहा था। तीसरी बात यह कि आपका जन्म चतुर्दशी को हुआ जो तप-त्याग का सकेत देती है। चतुर्दशी धार्मिक दृष्टि से एक पर्व दिवस है तो 'चादणी चौदस रो जायो' कहावत के अनुसार लौकिक दृष्टि से शुक्ला चतुर्दशी को जन्मा बालक पुण्यशालिता का धनी माना जाता है। चौथा तथ्य यह है कि शुक्ला चतुर्दशी के पश्चात् पूर्णिमा का आगमन होता है। यह चन्द्रमा की कला के पूर्ण विकास की पूर्वावस्था है। यह दिवस मेधावी शिशु हस्ती के भावी निर्मल आध्यात्मिक विकास का सकेत कर रहा था। इस तरह विविध आधारो से बालक हस्ती का जन्म न केवल बोहरा कुल के लिए, न केवल पीपाड़ के लिए, न केवल मारवाड़ के लिए अपितु सम्पूर्ण देश, समाज एवं प्राणिजगत् के लिए महत्त्वपूर्ण प्रतीत हो रहा था।

हस्तिमल्ल नाम अनोखा नाम था। यह कोई आकस्मिक सयोग नही, अपितु भावी पूर्वाभास था। 'शक्रस्तव' मे देवेन्द्र ने तीर्थंकर को 'गन्धहस्ती' की उपमा दी है। उत्तराध्ययन सूत्र की टीका मे धवल हस्ती का उल्लेख है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र मे भद्रहाथी को सर्वोत्तम माना है। चतुरगिणी सेना मे हस्ती प्रमुख होता है। बालक हस्ती के चरणो मे 'पद्म' का आकार बना हुआ था, जो सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार प्रबल पराक्रमी एव प्रखर प्रज्ञावान का लक्षण माना जाता है। यह हस्ती अगणित नाभिकीय परमाणु बमो की प्रलयकारी शक्ति को शमित करने वाली अहिंसा की अनन्त ऊर्जा से युक्त महातेजस्वी था।

• कुल का एकमात्र चिराग

वह पथ क्या, पथिक कुशलता क्या,
जिस पथ पर बिखरे शूल न हो।
नाविक की धैर्य कुशलता क्या,
धाराएं यदि प्रतिकूल न हो।

विपदाओ मे ही महानता जन्म लेती है। बालक हस्ती न अपने दादा का मुख देख सके, न ताऊ का और न ही पिता का। दादी नौज्याबाई एव माता रूपादेवी के आहत हृदयो को आह्लाद से भरने के लिए ही मानो हस्ती का जन्म हुआ था। दादी नौज्या एव माता रूपा के लिए अब हस्ती ही एक आशा की किरण थी, वही अपने प्रपितामह के कुल का एक मात्र चिराग था। उसका लालन-पालन दोनों ने बड़े दुलार एव प्यार पूर्वक किया।

केवलचन्द जी बोहरा जब प्लेग की महामारी मे दिवगत हुए तब पीपाड़ के अनेक ऐसे लोग भी काल कवलित हो गए, जिन पर बोहरा परिवार का ऋण था। दूसरी बात जिनके पास इस परिवार का पैसा था उसकी उगाही करने वाला भी कोई न था। नौज्याबाई ज्यो-त्यो कर पुरानी सम्पत्ति के आधार पर घर का खर्च चलाती थी। फिर उन्होने एव रूपादेवी ने घर पर चरखा चलाकर सूत कातना प्रारम्भ किया। इससे परिवार का आत्म-सम्मान एव स्वावलम्बन भी सुरक्षित रहा तथा समय भी आसानी से गुजरने लगा।

• विरक्ता माता रूपादेवी

जननी रूपादेवी के मन मे पुत्र के प्रति वात्सल्य था, तो वैराग्य की भावना भी अटल थी। एक ओर बालक हस्ती को बड़ा होते देख वह मन ही मन प्रसन्न थी तो दूसरी ओर वैराग्य का भाव भी हिलोरे ले रहा था। उसे लगता था कि वह शीघ्र ही सासूजी से अनुमति लेकर श्रमण धर्म मे दीक्षित हो जाएगी। परन्तु यह इतना सहज नही था। नौज्यादेवी कहती थी –"कुल का उजियारा शिशु पढ़ लिखकर योग्य बने तब तुम दीक्षा लेना।" रूपादेवी को इतना धैर्य कहाँ था? उसके सामने दो उदाहरण थे जो वैराग्य की उत्कट भावना के सम्बल बने रहे। एक तो उनकी मौसीजी महासती फूलाजी एव दूसरी उनकी अपनी जेठानी, जिन्होने अपने पति रामूजी के देहान्त के पश्चात् दीक्षा ग्रहण कर ली थी।

रूपादेवी की दीक्षा-भावना अत्यत प्रबल थी। एक बार वह शिशु हस्ती को अपनी दादी के पास छोड़कर नयापुरा के नोहरे मे गई एव वहाँ केश कर्तन कर श्वेत वस्त्र धारण कर लिए। यह नोहरा स्थानक के पास ही था। रूपादेवी पीहर एव ससुराल मे किसी को बताये बिना साध्वी बन जाना चाहती थी, किन्तु वह सफल नही हो सकी। ऐसा सम्भव भी नही था। उन्हे समझाया गया कि इस प्रकार साध्वी नही बना जा सकता। रूपादेवी के पास न रजोहरण था और न ही पात्र, न ही उन्हे साध्वी-मडल का सान्निध्य प्राप्त था। इसके पूर्व भी एक बार रूपादेवी जी ने दीक्षित होने का प्रयास किया। रूपादेवी की मौसी फूलाजी ने जयमल सम्प्रदाय मे दीक्षा ग्रहण की थी। उनका पीपाड़ से सोजत विहार हुआ था। रूपादेवी के मन मे आया कि वे सोजत जाकर महासती जी से दीक्षा की प्रार्थना करे। महासती जी ने रूपादेवी को समझाया कि इस प्रकार घर वालो की अनुमति के बिना दीक्षा नही दी जा सकती है।

ये घटनाए इस तथ्य की ओर सकेत करती है कि बालक हस्ती की माँ रूपादेवी पर वैराग्य का रग खूब गहरा चढ़ा हुआ था। वह श्रमणी बनने के लिए पुत्र के प्रति ममता का भी परित्याग करने के लिए तत्पर थी। रूपादेवी का ससार के प्रति कोई आकर्षण नही था। पति केवलचन्द जी का स्वर्गवास हुआ तभी से उनके मन मे ससार त्याग कर साध्वी बनने की तरगे हिलोरे ले रही थी। सोजतरोड़ जाना एव वेष परिवर्तन करना उनके वैराग्य की उत्ताल तरगो का ही परिणाम था।

परिवारजनो के द्वारा आग्रह एव प्रेमपूर्वक यह बोध कराया गया कि इस समय पुत्र हस्ती के पालन-पोषण एव शिक्षण का कर्त्तव्य मुख्य है, अत उसका निर्वाह किया जाना आवश्यक है। उसके बाद दीक्षा की बात सोची जा सकती है। रूपादेवी आखिर तो माँ थी ही। परिवार जनो के प्रेमपूर्वक समझाने से उसका पुत्र के प्रति वात्सल्य उमड़ आया और उसने कुछ समय पुत्र की परवरिश मे बिताने का निश्चय किया।

• पौशाल की शिक्षा

बालक हस्ती अब लगभग पॉच वर्ष का हो गया था। उसे पौशाल (चटशाला) मे पढ़ने भेजा गया। गाँवो में पढ़ने के लिए जो शालाए चलती थी, उन्हे पौशाल कहा जाता था। पौशालो मे लिपि, लेखन एव गणित का ज्ञान कराया जाता था। हस्तिमल्ल ने पौशाल मे शीघ्र ही वर्णमाला, बारहखड़ी के अक्षर लिखना, पढ़ना एव बोलना सीख लिया। गिनती सीखने के बाद पहाड़े, जोड़-बाकी के हिसाब भी सीखे। हस्तिमल्ल की बुद्धि कुशाग्र थी, स्मरणशक्ति तेज थी एव पौशाल जाने मे नियमितता थी। वह शीघ्र ही अपने गुरुजनों का प्रिय छात्र बन गया। पौशाल मे उसने पुस्तक पढ़ना, गुणा-भाग करना एव महाजनी के हिसाब करना भी सीख लिया। पौशालो मे उस समय सद्आचरण से सम्बद्ध दोहे आदि भी कठस्थ कराये जाते थे, जिन्हे याद करने मे हस्ती अग्रणी रहा।

पौशाल की महाजनी एव व्यावहारिक ज्ञान के साथ दादी नौज्यॉ बाई एव माता रूपा ने बालक को धार्मिक एव चारित्रिक शिक्षण भी दिया। वे हस्ती को चारित्रिक अभ्युदय की बाते बताया करती थी। धार्मिक ज्ञान सीखने के लिए बालक हस्ती हलवाई बाजार के उपाश्रय मे श्री धूलचन्द जी के पास जाता था। उसने धूलचन्द जी से लोगस्स तक सामायिक का पाठ सीखा। बाल्यावस्था मे हस्ती को व्रत-प्रत्याख्यान, सामायिक-प्रतिक्रमण और नमस्कार मत्र के जाप की महत्ता का बोध होने लगा।

• बाल-लीलाएँ

हस्तिमल्ल का बचपन प्राय नाना एव दादी के घर मे ही बीता। उन्हे जिस प्रकार दादी नौज्याबाई एव माता रूपादेवी का वात्सल्य प्राप्त था उसी प्रकार नाना गिरधारी लाल जी मुणोत का भी पूरा वात्सल्य प्राप्त था। एक बार शीत ऋतु मे जब बालक हस्ती अपने ननिहाल मे था तब उसके खेसले (चद्दर) का पल्ला आग मे गिर गया और वह आग मे धू-धू कर जलने लगा तभी नाना गिरधारीलाल जी मुणोत दौड़ कर आये एव बालक हस्ती को बचाया।

बालक हस्ती अन्य बच्चो के समान खेलकूद मे भी भाग लेते थे। वे बाड़े मे झूला झूलते थे एव प्रात.काल मक्खन और ठण्डी रोटी का नाश्ता करते थे। कुत्ते के पिल्लो को खिलाने मे उन्हे बहुत आनद आता था। पिल्ले जैसे प्राणियो से उन्हे बड़ा प्यार था। वे पिल्लो को दूध-रोटी या अन्य खाद्य वस्तुएं बड़े प्रेम से खिलाते थे।

एक बार पड़ौस के एक सूने घर मे कुत्ते के पिल्लो के चीखने-कराहने की ध्वनि सुनाई दी। हस्ती से यह क्रन्दन सहा नही गया। वे दौड़ कर शब्दभेदी बाण की तरह घटना-स्थल पर पहुचे तो देखा कि उनके बाल-साथी पिल्लो को सता रहे है। कोई उन पर पत्थर मार रहा है तो कोई उठा कर उन्हे जोर से नीचे पटक रहा है। कोई उनकी पूंछ पकड़ कर खीच रहा है तो कोई उनके लात मार रहा है। पिल्ले इन हरकतों को सहन नही कर पाने के कारण रुदन-क्रन्दन कर रहे थे। बाल साथी इन पिल्लो को तग कर आनन्दित हो रहे थे। बालक हस्ती यह देखकर करुणित हुआ और दौड़ कर एक पिल्ले को उठाया, उसे छाती से लगाया एव अपने साथियो से बोला-"जैसे हमारे मे जीव है, उसी प्रकार इन पिल्लो में भी जीव है, हमे जिस प्रकार कोई सताये या मारे-पीटे तो हमें दुःख या पीड़ा होती है उसी प्रकार इन पिल्लो को सताये जाने पर इन्हे भी पीड़ा का अनुभव होता है। इन पिल्लों को सताना छोड़ दो। देखो यह पिल्ला जो मेरी गोद में है, कितना खुश, शान्त एव निर्भय हो गया है। इन पिल्लों को भी अब निर्भय होने दो।" बालक हस्ती के द्वारा इस प्रकार के वचन कहे जाने पर सबने पिल्लो को सताना छोड़ दिया। इसके पश्चात् बालक हस्ती के कहने पर सब साथी उन पिल्लों को दूध-रोटी खिलाने में जुट गए।

बाल्यावस्था मे भी हस्ती के हृदय की करुणाशीलता का यह अनुपम उदाहरण है। इस घटना के समय बालक हस्ती लगभग सात वर्ष के थे। इस अवस्था में करुणा का यह भाव तथा अपने साथियो पर उनका ऐसा प्रभाव उनके विलक्षण व्यक्तित्व को प्रकट करता है। इस घटना से बालक हस्ती मे कुशल नेतृत्व के गुण का भी बोध होता है।

बालक हस्ती बचपन में पारस्परिक कलह को दूर करने मे भी प्रवीण रहे। इस सम्बंध मे एक घटना उपलब्ध हुई है। गांव के बहुत से बालक नीम के पेड़ की छांव मे कबड्डी का खेल खेल रहे थे। यह खेल भारतीय सास्कृतिक परम्परा का एक नमूना है। इसमे प्राणायाम से लेकर शरीर के सभी अवयवो का अच्छा व्यायाम हो जाता है। कबड्डी खेलते-खेलते बच्चो मे विवाद हो गया। हुआ यह कि एक दल का खिलाड़ी दूसरे दल के पाले मे कबड्डी-कबड्डी बोलता हुआ गया तब लौटते समय मध्य रेखा पर आने से पूर्व उसका श्वास टूट गया। इसका लाभ उठाने के लिए उस दल के खिलाड़ियो ने उसे छू लिया। किन्तु यह खिलाड़ी पुन कबड्डी-कबड्डी बोलता हुआ अपने पाले मे आ गया। इस खिलाड़ी का यह दावा था कि इसका श्वास नही टूटा, जबकि दूसरे दल के खिलाड़ी यह कहते हुए अड़ गए कि इसका श्वास टूट गया था। यह विवाद चल ही रहा था, तभी वहा उपस्थित बालक हस्तिमल्ल पास मे पड़ी निम्बोलियाँ उठाकर बोला—"ये निम्बोलिया खाने पर कैसी लगती हैं बताओ।" एक साथी ने कहा-'निम्बोली कोई खायी जाती है, इससे तो मुह कड़वा हो जाता है।' हस्ती ने अपनी प्रतिभा से सहज न्याय करते हुए कहा—

"जैसे निम्बोली खाने से जीभ कड़वी हो जाती है, वैसे ही झूठ बोलने पर मुँह कड़वा ही होगा और पाप भी लगेगा।" हस्ती की यह बात सुनकर सभी गम्भीर हो गए। झूठ बोलने वाला वह खिलाड़ी बालक आगे आया और बोला-'हस्ती मैने झूठ बोला, मेरा श्वास टूट गया था, किन्तु मै पुन कबड्डी-कबड्डी बोलता हुआ अपने पाले मे आ गया।' इस प्रकार हस्ती भैया के सच्चे एव सहज-न्याय की प्रतिभा से सभी बालक अचम्भित थे।

बाल्यावस्था मे पीपाड़ से फलौदी (मेड़ता रोड़) के मेले मे गए। वहा शान्तिनाथ के मन्दिर मे ठहरे। रेल यात्रा भी एक बार की। सम्भवत. पीपाड़ रोड से मेड़तारोड़ की यात्रा ट्रेन से की। वे एक विवाह समारोह मे बैलगाड़ी से रणसीगॉव गए। ननिहाल मे जाते रहते थे। कभी फूफाजी श्री चुन्नीलालजी मुथा एव भुआजी जब अमरावती से आते तो वे वहाँ भी जाया करते थे।

[illegible]

जब हस्तिमल्ल ७ से ८ वर्ष की उम्र के थे तब अपने एक बाल-सखा तेजमल बोहरा के साथ बल परीक्षा करने लगे। बल परीक्षा मे कधे पर हाथ रखकर कधा झुकाना था। बालको मे यह जाच हुआ करती थी कि घी किसने अधिक खाया? बालक हस्ती एव तेजमल मे यही जाच हो रही थी। इस खेल मे जब हस्तिमल्ल ने तेजमल के कधे पर हाथ रखकर उसे झुकाया तो वह अचानक गिर गया और हस्तीमल की जीत मे सब साथी उसकी जयकार करने लगे और उसे उन्होने अपनी भुजाओ पर उठा लिया। किन्तु इन साथियो के कंधे पर बैठा हस्ती का मन जमीन पर गिरे अपने साथी तेजमल की ओर था। उसे जीतने की प्रसन्नता नही थी, बल्कि मित्र के गिरने का खेद हुआ। उन्होने सोचा यह कैसा खेल, जिसमे खिन्नता हो। इससे बालक हस्तिमल्ल की खेल से अरुचि हो गई, और इस प्रकार के खेल मे उनका कोई मिठास नही रहा। **चरितनायक ने स्वयं अपने संस्मरणों का दैनन्दिनी में उल्लेख किया है कि तेजमल भाई के गिरने से उन्हें "खेल में मिठास नहीं रहा।"** बल-प्रयोग एव साथी

के गिरने से हुई विरक्ति से अरिहन्त अरिष्टनेमि एव वासुदेव श्रीकृष्ण के बीच हुए बल-परीक्षण की घटना जीवन्त हो उठती है। इस घटना से चरितनायक की विचारशैली भी परिलक्षित होती है, कि दूसरो को गिराकर जीतने मे सच्ची जीत नही है।

बालक हस्तिमल्ल का बचपन कठिन परिस्थितियो मे अवश्य बीता-किन्तु अपनी समझ, प्रतिभा, करुणा आदि विभिन्न गुणों के कारण वह अपने बाल सखाओ मे बड़े आदर की दृष्टि से देखा गया। सात-आठ वर्ष की उम्र कोई अधिक नही होती। उसमे नेतृत्व, न्याय एव समझदारी की छाप उस समय भी दिखाई दे रही थी।

• परिवार के प्रति दायित्व बोध

परिवार की विषम आर्थिक परिस्थितियो से धैर्यपूर्वक जूझने एव उसका समाधान खोजने का अदम्य उत्साह भी बालक हस्ती मे विद्यमान था। जब दादी नौज्याबाई एव माता रूपादेवी चरखे पर सूत की पूनी कातती तो हस्तिमल्ल को यह अच्छा नही लगता था। वह स्वय श्रम करके घर का खर्च चलाना चाहता था। दादी एवं माता के द्वारा किये गए श्रम के सस्कार बालक हस्ती को श्रम करने के लिए प्रेरित करते थे। अत विपदाए साहस भी देती हैं और धैर्य भी। हस्तिमल्ल मे इस बालवय मे जो धैर्य एव साहस था वह उसके भावी व्यक्तित्व का निर्माण कर रहा था। यह काल एव भाग्य का चक्र है जिसमे कभी अखूट सम्पदाए होती है तो कभी विपदाओ का पहाड़ टूट पड़ता है। हस्तिमल्ल के दादा दानमल जी बोहरा एव पिता केवलचन्द जी के पास जो बोहरगत का व्यवसाय था वह उनके दिवगत होने के साथ ही डूब गया। मणिहारी की उधारी भी कौन किससे मागता, कौन उगाहता? इस कारण देने मे समर्थ लोगो ने भी उधारी नही लौटाई। नौज्याबाई एव रूपादेवी पर विकट परिस्थिति आ पड़ी। अचल सम्पत्तियों से दैनिक खर्च नही चलाया जाता। इसलिए उसकी व्यवस्था मे दादीजी एव माताजी का सहयोग करने हेतु बालक हस्ती भी उद्यत हो गया। स्वाभिमानी इस परिवार पर हस्ती के नाना गिरधारीलाल जी मुणोत की भी पूरी देखरेख थी। वे अपने स्तर पर समस्या का निराकरण करने का प्रयास करते रहते थे।

• सन्त-सती का प्रथम सुयोग

विक्रम सवत् १९७३ मे रूपादेवी एव पुत्र हस्ती को एक सुयोग प्राप्त हुआ। जैनाचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री बड़े धनकुवर जी का चातुर्मास पीपाड़ मे हुआ। रूपादेवी के लिए यह स्वर्णिम सयोग था। उसने इसका भरपूर लाभ उठाया। वह नित्य प्रति प्रवचन मे जाती एव बालक हस्ती को भी साथ ले जाती। बालक भी ध्यान से महासतीजी के उपदेश का श्रवण करता था। इससे रूपादेवी की वैराग्य भावना तो पुष्ट हुई ही, बालक हस्ती पर भी अच्छे सस्कारो का बीजारोपण हुआ। महासतीजी का मा- बेटे पर पूर्ण आत्मीय भाव था। उनके मन मे विश्वास हो गया था कि भविष्य मे ये दोनो श्रमण पथ पर आरूढ होंगे।

इसी वर्ष आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा सवत् १९७३ का जोधपुर चातुर्मास पूर्ण कर विहार करते हुए पीपाड़ पधारे। यहाँ पर अस्वस्थता के कारण कुछ दिन विराजे। रूपादेवी ने इस समय भी प्रवचन-श्रवण एव सत्सग का लाभ उठाया। बालक हस्ती भी माता के साथ जाता एव कुछ न कुछ सत् सस्कार अवश्य ग्रहण करता। किसे पता था कि रूपादेवी एव बालक हस्ती आगे चलकर आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. की शिष्यता अगीकार कर आत्मकल्याण का पथ अपनायेगे और मुनि हस्ती लाखो लोगो का प्रतिबोधक बन जायेगा।

• ननिहाल पर कहर

विक्रम सवत् १९७४ के कार्तिक माह मे हस्तिमल्ल के नाना गिरधारीलालजी मुणोत के परिवार पर कराल काल का भीषण प्रहार हुआ। मारवाड़ मे उस समय प्लेग का प्रचण्ड प्रकोप आया। प्लेग के इस प्रकोप ने अगणित सधवाओ की माग का सिन्दूर पौंछ डाला, सहस्रो माताओ की गोद सूनी कर दी। अनेक पुरुष अपनी अर्द्धांगिनियो को अपने हाथो चिता की आग में जला, स्वय जीवन भर चिन्ता की आग मे जलने की स्थिति मे पहुंच गए। अबोध शिशु अपने माता-पिता के प्यार से वचित हो अनाथ हो गए। परिवार के परिवार धराशायी हो गए। मृत्युभय से कुछ लोग सुदूर ग्राम-नगरो मे पलायन कर गए। जो रहे, उन पर सदैव खतरा मडराता रहा। ऐसा भी हुआ जो मृतक की अर्थी उठा कर जा रहे थे, वे श्मशान से लौट कर नही आए। गाव मे चिताओ की आग ठडी नही हो पाती थी। पीपाड़ भी इससे अछूता नही रहा। मुणोत परिवार पर इस प्लेग का घातक आक्रमण हुआ। बालक हस्ती जो लगभग सात वर्ष के थे, ने अपने आदरणीय नाना गिरधारीलाल जी मुणोत को काल कलवित होते देखा। यही नही उस समय उनकी नानी श्रीमती चन्द्राबाई, मामाजी, मामीजी, मौसी, बड़ी नानीजी (रूपा मॉ की दादी जी) भी उस भीषण प्लेग के द्वारा अपनी चपेट मे लील लिए गए। रूपा देवी सबकी बड़ी तत्परता से सेवा कर रही थी, किन्तु आयुष्य पूर्ण हो जाने पर कौन किसे बचा सकता है।

मॉ रूपा के जीवन पर यह दूसरा बड़ा प्रहार था, जिसने पीहर का सम्पूर्ण सम्बल एक साथ छीन लिया। कोई भी तो नही बचा। परिवार के ११ सदस्य एक साथ प्रयाण कर गए। अब पीहर मे कोई आसू बहाने वाला भी न था। रूपा को जीवन की क्षण-भगुरता एव नश्वरता के ताण्डव नृत्य ने रूपादेवी के अन्तर्मानस को झकझोर दिया। वैराग्य पर दृढ़ विश्वास हो गया।

• सत्य का बोध

हस्तिमल्ल पर भी इस घटना ने सत्य की गहरी छाप छोड़ी। जब वह गर्भ मे था तब पिता केवलचन्द जी के देहावसान की घटना ने अवचेतन मन पर देह की अनित्यता का सस्कार छोड़ा था, अब वह सस्कार अपने नाना एव उनके परिवार पर हुई मृत्यु-विभीषिका से दृढ़तर हो गया। उनमे जीवन एव मृत्यु के गूढ़ सत्य को जानने के प्रति तीव्र जिज्ञासा उत्पन्न हो गई। ससार की असारता एव पार्थिव शरीर की विनाशशीलता का उन्हे बोध हो गया। 'जातस्य हि ध्रुव मृत्यु' जन्म के साथ मृत्यु का सम्बध अटल है, वे इस सत्य को जान गए। वे सोचने लगे कि इस ससार मे कोई रहने वाला नही, सबको जाना है । एक दिन उन्हे भी इसका सामना करना होगा। इस प्रकार उन्होने जीवन की सार्थकता को खोजना प्रारम्भ कर दिया था। उन्हे यह भी समझ मे आ गया कि उनकी माता क्यो वैराग्योन्मुखी है? क्यो वे गृहस्थ जीवन का परित्याग कर साध्वी बनना चाहती है?

कितना सम्पन्न था उनका ननिहाल! पीपाड़ मे कैसा वर्चस्व था! कहॉं गया वह सब? पूरे परिवार मे उत्साह एव आह्लाद था, किन्तु देखते ही देखते सब उजड़ गया। नानाजी का वात्सल्य अब मात्र कथा-शेष रह गया था। पहले हस्तिमल्ल वहाँ दौड़ कर जाता था, अब कहॉं जावे? क्यो जावे? किसके पास जावे?

जो दृष्टि या ज्ञान सुदीर्घ साधना से प्राप्त नही होता, अनेक शास्त्रो के अभ्यास एव मथन से प्राप्त नही होता वह ज्ञान बालक हस्ती को ननिहाल की इस घटना से हो गया। सम्भव है बालक हस्ती के वैराग्य में इस घटना ने बहुत बड़ा कार्य किया हो।

गिरधारीलालजी मुणोत पीपाड़ मे निमाज ठिकाने का कार्य देखते थे। उनके खेती का धधा भी था। 'हाली' से खेती कराते थे। खूब सम्पत्ति थी। किन्तु प्लेग के प्रलय ने सर्वनाश कर दिया। घर एवं सम्पत्ति पर राज्य ने कब्जा कर लिया। रूपा देवी एव बालक हस्ती को राज्य ने उसमें से कुछ भी नही दिया। सत्य द्रष्टा रूपा देवी एव उनके लाड़ले सुपुत्र को इसकी चाह भी नही थी –'विरक्तस्य तृणं जगत्'।

• दादी भी दिवगत

प्लेग के प्रलय के कुछ समय पश्चात् बालक हस्ती की प्यारी दादी नौज्याबाई अचानक अस्वस्थ हो गईं। वह निरन्तर असह्य आघातो और अपनी अवस्था के कारण क्षीणकाय हो चुकी थी। दादी की अस्वस्थता से माता रूपा देवी एव बालक हस्ती को चिन्ता हुई। उन्होने वैद्य को बुलाकर दिखाया, समुचित उपचार भी कराया, किन्तु दादीजी के स्वास्थ्य पर कोई अनुकूल प्रभाव न पड़ा। 'अपि धन्वन्तरिर्वैद्य, किं करोति गतायुषि'– आयु बीत जाने पर धन्वन्तरि वैद्य भी कुछ नही कर पाते। बहू रूपा सासू जी को नित्य प्रति बृहदालोयणा, प्रतिक्रमण, भजन आदि सुनाने लगी। पौत्र हस्ती भी दादीजी के पास बैठ कर उन्हे अच्छी-अच्छी बातें बताता। दादीजी को कभी अपने हाथ से दवा देता, दूध पिलाता। पोशाल के पश्चात् वह अपना अधिकाश समय दादीजी के पास बिताता एव उन्हे मोह एव ममता से दूर रहकर वीतराग प्रभु के ध्यान और नमस्कार मत्र के जाप मे लीन रहने की बात कहता। नौज्याबाई अपने पौत्र एव बहू द्वारा की गई सेवा-सुश्रूषा से प्रसन्न होती। चित्त को समाधि मे रखने की बाते, स्तवन एव भजन भी उन्हे अच्छे लगते।

जब एक दिन नौज्याबाई की तबीयत अधिक बिगड़ गई, श्वास लेने मे भी कठिनाई होने लगी, तो पड़ौसियो एव समाज के गणमान्य लोगो से परामर्श कर रूपादेवी ने नौज्याबाई की भावनानुसार सथारा करा दिया। संथारा पहले सागारी कराया एव फिर शरीर की स्थिति देखकर जीवनपर्यन्त के लिए करा दिया गया। आस-पड़ौस के एव समाज के अनेक लोग नौज्याबाई के दर्शन करने आए। बालक हस्ती समाधिस्थ दादी को एकटक देखता तथा उसे लगता कि मृत्यु की यह सर्वश्रेष्ठ कला है। बालक हस्ती ने इस बात को अन्तर्हृदय से समझ लिया था कि मृत्यु सुनिश्चित है, वह प्लेग जैसे बाह्य प्रकोप के कारण भी हो सकती है तो वृद्धावस्था आदि अन्य कारणो से भी हो सकती है। अत जब मृत्यु सन्निकट हो तो सथारापूर्वक समाधिस्थ होकर मृत्यु का आलिङ्गन करना ही उचित है। लगता है सथारे का यह सस्कार बालक के अन्तर्मन मे गहराई से बैठ गया हो और जो आगे चलकर पुष्ट होता हुआ निमाज मे फलीभूत हुआ हो।

दादी नौज्याबाई ने संथारे के दूसरे दिन नमस्कार मत्र का मन्द स्वर मे उच्चारण करते हुए हिचकिया ली एव बड़ी शान्तमुद्रा में देह का त्याग कर दिया। परिवार मे अब मात्र दो प्राणी ही रह गए थे। तेजस्वी, शान्त एव विवेकशील बालक हस्ती और उनकी श्रद्धेया एव प्रेरणाप्रदात्री माता। माता एव पुत्र दोनो जीवन के इस शाश्वत सत्य से पूर्णत परिचित हो गये थे कि यह जीवन लीला कभी भी समाप्त हो सकती है, इसका विनश्वर होना सत्य है। इसलिए दोनों का लक्ष्य तप-त्याग एव सयम के पथ को अपनाने की ओर केन्द्रित हो गया था, तथापि अभी दीक्षा-ग्रहण करने का समय नही आया था। क्योकि परिवार मे हस्ती की देखभाल के लिए माता का रहना आवश्यक था।

माता ने बोहरा परिवार के अन्य सदस्यो पर आश्रित होने की अपेक्षा स्वावलम्बन को महत्त्व दिया। इसलिए उन्होंने चरखा चलाकर भी आजीविका की व्यवस्था का क्रम जारी रखा। बालक हस्ती भी श्रम मे भागीदार बनना

चाहता था। अत. घूम-घूमकर मणिहारी का सामान बेचा। माता को यह प्रक्रिया नही जची। वस्तुतः माता रूपा देवी चाहती थी कि उनका लाडला हस्ती व्यापार मे प्रवृत्त न होकर अपना अध्ययन जारी रखे तथा शेष समय माता के साथ धर्म-क्रियाओ मे व्यतीत करे। अत उसने सुझाव दिया कि पिछले आठ वर्षों से मणिहारी की विपुल सामग्री सुरक्षित रखी है, क्यो न इसे किसी व्यापारी को बुलाकर अन्य दो तीन ईमानदार एव अनुभवी व्यापारियो की मध्यस्थता मे बेच दिया जाए। हस्ती ने ऐसा ही किया। वह पौशाल से लौटते समय दुकानदारो को बुला लाया और पिता केवलचन्द जी के देहावसान के पश्चात् से बन्द दुकान का मणिहारी का सारा सामान बेच दिया गया। इससे पुराने सामान का उपयोग भी हो गया तथा जीवन यापन भी सुकर हो गया।

• सन्त-सतियो का पुनः सुयोग

प्रचण्ड विभीषिकाओ के पश्चात् पीपाड़ मे सन्तो एव साध्वियो का पदार्पण हुआ, जिससे यहाँ का वातावरण धर्ममय हो गया। महासती तीजाजी महाराज को रुग्णता के कारण दीर्घावधि तक पीपाड़ मे ही विराजना पड़ा। उनके पुनीत सान्निध्य मे रूपा देवी ज्ञानार्जन, पुनरावृत्ति एव तप-साधना मे आगे बढ़ती रही।

इसी समय विसवत् १९७५ (सन् १९१८) मे आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज की सम्प्रदाय के सन्त स्वामीजी श्री भोजराज जी महाराज, श्री अमरचन्द जी महाराज एव श्री सागरमल जी महाराज ठाणा ३ पीपाड़ पधारे और अस्वस्थ महासती श्री तीजाजी को दर्शन दिए। इन तीनो तपःपूत श्रमणो के दर्शन एव प्रवचन-श्रवण से रूपा देवी ने चिरकाल से सजोये हुए वैराग्य भाव को और सवारा। इन तीनो सन्तो को जब यह विदित हुआ कि रूपादेवी ससार से विरक्त हो दीक्षा ग्रहण करने के लिए लालायित है, किन्तु अपने पुत्र की अल्पावस्था के कारण अभी तक दीक्षित नही हो सकी है तो उन्होने भी रूपा देवी को उद्बोधन देते हुए उसकी वैराग्य भावना को पुष्ट किया।

कुछ दिनो पश्चात् ही रूपादेवी के प्रबल पुण्य के उदय से आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री पानकवर जी, महासती श्री बड़े धनकवर जी आदि ठाणा विभिन्न क्षेत्रो के भव्यो को जिनवाणी के उपदेशामृत का पान कराते हुए पीपाड़ नगरी मे पधारे। रूपादेवी ने अपने पुत्र के साथ महासतियो के दर्शन किये। उनके उपदेशामृत का पान किया। महासती जी ने रूपादेवी को पृथक् से भी जीवन के रहस्य एव श्रमणी धर्म के महत्त्व का रसास्वादन कराया। बालक हस्ती को भी इस बार महासती जी के दर्शन एव उपदेश श्रवण से ऐसी आनन्दानुभूति हुई कि वह प्रतिदिन प्रात.काल सतियो के दर्शन करने के लिए नियमित रूप से उपाश्रय पहुँच जाता। पौशाल से लौटते ही भोजन से निवृत्त हो स्थानक मे जाकर अपना अधिकाश समय महासतियो की सेवा मे बैठकर धार्मिक शिक्षण प्राप्त करने एव जीवन को उच्च बनाने वाली शिक्षाए ग्रहण करने मे ही व्यतीत करने लगा।

बालक हस्ती पर जन्मकाल से ही सुसस्कारो की गहरी छाप स्पष्टत· दृष्टिगोचर होती थी। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' लोकोक्ति उन पर पूर्णत चरितार्थ हो रही थी। यद्यपि उन पर वैराग्य के सस्कारो की छाप रत्नगर्भा माता के अध्यात्म-चिन्तन एव उत्कट वैराग्य के कारण गर्भकाल मे ही अकित हो गई थी, तथापि वह समय-समय पर वृद्धिगत होती गई। महासती जी के द्वारा प्रदत्त शिक्षाओ से उन सस्कारो को बल मिला। फिर इस समय हस्तिमल्ल आठ वर्ष का हो चला था, अत· उसमे पूर्वापेक्षा चिन्तन की शक्ति भी बढ़ गई थी।

महासती बड़े धनकवर जी का पीपाड़ से विहार हो जाने के पश्चात् रूपादेवी अपने घर पर ही अधिकाश समय ज्ञानाभ्यास और धर्माराधन मे व्यतीत करने लगी। एक दिन महासती बड़े धनकवर जी महाराज से सीखे हुए कुछ पाठ बालक ने अपनी माता को सुनाये। उन पाठो को पुत्र के मुख से यथावत् सुनकर रूपा देवी बड़ी प्रमुदित

हुई।

• माता की भावाभिव्यक्ति

अपने अन्तर्मन की भावना को पुत्र के समक्ष प्रकट करने का उपयुक्त अवसर समझ कर रूपादेवी ने बालक हस्ती से कहा :– "वत्स ! यह ससार दुःखो का मूल है। जीवन का कोई भरोसा नही है। देखते-देखते ही तुम्हारे दादाजी, बड़े पिताजी एव पिताजी चले गए। मेरे पीहर का भरा-पूरा विशाल परिवार समाप्त हो गया। वहाँ पर मेरे ऑसू पोछने वाला भी कोई नही रहा। यही नही , अब तुम्हारा लाड़ लडाने वाली तुम्हारी प्रिय दादीजी भी तुम्हे और मुझे असहाय छोड़कर चली गई। इस नाशवान ससार मे एकमात्र धर्म ही सहारा है। पुत्र ! ज्ञानियो ने कहा है कि जीव अकेला ही आता है, अकेला ही जाता है। उसके साथ उसके किए हुए अच्छे सुकृत तथा बुरे कर्म के अतिरिक्त और कोई नही जाता। ससार के ये सब नाते-रिश्ते माता-पिता, पुत्र-बधु आदि सम्बध स्वप्न के समान है, मिथ्या है, छलावा मात्र हैं। यदि माता-पिता, पिता-पुत्र पति-पत्नी आदि के नाते-रिश्ते वस्तुत सच्चे होते तो कोई किसी को छोड़कर नही जाता। पर वास्तविक स्थिति यह है कि सब अपने-अपने सम्बंधियो को, अपने-अपने आत्मीयजनो को छोड़कर एक न एक दिन परलोक को चले जाते है। मै तुम्हारी अनुमति चाहती हूँ। स्पष्ट शब्दो मे कहो, क्या तुम मुझे दीक्षित होने की अनुमति सहर्ष दे दोगे ?" "सन्तो का आसरा (आश्रय) ही सच्चा आसरा है, यहाँ और कोई अपना नही । वत्स ! तुम्हारे पिता के देहावसान के पश्चात् से मुझे यह सम्पूर्ण ससार विषवत् त्याज्य लग रहा है। उस घोर दुखद विपत्ति के समय ही इस असार ससार से मुझे विरक्ति हो गई थी। तुम्हारे जन्म के पश्चात् कुछ समय तक तुम्हारा लालन-पालन करना भी अनिवार्य रूपेण आवश्यक था। इस कारण मै चाहते हुए भी इस असार ससार से छुटकारा दिलाने वाली भागवती दीक्षा नही ले सकी। जब तुम अढाई वर्ष के थे उस समय यह समझ कर कि तुम्हारे दादीजी और नाना-नानी तुम्हारा पालन-पोषण कर लेगे, मैंने स्वत ही मुडित होकर साध्वियो जैसे श्वेत वस्त्र भी धारण कर लिए थे, किन्तु मेरे माता-पिता और तुम्हारे दादीजी के अनुरोध पर अनिच्छा होते हुए भी मुझे घर पर ही रहना पड़ा।

एक बार मै श्रमणी धर्म मे दीक्षित होने के लिए पीपाड़ से सोजत रोड़ भी चली गई, किन्तु सासूजी की आज्ञा न होने के कारण मुझे दीक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त नही हुआ। आज इस ससार मे तुम्हारी और मेरी देखभाल करने वाला कोई नही है। पुत्र ! मै दुखो से भरे इस असार ससार को अग्नि की ज्वालाओ से धधकती हुई भट्टी के समान समझती हूँ। इसीलिए तेरे पिता के परलोक गमन के समय से ही मै इस ससार के सभी दुखो से छुटकारा दिलाकर अक्षय शाश्वत सुख प्रदान करने वाली चारित्र धर्म की दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूँ। तुम्हारे पिता को स्वर्ग सिधारे हुए आठ वर्ष होने आये है। मै एक मात्र तुम्हारे कारण ही आठ वर्षो से अभी तक घर मे हूँ। अब तुम बड़े होने आये हो, समझदार हो। अपना भला-बुरा सोच सकते हो। इसलिए मैं अब अपने आत्म-कल्याण के लिए ससार छोड़कर दीक्षा लेना चाहती हूँ।"

• पुत्र भी विरक्ति का पथिक

बालक हस्ती ने वयस्क व्यक्ति की भाति गभीर स्वर मे कहा–"माँ ! तुमने अपने अन्तर्मन की बात आज मेरे सम्मुख प्रकट की है , परन्तु यह तुम्हारे अन्तर्मन की ही बात नही, मेरा भी मन इसी प्रकार हिलोरें ले रहा है। माँ ! जबसे मैंने होश सम्भाला है तभी से तुम्हे साधारण स्त्रियो से भिन्न पाया है। मैंने प्राय तुम्हे उदास, विचारमग्न और

गभीर मुख मुद्रा मे ही देखा है। मैंने अपनी बाल बुद्धि के अनुसार तुम्हारी इस उदासीन वृत्ति पर, प्रायः सभी स्त्रियों से भिन्न प्रकृति पर, कई बार विचार किया है और इन पर विचार करते-करते मेरी स्वय की वृत्ति और प्रवृत्ति भी लगभग तुम्हारे जैसी ही बन गई है। माँ! तुम्हारे इस उदासीन जीवन का तुम्हारी चिन्तन धारा का, तुम्हारी विरक्ति और अनुभूतियो का, मुझ पर भी प्रभाव पड़ा है। मैंने अपने साथियो को, उनके पिता से मिले प्यार-दुलार को जब-जब भी देखा, तब-तब मेरे मानस मे भी ससार की दशा के सम्बध मे तरह-तरह की विचार तरगे उठी हैं। तुम्हारे ही कृपा प्रसाद से मैने भी अपनी अल्पबुद्धि के अनुसार इस ससार की भयावह दु खद स्थिति को थोड़ा-थोड़ा समझा है। माँ! तुम्हारे नियमित धर्माराधन, चिन्तन-मनन और जाप आदि को देख कर न मालूम कब से मेरी यह धारणा बन चुकी है कि जो तुम कह रही हो वह सही है। वास्तव मे ससार असार है, यहाँ कोई रहने वाला नही। जो आया है एक दिन सबको जाना है। ननिहाल मे मैंने भी अपनी आँखो से इस ससार की नश्वरता को देखा है। मेरा भी मन ससार मे रहने का नही है। तुम अपना मन दीक्षा का बना रही हो, तो मै भी तुम्हारे साथ ही दीक्षित होना चाहता हूँ। ससार मे रहकर क्या करना है। सन्तो की सत्सग ही मेरे मन को भाती है। उनके साथ ही मै अपना जीवन बिताना चाहता हूँ तथा ज्ञान-ध्यान सीखकर जीवन को सार्थक करना चाहता हूँ। माँ! ससार के प्रपच मे फसे हुए अनेक लोगो को मै दु खी होते हुए देखता हूँ। दूसरी ओर देखता हूँ कि साधु-साध्वी सब प्रकार के प्रपचो से दूर है। इनके मुख पर सदा विराजमान शान्ति और सतोष के साम्राज्य को देखकर मेरा मन भी होता है कि है कि मै भी ऐसी शान्ति को प्राप्त करूँ। माँ! मै इस बार महासतीजी धनकवर जी महाराज के निकट सम्पर्क मे आया, उनके शान्त एव पवित्र जीवन से, उनके उपदेशो से मैंने इस बार जो सीखा है, उससे अद्भुत आनद का अनुभव किया है, वह सब मैं तुम्हारे सामने शब्दो द्वारा प्रकट नही कर सकता। मैंने तुम्हारे साथ चौधरी जी की पोल मे जाकर महान् धर्माचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज के भी दर्शन किये थे, उनके उपदेश भी सुने थे। उनकी शान्त, दान्त, सौम्य सम्मोहक मूर्ति आज भी मुझे अपनी ओर आकर्षित कर रही है। उनकी मधुर वाणी आज भी मेरे कानो मे अनेक बार गूजती रहती है। माँ! उन पूज्यश्री के प्रथम दर्शन के समय से ही मेरा मन जीवन भर उनके चरणो की सुखद शीतल छाया मे रहने को करता है। उन्हे पहली बार देखने पर भी मुझे ऐसा लगा जैसे मैंने उन्हे अनेक बार देखा है।"

पुत्र की बाते सुनकर रूपादेवी को मन ही मन विश्वास हो चला कि उसका होनहार हस्ती भी त्यागमार्ग का पथिक बनने का दृढ़ सकल्प कर चुका है। इससे आश्चर्य के साथ-साथ उनके आनद एव हर्ष का भी पारावार न रहा। रूपादेवी के नेत्रो से हर्षाश्रुओ की अविरल धाराए प्रवाहित हो उठी। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानो सुदीर्घावधि से दु खदावाग्नि दग्ध सतप्त यशस्वी बोहरा कुल के गृहागण का समस्त ताप-सताप हरने के लिए अमृततोया गगा और यमुना प्रवाहित हो उठी हो। रूपादेवी का मुखमडल असीम आनद की अलौकिक आभा से दमक उठा। अपने करतल युगल से पुत्र के मस्तक एव कपोलो को शनैशनै सहलाती हुई माता रूपादेवी ने हर्षावरुद्ध कण्ठस्वर मे केवल इतना ही कहा—"वाह वत्स! तुम्हारे विचार सुनकर एव तुम्हारा निश्चय जानकर मै धन्य-धन्य हूँ। मुझे तुम्हारी माता होने पर गर्व है।"

तदनन्तर रूपादेवी अपने धर्माराधन के समय मे उत्तरोत्तर अभिवृद्धि करती रही। श्री हस्ती भी पाठशाला से लौटने के पश्चात् अपनी माता के पास बैठ कर पौशाल मे पढ़े गए विषय के पाठो और महासतीजी बड़े धनकवर जी आदि साध्वियो से प्राप्त धार्मिक ज्ञान का पुनरावर्तन करते रहे।

• शिक्षागुरु का प्रभाव

बालक हस्ती के जीवन-निर्माण मे बाबाजी श्री हरखचन्दजी म.सा. का बड़ा योगदान रहा। उन्ही की सत्प्रेरणा एव सम्बल से माता रूपादेवी एव पुत्र हस्ती एक दिन प्रव्रज्या अगीकार करने की अपनी अभिलाषा को पूर्ण करने मे समर्थ हुए। बाबाजी श्री हरखचन्द जी म. को जब यह ज्ञात हुआ कि पीपाड़ मे एक माता एव पुत्र विरक्त है तथा दोनो सयम-मार्ग का अनुसरण करना चाहते है तो इससे उन्हे अतीव प्रमोद हुआ। पीपाड़ तो वे विचरण करते हुए आ ही रहे थे, किन्तु श्रावकजनों से इस सूचना को सुनकर विरक्तात्माओ के प्रति भी उनके मन मे एक प्रमोद का भाव जागृत हुआ। जब स्वामीजी श्री हरखचन्द जी म.सा. पीपाड़ पधारे तो अन्य श्रावक-श्राविकाओ के साथ रूपादेवी भी सन्त-दर्शन के लिए स्थानक मे आई। पुत्र हस्तीमल भी साथ मे आया। सन्तों के दर्शन कर हस्ती को उनमे आत्मीयता का भाव परिलक्षित हुआ। स्वामी श्री हरखचन्द जी म ने भी माता रूपा के उत्कृष्ट वैराग्य और हस्ती की तीक्ष्णबुद्धि एव धर्मानुरागिता के सम्बंध मे पहले ही सुन रखा था। वे उसकी प्रतिभा एव वैराग्य का परीक्षण करना चाहते थे। उन्होने बालक हस्ती से प्रश्न किया—"वत्स ! तुम्हारा नाम क्या है ?"

"गुरुदेव ! मुझे हस्तिमल्ल कहते है।"

"वत्स ! तुमने क्या-क्या सीखा है ?"

"मैने पौशाल (पाठशाला) मे पढ़ना-लिखना, महाजनी गणित और प्रारम्भिक धार्मिक-ज्ञान प्राप्त किया है। घर पर माताजी से भी सीखता रहता हूँ।"

"तुम्हारी माता तो अब शीघ्र दीक्षित हो जाना चाहती है। माता के दीक्षित हो जाने पर तुम क्या करोगे, क्या इस बात पर तुमने विचार किया है ?"

"भगवन् ! मॉ दीक्षा ग्रहण कर रही है तो मै भी उनका अनुसरण करूँगा। मेरा मन भी उनके साथ ही दीक्षा लेने का है।"

माता और पुत्र दोनो के साथ सम्पन्न बातचीत से स्वामीजी को पूर्ण विश्वास हो गया कि वे दोनो मुक्तिपथ पर आरूढ होने के लिए कटिबद्ध है।

स्वामीजी से बातचीत के पश्चात् रूपादेवी अपने पुत्र के साथ घर लौट आयी। खाना बनाकर थाली पुत्र के समक्ष रखी, दूसरी रोटी परोसते समय माता ने देखा कि थाली ज्यो की त्यो रखी है और हस्ती विचारमग्न है।

मॉ ने पूछा—"खाना नही खा रहे हो ? किस विचार मे खोये हो ?

विचारतन्मयता से चौंक कर हस्ती ने कहा- "मॉ मुझे तो भोजन का ध्यान ही नही रहा। मै तो स्वामीजी महाराज के साथ हुई बातचीत के बारे मे सोचता रहा।

"मॉ, तुमने देखा नही ? मुझ पर उनका कितना अगाध स्नेह था।" भोजन कर लेने के उपरान्त हस्ती ने कहा-"मॉ यदि तुम कहो तो मै स्वामी जी के पास जाकर उनसे कुछ सीखू।" मॉ ने अनुज्ञा प्रदान करते हुए कहा- "जरूर जाओ।"

बालक हस्ती सीधा स्वामी जी की सेवा में पहुँचा और बड़ी देर तक स्वामी जी के पास ज्ञानाभ्यास करने के साथ-साथ अनेक नई बाते सीखता रहा। उसका मन क्षणभर के लिए भी स्वामीजी से विलग होना नही चाह रहा था।

वातावरण में मधुर मुस्कान से अमृत सा घोलते हुए स्वामीजी ने बालक से कहा-"वत्स ! जब भी तुम्हारी

इच्छा हो, तुम दया पाला करो। जब तक हम यहाँ है, जितना सीख सकते हो, उतना सीख लो। बालक हस्ती ने भी सुदृढ़ स्वर में तत्काल निवेदन किया-"गुरुदेव एक बार चरण शरण ग्रहण कर लेने के पश्चात्, छोड़ना मुझे मेरी माँ ने नही सिखाया है। अब मैं कभी आपका साथ छोड़ने वाला नही हूँ। अब तो जहाँ आप जायेंगे, मैं भी साथ चलूँगा।"

स्वामीजी विचार करने लगे, सच ही कहा है कि माता सहस्रो अध्यापको से भी श्रेष्ठ अध्यापिका है। माता द्वारा डाली गई सस्कारो की नीव पर यदि किसी महान् आध्यात्मिक कुशल शिल्पी का सुयोग मिल जाए तो निश्चय ही यह बालक आगे चल कर शासन को दिपाने वाला हो सकता है। आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज वस्तुत इस युग के एक महान् आध्यात्मिक शिल्पी है। उन्हे इस विलक्षण बालक के सम्बध मे सूचित किया जाए तो सभी प्रकार से श्रेयस्कर होगा।

बालक हस्ती को स्वामीजी के रूप मे अभीष्ट आध्यात्मिक ज्ञान का अक्षय भडार मिल गया। श्रद्धालु श्रावक-श्राविका वर्ग इन दोनो को एक साथ देखकर आश्चर्याभिभूत थे। कहाँ तो एक आठ वर्ष का बालक और कहाँ साठ वर्ष के तपोपूत योगी। उम्र मे कितना अन्तर, तथापि परस्पर एक दूसरे के कितने पास। परस्पर एक दूसरे से लौ लगते ही भौतिक और आध्यात्मिक दूरिया कितनी सन्निकट हो आती है। स्वामीजी को यह देखकर सतोष था कि सभी प्रकार के शुभ लक्षणो और सुसस्कारो से सम्पन्न कुशाग्रबुद्धि बालक पूर्ण निष्ठा एव लगन के साथ आवश्यक ज्ञान के अर्जन मे प्रगति कर रहा है।

- शोभा गुरु की सेवा मे

इसी दौरान माता और पुत्र दोनो के जीवन में पूर्णिमा के पूर्ण चन्द्र के समान आध्यात्मिक आलोक की शुभ छटा प्रकट कर देने वाले आचार्य श्री शोभाचन्द जी महाराज साहब बड़लू से विहार कर ठाणा ३ से पीपाड़ नगर मे पधारे एव गाढमल जी चौधरी की पोल मे विराजे। स्वामीजी ने आचार्य श्री से निवेदन किया-"यही है वह बालक। इसने इन थोड़े से दिनो मे ही अनेक बोल-सग्रह कठस्थ करने के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा मे भी सतोषप्रद प्रगति की है।' आचार्य श्री बालक की प्रगति के समाचार सुनकर प्रमुदित हुए।

बालक के लक्षण, चेष्टाएँ, आँखो की चमक, विनय एव वाणी की माधुरी से आचार्य श्री को यह समझने मे देर नही लगी कि यह बालक आगे चलकर जिनशासन का महान् सेवक बनेगा।

स्वामी श्री हरखचन्द जी मसा ने गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी मसा. के चरणारविन्दो मे निवेदन करते हुए इगित किया कि बालक हस्ती एव विरक्ता रूपादेवी मुमुक्षु हैं एव उनके निरन्तर अध्ययन की महती आवश्यकता है, जो पीपाड़ मे सम्भव नही है। आचार्यप्रवर ने श्रावको को सकेत किया कि सुयोग्य बालक हस्ती के अध्ययन की समुचित व्यवस्था हो सके, ऐसा चिन्तन अपेक्षित है।

- अजमेर में अध्ययन-व्यवस्था

श्रद्धालु एव विवेकशील श्रावको ने शिक्षा की दृष्टि से प्रसिद्ध अजमेर नगर को उपयुक्त समझा। अजमेर मे श्रेष्ठिवर श्री छगनमल जी मुणोत रिया वालो ने दोनो विरक्तात्माओ के शिक्षण एव ज्ञानाराधन की व्यवस्था करते हुए उन्हे मोती कटला स्थित अपने विशाल भवन मे परिवार के सदस्यो की भाति अपने साथ रखा। यहाँ पर प. श्रीरामचन्द्र जी को तेजस्वी बालक हस्ती को सस्कृत एव हिन्दी का शिक्षण देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पडित जी

भी सुयोग्य शिष्य को प्राप्त कर प्रसन्न थे एवं उत्साहपूर्वक नित्य नव ज्ञानाराधन कराते थे। वे बालक की विलक्षण प्रतिभा, विनयशीलता एव स्मरणशक्ति से बड़े प्रभावित हुए। रुचिपूर्वक अध्ययन करने के कारण बालक हस्ती को भी अल्पकाल मे ही महती उपलब्धि हुई। उन्होंने पीपाड़ मे स्वामी श्री हरखचन्द जी म.सा. से एक मत्र पाया था, जिसका उन्होने जीवनभर उपयोग किया-

खण निकम्मो रहणो नही, करणो आतम काम।
भणणो गुणणो सीखणो, रमणो ज्ञान आराम॥

पण्डित जी से अध्ययन करते समय विक्रम सवत् १९७७ (सन् १९२०) मे स्वामी जी श्री हरखचन्द म.सा. के अजमेर चातुर्मास के सुअवसर पर उन्हें स्वामी जी का यथेष्ट मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ। यहाँ पर शिक्षार्थी हस्ती ने सन्त-चरणो मे रहकर रात्रि मे चौविहार का त्याग प्रारम्भ कर दिया तथा आठवाँ वर्ष लगते ही कच्चे पानी के सेवन का भी त्याग कर दिया।

पडित रामचन्द्र जी शिक्षार्थी श्री हस्ती को लघुसिद्धान्त कौमुदी, शब्दरूपावली, धातुरूपावली और हिन्दी भाषा की शिक्षा देते, साथ ही अमरकोष का अध्ययन भी जारी था। प्रात, मध्याह्न और सन्ध्यावेला में स्वामी जी महाराज ने श्री हस्ती को स्तोकसग्रहो के अतिरिक्त दशवैकालिक आदि सूत्र पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। रात्रि के समय भी स्वामी जी महाराज रोचक एव शिक्षाप्रद कथा-कहानियो के माध्यम से धार्मिक सुसस्कारो को सबल और सुदृढ़ करने का प्रयास करते। धीरे-धीरे श्री हस्ती मे कविता, कथा आदि लेखन की प्रतिभा प्रस्फुटित होने लगी। आपने अनेक स्तोको तथा स्तोत्रो को कठस्थ कर ज्ञानवर्धन किया। वैराग्य काल मे ही आपने प्रतिक्रमण, २५ बोल, नवतत्त्व, लघुदण्डक, ९८ बोल का बासठिया, १०० बोल का बासठिया, समकित के ६७ बोल, समिति गुप्ति का थोकड़ा, आहारपद, सज्ञापद, इन्द्रिय पद, श्वासोच्छ्वास, रूपी-अरूपी, पॉच देव, ६ भाव, गति-आगति, अवधिपद, धर्माधर्मी, सुत्ताजागरा, पच्चक्खाणा-पच्चक्खाणी २० बोल, २३ मोक्ष जाने के बोल, १३ बोल-भवि द्रव्य आदि, साधु के सुख आदि थोकड़े कण्ठस्थ कर लिए थे। अजमेर के सरावगी मौहल्ले की शाला मे बालक हस्ती ने गणित आदि का व्यावहारिक शिक्षण भी लिया। अजमेर मे साड परिवार के आग्रह पर अभयमल जी गम्भीरमलजी साड के यहाँ केसरगज मे भी आप कुछ दिन रहे।

■

प्रव्रज्या-पथ के पथिक

वैरागी हस्ती के अध्ययन एव महाव्रत पालन की योग्यता मे निरन्तर सवर्धन हो रहा था। माता रूपा जी प्रव्रज्या अगीकार करने के लिए आतुर हो रही थी, तो विरक्त हस्ती भी प्रव्रजित होने के लिए उत्सुक था। चातुर्मासार्थ पीपाड़ विराजित आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा की सेवा मे दीक्षा प्रदान करने हेतु विनति की गई। किन्तु जैन धर्म मे विरक्तात्मा को श्रमण-दीक्षा तभी दी जाती है जब वह अपने माता-पिता या निकटस्थ सम्बधियो का आज्ञा-पत्र प्रस्तुत करे।

बालक हस्ती बोहरा कुल का एक मात्र चिराग था, अत निकट परिवारजनो ने आज्ञा प्रदान करने से मना कर दिया एव कहा कि समस्त बोहरा कुल-वश की भावी पीढ़ी की आशा इसी हस्ती पर टिकी है, परिवार मे यही एक मात्र पुत्र सन्तति है। बार-बार समझाने पर भी परिवार के लोग राजी नही हुए। अन्ततोगत्वा माँ रूपा ने आगे बढ़कर वीरता का परिचय देते हुए गुरुजनो से निवेदन किया कि बालक हस्ती को आज्ञा प्रदान करने के लिए तत्पर मै स्वय हूँ, इसका मुझे अधिकार भी है। आप बालक हस्ती को सहर्ष दीक्षित कीजिए। इस प्रकार बालक हस्ती की प्रव्रज्या के लिए तो रूपादेवी ने अनुमति प्रदान कर दी, किन्तु स्वय रूपादेवी की दीक्षा के लिए निकटस्थ परिजनो का आज्ञा-पत्र आवश्यक था। माता रूपादेवी को इसके लिए काफी सघर्ष करना पड़ा, किन्तु माता-पुत्र के प्रबल वैराग्यभाव के कारण एव सिरहमलजी दूगड़, लक्ष्मीचन्दजी कवाड तथा रीया के रूपचन्दजी गुदेचा के सत्प्रयत्न एव समझाइश पर देवर रूपचन्द जी ने लिखित अनुमति प्रदान कर दी। इससे न केवल विरक्त आत्माओ मे, अपितु समस्त श्रावक समाज मे हर्ष की लहर छा गई। दीक्षा की अनुमति होते ही माता रूपादेवी ने पीपाड़ मे पतासीबाई (सूरजकरण) के यहाँ रखे भाड-बर्तन आदि का विक्रय कर पीपाड़ का लेन-देन साफ किया, घर भी सम्हलाया। इससे यह प्रतिफलित होता है कि माता रूपादेवी एव बालक हस्ती ससार के कर्ज से मुक्त होकर कर्मों के कर्ज से मुक्त होने के पथ पर आगे बढना चाहते थे।

आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म सा का सवत् १९७७ का चातुर्मास सकारण (दाहज्वर के कारण) पीपाड़ मे हुआ। चातुर्मास समाप्ति पर अजमेर के सेठ मगनमलजी का सदेश प्राप्त हुआ कि गोचरी पधारते समय गिरजाने से स्वामीजी श्री हरकचन्द जी म सा को गहरी चोट लगी है। समाचार मिलते ही आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म सा ब्यावर होते हुए अजमेर पधारे।

यहाँ आने पर आचार्यश्री ने सघ के आग्रह पर गुरुवार माघ शुक्ला द्वितीया विक्रम सवत् १९७७ (१० फरवरी १९२१) का दिन दीक्षा हेतु निश्चित कर दिया। विरक्त हस्ती एव उनकी माता रूपा के साथ ही वैरागी श्री चौथमल जी एव विरक्ता बहन अमृतकवर जी की भी दीक्षा होना तय हो गया। दीक्षा का स्थल अजमेर मे ढड्ढा जी का बाग निर्धारित हुआ।

दीक्षा चेतना का ऊर्ध्वगामी रूपान्तरण है जिसमे आत्मा अपने कषाय-कलुषो का प्रक्षालन करने के लिए सन्नद्ध होती है। **दीक्षा के लिए आगमों में 'प्रव्रज्या' शब्द का प्रयोग हुआ है जो इस तथ्य को इगित करत है कि एक बार गृहस्थ जीवन का त्याग कर देने के पश्चात् उसमें पुनः लौटना नही होता। प्रकृष्ट**

रूप से व्रज्या अर्थात गमन ही प्रव्रज्या है। यह मुक्ति का मार्ग है। अत इस सुअवसर पर सभी का प्रमुदित होना स्वाभाविक है। प्रव्रज्या अगीकार करने वाले की जीवनशैली पूर्णत बदल जाती है। पच महाव्रत, पाच समिति और तीन गुप्तियो का पालन करते हुए रत्नत्रय के समाराधनपूर्वक आत्म-प्रक्षालन की यह साधना सबके लिए सुकर नही होती, किन्तु जैन धर्म के अनुसार मुक्ति के पथिक को ससार से आसक्ति त्याग कर सयम के पथ पर वीरता के साथ बढ़ना होता है।

अजमेर जैसे नगर मे चार मुमुक्षुओ का एक साथ प्रव्रज्या पथ पर कदम रखना एक उत्साह एव आह्लाद का अवसर था, किन्तु समाज मे कुछ दोषदर्शी एवं नकारात्मक चिन्तन वाले लोग भी होते हैं, अत बाजार मे इस प्रकार के कुछ व्यक्ति यह कहते सुनाई पड़े कि दश वर्ष की लघुवय मे दीक्षा देना उचित नही है। नकारात्मक चिन्तन जल्दी तूल पकड़ता है, इसलिए यह विचार परचेबाजी के रूप मे भी सामने आया कि हस्तीमल्ल को दीक्षा न दी जावे, क्योकि वह अभी मात्र दश वर्ष का बालक है। किन्तु आचार्य श्री शोभाचन्द जी म सा. के विद्वत्तापूर्ण एव तेजस्वी चिन्तन के समक्ष बाल-दीक्षा के विरोधी लोग नतमस्तक हो गये। आचार्य प्रवर द्वारा जैन धर्म एव भारतीय सस्कृति के उन अनेक महापुरुषो के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किये गये जिन्होने बालवय मे दीक्षित होकर अनेक कीर्तिमान स्थापित किये। समाज के प्रतिष्ठित सेठ मगनमल जी, दूगड़ जी, साड जी, मोतीलालजी कासवा, दुधेड़ियाजी, रूपचन्दजी ढड्ढा, बोहराजी आदि अग्रगण्य श्रावको ने भी इसमे गहरी रुचि ली एव दीक्षा का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ।

जैन समाज मे यह प्रश्न अभी भी बार-बार उठता है कि बालवय मे दीक्षा देना उचित है अथवा नही? इस सम्बध मे यह कहा जा सकता है कि लघुवय मे भी यदि कोई मुमुक्षु साध्वाचार का पालन करने मे समर्थ हो तथा ज्ञानदर्शन का आराधन करने मे तत्पर हो तो उसे दीक्षा अवश्य दी जानी चाहिए। यह कहावत कि 'पूत के लक्षण पालने मे ही नजर आ जाते है' इस सम्बध मे मानदड बन सकती है। इतिहास पुराण साक्षी है कि व्यास पुत्र शुकदेव जन्म ग्रहण करते ही अध्यात्म पथ पर आरूढ़ होकर वन की ओर चल पड़े थे। भक्त शिरोमणि ध्रुव पाच वर्ष की वय मे ही भक्ति के बल पर भगवद् दर्शन कर चुके थे। जैन परम्परा मे आर्य वज्र को जन्मते ही जातिस्मरण ज्ञान एव वैराग्य हो गया और शिशु अवस्था मे ही साधना पथ के पथिक बन गये थे। अतिमुक्त कुमार भी बालवय मे ही प्रव्रज्या ग्रहण कर भगवान महावीर के शिष्य बने थे। आचार्य हेमचन्द्र बचपन मे दीक्षित होकर कलिकाल सर्वज्ञ के रूप मे विख्यात हुए। यशस्वी रत्नवश परम्परा तो बाल ब्रह्मचारी आचार्यो की परम्परा रही है। पूज्य श्री गुमानचन्दजी म सा एव पूज्य श्री हम्मीरमलजी म सा ने मात्र १० वर्ष की वय मे ही दीक्षा अगीकार कर जिनशासन का उद्योत किया। सस्कृत साहित्य के महाकवि बाण भट्ट कहते हैं—"अयमेव ते काल उपदेशस्य विषयानास्वादितरसस्य' अर्थात् जब तक विषय भोगो का आस्वादन नही किया तब तक ही उपदेश का प्रभाव सुकर होता है। विषय भोगो के आस्वादन के पश्चात् प्रव्रज्या अगीकार करना और उसका निर्दोषता पूर्वक दृढता से पालन करना अतिदुष्कर है।

दूसरी बात यह है कि जीवन का प्रारम्भिक काल तेज और शक्ति का ऐसा पुज होता है जो ज्ञानाभ्यास के लिए तो उत्तम अवसर प्रदान करता ही है साथ ही जीवन-निर्माण के लिए भी योग्य सस्कारो का सृजन करता है।

वैरागी हस्ती १० वर्ष १९ दिन के थे तथापि उनमे साधना के प्रति निष्ठा, विचारो के प्रति दृढ़ता और ज्ञानाराधन के प्रति तत्परता तथा समर्पण इस बात के द्योतक थे कि सयम की साधना पर बढ़कर वे निश्चित ही आत्मकल्याण के साथ जगत् के कल्याण में भी भास्कर की भाति देदीप्यमान होगे।

दीक्षा की वह प्रतीक्षित ऐतिहासिक घड़ी माघ शुक्ला द्वितीया वि स १९७७ गुरुवार तदनुसार १० फरवरी सन् १९२१ उपस्थित हो ही गई। दीक्षा का वह समारोह अद्‌भुत था। अजमेर मे वर्षों से ऐसा उत्सव नही हुआ था। सम्पूर्ण अजमेर दूर-दूर से आए हुए श्रावक-श्राविकाओ, बाल-वृद्धो के आगमन से उल्लसित हो रहा था। बड़ा ठाट था। मोती कटले मे समवसरण की सी शोभा थी। सूर्योदय से पूर्व ही मोती कटला के प्रागण मे और दरगाह-पथ पर विशाल जनमेदिनी एकत्रित होने लगी। यहा वैरागी और वैरागिनियो का अभिनदन किया जा रहा था, विविध वाद्ययत्रो की सुमधुर ध्वनिया समूचे वातावरण को गुजायमान कर रही थीं। यहाँ से ही दीक्षार्थियो की महाभिनिष्क्रमण यात्रा प्रारम्भ होकर दीक्षास्थल ढड्ढा जी के बाग की ओर प्रस्थान करने वाली थी। इस यात्रा का दृश्य देखते ही बनता था। दीक्षार्थियो के दर्शन हेतु जन-समूह सागर की उत्ताल तरगो की भाति उमड़ रहा था। चारो मुमुक्षुओ के बैठने के लिए एक सुन्दर बग्गी सजी हुई थी। विरक्तो को सुन्दर वेश एव आभूषणो से सजाया गया था। लोग श्रद्धा से उन्हे नमन कर कठे पहना रहे थे, रुपया मुँह मे लेकर लौटाने को कह रहे थे।

निश्चित समय पर मुमुक्षु हस्तिमल्ल, चौथमल, रूपादेवी और अमृत कवर बग्गी मे आरूढ़ हुए, तो ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप मूर्त हो उठे हो। इतिहास मे ऐसे विरले ही उदाहरण है जब जननी और जात (माँ-बेटा) एक साथ मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर हुए हो। दस वर्षीय हस्ती के मुख पर बालसुलभ सारल्य भी था और मुनियो जैसा गाभीर्य भी दमक रहा था। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो इस पकिल विश्व मे जैसे सौम्यभाव का नव उत्पल खिला हो स्वर्णकमल जैसा। जयघोषो के साथ महाभिनिष्क्रमण यात्रा प्रारम्भ हुई। सबसे आगे जैन ध्वज, पश्चात् विविध वादको के समूह, उनके अनन्तर स्वर्णरजत के आभूषणो से अलकृत अश्व और पीछे बग्गी थी। बग्गी के चारो कोणो मे सुसज्जित दीक्षार्थी मानो चारो दिशाओ मे यह सन्देश प्रसारित कर रहे थे कि वैराग्य से बढ़कर आत्मा का कोई बधु नही है। 'न् वैराग्यात् परो बधु।' अपनी दिनचर्या मे सत्ता, सम्पर्क और साधनो के पीछे भागने वाली जनमेदिनी आज इन विरक्तात्माओ का अनुसरण करती नही थकती थी। तिजोरियो की अखूट सम्पदा के स्वामी भी आज वैरागियो के दृष्टिपात के लिए लालायित थे। सभी का अन्तःकरण पुकार रहा था, ये धन्य है जो जीवन निर्माण के सही पथ पर अग्रसर हो रहे है। शोभायात्रा के नगाड़े सभी का ध्यान आकर्षित कर रहे थे। किसी की नज़र दीक्षार्थियो के सिर पर धारण किये गये मखमली जरी युक्त लाल छत्रो पर जा रही थी तो कोई सुहागिनो द्वारा सेवित दीक्षार्थिनियो के अभिभावको को धन्य-धन्य मानकर उनका भी जयजयकार कर रहे थे। अपार श्रावक समूह के जयघोषो तथा अलकृत नारी-समूह के मगल गीतो से महाभिनिष्क्रमण यात्रा की शोभा द्विगुणित हो रही थी। वैरागियो के दर्शनार्थ पथ के दोनो छोर, भवनो के गवाक्ष, छतो पर कगूरे, हवेलियो के झरोखे, नर-नारियो, बच्चों, युवक-युवतियो से ठसाठस भरे थे। महाभिनिष्क्रमण यात्रा मथर गति से ज्यो-ज्यो आगे बढ़ रही थी त्यो-त्यो पथ के दोनो ओर खड़े विशाल जनसमूह भी उसमे सम्मिलित होते जा रहे थे।

इस प्रकार चलती हुई महाभिनिष्क्रमण यात्रा के पुष्कर मार्ग पर पहुचते-पहुचते तो जनसमूह का ओर छोर ही नजर नही आ रहा था। जहा तक दृष्टि पहुचती थी वहाँ तक जनमेदिनी ही जनमेदिनी दृष्टिगोचर हो रही थी। इससे पूर्व दीक्षा के अवसर पर नगर मे इतना विराट् जनसमूह कभी नही उमड़ा था। अजमेरवासी भी अपने को गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे। ढड्ढाजी के बाग मे स्थित विशाल मैदान मे पहुचते ही शोभायात्रा विशाल धर्मसभा मे परिवर्तित हो गई।

आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा., ब्यावर से पधारे आचार्य श्री मन्नालाल जी म.सा., जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा., स्थविर मुनि श्री मोखमचन्द जी म.सा आदि श्रमण श्रेष्ठ अपनी अपनी सन्त-मडली के साथ दीक्षा-स्थल पर

वटवृक्ष के नीचे सुशोभित हो रहे थे। रत्नवश के सन्तो मे आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. के अतिरिक्त स्वामी जी श्री हरखचन्दजी म.सा., श्री लाभचन्दजी म.सा. श्री सागरमल जी म.सा. , श्री लालचन्दजी म.सा. पाट पर विराजमान थे। बाबाजी श्री सुजानमलजी म.सा., श्री भोजराजजी म.सा. एव अमरचन्दजी म. सा. नागौर के श्रावकों मे विशेष धर्मध्यान एव तपस्या होने तथा समय की अल्पता के कारण नही पधार सके थे। सन्तो के समीप ही भूमि पर महासती श्री छोगाजी, बड़े राधाजी, पानकवर, धन्नाजी, इन्द्रकवरजी, केसरकवरजी की शिष्या राधाजी, भीमकंवरजी की शिष्या दीपकवर जी आदि ठाणा १९ का सतीमडल भी विराजित था। अनेक श्रावक श्राविकाए सामायिक का धवल वेश धारण कर मच के सम्मुख अपना ध्यान केन्द्रित कर मन ही मन साधु-जीवन को धन्य-धन्य कह रहे थे। वे चिन्तन कर रहे थे कि हम तो एक मुहूर्त या कुछ काल के लिए ही सामायिक मे रहते है, किन्तु वे धन्य है जो जीवन भर के लिए तीन करण एव तीन योगो से सावद्य प्रवृत्ति का त्याग कर सामायिक अगीकार करते है। कुछ ऐसे भी लोग थे जो स्वयं को सयम मार्ग पर आरूढ होने मे असमर्थ जानकर उसी प्रकार अपुण्यशाली मान रहे थे जैसे श्रीकृष्ण ने अपने को दीक्षित नही होने के कारण अधन्य एव अकृतपुण्य समझा था। "अह ण अधण्णे अकयपुण्णे... णो सचाएमि अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अतिए जाव पव्वइत्तए।"(—अतगडदसासूत्र, वर्ग ५, अध्ययन १) सामायिक वालो के पीछे जन सैलाब को शान्त कर बिठाया जा रहा था, तथापि वह मैदान मे समा नही रहा था। अत वृक्ष की डालियो एव गाड़ियो की छतो पर खड़े होकर भी इस समारोह का आनद लेने वाले कम नही थे।

चारो मुमुक्षु सासारिक बग्गी से उतरकर मोक्ष की बग्गी मे आरूढ रत्नत्रयाराधक आचार्यों, सन्तो एव सतीमडल के चरणो मे पहुचकर सविधि वन्दन करने लगे। तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार वन्दन करने के पश्चात् मागलिक पाठ का श्रवण कर वे वेश परिवर्तन एव मुडन के लिए बने कक्षो की ओर गए। चारो मे अदम्य उत्साह झलक रहा था। सासारिक अलकृत वेशो को सदा के लिए त्याग कर वे जब मच की ओर बढ़े तो मानो संदेश दे रहे थे "...सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा" (उत्तराध्ययन १३१६) अर्थात् ये समस्त अलकार एव विविध वेशो का आकर्षण हेय है। उनके द्वारा धारित श्वेत वर्ण के वेश मन को निर्मल बनाने की प्रेरणा कर रहे थे। श्वेतवर्ण निर्मलता एव शान्ति का प्रतीक है। मुख पर बधी मुखवस्त्रिका निर्दोष भाषण एव मौन सधारण का सकेत कर रही थी। एक हाथ मे धारित रजोहरण न केवल जीवरक्षा का प्रतीक दृग्गोचर हो रहा था, अपितु वह मन से राग-द्वेष की रज को दूर करने की प्रेरणा कर रहा था। दूसरे हाथ मे पात्रो की झोली अकिञ्चन साधक बनकर अभिमान को विगलित करने का सदेश दे रही थी। अब वे ऐसे साधना मार्ग पर आरूढ होने के लिए उद्यत थे, जिसमे यावज्जीवन कचन एव कामिनी का पूर्ण त्याग होता है। वे न पादत्राण धारण कर सकते है, न किसी वाहन मे सवारी कर सकते है, न ही स्नान एव विभूषा का वरण कर सकते है। उनका तो एक मात्र लक्ष्य अपने को साधकर सदा के लिए मुक्ति का वरण करना होता है। शीत,उष्ण, भूख-प्यास आदि बावीस परीषहो को सहन करते हुए मान-अपमान, सुख-दु ख, लाभ-अलाभ आदि मे समभाव ही उनकी साधना का प्रथम चरण होता है। उत्तराध्ययन सूत्र मे कहा गया है-

लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा।
समो निंदापसंसासु, तहा माणावमाणओ॥ -उत्तरा. १९.९१

साधु विषम परिस्थितियो मे भी समभाव मे जीता है। यही उसका प्रथम चारित्र 'सामायिक' है। निर्दोष भिक्षावृत्ति ही उसके भौतिक शरीर का सम्बल है, वह घर-घर जाकर सयम की यात्रा के लिए आहारादि की भिक्षा लाता है। इसमे भी गवेषणा के ४२ नियमो से बंधा होता है। सयम-यात्रा हेतु शरीर के निर्वाह के लिए गोचरी लेकर

ये सन्त समाज को कई गुनी अधिक लाभकारी अक्षुण्ण शान्ति की राह दिखाते हैं। इनके श्रमणत्व की तुलना में आजीविकाधारियो का श्रम नगण्य है।

श्रमणत्व अगीकार करने हेतु प्रस्तुत इस चतुष्टयी मे प्रव्रज्यापथिक हस्ती सर्वाधिक आकर्षण के केन्द्र थे। वे ऐसे सुशोभित हो रहे थे जैसे सूर्य को लिए पूर्व दिशा जगत् को प्रकाशित करने चली हो। जनमेदिनी की ऑखे तब ठहर सी गईं जब उन दीक्षार्थियो मे बाल वैरागी हस्ती अपनी तेजस्वी अनुपम छटा बिखेरते हुए नजर आए। खेलने-कूदने की उम्र मे भी सागरवत् गभीर, अल्पवय मे गहन चिन्तनशील, छोटे कद मे भी चौड़े चमकते ललाट के धनी, कोमलकदमो वाले पर दृढ़ सकल्पी बाल हस्ती की अद्वितीय अध्यात्म मस्ती सभी का मन मोह रही थी। चारो मुमुक्षुओ ने परिजनो एव उपस्थित सकल सघ से क्षमा याचना करते हुए दीक्षा हेतु अनुमति मागी। परिजन जहाँ भारी मन से, पर अपने आपको सौभाग्यशाली समझते हुए अपने प्रिय जनो को गुरु चरणो मे सदा सर्वदा के लिए समर्पित होने हेतु अनुमति प्रदान कर त्याग के इस महायज्ञ मे श्रद्धा व समर्पण का अर्घ्यदान कर रहे थे, वही उपस्थित सकल जन-जन के साथ ही उनके रोम-रोम से अणु-अणु से यही भावना यही आशीर्वाद निसृत हो रहा था– "नाणेण दसणेण य चरित्तेण तहव य खतीए मुत्तीए वड्ढमाणो भवाहि य" (उत्तराध्ययन सूत्र २२.२६) आप मुमुक्षु ज्ञान-दर्शन-चारित्र आराधक उत्कट सयमधनी आचार्य श्री शोभा के मुखारविन्द से भवबन्धन काटने वाला संयम धन स्वीकार कर निरन्तर ज्ञान, दर्शन, चारित्र तप, क्षमा व मार्दव भाव मे निरन्तर आगे बढ़ते रहे, आपकी उत्कट भावना व वैराग्य भाव निरन्तर वृद्धिगत होते रहे। आप शीघ्र अपने लक्ष्य मोक्ष हेतु अभीष्ट साधना कर इस भव-भय बन्धन की जंजीरो को तोड़कर कर्मो का मूलोच्छेद कर सिद्ध, बुद्ध व मुक्त हो। आज इन मुमुक्षु आत्माओ के गुरु चरणो मे सर्वतोभावेन समर्पण, सयम ग्रहण के इन क्षणो के साक्षी बनकर व रत्नत्रयाराधक आचार्य भगवन्त रत्ननिधि महापुरुषो के पावन दर्शन कर हम वस्तुत धन्य-धन्य हैं।"

हस्ती समेत चारो मुमुक्षु आचार्य श्री शोभा के समक्ष श्रद्धावनत विनयविनम्र होकर वन्दनपूर्वक दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना करने लगे।

चतुर्विध सघ के पूज्य, मुमुक्षुचतुष्टयी के आराध्य, सघनायक आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म भी अन्तर्हृदय से पुलकित थे, जिन्होने बालहस्ती के भीतर अव्यक्त रूपेण विद्यमान धर्मनायक ऐरावत गजराज को पूर्व मे ही परख लिया था। आचार्यप्रवर दीक्षार्थियो के परिजनो का लिखित आज्ञापत्र सुनकर, प्रव्रज्या हेतु तत्पर रूपादेवी, अमृतकवर, चौथमल एव स्वय हस्ती के प्रार्थना स्वरो से गद्‌गद् हो सर्वप्रथम उन्हे भागवती दीक्षा का मर्म एव महत्त्व समझाने लगे और यह अवसर था जब समस्त पाण्डाल एक स्वर से अनुमोदन की अभिव्यक्ति जय-जयकार से करने लगा। उन्होने फरमाया -"दीक्षा वह सस्कार है जो शरीर जैसे नश्वर साधन से अविनश्वर आत्म-स्वभाव प्रकट करने का मार्ग प्रशस्त कर मोक्ष सुख का वरण करने मे सहायक है।" उन्होने समझाया "साधु के पास भी वही शरीर है, वे ही इद्रियॉ है, वही मन है और वही आत्मा है, किन्तु वह इनका उपयोग साधना के लिए करता है। आप चारो साध्वाचार का पथ अपनाने के लिए तत्पर है, यह प्रमोद का विषय है, किन्तु जिस उत्साह एव वीरता के साथ आप यह पथ अपनाने के लिए तत्पर हुए है उसकी निरन्तरता का निर्वाह साधु-साध्वी बनने के पश्चात् भी करना है। जो सिह की भाति वैराग्य का पथ अपनाकर उसे सिह की भाति पालता है, वह श्रेष्ठ है।"

स्थानागसूत्र मे प्रतिपादित प्रव्रज्या के मर्म को समझाते हुए आचार्य श्री ने कहा– "प्रव्रज्या का सम्यक् रूपेण इन्द्रियनिग्रह और कषायविजय के साथ पालन किया जाए तो वह सुख की शय्या बन जाती है और यदि प्रव्रजित

होने के बाद भी इन्द्रियविषयो के प्रति आकर्षण बना रहता है, पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष बने रहते है तो वह दु:ख की शय्या बन जाती है। मै समझता हूँ कि आप प्रव्रज्या को सुख की शय्या बनायेंगे।" इसके साथ ही आचार्य श्री ने बताया कि साधु सावद्य प्रवृत्तियो का तीन करण एव तीन योग से जीवनभर के लिए त्याग करता है। वह न तो स्वंय सावद्य (दोषपूर्ण) प्रवृत्ति करता है, न दूसरो से कराता है और न ही करते हुए का अनुमोदन करता है। वह मन से बुरा नही सोचता, वाणी से बुरा नही बोलता और काया से बुरा नही करता हुआ मन, वचन और काया की अशुभ प्रवृत्तियो का सयम करता है। वैराग्य काल मे साधु-साध्वी के सान्निध्य मे रहने से दीक्षार्थी साध्वाचार से परिचित तो थे ही, अब गुरुमुख से साधुचर्या के महत्त्व को सुनकर उन्हे दीक्षा अगीकार करने मे पलभर की देरी भी असहज प्रतीत होने लगी। तभी आचार्यश्री ने 'करमि भते. सव्व सावज्ज जोग पच्चक्खामि जावज्जीवाए तिविह तिविहेण....' के शास्त्रीय पाठ से उन्हे भागवती दीक्षा प्रदान की। स्तब्ध होकर दर्शक बना हुआ पाण्डाल सहसा "मुनि हस्ती की जय, मुनि चौथमल की जय, साध्वी रूपा की जय, साध्वी अमृत कवर की जय" करते हुए जयकार से गूज उठा।

दीक्षा प्रदान करने के अनन्तर मुनि श्री हस्तिमल्ल जी म आदि की शिखा के अवशिष्ट केशों का लुचन किया गया। यह लुंचन प्रतीक बना साध्वाचार के उत्कट मार्ग पर आरोहण का। केशलोच साध्वाचार की परम्परा रहा है। यह परीषह-जय की कसौटी है। आचार्यश्री ने नवदीक्षित साधुद्वय को स्वय की निश्रा मे, साध्वी रूपासती जी को बड़े धनकवर जी म सा की निश्रा मे तथा साध्वी अमृतकवर जी को छोटे राधाजी म सा. की निश्रा मे रखने की घोषणा की।

श्रमणधर्म अगीकार करने के उपरान्त अभी नवदीक्षितो का परीक्षा एवं पर्यवीक्षा का काल चल रहा था। आचार्य श्री ने अत्यन्त सावधान करते हुए नवश्रमण-श्रमणियो को पुन: पुन साधुवादपूर्वक श्रमण जीवन का स्वरूप प्रस्तुत किया और समझाया कि प्रतिकूल अथवा अनुकूल सभी प्रकार के घोरातिघोर परीषह आने पर भी अपने श्रमणत्व के मनोबल को क्षीण मत होने देना।

दशवैकालिक सूत्र मे निरूपित श्रमण के कर्तव्यपालन पर भी आचार्यश्री ने बल दिया तथा षट्जीवनिका की वाचना देकर साधु के षट्कायप्रतिपाल स्वरूप को उजागर किया। साधु-साध्वी जीवन पर्यन्त पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रसकाय (द्वि-त्रि-चतुर्-पचेन्द्रिय) के जीवों की विराधना से बचते हुए षट्काय जीवो के प्रतिपालक होते है।

सात दिनो का पर्यवीक्षाकाल समापन पर था। वि स १९७७, माघ शुक्ला नवमी तदनुसार १७ फरवरी १९२१ गुरुवार के शुभ दिन अजमेर मे ही आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा के मुखारविन्द से नवदीक्षित साधु-साध्वियो की बड़ी दीक्षा सम्पन्न हुई। वे छेदोपस्थापनीय चारित्र मे आरूढ़ हुए। मुनिहस्ती का चारित्र मे आरोहण हो गया। अब वे पंच महाव्रतो के पालक, ईर्या आदि पॉच समितियो के आराधक एव मनोगुप्ति वचनगुप्ति, एव कायगुप्ति के धारक महान् साधक बन गए। दशवैकालिक सूत्र मे निर्ग्रन्थ साधु की इसी प्रकार की विशेषताएँ बताते हुए कहा गया है —

> पचासवपरिण्णाया, तिगुत्ता छसु सजया।
> पच निग्गहणा धीरा, निग्गथा उज्जुदसिणो॥ दशवैकालिक ३ ११

निर्ग्रन्थ साधु पॉच आस्रवों के त्यागी, तीन गुप्तियों से गुप्त , षट्काय जीवों की यतना करने वाले, पॉच इन्द्रियो का निग्रह करने वाले, धीर एवं ऋजुदर्शी होते है।

शोभागुरु के सान्निध्य में मुनि-जीवन

(वि. संवत् १९७७ से १९८३)

* सन्त-जीवन का अभ्यास और अध्ययन की निरन्तरता

अजमेर नगर के श्रावक-श्राविकाओ की प्रबल अभिलाषा थी कि नवदीक्षित सन्तो के साथ आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी महाराज चातुर्मासार्थ अजमेर मे ही विराजे। सयोगवश पूज्य श्री का विहार आगे नही हो सका। इधर स्वामीजी श्री सुजानमलजी महाराज आदि तीन सन्त जो दीक्षा के प्रसग पर नही पधार सके थे, मारवाड़ से पूज्य श्री की सेवा मे पधारे। नागौर एव अजमेर के श्रावको की पुरजोर विनतियो को लक्ष्य मे रखते हुए मुनि श्री सुजानमल जी महाराज आदि सन्तो का चातुर्मास नागौर के लिये स्वीकृत किया गया। इधर बाबा जी श्री हरखचन्दजी म. वयोवृद्ध होने से लम्बे विहार मे असमर्थ थे तथा आचार्य श्री भी दाहज्वर आदि कारणो से पूर्ण स्वस्थ नही थे। अत अजमेर श्री सघ की विनति को बल मिल गया और आचार्य श्री ने जब अजमेर चातुर्मास हेतु अपनी स्वीकृति प्रदान की तो प्रमोदमय वातावरण बन गया। आचार्य श्री चातुर्मास हेतु मोतीकटला मे स्व सेठ छगनमलजी के सुपुत्र सुश्रावक श्री मगनमलजी के मकान मे विराजे।

सेठ मगनमल जी ने अवसर देखकर एक बार पूज्य श्री से प्रार्थना की—गुरुदेव ! नवदीक्षित मुनियो को शिक्षण देने के लिये आपकी मर्यादानुसार मेरे यहा व्यवस्था है। पण्डित रामचन्द्र जी भक्तामर स्तोत्र आदि सिखाने हेतु हवेली प्रतिदिन आते है, नवदीक्षित मुनियो ने वैराग्यावस्था मे उनसे अध्ययन किया है। वे एक दो घण्टे इधर भी आ सकते है। अनुकूल जानकर पूज्यप्रवर ने स्वीकृति प्रदान की और प्रतिदिन चरितनायक एव मुनि श्री चौथमलजी पण्डित जी से प्रतिदिन सस्कृत पढ़ने लगे।

मुनि श्री ने इस चातुर्मास मे ज्येष्ठ एव अनुभवी सन्तो से साधु-मर्यादा का सूक्ष्म बोध प्राप्त किया। वे सभी सन्तो के प्रति विनय भाव रखते, उनसे पृच्छा करते एव सम्यक् साध्वाचार का पालन करने हेतु उत्सुक एव तत्पर रहते। ज्ञान-सम्पन्नता, दर्शन-सम्पन्नता एव चारित्र-सम्पन्नता का पाठ उन्होंने अपने गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्रजी म.सा एव शिक्षा गुरु श्री हरखचन्द जी म.सा के सान्निध्य मे सीखने मे जो रुचि दिखाई उससे सभी पुलकित एव प्रसन्न थे। सन्त जीवन के नये-नये अनुभवो से उनका साक्षात्कार प्रारम्भ हो गया था।

सन्त-जीवन पापकर्मो से विरति का जीवन है। इसमे पदे-पदे यतना या विवेक हो तो पाप कर्म का बन्ध नही होता है-

जय चरे जय चिट्ठे, जयमासे जय सए।
जय भुजतो भासतो, पावकम्म न बधइ॥

चलना, उठना, बैठना, शयन करना, आहार करना, बोलना आदि सभी क्रियाएँ यतना पूर्वक करने का मुनि श्री हस्ती अभ्यास बढ़ाते रहे। आचार्य श्री एव ज्येष्ठ सन्तो की शिक्षाओ के प्रति वे प्रतिपल जागरूक थे। साधारण

बालक जहाँ उपद्रवी एवं नादान होते हैं, वहाँ सन्त-जीवन पूर्णतः नियमो में बंधा हुआ होता है। लघुवय के सन्त कैसे अपने चचल मन को वश में करते होगे ? बड़ा कठिन कार्य है। किन्तु लघुवय मुनि हस्ती ने मन, इन्द्रिय एव शरीर की चचलता को जीतना प्रारम्भ कर दिया था। उन्होने यह पाठ सीख लिया था -

एगे जिए जिया पच, पच जिए जिया दस।
दसहा उ जिणित्ताण, सव्वसत्तू जिणामह ॥

एक अपनी आत्मा या मन को जीत लेने पर पाच इन्द्रियां एव चारो कषायो को जीता जा सकता है।

पंचिंदियाणि कोह माण, माय तहेव लोहच।
दुज्जय चेव अप्पाणं, सव्व अप्पे जिए जियं ॥ उत्तराध्ययन ९.३६

आपने उत्तराध्ययन सूत्र के विनय अध्ययन के अनुसार अपनी जीवन शैली को बनाने का प्रयास करते हुए जान लिया था-

नापुट्ठो वागरे किंचि, पुट्ठो वा नालियं वए।
कोह असच्च कुव्वेज्जा धारेज्जा पियमप्पियं ॥

गुरुजनो द्वारा बिना पूछे व्यर्थ न बोलना, पूछने पर झूठ नही बोलना, बुरा लगने पर भी क्रोध नही करना और गुरु के द्वारा कहे गए अप्रिय वचन को भी प्रिय या हितकारी समझना आदि विशेषताओ को मुनि हस्ती ने बाल्य अवस्था मे ही आत्मसात् कर लिया। किस प्रकार के दुराचरण से कोई साधु पाप-श्रमण कहलाता है, उसे भी उन्होंने भली-भाति जानकर वर्जनीय आचरण को सर्वदा के लिए हेय समझ लिया था।

पाच समिति और तीन गुप्ति का निर्मल आचरण मुनि हस्ती की जीवनचर्या का अग बन गया। मन, वचन एव काया को नियन्त्रित करने की साधना मे वह लघु शिल्पी सफलता की ओर दृढ कदम बढा रहा था। ईर्या, भाषा, एषणा, निक्षेपणा और परिष्ठापनिका समिति के प्रति सजगता देखते ही बनती थी।

जीवन की नश्वरता का उन्हे पहले से ही बोध था, अत प्रमाद को त्याग कर समय का सदुपयोग करने हेतु वे तत्पर थे। 'समय' गोयम ' मा पमायए' को उन्होने गुरुमन्त्र समझ कर अध्ययन एव साधना की सजगता को लक्ष्य बना लिया।

दशविध समाचारी का स्वरूप एव प्रयोग भी मुनि हस्ती को हस्तामलकवत् स्पष्ट हो रहा था। 'आवस्सइ' एवं 'निस्सीहइ' शब्दो के उच्चारण उन्हे बाह्य गमनागमन की प्रक्रिया से परिचित करा रहे थे।

मुनि हस्ती गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज की आज्ञा के पालन मे अपने जीवन का विकास देख रहे थे। उन्हे गुरुभ्राताओ एव ज्येष्ठ सन्तो से भी निरन्तर दिशा निर्देश एव प्रशिक्षण मिल रहा था।

पण्डित रामचन्द्र जी से सस्कृत में लघुसिद्धान्त कौमुदी, शब्द रूपावली, धातु रूपावली के साथ अमर कोष का अध्ययन चल रहा था। हिन्दी भाषा का अध्ययन भी कर रहे थे। सन्तो से आगम एव थोकड़ो का अध्ययन चल रहा था।

चातुर्मास के अन्तिम चरण मे साताग्रनिवासी सेठ बालमुकुन्द जी मुथा के सुपुत्र सेठ मोतीलाल जी मुथा पूज्य आचार्यप्रवर के दर्शनार्थ अजमेर पधारे। आप उस समय साधुमार्गी जैन कान्फ्रेंस के प्रधानमत्री थे। आपके साथ पण्डित दुःखमोचन जी झा भी आए थे, जो कान्फ्रेंस के साप्ताहिक पत्र जैन प्रकाश के सम्पादक थे और संस्कृत के

उद्भट विद्वान होने के साथ जैन परम्परा से परिचित थे। आप पूज्य श्री जवाहर लाल जी म., पूज्य श्री गणेशीलालजी म. एव मुनि श्री घासीलालजी महाराज के पास वर्षों तक अध्यापन सेवा कर चुके थे। सेठ मोतीलालजी इन्हे अपने साथ इस विचार से लाए थे कि यदि पूज्य श्री की आज्ञा हुई तो नवदीक्षित मुनियो के अध्ययन हेतु इन्हें नियुक्त कर देगे। पूज्य श्री को सुश्रावक मुथाजी ने अपनी भावना से अवगत कराया तो आचार्य श्री ने पण्डित जी से कल्याण मंदिर के एक श्लोक का अर्थ कराया एव आवश्यक पूछताछ के पश्चात् पण्डित जी की योग्यता एव शील स्वभाव को देखकर साधुभाषा मे अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी।

पण्डित झा साहब से सस्कृतभाषा आदि का अध्ययन प्रारम्भ हुआ। नवदीक्षित मुनि हस्ती को बहुत अच्छा लगा। पण्डित झा भी उनकी प्रतिभा, स्मरणशक्ति एव व्युत्पन्न मतित्व से अत्यन्त प्रभावित हुए। प. दुःखमोचन झा जो भी पाठ पढ़ाते, उसे वे दूसरे दिन पूरा याद करके सुना देते। अध्ययन का क्रम निरन्तर बढ़ता गया। सस्कृत भाषा आदि का अध्ययन करते हुए प्रथम चातुर्मास (विक्रम संवत् १९७८) अजमेर मे सानद व्यतीत हुआ।

अजमेर मे आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा., स्वामी जी श्री हरखचन्द जी म सा., श्री लालचन्द जी म सा एव नवदीक्षित श्री चौथमल जी म सा के साथ मुनि श्री हस्तिमल्ल जी महाराज सा का प्रथम चातुर्मास यतनापूर्वक साध्वाचरण की कसौटी पर खरा उतरा।

इसी चातुर्मास मे आपने 'पुरिसा ! तुममेव तुम मित्त, किं बहिया मित्तमिच्छसि' (पुरुष ! तुम ही तुम्हारे मित्र हो, बाह्य मित्र की इच्छा करना व्यर्थ है। —आचारांग १ ३ ९), अन्नो जीवो, अन्न सरीर (जीव भिन्न है, शरीर भिन्न है। — सूत्रकृताङ्ग २ १ ३) अप्पणा चेव उदीरइ, अप्पणा चेव गरहइ, अप्पणा चेव सवरइ (आत्मा स्वय अपने द्वारा कर्मों की उदीरणा करता है, स्वय ही उनकी गर्हा - आलोचना करता है तथा स्वय ही उनका सवर करता है। — भगवती सूत्र १ ३) जैसे आगम - वाक्यो का भी अध्ययन कर अपने जीवन को आध्यात्मिक दिशा प्रदान कर दी थी।

अजमेरवासियो की उमग एव धर्माराधन की लगन के साथ चातुर्मास सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

• प्रथम पद-विहार : मेड़ता की ओर

वर्षाकाल की समाप्ति हुई। मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा के दिन पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म सा और सन्तमडल के साथ ढड्ढा जी के बाग से विहार कर पुष्कर, थावला, पादु, मेवड़ा रीया, आलणियावास, पाचगेलिया आदि क्षेत्रो मे धर्मलाभ देते हुए चरितनायक मेड़ता पधारे। यह अनेक नये अनुभवो से ओत-प्रोत मुनि हस्ती की प्रथम पदयात्रा थी। नन्हे-कोमल कदमो की आहट और पाद-निक्षेप धरा के किसी जीव को त्रस्त न कर दे, इस विवेक से युक्त मुनि हस्ती दृष्टिपूत न्यसेत पाद का अभ्यास अपनी प्रथम पदयात्रा मे कर रहे थे। प्रकृति के परिवेश का पर्यालोचन करते हुए मुनि हस्ती पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय मे जीवत्व के सत्य का साक्षात्कार कर रहे थे। सूक्ष्मातिसूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव के पिण्ड से छेड़छाड़ भी हिंसा है, ऐसे चिन्तन को सजोए प्राणिमात्र के प्रति अभय की भावना के मूर्तरूप बने वे जन-जन के दुलारे बन गए। इस विहार ने क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दशमशक आदि परीषह सहने के सामर्थ्य का वर्धन किया। बाल मुनि के स्वाभाविक भोलेपन और कठोरचर्या के सगम को देख श्रावक समुदाय विस्मित था। श्रीमालो के उपाश्रय में श्रद्धालुओं की उमड़ती भीड़, भक्तिमती मीरा की पावन मातृभूमि पर निरन्तर प्रवचनामृत बरसाने हेतु आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा से विनति करने लगी। आठ दिवस तक आचार्य श्री एव सन्तो की अमृतवाणी का रसास्वादन मेड़ता निवासियो तथा प्रवासियों

ने किया।

• बीकानेर के धोरों का अनुभव

पूर्वाचार्यों द्वारा रत्नत्रयी के बोधिबीज का वपन, अकुरण और सिञ्चन बीकानेर क्षेत्र में हुआ जानकर आचार्य श्री ने नवदीक्षित सतों का मनोबल बढ़ाने हेतु तथा कष्ट सहिष्णुता जगाने हेतु चरितनायक को बीकानेर विहार का सकेत किया। आचार्य श्री चाहते थे कि हमारे नवदीक्षित सन्त अतिकठिन समझे जाने वाले, बालू के समुद्र वाले मरुप्रदेश मे विचरण कर नये-नये अनुभव प्राप्त करे। भुरण्ट (कांटे) से भरे बालू के बड़े-बड़े टीलों और मैदानो के पारगामी कण्टकाकीर्ण पथो पर दृष्टि गड़ाए चलने से इन्हे अपनी चित्तवृत्तियो को एकाग्र करने का अभ्यास होगा, आत्मविश्वास जागृत होगा। उन्होने इस बात को अपने मन मे रेखाकित किया कि अजमेर से मेड़ता तक प्रथम विहार में वय की अपेक्षा सबसे छोटे एकादशवर्षायुष्क मुनि हस्ती ने अपने दृढ़ मनोबल का परिचय दिया है। अत. यह होनहार सत निश्चय ही श्रमण धर्म के कठोर परीषहो को सहन कर एक दिन सन्त-परम्परा का आदर्श स्थापित करेगा।

आचार्य श्री शोभा गुरु की छत्रछाया मे मुनि हस्ती खजवाणा, मूडवा होते हुए नागौर पधारे, जहाँ बीकानेर के प्रेमी श्रावक विनति हेतु उपस्थित हुए। नागौर से गोगोलाव, अलाय आदि ग्राम नगरो को फरसते हुए कक्कू-भगू के धोरो को पार कर देशनोक की तरफ अग्रसर हुए। बालुका से परिपूर्ण विस्तृत मैदानो के कैर, बेर, बबूल, खेजड़े और फोग की झाड़ियो और पेड़-पौधो से भी पथिक मुनि हस्ती ने सीख ली कि कटीला और कठोर जीवन भी आनदमयी और परोपकारी हो सकता है। धोरो की धरती के ऊचे रेतीले टीलो पर धसते पैरो से श्रमपूर्वक चढ़ते हुए बाल मुनि का भाल मोती जैसे स्वेद बिन्दुओ से चमकने लगा। गुरुवर ने ठीक ही तो कहा था कि साधना की ऊचाई पाने हेतु श्रमणत्व की कठोर चर्या साधन है जो मोक्ष की अलख ऊचाई की प्राप्ति कराता है। 'टीबा कुण का भारा राखै है' लोकोक्ति का अर्थ मुनि हस्ती ने समझ लिया कि सही ढग से किया गया श्रम कभी निष्फल नही होता। रेतीले रास्तो की पद-यात्रा की परीक्षा मे भी मुनि हस्ती उत्तीर्ण रहे। बीकानेर नगर प्रवेश के अनन्तर मालूजी की कोटडी मे विराजे। यहाँ श्रावको ने सन्तो से प्रश्नोत्तरो का लाभ लिया। सेवा मे भी उपस्थित होते। सेठिया भैरोदानजी, राव सवाईसिंह जी , सुराणा भेरूमलजी, बाबू आनन्दराजजी , लाभचन्दजी डागा आदि ने सन्तो का विशेष लाभ लिया। बीकानेर पूज्य जवाहराचार्य का प्रमुख विचरण क्षेत्र था। अत सतारा विराजते हुए उन्होंने श्रावको को सन्तो की सेवा का लाभ लेने हेतु विशेष भोलावण भिजवाई। जोधपुर, नागौर और समीपवर्ती स्थानो से समागत तथा स्थानीय श्रावक-दर्शनार्थियो का ताता लग गया। मुनि हस्ती को तो ज्ञानाभ्यास की लगन लग गई। श्री भैरोदान जी सेठिया द्वारा मुनि श्री के अध्यापन की समुचित व्यवस्था से उनका शास्त्रीय अध्ययन परवान पर चढ़ने लगा। पूर्व पठित एव कण्ठस्थ किये गए शास्त्रो एव व्याकरण, कोश, स्तोक आदि के परावर्तन का क्रम निरन्तर मुनि श्री को उत्साहित करने लगा। पारमार्थिक संस्था के पण्डितो का शिक्षण मे सहयोग मिलता रहा। बीकानेर नगर के निवासियों, उनके रहन-सहन एव उनकी भाषा आदि का परिचय पाकर वे अपने अनुभव को पुष्ट करने मे भी थोड़ा-थोड़ा समय लगाते थे।

बीकानेर प्रवासकाल मे मुनि श्री हस्ती और उनके सतीर्थ्य मुनि श्री चौथमलजी महाराज का होली चौमासी पर केशलुञ्चन स्वामी जी श्री भोजराज जी महाराज द्वारा बड़े स्नेहपूर्वक किया गया। दिन प्रतिदिन बाल मुनि की कोमल काया परीषह सहन करने में उत्तरोत्तर सक्षम बनती गई। अजमेर से बीकानेर और अब बीकानेर से नागौर की ओर

विहारकाल मे मुनिश्री को जो अभिनव अनुभव हुए, उनसे उनके उत्साह मे और अधिक वृद्धि हुई।

• भोपालगढ़ की ओर

वापसी यात्रा मे नागौर मे कतिपय दिन धर्मलाभ देकर रूण, नोखा-चादावतो का होकर हरसोलाव मे हवेली मे विराजे जहा पूज्य श्री कानमलजी एव चैनमलजी म.सा. का आगमन एव प्रेम मिलन हुआ। विभिन्न क्षेत्रों मे दया धर्म का प्रचार करते हुए आचार्य श्री मुनिश्री हस्ती के साथ ७ ठाणा से रजलाणी होते हुए आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म.सा. की ऐतिहासिक क्रियोद्धार स्थली भोपालगढ़ (बड़लू) पधारे। भोपालगढ़ तथा आस-पास की ढाणियो और जोधपुर आदि नगरो से दर्शनार्थ पहुचे आबाल वृद्ध नरनारी वृन्द ने आचार्य श्री शोभा गुरु और तेजस्वी मुनि हस्ती सहित सातो सन्तो को ऐसे देखा जैसे सप्तर्षि मडल धरती पर उतर आया हो। भोपालगढ़ के श्रावको की धर्म के प्रति अटल श्रद्धा, अविचल निष्ठा और अटूट आस्था प्रसिद्ध रही है। सन्तो के आगमन के स्वागत मे नारी समाज के गीतो का हृदयहारी सगीत शासनपति श्रमण भगवान महावीर तथा उनके क्रमागत पाटानुपाट उत्तराधिकारी के रूप मे तत्कालीन अस्सीवे पट्टधर आचार्य श्री शोभागुरु के जयघोषो से बालमुनि हस्ती भी प्रभावित हुए बिना नही रह सके। सामायिक, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण, व्रत-प्रत्याख्यान, पौषधोपवास आदि की होड़ सी लग गई। मुनि हस्ती का अध्ययन क्रम भी नया बास स्थित श्री जालमचन्द्र जी ओस्तवाल के मकान मे विराजने पर सुचारुरूपेण चलता रहा। साध्वाचार एव क्रियोद्धार के सम्बध मे अनेक जिज्ञासाए प्रकट कर मुनि हस्ती ने आचार्य शोभा गुरु तथा बाबाजी हरखचन्द जी महाराज आदि सन्तो से पर्याप्त जानकारी प्राप्त की।

यहाँ पर सतारा से सुप्रसिद्ध दानवीर श्रावक सेठ श्री मोतीलालजी मुथा आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म.सा के दर्शनार्थ पधारे। नवदीक्षित सन्तो को देखकर आचार्य श्री को निवेदन किया–"छोटे छोटे सन्त है, विद्यार्थी है, अत. इन्हे पारणक मे छाछ और खाखरा देने की बजाय दूध मे घी देना चाहिये ताकि इनकी बुद्धि अधिक कार्य कर सके।" आचार्यप्रवर ज्यो ही इसका प्रतिवाद करने को उन्मुख हुए, वहा विद्यमान सुज्ञ एव दृढ श्रद्धालु श्रावक श्री मोतीचन्दजी चोरड़िया तुनक कर बोले - "यह जहर देने की बात क्यो करते हो ? क्या इनके बडेरे पढे-लिखे नही थे? क्या वे बहुश्रुत नही थे ? क्या वे प्रतिदिन दूध और घी खाते थे ? वे तो पौरसी करते थे। अत आप सन्तो को रसलोलुप न बनाएँ।" शास्त्र भी कहता है -

> दुद्धदहीविगइओ आहारेइ अभिक्खणं।
> अरए य तवोकम्मे पावसमणत्ति वुच्चइ ॥-उत्तराध्ययन सूत्र १७.१५

जो दूध, दही आदि विगयो का नियमित सेवन करता है एव तपकार्य मे अरति रखता है। वह पाप श्रमण कहलाता है।

मोतीचन्द जी चोरड़िया का कथन आचार्य श्री की आचार सहिता को पुष्ट कर रहा था।

• जोधपुर के पाँच वर्षावासो (सवत् १९७९-१९८३) में योग्यता-वर्धन

भोपालगढ़ से विहार कर हीरादेसर, दहीखेड़ा, सूरपुरा, महामदिर आदि क्षेत्रो को फरसते हुए आचार्य श्री के साथ आप जोधपुर पधारे। जोधपुर मे विक्रम सवत् १९७९ का चातुर्मास अजमेर निवासी श्री उम्मेदमलजी सा. लोढा के पेटी के नोहरे मे हुआ। ज्ञातव्य है कि आचार्य श्री के अजमेर प्रवास के समय उनकी सत्प्रेरणा से यह मकान लोढाजी ने धर्मध्यान के लिये खाली रखने के भाव अभिव्यक्त किये थे। मुनिश्री के लिए अध्यापक श्री धनराज जी,

श्री कन्हैयालाल जी, पडित श्री सुखलाल जी और पडित श्री सदानद जी आदि का सुयोग उनके ज्ञानवर्धन में सहयोगी बना। 'पढमं नाणं तओ दया' की परिपालना मे मुनि श्री के जीवन मे ज्ञान और क्रिया का अनूठा समन्वय रहा। आचार्य शोभा गुरु के सान्निध्य मे मुनि श्री हस्ती का आगम-ज्ञान तथा संस्कृत अध्ययन निखरता गया। मुनि हस्ती के अध्ययनकाल में पण्डित सदानद जी ने एक व्यग्योक्ति की- "पण्डित जैन साधु भी एक साधारण पढ़े-लिखे ब्राह्मण के बराबर नही होता।" पण्डितजी की इस व्यग्योक्ति को उन्होंने जैन श्रमण परम्परा के स्वाभिमान को दी गई चुनौती के रूप में स्वीकार किया एव मन ही मन सस्कृत तथा प्राकृत भाषा का गहन अध्ययन करने का दृढ संकल्प कर लिया।

इधर मुनिश्री जोधपुर प्रवासकाल में अहर्निश परिश्रम से विद्याभ्यास मे संलग्न थे और उधर **अजमेर में विक्रम संवत् १९७९ भाद्रपदकृष्णा अमावस्या के दिन बाबाजी श्री हरखचन्द जी म.सा. का स्वर्गवास हो गया।** बाबाजी श्री हरखचन्द जी म.सा. के द्वारा ही मुनिश्री मे प्रारम्भिक शिक्षा-सस्कारों का बीजारोपण हुआ था तथा उनके वात्सल्यमय सरक्षण मे ही मुनि श्री को मुनि-जीवन पर आरूढ होने की प्रेरणा और सम्बल मिला था। मुनि श्री पर इस घटना से वज्राघात हुआ, नयनो पर बाबाजी महाराज की वात्सल्यमयी मूर्ति मंडराने लगी। मुनि श्री ने तत्त्वो का अध्ययन ही नही, चिन्तन भी किया था। वे शरीर की नश्वरता और आत्मा की अमरता से परिचित थे। उन्होने स्वर्गस्थ बाबाजी को श्रद्धाजलि स्वरूप 'चार लोगस्स' का ध्यान किया और दृढ़ मनोबल से वे इस आघात को सह गए। मुनि श्री हस्ती के दृढ़ मनोबली जीवन पर आचार्य श्री शोभागुरु की छाप थी। आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. स्वभाव से शान्त व धीर एव हृदय से विशाल थे।

चातुर्मासोपरान्त जोधपुर शहर से विहार कर मुनि श्री हस्ती अपने गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज के साथ महामदिर पधारे। मार्ग मे विहार के समय भक्तिवश सैंकड़ो लोग नंगे पैर साथ चले। महामदिर मे सभी सन्त काकरियो की पोल मे विराजे। यहाँ पर हरसोलाव निवासी श्री लूणकरणजी बाघमार की भागवती दीक्षा का मुहूर्त मार्गशीर्ष शुक्ला पूर्णिमा का निश्चित किया गया। सयोगवश उन्ही दिनो ऐसी घटना घटी कि एक बहिन ने स्वप्न मे महासती छोगाजी के दर्शन किए। उस बहिन ने आचार्य श्री की सेवा मे निवेदन किया कि महासती जी म. सा. यहाँ पधार जावे तो मैं दीक्षा ग्रहण कर लूँ। इधर बहिन कहकर गई और आचार्य श्री आहार के लिए विराजे। कुछ ही काल पश्चात् द्वार पर आकर किसी ने आवाज लगाई कि महासती छोगा जी पधारे है। सबके आश्चर्य का ठिकाना नही रहा। बहिन का मनोरथ पूर्ण हो गया एव उसने अपनी प्रतिज्ञा का सहर्ष निर्वाह किया।

महामंदिर की ही एक अन्य बहन ने भी दीक्षा की भावना व्यक्त की। जोधपुर के प्रमुख श्रावक श्री चन्दनमल जी मुथा के प्रयासो से **मार्गशीर्ष शुक्ला पूर्णिमा के दिन मुथा जी के मंदिर में एक साथ तीन दीक्षाएं-श्री लूणकरण, श्रीमती छोगाजी (लोढण जी) एवं श्रीमती किशनकंवर की सम्पन्न हुई।** मुनिश्री हस्ती के प्रव्रजित होने के पश्चात् आचार्य श्री शोभागुरु की निश्रा में प्रव्रज्या-समारोह का यह द्वितीय अवसर था। नवदीक्षित लूणकरण का नाम मुनि श्री लक्ष्मीचन्द रखा गया तथा उन्हें स्वामीजी श्री सुजानमल जी म का शिष्य घोषित किया गया। इससे पूर्व जोधपुर के सिंहपोल मे वैशाख माह में **संवत् १९७९ में ही दो विरक्ता बहनों श्रीसज्जनकँवर जी एवं श्री सुगनकँवर जी पारख की दीक्षाएँ सम्पन्न हुई थीं।**

आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. वृद्धावस्था के कारण स्वास्थ्य की दृष्टि से दुर्बल हो चले थे। समय-समय पर होने वाले ज्वर से उनकी शक्ति क्षीण हो गई थी एवं आवश्यक दिनचर्या मे थकान का अनुभव करने लगे थे।

उनकी यह स्थिति देखकर जोधपुर के प्रमुख श्रावक श्री चन्दनमलजी मुथा, नवरतनमलजी भाण्डावत, तपसीलालजी डागा, छोटमलजी डोसी आदि गणमान्य श्रावको ने स्थिरवास के रूप में जोधपुर विराजने की विनति की। साथ ही यह भी निवेदन किया कि क्रियोद्धारक आचार्य श्री रत्नचन्द्रजी म.सा. ने भी अपनी अन्तिम सेवा का लाभ इसी नगर को दिया, फिर आपकी तो यह जन्मभूमि है। शरीर की लाचारी और व्याधि के कारण विनति को स्वीकार कर सवत् १९७९ माघपूर्णिमा को आचार्य श्री ने ठाणा ७ से जोधपुर मे स्थिरवास कर लिया, जो सवत् १९८३ तक चला।

इस अवधि मे चरितनायक मुनि हस्ती एव अन्य शिक्षार्थी सन्त भी आचार्य श्री शोभागुरु की सन्निधि मे ही रहे। यहाँ पर मुनि हस्ती को पण्डित श्री दुःखमोचन जी झा से अध्ययन का सयोग प्राप्त हुआ। मुनि श्री हस्ती के अतिरिक्त मुनि श्री चौथमल जी एव नवदीक्षित मुनि श्री लक्ष्मीचन्द जी भी पडित जी से विद्याध्ययन करते थे। पण्डितजी शिक्षार्थी सन्तो को प्रात, मध्याह्न और रात्रि को तीनो समय लगन से अभ्यास कराते थे। रात्रि को वे आवृत्ति कराते और कभी कोई कथा कहते। इसी समय कभी सुभाषित श्लोक याद कराते थे। इस प्रकार बिना रटे पाठ याद हो जाता था। पण्डितजी के शान्ति, शील, सन्तोष आदि सद्‌गुण भी अभ्यासी मुनियो के लिए शिक्षाप्रद रहे। यहाँ पर मुनि श्री हस्ती ने सिद्धान्त कौमुदी, किरातार्जुनीय, भट्टिकाव्य, तर्कसग्रह, परिभाषेन्दुशेखर की फक्किकाए, रघुवश आदि अनेक सस्कृत ग्रथो का गहन अध्ययन करने के साथ हिन्दी से सस्कृत एव सस्कृत से हिन्दी मे अनुवाद करने एव निबध लिखने का भी अच्छा अभ्यास किया। धाराप्रवाह सस्कृत बोलने मे भी मुनिश्री प्रवीण हो गए। सस्कृत मे प्रावीण्य के साथ मुनि श्री हस्ती ने आचार्य श्री शोभागुरु से आगमो का अध्ययन भी जारी रखा। उन्होने यहाँ रहते हुए दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, नदी सूत्र, वृहत्कल्प, अनुत्तरौपपातिक, आवश्यक सूत्र और विपाकसूत्र का गभीर अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त जिज्ञासु मुनि हस्ती यदाकदा अवसर मिलने पर ज्योतिष, सामुद्रिक शास्त्र, स्वरविज्ञान और मन्त्रविद्या के सम्बध मे भी प्राचीन एव अर्वाचीन ग्रन्थो से कुछ सीखते रहते थे। उन्हे इतर साहित्य कथा, कहानी, पत्र-पत्रिका आदि पढ़ने का शौक नही था। स्वामीजी श्री भोजराज जी म. चरितनायक मुनि के बहुमुखी बौद्धिक विकास के लिए सदा सजग एव प्रयत्नशील रहते थे। अन्य मुनियो का भी सहयोग प्राप्त था। मुनि श्री स्वय दत्तचित होकर निष्ठापूर्वक अध्ययन मे लगे रहते थे।

चरितनायक अपने गुरुदेव की छत्र-छाया मे सहज रूप से मस्त थे। उन्होने अपने सस्मरण मे स्वयं लिखा है—"गुरुदेव की छत्र छाया मे इतना मस्त था कि कौन आया और कौन गया, इसका पता नही। किसी से बात करने का मन ही नही होता—भगिनी-मण्डल से तो बात ही नही करता, अपनी दीक्षिता माँ और साध्वीरत्न श्री धनकवरजी आदि से भी बात नही की। हम बच्चो के साथ बैठकर कभी गप-शप नही करते। दो-चार बूढे लोग-सन्त या पण्डितजी यही हमारे बात का परिवार था।" जोधपुर स्थिरवास काल मे अन्यान्य परम्पराओ के सन्त भी पधारे एव उनसे आचार्य श्री का स्नेह सौहार्दपूर्ण मिलन हुआ। इनमे प्रसिद्ध वक्ता जैन दिवाकर श्री चौथमलजी महाराज आदि ठाणा एव पूज्य अमरसिंह की परम्परा के मुनि श्री नारायणदास जी म., मेवाड़ी सम्प्रदाय के श्री मोतीलालजी म., मन्दिरमार्गी सन्त श्री हरिसागर जी म आदि नाम विशेष उल्लेखनीय है।

• संघनायक के रूप में चयन

इस प्रकार मुनि श्री हस्ती अल्पवय मे ही संस्कृत एव आगम के पडित हो गए और ज्ञान की विविध विधाओ तथा अनुभवो की व्यापकता के कारण वे चतुर्विध सघ की दृष्टि के केन्द्र बिन्दु बन गए। आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा की अस्वस्थता एव वृद्धावस्था के कारण चतुर्विध सघ के सदस्यो के अन्तर्मन मे यह प्रश्न उठना स्वाभाविक

था कि भावी संघनायक कौन होगा? संघ सदस्यो की नजरे मुनि श्री हस्ती पर टिकी थी, जिनमे सघनायक के समस्त गुण विद्यमान थे।

बाल मुनि हस्ती की उस समय ज्ञानार्जन - और अधिक से अधिक सीखने की रुचि थी। शास्त्रों के तलस्पर्शी ज्ञान के पूर्व उनकी बोलने मे रुचि नही थी, तथापि श्री उदयराजजी लुणावत प्रभृति श्रावकों द्वारा आचार्य श्री की सेवा मे बार-बार निवेदन करने पर बाल मुनि श्री हस्ती ने अपना प्रथम प्रवचन दिया।

मुनि श्री हस्ती ने अपने प्रथम प्रवचन मे ही चतुर्विध सघ के श्रोताओ का मन जीत लिया। आचार्य श्री शोभागुरु की सेवा-सुश्रूषा से मुनि श्री का वैयावृत्य तपोगुण भी प्रकट हुआ। शोभागुरु के अन्यान्य परम्पराओं के सन्त-सती वर्ग के प्रति सद्भाव-सम्बधो के साक्षी मुनि श्री हस्ती मे उदारता, सौहार्द तथा सम्प्रदायातीत समन्वयभाव का अद्भुत विकास हुआ। उनका आचार्य शोभागुरु के प्रति प्रगाढ़ भक्तिभाव एव समर्पण था। इस प्रकार अनेकविध गुणो के निधान एव सर्वाधिक योग्य होने से मात्र साढ़े पन्द्रह वर्ष की लघुवय मे आचार्य शोभागुरु ने उत्तराधिकारी सघनायक के रूप में उनका चयन किया एव इसका लिखित सकेत सतारा के अनन्य गुरुभक्त एवं निष्ठावान प्रमुख सुश्रावक श्री मोतीलालजी मुथा को सौप दिया। इस छोटी सी वय मे आचार्य पद पर चयन की यह एक ऐतिहासिक घटना हुई, जिसमे आचार्य श्री शोभाचन्द जी म.सा. की परीक्षण योग्यता एव दीर्घदृष्टि भी अभिव्यक्त हुई।

• आचार्य श्री शोभागुरु का स्वर्गारोहण

जोधपुर स्थिरवास मे आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा को अपनी बढ़ती हुई रुग्णावस्था एव क्षीण होती हुई देहयष्टि से यह विश्वास होने लगा कि अब इस जीर्ण-शीर्ण जराजर्जरित देह से आत्मदेव के प्रयाण का समय सन्निकट है। इस विश्वास से उनकी आत्मलीनता और अधिक एकाग्र और ऊर्ध्वमुखी होती गई। आचार्य श्री जैसे मृत्युञ्जयी पथप्रदर्शक के लिए मृत्यु का वरण तो महोत्सव है, चिन्ता का विषय हो ही नही सकता। उन्हे भलीभाँति ज्ञात था – 'मरण हि प्रकृति शरीरिणा विकृतिर्जीवनमुच्यते बुधै।' मृत्यु तो शरीरधारियो का स्वभाव है। मृत्यु सबकी सुनिश्चित है। यह आश्चर्य है कि हम जी रहे हैं, मृत्यु का झोका किसी भी क्षण इस जीवन लीला को समाप्त कर सकता है। पर्वत पर रखा दीपक यदि तूफानी हवा से भी नही बुझता है तो यह आश्चर्य की बात है, उसके बुझने मे कोई आश्चर्य नही।

अपना अन्तिम समय जान विक्रम सवत् १९८३ की श्रावणी अमावस्या की प्रातकालीन पावन-वेला मे आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी ने सलेखनापूर्वक सथारा ग्रहण कर लिया। आत्म-चिन्तन मे लीन उस महान् आत्मा का मध्याह्न मे स्वर्गारोहण हो गया। आचार्य श्री विक्रम सवत् १९१४ की कार्तिक शुक्ला पचमी के दिन जोधपुर की जिस पावनभूमि साण्डो की पोल जूनी धान मडी मे जिस शरीर के साथ जन्मे, उसी धरती पर लगभग ६९ वर्ष पश्चात् उनका महाप्रयाण हुआ।

वयोवृद्ध स्वामीजी श्री सुजानमलजी म , स्वामीजी श्री भोजराज म आदि वरिष्ठ सन्तो स परामर्श कर परम्परा के प्रमुख श्रावक श्री मोतीलालजी मुथा सतारा द्वारा जोधपुर, जयपुर, बरेली, पाली, अजमेर, पीपाड़, भोपालगढ, नागौर, ब्यावर आदि स्थानो के श्री सघो के प्रमुख श्रावको की बैठक में आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा के लिखित सकेत को पढकर सुनाया गया कि मुनि हस्तीमल जी महाराज इस गौरवशाली रत्नवश परम्परा के सप्तम पट्टधर होंगे।

उपस्थित सभी श्रावको ने 'श्रमण भगवान महावीर स्वामी की जय' 'क्रियोद्धारक आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म.सा की जय', 'आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा की जय' एवं 'आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. की जय' के जय-निनादो के साथ इसका सहज अनुमोदन कर अपने को गौरवान्वित अनुभव किया। इस समय समाज के अग्रणी श्रावकों मे श्री चन्दनमलजी मुथा-जोधपुर, श्री रतनलाल जी नाहर-बरेली, श्री मुन्नीमलजी सिंघवी-जोधपुर , श्री भँवरीलालजी मूसल-जयपुर, श्री छोटमलजी डोसी जोधपुर, श्री नवरत्नमलजी भाण्डावत-जोधपुर, श्री शम्भुनाथजी मोदी-जोधपुर, श्री केशरीमलजी कोठारी-जयपुर भी उपस्थित थे। सघ द्वारा चरितनायक को इस सम्बन्ध मे निवेदन किए जाने पर उन्होने ५ वर्ष का समय अभ्यास के लिए दिया जाए, ऐसा फरमाया। उनकी भावना जानकर सघ के परामर्श से यह निर्णय लिया गया कि अन्तरिम समय के लिए वयोवृद्ध श्री सुजानमल जी महाराज को सघ-व्यवस्थापक और स्वामीजी भोजराज जी महाराज को उनका परामर्शदाता बनाया जावे।

मनोनीत आचार्य के लघुवय होने पर भी सुज्ञ श्रावको के सद्भाव और गुरुभक्ति से संघ की अन्तरिम काल मे व्यवस्था निराबाध सुचारु चलती रही।

आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. के स्वर्गारोहण के अनन्तर विक्रम सवत् १९८३ के जोधपुर चातुर्मासावास के शेष साढे तीन मास सघ-व्यवस्थापक स्वामीजी श्री सुजानमलजी महाराज के प्रेरणादायी प्रवचनो, भावी संघ-नायक के प्राकृत, न्याय आदि के उच्चतर अध्ययन एवं आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा के मधुर जीवन प्रसगो की स्मृति के साथ धर्माराधन को गति देते हुए सम्पन्न हुए। इस चातुर्मास मे आचार्यश्री के अतिरिक्त ९ सन्त थे–(१) स्वामीजी श्री सुजानमलजी म.सा (२) बाबाजी श्री भोजराजजी म.सा. (३) श्री अमरचन्दजी म.सा (४) श्री लाभचन्द्रजी म.सा. (५) श्री सागरमलजी म.सा (६) श्री लालचन्द्रजी म.सा. (७) मुनि श्री हस्तीमलजी म.सा (८) श्री चौथमलजी म.सा (९) श्री लक्ष्मीचन्द्रजी म.सा.।

इस चातुर्मास के समापन के समय अजमेर मे संवत् १९८३ की कार्तिक पूर्णिमा को सघ-व्यवस्थापक श्री सुजानमल जी म.सा की व्यवस्था एव आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज की आज्ञा से अजमेर मे महासती श्री छोगाजी के पास १२ वर्ष की अवस्था मे श्री सुन्दरकवर जी की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई। महासती श्री सुन्दरकवरजी आगे चलकर प्रवर्तिनी पद से विभूषित हुए।

■

आचार्य पद-ग्रहण के पूर्व अन्तरिम-काल

(संघ-व्यवस्थापक श्री सुजानमल जी म. एवं परामर्शदाता स्वामी श्री भोजराजजी म. का सान्निध्य)

तेजस्वी मुनि हस्ती का सघनायक आचार्य के रूप मे चयन हो गया, किन्तु वे अभी अपने अध्ययन को महत्त्व देते हुए वयोवृद्ध श्री सुजानमल जी म.सा. के सघ व्यवस्थापकत्व एव स्वामीजी श्री भोजराजजी महाराज के परामर्शत्व मे निश्चिन्त एव आनन्दित थे। सघ व्यवस्थापक श्री सुजानमल जी महाराज के निर्देश पर सन्तो का अलग-अलग सघाडों में विचरना हुआ। चरितनायक विभिन्न क्षेत्रो को फरसते हुए नागौर पधारे, जहाँ आप यदा-कदा प्रवचन फरमाते। परन्तु अधिकाश समय अध्ययन एव चिन्तन में ही देते। यहा पर ज्ञानचन्दजी सिंघवी के साथ सामयिक प्रश्नोत्तर हुए। वहा से ग्राम - नगरो को फरसते हुए आप पाली पधारे, जहा सघ व्यवस्थापक स्वामींजी श्री सुजानमलजी म., स्वामी जी श्री भोजराजजी जी म पहले से ही विराजमान थे । वहाँ आप सब सन्त ओसवाल पचायती नोहरे मे विराजे। पाली मे ही विराजमान तपस्वी बख्तावरमलजी महाराज ने न्याति नोहरे में पधार कर चरितनायक से कुछ प्रश्न किये एव उनकी योग्यता से प्रमुदित हुए। किशोरवय मनोनीत आचार्य श्री की प्रतिभा, ज्ञानगरिमा व गाभीर्य से तपस्वी जी महाराज अत्यन्त प्रभावित हुए और उन्हे लगा कि जिनशासन का यह उदीयमान सूर्य मेरी विद्याओ का सच्चा पात्र है और सच्चे पात्र को पाकर उन्होने कतिपय विद्याओ को चरितनायक को प्रदान किया। आपकी अनुज्ञा से वैशाख माह मे पीपाड़ निवासी श्री छोगमलजी गाधी एव सुन्दरबाई की सुपुत्री और श्री मूलचन्दजी कटारिया की धर्मपत्नी **धूलाजी की हरमाड़ा में वैशाख माह में श्री भीमकंवर जी म.सा. की निश्रा में दीक्षा सम्पन्न हुई।**

इस पाली शेष काल में श्री नथमल जी पगारिया, श्री सुराणाजी, श्री बालियाजी एवं श्री केसरीमलजी आदि श्रावको ने सेवा-भक्ति का अच्छा लाभ लिया। यही पर हाकिम मूलचन्दजी ने स्थविर सन्तो के समक्ष प्रार्थना की कि चरितनायक का अलग चातुर्मास कराया जाए, ताकि व्याख्यान आदि की उनकी योग्यता विकसित हो सके।

- पीपाड़ चातुर्मास (संवत् १९८४)

सघ-प्रमुखो की विनति के अनुसार चरितनायक का चातुर्मास स्वामीजी श्री भोजराजजी म. एवं श्री लक्ष्मीचन्दजी म.सा. के साथ पीपाड़ स्वीकृत हुआ। बाबाजी श्री भोजराज जी, मुनि श्री चौथमल जी और मुनि श्री लक्ष्मीचन्द जी के साथ चरितनायक पाली से विहार कर भोपालगढ़ होते हुए पीपाड़ पधारे। यहाँ के राता उपासरा मे चातुर्मासार्थ विराजे। सघ-व्यवस्थापक श्री सुजानमल जी महाराज का चातुर्मास ठाणा ३ से पालीनगर में हुआ। उनके साथ मुनि श्री अमरचन्दजी एव मुनि श्री लालचन्द्र जी रहे। मुनि श्री लाभचन्द्रजी एवं मुनि श्री सागरमलजी का चातुर्मास अजमेर हुआ। चातुर्मास के पूर्व पूज्य रघुनाथजी महाराज की सम्प्रदाय के वयोवृद्ध तपस्वी श्री छगनलालजी महाराज की अस्वस्थता को देखकर संथारा सीझने तक मुनि श्री सागरमलजी एवं लाभचन्द्रजी उनकी सेवा मे पाली ही विराजे।

चरितनायक अपनी अल्पवय में ही बड़े-बड़े राज्याधिकारियो, सेठ-साहूकारों, सन्तो, विद्वानो तथा पण्डित

मनीषियो को अपनी विलक्षण प्रतिभा से प्रभावित और मुग्ध करने लगे।

पीपाड़ नगर के चातुर्मास मे चरितनायक के व्याख्यानो तथा विशुद्ध श्रमणाचार के पालन से पीपाड़ निवासी अत्यत प्रमुदित और गौरवान्वित हो रहे थे। चरितनायक के शास्त्रीय व्याख्यान ओजस्वी वाणी के साथ सबको प्रेरणाप्रद लग रहे थे। उनकी प्रत्येक क्रिया की शुद्धता एवं व्यवहार की प्रभावशालिता सबके लिए प्रिय बनती जा रही थी। वे दूसरो को भी अपना बनाने मे निष्णात हो गए थे तथा क्रोधी, आवेशी एव दुर्भावना-ग्रस्त को भी शान्त वाणी एव प्रत्युत्पन्नमतित्व से निरुत्तर करने मे सक्षम हो गए थे। जैन-अजैन सभी उनसे प्रभावित थे। रामद्वारा के सन्त सीताराम जी भी उनकी सेवा मे आया करते थे।

एक दिन राता उपासरा मे अध्ययनरत मुनि श्री के पास एक सज्जन आए और बिना प्रसग के ही बोले—"तुम्हारे पिताजी तो मदिर की भजनमडली मे अच्छा भाग लेते थे।" इसके आगे वे कुछ बोलें इसके पूर्व ही स्मितमुद्रा मे बाठिया जी की ओर दृष्टिपात करते हुए **प्रत्युत्पन्नमति चरितनायक ने उनकी व्यंग्योक्ति का तत्काल उत्तर देते हुए कहा-"विज्ञ श्रावक जी! यदि पिता खारा पानी पीवे तो क्या पुत्र को भी खारा पानी ही पीना चाहिए?" बांठिया जी हतप्रभ हो, लौट गए।**

खरतरगच्छ के यति श्री चतुरसागर जी म भी चरितनायक की विलक्षण मेधा-शक्ति से अत्यत प्रभावित थे और उनका आदर करते थे। भोजराजजी म सा के सान्निध्य मे अध्ययन-कार्य भी निर्विघ्न रूप से चलता रहा। पीपाड़ चातुर्मास की समाप्ति पर सघ के नरनारियो ने विदाई गीतो और धार्मिक उद्घोषो के बीच मुनिमडल को तालाब के समीपवर्ती बगीची तक पहुचा कर अश्रु भरे नयनो से भाव भीनी विदाई दी। उसके पश्चात् रीया मे पुन अध्ययन का क्रम चला।

चातुर्मास के पश्चात् थावला मे श्री **चुन्नीलालजी आबड़ की सुपुत्री चूना जी की** आपकी अनुज्ञा से महासती श्री भीमकवरजी के द्वारा मार्गशीर्ष कृष्णा पचमी को भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई।

- श्री सागरमुनि जी म.सा.का अद्वितीय सथारा

चातुर्मास के पश्चात् चरितनायक आस-पास के क्षेत्रो मे विचरते रहे। स्वामी जी भोजराज जी महाराज के दर्शन कर श्री लाभचन्दजी म एव श्री सागरमुनि जी म पुन अजमेर पधारे। वहा मुनि श्री सागरमल जी म. अस्वस्थ हो गए। उनकी पाचन नली मे खराबी होने से आते फूल जाती और उनकी अन्न के प्रति रुचि कम हो गई। श्रावकजनो ने उपचार के लिए प्रार्थना की, परन्तु मुनि श्री ने अपने गुरुदेव पूज्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा के स्वर्गारोहण के पश्चात् दवा मात्र का त्याग कर दिया था। यहाँ तक कि सोंठ, लवग आदि घरेलू उपचार की वस्तुए भी उन्हे स्वीकार्य नही थी। साथ मे विराजित श्री लाभचन्द जी महाराज के समझाने पर भी मुनि श्री ने यही कहा-'मुझे अन्न नही लेना। जब पेट खाने से कष्ट पाता है तो खाना छोड़ना ही मेरे लिए हितकर है।'

मुनि श्री के स्वास्थ्य के समाचार चरितनायक एव स्वामीजी सुजानमल जी महाराज की सेवा मे भी पहुंचे। समाचार मिलते ही स्वामीजी भोजराज जी ने अजमेर की ओर विहार कर दिया। जोधपुर से सेवाभावी श्रावक श्री चन्दनमलजी मुथा आदि भी पहुचे। तब तक मुनि श्री सागरमलजी म किशनगढ़ पधार गए और वहा उन्होने उपवास चालू कर दिया। स्वामीजी श्री भोजराजजी महाराज ने मुनि श्री की परिस्थिति देख सारी सूचना बाबाजी श्री सुजानमलजी महाराज एव चरितनायक को करायी, जो उस समय रीया विराज रहे थे। खबर मिलते ही वे रीया से

पीपाड़ पधारे। स्वामीजी ने श्री धूलचन्दजी सुराणा, जो प्रज्ञाचक्षु होते हुए भी एक अच्छे ज्योतिषी, वैद्य, घड़ीसाज, कवि एव सन्तों को अध्ययन कराने वाले थे, से पूछा - "सागरमलजी म. सथारा करना चाहते हैं, इस सन्दर्भ में आप क्या कहना चाहेगे?" श्री धूलचन्दजी सुराणा ने नक्षत्र आदि के आधार पर कहा - "जिस नक्षत्र में तप चालू किया है, उसमे सथारा लम्बा चलेगा। एक महीने पहले सथारा सीझने की स्थिति नही है, आप जल्दी पधारे, ऐसी आवश्यकता नही, आप तो धीरे-धीरे भी पधार सकते हैं।" चरितनायक सघ-व्यवस्थापक बाबाजी महाराज के साथ मेड़ता होते हुए २५ दिनो मे किशनगढ़ पहुचे। श्री सागरमलजी महाराज की तपस्या की बात तब तक आस-पास के क्षेत्रो मे हवा की तरह फैल गई थी। श्री सागरमुनि जी ने अपनी शारीरिक स्थिति बताते हुए सथारे के लिए प्रार्थना की। बहुत कुछ समझाने के पश्चात् भी दृढ़ मनोबली सागरमुनिजी अपने सकल्प से विचलित नही हुए।

मुनिश्री का तप चल ही रहा था। चरितनायक से अनुज्ञा मिलने पर चतुर्विध संघ की साक्षी से उन्हें यावज्जीवन सथारे के प्रत्याख्यान करवा दिए गए। ज्यो-ज्यो सथारे का समय बीतता गया, तप के प्रभाव से शरीर मे कोई वेदना ही नही रही। सागरमुनिजी म शान्त, दान्तभाव से आत्मलीन थे। अमरचन्दजी छाजेड़ की पोल में सन्तदर्शन हेतु मेला लग गया। चरितनायक भी स्वाध्याय सुनाकर अपने गुरुभ्राता मुनि की इस धर्म-साधना मे सहयोग प्रदान कर रहे थे। शास्त्र और अध्यात्म ग्रन्थ का स्वाध्याय सुन मुनि श्री बहुत प्रसन्न होते। दर्शनार्थ आने वाले हजारो भाई-बहनो के गमनागमन से किशनगढ़ तीर्थभूमि बन चुका था। गुजरात, पजाब, राजस्थान, उत्तरप्रदेश आदि विभिन्न प्रदेशो से दर्शनार्थी किशनगढ़ की ओर उत्सुकता से आ रहे थे। श्रावक बन्धुओ में बरेली के श्री नगराजजी नाहर, लाला रतनलालजी नाहर, सेठ चन्दन मलजी मुथा सतारा वाले, श्री आनन्दराज जी सुराणा जोधपुर, श्री लालचन्दजी मुथा गुलेजगढ़, श्री धीरजभाई तुरखिया एव जयपुर, जोधपुर, अजमेर, दिल्ली आदि के श्रावक सघ-सेवा का अलभ्य लाभ ले रहे थे।

यद्यपि समभावस्थ मुनिश्री आत्मभाव मे लीन होकर अपनी साधना मे मग्न थे, पर ग्रीष्मकालीन तीक्ष्णताप और सथारे का लम्बान लोगों के लिए चिन्ता का विषय था। मुनि-मन पर उसका कोई असर नही था। किन्तु कुछ भक्तो के मन को सन्तोष नही था। भावुक भक्त गम्भीरमलजी साड ने खिन्न मन से चौक मे बग्घी पर खड़े होकर अग्रेजी मे भाषण दिया कि मुनिश्री को इस तरह भूखे न मारा जाय। बात दरबार तक पहुची। तप के ४० वे दिन दरबार ने वहा के अग्रेज दीवान पावलस्कर को जानकारी के लिये भेजा। दीवान सन्तो के चरणो मे उपस्थित हुआ। उसने श्री सागरमलजी म.सा से पूछा - "आपको क्यो मारा जा रहा है ?" महाराज श्री ने शान्त भाव से उत्तर दिया - "मुझे कोई नही मार रहा है । यह शरीर मुझे छोड़ने को तैयार है तो मै इसे क्यो न छोड़ दूँ। मै आपसे एक बात पूछता हूँ–"आपको कोई घर से घसीट कर बाहर निकालना चाहे और कहे कि दो घण्टे के भीतर-भीतर घर खाली कर दो, नही तो घसीट कर धक्के देकर बाहर निकाल दिया जायेगा - दीवान साहब, ऐसे मे आप क्या करेगे ?" उत्तर था - "मैं खुद घर छोड़ दूँगा।" बस यही बात है। छोड़ने मे आनन्द है, छूट जाने मे दुःख । आप ही बताइए मेरा शरीर काम नही करता, वह मुझे छोड़ देना चाहता है, तो मैं खुद उसे क्यो नही छोड़ दूँ। मुझे कोई नही मार रहा। मैंने अपनी इच्छा से यह संथारा किया है।" दीवान साहब को बात समझ मे आ गई उन्होने तपस्वी सन्त को नमन किया एवं दरबार को रिपोर्ट दी। प्रजा मे शान्ति थी। सभी मुनिश्री की सहज शान्ति-साधना एव सकल्प की दृढ़ता से प्रभावित थे। लोगो को यह बात भलीभाँति समझ मे आ गयी थी कि सलेखना-सथारा आत्महत्या नही, अपितु आत्म-कल्याण का साधन है । आत्महत्या तो राग-रोष के आवेश मे आकर अशुभ भावो मे की जाती है, जबकि संथारा पूर्वक समाधिमरण का वरण समतापूर्वक शुभ भावों मे किया जाता है -

आत्म-हत्या तु सावेशा, राग-रोष-विमिश्रिता।
समाधिमरण तावत्, समभावेन तज्जय ॥

सथारा पूर्वक समाधिमरण तो राग-द्वेष आदि पर विजय प्राप्ति की साधना है। इसे आत्म-हत्या समझना भ्रान्ति है। आत्महत्या जहाँ कषायपरिणति का फल है, वहाँ सथारा ग्रहण करना कषाय विजय की साधना की ओर कदम है। सथारा विवेकपूर्वक विषय-कषायो की उपशान्ति मे देह के अन्तिम समय को जानकर ग्रहण किया जाता है, जबकि आत्मघात या आत्महत्या अविवेक पूर्वक, विषय-कषायो से आविष्ट होकर कभी भी की जा सकती है। आत्महत्या जहाँ छिपकर तथा विवशता मे की जाती है वहाँ सलेखना-सथारा देव, गुरु एव धर्म की साक्षी से, चतुर्विध सघ के समक्ष स्वेच्छा से ग्रहण किया जाता है। आत्महत्या से जहाँ अनन्त ससार बढ़ता है वहाँ संलेखना-सथारा ससार-चक्र को घटा कर सद्‌गति को प्राप्त कराता है। वीर साधक मृत्यु को निकट आया जानकर पण्डित मरण से उसका वरण करने को तत्पर रहते है, क्योकि उससे सैकडो जन्मो के बन्धन कट जाते है एव मरण सुमरण बन जाता है-

इक्क पडियमरण छिण्णइ जाइमयाइ बहुयाइ।
त मरण मरियव्व जेण मओ सम्मओ होइ ॥ महाप्रत्याख्यान प्रकीर्णक ४०

एक उपवास मे कष्टानुभव करने वाले मुनि श्री सागरमलजी महाराज ५९ दिनो का सुदीर्घ संथारा समाधिभाव मे पूर्ण कर वि सवत् १९८५ की श्रावण कृष्णा १३ को इस नश्वर देह को छोड़कर महाप्रयाण कर गए। भक्तो ने बड़े समारोह से दाह सस्कार किया। उनकी पुण्यस्मृति मे सबकी सहमति से एक पाठशाला खोलकर मासभोजी घरो के बालको को शिक्षा के माध्यम से अहिसा के सस्कार देना तय हुआ। यह पाठशाला किशनगढ मे अद्यावधि 'सागर जैन पाठशाला' के नाम से चल रही है। अपने सुदीर्घ सेवाकाल मे सागर जैन विद्यालय से हजारों छात्र-छात्राओं ने अध्ययन किया है। इसमे बिना किसी भेदभाव के सभी जातियों के बच्चो को एक साथ बिठाकर अध्ययन कराया जाता है।

• किशनगढ चातुर्मास (संवत् १९८५)

जीवनभर के लिए औषधि त्याग करने वाले सागरमुनिजी का सथारा चातुर्मास प्रारम्भ होने के १३ दिन बाद तक चला, अत विक्रम सवत् १९८५ का वर्षावास किशनगढ़ मे सम्पन्न हुआ। किशनगढ एवं मदनगंज के भाइयों ने धर्माराधन का पूरा लाभ लिया। वर्षावास के अनन्तर चरितनायक मदनगज, हरमाड़ा होते हुए जयपुर पधारे, तो वहाँ के श्रीसघ के हर्ष का पारावार नही रहा। विज्ञ श्रावको ने अनेक प्रकार की जिज्ञासाएँ प्रकट कर सन्तवृन्द से समाधान प्राप्त किया। फाल्गुन शुक्ला १० को श्री बिदामकवर जी की भागवती दीक्षा ब्यावर मे महासती धनकवरजी म.सा. की निश्रा मे सम्पन्न हुई। यहाँ से मारवाड़ का पथ लेते हुए अजमेर, मसूदा होकर चरितनायक ब्यावर पधारे, जहाँ आपश्री के व पूज्य मोतीलाल जी म. मेवाड़ी के व्याख्यान सयुक्त रूप से रायली कम्पाउण्ड मे हुए।

ब्यावर मे अगले वर्ष के चातुर्मास हेतु जयपुर और भोपालगढ़ के श्रावकों की पुरजोर विनति थी। बढ़ते उत्साह से भोपालगढ़ ने अधिक व्रत-नियम, पौषध करना स्वीकार कर चातुर्मास की स्वीकृति प्राप्त कर ली।

• भोपालगढ़ चातुर्मास (सवत् १९८६)

चरितनायक का विक्रम सवत् १९८६ का चातुर्मास ठाणा ५ से भोपालगढ़ की उस धरा पर हुआ जो स्वनाम

धन्य आचार्य श्री रत्नचन्द जी म.सा. की क्रियोद्धार स्थली रही है। रत्नवंशीय श्रमण-परम्परा के अनुरूप चरितनायक का स्वागत हुआ तथा अत्यंत उल्लासपूर्वक ज्ञान, तप और अध्यात्म की त्रिवेणी मे जनमानस आप्लावित रहा। यहा बालक, युवक, वृद्ध सभी मे अपार उत्साह था। जहाँ एक ओर स्थानीय श्रावक पूरे उत्साह से धर्मध्यान में भाग ले रहे थे, वही निकटवर्ती क्षेत्रो के भक्तजन भी त्याग व तप के साथ अपना योगदान कर रहे थे। श्री पनराजजी बाफना रजलानी, श्री चुन्नीलालजी सेठिया धनारी एव मूलजी विश्नोई बुचेटी ने अठाई तप कर भक्ति का परिचय दिया। दया, पौषध, पंचरगी का ठाट रहा। धर्मज्ञ सुश्रावक श्री जोगीदासजी बाफना एवं कुन्दनमलजी चोरड़िया ने तत्त्वचर्चा मे अच्छा रस लिया। जालमचन्दजी बाफना, गजराजजी ओस्तवाल, घेवरचन्दजी काकरिया आदि कार्यकर्ताओ का सेवा-व्यवस्था मे काफी रस था। श्री जवरी लाल जी काकरिया आदि तरुण धूम्रपान आदि व्यसनों के विरोध मे शिक्षाप्रद संवाद एव नाट्य प्रस्तुत कर अपने उत्साह का परिचय दे रहे थे। भोपालगढ़ के प्रवासी नागरिक श्री विजयराजजी भीकमचन्दजी काकरिया एव श्री लूणकरणजी ओस्तवाल आदि भी बम्बई से आकर सेवा-लाभ ले रहे थे। गच्छीपुरा, बासनी, गारासनी, हरसोलाव, बारनी, नाडसर, हीरादेसर, खागटा आदि आस-पास के क्षेत्रो के दर्शनार्थी भी सन्त-सेवा एव धर्माराधन का लाभ ले रहे थे।

भोपालगढ़ से विहार कर चरितनायक सघ-व्यवस्थापक स्वामी जी श्री सुजानमल जी म.सा. के नेतृत्व मे बारणी, हरसोलाव, खागटा आदि क्षेत्रो को चरणरेणु से पावन करते हुए पीपाड़ नगर पधारे। मुनि श्री लाभचन्द्रजी, लालचन्द्रजी और चौथमल जी भी अजमेर चातुर्मास सम्पन्न कर पीपाड़ पधारे।

चरितनायक हस्तीमुनि के तलस्पर्शी अध्ययन, विनय एव अद्‌भुत प्रतिभा सम्पन्न व्यवहार, आचार निष्ठा आदि गुणो से चतुर्विध सघ सतुष्ट था। आचार्य पद के योग्य सभी ३६ गुणो से उन्हे सुसम्पन्न अनुभव किया जा रहा था - पॉच महाव्रतो एव ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप तथा वीर्य नामक पचाचारो का पालन , पंचेन्द्रिय - विजय, क्रोधादि चार कषायो का परिहार, नववाड़ सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन, पाच-समिति एव तीन गुप्तियो का निरतिचार पालन करने के साथ उनमे अष्टविध सम्पदाए भी परिलक्षित हो रही थी। उन्नीस वर्ष से भी कम वय के चरितनायक मे प्रौढ आचार्य की परिपक्वता दिखाई पड़ती थी। तात्पर्य यह है कि वे आचार्य के योग्य गुणो से सुशोभित एवं सघ सचालन के लिए सर्वथा सक्षम थे।

■

आचार्यपद पर आरोहण

सवत् १९८६ के चातुर्मास के पश्चात् पूज्यश्री रत्नचन्द्र जी महाराज की सम्प्रदाय के सभी सतो और प्रमुख श्रावकों का पीपाड़ नगर में सम्मेलन हुआ। उस समय स्वामीजी श्री सुजानमलजी म.सा. सघ मे सबसे वरिष्ठ एव सघ-व्यवस्थापक सन्त थे। आपके जीवन मे उदारता एव सहयोग की भावना कूट-कूट कर भरी थी। आप चरितनायक से दीक्षा में २६ वर्ष बडे होने पर भी सघ-सेवी और आज्ञाराधक सन्त थे। आपने सन्तों एव प्रमुख श्रावकों के समक्ष अपने विचार रखते हुए फरमाया - "अब समय आ गया है कि हम आचार्य भगवन्त श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. के आदेश का शीघ्र पालन करें। अब हमें पूज्य श्री हस्तीमलजी मसा को आचार्यपद की चादर ओढाकर उऋण हो जाना है।" स्वामीजी महाराज के विचारो को श्रवण कर श्रावको ने 'हर्ष-हर्ष', 'जय-जय' के जयनादो के साथ अपनी सहमति एव प्रसन्नता की अभिव्यक्ति की।

पद-प्राप्ति के लिए ससार मे जहाँ मनमुटाव एव झगड़े देखे जाते है, वहाँ इस धर्म-सघ मे सौहार्द एव प्रमोद का वातावरण था। जोधपुर सघ का अत्यधिक आग्रह रहा कि आचार्यपद महोत्सव का कार्यक्रम धर्मप्राण नगरी जोधपुर मे सानन्द सम्पन्न हो। इस पर स्वामी जी मसा ने अपने सन्त-सतियो व प्रमुख श्रावक-श्राविकाओ से विचार-विमर्श कर जोधपुर सघ को इस महोत्सव हेतु अनुमति प्रदान की, साथ ही सवत् १९८७ की अक्षय तृतीया का पावन दिवस इस समारोह के आयोजन हेतु नियत किया गया। इस सर्वसम्मत निर्णय की खबर वासन्ती हवा की तरह सब ओर फैल गई। पीपाड़ से स्वामीजी श्री सुजानमल जी महाराज तथा अन्यान्य क्षेत्रो मे जहाँ जहाँ जो भी सन्त-सती विराजमान थे, सभी ने जोधपुर की ओर विहार कर दिया।

जोधपुर के प्रमुख कार्यकर्ताओ द्वारा एक 'आचार्य पद महोत्सव समिति' का गठन किया गया। आवश्यक तैयारिया प्रारम्भ कर दी गईं। महोत्सव के अवसर पर एकत्रित होने वाले हजारो अतिथियो के आवास, भोजन आदि की व्यवस्था हेतु स्थान निर्धारण तथा स्वय सेवको के सगठन तैयार किये गए और देश-विदेश के विभिन्न प्रदेशो मे निवास करने वाले रत्नवशी उपासको को इस महोत्सव की सूचना भेजी गई। महोत्सव का स्थल सवाईसिह जी की पोल (सिह पोल) निर्धारित किया गया।

वैशाख के शुक्ल पक्ष के प्रारम्भ होते ही हजारो श्रावक-श्राविकाओ एव श्रद्धालु नर-नारियो का जोधपुर मे आगमन होने लगा। नगर मे सर्वत्र हर्षोल्लास का वातावरण छाया हुआ था। ऐसे ही वातावरण मे अक्षय तृतीया का वह शुभ दिन आ पहुँचा, जिसकी देश-विदेश के रत्नवशीय चतुर्विध सघ के सदस्य उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे।

सूर्योदय के साथ ही रग-बिरगी पोशाको मे सजे सामाजिको और श्रमणोपासकों के समूह सिंहपोल की ओर बढ़ने लगे। देखते ही देखते समारोह-स्थल खचाखच भर गया।

समारोह स्थल मे पाटो पर स्थविर स्वामी जी श्री सुजानमल जी महाराज, बाबाजी श्री भोजराज जी म., मुनि श्री अमरचन्द जी म., मुनि श्री लाभ चन्द्र जी म., मुनि श्री लालचन्द्र जी म., मुनि श्री चौथमल जी म. और लक्ष्मीचन्द जी महाराज विराजमान थे। इन्हीं संत-वृन्द के साथ हमारे चरितनायक अत्यत ही शान्त एवं गंभीर मुद्रा लिये विराज रहे थे।

इस मुनि-मंडल से थोड़ी ही दूर भूमि पर साध्वी समुदाय में से ३५ महासतियाँ विराजमान थी— (१) महासती श्री केसर कंवर जी, (२) सुगन कवर जी (किशनगढ़), (३) तेजाजी, (४) छोटा राधा जी, (५) सज्जनकंवर जी (ओसियां), (६) किशनाजी, (७) नैनाजी (भोपालगढ़), (८) छोगाजी, (९) केवल जी, (१०) सुन्दर कंवर जी, (११) इन्दर कंवर जी, (१२) दीप कवर जी, (१३) भीम कवर जी, (१४) चुन्ना जी, (१५) इचरज कवर जी, (१६) धनकवरजी (बड़े), (१७) हरखकवरजी, (१८) किशनाजी (१९) धूला जी, (२०) रत्न कंवर जी, (२१) चैन कवर जी, (२२) चरित नायक की ससार पक्षीय माताश्री रूप कवर जी, (२३) अमर कंवर जी, (२४) सुगन कंवर जी (डागावाला), (२५) केवल जी, (२६) लाल कवर जी, (२७) अनोप कवर जी, (२८) गोगा जी, (२९) छोटा छोगा जी, (३०) फतहकवर जी, (३१) बख्तावर कवर जी, (३२) धनकवर जी (छोटे) (३३) हुलासकवर जी, (३४) सुवा जी और (३५) मैनाजी महाराज। ।

पीपाड़ में स्थिरवास की हुई पानकवर जी, खम्माजी, सुन्दर कवर जी, प्यारा जी और अजमेर मे स्थिरवास रूप मे विराजित बड़ा राधा जी, राजकवर जी और झमकूजी ये सात महासती जी महाराज इस महोत्सव मे अपनी वृद्धावस्था के कारण उपस्थित नही हो सके।

सिंहपोल के प्रागण मे कही तिल धरने को जगह नही थी, तथापि उपस्थित विशाल जनसमूह पूर्णत अनुशासित एव शान्त था। सभी की दृष्टि चरितनायक के तेजस्वी मुखमंडल पर टिकी हुई थी। महिलाए माताजी महाराज रूपकवर जी के भाग्य की सराहना मे उनकी कोख को लाख-लाख धन्यवाद देती कह रही थी कि माता हो तो रूपकवर जैसी, जिन्होने हस्ती जैसे बालक को जन्म देकर अपने पूरे कुल का नाम रोशन किया। उनके मुखमडल पर अथाह शान्ति और सतोष का अखड साम्राज्य व्याप्त था।

जोधपुर के जाने-माने मुसद्दियो और श्रेष्ठियो के मार्ग-दर्शन मे सिहपोल का महोत्सव-स्थल धर्म प्रभावना का भव्य एव विराट् रूप लिये सबके आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। चरितनायक हस्तीमलजी महाराज अपनी बालवय मे भी तारामडल से घिरे नीलगगन मे पूर्ण चन्द्र के समान सुशोभित हो रहे थे। मात्र १९ वर्ष, तीन मास और उन्नीस दिन की ही तो उम्र थी। लगभग यह उम्र 'कलिकाल सर्वज्ञ' विरुदधारी हेमचन्द्र सूरि (ईसवीय १२वी शताब्दी) के आचार्य बनने की रही, मगर उसके बाद जैन इतिहास मे सम्भवत यह पहला ही अवसर था जबकि बीस वर्ष से कम उम्र के किशोर श्रमण को एक बहुप्रतिष्ठित सघ के गौरवपूर्ण (आचार्य) पद पर अधिष्ठित किया जा रहा हो।

सम्मोहक स्वागत गीतिकाओ और जन-जन के मन को आनदित करने वाले अभिनदन मय काव्यपाठ के साथ महोत्सव की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। तदनन्तर रत्नवशीय चतुर्विध सघ के व्यवस्थापक स्थविर पद विभूषित स्वामी जी श्री सुजान मल जी महाराज ने सर्वप्रथम भाव विभोर हो सिद्ध भगवान की मगल स्तुति प्रारम्भ की-

अविनाशी अविकार, परम रसधाम है।
समाधान सर्वज्ञ, सहज अभिराम है।
शुद्धबुद्ध अविरुद्ध, अनादि अनंत है।
जगत् शिरोमणि, सिद्ध सदा जयवन्त है... सदा जयवन्त है।

और कहा - "तपःपूत सन्त-सती वृंद एव श्रावक-श्राविका वर्ग! आज का यह आचार्यपद महोत्सव का मगलमय दिवस हमारे चतुर्विध सघ के लिए अगाध आनंदप्रदायी दिवस है। यशस्विनी रत्नवशीय- परम्परा के षष्ठ पट्टधर स्वनामधन्य प्रात स्मरणीय श्रद्धेय आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज को स्वर्गस्थ हुए आज ३ वर्ष ९ मास और ३ दिन पूरे होने जा रहे है। उन्होने स्वर्गस्थ होने से कतिपय मास पूर्व ही हमारे बीच विराजमान मुनिश्री

हस्तीमल जी म. को उस समय लघुवयस्क होने पर भी होनहार और आचार्य पद के योग्य समझकर अपने उत्तराधिकारी आचार्य के रूप मे मनोनीत कर अभिप्राय पत्र लिखवा दिया था।

यह वही नगर है जहाँ वि स १९८३ की श्रावणी अमावस्या को आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. ने पेटी के नोहरे मे स्वर्गारोहण किया। उस समय हस्तीमल जी म.सा की अवस्था १६ वर्ष से भी कम मात्र १५ वर्ष ६ मास और १६ दिन की थी। आचार्य श्री की इच्छा और उनके द्वारा किये गये मनोनयन के अनुसार जब आचार्य पद की चादर प्रदान की बात सघ के समक्ष आई तो उस समय स्वय श्री हस्तीमल जी म. ने अपने अध्ययन को सम्पन्न करने के लिए समय मागा, पडित श्री दु.खमोचन जी झा ने भी वर्ष डेढ़ वर्ष तक अध्ययन आवश्यक बताया था। चतुर्विध सघ ने मुनि श्री की दूरदर्शिता और श्लाघनीय विवेकपूर्ण इच्छा को बहुमान देकर इन्हे अध्ययन का अवसर दिया और सघ सचालन की व्यवस्था का दायित्व मुझे सौंपा। मुनि श्री हस्तीमल जी महाराज अपना अध्ययन सम्पन्न कर सुयोग्य विद्वान् बन गये है। इनके सर्व विदित विनय, विवेक, वाग्वैभव, प्रत्युत्पन्नमतित्व, विलक्षण प्रतिभा, कुशाग्र बुद्धि, क्रियापात्रता, अथक श्रमशीलता, कर्तव्यनिष्ठा, मार्दव, आर्जव, निरभिमानता आदि गुणो पर हम सबको गर्व है। ये सुयोग्य आचार्य के आवश्यक सभी गुणो से सम्पन्न हैं। आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी मसा. के द्वारा कृत इस मनोनयन की अन्तर्मन से श्लाघा करते हुए उनकी अन्तिम इच्छा को मूर्त रूप देने मे हम अनिर्वचनीय आनद का अनुभव कर रहे है। आज हम सब इन्हे आचार्यश्री रत्नचन्द्र जी महाराज की सम्प्रदाय के सातवे पट्टधर के रूप मे आचार्यपद पर प्रतिष्ठित करते है। चतुर्विध सघ अब इनकी आज्ञा मे रहकर ज्ञान दर्शन चारित्र की अभिवृद्धि करे। सर्वथा सुयोग्य मुनिवर को अपने आचार्य के रूप मे पाकर हम सब अपने आपको सौभाग्यशाली मानते है और कामना करते है कि आप शतायु हो। सुदीर्घकाल तक सघ को अभ्युदय, उत्थान और उत्कर्ष के पथ पर अग्रसर करते रहे। हस्तीमल जी मसा. वय से भले छोटे है, किन्तु गुणो एव पद से बहुत बड़े है। मुझे भी आपकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करना है और आप सब सन्त-सतियो तथा श्रावक-श्राविकाओ को भी ऐसा ही करना है। इस गरिमामय सघके सचालन का दायित्व मै आज श्री हस्तीमल जी मसा. को सौंपते हुए अत्यन्त हर्षानुभव कर रहा हूँ। वे युगो युगो तक चतुर्विध सघ का कल्याण एव मार्गदर्शन करे।"

इस प्रकार आशीर्वचन के साथ स्थविर श्री सुजानमल जी महाराज और स्वामीजी श्री भोजराज जी महाराज आदि वयोवृद्ध सन्तो ने गरिमापूर्ण एव महिमामडित धवलवर्णा आचार्यश्री शोभाचन्द्रजी म.सा. की सुरक्षित रखी पूज्य पछेवड़ी मुनिवर श्री हस्तीमल जी म के वृषभतुल्य सबल समर्थ स्कन्धो पर ओढाई और 'नमो आयरियाण' का सुमधुर समवेत घोष उद्घोषित करते हुए उन्हे विधिवत् आचार्य पद पर अधिष्ठित किया। आचार्य पद की चादर को ओढ़ने के साथ ही मुनि श्री हस्तीमल जी 'आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज' के रूप में संघ के जनगण-मन अधिनायक हो गये। सिंहपोल का सारा सभा-मडप भगवान महावीर, आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म., आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म एव सप्तम पट्टधर आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज की जय जयकार से गुञ्जित हो उठा।

रत्नवश के सप्तम आचार्यपद पर अधिष्ठित महामनस्वी पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज ने अपनी भावाभिव्यक्ति मे आभार प्रकट करते हुए फरमाया-

"आज इस वेला मे चतुर्विध सघ ने श्रद्धा व समर्पण की प्रतीक यह चादर ओढाकर मुझे परम उपकारी महनीय गुरुदेव द्वारा सौंपे गए दायित्व निर्वहन का आदेश दिया है। परम पूज्य गुरुदेव की आज्ञा व संघ की अपेक्षाओ पर खरा उतर सकूँ इस क्षण से मेरा यही उत्तरदायित्व होगा। तीर्थेश श्रमण भगवान महावीर द्वारा

संस्थापित धर्म-संघ की पूर्वाचार्यों द्वारा संरक्षित इस यशस्विनी रत्नसंघ परम्परा की मर्यादाओ को अक्षुण्ण बनाये रखने एवं इसकी गौरव अभिवृद्धि हेतु प्रयासरत रहने का मैं सकल्प करता हूँ। इसमें सभी बड़े महापुरुषों श्रद्धेय स्वामीजी श्री सुजानमलजी म.सा., श्री भोजराज जी म.सा., श्री अमरचन्दजी म.सा., श्री लाभचन्द जी म.सा. आदि का सहज स्नेह तो मुझे प्राप्त ही है। मै इन्ही पूज्य सन्तो तथा बड़ी सतियो के सहयोग से इस गरिमामय पद को निभाने मे सक्षम बन सकूँगा। परम पूज्य स्वामीजी श्री सुजानमल जी म.सा. ने मेरे अध्ययनकाल मे सघ-सचालन के साथ ही मेरे सरक्षण व संघ की सारणा-वारणा का जो महत्त्वपूर्ण योगदान किया है वह गौरवशाली रत्नपरम्परा के इतिहास का स्वर्णिम अध्याय है। चतुर्विध सघ के सभी अग साधु, साध्वी, श्रावक एव श्राविका उत्तरदायित्व निर्वहन व शासन-सचालन मे मुझे पूर्ण सहयोग देगे, ऐसी अपेक्षा है। यह चादर जो आपने मुझे ओढायी है, वह सघ-सगठन, परस्पर-मैत्री, समन्वय व श्रद्धा-समर्पण की प्रतीक है। चादर में ताना बाना जिस तरह परस्पर जुड़े हैं, वैसे ही हमारा सघ गुण-वीथिका मे ग्रथित रहकर ज्ञान-दर्शन-चारित्र की वृद्धि करते हुए जिन शासन की जाहो जलाली मे सलग्न रहे। मैं विश्वासपूर्वक चतुर्विध संघ को आश्वस्त करता हूँ कि मैं अपनी पूर्ण शक्ति एव योग्यता के साथ संघ के प्रति समर्पित रहूँगा और आपके सहकार से पचाचार एव रत्नत्रय की निर्विघ्न साधना मे हम निरन्तर आगे बढते रहेगे।"

इस अवसर पर संघ द्वारा लब्धप्रतिष्ठ मैथिल ब्राह्मण पण्डित श्री दु खमोचन जी झा का विशेष सम्मान के साथ हार्दिक अभिनन्दन किया गया। प झा से चरितनायक, मुनि श्री चौथमल जी महाराज एव मुनि श्री लक्ष्मीचन्द जी ने विक्रम सवत् १९८० से १९८६ के मध्य सस्कृत, प्राकृत एव हिन्दी भाषा तथा विविध ग्रन्थो का अध्ययन कर तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त किया था। प श्री झा के कौशल और अथक श्रम की चतुर्विध सघ ने मुक्तकठ से प्रशसा की।

जौहरी भाई दुर्लभजी द्वारा आचार्य पद का महत्त्व बताकर गुणगान करने के बाद भडारी दौलतरूप चन्दजी, भण्डारी गुमानमलजी ने मगलमय गीतिकाओ से स्तुति की। समारोह सक्षिप्त एव आडम्बर रहित होने के साथ सघ मे नवचेतना, उमग व उत्साह के सचार मे समर्थ था। सबके मुखमण्डल की आभा से प्रमोद का उद्घोष हो रहा था। समारोह को सफल बनाने मे जोधपुर सघ के प्रमुख श्रावकगण श्री नवरत्नमल जी भाण्डावत, श्री शम्भुनाथ जी मोदी, श्री चन्दनमलजी मुथा, श्री छोटमलजी डोसी, श्री नाहरमलजी पारख, श्री धूलचन्दजी रेड, श्री चाँदमल जी सुराणा एव युवारत्न श्री विजयमल जी कुम्भट, श्री सुमेरमल जी भण्डारी आदि की उल्लेखनीय भूमिका रही। समारोह में सभी सम्प्रदायो का पूरा-पूरा सहयोग था।

• आचार्य पद के दायित्व का बोध

अब चरितनायक पूज्य हस्ती के स्कन्धो पर चतुर्विध सघ के सचालन का महान् दायित्व आ गया था, जो उन्हें अपने आन्तरिक व्यक्तित्व एव चेतना को और अधिक ऊर्जावान बनाने की प्रेरणा कर रहा था। अन्तःकरण में चिन्तन की धाराएँ प्रस्फुटित हो रही थी। विवेक उन्हे सम्यक् राह दिखा रहा था। भावी स्वत: ही सफलीभूत होने के लिए तत्पर दिखाई पड़ रहा था। आचार्य श्री हस्ती मुख से कुछ न बोलकर भी चेहरे से अपने ओजस्वी भाव प्रकट कर रहे थे। वे शान्त, किन्तु गम्भीर मुद्रा मे चिन्तनमग्न होकर भावी की रेखाओ का निर्माण सोच रहे थे।

आचार्य पद पर सघ द्वारा अभिषिक्त रत्नवश के सप्तम पट्टधर बाल ब्रह्मचारी श्री हस्तीमल जी महाराज की सेवा मे इस अवसर पर अनेक नगरो एव ग्रामो के श्रीसघो ने वि.स. १९८७ का चातुर्मासावास अपने यहाँ करने की भावभरी विनतिया की। वयोवृद्ध सन्तों से परामर्श कर जयपुर सघ द्वारा की गई विनति को संघहित मे प्राथमिकता

प्रदान कर आचार्य श्री हस्ती ने यह चातुर्मास जयपुर मे करने की साधुभाषा मे स्वीकृति प्रदान की। आचार्य पद-महोत्सव के अनन्तर जोधपुर श्री सघ की भावभरी विनति को ध्यान मे रखते हुए आचार्यश्री का अपने सन्तवृन्द के साथ कतिपय दिनो के लिए जोधपुर मे ही विराजना रहा। पूर्व आचार्यश्री शोभाचन्द्र जी म.की रुग्णावस्था और स्थिरवासकाल मे आपश्री वि.स १९७९ से १९८३ के चातुर्मास काल तक जोधपुर नगर में विराजमान रहे थे। इस कारण जोधपुर संघ के आबाल-वृद्ध सभी आपके व्यक्तित्व से भली-भाति प्रभावित थे। इस बार आपको अपने श्रद्धालु उपासको के साथ ज्ञानचर्चा, शका-समाधान, मार्गदर्शन, सघसचालन सम्बधी उत्तरदायित्व के कारण नगरवासियो से पूर्वापेक्षा अधिक निकट सम्पर्क मे आना पड़ा। सम्पर्क मे आने वाले प्रत्येक व्यक्ति से उसके आध्यात्मिक कार्यकलापो का पूरी तरह से लेखा-जोखा लेने और उसे सुपथ पर अग्रसर होते रहने की प्रेरणा देने की प्रवृत्ति सबको लुभाने लगी, फलत. जन-जन के मन मे आपके प्रति बहुमान एव श्रद्धा बढ़ने लगी। अपनी अप्रतिम स्मरण-शक्ति के लिए तो आप बाल्यकाल से ही प्रसिद्ध रहे। एक बार जिसे देख लिया उसे जीवन भर न भूलना आपकी स्मरण-शक्ति का अद्भुत चमत्कार था।

आचार्य पद महोत्सव के दिन सायकालीन प्रतिक्रमण आदि आवश्यको से निवृत्त होकर स्वाध्याय-ध्यानादि के पश्चात् जब सोने के लिए पाट पर लेटे तो बड़ी देर तक आपको निद्रा नही आई। निद्रा नही आने के कारण के सम्बध मे विचार करने पर आपको अनुभव होने लगा कि आप पर सघ-निर्माण का बहुत बड़ा दायित्व आ गया है। आप तत्काल उठ बैठे और मन ही मन अपने आत्मदेव से कहने लगे—"अब पहले की भाति सोना कहाँ! अब तो मुझे आज से ही उन सब कार्यकलापो की एक सर्वागपूर्ण रूपरेखा तैयार करनी होगी, जिनके निष्पादन से श्रमण भगवान महावीर का यह धर्मसघ और अधिक उत्कर्ष की ओर अग्रसर हो सके।" फलस्वरूप आपने समय-समय पर एतद्विषयक चिन्तन करने का दृढ़ सकल्प किया। यही कारण था कि आगे चलकर सघहित के अनेक कार्य पूज्य गुरुदेव द्वारा सम्पन्न हुए।

दूसरे दिन प्रात:काल वयोवृद्ध सन्तो के अनुरोध पर आपने श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ के विशाल समूह के समक्ष प्रवचन किया। चतुर्विध सघ ने आपकी प्रवचन शैली की मुक्तकण्ठ से प्रशसा की। वयोवृद्ध सन्तो एव सती-वृन्द के हर्ष का पारावार न रहा। आपश्री के आचार्यपद महोत्सव के समय जो ३५ सतिया उपस्थित थी, उनमे आपकी माताजी महाराज श्रीरूपकवर जी भी थी। सभी तपपूता साध्वियों ने व्याख्यान के अनन्तर अपने आचार्यदेव को वन्दन-नमन कर आपश्री का वर्द्धापन किया।

- साध्वी माँ से सवाद

सभी सतियो ने माताजी महाराज श्री रूपकवर जी को रत्नवश परम्परा के नवोदित ज्ञानसूर्य आचार्यश्री से बात करने का आग्रहपूर्ण अनुरोध किया। बड़ी देर तक सतीजी श्री रूपकवर जी मौन खड़ी रही। अन्त मे अपनी गुरुणी महासतीजी श्री बड़े धनकवर जी के आदेश को शिरोधार्य कर आचार्यश्री के समक्ष अपने श्रद्धासागर का उड़ेल दिया। दोनो के बीच का यह वार्तालाप उल्लेखनीय है—

सती श्री रूपकवर जी-'आचार्यदेव! आपके सुखसाता है?'

आचार्य श्री- "धरित्रीतुल्य धैर्यमूर्ति की गोद मे पले प्राणी को अमगल कभी भी छू नही सकता। गुरुदेव के प्रताप से और आप सबके सद्भावनापूर्ण स्नेह से आनंद मंगल है।"

सतीश्री रूपकंवर जी-"ज्ञान सूर्य ! आपके व्याख्यान को सुनकर तो कृतकृत्य हो गई।"

आचार्यश्री-"मूल देन तो आप ही की है।"

सासारिक पक्ष की दृष्टि से माता और पुत्र, किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से आचार्य और आज्ञानुवर्तिनी साध्वीजी के इस सक्षिप्त पर सारगर्भित सवाद को सुनकर सभी ने अनिर्वचनीय आनद की अनुभूति की।

हर्षविभोर महासती छोगांजी ने कहा-"सूर्य तो सदा प्राची से ही प्रकट होता है।"

आचार्यश्री-"महासतीजी। प्राची की यह विशेषता भी भुलाई नही जा सकती कि सूर्य को प्रकट कर प्राची उसे केवल अपनी ममता तक ही सीमित नही रखती। उसे सभी दिशाओ-विदिशाओ को धर्मपुत्र के रूप मे गोद दे देती है।" इस पर पूरा सतीवृन्द श्रद्धाभिभूत हो समवेत स्वरो मे उमड़ पड़ा-"भगवन् ! आपका फरमाना शत प्रतिशत सत्य तथ्य है। धन्य है प्राची, धन्य है प्राची का सूर्य और धन्य है रत्नवशीय चतुर्विध सघ, जिसे प्राची और सूर्य दोनो ही नवजीवन प्रदान कर रहे है।"

• रत्नवश के आचार्यों की विशेषता

रत्नवश परम्परा की प्रारम्भ से ही यह विशेषता रही कि उसमे जितने भी आचार्य हुए, वे सब लघुवय मे दीक्षित बाल ब्रह्मचारी सन्तरत्न थे। चरितनायक आचार्य श्री ने उन सभी का स्मरण किया। प्रसगवशात् पूर्वाचार्यो के जन्म एव दीक्षा का उल्लेख किया जा रहा है–

१ बाल ब्रह्मचारी आचार्य श्री गुमानचन्द जी महाराज का जन्म विक्रम सवत् १८०८ मे हुआ और वे १० वर्ष की वय मे विक्रम सवत् १८१८ मार्गशीर्ष शुक्ला ११ को श्रमणधर्म मे दीक्षित हुए।

२ बाल ब्रह्मचारी आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी महाराज का जन्म विस १८३४ मे वैशाख शुक्ला ५ को हुआ और १४ वर्ष की वय होते-होते वे विस १८४८ वैशाख शुक्ला ५ को दीक्षित हुए।

३. बाल ब्रह्मचारी आचार्यश्री हमीरमल जी महाराज का जन्म विस १८५२ मे हुआ और वे १० वर्ष की वय मे वि.स १८६२ फाल्गुन शुक्ला ७ को दीक्षित हुए।

४. बाल ब्रह्मचारी आचार्य श्री कजोडीमल जी महाराज का जन्म वि.स १८७५ मे हुआ और १२ वर्ष की वय मे प्रवेश करते-करते विस १८८७ माघशुक्ला ७ को दीक्षित हुए।

५ बाल ब्रह्मचारी आचार्य श्री विनयचन्द्र जी महाराज का जन्म विस १८९७ मे आश्विनशुक्ला १४ को हुआ और वे विस १९१२ मे मार्गशीर्ष कृष्णा २ को १५ वर्ष की वय मे दीक्षित हुए।

६ बाल ब्रह्मचारी आचार्यश्री शोभाचन्द्र जी महाराज का जन्म वि.स. १९१४ में कार्तिक शुक्ला ५ को हुआ और वे १३ वर्ष की वय मे ही विस१९२७ मे माघ शुक्ला ५ को दीक्षित हुए।

चरितनायक बाल ब्रह्मचारी आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज का जन्म विसं १९६७ की पौष शुक्ला चतुर्दशी के दिन हुआ। आप १० वर्ष और १८ दिन की लघु वय मे ही विक्रम संवत् १९७७ की माघ शुक्ला दूज के दिन श्रमण धर्म मे दीक्षित हुए।

रत्नवंश सम्प्रदाय

पूज्य श्री धर्मदासजी म.

↓

पूज्य श्री धन्नाजी म.

↓

पूज्य श्री भूधर जी म.

पूज्य श्री रघुनाथ जी म.सा. | पूज्य श्री जयमलजी म.सा. | पूज्य श्री जेतसी जी

↓

रत्न वंश के मूल पुरुष पूज्य श्री कुशल चन्द्र जी (कुशलोजी म.सा.) (वि.सं. १७९४ से वि.सं. १८४० तक)

(पूज्य श्री दुर्गादास जी म.सा को विद्यमानता मे पूज्य श्री रत्न चन्द जी म सा. ने शासन सभालते हुए भी (विक्रम सवत् १८५८ से १८८२ तक) पूज्य पद स्वीकार नही किया।

↓

प्रथम पट्टधर पूज्य श्री गुमानचन्दजी म.सा. (संवत् १८४० से१८५८ कार्तिक शुक्ला अष्टमी)

↓

द्वितीय पट्टधर पूज्य श्री रत्नचन्द्रजी म.सा. (मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी १८८२ से ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी १९०२)

↓

तृतीय पट्टधर पूज्य श्री हमीर मलजी म.सा. (१९०२ के आषाढ़ कृष्णा १३ से कार्तिक कृष्णा १ सवत् १९१०)

↓

चतुर्थ पट्टधर पूज्य श्री कजोडीमलजी म. (माघ शुक्ला ५ सवत् १९१० से वैशाख शुक्ला तीज सवत् १९३६)

↓

पंचम पट्टधर पूज्य श्री विनयचन्द्रजी म.सा. (ज्येष्ठ कृष्णा ५ संवत् १९३७ से मार्गशीर्ष कृष्णा १२ संवत् १९७२)

↓

षष्ठ पट्टधर पूज्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. (फाल्गुन कृष्णा ८ सवत् १९७२ से श्रावण कृष्णा अमावस्या संवत् १९८३)

↓

सप्तम पट्टधर पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. (चरितनायक) (अक्षयतृतीया वैशाख सुदी ३ वि सं १९८७ से वैशाख शुक्ला ८ संवत् २०४८)

↓

अष्टम पट्टधर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. (ज्येष्ठ कृष्णा ५ संवत् २०४८ से निरन्तर)

संघनायक के विहार और चातुर्मास

जैन सन्तो की विहारचर्या और वर्षावास उनके सयममय जीवन के अनिवार्य अग हैं। यह प्रश्न स्वाभाविक है कि विहार क्यो ? सयम की साधना का अनिवार्य सूत्र है—अनासक्ति। शास्त्रसम्मत अवधि से अधिक एक स्थान पर रहना साधु को नही कल्पता। यदि वह एक ही स्थान पर उन्ही लोगो के साथ अधिक काल तक रहे तो कदाचित् वहा के लोगों से पारस्परिक आसक्ति होना सम्भव है, जबकि धर्म आसक्ति को तोड़ने के लिए है, उसे जन्म देने के लिए नही। अत भगवान महावीर के द्वारा साधु-साध्वी की चर्या मे विहार को आवश्यक बताया गया है। इसके लिए एक लौकिक कथन भी है—

"बहता पानी निर्मला, पड़ा गंदला होय।"
साधु तो रमता भला, दागे न लागे कोई॥

सम्पूर्ण राजस्थान आपके विचरण-विहार का प्रमुख केन्द्र रहा। साथ ही आपने अपने जीवनकाल मे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र , आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा एव गुजरात प्रान्तों के सहस्रो ग्राम-नगरों मे जिनशासन की अद्‌भुत प्रभावना की।

विहार का दूसरा उद्देश्य जन-जन का कल्याण है। श्रमण-श्रमणी को जो ज्ञान और क्रिया की साधना प्राप्त है, उसका लाभ वे जन-जन मे पहुँचाते है। ससार मे योगियो को जो कुछ प्राप्त है, उसे वे करुणा, अनुकम्पा और मैत्रीभाव से वितरण करते है। आचार्य श्री ऐसी भागीरथी थे जिन्होने अपने विहारकाल एव विभिन्न चातुर्मासो मे जन-जन की अध्यात्म-तृषा को तृप्त करने के लिए उन्हे सामायिक और स्वाध्याय के प्रवाह से जोड़ा। आचार्य श्री का फरमाना था कि जिस प्रकार शरीर की पुष्टि के लिए व्यायाम आवश्यक है उसी प्रकार मन को स्वस्थ बनाने के लिए सामायिक उपयोगी है। आत्म-स्थित कषायो की विजय का यह प्रथम सोपान है। व्यक्ति स्वय का जीवन तो इसके माध्यम से निर्मल एवं व्यवस्थित बनाता ही है, साथ ही उसके परिवार और समाज के साथ भी सम्बंध सुधरते हैं। आचार्यप्रवर ने दूसरा शखनाद स्वाध्याय का फूंका। जैन समाज में इससे पूर्व स्वाध्याय की बहुत ही क्षीण परम्परा रही है जिसे अपने प्रवचनामृतो से चरितनायक ने पुनरुज्जीवित किया। गुरुदेव का फरमाना था कि स्वाध्याय के बिना जीवन को प्रकाश नही मिलता। स्वाध्याय से जीवन की अधिकांश समस्याओ का निराकरण स्वत हो जाता है और व्यक्ति को सही समझ और सम्यक् दिशा मिलती है। आचार्य श्री का बल जीवन उन्नायक शास्त्रों और सत्साहित्य के अध्ययन-मनन पर था। विकृति उत्पन्न करने वाले उपन्यासों और कथाओ से वे सदैव बचने के लिए प्रेरित करते रहे। आचार्य श्री के समक्ष जो कोई भी उपस्थित होता, उसे वे न्यूनातिन्यून पन्द्रह मिनट का स्वाध्याय करने का नियम दिलाया करते थे। उन्हें लगता था कि कोई मेरे समीप अध्यात्म की प्यास और जीवन की समस्या को लेकर उपस्थित हुआ है तो उसका निराकरण करना मेरा दायित्व है । इसके लिए वे स्वाध्याय और सामायिक को औषधि के रूप में प्रदान कर प्रमुदित होते थे। यह सत्य है कि जिसने भी इन दोनों साधनो को नियमित रूप से पूर्ण श्रद्धा के साथ अपनाया है उसे अपने जीवन में तेजस्विता एवं शान्ति की प्राप्ति हुई है।

भारतीय भूभाग के सहस्राधिक ग्रामानुग्रामों मे विहार करते हुए आपने सहस्रों नरनारियो को सामायिक और

स्वाध्याय की सीख देकर जनकल्याण का महनीय कार्य किया।

जनकल्याण की भावना से ही आचार्य प्रवर ने अनेकविध प्रत्याख्यानो का प्रसाद प्रवासकाल मे जन-जन को वितरित किया। गुरुदेव का यह स्वभाव था कि वे जिसकी जो पात्रता होती थी, तदनुरूप ही उसे दोष- प्रत्याख्यान (त्याग) के लिए प्रेरित करते। इस क्रम मे उन्होंने सहस्रो व्यक्तियों को शिकार, जुआ, मद्य, मास, तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट आदि का त्याग करा कर उनके जीवन को उन्नत बनाया। इससे जैन और अजैन सभी जातियो के परिवार लाभान्वित हुए। इनमे हरिजन परिवारो से लेकर ठाकुर परिवारो के सदस्य भी सम्मिलित थे।

आचार्य श्री को जब यह ज्ञात हो जाता कि अमुक व्यक्ति मे अमुक प्रकार का व्यसन है तो वे अवसर देखकर उस व्यक्ति मे त्याग की ऐसी भावना जागृत करते कि व्यक्ति स्वय हाथ जोड़कर प्रत्याख्यान स्वीकार करने के लिए तत्पर हो जाता। प्राय चेहरा देखकर ही वे व्यक्ति के व्यसनो और दुर्गुणो का अनुमान कर लेते थे। क्रोधी और अभिमानी व्यक्ति के स्वभाव को पहचानकर वे बड़े दुलार के साथ उसके इन विकारो को कम करने का उपाय सुझाते थे। जब उन्हे यह विदित होता कि अमुक व्यक्ति रिश्वत, अनीति और अनुचित साधनो से धन उपार्जन करता है तो वे उसे भी प्रेमपूर्वक समझाकर नीति मार्ग पर लाने का प्रयास करते थे। ऐसे अनेक उदाहरण है कि कई व्यक्तियो ने आचार्य श्री के समक्ष रिश्वत न लेने का सकल्प किया। इसी प्रकार कई व्यापारियो और उद्योगपतियो ने आत्म-शान्ति के लिए परिग्रह-परिमाण व्रत को अगीकार कर प्राप्त धनराशि का कुछ अश कल्याणकारी प्रवृत्तियो मे लगाने का सकल्प किया। गुरुदेव का लक्ष्य व्यक्ति का आतरिक परिवर्तन करना रहा।

अधिकाधिक लोगो का हित हो सके, इस दृष्टि से आचार्य श्री ग्रामानुग्राम विचरण करने मे तत्परता बरतते थे। विहार मे जन-जन को आचार्यश्री के प्रत्यक्ष दर्शनो का लाभ प्राप्त होता था और साक्षात् सयममूर्ति के द्वारा जब कोई प्रेरणा की जाती, तो निश्चय ही वह दर्शक और श्रोता समुदाय पर प्रभाव छोड़ती और वे श्रोता-दर्शक जन अपने आपको धन्य समझ कर गुरुदेव के श्रीमुख से सुनी हुई बात पर अमल करने का प्रयास करते। इस दृष्टि से आचार्य श्री के व्यापक विहार अत्यत उपयोगी रहे।

विचरण एव विहारकाल मे ही जन-जन द्वारा निर्दोष साधुजीवन चर्या को देखने और परिग्रह शून्य साधु -जीवन के आनद को आत्मसात् करने, समझने, जानने का सुअवसर प्राप्त होता है। अनुकरण करना, व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक गुण है और उससे प्रेरित हो साधुजन के सम्पर्क से योग्य पात्र मे वैराग्य की जागृति भी सम्भव होती है। इस प्रकार वैराग्य भाव का प्रसार भी विहार चर्या का प्रतिफल है।

आचार्य श्री ने विहार के कष्टो की परवाह किए बिना अनुकूल और प्रतिकूल परीषहो को अनदेखा कर ककरीले कण्टकाकीर्ण दुर्गम विषम मार्गों पर मौसम के प्रभावो से विचलित न होते हुए 'साधु तो रमता भला' लोकोक्ति को चरितार्थ किया। मार्ग मे बिवाइया फट जाती, आहार-पानी प्राप्ति में अनेक बाधाए आती, भूख-प्यास परीषह, सर्दी-गर्मी सभी मे समभाव से रहते। कई राते पेड़ो के नीचे बरामदे या तबेलों मे टूटी-फूटी हवेलियो मे भी बितानी पड़ी, किन्तु आपश्री का लक्ष्य अपनी सयमयात्रा को दोषमुक्त रखते हुए अधिकाधिक लोगो को महावीर का सदेश सुनाकर उस पर आचरण से जीवन को उन्नत कराना था। सयम, सामायिक और स्वाध्याय से जन-जन को उन्नत पथ पर अग्रसर करते और उनसे कहते कि इससे तुम्हारा दुख दूर हो जाएगा –

जीवन उन्नत करना चाहो तो सामायिक साधन कर लो।
आकुलता से बचना चाहो तो सामायिक साधन कर लो॥

आचार्य श्री का जहाँ-जहाँ विहार होता, हर गली, हर डगर पर ग्राम हो या नगर यह नारा गूजता—

गुरु हस्ती के दो फरमान -
सामायिक स्वाध्याय महान।

सन्तो को देखकर कई नये गावो मे ग्रामीण बन्धु, जाट, गुर्जर, अहीर विश्नोई, माली जैसे खेतिहर लोग सन्तों को मुँहपत्ती बाधे देख उनके वेश-परिधान पर आश्चर्य व्यक्त करते, पर जैसे ही गुरुदेव के सम्पर्क मे आकर उन्हे सच्चे धर्म का रग चढता तो वे सन्तो की सेवा मे लग जाते और आगे से आगे जाकर सन्तो का परिचय कराते।

गुरुदेव के कदम जिस रफ्तार से मार्ग तय करते थे, उससे सहस्रगुणी गतिशीलता (तीव्र गति) से उनका चिन्तन अध्यात्म की ऊँचाइयो को छूता था। उन सरीखा अप्रमत्त जीवन उनका ही था। एक क्षण भी प्रमाद में नही गवाते थे। अध्ययन-मनन, वाचन, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग उनके जीवन की धुरी बन गए और परिधि मे था जनहित।

विहार काल और चातुर्मास प्रवास मे आपका सम्पर्क अनेक सम्प्रदायगत यतियों, सन्यासियो, सतो, साधुओ, आचार्यों आदि से हुआ। परस्पर सौहार्द का स्रोत प्रवाहित हुआ। धर्म और समाज के उन्नायक विषयों पर घटों वार्तालाप हुआ। मन-मुटाव के प्रसंगो का प्रक्षालन हुआ। शास्त्रज्ञान के सवर्धन के उपायो पर विचार-विमर्श हुए। पाण्डुलिपियो अथवा जीर्ण-शीर्ण अवस्था मे पड़े ज्ञान के सचित कोश के भण्डारण और उपयोग का लक्ष्य साधा गया। काल और परिस्थितियो के प्रभाववश शिथिल होते श्रमणाचार और श्रावकाचार की सुदृढ़ समाचारी के लिए दृढ़तापूर्वक नेतृत्व कर आचार्य श्री ने सत्पथ प्रवर्तन किया। सत्ता, सम्पत्ति और शरीर की क्षणभगुरता का दिग्दर्शन कराकर सयम मय जीवन यात्रा का पथ प्रशस्त किया।

विचरण-विहार एव वर्षावास के दौरान जहाँ भी गुरुदेव के चरण पड़े, उसे उन्होने अपना क्षेत्र समझा और वहाँ के लोगो ने भी उनकी चरणरज से अपने क्षेत्र को पावन एव अपने आपको धन्य समझा। सम्प्रदाय विशेष के आचार्य होते हुए भी सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद एव तेरे-मेरे की परिधि से वे सदैव परे रहे। वे स्वय फरमाया करते थे—"जब तक इस सफेद चदरिया मे दाग नही है, तब तक हर क्षेत्र एव हर श्रावक हमारा अपना है।" चरितनायक ने जिनशासन की सेवा को मुख्य लक्ष्य बनाया। सम्प्रदाय के आचार्य पद को उन्होंने पूज्य गुरुदेव द्वारा सौपा गया दायित्व मात्र समझा, जिसका निर्वाह करते हुए अपने आपको उन्होने जिनशासन का सेवक ही माना।

■

संघनायक का प्रथम चातुर्मास जयपुर में

(विक्रम संवत् १९८७)

विक्रम सवत् १९८७ के वर्षावास की जयपुर संघ की विनति रत्नवश के सप्तम पट्टधर आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. ने जोधपुर मे पद-महोत्सव के पुनीत प्रसंग पर ही स्वीकार कर ली थी। फलत आचार्यश्री ने सघ-व्यवस्था सम्बधी सभी कार्यों का समीचीनतया निष्पादन कर अपने सन्तवृन्द के साथ जोधपुर से जयपुर की ओर ठाणा ८ से विहार किया। पीपाड़, अजमेर, किशनगढ़ आदि क्षेत्रो को अपने प्रवचनामृत से अंकुरित, पुष्पित एव पल्लवित करते हुए आचार्यश्री स्थविर मुनिश्री सुजानमल जी महाराज, स्वामी जी श्री भोजराज जी महाराज आदि के साथ जयपुर पधारे। अमानीशाह के नाले से लेकर सेठ फूलचन्द जी नोरतन मल जी संकलेचा के विशाल भवन (लाल भवन) तक भक्तजनो का अपार जन समूह आचार्यश्री के वदन के लिए उमड़ पड़ा। श्रमणकल्प की परिपालना करते हुए आचार्यश्री ने वर्षावास की आज्ञा लेकर मुनिमडल के साथ लाल भवन में प्रवेश किया।

आचार्य श्री के पाण्डित्य, प्रवचन-पटुता, प्रत्युत्पन्नमतित्व, आचार-पालन के प्रति कठोरता आदि गुणो की यशोगाथा जयपुरवासियो की जिह्वा पर नाच रही थी। प्रवचन सभा मे जयपुर सघ को सम्बोधित करते हुए आचार्य प्रवर ने फरमाया-"ससार मे सत्ता, सम्पत्ति आदि सभी कुछ सुलभ हैं, किन्तु ससार की उलझन मे मनुष्य यह भूल जाता है कि ये चार साधन अत्यत दुर्लभ है—मनुष्य जन्म, धर्म का श्रवण, धर्म मे श्रद्धा और सयम की आराधना—

चत्तारि परमंगाणि दुल्लहाणीह जंतुणो।
माणुसत्त सुई सद्धा, संजमम्मि य वीरियं॥

मनुष्य देह, धर्म-श्रवण आप सभी को प्राप्त है। धर्म मे श्रद्धा भी प्राय सभी में है। इस चातुर्मास को स्वर्णिम सुअवसर मानकर यदि सयम की आराधना मे आपका पराक्रम प्रकट होता है, तो इसी मे इस चातुर्मास की सार्थकता है।"

"हीरे-जवाहरात के चाकचिक्य से समृद्ध इस नगरी का अत्यत सौभाग्य रहा कि आचार्य श्री कजोड़ीमल जी महाराज (छह वर्षावास) आचार्यश्री विनयचन्द्र जी महाराज (बीस वर्षावास) आचार्यश्री शोभाचन्द्र जी महाराज (प्राय बीस वर्षावास) का पदार्पण इस धरा पर हुआ। जयपुर धरा को छह-छह मुमुक्षुओ, श्री मुलतानमल जी, भीवराज जी, सुजान मल जी, छोटे किस्तूरमल जी पटनी, श्री लाभचन्दजी और श्री सागरमल जी को दीक्षा दिलाने का गौरव प्राप्त है। रत्नवशीय श्रमण-परम्परा का जयपुर सघ के साथ सदा से ही सद्भावना पूर्ण सम्बन्ध रहा है, जिससे जिनवाणी का प्रचार-प्रसार सहज ही होता रहा है। मै आशा करता हूँ कि अब इस चातुर्मास में श्रमण भगवान महावीर के विश्वबधुत्व के सदेश को जन-जन तक पहुँचाने हेतु सुनियोजित कार्यक्रमो को मूर्तरूप दिया जाए और अभिनव धर्मजागरण किया जाए।"

इसी क्रम मे लाल भवन में प्रातःकाल नियमित सामायिक करने वालो की सख्या मे उत्तरोत्तर वृद्धि हुई और नियमित प्रवचन, आगम-वाचना, प्रश्नोत्तर एव धार्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था से आध्यात्मिक जागृति

का शंखनाद गूजा।

आचार्यश्री ने इस बात पर बल दिया कि श्रावक और श्राविका वर्ग साधु-साध्वी के प्रति अपने 'अम्मापियरो' के दायित्व का यदि सावधानीपूर्वक निर्वाह करें तो निश्चय ही श्रमणाचार में शिथिलता को अवकाश नहीं मिल सकता। आचार्य श्री की प्रेरणा एव सक्रियता से दशवैकालिक सूत्र के ज्ञान से सम्पन्न जिनशासन के प्रहरियों की एक सबल टुकड़ी प्रशिक्षित हो गई। युवा एव प्रौढ़ श्रावक वर्ग के समवेत स्वरों में किए गए शास्त्रीय पाठो और स्वाध्याय घोष से उन दिनो लाल भवन गुजायमान हो उठता था। प्रात.काल नियमित सामायिक करने वाले बालक-बालिका , युवक - प्रौढ सभी प्रतिदिन आचार्य प्रवर को अपनी प्रगति से अवगत कराते एव नया पाठ, स्तोत्र आदि सीखते। आचार्य श्री के सान्निध्य मे ५५ उपवास की लम्बी तपस्या कर भोपालगढ़ वाले श्री धनराज जी बोथरा की धर्मपत्नी ने अपने को धन्य माना। बरेली के सुश्रावक श्री नगराजजी नाहर ने चार माह जयपुर में सेवा कर शास्त्रज्ञान अर्जित किया।

आचार्यश्री की उदारता अद्भुत थी। आचार्यपद पर आसीन गुरु हस्ती ने चातुर्मासावधि में अपने श्रावको से उर्दू एव अग्रेजी का भी अभ्यास किया। उन्होंने साहित्यिक पत्रिकाओ एव आधुनिक वैज्ञानिक साहित्य से नये ज्ञान-विज्ञान का भी परिचय प्राप्त किया। जयपुर के वयोवृद्ध श्रावक श्री केशरीचन्द जी चोरड़िया, श्री मगनमल जी कोठारी, श्री श्रीचन्दजी गोलेछा, श्री शान्तिलाल जी दुर्लभजी आदि सुश्रावको का इस ज्ञानवर्धन मे सीधा सहयोग रहा। सर्व श्री मुन्नीलाल जी सेठ, श्री भवरीलालजी मूसल, जतनमलजी नवलखा, मूलचन्द जी कोठारी, केसरी मल जी चोरड़िया, केसरीमलजी कोठारी आदि श्रावको ने सेवा-भक्ति का लाभ लिया।

अपराह्न काल मे तरुणवय के आचार्य श्री द्वारा टीका से शास्त्र-वाचन एव उसकी व्याख्या सुनकर जयपुर के शास्त्रमर्मज्ञ श्रावक अत्यन्त प्रमुदित होते थे। इन्ही दिनो सैलाना वाले रतनलालजी डोशी का एक प्रश्न पत्र, जो प्रमुख सन्तो के पास भेजा गया था, चरितनायक के पास भी आया। इसमे प्रमुख प्रश्न थे - (१) तीर्थङ्कर भगवान वस्त्ररहित होते है, उनके मुँहपत्ति नही होती है, तो फिर वे उपदेश कैसे करते हैं? (२) राजप्रश्नीय सूत्र मे 'धूव दाऊण जिणवराण' का क्या अर्थ है? इत्यादि प्रश्नो के उत्तर लिखवाने का चरितनायक के लिए प्रथम अवसर था। शास्त्र, टीका और चिन्तन के आधार से उत्तर लिखवाए। पृच्छक डोशीजी को सन्तोष हुआ। उन्होने प्रत्युत्तर में लिखा कि मैंने चार-पॉच स्थानो पर प्रश्न भेजे, पर मुझे प रत्न शतावधानी जी म और आपके उत्तर ही स्पष्ट और सन्तोषजनक प्राप्त हो सके।

दीक्षा स्थविर, वयस्थविर सन्तो द्वारा अपने लघुवयस्क आचार्य श्री के प्रति प्रदत्त बहुमान अश्रुतपूर्व था। बड़े सन्त भी प्रत्येक बात के लिए यही फरमाते—'पूज्य श्री से निवेदन करो'। चतुर्विध संघ के लिए उनकी आज्ञा ही प्रमाण थी।

आचार्यपद ग्रहण करने के पश्चात् चरितनायक का यह प्रथम चातुर्मास जयपुर नगर मे सभी दृष्टियों से उत्तम रहा। सघ मे धर्म के प्रति अभिनव उत्साह का सचार और आध्यात्मिक चेतना का जागरण चातुर्मास की महती उपलब्धि थी।

• आचार्य श्री हाड़ौती की ओर

मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को अपने सन्तवृन्द के साथ आचार्य श्री ने जयपुर से टोंक की ओर विहार किया।

इससे पूर्व जयपुरसघ के आबाल वृद्ध सदस्य बड़ी सख्या मे लाल भवन मे एकत्रित हुए। आचार्य श्री ने उपस्थित जनसमुदाय को सुधासिक्त सुमधुर सन्देश मे फरमाया कि "हमे श्रमण भगवान् महावीर की सकलभूत हितावहा जिनवाणी को गांव-गाव एव घर-घर मे पहुचाने के लिए तत्पर रहना चाहिए। आप सबने जो कुछ इस चातुर्मास मे सीखा है उसे आगे बढ़ाना है।"

जयपुर सघ ने जयपुर-टोंक मार्ग पर सन्तवृन्द के साथ चलकर जयघोषो के बीच भारी मन से अपने पूज्य धर्माचार्य और सन्तवृन्द को विदाई दी। आचार्य श्री ठाणा ८ से सागानेर आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए टोक पधारे। यहाँ पर सैलाना निवासी तत्त्वरसिक एव तार्किक श्रावक श्री रतनलाल जी डोशी आचार्य श्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। श्री डोशी जी आचार्यप्रवर के तलस्पर्शी तात्त्विक ज्ञान, तर्ककौशल, प्रवचन पाटव, वाग्वैभव आदि गुणो से परिचित थे। डोशीजी ने आचार्य श्री से अनेक शास्त्रीय विषयो पर गहन चर्चा की। आचार्य श्री ने डोशी जी की समस्त शकाओ एव प्रश्नो का शास्त्रीय उद्धरणो के साथ समुचित समाधान किया। डोशी जी एव टोक के श्रावक-श्राविकावृन्द इस तत्त्वचर्चा से बड़े प्रभावित हुए।

टोक से विहार कर तेजस्वी धर्माचार्य श्री हस्ती चौथ का बरवाड़ा होते हुए सवाईमाधोपुर पधारे, जहा कोटा सम्प्रदाय के श्री हरखचन्द जी म सा के साथ बाजार मे प्रवचन हुआ। यहा से आलनपुर, श्यामपुरा, रावल आदि गॉव फरसकर कुस्तला, चोरू, अलीगढ, उनियारा, देई आदि क्षेत्रो में जिनवाणी का प्रचार-प्रसार करते हुए बूदी एव कोटा पधारे। कोटा बूदी पुराने धर्म क्षेत्र रहे है, जिनकी प्रसिद्धि महिलाएँ भजन के माध्यम से गाया करती है।

चरितनायक के आध्यात्मिक एव शास्त्रीय प्रवचनो को श्रवण कर बूदी एव कोटा के श्रद्धालु श्रोताओ ने आनद की अनुभूति की। उन्होने अनेक व्रत-नियम अगीकार कर अपने जीवन को सम्यक् दिशा प्रदान की। शोभागुरु के भक्त श्री चुन्नीलाल जी बाबेल अपने नगर मे आचार्य हस्ती की प्रतिभा एव प्रवचनपटुता को देखकर चकित रह गए।

आचार्य श्री मालव प्रदेश में

(विक्रम संवत् १९८८-१९८९)

आचार्य पद पर आरूढ़ हो जाने के पश्चात् भी चरितनायक मे जिज्ञासावृत्ति एव अध्ययनशीलता वृद्धिगत होती रही। होली चौमासी (फाल्गुनी पूर्णिमा) के बाद कोटा से झालरापाटन, बकानी , रायपुर, सुन्हेल, भवानी मण्डी, भानपुरा, रामपुरा पधारे। यहा पर शास्त्रज्ञ सुश्रावक श्री केसरीमल जी से शास्त्रज्ञान का आदान-प्रदान किया तथा रामपुरा की विनति देखकर अपना चातुर्मास रामपुरा के लिए निश्चित किया। वहाँ से सजीत होते हुए मन्दसौर की ओर विहार किया। मन्दसौर मे तत्र विराजित आचार्यश्री मन्नालालजी एव वैराग्यमूर्ति श्री खूबचन्द जी म सा आदि सन्त-मण्डल के साथ चरितनायक आचार्यश्री का सुमधुर समागम हुआ। निवास एवं व्याख्यान साथ हुआ। आप श्री ने पूज्य श्री मन्नालालजी म.सा की सन्निधि मे अनेक सैद्धान्तिक धारणाओ और छेदसूत्र की वाचना प्राप्त की। चरितनायक ने अपने सस्मरणों में लिखा है कि पूज्य श्री दीक्षा के अवसर पर विराजमान थे, अत उनकी बड़ी वत्सलता रही। सुश्रावक सेठ लक्ष्मीचन्दजी से भी पुराने सन्तो की धारणाएं जानने एवं सुनने का सुखद योग भी बना। मुनि श्री प्रतापमलजी महाराज भी आचार्यद्वय के मन्दसौर प्रवासकाल मे साथ रहे। श्री ओकारलाल जी बाफना, श्री कालूराम जी मारू, श्री चैनराम जी, श्री चादमल जी, श्री धनराज जी मेहता और किस्तूर चन्दजी जैसे सिद्धान्तरसिक श्रावको ने बड़ी लगन एवं श्रद्धा से आचार्य श्री एवं सन्तवृन्द की सेवा की। मन्दसौर और झमकूपुरा के श्रावक-श्राविकाओ को छेद सूत्रो की वाचनाओ, तात्त्विक प्रश्नोत्तरों, प्रवचनो और बाह्य आभ्यन्तर तपश्चरण से अपने कर्म कालुष्य धोने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आचार्य श्री के प्रवचनो से प्रभावित होकर जैन और जैनेतर धर्मो के अनुयायी बड़ी सख्या मे उपस्थित होते। हसन बेग जैसे श्रद्धालु अपनी कविताओ से मुनिवृन्द के प्रति श्रद्धा प्रकट करते, जिससे श्रोता आनद विभोर हो जाते। मन्दसौर मे करजूवाले श्री चैनरामजी, चाँदमल जी और उनकी धर्मपत्नी की धर्माचार्यों एव धर्मगुरुओ के प्रति श्रद्धाभक्ति सराहनीय रही।

आपके आचार्य बनने के पश्चात् यह प्रथम अवसर था, जब आठ सन्त होते हुए भी तीन चातुर्मास स्वीकृत किए गये। अपना चातुर्मास रामपुरा के लिए तथा स्वामीजी श्री सुजानमलजी म.सा आदि तीन सन्तो का चातुर्मास रायपुर के लिये पहले ही स्वीकृत कर चुके थे। अब मन्दसौर के श्रावको की धर्माराधन की भावना को ध्यान मे रखकर आचार्य श्री ने दो सन्तो श्री लाभचन्द जी एव चौथमलजी का वर्षावास मन्दसौर में करने की स्वीकृति प्रदान की और उन्हे आस-पास के क्षेत्रो मे विचरण करते रहने के निर्देश दिए। इससे आचार्यप्रवर की सूझबूझ एव जिनशासन की अधिक से अधिक प्रभावना की दृष्टि का बोध होता है।

पीपलिया, मल्हारगढ़, नारायणगढ़ आदि क्षेत्रों को पावन करते आपश्री बाबाजी श्री भोजराजजी एव मुनि श्री लालचन्द जी के साथ ठाणा ३ से विक्रम सवत १९८८ की आषाढ़ कृष्णा अष्टमी के दिन महागढ़ पधारे। धर्मस्थान के अभाव मे श्री पन्नालालजी चौहान की दुकान मे विराजे। सुश्रावक पन्नालाल जी के युवा पुत्र लक्ष्मीचन्द जी की धर्माराधना ने आचार्य श्री का भी ध्यान आकृष्ट किया और स्वयं लक्ष्मीचन्द तो ऐसे गुरुदेव को पाकर धन्य हो उठा

तथा आचार्य श्री की सेवा मे सदा रहने के अपने दृढ सकल्प से स्वजनों को अवगत करा दिया।

- रामपुरा चातुर्मास (सवत् १९८८)

विहार क्रम से आतरी, सजीत, चपलाणा, मनासा, कुकडेश्वर आदि क्षेत्रो को फरसते हुए आचार्य श्री ठाणा ३ से रामपुरा पधारे। सवत् १९८८ का चातुर्मास यहाँ की हवेली मे हुआ। हवेली के पुराने आंगन मे लीलन-फूलन उत्पन्न न हो एतदर्थ विवेकशील श्रावक श्री राजमलजी कडावत ने आगन मे तेल डालकर उसे लीलन-फूलन से पहले ही बचा लिया था। चातुर्मास मे आचार्य श्री ने सटीक जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति तथा पुरातन टीकाकार और नवागीवृत्तिकार अभयदेवसूरि की वृत्तियो सहित आगमो की वाचनी की। यहाँ पर श्रावक केसरीमलजी सुराणा शास्त्र जानकारी के लिए प्रसिद्ध थे। उन्हे इस वाचना से बहुत प्रमोद हुआ। श्रावकजी प्राचीन धारणा वाले थे। टब्बा वाचन का उन्हे अभ्यास था। आचार्य श्री की दृष्टि अत्यत पारखी थी। पजाब निवासी श्रावक ने यहाँ अपने पुत्र कर्मचन्द को आचार्यश्री की सेवा मे समर्पित करने की प्रार्थना की। आचार्य श्री ने परख लिया कि वह मुनि दीक्षा के योग्य नही है।

आचार्य श्री से अतीव प्रभावित श्री लक्ष्मीचन्द जी महागढ़ ने श्रावक के १२ व्रत अंगीकार किये। रामपुरा के समाज मे भी धार्मिक विकास की लहर दौड़ी। पर्युषण के पश्चात् विट्ठल चौधरी ने अपने स्वप्न के अनुसार आचार्य श्री के दर्शन कर समाज मे धार्मिक पाठशालाएं चलाने के लिए अपनी द्रव्य राशि का दान कर दिया। शिवचन्दजी धाकड़, बसन्ती लाल जी नाहर और राजमलजी सुराणा भी अच्छे सेवाभावी श्रावक थे।

चातुर्मास पश्चात् चरितनायक कुकडेश्वर से मनासा होते हुए कजार्डा पधारे। यहाँ पर भाई पूनमचन्दजी अच्छी लगन वाले स्वाध्यायशील श्रावक थे। सघ मे धर्म-भावना का अच्छा उत्साह था। तदुपरान्त रतनगढ़, खेरी होते हुए सिंगोली पधारे। यह पहाड़ी प्रदेश मे आया अच्छा धार्मिक क्षेत्र है। प्रवचन-प्रेरणा के माध्यम से धर्मजागृति कर वहा से बेगू, कदवासा जाट, कणेरा आदि गावो मे विचरकर जावद हवेली मे विराजे। ऐसे विकट बीहड़ पहाड़ी प्रदेश में भी जैन सन्त उपदेशामृत का पान कराने पधारते है, यह श्रावको द्वारा साश्चर्य अनुभव किया गया। पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म.सा का स्वर्गवास इसी जावद ग्राम मे हुआ। स्थानीय सघ की गौरवगाथा स्मरणीय और अनुकरणीय है। कणेरा से जावद का मार्ग एकदम सुनसान, भयावह एव विकट है। इसमे सन्तो के साथ चल रहे प दु.खमोचन जी झा के कोमल मन मे झाडी के पत्तो की खड़खड़ को सुनकर ऐसा अनुभव हुआ –"शेर कहता है मैं खाऊँ और चोर कहता है मै आऊँ।" ऐसे विकट रास्तो पर भी निर्भय निर्द्वन्द्व पाद विहार, इस बात के प्रमाण हैं कि चरितनायक वय एव पद की दीर्घता की दृष्टि से भले ही लघु थे, पर उनका आत्मबल उनका तप-तेज कितना महान् था। यहाँ से सैलाना विहार हुआ, जहा सैलाना नरेश के धर्मानुराग एव दीवान प्यारेकिशन जी की प्रबल विनति से राजभवन मे आचार्यश्री के प्रवचन का आयोजन अत्यत प्रेरणादायी रहा।

रतलाम सघ की सयुक्त विनति की स्वीकृति के अनुरूप आचार्य श्री रतलाम नगर पहुंचे, जहा सघ के नर-नारी यह शुभ समाचार सुन अत्यत हर्षित हुए। प्रथम प्रवचन मे ही आचार्यश्री ने भगवान महावीर के विश्वबधुत्व का सदेश देश-विदेश के कोने-कोने मे पहुचाने की प्रेरणा देते हुए 'मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई' के सदेश को अगीकार करने की प्रेरणा करते हुए कहा–"ससार के सभी प्राणी मेरे मित्र हैं, मेरा किसी से वैर-विरोध नही है।" उस समय मालव प्रदेश के प्रमुख धार्मिक केन्द्र रतलाम नगर श्री सघ के तीन धड़ों में हुए बिखराव का भी आचार्यश्री के प्रभाववश समन्वय हुआ, जिससे रतलाम सघ के हर्ष का पारावर नही रहा। समत्वसाधक, प्राणिमात्र

के प्रति कल्याणकामना एव सुदृढ जैन संघ के अभिलाषी आचार्य भगवन्त का पदार्पण ही स्नेह-सरिता प्रवाहित करता और बिखरे हुए सघ सहज समन्वय के सूत्र में बंध जाते।

रतलाम में आचार्य श्री द्वारा धर्म-सौहार्द की प्रभावना हुई। तत्र विराजित सन्तो स्थविर मुनि श्री ताराचन्द जी म., पं रत्न श्री किशनलाल जी महाराज, मालव केसरी श्री सौभाग्यमल जी महाराज, कविवर्य श्री सूर्यमुनि जी महाराज, शतावधानी श्री केवलचन्द जी म. आदि के साथ संघहित के पारस्परिक विचारो का आदान-प्रदान, तत्त्व-चर्चा, ज्ञान-गोष्ठियाँ आदि एक ही मच से हुए। धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री वर्द्धमान जी पीतलिया ने यहा चरितनायक से महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त किया।

जिनशासन के उत्थान और उत्कर्ष को दृष्टि मे रखते हुए रतलाम के सभी सम्प्रदायो के प्रतिनिधियों ने आचार्यश्री की सेवा में विक्रम संवत् १९८९ का चातुर्मास करने की आग्रहभरी विनति की, जो स्वीकृत हुई। शेषकाल मे रावटी, थांदला, पेटलावद, राजगढ़ क्षेत्रो को फरसते हुए आचार्य श्री इतिहास प्रसिद्ध धारानगरी पधारे जो सस्कृत भाषा के विकास स्थल, भारतीय सस्कृति एव विविध कलाओ का केन्द्र एवं शक्तिशाली मालव राज्य की राजधानी रहा है।

स्थानकवासी परम्परा के लिए तो वस्तुत धार नगर बड़ा ही ऐतिहासिक महत्त्व का नगर है। विक्रम सम्वत् १७५९ मे यहाँ धर्मप्राण आचार्य श्री धर्मदास जी महाराज ने अपने एक शिष्य को स्वेच्छापूर्वक ग्रहण किये हुए सथारे से विचलित देखकर जिनशासन की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए स्वय ने उसका स्थान ग्रहण कर अपने प्राणो की आहुति दे दी थी।

आचार्यश्री धर्मदास जी महाराज विक्रम की अठाहरवी शताब्दी के एक महान् क्रियोद्धारक, प्रभावक एव धर्म प्रचारक आचार्य हुए है। वर्तमान मे मारवाड़, मेवाड़, मालवा तथा सौराष्ट्र आदि प्रान्तो मे विचरण करने वाले अधिकाश साधु-साध्वीवृन्द उन्ही की शिष्य सन्तति मे हैं।

आचार्यश्री ने अपने उद्बोधन मे धारनगर के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा कि यहाँ के जैन श्रावक शिरोमणि ने मुगलकाल मे धार के लोगो के जीवन और धन की रक्षा के लिए जो अप्रतिम शौर्य, साहस और त्याग दिखाया वह इतिहास का बेजोड़ उदाहरण है, जिस पर जैन समाज को गर्व है।

जैन सघ के गौरव की प्रतीक एव प्रासङ्गिक होने से इस ऐतिहासिक घटना का विस्तृत उल्लेख किया जा रहा है। एक बार मुगलो की एक सशक्त विशाल सेना ने धारनगर को चारो ओर से घेर लिया। शत्रुओ से रक्षा के लिए नगर के प्रवेश द्वारो के लोह कपाट बंद कर दिये गये। मुगल सेनापति ने नगर द्वारों और परकोटे के बाहर घोषणा करवा दी कि कल मध्याह्न से पूर्व २० सहस्र स्वर्णमुद्राएं नगर निवासियो से एकत्रित कर प्रस्तुत कर दी जाए, अन्यथा नगर को कत्लेआम करवा कर लूट लिया जायेगा।

सेनापति की इस घोषणा से चारो ओर त्राहि-त्राहि, भय और आतक का साम्राज्य छा गया। मुगलो की विशाल सैन्य शक्ति के समक्ष मुट्ठी भर नगर रक्षक सेना आटे मे नमक तुल्य थी। निर्दोष नर-नारियों के सम्भावित हत्याकाड से नगर सेठ द्रवित हो उठा। कुछ क्षण विचारमग्न रहा और फिर अपने आसन से उठा। तलवार, ढाल और भालों से सुसज्जित हो घोड़े पर आरूढ़ हुआ और अंगरक्षको के साथ चल दिया।

नगर सेठ ने नायक से भेट की। नायक ने सेनापति को संदेश देते हुए कहा-"सल्तनत-ए- मुगलिया की जांबाज फौजो के आलाकमान की खिदमत मे धारनगर के नगर श्रेष्ठी हाजिर होना चाहते हैं। हुजूर! ऐसा जांबाज

जवांमर्द इस खादिम ने आज से पहले कभी नही देखा। दौलत, दानिशमंदी और दिलेरी, इन तीनों की रूहें बहिस्ते से अलविदा कर मानो एक ही जिस्म मे उतर आई हैं। हुक्म हो तो हाजिर करू?"

'नही, मैं खुद चलता हूँ' कहते हुए सेनापति अपने कक्ष के द्वार की ओर बढ़ा। नगर श्रेष्ठी को देखते ही 'आदाब' अर्ज करते हुए सेनापति ने अपने दोनों हाथ नगरश्रेष्ठी की ओर बढ़ा दिये। अभिवादन का उत्तर देते हुए नगर श्रेष्ठी ने भी अपना हाथ सेनापति की ओर बढ़ा दिया। सेनापति अपने दोनो हाथ से नगरश्रेष्ठी का हाथ थामे अपने कक्ष के मध्य भाग मे रखे सुखासनो की ओर बढ़ा। एक सुखासन पर नगरश्रेष्ठी को बाअदब बिठाया और दूसरे पर स्वयं बैठते हुए सेनापति ने खैर मुकद्दम अनन्तर पूछा-'अकेले ही, इस वक्त शाही सेना के खेमे मे तशरीफ आवरी का कारण?

नगर श्रेष्ठी बोला-"निरपराध नर-नारियों और मासूम बच्चों की करुण पुकार मुझे आप तक खीच लाई है। आह अग्निवर्षा की कारण होती है और वाह पुष्प वर्षा की। जिनके धौंसे की धमक से धरती धूजती थी, वे बड़ी-बड़ी जोरो जुल्म करने वाली सल्तनते भी निर्बलो की आह की आग मे जल कर खाक बन गई। उनका नामोनिशा तक सदा-सदा के लिए मिट गया। जिन शासको पर वाह -वाह की पुष्पवर्षा हुई वे अमर हो गये। आज भी लोग बड़े आदर के साथ उन शासको का, उन हुकूमतो का नाम लेते हैं। मै जानना चाहता हूँ कि शाही खजाना बेगुनाहो के खून से भरा जाएगा या दौलत से? सेनापति नगरश्रेष्ठी के ओजस्वी मुखमडल पर दृष्टि गड़ाये बड़े ध्यान से सब बाते सुनता रहा। अन्त मे सेनापति से नगर श्रेष्ठी ने प्रश्न किया-"कितनी स्वर्ण मुद्राए चाहिए हुकूमत को? आपके कोषपाल को मेरे साथ भेज दीजिए। नगरद्वार पर उन्हे आपकी इच्छानुसार स्वर्णमुद्राए सम्हला दी जायेगी।"

"क्या सब कुछ आप अपने पास से ही देगे?" आश्चर्याभिभूत सेनापति ने प्रश्न किया।

सस्मित नगरश्रेष्ठी ने पूर्ववत् गभीर स्वर मे उत्तर दिया-"इसमे आश्चर्य की क्या बात है सेनापति! मै जब इस दुनिया मे आया तो अपने साथ कुछ भी नही लाया। इसी मिट्टी मे पला, छोटे से बड़ा हुआ। जिसे धन, वैभव अथवा दौलत कहा जाता है, यह सब इसी मिट्टी से प्राप्त हुआ। जब यहाँ से जाऊगा तो साथ में कुछ नही ले जा सकूँगा। इस मिट्टी से मिली सारी सत्ता और सम्पदा इसी मिट्टी मे रह जाएगी।" यदि यह दौलत निरपराध निर्बल अबलाओं, मासूम बच्चो, बूढ़ो एव अवाम की रक्षा के काम आ जाए तो इससे बढ़कर दौलत का और क्या अच्छा उपयोग हो सकता है?

नगरश्रेष्ठी ने अपने कथन का सवरण करते हुए कहा-"धारनगर चिन्ता के सागर मे डूबा हुआ है। नागरिको के मन, मस्तिष्क मे उथल-पुथल मची हुई है। निस्सहाय, निरीह, निर्बलो के प्राण सूखे जा रहे है। शीघ्रता कीजिए। अपने सैनिको और खजान्ची को मेरे साथ भेज दीजिए और बता दीजिए कि मैं आपके खजान्ची के साथ कितनी धनराशि भेज दूँ।"

सेनापति ने अपने सैनिक अधिकारी को शाही सेना के कूच की तैयारी का आदेश देते हुए नगरश्रेष्ठी से कहा-"आप जैसे फरिश्तो की गैबी रूहानी ताकत के बलबूते पर ही असीम आसमान बिना खम्भो के अधर खड़ा है। आप इस जहान के इसान नही बहिस्त के फरिस्ते है। मैं शाही हुक्म से बधा हुआ हूँ, वरना बिना एक कानी कौड़ी तक लिए ही इसी वक्त फौज के साथ यहाँ से कूच कर जाता। नगर का घेरा उठाने के लिए मैं स्वय आपके साथ चल रहा हूँ। आप ५००० मोहरे अपने आदमियो के साथ ही पहुचा दीजिए। आपको तकलीफ करने की जरूरत नही है।"

सेनापति ने अपने सेनानायकों को घेरा हटाने का आदेश दिया। पलक झपकते ही घेरा हटा। सैनिक टुकड़ियो ने शिविर की ओर प्रयाण कर दिया।

नगरश्रेष्ठी ने अपने कोषाध्यक्ष से रेशम की थैलियो मे ५ हजार स्वर्ण मुद्राए मंगवाई और चार घोड़ो की बग्घी मे बैठ सेनापति की ओर कूच किया। बग्घी में बैठे नगरश्रेष्ठी को अपनी ओर आते देख सेनापति अपने अश्व से उतरा व बग्घी से उतरकर श्रेष्ठी बोला-"सेनापते! आपने नगर का घेरा उठवा कर हजारो लोगो को सतोष की सास दी है। वे सब लोग आपकी दीर्घायु और बहबूदी के लिए दुआ कर रहे हैं।"

सेनापति ने जवाब दिया-"यह तो आपकी जर्रानवाजी है, जो ऐसा फरमा रहे हैं। दर हकीकत यह सब कुछ आपकी दानिशमदी, दिलेरी और दौलत का ही करिश्मा है। सच तो यह है कि आपने मुझे रूहानी रोशनी दिखा कर दरिन्दो से भरे पाताल भेदी अन्धेरे दर्रों मे गिरने से बचा लिया है। अब कत्लेआम के काले कलाम इस जुबा से कभी नही निकलेंगे।"

नगरश्रेष्ठी ने अपने खजाची की ओर इशारा किया और सेनापति से कहा-'ये ५००० स्वर्णमुद्राएँ हाजिर है।'

सेनापति बोला-"अब इनकी कोई जरूरत नही है। आपने जो नेक नसीहत मुझे दी, उस पर न्यौछावर हूँ। यह कह सेनापति अपने अश्व पर आरूढ़ हो प्रस्थान कर गया। सारे नगर मे 'नगरश्रेष्ठी की जय हो'। 'नगरश्रेष्ठी अमर हो', के नारे गूजने लगे।

अपने प्रवचन का सवरण करते हुए आचार्य श्री ने फरमाया कि "अहिंसा के परमोपासक श्रावकरत्न! उसी नगरश्रेष्ठी का रक्त आपकी धमनियो मे प्रवाहित हो रहा है। आप भी अहिंसा के उपासक और रत्नत्रयी के धारक श्रावक है। यदि आप भी अपने नगरश्रेष्ठी के शौर्य, साहस और अपूर्व अनुकरणीय त्याग का अनुसरण करना प्रारम्भ कर दें तो जन-जन के लिए आदरणीय और अनुकरणीय बन सकते हैं।"

आचार्यश्री के इस ऐतिहासिक प्रवचन को सुनकर जन-जन के मन मे परोपकार की प्रेरणा प्रस्फुटित हुई। बड़ी सख्या मे श्रावक-श्राविका वर्ग ने सामायिक, स्वाध्याय, जप-तप आदि धर्माराधन के नियम भी ग्रहण किए।

धर्म-जागरण के इस क्रम मे आचार्य श्री इन्दौर पधारे। यहाँ स्थविर मुनि श्री ताराचन्द्र जी म., श्री किशनलाल जी म एव श्री सोभागमुनि जी म से मधुर मिलन हुआ। सन्त-समागम से सघ मे बड़ा उल्लास का वातावरण था। वयोवृद्ध श्री ताराचन्दजी म बडे सरल एवं परम वत्सलता वाले थे। बाबाजी श्री सुजानमलजी महाराज के ओजस्वी प्रवचन से सब प्रभावित थे। यहा के प्रमुख श्रावक श्री कन्हैयालालजी भण्डारी के आग्रह से एक दिन उनकी मिल मे भी व्याख्यान हुआ। समाज मे उनका एव श्री केसरीचन्दजी भण्डारी का प्रमुख स्थान था। भण्डारी जी की वत्सलता से रामपुरा के दो सौ-तीन सौ जैन परिवार इन्दौर आ बसे थे। थियोसोकिकल सोसायटी मे भी आचार्य श्री का जैनधर्म पर प्रवचन हुआ।

यहाँ से आचार्य श्री ने धर्म, सस्कृति, विद्या एव कला के पुरातन केन्द्र इतिहास प्रसिद्ध उज्जैन नगरी मे पदार्पण किया। स्वामीजी श्री सुजानमलजी महाराज आदि सन्तवृन्द भी अन्यान्य क्षेत्रों को फरसते हुए वहाँ पधार गए। तत्र विराजित आत्मार्थी श्री इन्द्रमल जी म. और मोतीलाल जी म आदि मुनिवृन्द के साथ पारस्परिक वात्सल्य सम्बन्ध प्रेमपूर्ण एवं प्रशसनीय रहा। व्याख्यान और ज्ञानचर्चा साथ ही हुआ करती थी। यहां पर सयोगवश बरेली के सुश्रावक श्री रतनलाल जी नाहर दर्शनार्थ उपस्थित हुए। उन्होंने मुमुक्षु श्री लक्ष्मीचन्द जी की अनगार धर्म मे दीक्षित होने की प्रबल भावना एव उत्कण्ठा को देखते हुए आचार्यश्री से निवेदन किया कि अब इन्हे शीघ्र ही दीक्षा देने की

अनुमति प्रदान करे। इसके लिए श्री नाहर मुमुक्षु लक्ष्मीचन्द जी के ग्राम महागढ़ भी गये और उनके चाचा श्री इन्द्रमलजी चौहान आदि स्वजनो से अनुमति प्राप्त की। वैरागी प्रसन्न हो उठे। वि.सं. १९८९ की आषाढ़ कृष्णा पचमी के शुभ मुहूर्त मे दीक्षा उत्सव होने की सानद तैयारियां होने लगी और निश्चित वेला मे चतुर्विध सघ की विशाल उपस्थिति मे परम विरक्त एवं परम विनीत श्रीलक्ष्मीचन्द जी को आचार्य श्री हस्तीमल म.सा. ने अपने मुखारविन्द से भागवती दीक्षा प्रदान की। नवदीक्षित मुनि ने तपश्चरण और शास्त्राध्ययन के साथ सेवाधर्म को प्राथमिकता दी। ये मुनि आचार्य श्री के प्रथम शिष्य थे, जो छोटे लक्ष्मीचन्द जी के नाम से विश्रुत हुए एव अटूट सेवा-भक्ति के कारण आगे चलकर सन्तो के द्वारा 'धाय माँ' समझे गये।

- रतलाम चातुर्मास (सवत् १९८९)

रतलाम चातुर्मास धर्मदास मित्रमण्डल और हितेच्छु मण्डल की सयुक्त विनति से धर्मदास मित्रमडल के धर्मस्थानक मे हुआ, जिसमे जिनशासन की प्रभावना तथा अभिनव सामूहिक धर्मजागरण से धर्म क्रान्ति का वातावरण निर्मित होने लगा। रतलाम के उक्त वर्षावासकाल मे पण्डित श्री दु खमोचन जी झा भी आचार्यश्री की सेवा मे रहे। पण्डित जी के पास दोनो लक्ष्मी मुनियो का अध्ययन सुचारू रूप से प्रगति करता रहा। धर्मदास मित्रमडल के धर्मस्थान के विशाल जैन पुस्तकालय मे प्राय सभी आगमो, टीका, भाष्य, चूर्णि आदि विषयो के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का बड़ा अच्छा संग्रह था। सभी सन्तो ने विशेष कर आचार्यश्री ने इस पुस्तकालय का बड़ी रुचि के साथ उपयोग किया। कतिपय जटिल ग्रन्थो का अध्ययन आचार्यश्री ने प दु:खमोचन जी के साथ भी किया। आचार्य श्री ने इस प्रकार के पुस्तकालय और हस्तलिखित आगमो, आगमिक ग्रन्थो की पाडुलिपियो के ज्ञान भडारो की आवश्यकता जोधपुर, जयपुर जैसे प्रमुख नगरो मे भी महसूस की ताकि सन्तो, सतियो, श्रावको, श्राविकाओ, स्वाध्यायियो, साहित्यसेवियो एव शोधार्थियो का सहज सुलभ एव उत्तम ज्ञानार्जन हो सके। इतिहास साक्षी है कि महापुरुषों के अन्तर्मन में उत्पन्न समष्टि के हित की भावनाओ को फलीभूत होने मे अधिक विलम्ब नही होता। आचार्यश्री की इस भावना को दर्शनार्थ आये जोधपुर के चन्दनमल जी मुथा ने मूर्तरूप देते हुए कहा कि सवाईसिंह जी की पोल (सिंह पोल) मे एक ऐसे ही विशाल पुस्तकालय की स्थापना का पूर्ण मनोयोग के साथ प्रयास किया जाएगा, जिसमे सभी शास्त्रो, उनकी टीकाओ, चूर्णियो, भाष्यो, महाभाष्यों तथा आगमिक साहित्य विषयक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का सग्रह होगा।

रतलाम चातुर्मासावास की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वहाँ विभिन्न सम्प्रदायो के सुदृढ़ गढ़ होते हुए भी सम्पूर्ण सघ मे पारस्परिक सौहार्द और सद्भाव का वातावरण रहा। नीम का चौक स्थिरवासार्थ वयोवृद्ध श्री नन्दलालजी म सा विराजित थे। उनके साथ परस्पर पूर्ण प्रेम एव वात्सल्य का दृश्य रहा। सघ के अग्रगण्य सुश्रावक श्री वर्द्धमानजी पीतलिया, श्री धूलचन्द जी भण्डारी एव अन्यान्य जिज्ञासुओ की आचार्यश्री की सन्निधि मे ज्ञानचर्चा एव तत्त्वगोष्ठिया होती रही। स्वाध्याय एव अध्यात्मचिन्तन का वातावरण बना रहा। गजोड़ावाले वयोवृद्ध हीरालालजी गाधी, चादमल जी गाधी, लक्ष्मीचन्दजी मुणोत आदि की सेवाएं विशेष उल्लेखनीय रही। इस चातुर्मास मे आचार्य श्री को टाइफाइड हो गया। तब वहाँ के सघ ने एव वैद्य रामबिलास जी राम स्नेही ने पूर्ण तत्परता से सेवा की।

अजमेर साधु-सम्मेलन में भूमिका

(संवत् १९९०)

अखिल भारतीय जैन कान्फ्रेस ने समग्र भारत की बाईस सम्प्रदायों के नाम से विख्यात स्थानकवासी साधुओं का एक बृहत् सम्मेलन अजमेर नगर में चैत्र शुक्ला १० संवत् १९९० तदनुसार ५ अप्रेल १९३३ से आयोजित करने का निश्चय किया। समाज के वयोवृद्ध श्रावक प्रमुख-मुनियो से सम्पर्क कर एक भूमिका तैयार करने में संलग्न थे। आचार्य श्री की सेवा में भी कान्फ्रेन्स का शिष्ट मण्डल रतलाम पहुँचा। शिष्ट मण्डल की प्रार्थना एव मुनि संघ के हित की भावना से आप श्री का भी विहार इस लक्ष्य से मालवा से राजस्थान की ओर हुआ। सैलाना, खाचरोद, पीपलोदा होते हुए आप प्रतापगढ़ पधारे। यहाँ ऋषि सम्प्रदाय के प्रमुख सत श्री आनंद ऋषि जी म.सा. जो कि आगे चलकर श्रमण सघ के आचार्य बने, से आपका मधुर मिलन हुआ, जिससे पारस्परिक सौहार्द मे अभिवृद्धि हुई। आचार्य श्री क्रमश छोटी सादड़ी, निम्बाहेड़ा एव चित्तौड़ पधारे और अनेक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यो का अध्ययन और सकलन किया। हमीरगढ़ आदि क्षेत्रो मे अलख जगाते हुए आचार्य श्री भीलवाड़ा पधारे और भव्यात्माओं को अध्यात्म का रसास्वाद कराते हुए बनेड़ा पहुचे। बनेड़ा से केकड़ी पधारे जहाँ अन्यपक्षीय श्रावको के साथ ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ। १६ फरवरी १९३९ से एक सप्ताह तक मूर्तिपूजक समाज के साथ चले लिखित शास्त्रार्थ में आपने प्राजल सस्कृत भाषा मे सटीक समीचीन एव पाण्डित्यपूर्ण समाधान दिए, जिससे शास्त्रार्थ निर्णायक कट्टर मूर्तिपूजक पण्डित श्री मूलचन्दजी शास्त्री अत्यन्त प्रभावित हुए। उन्होंने निर्णय दिया कि आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. के उत्तर जैन धर्म की दृष्टि से बहुत सटीक एवं समुचित हैं। इस शास्त्रार्थ के पश्चात् केकडी के दिगम्बर एव श्वेताम्बर मूर्तिपूजक सम्प्रदाय का जोश ठंडा पड़ गया और स्थानकवासी सन्त-सतियो को शास्त्रार्थ के लिए ललकारना बन्द हो गया। इस शास्त्रार्थ में स्थानीय मन्त्री श्री धनराजजी नाहटा की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। शास्त्रार्थ मे हुई विजय से आपकी यशकीर्ति दूर-दूर तक फैल गई। यहाँ धनराजजी नाहटा, चाँदमलजी, सूरजमल जी आदि तरुणों मे बड़ा उत्साह था। सरवाड़ की भावभीनी विनति को ध्यान में रखकर आचार्यश्री वहाँ पधारे। यहाँ श्री साईणसिहजी, श्री ताराचन्दजी कक्कड़ आदि ने सेवा का पूरा लाभ लिया। धर्म-प्रचार और सगठन के लिए आचार्यश्री की प्रेरणा से यहाँ नियमित प्रार्थना और धार्मिक शिक्षण का कार्य प्रारम्भ हुआ। सरवाड़ आदि क्षेत्रो से होते हुए किशनगढ़ आगमन हुआ। तत्र विराजित प्रवर्तक श्री पन्नालाल जी म.सा. ने आचार्यश्री की अत्यन्त भावविभोर होकर अगवानी की। प्रवर्तक श्री आपकी लघुवय मे ज्ञान-ध्यान की प्रखरता एव तेजस्विता देखकर अभिभूत हो उठे। पजाब केसरी युवाचार्य श्री काशीरामजी महाराज, प्रवर्तक पूज्य श्री पन्नालालजी म. के साथ आचार्यश्री के स्नेह मिलन की त्रिवेणी को देखकर किशनगढ़ सघ आनद विभोर हो उठा। प्रमुख सन्तो में अजमेर में होने वाले वृहद् साधु सम्मेलन के सम्बंध में विचार विनिमय हुआ। सम्मेलन में सम्प्रदाय का प्रतिनिधित्व किनको दिया जाए, यह निर्णय करने एव खास-खास बातों में परम्परा की भूमिका रखने के सम्बन्ध मे स्थविर मुनियो एव आचार्य श्री की सन्निधि में सब सन्तों से विचार विमर्श हुआ।

आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. के आगमन की सूचना पाकर चरितनायक अपने साधुवृन्द के साथ लीड़ी

ग्राम पधारे। दोनों महान् सन्तों का मिलन परस्पर विचारों के आदान-प्रदान के कारण और भी महत्त्वपूर्ण बन गया। वृहद् साधु सम्मेलन का समय नजदीक था, आचार्य श्री ने अपने सन्तो के साथ अजमेर की ओर प्रस्थान किया।

मझला कद, उन्नत भाल, पृष्ठ भाग पर धर्मशास्त्रो के पुट्ठे, नीची नजर, स्कन्ध पर रजोहरण धारण किये तरुण वय आचार्य प्रवर मे मानो धर्माचरण साकार हो उठा हो। ऐसे श्वेतवस्त्रधारी आचार्य श्री के चरणकमल अजमेर धरा पर पड़ते ही जय-जयकार के नारो से गगन गुजायमान होने लगा। जनमेदिनी साधुचर्या के कायक्लेश से चिन्तित थी और आचार्य श्री विभिन्न इकाइयो मे विभक्त होकर छिन्न-भिन्न हो रहे जैन समाज को एकता के सूत्र मे आबद्ध करने का चिन्तन कर रहे थे। श्रमण-श्रमणी वर्ग मे व्याप्त भिन्न-भिन्न समाचारिया, भिन्न-भिन्न आचार-विचार पर्वाराधन की तिथियो मे मतभेद, द्रव्य और भाव के भेद से मतान्तर आदि पर विचार कर समान श्रमणाचार और समान तिथि पर्व कैसे हो, इत्यादि सघ-ऐक्य विषयक चिन्तन करने लगे।

अचानक पण्डित रत्न शतावधानी मुनि श्री रत्नचन्द्र जी महाराज की ओर से वृहद् साधु सम्मेलन को एक वर्ष आगे स्थगित किये जाने की संस्तुति पर आचार्य श्री हस्तीमल जी म ने पूर्व निर्धारित समय पर ही सम्मेलन करने का अभिमत प्रकट किया। इससे चरितनायक की दृढ़ निर्णय क्षमता का परिचय मिला।

वृहद साधु सम्मेलन का दृश्य अद्भुत था। ५ से १९ अप्रेल १९३३ तक चले इस सम्मेलन मे स्थानकवासी परम्परा की विभिन्न सम्प्रदायो के ४६३ श्रमणो एव ११३२ श्रमणियो मे से इस सम्मेलन मे २३८ श्रमण एव ४० श्रमणियां उपस्थित थीं। सम्मेलन मे २६ सम्प्रदायो के ७६ प्रतिनिधि मुनिराजो ने भाग लिया। चरितनायक आचार्य श्री हस्ती पूज्य श्री रत्नचदजी मसा की सम्प्रदाय का नेतृत्व कर रहे थे। परम्परा के वयोवृद्ध अनुभववृद्ध स्वामीजी भोजराजजी म. एव श्री चौथमलजी म भी आपके साथ प्रतिनिधि थे।

अजमेर नगर मे धर्म देवो का शुभागमन ऐसा लगता था कि मानो स्वर्ग से देव ही भूमि पर आये हो। विभिन्न प्रातो से पधारे सतो को समीर शुभ कार्यालय, केसरी चदजी की हवेली एव कचेरी मे ठहराया गया। राजस्थान, गुजरात और पजाब के सत समीर शुभ कार्यालय मे विराजे। आचार्य श्री तीसरी मजिल मे विराज रहे थे। मध्य मे कविवर्य श्री नानचन्दजी म.सा., श्री मणिलालजी मसा. एव शतावधानी श्री रत्नचदजी मसा विराज रहे थे। कुए के पास कच्छ के पूज्य श्री नानचन्द जी म. सा, दरवाजे पर पजाबकेशरी युवाचार्य श्री काशीरामजी मसा., उपाध्याय श्री आत्मारामजी मसा., गणिवर्य श्री उदयचदजी मसा., वाचस्पति श्री मदनलालजी मसा आदि पजाबी सत विराजे हुए थे। नीचे के भाग मे मरुधर केसरी श्री मिश्रीमलजी म.सा., श्री छगनलालजी म.सा., और श्री कुन्दनमलजी मसा आदि सतगण सब सन्त मुनिराजो की देखरेख एव सम्हाल के लिये विराजे हुए थे। सम्मेलन के समय लगभग ५० हजार श्रावक-श्राविका अजमेर मे उपस्थित थे।

समीर शुभ कार्यालय भवन (ममैयो के नोहरे) मे बड़ के नीचे सम्मेलन की बैठके होती थी, जिनमें प्रतिनिधिगण गोलाकार विराजते। सम्मेलन का शुभारम्भ शतावधानी श्री रत्नचदजी म.सा. द्वारा प्रार्थना एव आपश्री द्वारा संस्कृत मे मंगलाचरण के साथ हुआ। आप द्वारा प्रस्तुत स्वरचित मंगलाचरण की कुछ मगल कड़ियाँ इस प्रकार है—

"सफलयन मुनिसम्मेलनमदा, विजयना मुनिसम्मेलनमद।
कालाद वहा सयन्ता जैनी ज्ञातिमहो सम्मद।
सम्यग्धर्यान नतमार्हतमध्वान सम्मद॥"

सम्मेलन की कार्यवाही को शान्तिपूर्वक सचालित करने हेतु गणिवर्य श्री उदयचन्दजी म.सा. एव शतावधानी श्री रत्नचदजी म.सा. को शान्तिरक्षक बनाया गया। मुनि सम्मेलन का मुख्य लक्ष्य पक्खी, सवत्सरी के विवाद को मिटा कर समाज मे एक वाक्यता लाना था। परन्तु पूज्य श्री हुकमीचन्दजी म.सा. की सम्प्रदाय के दो पूज्यो के एकीकरण हेतु श्री मरुधरकेशरी जी म.सा. के सत्याग्रह एव जनता के आंदोलन से मुनि सम्मेलन का अधिक समय उसी मे चला गया। अंततोगत्वा धर्मवीर श्री दुर्लभजी एव सेठ श्री वर्द्धमान जी पितलिया की सूझबूझ और पूर्ण आग्रह से आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. ने स्वीकार किया कि शतावधानी जी महाराज, पूज्य श्री अमोलक ऋषि जी महाराज और युवाचार्य श्री काशीरामजी म.सा आदि प्रमुख सत बद लिफाफे मे जो निर्णय देगे, उसे हम मान्य करेगे। कुछ काल के बाद शतावधानी जी म.सा. आदि मुनि मडल ने दोनो आचार्यो के समाधान की घोषणा की। हर्षध्वनि के साथ पूरे सघ मे हर्ष व जय जयकार के नारो के साथ आकाश गूज उठा। दोनो आचार्यो का एक साथ आहार संबध चालू हुआ।

सम्मेलन का सबसे बडा लाभ एक दूसरे से दूर रहने वाले सतो का प्रेम मिलन और पीढियो से बिछुड़े भाइयों का मिलन था। बाल दीक्षा, सवत्सरी पर्व, सचित्ताचित्त विचार एव प्रतिक्रमण आदि चर्चा के मुख्य विषय थे। समाचारी मे कई सर्वमान्य नियमो का निर्णय हुआ।

बाल-दीक्षा पर बहस के बाद उत्सर्ग मे १६ वर्ष की आयु नियत की गई। सवत्सरी की एकता के लिये साधु-श्रावको की एक समिति बना कर उसका निर्णय सर्वमान्य रखा गया। सचित्त अचित्त निर्णय पर भी चर्चा हुई। नाज की चर्चा पर उपाध्याय श्री आत्मारामजी म के साथ आचार्य श्री का भी नाम था। विचार विमर्श के बाद बीजो का व्यवहार मे सघट्टा टालना तय हुआ। एक प्रतिक्रमण के लिये गठित समिति मे श्री छगनलालजी म श्री सौभाग्यमुनिजी म एव पूज्य आचार्य श्री थे। एक प्रतिक्रमण एव सवत्सरी के प्रतिक्रमण मे २० लोगस्स का निर्णय मान्य हुआ। सम्मेलन मे एक और महत्त्वपूर्ण उपलब्धि का कार्य - पजाब की विभिन्न सम्प्रदायो मे प्रचलित पगी और परपरा के भेद का सदा के लिये हल निकालकर पजाब श्रमण सघ की एकता स्थापित करना था।

सम्मेलन मे समागत विविध सम्प्रदायो के ६-७ आचार्यों मे रत्नवश के प्रतिनिधि हमारे चरितनायक आचार्य श्री लघु वय के आचार्य थे फिर भी सब उनका सम्मान रखते थे, उनकी हर बात को ध्यान से सुना गया एव हर निर्णय मे उनकी राय को महत्त्व दिया गया। उनका ज्ञान-वृद्धत्व 'वृद्धत्व जरसा विना' की उक्ति को सार्थक कर रहा था। सतो मे पारस्परिक वात्सल्य, गुणो की कद्र और समाजहित की भावना थी।

सम्मेलन मे चरितनायक के अनेक अज्ञात गुण रेखांकित हुए। उनका चिन्तन भी मुखरित हुआ, जैसे —१ बुद्धिमान को चाहिए कि वह उपायो के साथ अपायो (बाधाओं) का भी विचार कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व ही कर ले। २ विवादग्रस्त एवं जटिल बातो के हल विद्वत् समिति से हो। ३ सगठन भेदभाव मिटाता है। मैं बड़ा और मेरी सम्प्रदाय बड़ी की भावना के स्थान पर 'हम सब महावीर के पुत्र हैं और सभी हमारे बाधव है।' इस प्रकार का सद्भाव सफलता का द्वार है। ४. कल्याण के कार्यक्रम शास्त्र व लोक से अनुमोदित हो। ५. निष्पक्ष व निरभिमानी को प्रमुख बनाया जाए। ६ चर्चा अथवा वाद मे सम्बधित पक्षो की उपस्थिति आवश्यक है। उनका यह चिन्तन बड़े-बड़े सन्तों को भी सटीक लगा।

आचार्यश्री को सम्मेलन की कार्यवाही के लिए 'विषय निर्धारण समिति' का सदस्य, मेवाड़ और मालवा प्रान्त के कार्यवाहक मत्री, मारवाड़ प्रदेश के ज्ञानप्रचारक मडल के सदस्य, साधु-श्रावक प्रतिक्रमण विधि, पाठ शुद्धि -

अशुद्धि, दीक्षाविधि और प्रत्याख्यान विधि निर्णय समिति का सदस्य तथा आगमोद्धारक समिति का सदस्य मनोनीत किया गया, जो चरितनायक की गम्भीरता, सजगता, विद्वत्ता के साथ सर्वप्रियता को रेखांकित करता है। अनेक जटिल और विवादास्पद मत वैभिन्य के विषयों को सुलझाने मे आपकी योग्यता की सभी ने सराहना की। सम्मेलन के अन्तिम दिन कॉन्फ्रेंस के अधिवेशन मे न जाकर चरितनायक ने अतीव दूरदर्शिता का परिचय दिया। उस दिन अनेक पूज्य मुनिराजों को ध्वनिवर्धक यन्त्र मे बोलना पड़ा। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. नहीं बोले , अन्य सन्तों ने उसका प्रायश्चित्त लिया, किन्तु पूज्य चरितनायक हस्तीमलजी म.सा. तो पूर्णत. निर्दोष रूपेण बच गए, जिसकी सर्वत्र श्लाघा हुई। पूज्य जवाहराचार्य की भाषा में –"आचार्य हस्तीमलजी म.सा. सबसे चतुर निकले।"

प्राथमिक होने पर भी अजमेर सम्मेलन मे जो कार्य हुआ, उतना आगे के सम्मेलनों मे नही हो सका। चरितनायक ने अपने सस्मरण मे स्वय लिखा है –"साम्प्रदायिक समस्याओं मे बिना उलझे सरल मन से गीतार्थों को कार्य करने का अवसर दिया जाता तो बहुत बड़ा कार्य हो सकता था।"

■

मारवाड़ एवं मेवाड़ में विचरण

(संवत् १९९०-१९९४)

• जोधपुर चातुर्मास : उपाध्याय श्री आत्मारामजी के साथ (संवत् १९९०)

जोधपुर श्री सघ की ओर से श्री चन्दनमलजी मुथा, श्री शम्भूनाथ जी मोदी, श्री लच्छीरामजी साड प्रभृति श्रावको की भावभरी उत्कट विनति के कारण उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज एवं चरितनायक का सयुक्त चातुर्मास (सवत् १९९०) जोधपुर के लिए स्वीकृत हुआ। प्रथम मिलन होने पर भी दोनो परम्पराओ के मुनियो में आत्मीयता की लहर दौड़ गई। दोनो महापुरुष अपने मुनि-मण्डल सहित अजमेर से विहार कर पुष्कर, थावला, मेड़ता सिटी आदि ग्राम-नगरो मे धर्मोद्योत करते हुए हुए पीपाड़ पधारे। उपाध्याय श्री काबरो के नोहरे मे और चरितनायक उपाश्रय (पुखराज की पाठशाला) मे विराजे। दोनो महापुरुषो के व्याख्यान एक ही स्थान काबरा के नोहरे मे होते रहे। तदुपरान्त वि.स१९९० का सयुक्त चातुर्मास करने हेतु जोधपुर पधारे। जोधपुर के नागरिक हर्षित एव उत्साहित थे। धर्माराधन खूब हुआ। सन्तो मे परस्पर इतना प्रेम भाव था कि किसी को सम्प्रदाय भेद का आभास ही नही होता था। दोनो सघाटको के श्रमणों ने शास्त्रो के अध्ययन-वाचन का आनन्द लिया। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म और पूज्य श्री के इस सयुक्त चातुर्मास मे अनेक उपलब्धिया हुई। इसी चातुर्मास में उपाध्याय श्री ने तत्त्वार्थसूत्र के सभी सूत्रो का जैनागमो मे उद्गम खोजा जिससे 'जैनागम तत्त्वार्थ समन्वय' ग्रन्थ तैयार हुआ। इसकी पाण्डुलिपि का लेखन प. दुःखमोचन जी झा ने किया। चरितनायक की मौन और ध्यान-साधना का भी विकास हुआ।

जोधपुर के धर्म प्रेमी भक्तों ने सन्तो की सेवा एवं समाधि का पूरा ध्यान रखा। एकदा उपाध्याय श्री आत्मारामजी म.सा. के एक सन्त मोहवश अदृश्य हो गए। उन्हे नये प्रदेश मे इस प्रकार की घटना से विशेष दुःख हुआ। आचार्य श्री को भी बड़ा विचार हुआ, पर आगे प्रकाश दिखा। उत्साही युवा समाजसेवी श्री विजयमलजी कुम्भट ने अपने सहयोगियो के माध्यम से बिना किसी को खबर दिए गवेषणा की और अदृश्य हुए मुनि को वापस उपाध्याय श्री की सेवा में पहुंचाकर शान्ति की सांस ली। युवको मे गोपनीयता, अनुशासन और निष्काम सेवा देख सन्त-समुदाय को भी बड़ी प्रसन्नता हुई। बुजुर्ग श्रावकों मे चन्दनमलजी मुथा, नाहरमलजी पारख, धूलचन्दजी रेड, पारसमलजी लुणावत आदि की सेवाएँ भी स्मरणीय थी। श्री दौलतरूपचन्दजी भण्डारी के मधुर भजन सबके आकर्षण के केन्द्र थे। चतुर्विध संघ में शान्ति, प्रीति और सहयोग की नीति से ओसवाल सिंह सभा जोधपुर द्वारा संचालित सरदार हाई स्कूल में एक धार्मिक पुस्तक तीनों सम्प्रदायों को मान्य हो, वैसी तैयार कर चालू की गई। शाह नवरत्नमलजी भाण्डावत उस समय सरदार हाई स्कूल के अध्यक्ष थे।

चरितनायक आचार्य श्री ने स्वयं अपने संस्मरणो में इस वर्षावास का स्मरण करते हुए लिखा है "उपाध्याय श्री के सहवास में ज्ञान-ध्यान , विचार चर्चा में आदान-प्रदान का बड़ा लाभ मिला। मौन और ध्यान-साधना मे हमें काफी प्रेरणा मिली। वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध होकर भी वे आचार्य पद का आदर रखते थे।"

आचार्य श्री अमरसिंहजी म.सा. के समय रत्नवंशीय वादीमर्दन श्री कनीराम जी महाराज का उनसे वात्सल्य

सम्बन्ध था। फिर बहुश्रुत आचार्य श्री विनयचन्दजी महाराज के समय सरल स्वभावी आत्मार्थी श्री मयाराम म का वात्सल्य सम्बन्ध रहा। इस चातुर्मास से पुरानी स्मृतिया जीवन्त हो उठी।

चातुर्मास के पश्चात् स्वामीजी श्री भोजराजजी म. और श्री लक्ष्मीचन्दजी म पूज्य उपाध्याय श्री आत्मारामजी म.सा. की सेवार्थ पाली तक साथ पधारे। पारस्परिक सौहार्द का यह अनूठा उदाहरण होने के साथ ही चरितनायक की सूझबूझ, विशालता एव सरलता का प्रतीक था।

आचार्य श्री बनाड़, दईकड़ा होते हुए भोपालगढ़ पधारे। स्वामीजी श्री भोजराजजी म. एव श्री बडे लक्ष्मीचन्दजी महाराज ठाणा २ उपाध्याय श्री आत्मारामजी म को पाली पहुचाकर आचार्य श्री की सेवा में भोपालगढ पधार गए। पूज्य उपाध्याय श्री ने सन्तो की सेवा से प्रसन्नता व्यक्त की। यहाँ से नाडसर, रजलानी, बारणी आदि गावों मे धर्म-प्रचार करते हुए नागौर पधारे।

चरितनायक आचार्य भगवन्त का चिन्तन रहा कि चतुर्विध-सघ के संचालन, विकास एव अभ्युदय मे साध्वीमडल की अहम भूमिका है। इतिहास याकिनी महत्तरा प्रभृति साध्वीमडल द्वारा किये गये उपकार का साक्षी है। रत्नवशीय साध्वी समुदाय को ज्ञान-दर्शन-चारित्र के क्षेत्र मे विशेष ख्याति रही है। यह ख्याति - परम्परा और वर्धमान हो, इस हित-चिन्तन के अनुरूप यहाँ साध्वी-सघ के लिए एक अभ्युदयकारिणी मर्यादित दिनचर्या निश्चित की गई। महासती छोगाजी, अमरकवर जी, बड़े धनकवर जी आदि साध्वियाँ भी वही विराज रही थी। अत चतुर्विध सघ का एक मनोहारी समागम हुआ। परस्पर गहन विचार-विमर्श भी हुआ।

• पीपाड़ चातुर्मास (सवत् १९९१)

यहाँ से पुन भोपालगढ, पीपाड़, जैतारण नीमाज, मेला का बिराँठिया , बर, ब्यावर एव सेन्दडा को पावन करते हुए चौदहवा चातुर्मास करने वि.स १९९१ मे पीपाड़ पधारे। चातुर्मास काल मे धर्मदीप प्रदीप्त हुआ। श्री जुगराज जी मुणोत, सोहनमलजी कटारिया, केवलचन्दजी काकरिया, सज्जनराजजी चौधरी, रावतमल जी मुथा आदि ने भजन-भाव एव सन्त-सेवा में प्रगाढ रस लिया। अनेक तरुणो ने थोकड़े सीखे। **चातुर्मास के प्रारंभ में आचार्य प्रवर की अनुमति से जोधपुर के महामन्दिर में महासती श्री सुगनकंवर जी ने आषाढी पूर्णिमा को संथारा ग्रहण किया था जो ५२ दिनों में भाद्रपद शुक्ला ७ को सीझा।** दिवगत साध्वीरत्ना को चार लोगस्स से श्रद्धाञ्जलि दी गई। चातुर्मास मे सतारा के सेठ श्री मोतीलाल जी मुथा, गुलेजगढ के लालचन्दजी मुथा तथा सिरेहमल जी आदि अनेक श्रद्धालुओ के परिवार दक्षिण-भारत से आकर मुनि-सेवा और धर्मध्यान मे निरत रहे। प्रज्ञाचक्षु धूलचन्दजी सुराणा की प्रतिभा सबको चकित किए बिना नही रही। यह चातुर्मास आध्यात्मिक ठाट-बाट से सानन्द सम्पन्न हुआ। तदुपरान्त विहार कर आप ठाणा ६ के साथ जोधपुर सिंहपोल में विराजे।

यहाँ दो विरक्त बहनों की संयम लेने की भावना फलवती हुई। माघ शुक्ला पंचमी के दिन जोधपुर निवासी स्व. सांवतराज जी बागरेचा की धर्मपत्नी स्वरूपकंवर जी एवं भोपालगढ़वासी श्री बख्तावरमल जी मूथा की धर्मपत्नी बदनकंवरजी की भागवती दीक्षा महासती श्री अमरकंवर जी महाराज की निश्रा में सम्पन्न हुई। इस अवसर पर पूज्य श्री जवाहरलालजी म की परम्परा के श्री शोभागमल जी म.सा भी उपस्थित थे। जोधपुर से आप ब्यावर मे धर्मजागरण करते हुए अजमेर पधारे। यहाँ माहेश्वरियों के न्याति नोहरे मे विराजे।

• पाली चातुर्मास (संवत् १९९२)

वि.स. १९९२ का चातुर्मास सम्पन्न करने के लिए आचार्य श्री ठाणा ६ से पाली पधारे। यहाँ नारेलो के भखार मे आपका चातुर्मास हुआ, जो कालुरामजी रेड की धर्मपत्नी के नेश्राय मे था। सघ का सगठन, अनुशासन और धर्मप्रेम श्लाघनीय रहा। सभी सम्प्रदायो के श्रावक-श्राविकाओ ने धर्माराधन का लाभ लिया। पाली का चातुर्मास सानन्द धर्मवृद्धि पूर्वक सम्पन्न हुआ। चातुर्मास मे सर्व श्री हस्तीमलजी सुराणा, पुखराजजी लूकड, इन्द्रमलजी डोसी, नथमलजी पगारिया, हस्तीमलजी रेड आदि व्यवस्था मे अग्रणी थे। वयोवृद्ध श्रावक श्री मुन्नीलालजी, मूलचन्दजी कटारिया आदि शास्त्र-श्रवण के रसिक थे।

इस चातुर्मास काल मे पूज्य श्री सोहनलाल जी म.सा. (पजाबी) का अमृतसर मे स्वर्गगमन होने पर, आचार्यप्रवर ने सस्कृत भाषा मे अपनी गेय भावाञ्जलि इस प्रकार समर्पित की-

काल ! किमु निष्कारुण्य कृतम् ॥ध्रु ॥
हन्त काल ! निर्दयता - स्वीकृतहृदा त्वया किं कृतम्।
निर्धनधनमिव मुनिसर्वस्व सौवर्णं किं हतम् ॥१ ॥
चिरपालितं मुनीन्द्र - निधान ज्ञानेनालङ्कृतम्।
वीरसघमुद्बोधयितुं यै प्रान्ते यतन धृतम् ॥२ ॥
नो मुनिवृन्दं संघटितं नो शास्त्रं स्व वोद्धृतम्।
जिनशासनोद्दिधीर्षा - विधितो विधिना पृथक्कृतम् ॥३ ॥
यतमानानां साधनहीन शमिनां समयाऽऽदृतम्।
पूज्यै सोहनलालमुनीन्द्रैर्देवत्वं सभृतम् ॥४ ॥
हस्तिमल्लमुनिरभ्यर्थयते गीर्वाणालयसृतम्।
सदा कार्यमार्यैराईतमिह दिव्यतयोपकृतम् ॥५ ॥

रचना का भाव इस प्रकार है - "हे काल ! तुमने निर्दयता स्वीकार कर यह क्या किया ? निर्धन के धन की भाँति मुनि सर्वस्व सौवर्ण का हरण कर लिया। ज्ञान से अलङ्कृत मुनि श्री ने पजाब मे वीरसघ को उद्बोधित करने का यत्न किया।" प दु.खमोचनजी झा ने पृथक् रूपेण सस्कृत भाषा विरचित श्रद्धाञ्जलि प्रेषित की।

पाली का सफल चातुर्मास सम्पन्न कर आचार्य श्री सोजत, ब्यावर होते हुए वयोवृद्ध महासती जी बड़े राधाजी को दर्शन देने अजमेर पधारे। अजमेर श्री संघ एवं स्थिरवास विराजित महासतीजी के आग्रह से अगले चातुर्मास के लिए अजमेर की विनति स्वीकार की गई। महासतीजी को दर्शन देकर आप श्री किशनगढ, मदनगज आदि क्षेत्रो को पावनकर शेषकाल मे जयपुर पधारे। मार्ग मे पूज्य श्री मन्नालालजी म की परम्परा के आत्मार्थी मुनि श्री खूबचन्दजी म सा. के साथ आपका प्रेम-मिलन हुआ। जयपुर मे धर्मप्रचार कर चातुर्मासार्थ अजमेर पधारे।

• अजमेर चातुर्मास (संवत् १९९३)

आचार्य श्री का १६वा चातुर्मास वि सवत् १९९३ में ठाणा ६ से अजमेर में हुआ। अजमेर मे वैराग्यवती बहन श्रीमती हरकंवर जी (कोटा निवासी श्री तेजमल जी बोहरा की धर्मपत्नी) दीक्षित होने के लिए अत्यत उत्कण्ठित थी। श्वसुर पक्ष से दीक्षा के लिए आज्ञा में विलम्ब जानकर बरेली के सेठ श्री रतनलाल जी नाहर ने अपने पर जिम्मेदारी लेकर अभिभावक के रूप मे दीक्षा की अनुमति दी। बड़े धनकंवर जी महाराज की निश्रा मे इनकी दीक्षा

द्वितीय भाद्रपद शुक्ला पंचमी को सम्पन्न हुई। केकड़ी में पूर्व में हुए तात्त्विक प्रश्नोत्तरों का क्रम यहाँ भी चलता रहा। कृष्णलाल जी बाफना जोधपुर ने कई प्रश्न किए, जिनका समीचीन समाधान किया गया। मूर्तिपूजक समाज की तरफ से मुखवस्त्रिका और मूर्ति के प्रश्नों को लेकर विवाद हुआ और चरितनायक को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा गया। इसे तत्काल स्वीकार कर लिया गया, किन्तु सुगनचन्द जी नाहर आदि समाज प्रमुखों द्वारा लिखित रूप मे प्रकट किए गए शान्ति संदेश को सुनकर दोनों ओर के सत अपने स्थान पर लौट आए और समाज की वह हलचल सदा के लिए बन्द हो गई। इस प्रकार अजमेर का ऐतिहासिक चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ।

चातुर्मास का विहार तो सुख शान्तिपूर्वक हो गया, पर चातुर्मास मे श्रम की अधिकता से आचार्य श्री ज्वर से पीड़ित हो गये। आपश्री को कमजोरी व पीलिया के कारण महीने भर श्री गुमानमलजी लोढ़ा की कोठी में विराजना पड़ा। स्वस्थ हो कर विहार की तत्परता कर रहे थे कि सहसा मुनिश्री छोटे लक्ष्मीचन्द जी के पैर पर तांगे का पहिया फिर जाने के कारण गहरी चोट आने से आचार्यश्री का अजमेर मे अधिक ठहरना हुआ। पीढ़ियो से ही चतुर्विध-संघ की अगाध-भक्ति पूर्वक सेवा करने वाले अनन्य गुरुभक्त परम्परा के प्रमुख श्रावक सतारानिवासी वयोवृद्ध श्रेष्ठिवर्य श्री चन्दनमलजी मुथा चातुर्मास काल मे ही आचार्य श्री एव मुनिमण्डल की सेवा मे यह निवेदन कर गये थे कि "आज तक तो मैं सेवा में आता रहा । अब गुरुदेव ! मेरा अन्तिम आना है। अब तो आप ही महाराष्ट्र को पावन करने की कृपा करेगे तो मुझे दर्शन हो सकेंगे।" श्रावकजी की गद्‌गद् भाषा मे की गई प्रार्थना असरकारक थी। अत मुनि लक्ष्मीचन्द जी के स्वास्थ्यलाभ करने पर चरितनायक ने मुनिमडल के साथ महाराष्ट्र को लक्ष्य कर अजमेर से प्रस्थान किया। अजमेर केसरगज से नसीराबाद, बान्दनवाड़ा, भिनाय, टांटोटी, विजयनगर, गुलाबपुरा, बनेड़ा होते हुए भीलवाड़ा पधारे। वहा होली चातुर्मास हुआ। शेखेकाल मे आचार्यश्री के कपासन मे हुए व्याख्यानो से धर्मप्रभावना हुई। वहाँ से विहार कर करेड़ा, मावली, देबारी होते हुए आयड पधारे। वहाँ कोठारी जी की बाड़ी मे विराजे। वहाँ से उदयपुर पधारे। यहाँ पर समाचार मिले कि सतारा मे चातुर्मास की विनति करने वाले सेठ चन्दनमल जी मुथा का निधन हो गया है। यह सुनते ही विहार की गति मन्द पड़ गई। अवसर जानकर उदयपुर श्री संघ ने वि.स. १९९४ का वर्षावास उदयपुर मे करने हेतु भावभरी विनति की, जो स्वीकृत हुई।

- उदयपुर चातुर्मास (संवत् १९९४)

इस बीच आस-पास के अन्य क्षेत्रों मे जैन धर्म के प्रचार के लक्ष्य से आप गोगुदा पधारे। प्रकृति की गोद मे बसे इस गांव में देव, गुरु एव धर्म की आराधना का ठाट रहा। तदनन्तर नाथद्वारा मे कतिपय दिन बिराजे। देलवाड़ा से एकलिंगजी होते हुए उदयपुर के विशाल पचायती नोहरे में चातुर्मासार्थ पधारे। यहां का सम्पूर्ण स्थानकवासी जैन समाज धर्म-ध्यान मे प्रगाढ़ रुचि लेता रहा। पर्युषण के दिनों मे धर्म-ध्यान के साथ तपश्चर्या की तो मानो झड़ी ही लग गई।

इस चातुर्मास मे दीवान बलवन्त सिंह जी कोठारी की महत्त्वपूर्ण श्रद्धा-भक्ति एव भूमिका रही। मुख्यत: उनके आग्रह से ही यह चातुर्मास उदयपुर में हुआ। आप प्रतिदिन आचार्यप्रवर का प्रवचन श्रवण करने के अनन्तर ही दरबार में पहुचते, अत: प्राय. विलम्ब हो जाता। महाराणा ने दीवान साहब से विलम्ब का कारण पूछा तो दीवान साहब ने फरमाया कि यहाँ मारवाड़ के लघुवय के जैनाचार्य विराज रहे हैं, मैं प्रतिदिन उनका प्रवचन सुनकर दरबार मे आता हूँ, अत: विलम्ब हो जाता है। महाराणा के मन मे जैनाचार्य के दर्शन एवं प्रवचन श्रवण की उत्कट अभिलाषा हुई और दीवान बलवन्त सिंह जी से कहा-"हमें भी लघुवय के जैनाचार्य के दर्शन कराइए, दरबार में

व्याख्यान कराइए और महल मे पगल्या कराइए।" दीवान कोठारी साहब ने महाराणा की भावना से आचार्य श्री को अवगत कराया। आचारनिष्ठ आचार्य श्री ने दरबार में जाने की स्वीकृति प्रदान नही की। दीवान साहब असमजस की स्थिति मे थे। महाराणा को ना करना उन्हें उचित प्रतीत नही हो रहा था, अतः उन्होंने एक युक्ति सोची और गुरुदेव के समीप संदेश भिजवाया - "गुरुदेव ! मैं अस्वस्थ हूँ, कृपया मागलिक देकर कृतार्थ करे।" आचार्यप्रवर वहाँ पधारे, किन्तु वहाँ दरबार के पधारने की तैयारी देखकर दीवान साहब से बोले - "मेरे सामने भी अन्यथा कहते हो।" आचार्य श्री तुरन्त जिस दिशा से आए थे उसी दिशा की ओर लौट गए। यह घटना आचार्यप्रवर के अनासक्त जीवन की द्योतक होने के साथ इस यशस्विनी रत्लवश परम्परा के पूर्वाचार्य महापुरुषो के जीवनादर्श कि 'डोकरी के घर में नाहर रो कई काम' की सहज स्मृति दिला देती है। कहाँ एक ओर अपनी यश प्रसिद्धि के लिये राजा महाराजाओ, सत्ताधीशो को बुलाने का उपक्रम व कहाँ आग्रह होने पर भी ऐसे अवसरो से बचने का भाव। यदि व्यसन-मुक्ति, व मद्यमास त्याग का प्रसंग हो तो अलग बात है , अन्यथा मात्र यशकामना, प्रशसा प्रसिद्धि के लिये ऐसे प्रसगो से परे रहना इस परम्परा के महापुरुषो की मौलिक विशेषता रही है। महाराणा उनकी इस फक्कड़ता एव सन्त-स्वरूपता पर मुग्ध थे।

वैज्ञानिक डा दौलतसिंहजी कोठारी की उपस्थिति मे चन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्र का आचार्य श्री ने टीका सहित वाचन किया। डा कोठारी के खगोलज्ञान का आगम शास्त्रीय खगोल वर्णन से तुलना का क्रम भी चला। मेवाड़ ही नही, अपितु मारवाड़ और सुदूर प्रान्तो के लोग भी बड़ी सख्या मे दर्शन और प्रवचन का लाभ लेने आए।

• सैलाना की ओर

उदयपुर से कानोड, बड़ी सादड़ी, छोटी सादड़ी होते हुए मालव भूमि मे प्रवेश किया और सैलाना पधारे। सैलाना मे महाराज दिलीप सिंह जी का राज्य था। यहाँ के दीवान प्यारे किशन जी सत्सग के प्रेमी थे। उन्होंने इस अवसर पर एक विद्वत्सभा का आयोजन किया, जिसे सम्बोधित करते हुए आचार्यश्री ने कहा "आर्यावर्त की प्राचीन अध्यात्मपरक सस्कृति को पुनर्जीवित करने का भार विद्वानो पर है। वे नई पौध मे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि लोककल्याणकारी भावनाओ के सस्कार भरकर भारत की भावी पीढ़ी के नैतिक, सामाजिक और धार्मिक धरातल को ऊँचा उठाने का प्रबल प्रयास करे।"

इसी दौरान आचार्य श्री की आज्ञा से जोधपुर के महामंदिर में मार्गशीर्ष शुक्ला पंचमी को श्रीमती फूलकंवर जी (धर्मपत्नी श्री पृथ्वीराज जी भंसाली) की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई। इन्हें हुलासकँवरजी की शिष्या घोषित किया गया।

• स्वामीजी भोजराजजी महाराज का स्वर्गारोहण

सैलाना से जावरा होते हुए आचार्य श्री रतलाम पधारे। महागढ़ से वयोवृद्ध स्वामी श्री भोजराज जी आचार्यश्री की सेवा मे रतलाम आते समय मार्ग में अस्वस्थ हो गए। थोड़े ठीक होते ही स्वामीजी रतलाम पधार गए। विहार और बुखार की दुर्बलता से स्वास्थ्य मे विशेष कमजोरी आ गई थी। विशेषज्ञ चिकित्सको एव प्रख्यात वैद्य रामबिलासजी द्वारा लगन से उपचार किए जाने पर भी लाभ नहीं हुआ। तपःपूत स्वामीजी को मन ही मन आसन्न अवसान का आभास हो गया था। अतः उन्होने अपने पास के पन्ने सन्तो को सम्हला दिए। उन्होने श्री अमरमुनिजी के विषय मे भोलावण दी, इस पर चरितनायक ने उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा-"आप निश्चिन्त रहिए।

मुनिश्री जिस प्रकार आपके गुरुबधु हैं, मेरे भी बड़े भाई हैं।" स्वामी जी का वि.स. १९९४ की फाल्गुन शुक्ला एकादशी को सथारापूर्वक देहत्याग हुआ। इस क्षति से वातावरण विषादमय हो गया। अन्तिम यात्रा मे रतलाम एव आस-पास के ग्राम-नगरो के हजारो श्रद्धालुओ ने भाग लिया। स्वामीजी श्री भोजराजजी महाराज ने विक्रम सवत् १९५८ मे दीक्षा ग्रहण कर लगभग ३६ वर्ष सयम पालन किया। उन्होने तीन आचार्यों आचार्य श्री विनयचन्द्रजी म.सा., आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा एव आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा. की सेवा का लाभ प्राप्त किया। मीठा, तेल, दूध तथा दही के त्यागी स्वामीजी म सा. ने आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा के अध्ययन मे जो अन्य कार्यों से निश्चिन्तता प्रदान की, वह चिरस्मरणीय रहेगी। जब आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा अध्ययनरत रहते थे, तब स्वामीजी भोजराजजी म.सा आगन्तुक दर्शनार्थियो को दूर से खिड़की आदि मे से दर्शन करने के लिये कह देते थे, ताकि अध्ययन मे व्यवधान न हो। शान्त, दान्त, सेवाभावी एव सरलप्रकृति के सन्त स्वामी भोजराजजी को श्रद्धाजलि देते हुए सबकी ऑखे नम थी। आचार्य श्री ने स्वय अपने सस्मरण मे लिखा है —"स्वामी श्री भोजराजजी म के स्वर्गवास से रत्न श्रमणवर्ग मे ही नही, पूरे स्थानकवासी समाज मे एक सेवाभावी और उच्च विचारक सन्त की कमी हो गई। स्वामीजी साधु-साध्वी वर्ग के लिए 'धाय मॉं' के समान वात्सल्य भाव मे अजोड़ थे।"

महाराष्ट्र एवं कर्नाटक की धरा पर

(संवत् १९९५-१९९९)

स्वामीजी के स्वर्गारोहण के अनन्तर फाल्गुन शुक्ला द्वादशी को आचार्य श्री के निर्देशानुसार महासती बड़े धनकवर जी, रूपकवर जी म आदि सतियो ने मारवाड़ की ओर विहार किया और आचार्य श्री ने अगले दिन महाराष्ट्र की ओर। कसारों के मदिर से दिलीप नगर, धराड़, विलपांख, वरमावर, मूलथान, बदनावर, कानवन, नागदा को पदरज से पावन करते हुए चैत्र शुक्ला एकम को धारनगर पधारे। तीन प्रवचन करने के पश्चात् देवला, नालछा होते हुए माण्डू के किले में स्थित प्राचीन जैन मन्दिर में विराजे। वहाँ से भगवानिया घाटा, ऊस ग्राम, धामणोद, निबराणी, ठीकरी, खुर्रमपुरा, वरूफाटक, जुल्वाणिया, बालसमुद्र, भोरशाली, सेन्धवा, गवाड़ी, पलासनेर, सागवी, हाउखेड़, दहीवद सिरपुर, बगाड़ी, जातड़ा, वरसी, नडाणा, करमाणी पधारे। महाराष्ट्र के इस मार्ग का अधिकाश भू भाग पहाड़ी है। भगवानिया घाटा भयानक घाटा है, जिसमे चढ़ाई के साथ-साथ नौ किलोमीटर की ढलान है। ठीकरी ग्राम मे जैनो के दो घर हैं। सेन्धवा मे काठियावाड़ी के स्थानकवासियो के सात-आठ घर हैं। आचार्य श्री के प्रवचनों से यहाँ के जैन धर्मावलम्बियो मे अभिनव स्फूर्ति का सचार हुआ। सेन्धवा से सिरपुर के बीच अधिकतर भीलो की बस्ती है। इस विहारकाल मे श्री तख्तमल जी कटारिया सेवा में साथ रहे। सन्तो को एक ग्राम से दूसरे ग्राम पद-यात्रा करते हुये कितनी कठिनाइयो का सामना करना पड़ता है, यह इस यात्रा मे सहज अनुभव किया जा सकता था। बीहड़ जंगल, ऊँची पहाड़िया, अजैन बस्तियाँ, अपरिचित लोग, सभी कुछ प्रतिकूल होने पर भी साध्वाचार के नियमो के प्रति अडिग भाव एवं परिस्थितियों के प्रति समभाव, यह ही तो साधना है। साधु समस्त परीषहों मे भी प्रसन्नता का भाव लुप्त नही होने देता। कहा गया है— सम-सुह-दुक्ख-सहे य जे स भिक्खू (दशवैकालिक, १०.११) जो सुख और दु.ख को समभाव पूर्वक सहन करता है, वह भिक्षु है। भिक्षु शान्त होता है एवं अपने कर्तव्य पक्ष को सम्यक् प्रकार से जानता है—'खमसे अविहेडए जे स भिक्खू (दशवैकालिक १०.१)

विहार क्रम मे आप अक्षय तृतीया के पावन दिन सोवनगिरि पधारे। यहां एक दिगम्बर जैन मदिर मे विराजे। तदनन्तर धूलिया पधारे। श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ द्वारा अगवानी की गई। अहमदनगर के श्रीसघ के २५ श्रावक प्रमुखो ने अहमदनगर चातुर्मास हेतु प्रार्थना की। धूलिया मे स्वाध्याय और तप-त्याग की झड़ी सी लग गई। यहाँ आचार्य श्री के परम भक्त श्री भीकमचन्द जी चौधरी, लालचन्दजी, सेठ मिश्रीमलजी आदि ने सेवा का अच्छा लाभ लिया। यहाँ मनसा, वचसा, कर्मणा संघ-सेवा मे समर्पित गुरुभक्त स्व श्री चन्दनमलजी मुथा के भतीजे श्री मोतीलालजी मुथा दर्शनार्थ पधारे। उनके मन मे खेद था, जिसे प्रकट करते हुए आपने गुरुदेव से कहा—"काकाजी की भावपूर्ण विनति के अनुरूप आप श्री तो अत्यन्त कृपा कर विकट परीषहों को सहते हुए महाराष्ट्र पधारे, पर दैवयोग से काकाजी नही रहे। आपके इस भूमि पर पदार्पण एवं आपके दर्शन कर वे कितने प्रमुदित होते।"

- अहमदनगर चातुर्मास (सं. १९९५)

मालेगाव, मनमाड़, बेवला आदि क्षेत्रों को प्रवचन-पीयूष से पुनीत कर आप आम्बोरी, पीपलगाव, भिंगार होते हुए

चातुर्मासार्थ अहमदनगर के नवीपेठ धर्मस्थानक मे पधारे। वि. संवत् १९९५ के आपके इस १८वे चातुर्मास मे लगभग ५०० जैन घरों वाले इस व्यावसायिक नगर में जैन-अजैन सभी ने धर्माराधन का लाभ लिया। चरितनायक ने यहा आगम-सम्पादन का कार्य अपने हाथ मे लिया। इसे अहमदनगर चातुर्मास की विशेष उपलब्धि ही कहा जाएगा। बम्बई विश्वविद्यालय में अर्धमागधी के प्रशिक्षण हेतु पाठ्य पुस्तक दशवैकालिक सूत्र दुर्लभ है, यह जानकर दशवैकालिक सूत्र सरल सस्कृत टीका एव हिन्दी अनुवाद सहित तैयार करवाया और अमोलकचन्दजी सुरपुरिया ने उसका मराठी अनुवाद किया। सतारा के श्रेष्ठिवर श्री मोतीलाल जी मुथा का इसमे विशेष सहयोग रहा। अहमदनगर महाराष्ट्र का प्रमुख नगर एवं स्थानकवासी जैन संघ का प्रमुख केन्द्र होने से यहाँ अच्छी धर्मप्रभावना होती थी। नगर का सघ सरल, भक्तिमान, सेवाभावी और महाराष्ट्र का कर्णभूषण कहा जा सकता है। श्री माणकचन्दजी मुथा, भाऊ सा. श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया, श्री पूनमचन्द जी भण्डारी आदि यहाँ के प्रमुख कार्यकर्ता थे। श्री सिरहमलजी लोढा, धोडी रामजी आदि श्रावक शास्त्र-श्रवण के उत्तम रसिक थे। सेवाभावी श्री मेघराजजी मुणोत एव श्री कुन्दनमलजी जसराजजी गूगले की भक्ति विशेष सराहनीय थी। यहाँ एक श्रावक ऐसे थे जो १७ वर्षों से दुग्धाहार ही करते थे एव मौन रखते थे । रत्नवश की परम्परा के मूलपुरुष पूज्य कुशलोजी म. के सासारिक वशज सोनई के श्री केशरीमलजी, उत्तमचन्दजी चगेरिया का परिवार भी यहाँ ही रहता था। चंगेरिया परिवार ने भी सेवा का पूरा लाभ लिया।

चरितनायक महाराष्ट्र के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रो मे यत्र-तत्र बसे हुए लोगो को धर्मबोध देने के लक्ष्य से आरणगाव, अकोलनेर, सारोला, आस्तगाव, राजनगाव, बेलबण्डी, लूनी, पारगाव आदि क्षेत्रो मे पधारे और धर्म मार्ग से उदासीन हुए जैन गृहस्थो को बोध देते हुए श्रीगोमदा पधारे। यहाँ से धर्म-प्रचार करते हुए कुण्डे गव्वण, विट्ठाण होते हुए पौषकृष्णा १३ को घोड़नदी पधारे। वहाँ कोटा सम्प्रदाय के स्थविर मुनि श्री प्रेमचन्द जी म. आदि सन्त एक ही उपासरे मे आचार्यश्री के साथ बिराजे। परस्पर सौहार्द रहा। **स्थानकवासी सत्तर घरों की बस्ती वाले इस गांव में पशु बाजार लगता था जिसमे वध के लिए पशुओं का क्रय-विक्रय होता था। आचार्य श्री की प्रेरणा से यहां के प्रमुख श्रावक श्री प्रेमराज जी खाबिया ने उस पशु बाजार को बन्द करवाया तथा जिन स्थानों पर बकरों या पाडों की बलि दी जाती थी वहां बलि भी बद करवाई।** यहाँ सेठ झूमरमलजी, खाबियाजी आदि श्रावक बड़े सेवारसिक थे। अधिकाश लोग मारवाड़ के कोसाणा आदि ग्रामो से आए होने से उनको पूर्व की गुरु-परम्परा की स्मृति सहज थी। साधु-साध्वियो के पठन-पाठन की दृष्टि से यह क्षेत्र अच्छा साताकारी था। महासती मगनकँवरजी ने यहाँ से दीक्षा ग्रहण कर पूज्य छगनलालजी महाराज की सन्निधि मे साध्वीवर्ग की पूर्ति की थी। आचार्यश्री ने पूना की ओर प्रस्थान करते हुए मार्गस्थ ग्रामो के साधुमार्ग की श्रद्धा से शिथिल हुए लोगो को प्रेरणाप्रद बोध देकर धर्म मे स्थिर किया। कारेगाव, राजणगाव, कोढापुरी, तलेगाव, फूलगांव, बागोली, ऐरवाड़ा होते हुए माघशुक्ला सप्तमी को पूना पदार्पण किया।

पूना मे सादड़ी मारवाड़ के जैन बधु अपनी अनेक दुकाने चलाने के साथ सघोपयोगी कार्यों मे उदारता के साथ धनराशि लगाते थे। यहाँ स्थानकवासी परम्परा के १५० घर थे। पूना मे बड़े स्थानक मे सतियाँ विराजमान थी, अतः आप छोटे स्थानक मे विराजे। वहाँ के सिद्धान्तप्रेमी श्रावको मे श्री मुल्तानमलजी, श्री हीरालालजी , श्री धोंडीरामजी आदि मुख्य थे। श्राविका समाज मे केशरबाई प्रतिभा सम्पन्न थी।

यहाँ कुछ दिन विराजने के अनन्तर आप खिड़की पधारे। यहाँ जैन विद्यालय चल रहा था। लूंकड परिवार की गुरुभक्ति से धर्मध्यान का अच्छा ठाट रहा। यहाँ वि.सं. १९९६ के चातुर्मास हेतु सतारा का शिष्टमडल रायबहादुर सेठ श्री मोतीलालजी मुथा के नेतृत्व मे उपस्थित हुआ। श्रुतसेवा के महत्त्वपूर्ण कार्य को आगे बढ़ाने की दृष्टि से

आचार्यप्रवर ने सतारा हेतु स्वीकृति प्रदान की। इसी बीच माघ शुक्ला १३ संवत् १९९५ को महामन्दिर जोधपुर में लाडकवरजी (धर्मपत्नी श्री जुगराजजी भण्डारी) की दीक्षा सम्पन्न हुई। लाडकँवर जी म. ने आगे चलकर प्रवर्तिनी पद को विभूषित किया।

• सतारा चातुर्मास (संवत् १९९६)

आचार्य श्री खिड़की से विहार कर चिञ्चवड़, केड़गाव स्टेशन, बोरी, वरवड एवं पारस होते हुए दौंड़ पहुँचे। मार्ग के ग्राम नगरो को फरसते हुए आप ठाणा छह से सतारा के भवानी मंदिर में चातुर्मास हेतु बिराजे। यहां स्थानकवासियों के १५ घर एव माहेश्वरी समाज के अस्सी घर थे जो सभी सत्सग प्रेमी थे। महाराष्ट्र और कर्नाटक के जैन धर्मावलम्बियो ने इस चातुर्मास में सतारा आकर धर्मलाभ लिया। यहाँ पर चातुर्मास मे एकदा आप प्रातःकाल स्थण्डिल के लिए पधार रहे थे, तब करुणाशील चरितनायक ने दयाभाव से नागराज की रक्षा कर उसके प्राण बचाए। **यह रोमांचकारी घटना आपके द्वारा लिखित संस्मरणों में से यहाँ यथारूप प्रस्तुत है–** "प्रातःकाल जगल जाते रोड़ पर लोगों को इकट्ठ देखा। एक के हाथ मे लट्ठ था। एक प्रहार किया। दूसरा करने वाला था। हमारी नजर रोड़ के साप पर पड़ी। मैंने भाई के हाथ की लाठी पकड़ी और नीचे साप को अपने हाथ पोछने का कपड़ा डालकर उठा लिया। शरीर रोमाञ्चित था। मुनि लक्ष्मीचन्द साथ थे। मै ज्योंही उसको लिए चला, सब देखते रह गए। एक भाई पीछे आया और बोला - महाराज ! इसको छोड़ दो। यह चोट खाया हुआ साप है। इसका विश्वास नही। मैंने उसकी बात को सुना अनसुनी की और जगल मे एक नाले के पास पहुँच कर सर्प को छोड़ दिया। उसके आगे नही बढ़ने पर जरा कपड़े से छुआ, तब उसने भी मुह फेर कर देखा और चल दिया। हमने ओघे की दण्डी पर और हाथ मे भी पकड़ा, पर उसमे कोई कलुषित भाव नही देख पाए। प्रभु नाम की बड़ी शक्ति है। जीवन मे श्रद्धा और साहस का यह पहला प्रसग था।" इसमे आचार्यप्रवर की न केवल जीवरक्षा की प्रबल भावना प्रकट हुई, अपितु उनकी निर्भयता एवं प्रभावशालिता का सिंहनाद गूज उठा।

आचार्य श्री के सान्निध्य में सतारा के अहिंसा प्रेमी विद्वान् श्री आटले जी के प्रयासो से आठ अगस्त को **अहिंसा दिवस** मनाया गया। इस दिन सभी प्रकार की हिंसा पूर्णरूपेण बन्द रखी गई। कत्लखानो पर दिन भर ताले लगे रहे। प्रेमपूर्वक मुस्लिम भाइयों ने भी हिंसा बन्द रखी। मछली पकड़ने वालों ने भी मछली पकड़ना बन्द रखा। सभी धर्मों के अनुयायियो ने मिलकर अहिंसा की महिमा बताई, जो सतारा के इतिहास मे स्मरणीय रहेगा। महाराष्ट्र मे फूलमाला का उपयोग विवाह के प्रसग मे सर्वत्र अनिवार्य रूप से होता है, किन्तु अहिंसा के पुजारी श्री आटलेजी ने अपने पुत्र के विवाह मे भी इसका उपयोग नही किया। वे इस विचार के थे कि शाकाहार में होने वाली हिंसा से बचने का भी कोई न कोई उपाय खोज निकाला जाए।

सतारा के चातुर्मास काल में श्रुतसेवा का चिरस्थायी कार्य भी सम्पन्न हुआ। यहाँ सेठ चन्दनमल जी ने जो धनराशि सुकृत फण्ड के रूप में निकाल रखी थी, उसका उपयोग दशवैकालिक सूत्र सस्कृत अवचूरि तथा हिन्दी भाषानुवाद एवं मराठी भाषानुवाद के प्रकाशन में कर लिया गया। इसका सम्पादन प. दुखमोचन जी झा द्वारा किया गया था। इसी चातुर्मास में आचार्य श्री ने नन्दिसूत्र के सम्पादन एवं टीकानुवाद का कार्य प्रारम्भ किया।

आचार्य श्री ने आश्विन शुक्ला द्वादशी के दिन अपने द्वितीय शिष्य के रूप में वारणी (मारवाड़) के श्रीजालम चन्द्र जी (सुपुत्र श्री सम्पतमल जी मूथा) को दीक्षित किया। इनकी दीक्षा यहां बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुई।

दीक्षा महोत्सव पर सम्पूर्ण व्यय भार श्री मोतीलाल जी मुथा ने वहन किया। इस प्रसग पर श्री मुथा जी के द्रव्य सहयोग से एक स्पेशल ट्रेन जोधपुर से सतारा आई जिसमें जोधपुर मारवाड़ के अनेक गावो के लगभग ३०० नर नारी सतारा पहुँचे। महाराष्ट्र के अनेक ग्राम नगरो के श्रावकगण सामूहिक रूप से आये। श्रमण धर्म मे दीक्षित हो जाने के पश्चात् श्री जालमचन्द जी का नाम मुनिश्री जोरावरमल जी रखा गया। इन्ही दिनो जयपुर से कार्तिक शुक्ला १ को बारह गणगौर के स्थानक मे महासती श्री अमर कवर जी के देवलोक हो जाने के समाचार मिले। वे २९ वर्ष की वय मे फाल्गुन शुक्ला २ वि. सवत् १९५९ को श्री जसकवर जी म.सा. की शिष्या के रूप मे सिंहपोल जोधपुर मे दीक्षित हुई थी। उन्हे १५०-१७५ थोकड़े कण्ठस्थ थे। तेले के तप मे ही आपने विनश्वर देह का त्याग किया। ३८ वर्ष की सयम पर्याय मे आपकी पॉच शिष्याए हुईं — सुगनकवरजी , केवलकवरजी, स्वरूप कवरजी, बदनकवरजी एव लाडकवर जी। आप जिज्ञासु बहनो को ज्ञान देने हेतु सदैव तत्पर रहती थी। एक बार उनकी सहवर्तिनी साध्वियो ने मिलकर आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. की सेवा मे प्रेमभरा उपालम्भ दिया कि ये अमरकवर जी महाराज भोजन को छोड़कर आगन्तुक बहनो को पाठ देने लग जाती है। अत आपसे विनम्र निवेदन है कि ये भोजन पर बैठने के पश्चात् किसी भी बहन को पाठ देने न उठे, ऐसा नियम करा दे। सतियो की बात सुनकर आचार्य श्री ने जब महासती जी से पूछा तो बोले- "गुरुदेव ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, पर क्या करूँ मै विवश हूँ, मन मानता ही नही कि कोई मुझसे आध्यात्मिक ज्ञान सीखने आए और मै उन्हे ज्ञान-दान नही दूँ।" जयपुर चातुर्मास मे एक बार साध्वियो ने आहार लाकर आपकी सेवा मे रखा, तो आपने देखा कि पात्र मे स्थित खीर मे बिच्छू है। महासती जी ने अन्य साध्वियो को बिना बताए उसमे से बिच्छू निकाल कर पाट के एक ओर कोने मे रख दिया तथा अपनी लघु साध्वियो से कहा-"आज मेरी इच्छा है कि सारी खीर मैं ही खा लूँ।" साध्वियॉ भला अपनी गुरुणी जी की अभिलाषा को क्यो रोकती। महासती जी ने धर्मरुचि अणगार के समान अपने भावो को उच्च बनाया एव सम्पूर्ण खीर पी गयी। खीर पीने के पश्चात् आपने साध्वियो को स्पष्ट भी कर दिया था कि उन्होने यह खीर स्वाद के कारण नही, अपितु बिच्छू गिर जाने के कारण पी है। उन्होने साथ ही उस गृहस्थ के यहॉ भी सूचना कराने का निर्देश दिया, कि वहॉ उसका भक्षण कोई न करे। जीव-रक्षा का ऐसा उच्चकोटि का भाव धर्मरुचि अणगार के पश्चात् यह ही ध्यान मे आता है। ऐसी त्याग, सजगता एव अप्रमत्तता की प्रतिमूर्ति थी महासती अमरकवर जी महाराज। आठ दिन पश्चात् ही कार्तिक शुक्ला ९ को सिहपोल जोधपुर मे महासती लालकवर जी का स्वर्गवास होने से उन्हे भी चार लोगस्स से श्रद्धाञ्जलि दी गई। आप भी महासती जसकवरजी की शिष्या थी तथा अधिकतर महासती अमरकवरजी के साथ ही विहार व चातुर्मास करती थी। आपने दीक्षा ग्रहण कर पिता श्री शिवचन्द्र चामड़ जोधपुर के कुल को एव स्व पति श्री केसरीमलजी सिंघवी के परिवार को सुशोभित किया। महासती अनोपकवरजी, सुगनकवरजी एव सूरजकवरजी आपकी शिष्याए हुई।

आचार्य श्री का यह सतारा चातुर्मास बहुत ही यशस्वी रहा। ज्ञान, दर्शन, चारित्र एव जीवदया के कार्य का अनूठा सगम था। छत्रपति शिवाजी की ऐतिहासिक नगरी सतारा मे चातुर्मास सम्पन्न करने के अनन्तर मुनिमडल के विहार का समय आया, तब कर्नाटक प्रदेश के प्रमुख श्रावक श्री लालचन्दजी मुथा, गुलेजगढ़ वालो ने गुरु चरणो मे अपने क्षेत्र को चरण रज से पावन करने की प्रार्थना की। विनती को ध्यान मे ले कर आचार्य श्री का शोलापुर की ओर विहार हुआ। आप बडूद पारली, देवर साल्या लौंणू, नीरा आदि ग्रामो मे धर्म प्रचार करते हुए बारामती पधारे। बारामती मे कुछ दिन विराज कर आचार्यश्री ने वहा के अनेक गृहस्थो को धर्म की ओर प्रवृत्त किया। तदनन्तर बारामती से श्री मुन्दा, दौंड आदि अनेक ऐसे ग्रामो मे धर्म-प्रचार किया, जहॉ जैन साधुओ का आगमन कठिनाई से ही होता है।

इस प्रकार अनेक ग्रामो में अहिंसा-धर्म का प्रचार करते हुए आचार्य श्री करमाबास पधारे, जहाँ धार्मिक-शिक्षण की भी व्यवस्था थी। गुजरात के धारसी भाई यहाँ जैन सघ को ऊँचा उठाने हेतु प्रयत्नशील थे। उन्होने अपने साथियो के साथ वारसी पधारने के लिए विनति की, जिसे स्वीकार कर आचार्य श्री वारसी पधारे, और सघ के धार्मिक भवन मे ठहरे । यहाँ कोचेटा जी जैसे मारवाड़ी श्रावक भी रहते थे, जिन्हे समाज के लिये दर्द था। छात्रालय, सामूहिक-प्रार्थना और पुस्तकालय आदि चालू कर ज्ञान-वृद्धि करने की युवको मे भावना थी। मन्दिर मार्गी समाज के साथ भी अच्छा प्रेम था। कुछ समय तक यहाँ आध्यात्मिक, नैतिक एव सामाजिक अभ्युत्थान के लिए मार्गदर्शन करने के अनन्तर आचार्यश्री पानगाव, वैराग, सैलगाव, बड़ाला, कारम्मा आदि क्षेत्रो मे धर्म का प्रचार करते हुए शोलापुर पधारे। **इन्हीं दिनों सं. १९९७ मार्गशीर्ष शुक्ला पञ्चमी को भोपालगढ़ में उगमकंवरजी (धर्मपत्नी सुखलालजी बाफणा) की दीक्षा बड़े धनकंवर जी म.सा. के सान्निध्य में सानंद सम्पन्न हुई। दीक्षोपरान्त आपका नाम महासती उगमकंवर ही रखा गया ।**

शोलापुर मे आचार्य श्री लिंगायत सम्प्रदाय के एक मकान मे विराजे। प्राचीन काल मे यहा शताब्दियो तक जैन धर्मानुयायी राजाओ का राज्य रहा। दिगम्बर जैन अच्छी संख्या मे हैं, स्थानकवासी जैन समाज के घर बहुत कम है। दिगम्बर जैनो की कई शिक्षण सस्थाए है, पत्र-पत्रिकाओ का भी प्रकाशन होता है। महाराष्ट्री भाषा मे भी जैन पत्र प्रकाशित होता है। इधर की लिंगायत सम्प्रदाय पर जैन सस्कृति का प्रभाव परिलक्षित होता है। सिद्धप्पा, वसमप्पा आदि नाम प्राकृत भाषा की छाप छोड़ते थे। यहाँ से विहार कर आचार्य श्री टीकैकर, वाड़ी, हुडगी, जक्शन, जवलगी, ताडबल पधारे। ताडबल से विहार कर भीमानदी पर बने रेलवे पुल को पार करते हुए आचार्यश्री लच्चान पधारे। तदनन्तर हडी, तडवल, अतरगी, नागाधाम आदि क्षेत्रो को अपनी पदरज से पुनीत करते हुए माघ (शुक्ला) पूर्णिमा के दिन बीजापुर पधारे।

बीजापुर इतिहास प्रसिद्ध नगर है। छत्रपति शिवाजी का यह मुख्य कर्म-स्थल रहा। यहाँ धर्म का प्रचार कर आचार्यश्री जुमनाल, मूलवाड, हलद, गेहनूर, कोल्हार, वारगण्डी, सुनग, हनगवाड़ी आदि क्षेत्रो को फरसते हुए फाल्गुन शुक्ला दूज के दिन बागलकोट पधारे। स्थानीय लोगों मे धर्म के प्रति गहन रुचि, शास्त्र-श्रवण की उत्कट अभिलाषा एव सामायिक, स्वाध्याय, व्रत, नियम,प्रत्याख्यान की झड़ी से प्रमुदित हो आचार्य श्री ने यहा के सघ की प्रार्थना को स्वीकार कर होली चातुर्मास भी यही सम्पन्न किया। यहां श्री कन्हैयालालजी सुराना, बेताला जी आदि मुख्य श्रावक थे। यहा आसपास के अनेक क्षेत्रो के लोग सैकड़ों की सख्या मे दर्शनार्थ आये। सबने अपने अपने क्षेत्र की विनतिया प्रस्तुत की।

यहाँ रायबहादुर लालचन्द जी मूथा अपनी माताश्री और कतिपय श्रावकों के साथ गुलेजगढ़ मे चातुर्मास हेतु विनति लेकर पुनः उपस्थित हुए। श्रेष्ठी श्री लालचन्द जी ने तख्तमल जी कटारिया के माध्यम से आचार्यश्री के विहार की परिधि में आये हुए सभी ग्रामों तथा उनके आस-पड़ौस के क्षेत्रों के स्थानकवासी परिवारों की जनगणना करवाई और सभी मुख्य-मुख्य श्रावकों को बागलकोट में आमंत्रित किया। सबने मिलकर कर्नाटक प्रान्त की स्थानकवासी जैन सभा की स्थापना की।

चैत्र कृष्णा एकम के दिन बागलकोट से सिरह होकर गुलेजगढ की ओर विहार किया। सतारा से गुलेजगढ तक श्री तख्तमलजी कटारिया विहार मे मुनिमण्डल के साथ थे। बीजापुर से गुलेजगढ तक श्रेष्ठिवर श्री लालचन्द मुथा भी पद-विहार के समय आचार्य श्री की सेवा में रहे। गुलेजगढ़ में महावीर जयन्ती का महापर्व भी धर्माराधना

के साथ मनाया गया। यहाँ कर्णाटक प्रान्त के निवासी साधुमार्गी श्रावकों का सम्मेलन भी हुआ जिसमें कर्नाटक प्रान्त के जैन धर्मावलम्बियो के अभ्युत्थान एवं उत्कर्ष के लिए अनेक निर्णय लेकर कार्यक्रम भी निर्धारित किये गये।

• गुलेजगढ़ चातुर्मास (संवत् १९९७)

यहां से इरकल, कुष्ठगी गजेन्द्रगढ़, (ग्रीष्म मे भी अठाई आदि तप-त्याग सम्पन्न) गुणाधर, गुडूर, कामन्दगी, सिरूर, बागलकोट होते हुए आप आषाढ़ शुक्ला नवमी वि.स १९९७ के बीसवे चातुर्मासार्थ गुलेजगढ़ पधारे। मारवाड़ियो, माहेश्वरियो तथा अन्यान्य समाजो के पारस्परिक सहयोग से चातुर्मास सानद धर्माराधन पूर्वक सम्पन्न हुआ। जैन घरो की कमी कभी नही खली। व्याख्यान-स्थल सदैव भरा रहता था। राव साहब लालचन्द जी, प्रतापमलजी गुदेचा आदि श्रावको के ८-१० घरो मे भी सेवा की व्यवस्था मे कोई कमी नही रही। बागलकोट, बीजापुर, इरकल आदि समीपवर्ती क्षेत्रो का अच्छा सहयोग रहा। मद्रास सघ की ओर से विनति के लिए शिष्टमंडल के समाचार मिलने पर उन्हे सकेत करा दिया गया कि वे चातुर्मास की विनति के लक्ष्य से नही आए। मद्रास के प्रमुख श्री मोहनमलजी चोरड़िया एव मागीचदजी भडारी की भावनाएँ साकार नही हो सकी।

यहाँ पडित दु:खमोचनजी झा के साथ उनके सुपुत्र शशिकान्त झा पहली बार आचार्यश्री की सेवा मे आए और आचार्य श्री द्वारा कृत नन्दीसूत्र की टीका का पुनरालेखन कर पाण्डुलिपि तैयार की।

• महासती रूपकवर अस्वस्थ

भोपालगढ़ मे महासती रूपकवर जी अस्वस्थ है, तथा उन्हे दर्शनो की अभिलाषा है, इन समाचारो के साथ भोपालगढ सघ की विनति को ध्यान मे रखकर आप दक्षिण की ओर बढ़ने की अपेक्षा पश्चिम (मारवाड़) की ओर उन्मुख हुए।

विहार-क्रम से आप बीजापुर पधारे। बीस-पच्चीस घर होते हुए भी वहाँ का सघ प्रभावशाली माना जाता था। प्रेम एव सगठन का अच्छा वातावरण था। इतिहास बताता है कि वहाँ का राजा 'विज्जन' जैन धर्मावलम्बी था। मन्त्री ने धोखा देकर राज्य पर अधिकार जमा लिया। मान्यता है कि तभी से लिंगायत सम्प्रदाय की स्थापना हुई। यहाँ के गोल गुम्बज आदि स्थल ऐतिहासिक एव दर्शनीय हैं। सेठ चुन्नीलाल जी रूणवाल, श्री उत्तमचन्दजी रूणवाल आदि अच्छे श्रावक थे।

• कर्नाटक मे प्लेग का आतङ्क

वि.स १९९७ के अन्तिम चरण मे कर्नाटक प्रदेश के हीनाल, यादगिरि, सोरापुर और रायचूर तक के सैंकड़ो गाव और नगर प्लेग-महामारी की चपेट में आ जाने से आचार्यश्री को मासकल्प तक यहाँ रुकने का आग्रह किया गया। आचार्य श्री इसके पूर्व रायचूर की ओर विहार की अनुमति दे चुके थे। अत: वे अपने निर्णय पर दृढ़ रहे। आपने प्लेग से आतकित क्षेत्र मे धर्म की शरण को ही श्रेष्ठ बताया और धर्म पर अडिग रहने की प्रेरणा दी। शान्त और गम्भीर स्वर मे सघ मुख्यो को समझाया-"महामारी के प्रकोप से प्रपीड़ित लोगों को ढाढस बधाना, इस विपत्ति को साहसपूर्वक समभाव से सहने की प्रेरणा देना और जिनवाणी के अमृत का अनुपान कराना परमावश्यक है। आप हमारी ओर से निश्चिन्त रहें। सन्तों का प्रादुर्भाव त्रिविध ताप से त्रस्त लोगों को सुख पहुंचाने के लिए ही होता है। जीवन-मरण से जूझते उनके लिए अभी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है धर्म की शरण, सत्संग और सन्तों की

शरण।" आचार्य श्री की प्रेरणा से महामारी पीड़ित लोगो को आत्मिक शान्ति एव सम्बल मिला।

अब आचार्यश्री ठाणा ४ से हिनाल, मनगोली, यरनाल, वागेवाड़ी, हिपरिंगी, कोहनूर, तालीकोट, सोलडगी, सुरापुर एवं यादगिरि (धोका परिवार प्रमुख कार्यकर्त्ता था) होते हुए सोरापुर पहुँचे, जहाँ कपड़े वाले तम्बू (छोलदारी) में विराजे। महामारी के कारण वहाँ के लोग किले से निकलकर कपड़े के तम्बुओ मे रह रहे थे। अत सन्तो को भी उनमें ही ठहराया गया। व्याख्यान आदि हुए। आचार्य श्री के वहां विराजने से स्थानीय लोगो को ऐसी राहत मिली जैसे महामारी उनके यहाँ आई ही न हो। आचार्य श्री द्वारा धर्म शिक्षा की प्रेरणा से वहा के प्रमुख श्रावक श्री मोहनलालजी बोहरा आदि ने शिक्षण शाला खोलने का निर्णय लिया।

यहाँ से आचार्यश्री रायचूर पधारे। "जहा जहा पधारे आचार्य श्री, वहाँ वहाँ से भागी महामारी" का ग्रामीणो ने साक्षात् अनुभव किया। आबाल ब्रह्मव्रती महापुरुष के अक्षुण्ण ब्रह्मचर्य व शील का यह साक्षात् प्रभाव था। रायचूर मे मांस, मछली एवं मद्य का कई बधुओ ने परित्याग किया। समाज के प्रमुख श्री दलीचंद सेठ व श्री कल्याणमलजी ने मिलकर ऐसी व्यवस्था कायम की कि प्रात:काल ९ बजे से पूर्व कोई दुकान नही खोलेगा, सब लोग धर्मस्थान मे आकर प्रार्थना करेगे और जब तक आचार्य श्री यहा विराजेगे, व्याख्यानश्रवण का लाभ कोई व्यापारी नही छोडेगा। इस व्यवस्था मे सबको सरलता से सत-सेवा का अवसर मिलता रहा। गुजरात के प्राण शकर भाई ने भी सेवा का अच्छा लाभ लिया। वही कर्नाटकीय-बन्धुओ श्री शकर और श्री बाजीराव ने भी भक्ति-भावना का परिचय देते हुए सदा के लिये मास मछली एव मद्य सेवन का परित्याग कर दिया। यहा जैन समाज के ३०-३५ घर होने पर भी सगठन और एक वाक्यता से नगर मे मारवाड़ी समाज का अच्छा प्रभाव था। यहाँ सेठ कालूरामजी के पुत्र श्री हस्तिमलजी, बस्तीमलजी और श्री चादमलजी मुथा प्रमुख समाजसेवी थे। जीव दया के क्षेत्र मे यहा मुथा चादमलजी ने बड़ा काम किया था। श्री पारसमलजी मुथा की जीवदया के कार्य मे अभिरुचि थी। श्री कुशलचदजी भडारी, श्री मुकन चदजी, श्री धनराजजी आदि भी अच्छे कार्यकर्ता थे।

करुणामूर्ति एव तेजस्वी आचार्य श्री के यहाँ पधारने के पूर्व रायचूर के अनेक लोग नगर से बाहर आत्मरक्षा हेतु निकल चुके थे, किन्तु जैन लोग शहर के भीतर ही इस विचार के साथ डटे रहे कि गुरुदेव पधारने वाले है, अब हमारा गाव छोड़कर जाना कायरता होगी। हमे तो अब गुरुप्रवर की मगल छाया मे धर्म-ध्यान की सम्यक् आराधना करनी चाहिए। करीब २२ दिनो के प्रवास के बाद आपका वहा से विहार हुआ।

ग्रामानुग्राम होते गुलबर्गा पधारे। यहाँ ओसवाल समाज के चार-पॉच घर ही थे। आचार्य श्री का यहाँ अधिक ठहरने का भाव नही होते हुए भी सेठ हीरालालजी भलगट की धर्मपत्नी ने अठाई के भाव से उपवास का प्रत्याख्यान कर लिया। सेठजी के अत्याग्रह और बहिन की प्रबल भावना को देख आचार्य श्री वहाँ ९ दिन विराजे। बहिन की तपस्या के उपलक्ष्य मे सेठजी ने पीपाड़ मे धर्मशिक्षण के लिए पाच हजार रुपये निकाले। इसके अतिरिक्त विभिन्न सस्थाओ को दान दिया। जहाँ अठाई आदि की तपस्या और धार्मिक शिक्षण हेतु दान को बढ़ावा मिला। अल्पसमय मे धर्म-ध्यान का ठाट सबके लिए आश्चर्यकारक था। यहाँ से हीरापुर, अकलकोट होते हुए शोलापुर पहुंचने के पूर्व एक रात जंगल में बबूल वृक्ष के नीचे गुजारी।

प्रात:काल बलसग होते हुए चैत्र कृष्ण तृतीया के दिन शोलापुर पधारे। यहाँ दिगम्बर धर्मशाला मे विराजकर धर्म जागरण करने के अनन्तर बालागाव, साब, लेसर, माहोल, येवली होते हुए अनगर के जैन मदिर मे विराजे। फिर माड़ा, कुरड़वाड़ी, टोपले, सालसे, करमाला, वारसी आदि ग्राम नगरों को पावन किया। वारसी मे स्थानकवासी,

श्वेताम्बर मूर्तिपूजक और दिगम्बर समाज ने मिलकर आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे महावीर जयन्ती का उत्सव मनाया। धारसी भाई का प्रयास इस आयोजन मे सराहनीय रहा। वारसी से आप श्री केड़गाव, केतु होते हुए वाड़ी पधारे। रात्रि-विश्राम वाड़ी रेलवे स्टेशन की चौकी पर किया। वैशाख कृष्णा एकम के दिन भिंगवान मे मुनि श्री छोटे लक्ष्मीचन्द जी महाराज आदि ठाणा २ सातारा आदि क्षेत्रों मे विचरण करते हुए आचार्य श्री की सेवा मे उपस्थित हुए। यहाँ से रावणगाव, धौण्ड, वरबण्ड केडगाव स्टेशन पधारे। यहाँ पर अहमदनगर और पूना के श्री सघो ने सवत् १९९८ के चातुर्मास हेतु आग्रह भरी विनति प्रस्तुत की। आचार्य श्री ने श्रावक सघ की विशालता और सेवाभक्ति को देखते हुए अहमदनगर का चातुर्मास स्वीकृत किया और पूना की ओर विहार की दिशा ली। मध्यवर्ती येवत, उरली एव लूणी आदि ग्राम नगरो मे धर्म-प्रचार करते हुये पूना के भवानी पेठ स्थानक मे विराजे। यहाँ पर ऋषि सम्प्रदाय की महासती श्री सूरजकवर जी महाराज आदि सतियाँ प्रतिदिन आचार्य श्री एव सन्तवृन्द के दर्शनो का लाभ लेती थी। पूना मे कुछ दिन धर्म जागरण करने के अनन्तर घोडनदी होते हुये संवत् १९९८ के अपने २१ वे चातुर्मास हेतु ठाणा ६ से अहमदनगर पधारे।

• अहमदनगर चातुर्मास (सवत् १९९८)

सवत् १९९८ का यह चातुर्मास महाराष्ट्र की धरा पर साहित्यिक साधना की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। नन्दी सूत्र का सम्पादन, सशोधन एव हिन्दी भाषानुवाद का कार्य युगमनीषी सत ने अहमदनगर के इस द्वितीय चातुर्मास मे पूर्ण किया। सतारा के मोतीलाल जी मुथा ने इसी चातुर्मास मे इसका प्रकाशन भी कर दिया। कर्नाटक के विभिन्न ग्राम-नगरो, पूना, सतारा आदि क्षेत्रो के श्रमणोपासको के आवागमन का ताता सा लगा रहा। आचार्य श्री का अहमदनगर मे यह द्वितीय चातुर्मास तप-त्याग एव धर्माराधन के साथ सम्पन्न हुआ। चातुर्मासकाल मे बम्बई महासघ की विनति को ध्यान मे रखकर शेष काल फरसने हेतु स्वीकृति प्रदान की।

चातुर्मास समापन पर विहार कर आचार्य श्री मार्गशीर्ष कृष्णा एकम को पाथर्डी पधारे। पाथर्डी मे युवाचार्य श्री आनद ऋषि जी म सा के साथ आपका मधुर मिलन हुआ। यहाँ की सिद्धान्तशाला तथा तिलोकऋषि विद्यालय से आप अवगत हुए। यहाँ कुछ दिन विराजने के पश्चात् ब्राह्मणी, बाम्बोरी, धातेरा, ढोकेश्वरी, ढाकली, डेहरा, निमल, हीगणगाव, मालूणी, धौलपुर, आनावोर होते हुए बोरी पधारे। यहाँ से विहार कर पीपलवण्डी, नारायण गाव , मंचर, पैठ, खेड़, चाकण, सिन्दुवरा, बडगाव, कारला, लुणावला, खण्डाला होते हुए पहाड़ की विकट घाटी को पार कर खपोली, खानपुरा , चौक, वारवई होते हुए माघ शुक्ला पूर्णिमा के दिन पनवेल विराजे। मुलुण्ड, भाण्डुप, घाटकोपर, माटुगा, चिंचपोकली, कादावाड़ी आदि बम्बई के उपनगरो मे पधारने से अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। घाटकोपर मुनिचर्या की दृष्टि से अधिक अनुकूल होने से आचार्यश्री मासकल्प वहाँ धर्मस्थानक मे धर्माराधन हेतु विराजे, चैत्री ओली के समय वहाँ अच्छा धर्माराधन हुआ। नेत्रपीड़ा के कारण आचार्यप्रवर कुछ दिन व्याख्यान नही दे सके। चैत्री पूर्णिमा को ओली तप की पूर्णाहुति के अनन्तर अगले दिन आप विहार कर इगतपुरी मे श्रावक वर्ग को साधना पथ पर अग्रसर कर नासिक पधारे। यहाँ के लोगो मे धार्मिक श्रद्धा प्रमोदकारी थी। जैन छात्रावास भी चल रहा था। ऐतिहासिक तीर्थस्थल नासिक के बाद आप प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण लासलगाव पधारे, जहाँ आपके **प्रवचन-प्रभाव से वहाँ के परिवारों में व्याप्त आपसी मनमुटाव तुरन्त समाप्त हो गए।** सेठ खुशालचन्द्रजी ब्रह्मेचा, श्री भिक्खूजी साड आदि प्रमुख श्रावको ने मिलकर प्रेम से समस्या का समाधान कर लिया। प्रातःकाल सबने मिलकर मुनिमण्डल से चातुर्मास की प्रार्थना की। लासलगांव मे आपके २२वे चातुर्मास (विक्रम संवत् १९९९)

की स्वीकृति से ऐसी प्रसन्नता हुई जैसे उन्हे चिन्तामणि रत्न मिल गया हो।

• लासलगांव चातुर्मास (संवत् १९९९)

चातुर्मास मान्य कर आप आस-पास के क्षेत्र में विचरण करते हुए आषाढ के शुक्लपक्ष मे चादवड़ पधारे, जहाँ दिन-भर वर्षा रहने के कारण सन्तो के उपवास हो गया। उपवास के दूसरे दिन लासलगाव नगर मे प्रवेश हुआ। चातुर्मास गॉव के बाहर स्थित विद्यालय भवन मे हुआ। गुरुदेव के प्रवचनो का सब लोग लाभ ले सके, एतदर्थ सबने यह निर्णय किया कि जब तक व्याख्यान चालू रहे, व्यापार नही करेगे, दुकान नही खोलेगे। आड़त-बाजार मे सैकड़ो गाड़ियॉ आती, पर जैनो के गए बिना बोली नही लगती। प्रेम और सगठन का इतर समाज पर भी प्रभाव था। युवको ने कार्य का बटवारा कर आगन्तुको की अच्छी सेवा-भक्ति की। सवत्सरी के दिन चादवड़ से २०० छात्र पहुँचे, किन्तु प्रवचन मे पूर्ण शान्ति रही। तपस्वियो के साथ दिखावे एव बैंड-बाजे का प्रयोग नही हुआ। तपस्या के उपलक्ष्य मे आडम्बर एव अपव्यय की अपेक्षा सामाजिक संस्थाओ को सहयोग प्रदान कर अर्थ को सार्थक किया गया। चातुर्मास की ऐतिहासिक उपलब्धि के रूप मे साप्ताहिक मौन चालू हुआ जो वर्षों तक चालू रहा। यहाँ शिक्षा क्षेत्र मे महावीर जैन विद्यालय और जैन छात्रावास सम्बधी श्लाघनीय विकास-कार्य हुए।

इस चातुर्मास मे यह अनुभव किया गया कि जिनेन्द्र प्रभु की आगमवाणी का लाभ सन्त-सतियो के माध्यम से कुछ ही लोग ले पाते है, अत आगमवाणी, जैनदर्शन, इतिहास और जैन संस्कृति का ज्ञान सम्पूर्ण देश एवं विदेश मे प्रसारित करने के लिये कोई मासिक पत्रिका प्रकाशित की जाए तो इससे लोगों की स्वाध्याय-प्रवृत्ति को भी बल मिलेगा एव उन्हे नियमित रूप से पाठ्य सामग्री सुलभ हो सकेगी। जिनेन्द्र वाणी को नियमित एव दूरस्थ स्थानों पर पहुचाने का इसे उत्तम साधन मानकर भक्त श्रावको ने 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका के प्रकाशन का निर्णय लिया। श्रमण सस्कृति की प्रतीक जिनवाणी पत्रिका में सन्त-प्रवचन एवं आगम वाणी के साथ जैन सस्कृति, इतिहास एव धर्म-दर्शन से सम्बद्ध जानकारी की विविध रचनाओ का समावेश करने का लक्ष्य रहा। इसका प्रथम अक विस १९९९ पौष शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार जनवरी १९४३ मे श्रीजैनरत्न विद्यालय भोपालगढ़ से प्रकाशित हुआ। प्रकाशन कार्य मे जोधपुर के युवा कार्यकर्ता श्री विजयमल जी कुम्भट का सराहनीय सहकार रहा। वर्तमान मे यह पत्रिका सम्यग्ज्ञान प्रचारक मडल जयपुर से नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है एव इसके स्वाध्याय, सामायिक, श्रावक धर्म , जैन सस्कृति और राजस्थान, अहिंसा, कर्म-सिद्धान्त, अपरिग्रह, तप, साधना, सम्यग्दर्शन, जैनागम-साहित्य आदि विषयो पर अनेक विशेषाङ्क , प्रशसित हुए हैं।

• महासती रूपकंवर जी का स्वर्गारोहण

चातुर्मास समाप्त होते-होते भोपालगढ़ से महासती माताजी श्री रूपकवर जी महाराज की चिन्तनीय हालत के समाचारो के साथ आचार्यश्री की सेवा मे यह संदेश भी आया कि माताजी महाराज आपके दर्शनो की उत्कट भावना रखती हैं। इस प्रकार के समाचार प्राप्त होने के कारण चातुर्मास पूर्ण होने पर आचार्य श्री ने अपने मुनिमडल के साथ मारवाड़ की ओर विहार कर दिया। किन्तु आचार्य श्री धुलिया भी नही पहुँच पाये थे कि सहसा समाचार मिले कि मार्गशीर्ष शुक्ला ग्यारस को माताजी महाराज का समाधिमरण हो गया है। इन समाचारों को सुनते ही सन्तवृन्द ने चार-चार लोगस्स का कायोत्सर्ग किया। विहार की गति मन्द हो गई। धुलिया में कुछ दिन विराजे। यहाँ से शिरपुर की ओर विहार हुआ।

उज्जैन होते हुए राजपूताना में

(संवत् २०००-२००८)

आपके प्रवचनो से प्रबुद्ध हो शिरपुर मे सुखलाल भाई आदि सात सद् गृहस्थो ने शीलव्रत धारण कर जिनधर्म की प्रभावना की। यहाँ मारवाड़ी भाई चुन्नीलालजी सेवा मे प्रमुख थे, अच्छे श्रद्धावान एव क्रियारुचि वाले श्रावक थे। अत महती धर्मप्रभावना हुई। शिरपुर से धामनोद, माडू होते हुए नालछा पधारे।

क्यों सोया भर नीद में रे, अब तो सुरत सम्भाल,
नही वसीला होगा तेरे, दिल में सोच विचार॥

ऐसी टेर सुनाकर आचार्य श्री ने नालछा मे कई युवको की आध्यात्मिक प्यास जगा दी और व्यसनो से मुक्त कराया। युवक मागीलाल पर इस टेर का विशेष असर हुआ। उसने व्यसनो का त्याग कर सन्तो से सामायिक आदि पाठ सीखना प्रारम्भ किया। भाई मूलचन्दजी छाजेड़ और उनके मित्र का धर्म-साधना मे आगे बढ़ाने मे बड़ा सहयोग रहा। उन्होने मुनिमण्डल के विहार मे मागीलाल को साथ कर दिया। नालछा से सभी सन्त धार पधारे। पण्डित मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्र जी के ज्वर के कारण आचार्यश्री कई दिन धार मे विराजे। यहाँ से बदनावर होते हुए कानवन पधारे। कानवन मे सेठ चाँदमल जी अच्छे सेवाभावी श्रावक थे। उन्होने स्वास्थ्य आदि कारणो से सन्तो के डेढ माह ठहरने तक भावनापूर्वक सेवा का अच्छा लाभ लिया। इस बीच जयपुर सघ के केसरीमलजी लाल हाथी वाले आदि श्रावक चातुर्मास की विनति लेकर आए, किन्तु पण्डित मुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी का स्वास्थ्य अनुकूल नही होने से विनति स्वीकार नही की गई। स्वास्थ्य मे सुधार होने पर रतलाम पधारे। यहा उज्जैन का श्रावक सघ चातुर्मास हेतु आग्रह भरी विनति लेकर उपस्थित हुआ, जिसे मान्य कर लिया गया। रतलाम से खाचरोद पधारने पर विरक्त अभ्यासार्थी मागीलाल को देखकर सेठ हीरालालजी नादेचा ने जिज्ञासा की कि इनको वैराग्य सुदृढ होते हुए भी दीक्षा क्यो नही दी जा रही है। उनकी ऐसी भावना थी कि दीक्षा का लाभ उन्हे मिले तो बहुत अच्छा हो। मुनिमण्डल के समक्ष यह बात रखी तो उन्होने कहा कि अभी वैरागी के पिता की अनुमति प्राप्त नही है। सेठजी ने विरक्तभाई का भाव देखकर कहा"इनकी आज्ञा मैं प्राप्त कर लूँ, तब फिर यही दीक्षा होनी चाहिए।" उन्होंने नालछा से विरक्त -भाई के पिता श्री हजारीमलजी काकरेचा एव माता धनकवरजी से जी से आज्ञापत्र प्राप्त कर लिया। तदनन्तर वहाँ **वैरागी मांगीलाल की बड़ी उमंग से आषाढ-शुक्ला द्वितीया संवत् २००० को आचार्य श्री के मुखारविन्द से भागवती दीक्षा हुई जो दीक्षोपरान्त 'माणक मुनि' कहलाए।**

दीक्षा महोत्सव मे मालवभूमि के अनेक नगरों, खाचरोद के आस-पास के ग्रामों तथा अजमेर, जयपुर, उदयपुर एव मारवाड़ मे जोधपुर सहित अनेक ग्राम-नगरों के श्रद्धालु भक्तगण बडी संख्या मे उपस्थित हुए।

दीक्षा के दूसरे दिन आचार्य श्री ने यहाँ से पन्द्रह मील का उग्र विहार कर एक घर मे रात्रि विश्राम किया। उज्जैन के कतिपय श्रावको का निवेदन था कि आचार्य श्री उस मकान मे नही ठहरे। श्रावको की धारणा थी कि वहा सर्पों का वास है। लेकिन निर्भय एव दृढमनोबली साधक आचार्य श्री वही विराजे। षट्काय प्रतिपालक को किसी से भय भी कैसे हो।

• जवाहराचार्य का देहावसान

पूज्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. का १० जुलाई १९४३ को बीकानेर मे सथारा पूर्वक सायकाल पाच बजे स्वर्गवास होने पर श्रद्धांजलि अर्पित की गई तथा चरित्त नायक ने उनके गुणो एव अपने सस्मरणो का स्मरण करते हुए फरमाया –

"आप धीर वीर और प्रभावक तथा प्राचीनता का न्याय-युक्ति से शोधन करने वाले आचार्य थे। आपकी उपदेश शैली स्थानकवासी समाज मे आदर्श समझी जाती रही। आपके प्रवचन क्रान्तिकारी एव सुधारण के विचार को लिये रहते थे। सम्मेलन के सामान्य परिचय के सिवाय मेरा पूज्य श्री से दो ही बार सम्मिलन हुआ। एक तो सम्मेलन के पूर्व लीरी गाव मे और दूसरा जेठाना मे । उस समय के वे प्रेमल प्रसंग आज भी स्मृति चिह्न बनाए हुए हैं। जेठाना से विहार के समय तो आपने प्रीति की अतिशयता कर दिखाई। प्रीत्यर्थ या मेरे आचार्य पद के सम्मानार्थ मुझे मागलिक सुनाने को फरमाया, जो प्रेमावेश के बिना छोटे मुँह से बड़ी बात सुनना होता। मैंने भी आपके अनुरोध से मौन खोलकर काठियावाड़ से पुनरावर्तन की कुशल कामना करते हुए मागलिक सुनाया। उस समय आपकी भावुकता व श्रद्धा का दृश्य दर्शनीय था।"

• उज्जैन चातुर्मास (सवत् २०००)

वि.सं. २००० का यशस्वी चातुर्मास भव्य नगरी उज्जैन के नमक मण्डी-स्थानक मे ठाणा ६ से हुआ। यहाँ वर्षा की झड़ी लगी रहती, तथापि प्रवचन आदि के क्रम मे कोई रुकावट नही आई और आहार-पानी की गवेषणा में अन्तराय नही आयी। **यहाँ एक जर्मन महिला श्रीमती सुभद्रा (क्राउजे सरलोटे) भारतीय वेश में ऊन का आसन बिछाकर प्रतिदिन प्रवचन-लाभ लेकर कृतकृत्य हुई। उसकी जैनधर्म पर पूर्ण श्रद्धा थी। रात्रि में भोजन भी नहीं करती थी।** उसने जैन धर्म के कुछ विषयो पर लेख भी लिखे। पर्युषण के व्याख्यान शान्ति भवन मे हुए। यहाँ पर ही मूर्तिपूजक समाज मे धर्मसागरजी महाराज का चातुर्मास था। एक दिन जगल (शौच) से लौटते समय आचार्यप्रवर से उनका मिलन हुआ। धर्मसागरजी ने कहा - 'मन्दिर एव मूर्ति की मान्यता के सबध मे चर्चा कर ली जाए।' प्रज्ञावान आचार्य श्री ने कहा –"मुनिजी चर्चाए तो पूर्व महापुरुषो के द्वारा बीसियो बार हुई है, परन्तु कोई परिणाम नही निकला। फिर भी आप चर्चा करना चाहे और आपके सघ की ओर से ऐसी माग हो तो मै चर्चा के लिए तैयार हूँ, आपकी व्यक्तिगत भावना से नही। कारण कि उसके पश्चात् भी सघ अपनी असहमति व्यक्त कर सकता है।" समाज में जब यह बात फैली तो हलचल मच गई। इसे पारस्परिक कलह उत्पन्न करने का कारण माना गया। मूर्तिपूजक समाज ने निर्णय लिया कि उज्जैन मे दोनो समाजो मे प्रेम का वातावरण है। हम चर्चा-परचा करके अशान्ति उत्पन्न करना नही चाहते। इस प्रकार आपसी समझ से विवाद की बात समाप्त हो गई। यदि आचार्यप्रवर गुरु हस्ती उस समय विवेक से संघ-निर्णय की बात न कहते तो उस चर्चा से अनावश्यक रूप से वहाँ का वातावरण विषाक्त हो जाता। एक नया शुभारम्भ भी इस चातुर्मास में हुआ। दो स्वाध्यायियो (श्री लालचन्दजी जैन आदि) को सन्त-सतियों के चातुर्मास से विरहित क्षेत्रो में पर्युषण पर्वाराधन हेतु भेजा गया। विक्रम की द्विसहस्राब्दी का यह चातुर्मास अतीव प्रभावशाली एवं आध्यात्मिक जागरण का निमित्त रहा। श्री छोटमल जी मूथा, जमनालालजी, लक्ष्मीचन्दजी, नाथूलालजी और दीपचन्दजी आदि ने बड़े प्रेम से सेवा की। चातुर्मास के अन्त मे इन्दौर निवासी कन्हैयालालजी भण्डारी की प्रार्थना एवं आग्रह से इन्दौर फरसने की स्वीकृति प्रदान की।

उज्जैन से विहार कर आचार्य श्री इन्दौर पधारे, जहाँ कुछ दिन विराजने से चातुर्मास जैसा धर्माराधन हुआ। यहाँ से हातोद, बड़नगर, खाचरोद, जावरा, प्रतापगढ, छोटी सादड़ी , बड़ी सादड़ी होते हुए मंगलवाड़ से आगे जाने ही वाले थे कि कानोड़ सघ के प्रबल आग्रह से आप ठाणा ३ से कानोड़ पधारे। तत्र विराजित श्री इन्द्रमल जी म सा आदि सतो से स्नेह मिलन यादगार बना। साथ मे रहे एव साथ ही व्याख्यान आदि हुए। उदयपुर संघ विनति के लिए उपस्थित हुआ। यहाँ से खेरोदा पधारे। खेरोदा मे जयपुर सघ का शिष्ट मण्डल चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ। जिसमे श्री गुलाबचन्द जी बोथरा, श्री मोतीचन्दजी हीरावत, भौरीलाल जी मूसल, स्वरूप चन्दजी चोरडिया आदि अनेक प्रमुख श्रावक थे। श्रावको ने अपने दृढ़ सकल्प के साथ भावपूर्ण विनति की एव यह निश्चय कर बैठ गए कि उत्तर मिलने पर ही आहार करना, अन्यथा नही। भावना के अतिरेक को देखकर विनति स्वीकार कर ली गई। दूसरे दिन उदयपुर सघ के श्री केशवलालजी धाकड़िया, मदनसिह जी कावड़िया, विजयसिंह जी कावड़िया आदि श्रावको का शिष्ट मण्डल उपस्थित हुआ। उन्होने मुनिमण्डल का चातुर्मास अपने पक्ष मे प्रदान करने की जयपुर सघ से माग की। जयपुर सघ प्राप्त सेवा का लाभ छोड़ने को तैयार नही हुआ। उदयपुर वालो को मिला हुआ अवसर हाथ से निकल जाने का बड़ा खेद हुआ। उदयपुर पधारने पर आप कोठारीजी की हवेली मे विराजे। श्रावको ने मुनियो को कमरे मे घेर लिया एव निवेदन किया कि हमारा क्षेत्र खाली नही रहना चाहिए।

- जयपुर चातुर्मास (सवत् २००१)

उदयपुर की आग्रहपूर्ण विनति को ध्यान मे रखते हुए उदयपुर चातुर्मास के लिए स्वामी श्री सुजानमल जी म., पडित लक्ष्मीचन्द म. एव नवदीक्षित माणक मुनि जी म. की स्वीकृति दी एव आप स्वय उदयपुर के आस-पास के क्षेत्रो मे धर्म-प्रचार करते हुए भीलवाड़ा, विजयनगर, बडागा, बादनवाड़ा होते हुए भिनाय पधारे जहाँ पूज्य पन्नालालजी म. से मधुर मिलन हुआ । फिर नसीराबाद, अजमेर, किशनगढ़, दूदू आदि क्षेत्रो को अमृतवाणी से पावन करते हुए जब संवत् २००१ के चातुर्मास के लिए बारह गणगौर के स्थानक मे पहुचे तो जयपुर निवासियो के हर्ष का पारावार नही रहा। सामायिक, स्वाध्याय, तपस्या तथा आगम अध्ययन के ठाट लगे। देश के विभिन्न भागो से श्रद्धालुओ का आगमन हुआ। सैकड़ो बालक-बालिकाओं ने सामायिक और प्रतिक्रमण के पाठ कण्ठस्थ किये। सैकडो युवको ने भक्तामर स्तोत्र के साथ दशवैकालिक एव उत्तराध्ययन सूत्र के अनेक अध्ययन कण्ठस्थ किये।

जयपुर चातुर्मास के पश्चात् आप ब्यावर पधारे और स्थिरवास मे तत्र विराजित पूज्य श्री खूबचन्द जी म से सघ और समाजहित की चर्चा हुई। उन्ही दिनो मुनि श्री रामकुमारजी (कोटा सम्प्रदाय), मुनि श्री हजारीमल जी म., मुनि श्री मिश्रीमल जी 'मधुकर' , प मुनि श्री सिरेमलजी , पूज्य जवाहरलाल जी म.सा. की सम्प्रदाय के वयोवृद्ध मुनि श्री बौथलालजी तथा शोभालालजी भी ब्यावर विराज रहे थे। उन सभी से यहाँ प्रेम मिलन हुआ। तदनन्तर पीपाड़ होकर जोधपुर पधारे। यहाँ से महामदिर होते हुए भोपालगढ पधारे। यहाँ **ज्येष्ठ शुक्ला १४ को क्रियोद्धार भूमि में आचार्यप्रवर श्री रत्नचन्द्र जी म.सा. के पुण्य-दिवस (स्वर्गारोहण) की शताब्दी का विशाल आयोजन किया गया। परम प्रतापी आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म.सा. की उत्कृष्ट ज्ञान-क्रिया की स्मृति को चिरस्थायी बनाने हेतु सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल की स्थापना की गई, जो सम्प्रति जयपुर में कार्यरत है।** मण्डल से प्रतिमाह जिनवाणी पत्रिका प्रकाशित हो रही है तथा अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। यह संस्था स्वाध्याय एव ज्ञान के क्षेत्र मे महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है।

• जोधपुर चातुर्मास (संवत् २००२)

तीन सम्प्रदायो की सयुक्त विनति पर विक्रम सवत् २००२ के चातुर्मास का सौभाग्य जोधपुर नगर को सम्प्राप्त हुआ। आचार्य श्री दक्षिण का प्रवास कर कई वर्षों पश्चात् जोधपुर पधारे थे, भक्तो मे उमग एव उल्लास का सागर उमड़ रहा था। व्याख्यान की व्यवस्था आहोर ठाकुर की हवेली के विशाल प्रागण मे थी। धर्मध्यान एव तप-त्याग का तो कहना ही क्या, बारनी के भण्डारी वजीर चन्दजी ने बारनी वालो की ओर से दया-पौषध की एक नवरगी अलग से करवाई। दूसरी नवरगी शहर के मूल निवासी श्रावको ने करायी। भण्डारी जी ने अपनी वृद्धावस्था में भी धूम्रपान का जीवन भर के लिए त्याग किया। श्री किशोरमलजी लोढा की धर्मपत्नी ने २१ दिवस की तपस्या करके फिर मासखमण तप किया। मोहनराजजी सकलेचा की धर्मपत्नी एव सोहनराज जी भसाली दईकड़ा वालो ने मासखमण किया। मिलापचन्दजी फोफलिया की धर्मपत्नी ने ४५ की तपस्या की। पन्द्रह, ग्यारह, आठ आदि की अनेक तपस्याएँ हुई।

इन सब अध्यात्मपरक गतिविधियों के साथ-साथ आचार्य श्री का चिन्तन जैन-धर्म को जन-धर्म बनाने, श्रमण-जीवन में विशुद्ध शास्त्रीय स्वरूप की पुनः संस्थापना करने, सम्पूर्ण श्रमण-श्रमणी वर्ग को समान आचार, विचार, व्यवहार और समाज समाचारी के एक सुदृढ़ सूत्र में सुसम्बद्ध करने, पर्वाराधन आदि के सभी विभेदों को समाप्त कर एकसूत्रता लाने, श्रमण-श्रमणी और श्रावक-श्राविका वर्ग को एक सूत्र में आबद्ध कर जैन सघ को सुगठित सुदृढ़ , अभेद्य एवं अनुशासनबद्ध बनाने तथा उसे पुरातन प्रतिष्ठित पद पर अधिष्ठित करने के व्यावहारिक हल खोजने में लगा। इसे आचार्य श्री ने समय-समय पर अपने प्रवचनो मे भी रखा।

इस चातुर्मास काल मे ही स्त्री-समाज मे धार्मिक शिक्षा-विषयक प्रेरक प्रवचनो से प्रेरित होकर वर्द्धमान जैन कन्या पाठशाला की स्थापना की गई। इस पाठशाला की स्थापना एव सचालन मे सज्जनजी बाई सा एव इन्द्रजी बाई सा का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

सघहित और समाजोत्थान के लिए इस प्रकार अनेक कार्य हुए। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मडल के माध्यम से लेखन, प्रकाशन, प्रचार-प्रसार के कार्य उल्लेखनीय रहे। श्री रतनलालजी सघवी, श्री रत्नकुमारजी 'रत्नेश' आदि के सहयोग से कर्मठ कार्यकर्ता श्री विजयमलजी कुम्भट की देखरेख मे साहित्य-निर्माण का कार्य अग्रसर हुआ। इसी चातुर्मास मे आचार्यश्री के प्रवचनों से प्रभावित हो पुण्यशालिनी बहनो सायरकंवर जी और मैनाकवर जी मे सासारिक प्रपञ्चो से विरक्ति का भाव जागृत हुआ। जोधपुर मे इस वर्ष आचार्य श्री जयमलजी म की सम्प्रदाय के स्थविर मुनि श्री चौथमलजी महाराज का भी चातुर्मास था। दोनो सम्प्रदायो के मुनि मण्डल मे प्रशसनीय सौहार्द और वात्सल्यभाव रहा।

चातुर्मास के प्रारम्भ में श्रावण कृष्णा २ सम्वत् २००२ को पीपाड़ मे विराजित रत्नवशीया श्रद्धेया महासती श्री पानकंवरजी म.सा. का समाधिमरण हो गया। महासतीजी आत्मार्थिनी एवं भद्रिक परिणामिनी होने के साथ आगम एवं थोकड़ो की मर्मज्ञ थी। ४५ वर्ष की उम्र में दीक्षित होने के पश्चात् आपने रेत मे अगुलि से रेखाएं खींच कर अक्षर लिखना सीखा एवं जिज्ञासा और लगन की उत्कटता से आगम तथा थोकड़ों का असाधारण ज्ञान अर्जित कर लिया। स्वामीजी श्री चन्दनमलजी महाराज उनके ज्ञानवर्धन मे सहायक रहे। सुनते है पण्डितरत्न श्री समर्थमल जी

म.सा. ने भी आपसे कई धारणाए की। पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा ने भी वैराग्यावस्था मे पीपाड़, अजमेर तथा पुष्कर मे आपसे स्तोको का ज्ञान किया था। महासती जी ने सहजभाव से अनेक सन्त-सतियो को अपने ज्ञान से लाभान्वित किया। अन्त मे नेत्र ज्योति चली जाने से आप पीपाड़ मे स्थिरवास विराज रहे थे। मस्से आदि की तकलीफ होते हुये भी आपने शान्ति एव समाधि भावो को स्थिर रखा। आपका ४० वर्षीय सयमी-जीवन कई सन्त-सतियो के लिये प्रेरणास्रोत था।

यहाँ से मडोर, तिंवरी, मथानिया बावड़ी फरसते हुए भोपालगढ़ पधारे। श्री जैन रत्न विद्यालय के वार्षिक अधिवेशन पर शिक्षा सम्बधी विशिष्ट कार्यक्रम आयोजित किये गए। वहाँ से रतकूडिया, खागटा, कोसाणा, रणसीगाव फरसते हुए पीपाड़ पधारे। स्वामी श्री सुजानमलजी म सा के घुटने की पीड़ा और मुनि श्री अमरचन्द जी म.सा. की जघा मे अमर बकरे के सीग के आघात के कारण आपको कुछ समय पीपाड़ मे विराजना पड़ा। रीया, पालासनी (होली चातुर्मास) एव पाली प्रवास हुआ। पाली मे आचार्यश्री गणेशीलाल जी महाराज और चरितनायक का श्री शान्ति जैन पाठशाला के भवन मे स्नेह सम्मेलन हुआ। सघाभ्युदय, समाजोत्थान और पारस्परिक सहयोग आदि अनेक विषयो पर आचार्यद्वय ने खुले दिल से विचारो का आदान-प्रदान किया। दूर-दूर के दर्शनार्थियो का मेला सा लग गया।

आचार्यद्वय के मधुर मिलन के सुखद प्रसग पर भोपालगढ के सुज्ञ श्रावक श्री जोगीदास जी बाफना, श्री सूरजराजजी बोथरा आदि श्रावको ने भोपालगढ़ चातुर्मास हेतु भावभरी विनति एव प्रबल आग्रह करते हुए प्रार्थना की कि वयोवृद्धा महासती श्री बड़े धनकँवरजी अस्वस्थता के कारण भोपालगढ विराजमान है उनकी भी यही भावना है। आचार्य श्री ने स्वामीजी महाराज से परामर्श कर विनति स्वीकार की।

• भोपालगढ चातुर्मास (सवत् २००३)

शेषकाल मे पाली से सोजत पदार्पण के पश्चात् आचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. से पुनर्मिलन हुआ। आप श्री यहा से बिलाडा होकर पीपाड़ पधारे। कुड़ी ग्राम को फरसते हुए आचार्य श्री सवत् २००३ के चातुर्मासार्थ भोपालगढ पधारे। प्रवेश के समय विद्यालय के छात्रो एव श्रावक-श्राविकाओ के द्वारा उच्चारित जय जयकार के समवेत स्वरो का दृश्य अनुपम था। सारा गाव आपके दर्शनो को उमड़ पड़ा।

भोपालगढ़ के शान्त ग्रामीण वातावरण मे श्रुत-शास्त्रो का गहन अध्ययन एव अवगाहन करते हुए आपने गणिपिटक के द्वितीय अग सूत्रकृत का मूल, व्याख्या, टीका और अनुवाद सहित सम्पादन प्रारम्भ किया। इस चातुर्मास मे ग्रामवासियो व आगन्तुको ने ज्ञानाभ्यास व तप-त्याग का भरपूर लाभ लिया।

आचार्य श्री का विहार कुड़ची, धनारी, थली के अनेक ग्रामो में धर्मोद्योत करते हुए बीकानेर की ओर गोगोलाव तक हुआ । इधर बारणी निवासी रिडमलचन्द जी भण्डारी की दो पुत्रियो की इच्छा बहुत दिनो से दीक्षा लेने की थी। उनके माता-पिता तथा दादा आदि परिजन दीक्षा बारणी मे कराना चाहते थे। अत. उनके दादा वजीरचन्द जी भण्डारी और किशोरमलजी मेहता दीक्षा का मुहूर्त निकलवाकर आचार्य श्री की सेवा मे नागौर पहुँचे। विशेष आग्रह किया कि बारनी पधार कर दीक्षा प्रदान करावे। भण्डारी जी की विनति पर बीकानेर का प्रयाण स्थगित रखकर आचार्य श्री गोगोलाव से पुन नागौर मुण्डवा खजवाणा , रूण, गारासनी असावरी होते हुए बारणी पधारे।

पारस्परिक प्रेम और सहयोग से ओतप्रोत अधिकतर किसानों की जनसख्या वाले छोटे से गाव **बारणी में माघशुक्ला तेरस विक्रम संवत् २००३ के शुभ मुहूर्त पर आचार्यश्री ने माता श्रीमती जतनदेवी और पिता रिड़मल चन्द जी भंडारी की दोनों पुत्रियों सायरकंवरजी और बालब्रह्मचारिणी मैनाकंवरजी को भागवती दीक्षा प्रदान की। भव्य दीक्षा समारोह के अनन्तर दोनों महासतियों को बदनकंवरजी म.सा. की शिष्या घोषित किया गया।** इस अवसर पर महासती हरकंवरजी, महासती सज्जन कवरजी, महासती बदनकँवरजी आदि ठाणा १२ का सती-मण्डल विराजमान था। यहाँ गाँव के लोगो ने कई प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान लिए। कई किसानो ने बकरे, भेडे आदि कसाइयो को विक्रय करने का त्याग किया। एक सप्ताह पश्चात् भोपालगढ मे स्वामीजी श्री सुजानमलजी मसा द्वारा दोनों नवदीक्षिता महासतियो की बड़ी दीक्षा सम्पन्न हुई। आचार्य श्री बारनी से हरसोलाव गोटन होते खागटा पधारे जहाँ स्वामीजी मसा का भी पदार्पण हुआ। आचार्य श्री लाम्बा, भवाल आदि ग्रामो को फरसते हुए मेड़ता पधारे। होली चातुर्मास यही हुआ। फिर पाचरोलिया, जड़ाऊ आदि गाँवो को पावन करते हुए पादू पहुँचे। यहाँ जयपुर का सघ चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ।

यहाँ से मेवड़ा, थावला, पुष्कर होते हुए अजमेर पधारे। अजमेर मे ममैयो के नोहरे मे विराजे। अजमेर मे स्थविरापद विभूषित महासती श्री छोगाजी, बडे राधाजी आदि सतीवृन्द विराजमान था। अजमेर मे चातुर्मास हुए कई वर्ष हो गए थे। यहाँ चातुर्मास हेतु सघ का प्रबल आग्रह था। महासतीजी छोगाजी महाराज आदि के यहाँ विराजित होने से अजमेर सघ की विनति को और अधिक बल मिल गया एव आचार्य श्री ने आगामी चातुर्मास हेतु अजमेर की विनति स्वीकार कर ली। पाली और जयपुर सघ की आशा सफलीभूत न हो सकी। आचार्य श्री शेषकाल मे जयपुर सघ की विनति को मान देते हुए किशनगढ़ होते जयपुर पधारे। वहाँ धर्मोद्योत कर पुन मार्गस्थ ग्राम नगरो को पावन करते हुए आचार्य श्री अजमेर पधारे। **इसी कालावधि में ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी को जोधपुर में आपकी आज्ञा से श्री माणकमलजी सिंघवी की धर्मपत्नी श्री उमराव कँवरजी की भागवती दीक्षा उल्लासमय वातावरण में सम्पन्न हुई।**

- अजमेर चातुर्मास (सवत् २००४)

सवत् २००४ के अजमेर चातुर्मास मे भारत देश अंग्रेजो की पराधीनता से मुक्त हुआ। १५ अगस्त १९४७ को स्वतत्र भारत का तिरगा लहराया। इस चातुर्मास मे धर्माराधन में भी विशेष उत्साह दिखाई दिया। आचार्य श्री के निर्देशन मे पंडित श्री दु.खमोचनजी झा ने पूर्व आचार्यों का ऐतिहासिक परिचय लिखने का कार्य सम्पन्न किया। अत्र विराजित स्थविरा महासती श्री छोगाजी महाराज, बड़े राधाजी महाराज आदि सतीवृन्द को आचार्यश्री का सान्निध्य मिलने से आध्यात्मिक तोष हुआ। सघ मे धर्मध्यान का अच्छा ठाट रहा। श्री उमरावमल जी ढड्ढा, गणेशमलजी बोहरा, रेखराजजी दुधेड़िया, जीतमलजी सुराणा आदि श्रावको की सेवाएँ उल्लेखनीय रही।

अजमेर चातुर्मास सम्पन्न कर आचार्य श्री का विहार मेरवाड़ा के ग्राम-नगरो की ओर हुआ। आप भिनाय, टाटोटी, गुलाबपुरा, विजयनगर, मसूदा होते हुए ब्यावर पधारे। होली चातुर्मास यहाँ स्वामीजी श्री सुजानमल जी म.सा. आदि सन्तो के साथ किया। ब्यावर सघ की चातुर्मास हेतु कई वर्षों से आग्रहभरी विनति चल रही थी। रत्नवश की परम्परा के **स्थविर मुनि श्री चन्दनमलजी म.सा.** ने वि. संवत् १९६३ में यहाँ चातुर्मास किया था। श्रीचन्दजी अब्बाणी आदि श्रावकों के आग्रह एव अनुनय के कारण पाली की पुरजोर विनति होते हुए भी सवत् २००५ के चातुर्मास की स्वीकृति का सौभाग्य ब्यावर नगर को प्राप्त हुआ।

शेषकाल मे आप ब्यावर से सेदडा , बर, बिराठिया, झूठा, रायपुर, सोजत होते हुए पाली पधारे। आचार्य श्री द्वारा आस-पास के क्षेत्रों मे विचरण करते समय वयोवृद्ध स्वामीजी श्री सुजानमलजी म.सा. की तबीयत अचानक खराब हो गई। अत: उनको पाली रखकर आचार्य श्री का ठाणा ३ से ब्यावर चातुर्मासार्थ विहार हुआ।

• **ब्यावर चातुर्मास (संवत् २००५)**

ब्यावर नगर मे प्रवचन, शास्त्र वाचन, शका-समाधान एव प्रश्नोत्तर के अतिरिक्त चरितनायक का अधिकाश समय शास्त्रो की टीकाओ, चूर्णियो, भाष्यो, निर्युक्तियो आदि के अध्ययन-अवगाहन मे व्यतीत हुआ। यहाँ सेठ श्रीचन्दजी अब्बाणी, श्री विजयराजजी चौधरी, श्री सोहनमलजी डोसी आदि श्रावको ने बड़ी लगन से चतुर्विध सघ-सेवा का लाभ उठाया। सघ हितैषी श्रावको के सहयोग से यह वर्षावास कुन्दन भवन मे आनन्दपूर्वक सम्पन्न हुआ। इस चातुर्मास मे महासती श्री बदनकवजी म.सा आदि साध्वी-मण्डल के विराजने से महिलाओ मे भी धर्माराधन का ठाट रहा।

यहाँ से विहार कर अजमेर मे कल्याणमलजी उमरावमलजी ढड्ढा के भवन मे विराजे तब आचार्य श्री ने वयोवृद्धा महासती छोगा जी और रत्नवशीय गणमान्य श्रावको के विनम्र, किन्तु आग्रहपूर्ण निवेदन पर मर्यादोचित प्रायश्चित्त प्रदान कर उन मुनिद्वय वयोवृद्ध मुनि श्री लाभचन्द जी और मुनि श्री चौथमलजी को सघ मे सम्मिलित किया, जिन्हे न्याय डूगरी नामक ग्राम मे बिना आज्ञा के स्वेच्छापूर्वक चातुर्मास की हठ के कारण सवत् १९९९ मे आज्ञाबाहर कर दिया था। आचार्य श्री आचार-पालन के प्रति कठोर थे। इसीलिए उन्होने आठ सन्तो मे से भी दो के कम होने की परवाह किए बिना उन्हे स्वच्छन्द-विचरण करने पर आज्ञा बाहर कर दिया था। अब दोनो सन्त अपनी भूल का एहसास करते हुए पूर्ण प्रायश्चित के साथ नतमस्तक होकर गुरुदेव की आज्ञा मे आ गए। दोनो सन्तो ने आचार्य श्री द्वारा प्रदत्त प्रायश्चित्त जिस सरलता, विनम्रता एव सहज समर्पण के साथ स्वीकार किया वह अपने आप मे अद्वितीय था। सघ मे जहा एक ओर दोनो मुनियो के पुन. आने की प्रसन्नता थी वही दूसरी ओर दीर्घ दीक्षापर्याय वाले सन्तो को दीक्षा-छेद व पुनर्दीक्षा जैसे कठोर प्रायश्चित्त दिए जाने की सहानुभूति मे नयनो से अश्रु छलक आना भी स्वाभाविक था। प्रायश्चित्त स्वीकार करते मुनियो मे समर्पण के उत्कट भाव के साथ ही यशस्विनी निज परम्परा में लौट आने की गौरवपूर्ण प्रसन्नता स्पष्टत. झलक रही थी। इस प्रकार आचार्य श्री हस्ती का दृढनिश्चय , कठोर अनुशासन , आचार-निष्ठा तथा गणना की अपेक्षा गुणो की प्राथमिकता का सदेश स्वत: ही प्रतिध्वनित हो रहा था।

यहाँ पर ही एक घटना और घटी। पजाब से दो सन्त श्री शान्ति मुनि एव श्री रतनमुनि साधुवेश का परित्याग कर आचार्य श्री की सेवा मे उपस्थित होकर पुन. दीक्षा की याचना करने लगे। उनकी आन्तरिक प्रबल आकाक्षा और प्रार्थना से द्रवीभूत होकर आचार्य श्री ने उन दोनो को पुन· श्रमण धर्म मे दीक्षित किया। ये दोनो सन्त बिना किसी की प्रेरणा के स्वत ही आत्म-भाव से यहाँ आए थे। इनमे रतन मुनि जी गृहस्थ पर्याय मे आचार्य श्री द्वारा प्रतिबोध प्राप्त थे, किन्तु उनकी माता एव धर्मपत्नी के द्वारा अनुमति नही दिए जाने पर पजाब जाकर श्री प्रेमचन्द जी म.सा. के पास दीक्षित हो गये थे। स्वभाव-मेल न होने के कारण असमाधि का अनुभव कर अलग हो गए थे। अब इन सन्तो को मिलाकर आचार्य श्री ठाणा १० से अजमेर मे विराज रहे थे।

अजमेर से विहार कर पूज्य श्री ठाणा ५ से बड्डू बोरावड़ होते हुए कुचामन पधारे। यहाँ मासकल्प विराजे। रीया वाले सेठ श्री फतेहमलजी तेजमलजी मुणोत का यहाँ पुराना घर था। सेठजी साहित्य प्रेमी थे। उनकी प्रेरणा से ही रत्नवश के महान् चर्चावादी जिनशासन प्रभावक **स्वामीजी श्री कनीराम जी म.** ने यहाँ **सिद्धान्तसार** नामक

ग्रन्थ की रचना की थी, जो दया-दान की चर्चा विषयक प्रथम ग्रन्थ रहा है। मुणोत परिवार ने अपने यहाँ सगृहीत शास्त्रादि की पुरानी प्रतियाँ ज्ञान भण्डार को समर्पित की। कालान्तर मे आपने दोनो मुनियो की आन्तरिक इच्छा न होते हुए भी सघ व समाज में सद्भाव बना रहे, इस लक्ष्य से, उन्हें समझा बुझा कर वापस पूर्व गुरुओ के पास पजाब जाने की आज्ञा दी। दोनों मुनियो ने अनिच्छा होते हुए भी आचार्यदेव की आज्ञा को शिरोधार्य कर पजाब की ओर प्रयाण किया, पर श्री रत्न मुनि पजाब से पुन· उग्र विहार कर आचार्य श्री की सेवा मे वापस आ गये। यहां से पुन. बोरावड़, मेड़ता, भोपालगढ़ होते हुए चैत्र शुक्ला पंचमी को जोधपुर पधारे। यहाँ आप सरदारपुरा स्थित काकरिया बिल्डिग में विराजे। पालीनिवासी श्री हस्तीमलजी सुराणा अपने साथियो के साथ पाली चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुए। गतवर्ष से ही पाली सघ की विनति चल रही थी। श्री हस्तीमलजी सुराणा के साथ ही श्री सिरहमलजी काठेड, श्री नथमलजी पगारिया एव श्री मूलचन्दजी सिरोया आदि आपके वर्षावास हेतु सतत प्रयत्नशील थे। उनकी श्रद्धासिक्त विनति को ध्यान मे लेकर आचार्य श्री ने सवत् २००६ का चातुर्मास पाली स्वीकार किया। यहाँ से पीपाड़ आदि क्षेत्रो को पावन किया।

* पाली चातुर्मास (सवत् २००६)

सवत् २००६ का चातुर्मास पाली-मारवाड़ मे हुआ। स्वाध्याय, दया, दानादि विविध गतिविधियो मे आबालवृद्ध श्रावक-श्राविका वर्ग ने भाग लिया। मद्रास, धूलिया, सैलाना आदि दूरस्थ नगरो के अनेक श्रावक-श्राविकाओ ने आत्मीयजनो के साथ आकर चार मास पाली को ही अपना निवास बना लिया।

प्रवचनो की झड़ी लगी। एक दिन जैन साधु वन्दनीय क्यो, विषय पर अत्यन्त मार्मिक एव हृदयग्राही प्रवचन फरमाया –

"संसार के समस्त त्यागी वर्ग में आज जैन त्यागी (साधु) वर्ग ही एक ऐसा वर्ग है जो अपने कुछ आदर्श को बनाये हुए है। धन-संग्रह, दार-संग्रह और भूमि-संग्रह आदि से जहां संसार का त्यागीवर्ग दूषित है, यह वहां अपवाद साबित हुआ है। यह वर्ग वाहन का उपयोग नही करता, हर समय पैदल यात्रा करता है। इस वर्ग के साधु भोजन-पान-वस्त्रादिक भी स्वय भिक्षा से प्राप्त करते है। सादा और निर्व्यसनी जीवन इनका आदर्श है। ऐसे साधु ससार के सम्मान पात्र हो, इसमे कोई आश्चर्य नही, परन्तु आज उनकी वन्दनीयता की आधार शिला दोलायमान हो रही है। आज उनको निद्रा-विकथा-प्रमाद आदि विकारो ने घेर रखा है। ज्ञान-ध्यान एव त्याग का अभ्यास शनै. शनै· घट रहा है। ऐसी दशा मे आज सशोधक और आलोचक वृत्ति के लोगो में उनका सम्मान बना रहना कठिन है। मेरी समझ मे साधु-साध्वियो को अपनी वन्दनीयता की आधार शिला स्थिर करनी चाहिए, जिसके लिये निन्दा-त्याग, विकथा-प्रपच-त्याग, शोभा एव स्त्री-संसर्ग, का त्याग करते हुए उपशमभाव एव असग्रहवृत्ति को अपनाना चाहिए।

पूर्व समय के सत महात्मा व्यक्तिगत या सांप्रदायिक किसी भी प्रकार की निंदा नही करते थे। शास्त्र मे निंदा का निषेध करते हुए कहा है 'पिट्ठी-मस न खाइज्जा' अर्थात् परोक्ष में किसी की बुराई करना पृष्ठ मास भक्षण करना है। अतएव किसी की निंदा नहीं करनी चाहिए। आत्मार्थी सत दूसरो के दोष सुनने मे भी रस नही लेवे।

विकथा और गृहस्थो के परिचय बाबत शास्त्र में कहा है कि - "मिहो कहाहिं न रमे' परस्पर विकथाओ मे रमण मत करो। तथा - 'गिहिसथव न कुज्जा' गृहस्थों से अधिक परिचय मत करो।

उपर्युक्त दोनो नियमों के पालनार्थ पहले के सत सावधान रहते थे। छोटे बड़े गॉवो मे आगन्तुक स्त्री-पुरुषो के साथ उनको सभाषण भी करना पड़ता था। सामाजिक जानकारी भी करनी पड़ती, किन्तु छोटे बड़े सभी साधु-साध्वी उसमे सलग्न नही रहते थे। विकथा प्रपच से बिल्कुल निर्लेप रहने वाले भी महात्मा मिलते थे, जो सदा ज्ञान-ध्यान या सेवा में ही मस्त रहते थे। प्रमुख सत-सती भी प्राथमिक एव आवश्यक परिचय के उपरान्त वार्तालाप से बचे रहते थे। इसीसे उनको आत्म-बल की साधना का अवसर भी प्राप्त होता था। सासारिको का अति परिचय नही होने से उन्हे जनता के अवज्ञापात्र होने का प्रसग नही आता था। खेद के साथ कहना पड़ता है कि आज हम सतो मे विकथा का प्रमाद इतना बढ़ गया है कि गृहस्थो से हम घुल मिल गये हैं। इसी से गृहस्थ हमारी बहुत सी अतरग बाते भी जानने लगे है और साधु वर्ग पर भी उनका असर होने लगा है। मुनियो को विकथा और गृहिससर्ग से सदा बचते रहना चाहिए।

'विभूसा इत्थि संसग्ग' शास्त्र मे कहा है कि शरीर आदि की शोभा और स्त्रियो का ससर्ग ब्रह्मचारी के लिये हलाहल विष के समान है। इसलिये पूर्वाचार्यो ने मर्यादा की है कि सुबह व्याख्यान और तीसरे प्रहर शास्त्र-वाचन या चौपाई के अलावा सतो के यहां स्त्रियो को तथा सतियो के यहा पुरुषो को नही बैठना चाहिए। क्योकि अधिक ससर्ग से मोह बढ़ता है, जो समय पर दोनो के अहित का कारण हो सकता है। किसी बाई को धार्मिक विषय मे कुछ पूछना हो, सत-सतियो के समाचार कहना हो, विदेश का कोई दर्शनार्थी हो या सघ-सम्बन्धी परामर्श करना एव खास आलोयणा करना हो तो समझदार भाई की साक्षी से सतो के स्थान पर स्त्रियॉ आवश्यकतानुसार बात कर सकती हैं। ऐसा ही सतियो के स्थान पर भाइयो के लिए भी समझे। परन्तु यह सभाषण सघाडे के प्रमुख तथा दीक्षा या ज्ञान से स्थविर सत-सतियो के अलावा सबको नही करना चाहिये। बड़ो को कभी अवकाश नही हो और किसी को बात सुननी पड़े या किसी को कुछ कहना समझाना पड़े तो बड़ो के सामने या अनुमति से करना चाहिए। साराश यह है कि धर्मोपदेश और ज्ञान-ध्यान के सिवा अन्य समय मे स्त्रियो को खाली बिठाकर बाते करना मोह वृद्धि का कारण है, अत साधुओ को मर्यादा विरुद्ध स्त्री-ससर्ग और साध्वियो को पुरुष-ससर्ग से सदा बचते रहना चाहिये। खास कर आज के युग मे तो इसका अधिक सावधानी से पालन करना जरूरी है।

प्राचीन समय के सत महात्मा उपशम भाव के आदर्श थे। वे क्षमा और निरहकार भाव का यथोचित रूप से पालन करते थे। वे शास्त्र के आदेशानुसार 'जे न वंदे न से कुप्पे वंदिओ न समुक्कसे' वदना नही करने वाले पर क्रोध नही करते और वंदना पाकर अहंकार नही करते थे। साधुओ के दशविध धर्म मे क्षमा, निर्लोभता, सरलता, मार्दव, निरभिमान आदि वृत्तिया प्रधान धर्म है। समूह मे रहने वाले साधु-साध्वियो मे क्रोध आदि कषायो की मन्दता नही होने से वे स्वपर को अशान्ति के कारण मान बैठते है। वर्तमान मे दृष्टिगोचर होने वाले कलह, कदाग्रह और गुरुजनों की आज्ञा का तिरस्कार , ये क्रोध-मान के ही परिणाम है। क्योकि अनुपशान्त कषायवाले को गण कैद और साधु-साध्वी शत्रु से दिखाई देते है। गण से पृथक् रहने वाले साधु-साध्वी अधिकाश इसी के प्रमाण है। त्यागी वर्ग की यह दशा देख कर गृहस्थो की श्रद्धा-भक्ति भी कम हो जाती है। लोग कहने लगते है कि ससार की झझटो को छोड़ कर जब साधु बन गये, तब उनमें झगड़ा कैसा ? झगड़े तो मानापमान के होते हैं। जिन्होने मान अपमान को छोड़ दिया उनकी अशान्ति कैसी ? यह तो वैसी बात है कि 'एक अचभो हो रह्यो, जल्ल मे लागी आग।' आजकल अधिकांश देखा जाता है कि विरक्त दशा मे शान्त, दान्त और विनय शील दिखने वाले व्यक्ति भी सयम का बाना धारण करके ४-६ महीने मे ही रग बदल देते हैं जबकि पूजनीय सत-मडली मे आकर तो उन्हें अधिक सद्गुणों का विकास करना चाहिये। मुनिवरो को चाहिये कि वे अपने उपशम भाव को अबाधित बनाये रखें, और सबसे मिल

जुल कर रहें। सावधानता रखते हुये कदाचित् कारणवश क्रोध आ भी जाय तो मुनियो के मन में पानी में खिची हुई लकीर से ज्यादा उनका टिकाव नही होना चाहिये। 'अतृणे पतितो वह्नि स्वयमेवोपशाम्यति' इस अनुभूत उक्ति के अनुसार क्षमाशील मुनिओ के ससर्ग मे क्रोधियो की भी क्रोधाग्नि शान्त हो जाती है। राष्ट्र के महापुरुष गाधी इन्ही सद्गुणो के कारण जगत्पूज्य हुए हैं। निन्दा और स्तुति मे से वे निन्दा की बात को पहले सुनना चाहते थे। सुभाष बोस जैसे क्रान्तिकारी विचारको के साथ विचार भेद होने पर भी वे मैत्री पूर्ण व्यवहार करते देखे गये। फिर विश्व पूज्य भगवान महावीर के अनुयायी संतो मे तो ऐसा आदर्श सहज प्राप्त होना चाहिये, तभी शासन का उत्थान और श्रमणो की वन्दनीयता जगत्-मान्य हो सकती है।

जैन साधुओ के लिये शास्त्र में निर्ग्रंथ या भिक्षु पद का अधिकता से प्रयोग किया गया है। निर्ग्रन्थ या भिक्षु का मतलब होता है कालान्तर मे उपयोग लेने के लिये किसी भी वस्तु का सग्रह कर गाठ नही बाधना, किन्तु आवश्यकता उपस्थित होने पर जरूरत के अनुसार वस्त्र, पात्र, अन्न आदि भिक्षा से प्राप्त कर लेना। उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिये जैन साधु मर्यादा के उपरान्त किसी भी वस्तु का सग्रह नही रखते। इसमे मुनियो की सच्ची आत्मनिर्भरता प्रगट होती है। यह मुनियो की कपोतवृत्ति है। जैसे कठिन से कठिन दुर्भिक्ष मे भी कबूतर दाना सग्रह नही करता अपने श्रम, सामर्थ्य और निश्चय के सहारे जीवन बिताता है, वैसे ही साधु भी वस्त्रादि की दुर्लभता के विचार से अपनी आत्म-निर्भरता नही खोते। सग्रह वृत्ति को रोकने के लिये एक यह भी नियम रखा गया है कि साधु अपने वस्त्र, पात्र, पुस्तकादि को स्वय ही उठाकर चले। किसी भारवाही से नही उठवावे और न किसी गृहस्थ के यहा कपाट आदि मे बद कर रखवावे। आवश्यकता से अधिक या सत-सतियों को देने के उपरान्त बची हुई सामग्री को गृहस्थ (श्रावक) के पास अपनापन हटाकर वोसरा देना चाहिये।

इन नियमो को जीवन मे अपना कर रहने वाले साधु-साध्वी समूह विशेष के नही, जगत् के पूजनीय हो सकते है। भाषाज्ञान और व्याख्यान कला से विकल होने पर भी यदि आदर्श चारित्र बल और शुद्ध मनोबल की शक्ति है तो हर समय दुनिया उनके पीछे दौड़ी आयेगी। सत्ताबल से संघबल और सघबल से आत्म-बल अधिक शक्तिशाली है। जमाना चाहे किधर भी चले आपको (साधु-साध्वी वर्ग को) तो जगत् के प्रवाह का मुकाबला करना है। अत [illegible] के [illegible] और भौतिकवाद पर बुद्धिवाद के [illegible] [illegible] हुआ तो ससार सदा मुनिजनो का स्वागत करेगा और वे भी [illegible] के लिये [illegible] नही होगे।

प्रवचनो के अनन्तर चार माह तक आपका अधिकाश समय शास्त्र-सम्पादन मे ही व्यतीत हुआ। पाली का चातुर्मास सम्पन्न कर गोडवाड़ क्षेत्र के अनेक ग्रामो मे लोगो को प्रतिबोध देते हुए आचार्य श्री तखतगढ, सादड़ी, गुढा-बालोतरा, आहोर, जालोर, शिवगंज पधारे। ग्रामानुग्राम धर्मजागरणा करते हुए फाल्गुन शुक्ला १२ को जोधपुर पधारे।

गाँधी मैदान मे स्वामीजी श्री सुजानमल जी महाराज प्रभृति सन्तो के साथ होली चातुर्मास किया। बाद मे सिंहपोल विराजकर आप पुन. सरदारपुरा पधारे। यहा पूज्य श्री ज्ञानचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के स्थविर मुनि श्री इन्द्रमलजी म., मुनि श्री मोतीलालजी म., मुनि श्री लालचन्दजी आदि सन्तों के साथ प्रेमपूर्वक सम्मिलन हुआ। परस्पर मे समाचारी को लेकर वार्तालाप हुआ।

चैत्र मास मे ही घोड़ो के चौक में स्थिरवास विराजित महासती जी श्री तीजाजी का स्वर्गवास हो गया।

महावीर जयन्ती के अवसर पर पीपाड़ का शिष्ट मडल अगले चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ। भावपूर्ण विनति स्वीकार कर ली गई। यहाँ से विहार कर विभिन्न ग्राम-नगरों को पदरज से पावन करते हुए आचार्य श्री सोजत पधारे, जहाँ प. रत्न पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी म.सा के साथ आपका मधुर मिलन हुआ। यही पर मुनि श्री सहसमल जी म.सा. के साथ भी आपका प्रेम मिलन हुआ। सघ हित, समाचारी आदि अनेक विषयो पर दोनो महापुरुषो के साथ सार्थक विचार-विमर्श हुआ। सोजत से विहार कर आप, अक्षय तृतीया के अवसर पर सोजत रोड पधारे, जहाँ जोधपुर की अनेक तपस्विनी बहनो ने आकर वर्षीतप का पारणक किया।

इस बीच आचार्य श्री की आज्ञा से **मसूदा निवासी श्री धनराजजी राका की सुपुत्री एवं श्री मांगीलालजी सोनी ब्यावर की धर्मपत्नी श्री सन्तोषकंवरजी की दीक्षा विक्रम सवत् २००७ ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को अजमेर मे सम्पन्न हुई।**

सोजत रोड़ से विहार कर आचार्य श्री जैतारण, निमाज, मेडता, गोटन होते हुए भोपालगढ एव फिर पीपाड़ पधारे।

- पीपाड चातुर्मास सवत् (२००७)

विक्रम सवत् २००७ के पीपाड़ चातुर्मास मे आचार्य श्री द्वारा सम्पादित प्रश्न व्याकरण सूत्र एव उनके प्रवचनो की पुस्तक 'गजेन्द्र मुक्तावली' प्रकाशित हुई। द्वितीय पुस्तक का सम्पादन शशिकान्त जी झा द्वारा किया गया। चरितनायक की जन्म-स्थली के आबाल वृद्ध नर-नारी अत्यन्त उल्लसित होकर धर्माराधन का पूरा लाभ ले रहे थे। पीपाड़ नगर का वर्षावास सानन्द सम्पन्न कर आचार्य श्री मार्गस्थ ग्राम-नगरो को पावन करते हुए अजमेर पधारे एव यहा विराजित स्थविरा वयोवृद्ध सतीवृन्द तथा सघ की विनति स्वीकार कर शेषकाल तक यहा ही विराजे। शेषकाल के अनन्तर आप सन्त-मण्डल के साथ अनेक ग्राम-नगरो मे विचरण करते हुए विजयनगर पधारे। यहॉ मेड़तानगर के शिष्टमण्डल ने उपस्थित होकर विक्रम सवत् २००८ का चातुर्मास अपने क्षेत्र मे करने की विनति की । मेड़ता सघ की आग्रहभरी विनति को स्वीकार किया।

- मेड़ता चातुर्मास (सवत् २००८)

अनेक ग्राम नगरो को चरणरज से पावन करते हुए आचार्य श्री चातुर्मासार्थ मेड़ता पधारे। मेड़ता श्री सघ ने सामायिक, स्वाध्याय पौषध, उपवास, दया, दान आदि आराधना मे अनुकरणीय उत्साह दिखाया। चातुर्मास मे श्री जौहरी मलजी ओस्तवाल, श्री प्रेमराज जी मुथा, श्री हेमराजजी डोसी, श्री भूरमल जी बोकड़िया आदि सुश्रावको की भक्ति सराहनीय थी। पर्युषण के आठो दिन बाजार बन्द रहा।

यहॉ पर अखिल भारतीय स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स के मत्री श्री धीरजभाई तुरखिया अपने शिष्टमडल के साथ श्रमण-सघ के निर्माण की योजना पर विचार करने उपस्थित हुए। तब आचार्य श्री ने प्रस्तावित योजना को सबके लिए स्वीकार करने योग्य बनाने हेतु सुझाव देते हुए कहा कि यदि राजनैतिक पार्टियों के गठन की भांति श्रमण सघ का गठन भी प्रजातान्त्रिक ढग से किया गया तो धर्म के स्थान पर यह सघ अधिकार हथियान का अखाड़ा बन जाएगा। उन्होंने शास्त्र प्रतिपादित श्रमणाचार को दृष्टिगत रखते हुए श्रमणसघ का संविधान बनाने और श्रमण-श्रमणी वर्ग की समाचारी निर्माण करने पर बल दिया तथा ऐसा होने पर अपने सहयोग की सहर्ष स्वीकृति प्रदान की।

चातुर्मासकाल मे आचार्य श्री श्रीमालो के उपासरे मे थे। एक दिन दया-पौषध मे बैठे श्रावको को रात्रि के समय किसी के धमधमाहट के साथ भीतर आने का सन्देह हुआ और सब चौक कर चिल्लाने लगे। घबरा से गए। आचार्यप्रवर पाट पर विराजे हुए बोले —"शान्ति से पच परमेष्ठी का ध्यान करो। घबराने की कोई बात नही है।" चमत्कार सा हुआ। किसी का कुछ नही बिगड़ा। लोगो को शक था कि मणिभद्र यक्ष मायावी रूप बनाकर आया है। इस घटना मे आत्मिक शक्ति के आगे दैविक-शक्ति पराभूत हुई। देव अपने स्थान पर लौट गया। धमधमाहट विलुप्त हो गई। गुरुदेव के आश्वस्त करने पर सब निर्भय हुए। मेड़ता चातुर्मास मे बृहत्कल्पसूत्र एव गजेन्द्र मुक्तावली भाग २ का प्रकाशन भी हुआ।

चातुर्मासोपरान्त मेड़ता से भोपालगढ़ पधारकर वयोवृद्धा एव अस्वस्थ महासती श्री बडे धनकवर जी म सा को मासकल्प दर्शनो का लाभ देकर आचार्य श्री जोधपुर पधारे। इसी समय **भोपालगढ़ में फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को माताजी महाराज महासती श्री रूपकंवरजी की गुरुणी महासती श्री बड़े धनकंवर जी का स्वर्गारोहण हो गया।** आप अतीव भद्रिक, दृढ़ आचारशील एव मधुर व्याख्यानी सती थी। देशनोक के समीपस्थ सुरपुरा ग्राम मे जसरूपमलजी गोलेछा के यहा जन्मी धनकँवरजी ने रत्नवश मे आगम एव थोकड़ो की विशेषज्ञा महासती श्री मल्ला जी की निश्रा मे भागवती दीक्षा अगीकार की और गुरुणी जी से शास्त्रो एव थोकड़ो का अच्छा ज्ञान अर्जित किया। आपको अनेक थोकड़े कण्ठस्थ थे। आपका सान्निध्य पाकर रूपादेवी एव बालक हस्ती ने वैराग्य की ओर कदम बढ़ाये। यह युग एवं मानव जाति उनकी ऋणी रहेगी कि उन्होंने प्रेरणा कर चरितनायक आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी महाराज जैसा परमयोगी इस समाज को दिया। वृद्धावस्था के कारण महासती १२-१३ वर्षों तक भोपालगढ़ मे स्थिरवास विराजी। आपकी अनेक शिष्याएँ हुई - १. महासती श्री हरखकँवरजी २. महासती धापू जी ३ महासती किशन कँवर जी ४. महासती धुलाजी ५ महासती रतनकँवर जी ६ महासती रूपकँवर जी ७. महसती चैनकँवर जी ८. महासती उत्तमकँवर जी ९. महासती छोटा हरखु जी १० महासती नैनाजी।

सादड़ी सम्मेलन, सोजत सम्मेलन, भीनासर सम्मेलन एवं संवत् २००९ से २०१४ तक के चातुर्मास

• सादडी सम्मेलन (सवत् २००९)

भगवान महावीर के धर्मशासन की प्रभावना एव जन-साधारण को वीतराग धर्म के विश्व कल्याणकारी मार्ग की ओर अग्रसर करने हेतु सगठित प्रयास युग की आवश्यकता थी। पूर्व मे अजमेर-सम्मेलन मे इसकी भूमिका तय हो गई थी। चरितनायक एव विभिन्न महापुरुष इस ओर गतिशील थे।

भगवान महावीर की इस विशुद्ध परम्परा का सचालन एक सघ, एक आचार्य एव एक समाचारी के साथ हो, इस लक्ष्य से सादड़ी (मारवाड़) मे वि स २००९ वैशाख शुक्ला ३ तदनुसार दिनाक २७ अप्रेल १९५२ से वृहद् साधु सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय हुआ। परम पूज्य आचार्य श्री सदैव विशुद्ध आचार-परम्परा के हिमायती थे। सगठन मे मूल लक्ष्य एक समाचारी का हो, आचारनिष्ठा सघ-सचालन का आधार हो, अपने ये विचार आपने स्पष्टत कॉन्फ्रेन्स के पदाधिकारियो के समक्ष रख दिये थे। इसी भावना के साथ आपने सगठन मे सम्मिलित होने की स्वीकृति प्रदान की थी।

सम्मेलन अपने उद्देश्य मे सफल हो, इस पुनीत लक्ष्य से प्रमुख मुनिराजो का पूर्व सम्मेलन अजमेर मे आयोजित किया गया था। चरितनायक आचार्य श्री को भी इस पूर्व सम्मेलन मे निमन्त्रित किया गया। आप श्री इसमे सम्मिलित होने की भावना से फाल्गुन शुक्ला ११ को उग्र विहार कर अजमेर पधारे, जहाँ प्रमुख मुनियो ने खुले हृदय से शासन-हित चिन्तन कर सर्व सम्मति एव मतभेद मे मनभेद न हो, यह मार्गनिर्देशक सिद्धान्त तय कर सादड़ी की ओर प्रस्थान किया। सम्मेलन की शुभ घड़ी आई। उस दिन स्थानकवासी परम्परा की २२ सम्प्रदायो के ३४१ मुनि व ७६८ साध्वियो के प्रतिनिधियो के रूप मे ५४ सन्तो ने भाग लिया। देश के विभिन्न कोनो से आये लगभग ३५ हजार श्रद्धालु श्रावक-श्राविका भी इस अवसर पर उपस्थित थे। चरितनायक ने ८ मुनियो एव ३३ आर्यिकाओ के प्रतिनिधि के रूप मे इस सम्मेलन मे भाग लिया। आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म सा की परम्परा का प्रतिनिधित्व चरितनायक एव प मुनि श्री लक्ष्मीचदजी म ने किया।

सम्मेलन मे स्थानकवासी समाज की २२ सम्प्रदायो के महापुरुषो ने विशुद्ध शासन हित एव जिन शासन के सुदृढ सगठन की मगल भावना से अपनी-अपनी परम्परा का विलीनीकरण कर 'श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण सघ' के निर्माण मे अपनी महनीय युगान्तरकारी भूमिका निभाई।

आगम महोदधि पूज्य श्री आत्माराम जी म.सा. को इस श्रमण सघ का आचार्य, पूज्य श्री गणेशीलालजी म.सा. को उपाचार्य, पं. रत्न श्री आनन्द ऋषि जी म.सा को प्रधानमत्री एव चरितनायक पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. एवं पं. रत्न श्री प्यारचन्दजी म सा. को सहमत्री बनाया गया।

सघ का एक आचार्य के नेतृत्व मे सगठन हो गया। आचार की दृढता के पक्षधर महापुरुषो ने विलीनीकरण

करते वक्त अपनी भावना व्यक्त कर दी थी कि एक सुदृढ समाचारी व एक आचार का दृढता से पालन उनका लक्ष्य है, इसकी पूर्ति मे वे अपना सदा सहयोग देते रहेंगे। आचार दृढता व समाचारी के पालन मे कमी आने पर वे इस बारे मे स्वतत्र रहेगे।

सम्मेलन मे संघ-संगठन की दृढता व समाचारी की एकरूपता सम्बन्धी विचार-विमर्श मे चरितनायक की महनीय भूमिका रही। विभिन्न समितियों में प्रमुख महापुरुषों के साथ आपका यशस्वी नाम था। आप जिन मुख्य समितियों में थे, वे इस प्रकार है—

१ प्रायश्चित्त समिति — १ पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी म सा.
२. पूज्य श्री हस्तीमलजी म सा

२ पाक्षिक तिथि निर्णायक समिति — १. पूज्य श्री गणेशीलालजी म.सा
२. पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी म.सा.
३. पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा

३ साहित्य-शिक्षण समिति — १ पूज्य श्री घासीलालजी म सा
२ पूज्य श्री हस्तीमलजी म सा.

४ सचित्ताचित्त निर्णायक समिति — १ पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी म सा
२. पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. आदि

सम्मेलन वैशाख शुक्ला त्रयोदशी ७ मई १९५२ को सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाने के पश्चात् नागौर संघ के विशिष्ट आग्रह पर पूज्य चरितनायक ने विनति स्वीकार कर जोधपुर की ओर विहार कर दिया।

अब चरितनायक का चिन्तन सघ ऐक्य को ग्राम-ग्राम नगर-नगर में स्थापित करने हेतु मूर्तरूप लेने लगा। जहाँ भी आप गए वहाँ श्रावको को "वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ" की स्थापना हेतु प्रेरणा करने लगे।

• जोधपुर में आगमन

विहार क्रम से आपके जोधपुर पदार्पण के अनन्तर यहाँ भी 'वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ' की स्थापना के साथ सारे श्रावक एकसूत्र में आबद्ध हो गए। श्री इन्द्रनाथजी मोदी इस सघ के अध्यक्ष बने।

जोधपुर मे आगमप्रेमी दो सन्तो का महामिलन स्मरणीय रहा। पूज्यश्री अपनी सन्तमण्डली के साथ सरदारपुरा के कांकरिया भवन मे विराज रहे थे। भैरूबाग मे विराजित मूर्तिपूजक प्रसिद्ध सन्त श्री पुण्यविजयजी पूज्य श्री के पास पधारे। उनके निवेदन पर जब पूज्यश्री भैरूबाग पधारे तब पुण्यविजयजी ने व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञाताधर्मकथा आदि शास्त्रो एवं चूर्णियों की प्राचीन पाण्डुलिपियो की माइक्रो प्रतियाँ दिखाईं। चरितनायक ने उनका सूक्ष्मदर्शी शीशे से अवलोकन एव अध्ययन किया। उन प्रतियों के कतिपय महत्त्वपूर्ण स्थलो की ओर आपने मुनिजी का ध्यान आकृष्ट किया। पूज्य चरितनायक की आगमरुचि और पाण्डुलिपियों के प्रति तत्परता एव अनुराग देखकर मुनि श्री पुण्यविजय जी अत्यन्त प्रभावित एव पुलकित हुए।

चरितनायक के आगमिक, ऐतिहासिक एवं अन्यान्य विषयो की प्राचीन प्रतियो के प्रति इस प्रकार के प्रगाढ प्रेम का ही यह सुपरिणाम रहा कि उनकी प्रेरणा से जयपुर के लाल भवन में आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भडार,

जोधपुर की सिंह पोल मे श्री रत्न जैन पुस्तकालय तथा जलगाव मे जैन ग्रन्थागार जैसे विशाल ज्ञान भडार जैन जगत् को उपलब्ध हो सके।

चरितनायक नागौर चातुर्मास के लक्ष्य से महामन्दिर पधारे। इधर जयमलजी म. सा. की सम्प्रदाय के श्री चौथमलजी म.सा ने अत्यधिक रुग्ण होने से संथारा ग्रहण कर लिया था। मुनि श्री की प्रबल अभिलाषा थी कि पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. इस अन्तिम धर्म-साधना मे उनके साथ रहे। वे उन्हे बार-बार याद कर रहे थे। चरितनायक नागौर की ओर निर्धारित विहार स्थगित कर मुनि श्री की सेवा मे आहोर की हवेली पधारे। चातुर्मास काल निकट था तथापि धर्माराधन एव मुनि श्री की अभिलाषा को ध्यान मे रखकर सथारे के सीझने तक उनके पास स्वय रहने की सहर्ष स्वीकृति ही नही दी, वरन् स्वात्म-बोध, आत्म-जागरण के सदेश देने वाले भजनो के अलावा स्वय ने अपने ध्यान-चिन्तन से चार अध्यात्म-गीतिकाओ की रचना कर उन्हे सुनाया और मृत्यु को महोत्सव बनाते हुए उन्हे परलोक की महायात्रा के लिए प्रचुर पाथेय प्रदान किया। 'मेरे अन्तर भया प्रकाश', मै हूँ उस नगरी का भूप' 'समझो चेतन जी अपना रूप' आदि आध्यात्मिक गेय पदो की रचना चरितनायक ने इसी समय की। आषाढ शुक्ला द्वितीया को १३ दिवसीय सथारा पूर्ण होने पर सस्कृत भाषा मे आपने काव्यात्मक श्रद्धाजलि समर्पित की—

मरौ धराया जयमल्लपूज्योऽभवत्प्रसिद्धो मुनिनायक शमी।
कलिप्रभावात्तस्यैव वंशे-क्षीणेऽभवत्तूर्यमल्लो यशस्वी ॥१॥
निरस्ततन्द्रेण तितीर्षुणा व्रतं, वीरोचित भक्त-त्यागादिरूपम्।
अमोहभावेन निजात्मशुद्ध्या, आसेवित साम्यसुरेण चेतसा ॥२॥
रुजातिरेक समपीडयत्तनु, सोढुं न शक्य बलधारिभिर्नरै।
सहिष्णुताया मुनिपुङ्गवेन, चमत्कृता स्वेतरदर्शका जना ॥३॥
शाश्वत हिता संयमयोगचर्या, भद्रा त्वदीयाचरणस्य श्रेणि।
व्यक्त तनु नश्वरभावभाजं, नित्यं शिवं मुक्तिपदजिगीषुणा ॥४॥
आश्चर्यभाव भजते मदीय, चित्त चरित्र हि दृष्ट्वा त्वदीयम्।
यस्या तिथौ मर्त्यलोकेऽवतीर्णस्तमेव स्वर्गारोहोऽप्याकार्षी ॥५॥
भूयो भूयोऽपि वदेऽह, शान्तं धीर महत्तरम्।
सुमनोऽह कृपादृष्ट किंचित् सर्वमुपार्जयम्॥

इसके अनन्तर आप स्वामीजी श्री सुजानमल जी म सा की सेवा मे पधारे और अपराह्न मे उनसे मागलिक श्रवण कर नागौर की ओर उग्र विहार किया। दिन मे दो-दो बार उग्र विहार कर आषाढ शुक्ला १३ की अपराह्न नागौर पधारे। वहाँ सुराणा की बारी के बाहर मोहनलालजी बोथरा के मकान मे विराजे।

- नागौर चातुर्मास (सवत् २००९)

स २००९ के नागौर चातुर्मास में प्रथम दिन से ही आध्यात्मिक उल्लास का वातावरण बन गया। तपस्या का ठाट लगा। प्रबोधक प्रवचनो की धारा बही। चरितनायक महिला जागृति एव बालिकाओं में सस्कारो पर अधिक बल देते थे। आपका चिन्तन था कि बालिका यदि सस्कारित होती है तो वह एक नही, दो कुलो को शिक्षित एवं सस्कारित करेगी। इस दृष्टि से आपने कन्या पाठशाला की आवश्यकता पर बल देते हुए श्राविकावर्ग में धार्मिक संस्कारो को जगाने की प्रेरणा की। आपने फरमाया—**"जिस प्रकार चारों पहियों के समान रूप से सुदृढ़ एवं गतिशील होने पर ही कोई रथ प्रगति पथ पर निरन्तर अग्रसर हो सकता है, ठीक उसी प्रकार श्रमण**

भगवान महावीर के धर्मसंघ रूपी रथ के साधु-साध्वी, श्रावक एवं श्राविका रूप चारों पहिये संघोत्कर्ष की दिशा में सक्रिय एवं द्रुतगतिशील होंगे तभी यह संघ अपने परम लक्ष्य पर पहुँच सकेगा। बालिका-वर्ग मातृ-वर्ग श्राविका-वर्ग चतुर्विध संघ रथ का चतुर्थ पहिया भी सदृढ़ हो यह आवश्यक है। **मैं तो आप सभी** माताओं बहनो से यह कहूँगा कि पुरुष वर्ग से पहले स्त्री-वर्ग मे धार्मिक-शिक्षा एव आध्यात्मिक सस्कार अनिवार्यत: होने चाहिए। आप एक नही, दो-दो कुलों को रोशन करने वाली हैं, आप पुरुष की निर्मात्री है, उसे सस्कार देने वाली हैं। अत. आज के समाज मे नारी वर्ग को बाल्यावस्था मे ही धार्मिक पाठशालाओ के माध्यम से धार्मिक-शिक्षा दी जानी चाहिए।

अत्यन्त प्रभावी, प्रेरणास्पद इन प्रवचनो से प्रेरित हो नागौर के समाज-सेवियो ने इसी वर्षावासकाल मे कन्या-धार्मिक शिक्षा शाला की स्थापना कर बालिकाओ को धार्मिक शिक्षा देना प्रारभ किया। इसी चातुर्मास मे श्री हीरालाल जी गाधी (वर्तमान आचार्यश्री हीराचन्द्र जी म.सा) ने अनेकश दयाव्रत के साथ सामायिक, प्रतिक्रमण, २५ बोल आदि चरितनायक के चरणो मे रहते हुए कण्ठस्थ कर लिए। आचार्यश्री की प्रेरणा से यहाँ भी जोधपुर की भाति श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ की स्थापना हुई।

नागौर चातुर्मास के अनन्तर आप पीपाड़ पधारे, जहाँ पाली के श्रेष्ठी श्री हस्तीमलजी सुराणा ने दो बहनो एव एक भाई की दीक्षा पाली मे आयोजित करने हेतु विनति रखी।

मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी को पाली मारवाड़ में दीक्षा का भव्य आयोजन हुआ। इसमें पीपाड़ के श्री जालमचन्द जी चौधरी एवं दो बहनों घीसीबाई पाली एवं सुआबाई कांकरिया, भोपालगढ़ ने प्रव्रज्या-पथ पर अपने चरण बढ़ाए। दीक्षा के अनन्तर जालमचन्द जी का नाम जयन्तमुनि निर्धारित कर उन्हे स्वामी श्री अमरचन्द जी म. की निश्रा में रखा गया। श्रीमती सुआबाई का नाम महासती श्री शान्तिकंवर जी एवं घीसीबाई का नाम ज्ञानकंवर जी रखा गया।

- सोजत सम्मेलन (सवत् २०१०)

इधर सोजत मे मत्रि-मुनिवरो का सम्मेलन १७ से ३० जनवरी १९५३ तक आयोजित होना निश्चित हो गया, अत आचार्यश्री का विहार बिलाड़ा होते हुए सोजत की ओर हुआ। बिलाड़ा मे स्वामी जी श्री रावतमल जी म., मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म आदि श्रमणवरो से विचार-विमर्श हुआ। सम्मेलन मे १४ मत्री मुनिवर पधारे, जिन्होने सादड़ी मे हुए वृहद् साधु-सम्मेलन के पारित प्रस्तावों एव नियमो को क्रियान्वित करने एव समितियो को निर्णयार्थ सौपे विचारो को अन्तिम रूप देने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इस सम्मेलन में चरितनायक ने अपने बुद्धिकौशल से संघ-ऐक्य के प्रति महती भूमिका निभायी। कुल ३३ निर्णय लिए गए एव चरितनायक को मारवाड़ और गोड़वाड़ प्रान्त मे साधु-साध्वियों के चातुर्मास, विहार, सेवा, आक्षेप निवारण और प्रचारकार्य की व्यवस्था का दायित्व सौंपा गया । आपको साधु-साध्वियो के पाठ्यक्रम तैयार करने हेतु निर्मित सयुक्त समिति तथा तिथिपत्र समिति मे सदस्य मनोनीत किया गया।

सोजत सम्मेलन के पश्चात् चरितनायक श्रमण सघ के प्रधानमत्री श्री आनद ऋषि जी म. के साथ विहार करते हुए जोधपुर पधारे। यहाँ से मेड़ता, गोविन्दगढ़ होते हुए लाडपुरा पधारे। यहाँ लाडपुरा के श्री सुगनचन्द्र जी खटोड़ एव भिनाय निवासी जड़ावकंवरजी की श्रामण्य दीक्षा ज्येष्ठ शुक्ला दशमी सवत् २०१० को सम्पन्न हुई। दीक्षा के

प्रसग पर प्रधानमत्री श्री आनद ऋषि जी म., वयोवृद्ध श्री छोटमल जी म. (श्री पन्नालाल जी के सघाटक) एव महासती श्री हरकवर जी आदि सती-मडल उपस्थित था। दीक्षोपरान्त सुगनचन्द्रजी का नाम सुगनमुनि रखा गया।

• जोधपुर का सयुक्त ऐतिहासिक चातुर्मास (सवत् २०१०)

विक्रम सवत् २०१० का जोधपुर चातुर्मास अनेक सतो का सयुक्त ऐतिहासिक चातुर्मास था, जिसमें चरितनायक श्री हस्तीमल जी म.सा. आदि ठाणा ६ के अतिरिक्त उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. सा. आदि ठाणा ८, प्रधानमत्री श्री आनदऋषि जी म.सा आदि ठाणा ५, व्याख्यान वाचस्पति श्रीमदनलाल जी म.सा. आदि ठाणा २, कवि श्री अमरचन्दजी म.सा आदि ठाणा ५, प. रत्न श्री समर्थमलजी म.सा स्वामी जी श्री पूर्णमल जी म.सा आदि ठाणा २ एक साथ सिंहपोल स्थानक में विराजे।

सिंहपोल मे छह श्रमण प्रमुखो का यह सयुक्त चातुर्मास स्वर्णिम चातुर्मास था, जिसमे एक साथ इतनी विभूतियो के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण एव ज्ञानचर्चा का लाभ न केवल जोधपुरवासियो को, अपितु समस्त देशवासियो को आह्लादित करता था। चातुर्मास काल मे देश के अनेक स्थानो से श्रद्धालुओ का आवागमन बना रहा। श्रमण-श्रेष्ठो ने शास्त्रो, भाष्यो, टीकाओ, चूर्णियो आदि का आलोडन करते हुए अनेक गूढ़ विषयो पर चिन्तन प्रकट किया। तप-त्याग एव धर्माराधन की झड़ी सी लग गई। श्रमणवरो ने चार मास तक नियमित रूप से घण्टो बैठकर सर्वमान्य साधु समाचारी निर्धारित करने के लक्ष्य से गभीरतापूर्वक विचार-मथन कर अनेक सर्वसम्मत निर्णय लिए। सघ और अनुशासन पर चरितनायक ने एक दिन प्रवचन मे फरमाया [illegible] उसका चिरकाल के लिये अस्तित्व संभव नही। इसलिये महावीर ने सघ की स्थापना की । उनकी संघ-व्यवस्था मे यह विशेषता है कि उनके समवसरण मे चाहे देव हो या मानव, राजा हो अथवा दरिद्र, सभी नियमानुसार सभा मे स्थान ग्रहण करते थे। बड़े से बड़ा व्यक्ति भी पहले बैठे हुए छोटे को हटाकर नही बैठता था और न कोई बीच मे होकर जाता था। जरूरी कार्य से भी कोई किसी को उठाकर नही ले जाता और न कोई सभा मे सभाषण ही करता था। देव, मनुष्य पशु और साधु-साध्वी सभी यथा स्थान बैठकर विधि पूर्वक देशना का लाभ लिया करते थे। इसी अनुशासनशीलता से सघ देव तुल्य पूजनीय माना गया था। ”

[illegible] जबानी जमा खर्च या टीका टिप्पणियो से समाज का हित नही हो सकता। इसके लिये सक्रिय कदम उठाना होगा। गोपनीय कार्यों की सुरक्षा यहा तक हो कि कार्य से पहले पड़ौसी भी आपके विचार को नही समझ सके। अधिक करके थोड़ा कहने की नीति को सदा ध्यान मे रखा जाय। [illegible]

चातुर्मासोपरान्त छोटे लक्ष्मीचन्दजी म.सा. के नासूर की शल्य चिकित्सा के कारण चरितनायक को कुछ दिन जोधपुर रुकना पड़ा।

• स्वामीजी श्री सुजानमल जी म.सा. का स्वर्गारोहण

सवत् २०१० की माघ कृष्णा चतुर्दशी को स्वामीजी श्री सुजानमल जी म.सा का समाधिपूर्वक सहसा देहावसान हो गया। उनकी अभिलाषा के अनुसार चरितनायक अन्तिम समय में उनके पास ही थे और उन्होने चरितनायक के मुख से मगलाचरण सुनकर १८ पापों की आलोचना की। श्री सुजानमल जी म. बड़े गम्भीर,

क्रियानिष्ठ आत्मसाधक एव वर्चस्व के धनी सन्त थे। उन्होंने पूज्यपाद आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. के देवलोकगमन के पश्चात् मनोनीत लघुवय आचार्य (चरितनायक) की ओर से लगभग पौने चार वर्ष के अन्तराल काल के लिए शासन सभाला एवं उनके युवा होते ही उन्हें विधिवत् आचार्यपद पर अधिष्ठित कर अपने आपको सदा गौरवान्वित अनुभव किया। उन्हें 'पूज्य श्री' के रूप मे सम्बोधित कर बाबाजी म सा सदा प्रमुदित रहते। यह था गौरवशाली रत्नवश की परम्परा का अनुशासन एव आदर्श।

जोधपुर के अनन्तर ठाणा ८ से भोपालगढ फरसकर पीपाड़ मे अक्षय तृतीया पर धर्म-प्रभावना करते हुए चरितनायक मादलिया पधारे, जहाँ आपने दो धड़ो मे विभक्त श्रावको को एक सूत्र में बाधकर उनका पारस्परिक वैमनस्य दूर कर किया। इससे आस-पास के सभी गाँवो में धर्म की प्रभावना बढ़ी। अजमेर मे स्वामी श्री ताराचन्द जी म एव कवि अमरचन्द जी म. से मधुर मिलन हुआ। सभी सन्त एक ही स्थान पर विराजे और जब तक अजमेर मे रहे तब तक एक ही स्थान पर प्रवचन फरमाते रहे। सघहित एव समष्टि हित की दृष्टि से विचारों का आदान-प्रदान हुआ। चरितनायक एवं कवि श्री अमरमुनि जी के बीच सायकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् जो शास्त्र-चर्चा होती थी, उसे सुनने के लिए श्रोता आकृष्ट हो बड़ी सख्या मे उपस्थित होते थे। अजमेर से मार्गस्थ ग्राम-नगरों को पावन करते हुए वि.सं. २०११ के चातुर्मास हेतु आप ठाणा ८ से जयपुर के लाल भवन मे पधारे।

- जयपुर चातुर्मास (सवत् २०११)

इस जयपुर चातुर्मास मे श्रावक-श्राविका वर्ग ने 'बिजली के झबूके मोती पोना हो तो पोय ले' उक्ति को चरितार्थ करते हुए ज्ञानसूर्य चरितनायक श्री हस्ती के सान्निध्य मे ज्ञान, दर्शन एव चारित्र की सम्पदा का उपार्जन करने की होड़ सी लगा दी। बालक-बालिका, किशोर-किशोरी, सब मे सीखने का उत्साह था। नियमित सामूहिक-सामायिक, शास्त्र-वाचन, स्तोत्रपाठ आदि के अनेक व्यक्तियो ने नियम ग्रहण किए। चरितनायक ने अपने प्रवचनो मे फरमाया-"अर्थोपार्जन केवल इस जन्म मे सीमित रूप से काम आता है, जबकि धर्माराधन द्वारा उपार्जित आध्यात्मिक सम्पदा एक ऐसा अनमोल दिव्य धन है जो भव-भवान्तरो तक काम आने वाला तथा भवपाश से मुक्त कराने वाला है।" पूज्य श्री के प्रवचन-पीयूष से प्रभावित जन-मानस ने धर्मसाधना का अनूठा लाभ लिया। इस चातुर्मास मे महासती श्री सोहनकँवर जी, प्रभावतीजी, पुष्पवतीजी आदि ठाणा ६ एवं विदुषी महासती श्री जसकँवर म सा आदि ठाणा ४ से जयपुर ही विराज रही थी।

२९ अक्टूबर १९५४ को जैन दर्शन की विशालता और तत्त्वज्ञान विषय पर प्रवचन श्रवणार्थ जर्मन विद्वान् लूथर वेण्डल उदयपुर के हिम्मतसिंह जी सरूपरिया के साथ उपस्थित हुए। पूज्य श्री के व्याख्यान का तत्काल अंग्रेजी अनुवाद सरूपरिया जी लूथर को सुनाते रहे। व्याख्यान सम्पन्न होने पर लूथर ने आचार्य श्री के ज्ञान की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उसने अपने सम्बंध में यह भी बताया कि वह जैन धर्म के सिद्धान्तों के प्रति गहरी रुचि एवं आस्थावान होने के कारण पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करता है तथा मक्खन का सेवन भी छोड़ दिया है।

चरितनायक ने जर्मन विद्वान् को सस्कृत और प्राकृत भाषा के अध्ययन की प्रेरणा की। श्री सुमेरचन्द जी कोठारी ने आप श्री द्वारा सम्पादित एव अनूदित नन्दी सूत्र की प्रति और जैन धर्म विषयक कतिपय महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के अंग्रेजी अनुवाद की पुस्तके भेंट की। श्रमण सघ के आचार्य श्री आत्माराम जी म. सा.के जन्म-दिन भाद्रपद कृष्णा द्वादशी के दिन सभा को सम्बोधित करते हुए चरितनायक ने उनके नियमित आगम-स्वाध्याय एव सम्पादन के

अतिरिक्त चारित्रिक गुणो की प्रशसा करते हुए हृदयोद्गार अभिव्यक्त किए। इस चातुर्मास के समय लाल भवन में अनन्य गुरु भक्त लाल हाथी वाले श्रेष्ठी श्री केसरीमल जी कोठारी के कर कमलो से पुस्तकालय का उद्घाटन सम्पन्न हुआ।

• मुख्यमंत्री द्वारा प्रवचन श्रवण

चातुर्मास के अनन्तर आदर्शनगर, हीराबाग आदि स्थानो पर प्रवचनामृत का पान कराने के पश्चात् १७ नवम्बर ५४ को गुलाब निवास मे आपका अहिंसा विषयक विशिष्ट प्रवचन हुआ, जिसके श्रवण हेतु राजस्थान के मुख्यमत्री मोहनलाल सुखाड़िया एव अन्य मत्रीगण भी उपस्थित हुए। चरितनायक ने प्रवचन मे फरमाया कि अहिंसा केवल साधुओं अथवा धर्मनिष्ठ श्रावकों के लिए ही नहीं, अपितु मानवमात्र के द्वारा आचरणीय है। आचार्य प्रवर ने फरमाया कि विश्व का कल्याण एक मात्र अहिसा के सिद्धान्तो की परिपालना से ही हो सकता है। अहिंसा के दो रूप हैं – एक रूप तो यह कि किसी को कष्ट नही देना। दूसरा रूप यह कि तन, मन एव वचन से यथा शक्ति दूसरे को कष्ट से बचाने का पूरा प्रयास करना। प्रत्येक मनुष्य का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह यथासम्भव अपनी दिनचर्या मे दोनो प्रकार की अहिंसा को अधिकाधिक स्थान दे। २८ नवम्बर ५४ को आरवी. दुर्लभ जी एमरेल्ड हाउस मे शिक्षा प्रणाली पर आयोजित प्रवचन के समय राजस्थान सरकार के मत्री श्री रामकिशोर जी व्यास, आयुक्त श्री भगवतसिंह जी आदि अनेक गणमान्य अधिकारी उपस्थित हुए। चरितनायक ने फरमाया कि शिक्षा का उद्देश्य मात्र आजीविका नही, अपितु जीवन निर्माण भी है। आधुनिक शिक्षा मे सस्कार-निर्माण पर ध्यान नही है, जिसकी महती आवश्यकता है।

• डिग्गी, मालपुरा होकर किशनगढ

२९ नवम्बर १९५४ को चरितनायक पमुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज, माणकमुनिजी और रतनमुनिजी महाराज के साथ सागानेर पधारे। यहाँ पर सघ की सुदृढता हेतु प्रेरणाप्रद प्रवचन हुआ, श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ ने यथाशक्ति सघ-ऐक्य के लिए संकल्प किया। सागानेर से डिग्गी मालपुरा होते हुए आप किशनगढ पधारे। कतिपय दिन यहाँ भव्य-जनो की ज्ञान-पिपासा शान्त करते हुए अजमेर पधारे। यहा पर स्थविरा महासती श्री छोगाजी म.सा. की भावना, उनकी शारीरिक स्थिति एव अजमेर सघ की आग्रह भरी विनति को ध्यान मे रखकर चरितनायक ने साधुभाषा मे सवत् २०१२ के चातुर्मास की स्वीकृति फरमा दी।

अजमेर चातुर्मास के पूर्व चरितनायक मसूदा मे स्वामीजी श्री पन्नालाल जी म.सा., प्रधानमत्री श्री आनंद ऋषि जी म.सा., मुनि श्री मोतीलाल जी, मुनि श्री चम्पालाल जी, कवि श्री अमरचन्द जी म.सा. से मिले तथा भीनासर मे होने वाले साधु-सम्मेलन के सम्बंध में गहन विचार-विमर्श किया। चरितनायक वहाँ से विजयनगर, धनोप, सरवाड़, केकड़ी आदि ग्राम-नगरो को पावन करते हुए भीलवाड़ा पधारे, जहाँ अक्षय तृतीया का पर्व हर्षोल्लास एव तप-त्याग पूर्वक मनाया गया। भीलवाडा से विहार कर चातुर्मासार्थ अजमेर पधारे तथा केशरीसिंहजी की हवेली में आपका सन्त - मण्डल के साथ भव्य प्रवेश हुआ।

• अजमेर चातुर्मास (सवत् २०१२)

अजमेर चातुर्मास में चरितनायक एव सन्तमडल के साथ प्रधानमंत्री श्री आनंद ऋषिजी म.सा. के दो शिष्य

पुष्प ऋषि जी एव हिम्मत ऋषि जी भी साथ ही विराजे। पारस्परिक सौहार्दपूर्ण व्यवहार से अजमेर निवासी प्रसन्न थे। चार मास तक धर्माराधन एव तपश्चरण का आह्ल्यादकारी ठाट रहा। यहा मिर्जापुर निवासी श्रीमती राजकवर जी (धर्म पत्नी श्री रूपचंद जी सुराणा) ने कार्तिक शुक्ला १० एव सादड़ी निवासी बाल ब्रह्मचारिणी बहन श्री जतनकवरजी (सुपुत्री श्री दानमल जी) ने मार्गशीर्ष कृष्णा १२ को श्रमणी धर्म की दीक्षा अगीकार की।

• भीनासर सम्मेलन (संवत् २०१३)

अब २६ मार्च से ६ अप्रैल १९५६ तक भीनासर मे आयोज्यमान सम्मलेन निकट था। अत चरितनायक अजमेर से जोधपुर भोपालगढ़ होते हुए पहले माघ शुक्ला ४ सवत् २०१२ को नोखामंडी पधारे, जहाँ अनेक प्रमुख श्रमण-श्रमणी पूर्व विचार-विमर्श हेतु एकत्र हो रहे थे। यहाँ पारस्परिक विचार- विमर्श के साथ जोधपुर के सयुक्त चातुर्मास की कार्यवाही तथा प्रतिवेदनो पर विचार कर निर्णायक स्वरूप प्रदान किया गया। प्रायश्चित्त विधि पर विचार कर उसे भी अन्तिम रूप दिया गया। देशनोक मे फाल्गुन कृष्णा षष्ठी को प्रतिनिधि मुनियो का चुनाव किया गया, जिसमे २२ सम्प्रदायो के ५२ प्रतिनिधि चुने गये। इनमें चरितनायक एव प श्री लक्ष्मीचन्द जी महाराज सम्मिलित थे। बीकानेर होते हुए आप भीनासर पहुँचे। सम्मेलन मे १३५ मुनिवर एव १४७ महासतियो का पर्दापण हुआ। प्रतिनिधियो के अतिरिक्त अन्य मुनियो एव महासती-मण्डल को दर्शक के रूप मे बैठने की अनुमति प्रदान की गई। प्रतिनिधि सन्तो ने नोखामण्डी देशनोक, बीकानेर और भीनासर इन चार स्थानो पर लगभग ४२ दिनो तक पारस्परिक विचार-विमर्श करने के अनन्तर श्रमणसघ को सुदृढ बनाने और सम्पूर्ण स्थानकवासी समाज को एकता के सूत्र मे आबद्ध करने के लक्ष्य से अनेक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किए।

चरितनायक ने सम्मेलन मे अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा "**सादड़ी सम्मेलन मे आप सब मुनिवरों ने सघ ऐक्य की भावना से जो त्याग और साहस दिखाया वह अपूर्व था। आरम्भ में हमने आचार्य श्री को देव समझकर उनकी आज्ञा से कार्य करने की प्रतिज्ञा ली और उनके प्रति निष्ठा प्रकट की थी। किन्तु आज की हमारी स्थिति ऐसी नही है । यही कारण है कि सघ-ऐक्य का भव्य भवन चार वर्षों के लम्बे समय में भी पूरा नही हो सका। हम संघ में असम्मिलित साधु-साध्वियों का सहयोग प्राप्त नही कर सके। इतना ही नही संघ मे सम्मिलित आत्मार्थी योग्य सन्त भी स्थिति नही सुधरी तो किनारा कर सकते है। इस सम्मेलन में हमें इन स्थितियों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा।**

चरितनायक ने अपने उद्बोधन मे इस बात पर बल दिया कि श्रमण का सबसे बड़ा बल, सबसे महत्त्वपूर्ण धन अथवा जीवन सर्वस्व आचारबल ही है। ज्ञान के साथ क्रिया का आराधन करना ही उसकी सबसे बडी निधि है।

भीनासर सम्मेलन मे निम्नाङ्कित उल्लेखनीय निर्णय हुए—

१. कम से कम १० मिनट की प्रतिदिन सामूहिक प्रार्थना कराना।

२. ध्वनिवर्धक यन्त्र का उपयोग नही करना (पजाब एव उत्तरप्रदेश के सन्तो को एक निर्णय के लिए छोड़ा गया)

३. एकल विहारी साधु एव एक या दो के संघाटक मे विचरण करने वाली साध्वी को श्रमणसघ मे सम्मिलित करते समय उनके स्वच्छन्द विहार काल की दीक्षा छेद करना)

४. प्रतिक्रमण करते समय संघाटक के मुख्य साधु को आचार्य की एव आचार्य को श्रमण भगवान महावीर

की आज्ञा लेने का निर्णय हुआ।

५. सचित्ताचित्त विषय मे प्रस्ताव पारित हुआ कि बादाम, पिस्ता, नौजा, चारोली, इलायची, सफेद और काली मिर्च अखण्ड नही लेगे। पीपर बिना पिसी नही लेगे। पानी का बर्फ नही लेगे। ककड़ी , तरबूज, खरबूज, नारगी, केला, अगूर आदि बिना शस्त्र परिणत नही लेगे।

६ सम्यक्त्व देते समय वीतराग अरिहन्त देव, पच महाव्रत, पाँच समिति एव तीन गुप्ति का पालन करने वाले को गुरु तथा केवली प्ररूपित दयामय धर्म को धर्म स्वीकार करना।

७. सम्वत्सरी की एकता के सम्बन्ध मे १७ सदस्यों की एक समिति बनायी गई जिसका संयोजक मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म को बनाया गया।

८ १ अप्रेल १९५६ को चरितनायक सहित चार उपाध्याय स्वीकृत हुए—

१ प. आनन्द ऋषि जी महाराज

२ चरितनायक प श्री हस्तीमल जी महाराज

३. प. प्यारचद जी म

४ कवि श्री अमरचन्दजी म

भीनासर सम्मेलन के पश्चात् सवत् २०१३ का आपका चातुर्मास बीकानेर स्वीकृत हुआ। इसी समय आषाढ कृष्णा ४ सवत् २०१३ को ७७ वर्ष की आयु मे स्थविरा महासती श्री छोगाजी का अजमेर मे स्वर्गारोहण हो गया।

महासती छोगाजी रत्नवश की देदीप्यमान एव प्रभावशाली साध्वी थी। विक्रम सवत् १९४० मे बुचेटी के श्री पन्नालालजी ललवाणी के यहाँ जन्मी छोगाजी पर बालवय मे वैधव्य का पहाड़ टूट पड़ा। १५ वर्ष की उम्र मे आपने महामदिर मे दीक्षा अगीकार की। वर्षों तक गुरु बहिन श्री राधाजी महाराज की सेवा मे अजमेर रही। महासती सुन्दरकवरजी आदि सात-आठ विदुषी महासतिया आपकी शिष्याए हुईं। आप मधुर व्याख्यानी एव अतिशयसम्पन्न महासती थी। आपके प्रवचनो की भाषा सरल, सरस, हृदयोद्गारक एव प्रेरक थी। आपके शब्द अन्त.स्पर्शी थे। आप अपनी अन्तेवासिनी सतियो का जीवन निर्माण करने मे पूर्णत सक्षम एव दक्ष थी। आपके अतिशय के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि विक्रम सवत् २००० के गुलाबपुरा (भीलवाड़ा) चातुर्मास की बात है , एकदा आपने जिक्र किया कि मैंने तो कभी बाढ़ देखी नही । कुछ ही दिनो बाद श्रावण कृष्णा १३ को भयकर मूसलाधार वर्षा हुई। चारो ओर पानी-पानी हो गया, घर पानी से भर गए। भाइयो ने आपसे अन्य मकान मे पधारने का निवेदन किया, परन्तु आपने सचित्त पानी मे जाना स्वीकार नही किया। प्रात महासती सुन्दरकँवरजी ने समस्त शास्त्र एव उपकरण ऊपर रख दिये और आप सब सीढियो पर बैठकर स्वाध्याय करने लगी। पानी सीढ़ियों पर चढ़ने लगा तो आपने पानी को इगित कर कहा – "देख लिया, भई देख लिया।" और देखते ही देखते पानी उतरने लगा । सबने शाति की सासें ली।

• बीकानेर चातुर्मास (सवत् २०१३)

पूज्यप्रवर का बीकानेर चातुर्मास स्वाध्याय, सामायिक, पौषध, तपश्चरण, व्रत-प्रत्याख्यान आदि मे उत्साह एव उमग के साथ सम्पन्न हुआ। चातुर्मास मे आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री बदनकँवर जी म.सा. आदि ठाणा भी विराज रहे थे। इस चातुर्मास मे तमिल प्रदेशी विरक्त श्रीराम तथा पीपाड़ के विरक्त श्री हीरालाल जी गांधी (वर्तमान आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.) चरितनायक की सेवा मे अध्ययनरत रहे। श्री हीरालाल जी गाधी के पिता श्री

मोतीलाल जी गाधी ने संवत् २०१३ से जीवन भर अपनी सेवाएँ सघ को समर्पित की। आपने जीवन पर्यन्त जैन इतिहास की सामग्री के सकलन एव विनयचन्द्र ज्ञान भडार जयपुर में अपनी उल्लेखनीय सेवाएँ दी ।

बीकानेर चातुर्मास के पश्चात् उदासर, देशनोक, नोखा, नागौर, मेड़ता आदि ग्राम-नगरो मे विचरण करते हुए आप थावला पधारे, जहाँ उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज से सघहित के अनेक महत्त्वपूर्ण विषयो पर वार्तालाप किया। पुष्कर मे आप दोनो श्रमण वरेण्यों का मत्री श्री पुष्कर मुनि जी म.सा से मधुर मिलन हुआ। अजमेर मे चरितनायक का बीकानेर वर्षावास मे साथ रहे वयोवृद्ध मुनि श्री रामकुमार जी से पुन मिलन हुआ। यहाँ पर श्रावक वर्ग को सघ-शक्ति को उत्तरोत्तर दृढ़ करने की प्रेरणा करने के अनन्तर आप किशनगढ़ पधारे, जहाँ मन्त्री श्री पन्नालाल म.सा के साथ विचार विमर्श हुआ।

चरितनायक के मन मे सघ के ऐक्य एव श्रमणाचार के निर्दोष परिपालन की तत्परता थी। विजयनगर मे आपका उपाचार्य श्री गणेशीलाल म. प. श्री पुष्कर मुनि जी म. और प श्री शेषमल जी म के साथ मिलन हुआ। यहाँ भी आपने सघोत्कर्ष विषयक विचार-विमर्श किया। गुलाबपुरा मे श्री लालमुनिजी एव कान्हमुनि जी से आपका स्नेहमिलन हुआ। अक्षय तृतीया के पुनीत प्रसग पर केकड़ी विराजे, जहाँ पर आपने दान की महत्ता प्रतिपादित करते हुए फरमाया कि न्यायनीति से उपार्जित धन का शुभकार्यो मे बिना किसी स्वार्थ के विवेकपूर्वक दिया गया दान ही सात्त्विक दान है। सरवाड़ होते हुए फतहगढ़ पधारने पर श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ की स्थापना की गई। यहाँ धर्मनिष्ठ दम्पतियो ने सजोड़े शीलव्रत अगीकार किये। चरितनायक के पधारने से यहाँ के स्थानकवासी समाज मे व्याप्त मन मुटाव दूर हो गया। कइयो ने शतरज, तास, चौपड़ आदि नही खेलने का नियम लिया। एक पुस्तकालय की भी स्थापना हुई। फतहगढ़ की विशेषता यह थी कि यहाँ ओसवाल, सरावगी और माहेश्वरी समाज की सम्मिलित गोठ (पचायत) है, जो इन समाजो की सर्वविध समस्याओ का समाधान करती थी। फतहगढ से किशनगढ चातुर्मास हेतु विहार किया।

* किशनगढ चातुर्मास (सवत् २०१४)

चरितनायक विक्रम सवत् २०१४ के किशनगढ़ चातुर्मास मे ठाणा ७ से विराजे। वर्षावास मे आध्यात्मिक महोत्सव का वातावरण बन गया। तपश्चरण की झड़ी लग गई। अठाई आदि की अनेक तपस्याएँ हुई। श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ की स्थापना हुई तथा श्री सागर जैन विद्यालय को आत्म-निर्भर बनाने का कार्य सम्पन्न हुआ। चातुर्मास के पश्चात् मदनगज मे श्री सोहनलाल जी महाराज से स्नेह मिलन हुआ। इन दिनो श्रमण सघ मे सम्वत्सरी के प्रश्न को लेकर चर्चा चली एव कान्फ्रेस के अधिकारियो ने चरितनायक से चर्चा कर जिज्ञासा का समाधान किया। उसे दिल्ली की व्यवस्था समिति तथा श्रमण सम्पर्क समिति की बैठक मे पारित करवाया। **यह** प्रस्ताव २९ नवम्बर ५७ के जैन प्रकाश मे प्रकाशित हुआ है-"उक्त समिति के सदस्यो का अत्यधिक बहुमत चातुर्मासादिक आषाढ शुक्ला १५ पक्खी से ४९ या ५०वे दिन सवत्सरी मनाये जाने के पक्ष मे है। अत कान्फ्रेस की व्यवस्था समिति और श्रमण सम्पर्क समिति उपर्युक्तानुसार चौमासी पक्खी आषाढ़ शुक्ला १५ से ४९ या ५० वे दिन सवत्सरी मनाने का निर्णय देती है तथा समस्त स्थानकवासी जैनो से अपील करती है कि सवत्सरी महापर्व भारत मे एक ही दिन मनावे। ताकि समस्त स्थानकवासी जैनो मे सावत्सरिक एकता बनी रहे।" इस प्रकार चरितनायक ने समाज के महत्त्वपूर्ण मसले 'सावत्सरिक एकता' का पथ प्रशस्त किया।

मदनगज से आप दूदू, गाडोता होते हुए जयपुर पधारे, जहाँ लगभग २५ दिनो तक लालभवन मे धर्माराधना कराकर आपका अलवर मे पदार्पण हुआ। इस विहार क्रम मे श्री सोहनलाल जी म.सा. आपके साथ रहे। यहाँ धर्मोपदेश मे इन्द्रिय नियत्रण एव आसक्तिजय पर प्रभावी प्रवचन दिये । अलवर से दिल्ली जाते समय मार्ग में व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म.सा. से आपका स्नेह मिलन हुआ। दिल्ली वासियो की आग्रहपूर्ण विनति पर विक्रम सवत् २०१५ का चातुर्मास दिल्ली को मिला।

दिल्ली से सैलाना तक

(सं. २०१५ से २०१९)

• दिल्नी मे चातुर्मास (सवत् २०१५)

वि.स २०१५ का चातुर्मास स्वतन्त्र भारत की राजधानी दिल्ली के सब्जीमडी क्षेत्र के स्थानक मे हुआ। दिल्ली के जिन राजमार्गों से आपका पदार्पण हुआ, वे अपार जन-समूह की जय-जयनाद से गूँज उठे। चातुर्मास के पूर्व आपने दिल्ली के चांदनी चौक, सदर बाजार आदि प्रमुख स्थानो पर जिनवाणी की अमृत गगा प्रवाहित की। आपकी पीयूषपाविनी पातक प्रक्षालिनी वाणी सयमनिष्ठ जीवन एवं दृढ आचार-निष्ठा से दिल्ली के श्रावक अत्यत प्रभावित हुए। लाला श्री बनारसी दास जी, मिलापचन्द जी, जीवन लाल जी आदि चातुर्मास की व्यवस्था मे तत्पर रहे। आपके तात्त्विक प्रवचनो से श्रोतागण बड़ी सख्या मे लाभान्वित हुए। **एक दिन हंगरी निवासी बौद्ध धर्म के विद्वान् फैलिक्स बैली जैन सिद्धान्तों की विशेष जानकारी के लिए उपस्थित हुए और स्यादवाद के बारे में विशद चर्चा की। आचार्यश्री ने उन्हें बताया "स्याद्वाद जगत् के वैचारिक संघर्षों को सुलझाता है। दूसरे शब्दों में यह वाणी और विचार की अहिंसा भी कहा जा सकता है।** एक ही वस्तु या तत्त्व को विभिन्न दृष्टिकोणो से देखा जा सकता है, इसीलिए उसमे विभिन्न पक्ष भी उपलब्ध होते है। सारे पक्षो या दृष्टिकोणो को विभेद की दृष्टि से ही नही, अपितु समन्वय की दृष्टि से भी समझकर वस्तु की यथार्थता का दर्शन करना ही इस सिद्धान्त की गहराई मे जाना है। किसी वस्तु विशेष के एक ही पक्ष या दृष्टिकोण को उसका सर्वांग स्वरूप समझकर उसे सत्य के नाम से पुकारना मिथ्यावाद या दुराग्रह का कारण बन जाता है। अत किसी वस्तु को विभिन्न दृष्टिकोणो के आधार पर देखने-समझने व वर्णित करने वाले विज्ञान का नाम ही स्याद्वाद है। सिद्धान्तरूप मे इसे अनेकान्तवाद या सापेक्षवाद भी कहा गया है।" सर्व साधारण को स्याद्वाद की सूक्ष्मता से परिचित कराने के लिए भी आचार्य श्री ने दृष्टान्त दिया—"एक ही व्यक्ति अपने अलग-अलग रिश्तो के कारण पिता, पुत्र, काका, भतीजा, मामा और भानजा आदि हो सकता है, किन्तु वह अपने पुत्र की दृष्टि से पिता है तो पिता की दृष्टि से पुत्र, भतीजे की दृष्टि से काका है तो काका की दृष्टि से भतीजा। ऐसे ही अन्य सम्बधो के व्यावहारिक उदाहरण आप अपने चारो ओर देख सकते है। इन रिश्तो की तरह ही एक व्यक्ति मे विभिन्न गुणो का विकास भी होता है। अत यही दृष्टि वस्तु के स्वरूप पर लागू होती है कि वह भी एक साथ सत् -असत्, नश्वर-अनश्वर, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष, एक-अनेक, क्रियाशील-अक्रियाशील, नित्य-अनित्य आदि गुणों वाली होती है। द्रव्य की दृष्टि से वह सत्, नित्य, एक, सामान्य आदि होती है तो पर्याय की दृष्टि से उसे असत्, अनित्य, अनेक, विशेष आदि कहा जाता है।"

दिल्ली का यह चातुर्मास अत्यन्त ज्ञानवर्धक रहा। लाला श्रीबनारसीदास जी, लाला मिलापचन्द जी, लाला किशनचन्द जी, हकीम हेमराजजी एव स्थानीय श्रीसघ की सेवाएँ और धर्मानुराग सराहनीय रहा।

चातुर्मास मे स्वामीजी श्री अमरचन्दजी म.सा. का स्वास्थ्य अधिक नरम हो जाने से चातुर्मास के पश्चात् भी चरितनायक का यहा से विहार न हो सका। क्षेत्र की अनुकूलता और श्रावकजनो की भक्ति भी सराहनीय रही।

उधर काधला से पण्डित मुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज ठाणा २ से चातुर्मास सम्पन्न कर स्वामीजी की सेवा मे दिल्ली पधार गए। लाला बनारसीदासजी, श्री रतनलालजी पारख और मिलापचन्द जी ने आवश्यक उपचार कराया, किन्तु रोग पर नियन्त्रण नही हो सका। अन्त मे श्री सरदारमलजी साड के प्रयत्न से जोधपुर वाले गुरासा उदयचन्दजी की दवा चालू की, जो लाभकारी प्रतीत हुई। उस समय गुरा सा ने ७ दिन दिल्ली रहकर बड़ी तत्परता से सेवा की। ऋतु की प्रतिकूलता और दूरी के कारण उपचार पूरी तरह कारगर नही हुआ।

आचार्य श्री आत्माराम जी म सा का भावपूर्ण आग्रह था कि चरितनायक लुधियाना पधारे तो इन क्रियानिष्ठ साध्वाचार के सजग तपपूत सतरत्न के पदार्पण से पजाबवासी भक्तजन लाभान्वित होगे। चरितनायक की भी भावना उनके दर्शनार्थ जाने की थी। किन्तु स्वामी जी श्री अमरचन्दजी म.सा का स्वास्थ्य एकदम प्रतिकूल रहने से आगे बढ़ना सम्भव नही हो सका।

पूज्यप्रवर ने अन्यान्य कार्यों की अपेक्षा सेवा को प्राथमिकता प्रदान की। स्वामीजी भोजराजजी म.सा की शासन सेवा एव उनकी भोलावण भी आपकी सहज स्मृति मे थी ही। सघनायक होते हुए भी आपने स्वामीजी महाराज के स्वास्थ्य समाधि हेतु स्वय सेवाभाव को प्रमुख लक्ष्य रखा।

प्रशातात्मा श्री अमरचन्दजी म सा. के उपचार मे दिल्ली के हकीम हेमराजजी, डॉ ताराचन्दजी पारख एव डॉ लालचदजी ने पूरा रस लेकर सेवा की। आप शीघ्र ही रुग्ण स्वामी जी महाराज के साथ अलवर, बैराठ, शाहपुरा होते हुए जयपुर पधारे। इस बीच महासती श्री छोटे धनकवरजी महाराज साहब का माघ शुक्ला षष्ठी सवत् २०१५ को ब्यावर मे तीन दिन के सथारे के साथ देवलोकगमन हो गया। कुछ काल पश्चात् फाल्गुन शुक्ला षष्ठी को महासती श्री अमरकवर जी महाराज साहब का समाधिमरण हो गया। आप सवत् २०१५ का निमाज चातुर्मास सम्पन्न कर महासती श्री धनकुँवर जी म सा के दर्शनार्थ ब्यावर पधारे। यहाँ आप ज्वर एव खाँसी से आक्रान्त हो गए। निरन्तर स्वास्थ्य मे गिरावट के कारण आप नश्वर देह को छोड़ कर चल दिए। विक्रम सवत् १९६० मे किशनगढ़ के बोहरा कुल मे श्री हीरालाल जी के यहाँ जन्मे अमरकँवर जी ने अल्पायु मे विधवा होने के पश्चात् महासती राधाजी के धर्मोपदेश से प्रभावित होकर दीक्षा अगीकार की थी। चरितनायक लगभग १७ माह मुनि श्री अमरचन्दजी म.सा. की सेवा मे जयपुर विराजे। इस दौरान ज्येष्ठ शुक्ला दशमी सवत् २०१६ को गुरु भक्त सुश्रावक श्री पूनमचन्दजी हरिश्चद्र बडेर के यहा से तमिलप्रान्त निवासी वैरागी श्री राम की दीक्षा सम्पन्न हुई, जो मुनि श्री श्रीचन्द जी महाराज साहब के नाम से जाने गये।

• जयपुर चातुर्मास (सवत् २०१६)

सवत् २०१६ के आपके चातुर्मास का सौभाग्य ठाणा ८ से जयपुर को प्राप्त हुआ। आपका चातुर्मास लालभवन मे था तथा सरलमना महासती श्री बदनकँवर जी म.सा. आदि ठाणा का चातुर्मास बारह गणगौर के स्थानक मे हुआ। जयपुर के लाल भवन मे सम्पन्न इस चातुर्मास मे आचार्यप्रवर के प्रवचन अत्यन्त प्रभावी रहे। पर्युषण पर्व पर व्याख्यान सुबोध इण्टर कॉलेज के विशाल प्रागण मे हुए। सामायिक सप्ताह का आयोजन हुआ, जिसमे सामायिक-आराधना करने व सामायिक सूत्र के पाठ सीखने-सिखाने की प्रेरणा की गई। अठाई, तेले, आयम्बिल आदि का आराधन पर्याप्त सख्या मे हुआ। पर्युषण पर्वाराधन मे स्वाध्यायी भाई-बहनों को सन्त-सती विरहित क्षेत्रो मे भेजे जाने का व्यवस्थित कार्यक्रम सर्वप्रथम इसी चातुर्मास मे बना। इस पुनीत कार्य मे जोधपुर के श्री रिखबराज जी कर्णावट ने यथाशक्य प्रतिवर्ष अपनी सेवाएँ देने की भावना व्यक्त की। इसके अनन्तर जयपुर,

जोधपुर भोपालगढ आदि स्थानों के १५ अन्य स्वाध्यायी भी तैयार हुए, यथा— चन्दूलाल जी मास्टर पाली, केवलमलजी लोढा जयपुर, चांदमल जी कर्णावट उदयपुर, चुन्नीलालजी ललवाणी जयपुर, हीराचन्द जी हीरावत जयपुर, राजमलजी ओस्तवाल भोपालगढ, हरकचन्दजी ओस्तवाल भोपालगढ, प्रेमराजजी जैन जयपुर, हीरालाल जी गाधी (वर्तमान आचार्य श्री) , कुन्दनमलजी जैन, देवराज जी भण्डारी जयपुर एवं जसकरणजी डागा, टोंक । श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ की स्थापना यद्यपि संवत् २००२ में हो गई थी, किन्तु इसकी धीमी गति को इस चातुर्मास मे ऐसा बल मिला कि फिर यह निरन्तर प्रगति पथ पर बढ़ता ही गया। आज स्वाध्याय सघ , जोधपुर के अन्तर्गत ७०० से अधिक स्वाध्यायी हैं, जो समय-समय विभिन्न क्षेत्रो में जाकर पर्युषण पर्वाराधन कराते है।

धर्मप्राण लोकाशाह ने आगमो के स्वाध्याय के आधार पर ही तो सद्धर्म का, वीतराग प्रभु के सिद्धान्तो के मर्म का बोध पाया एव आगे चल कर शुद्ध साध्वाचार के स्वरूप को समाज के समक्ष लाकर अभिनव धर्म-क्रान्ति की। श्रावक-श्राविका चतुर्विध सघ के अभिन्न अग है। शासन के उत्थान मे उनका दायित्व कम नही। उनका कर्तव्य पूज्य सत-सती वर्ग के ज्ञान-दर्शन-चारित्र की प्रगति मे मात्र सहायक का नही, वरन् 'अम्मापियरो' के माफिक उनके रत्नत्रय के पोषण का है।

श्रद्धेय स्वामीजी श्री पन्नालालजी महाराज साहब के मन मे श्रावको की इस दायित्व भावना एव इसके आधार पर उनके द्वारा स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार की भावना जगी। उन्होने समाज के समक्ष स्वाध्याय संघ की योजना रखी। परम पूज्य चरितनायक ने इस योजना का महत्त्व ही नही समझा, अपितु इसे अभिनव क्रान्ति का रूप दिया। आपने अपने प्रबल पुरुषार्थ से श्रावक-श्राविकाओं के मन मे स्वाध्याय की ज्योति आलोकित कर एक विशाल स्वाध्यायी वर्ग का गठन किया, जिसे वे सदैव भगवान महावीर की शास्त्रवाहिनी शान्ति सेना के रूप मे सबोधित किया करते।

जिस समय मे कोई कल्पना भी नही कर सकता था कि श्रावक वर्ग स्वाध्याय से आगम अनुशीलन एव थोकड़ो के ज्ञान से अपने को समृद्ध कर सेवा देने को कृत सकल्प हो सकता है व जिनवाणी के प्रचार के पवित्र लक्ष्य से आठ दिन निःस्वार्थ सेवा देने हेतु घर से बाहर अन्य ग्राम-नगर मे जाकर पर्युषण पर्वाराधन करा सकता है उस समय इस योजना को उपहास के साथ देखा जा रहा था, अत. इसे हाथ मे लेना एक अति क्रान्तिकारी कदम था। आपका स्पष्ट मन्तव्य था कि आगम-अध्ययन व अनुशीलन साधु-साध्वियों का ही विशेषाधिकार नही है। निर्ग्रन्थ प्रवचन मे श्रावक-श्राविकाओ के लिये आगम-स्वाध्याय का कही निषेध नही है। आपका स्पष्ट चिन्तन था कि श्रावक-श्राविका आगम-अवगाहन कर स्वय तो ज्ञान-क्रिया सम्पन्न व श्रद्धानिष्ठ बनेगे ही, साथ ही श्रमण-श्रमणी वर्ग की ज्ञान-दर्शन-चारित्र साधना मे सहयोगी बन जिनशासन के प्रहरी की भूमिका निर्वहन कर सकेगे। एक दूर द्रष्टा प्रबल पुरुषार्थी एव जिनशासन सेवा में सर्वस्व समर्पण करने को उद्यत महापुरुष ही ऐसा साहस कर सकता था। ग्राम-ग्राम, नगर-नगर मे रहने वाले स्वाध्यायशील श्रावको के हृदय में, जिनशासन की सेवा करने की भावना व साहस जागृत करने एव उनका मार्गदर्शन करने का परिणाम आज सामने है कि देश के कोने-कोने में प्रतिवर्ष सैकड़ो नही, वरन् हजारों शान्ति सेनानी आठ दिन के लिए अपना घर, व्यवसाय व नौकरी छोड़ कर एक मात्र चातुर्मास से वंचित क्षेत्रो में जिनवाणी की पावन धारा को प्रवाहित करने के लक्ष्य से अपनी सेवाए प्रदान कर रहे हैं एव उनके माध्यम से सैकड़ों क्षेत्रों के भाई-बहिन, पर्युषण को ही चातुर्मास मान कर सामायिक, प्रतिक्रमण, शास्त्र-श्रवण, व्रत-प्रत्याख्यान व तप त्याग से अपने जीवन को भावित करते हैं। वस्तुत: पूज्य भगवन्त वे भगीरथ थे, जिन्होने स्वाध्याय संघ के माध्यम से जिनवाणी की पावन गगा को शास्त्रो के पन्नो की गिरि उपत्यकाओ से बाहर निकालकर

भारत के कोने-कोने तक पहुचाने का महान् उपक्रम किया है। **यदि उन महामनीषी द्वारा जिनशासन की जाहो जलाली हेतु जीवन पर्यन्त किये गये विभिन्न योगदानों में से मात्र इस एक अभिनव क्रान्ति को ही लिया जाय तो भी उनका नाम जिनशासन प्रभावक आचार्य भगवंतों मे अग्रगण्य पंक्ति में अंकित किये जाने हेतु पर्याप्त है। युग-युग तक उन महापुरुष का नाम सामायिक स्वाध्याय के संदेशवाहक के रूप में पूर्ण समादर से स्मृत किया जाता रहेगा।** स्वाध्याय एव आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब दोनो ही मानो एक दूसरे के पर्याय बन गये थे एव जहां-जहा स्वाध्याय का जिक्र आयेगा वहा स्वत. ही परम पूज्य आचार्य भगवन्त का नाम लिया जायेगा व जब भी परम पूज्य आचार्य भगवन्त का नाम लिया जायेगा तो स्वाध्याय की प्रेरणा सहज ही मिल सकेगी।

स्वामी श्री अमरचन्द जी म.सा की अस्वस्थता के कारण पूज्य श्री चातुर्मास के पश्चात् भी ठाणा ६ से जयपुर ही विराजे। उस समय प्रार्थना पर आपके अत्यन्त सारगर्भित, विचारपरक एव हृदयग्राही प्रेरक प्रवचन हुए जो सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर के माध्यम से 'प्रार्थना प्रवचन' पुस्तक के रूप मे जन-जन के लिए सुलभ हुए। सिद्ध परमात्मा की प्रार्थना का प्रयोजन प्रतिपादित करते हुए आपने फरमाया—"जैसे अंजन नहीं चाहता कि मैं किसी की नेत्र ज्योति बढाऊ, तथापि उसके सेवन से नेत्र की ज्योति बढ़ती ही है, उसी प्रकार निष्काम - निस्पृह एवं वीतराग सिद्ध परमात्मा भले ही किसी को लाभ पहुचाना न चाहे, मगर उनके सेवन से, उनके ध्यान और स्मरण से अवश्य ही लाभ पहुँचता है। सिद्ध भगवान की अलौकिक ज्ञानकिरणों को, चिन्तन के कांच के सहारे, यदि हम अपने अन्तःकरण मे केन्द्रित करेंगे तो अज्ञान दूर होगा, मन की अशान्ति दूर हो जाएगी और चित्त की आकुलता मिट जाएगी।" भगवान पार्श्वनाथ जयन्ती पर सामायिक एव एकाशन का विशेष आयोजन हुआ। जयपुर एव जोधपुर के १३ श्रावको ने सपत्नीक आजीवन शील-व्रत अगीकार किया। पौष शुक्ला चतुर्दशी को पूज्य प्रवर ने अपनी ५० वीं जन्म तिथि पर १ वर्ष मे पचास शीलव्रती तैयार करने का सकल्प लिया। गुरुदेव का यह सकल्प पूर्ण हुआ। प्रतिवर्ष गुरुदेव ने फिर अपने जीवन के व्यतीत वर्षों की संख्या के जितने आजीवन शील-व्रती बनाने का नियम ही बना लिया। ५१ वे वर्ष मे उन्होने ५१ शील व्रती , ५२ वे वर्ष मे ५२ शील व्रती बनाये। इस प्रकार क्रमिक रूप से बढती हुई सख्या मे शील-व्रती बनाने का क्रम चलता रहा। इसी प्रकार चरितनायक ने १२ व्रतधारी श्रावक भी बनाए। आपके लिये तो अपना जन्म-दिन विगत वर्ष के कार्यो का आकलन व नूतन वर्ष के लिये सकल्प का दिवस होता था।

आपके इस जयपुर प्रवास के समय आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार नामक पुस्तकालय की स्थापना हुई। गौरवशाली रत्नवश परम्परा के पचम आचार्य आगममहोदधि बहुश्रुत पूज्य श्री विनयचन्द्रजी म.सा विक्रम सवत् १९५९ से १९७२ तक १४ वर्ष के लम्बे काल के लिए स्थिरवास विराजे, जिनके ज्ञान, दर्शन, चारित्रमय सयम-जीवन की अनूठी छाप जयपुर के जन मानस पर अकित है, उन्ही महापुरुष की स्मृति मे इस ज्ञान भण्डार का नामकरण उनके नाम पर हुआ। आज इस ज्ञान भडार मे हजारो प्रकाशित ग्रन्थो के अतिरिक्त हस्तलिखित ग्रन्थो, पत्रो, चित्रो, पाण्डुलिपियो, ताम्रपत्रो आदि का अनूठा सकलन है। ज्ञान भडार को व्यवस्थित करने मे श्री सोहनमलजी कोठारी ने समर्पित भाव से अपनी अप्रतिम सेवाए प्रदान की।

सवत् २०१७ की महावीर जयन्ती पर आचार्य श्री की प्रेरणा से १०८ भाइयो ने अग्राङ्कित प्रतिज्ञाएँ ग्रहण की.—

१. लड़के - लड़कियो की शादी पर डोरा (बींटी) , दहेज नही मागेगे।

२ प्राणी-हिंसा से निर्मित जूते, चप्पल आदि नही पहनेगे।

३. मद्य-पान नही करेगे। मास, मछली, अण्डे आदि अभक्ष्य का सेवन नही करेगे।

४ प्रतिवर्ष एक माह का समय धर्म-प्रचार मे देगे।

५ अपनी सामर्थ्य - शक्ति अनुसार स्वधर्मी भाई-बहनो को नौकरी, व्यवसाय, छात्रवृत्ति अथवा सेवा के द्वारा सहयोग देगे।

६. साम्प्रदायिक झगडो से दूर रहेगे, हो सके तो उन्हे शान्त करने, उनका समाधान करने का प्रयत्न करेगे।

७ धार्मिक परिचय मे अपने आपको जैन कहेगे।

८ माल मे मिलावट करके नही बेचेगे।

९ आश्रित नौकर या पशु से प्रेम, स्नेह का व्यवहार करेगे।

१० चोरी, हत्या जैसे मामलो मे सहयोगी नही बनेगे।

११ महावीर जयन्ती के दिन कम से कम आधा दिन व्यवसाय बन्द रखेगे।

१२ अपने गॉव मे , गॉव के पास कसाई खाना हो, हिसा की वृद्धि होती हो तो उसके लिए खुला विरोध करेगे।

१३ लोगो को शाकाहार के लाभ और मासाहार के दोष समझाकर मासाहारियो को निरामिष-भोजी बनाने का प्रयत्न करेगे। (कम से कम ५० मासाहारी व्यक्तियो को शाकाहारी बनाने का सकल्प लिया गया।)

• अमरचन्दजी म. का स्वर्गवास

आषाढ़ कृष्णा ३ रविवार सवत् २०१७ (१२ जून १९६०) को प्रशान्तात्मा स्वामी श्री अमरचन्दजी म.सा. का स्वर्गवास हो गया। आप भयकर असह्य वेदना मे भी समता बनाए रखकर समाधिमरण को प्राप्त हुए। भोपालगढ के मूल निवासी श्री धनराजजी एव श्रीमती सुन्दरकवरजी बच्छावत के सुपुत्र श्री अमरचन्दजी ने १२ वर्ष की वय मे पूज्य आचार्यश्री विनयचन्द्रजी म.सा. से वि.स. १९६७ मे माघ शुक्ला दशमी को दीक्षा अँगीकार की। आपको स्वामीजी श्री चन्दनमलजी म.सा का शिष्य घोषित किया गया। आप उत्कट क्रियावान, चौथे आरे की बानगी, आहार गवेषणा के विशेषज्ञ सत रत्न थे। आपका समूचा जीवन सरलता, वत्सलता व सेवाभाव का अप्रतिम उदाहरण है। श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए मोतीलाल जी गाधी के सुपुत्र श्री हीरालाल जी गाधी (वर्तमान आचार्यप्रवर) ने पॉच वर्षो तक विवाह न करने की प्रतिज्ञा ली तथा जयपुर के श्री उमराव मल जी सेठ की सुपुत्री सुश्री तेजकँवर जी ने भी शील-व्रत अँगीकार किया। अमरचन्द जी म.सा. की पावन स्मृति मे जयपुर सघ ने श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसायटी की स्थापना की। लाल भवन के समीप व जैन अस्पताल के रूप मे आज भी यह सोसायटी जन-सेवा मे सलग्न है।

• अजमेर चातुर्मास (संवत् २०१७)

अजमेर सघ की आग्रहभरी विनति को ध्यान मे रखते हुए आपने चातुर्मास हेतु स्वीकृति प्रदान की तथा

जयपुर से विहार कर अजमेर नगर के महावीर भवन मे चातुर्मासार्थ विराजे।

विस २०१७ के अजमेर चातुर्मास में धर्म-प्रभावना के विभिन्न कार्यो के साथ एक महत्त्वपूर्ण कार्य यह हुआ कि यहाँ के बूचडखानो मे दुधारू गायो और बैलो का जो कत्ल होता था वह आचार्य श्री के सकेत से एव श्रावको के प्रयास से पर्युषण के दौरान बन्द हो गया। जन-जन की श्रद्धा के केन्द्र पूज्यप्रवर ने पर्युषण के आठ दिनो के सम्बन्ध मे मार्मिक प्रवचन दिए। आपने फरमाया कि आठ कर्म, आठ मद एव आठ प्रमाद छोड़ने योग्य हैं तथा पॉच समिति एवं तीन गुप्ति रूप अष्ट प्रवचन माता ग्रहण करने योग्य है। इसी प्रकार आठ सिद्धियाँ, आत्मा के आठ गुण एव अष्टाग योग भी ग्राह्य है। इस प्रकार पर्युषण के आठ दिनो का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए कृपानाथ ने श्रावक-समुदाय मे सदाचार की महती प्रेरणा की। उल्लासपूर्ण वातावरण मे तप-त्याग की शृखला के साथ चातुर्मास सम्पन्न हुआ।

- पीपाड़, भोपालगढ होकर जोधपुर की ओर

अजमेर चातुर्मास के पश्चात् चरितनायक किशनगढ़, तिहारी होते हुए विजयनगर पधारे। यहाँ आपका मत्री श्री पुष्करमुनि जी से मधुर मिलन हुआ। फिर आप ब्यावर होते हुए निमाज पधारे जहाँ पौष शुक्ला चतुर्दशी को आपका ५१वा जन्मदिवस मनाया गया। यहाँ के नियमित शिकारी कुवर श्यामसिह जी ने गुरुदेव के वचनो से प्रभावित होकर शिकार का सदा के लिए त्याग कर दिया। यह कुवरसा द्वारा अपने प्रधान बनने की खुशी मे गुरु चरणो मे अनुपम भेट थी। अपने ५१ वे जन्म-दिवस के अवसर पर अध्यात्मरसिक चतिरनायक ने वर्षभर मे ५१ स्वाध्यायी बनाने का सकल्प लिया तथा गतवर्ष किए गए सकल्प का पुनरवलोकन कर शीलव्रतियो एव बारह व्रतियो की सख्या बढाने की प्रतिज्ञा की। विहार क्रम मे राणीवाल ग्राम मे श्री बालारामजी ने शिकार करने का त्याग किया। यहा से आप रणसीगाव, मादलिया होते हुए पीपाड़ पधारे, जहाँ मुनिश्री लाभचन्दजी म.सा चौथमलजी म.सा. आदि का समागम हुआ। उत्तराध्ययन सूत्र के ३६ वे अध्ययन की वाचनी हुई। यहाँ बशीलालजी मुथा, हस्तीमलजी एवं चौधरी जी के बास के अजैन बन्धु ने शीलव्रत अगीकार किया। पीपाड़ से आप रीया पधारे, जहाँ श्री प्रेमराज जी मुणोत ने सपत्नीक आजीवन शीलव्रत ग्रहण किया। यहाँ से साथिन पधारने पर कोट की कचहरी मे तथा रतकूडिया पधारने पर मन्दिर मे व्याख्यान हुए। पूर्णिमा को मेघ-वर्षा के कारण विहार नही हो सका, प्रतिपदा को विहार कर भोपालगढ़ पधारे। भोपालगढ़ मे शिक्षा पर आपके प्रवचन से प्रभावित होकर स्थानीय कार्यकर्ताओ द्वारा विद्यालय समिति का गठन किया गया, जिसके सचालन का दायित्व श्री रिखबराजजी कर्णावट और श्री रतनलालजी बोथरा को सौपा गया। साहित्यिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण कार्य हुए। कुछ हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुए जिन्हें जोधपुर तथा जयपुर के ज्ञान भडारो मे भेज दिया गया। श्री चन्दनमलजी कर्णावट, धूलचन्दजी ओस्तवाल, श्री माणकचन्दजी पारख, श्री पूसाराम जी छीपा आदि ने शीलव्रत लिए। बाइयो मे दया की पचरगी एव बड़ी तपस्याए भी हुई। विद्यालय के छात्रो ने व्यसन त्याग के नियम लिए। भोपालगढ से श्रमणसघ के उपाध्यायप्रवर पूज्य चरितनायक जोधपुर पधारे।

जोधपुर के उदयभवन मे गुरुदेव के अहिंसा-विषयक प्रवचन से प्रभावित होकर ठाकुर उदयसिंह जी ने शिकार आदि के रूप मे आजीवन हिंसा नही करने और चैत्र मास मे अभक्ष्य के त्याग का नियम लिया।

• स्वाध्याय एवं सामायिक की प्रवृत्ति को बढ़ावा

चैत्र शुक्ला तीज को घोडो का चौक स्थानक मे दस दिवसीय स्वाध्याय शिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ जिसमें ७१ स्वाध्यायियों ने भाग लिया। पूज्यप्रवर स्वाध्याय की प्रवृत्ति को जीवन के वास्तविक निर्माण हेतु आवश्यक मानते थे। उनके सान्निध्य मे हुआ यह स्वाध्याय शिक्षण शिविर श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ का सम्भवत: प्रथम शिविर था। इस शिविर मे अनेक नये स्वाध्यायी श्रावक तैयार हुए। स्वाध्यायियो को स्वाध्याय सघ के माध्यम से पर्युषण पर्वाराधन हेतु अन्य क्षेत्रो मे भेजना प्रारम्भ हुआ। यह प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती गई। पूज्यप्रवर चरितनायक ने स्वाध्याय की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने हेतु पद्य-रचनाएँ भी की, जो लोकप्रिय हुई। आपने स्वाध्याय की मशाल को घर-घर मे दीप्त करने की प्रेरणा करते हुए फरमाया—

घर घर में अलख जगा देना, स्वाध्याय मशाल जला देना।
अब जीवन में सकल्प करो [illegible]। तन धन दे जीवन सफल करो।
अज्ञान अन्धेरा दूर करो, जग में स्वाध्याय प्रकाश करो।

आपने बिना ज्ञान के क्रिया को शून्य बतलाते हुए कहा —

श्रमणो ! अब महिमा बतलाओ, बिन ज्ञान क्रिया सूनी गाओ।
'गजमुनि' सद्ज्ञान का प्रेम भरो [illegible]।

उनका चिन्तन था कि प्रत्येक ग्राम, नगर एव प्रान्त मे स्वाध्यायी हो —

[illegible] ग्रामों को शासन की हम शान बढ़ायेंगे।
हर प्रान्तो मे स्वाध्यायी जन, अब फिर दिखलायेंगे॥

स्वाध्याय ही अज्ञान अन्धकार को दूर करने का उपाय है, इसलिए नित्य स्वाध्याय की प्रवृत्ति पर बल देते हुए उन्होने फरमाया —

हम करके नित स्वाध्याय, ज्ञान की ज्योति जगायेंगे।
अज्ञान हृदय का धोकर के, उज्ज्वल हो जायेंगे॥

मनुष्य . प्राय. आर्तध्यान एव रौद्रध्यान मे रहकर अपना जीवन व्यर्थ गँवाता है, पूज्य श्री ने उसे त्यागकर स्वाध्याय को स्थान देने का आग्रह किया —

घर-घर में स्वाध्याय बढाओ, तजकर आर्त ध्यान।
जन-जन की आचार शुद्धि हो बना रहे शुभ ध्यान॥

मन के मैल को दूर करने का सुगम उपाय है 'स्वाध्याय'। इसलिए आप जहाँ भी पधारे, जन-जन के आत्म-विकास एवं निर्मलता हेतु स्वाध्याय की प्रेरणा करते रहे —

करलो श्रुतवाणी का पाठ, भविक जन मन मल हरने को।
बिन स्वाध्याय ज्ञान नहीं होगा, ज्योति जगाने को।
राग रोष की गाँठ गले नहीं, बोधि मिलाने को॥

ज्ञान के साथ क्रिया को आगे बढ़ाने हेतु उन्होंने 'सामायिक' को सम्बल बताया। यहाँ पर सामायिक संघ की भी स्थापना की गई। सामायिक संघ का प्रारम्भ सवत् २०१६ में हो गया था। फिर गाँव-गांव, नगर-नगर में यह सदेश प्रसारित करने का प्रयास किया गया, ताकि नियमित सामायिक करने वालों की सख्या में अभिवृद्धि हो।

सामायिक समभाव की साधना है। इसका आराधन मन की आकुलता को दूर करता है, समता एव शान्ति प्राप्त होती है तथा समभाव के आचरण के माध्यम से जीवन उन्नत बनता है। चरितनायक ने यह सदेश पद्य मे इस प्रकार गूँथा –

जीवन उन्नत करना चाहो तो सामायिक साधन कर लो।
आकुलता से बचना चाहो, तो सामायिक साधन कर लो।

मन की निर्मलता एव आध्यात्मिक बल की प्राप्ति भी सामायिक से सम्भव है –

तन पुष्टि-हित व्यायाम चला मन पोषण को शुभ ध्यान भला।
आध्यात्मिक बल पाना चाहो, तो सामायिक साधन कर लो॥

विकारो को जीतने, पाप-प्रवृत्तियो से बचने का सामायिक स्वाधीन उपाय है । यह जीवन निर्माण का सच्चा साधन है –

अगर जीवन बनाना है, तो सामायिक तू करता जा।
हटाकर विषमता मन की, साम्यरस पान करता जा॥
भटक मत अन्य के दर पर स्वयं में शान्ति लेता जा॥

सामायिक से पूज्य चरितनायक ने आत्म-जीवन सुधार के साथ देश एव समाज का सुधार भी स्वीकार किया–

सामायिक से जीवन सुधरे, जो अपनावेला।
निज सुधार से देश जाति, सुधरी हो जावेला॥

मनुष्य तन का मैल दूर करने के लिए तो प्रतिदिन स्नान करता है, किन्तु मन के मैल को दूर करने हेतु कोई उपाय नही करता। सामायिक इस मैल को दूर करने का प्रभावी उपाय है। चरितनायक ने इस उपाय पर बल देते हुए कहा –

करलो सामायिक रो साधन, जीवन उज्ज्वल होवेला।
तन को मैल हटाने खातिर, नित प्रति न्हावेला॥
मन पर मैल चहुँ ओर जमा है, कैसे धोवेला॥

समता की प्राप्ति के बिना कोई जीव मोक्ष मे नही जाता –

जो भी गए मोक्ष में जावे, सबो ने दी समता की नाव।

समता रूप सामायिक का दो घड़ी (४८ मिनट) का अभ्यास भी मानव को आत्मबली बना सकता है–

घड़ी दो कर अभ्यास, महान् बनाते जीवन को बलवान्।

सामायिक से मन की व्यथा को दूर कर समता की सरिता का आनन्द लिया जा सकता है –

मन की सकल व्यथा मिट जाती, स्वानुभव सुख सरिता बह जाती।

चरितनायक की भावना थी कि सामायिक सघ के माध्यम से सामायिक का घर-घर प्रचार हो एव सामायिक का आराधन कर व्यक्ति सदाचार, सुनीति एव प्रामाणिकता को अपना ले तो उनका जीवन सदा के लिए उन्नत एव सुखी हो जाएगा। मनुष्यलोक मे स्वर्ग का दर्शन हो जाएगा–

निर्व्यसनी हो, प्रामाणिक हो, धोखा न किसी जन के संग हो।
समाज में पूजा पाना हो, तो सामायिक साधन कर लो॥

चैत्रकृष्णा चौथ को चरितनायक श्री थानचन्दजी मेहता के यहाँ ठहरते हुए पचमी को सरदारपुरा पधारे। महावीर जयन्ती पर प्रवचन बड़े प्रभावकारी रहे। इस दिन श्री शैतान चन्द जी बारणी वाले, श्री कालूजी नाहर, श्री खेमचन्द जी सिंघवी एव श्री दशरथमलजी लोढा ने आजीवन शीलव्रत का नियम अगीकार किया। संवत् २०१८ के चातुर्मास हेतु सैलाना, भीलवाड़ा, भोपालगढ़ हरसोलाव, पाली और जोधपुर सघ ने पुरजोर विनति प्रस्तुत की। पूज्यप्रवर ने जोधपुर सघ की विनति को स्वीकार कर लिया। चैत्र मास की आयम्बिल ओली एव महावीर जयन्ती के अवसर पर सैंकडो आयम्बिल, एकाशन एव दयाव्रत हुए।

• बालोतरा की ओर

बालोतरा सघ का अत्याग्रह होने से चरितनायक ने बालोतरा की ओर विहार किया। विहार के समय बड़ी सख्या मे श्रावक-श्राविकाएँ बासनी तक पहुँचे। सालावास मे आप केशरीमलजी बागरेचा के नोहरे मे विराजे। यहाँ भीखमचन्दजी एव दीपचन्दजी कवाड अच्छे धर्मप्रेमी थे। रेलवे लाइन के पास से आठ नौ मील चलकर लूणी जक्शन पधारे। यहाँ से कच्चे रास्ते से सथलाणा, भासन्ना होते हुए वैशाख कृष्णा अष्टमी को आप दुन्दाड़ा पधारे। भगवान पार्श्वनाथ की प्रार्थना के मधुर पद्य गाकर मागलिक सुनाया। यहाँ मदिर और स्थानक के पटिये के सम्बध मे बहुत मतभेद था। आचार्यश्री ने सबकी बातो को शान्तिपूर्वक सुनकर समरसता का सचार किया।

अजीत से भलडारावाड़ा होते हुए चरितनायक समदड़ी पधारे। यहा आपके धर्म के स्वरूप विषयक प्रभावशाली प्रवचन हुए। भक्तो ने प्रश्नचर्चा भी की। इस विषयक साराश चरित नायक की डायरी के आधार पर उद्धृत किया जा रहा है-

"धर्म हृदय की बाड़ी में उत्पन्न होता है, वह किसी खेत में पैदा नही होता, न किसी हाट दुकान पर ही मिलता है। वह तो हृदय की चीज है। राजा हो या रंक, जिसके मन में विवेक है, सरलता है जड़ चेतन का भेदज्ञान है, वही वास्तव में धर्म का अस्तित्व है।

सत्य से धर्म की उत्पत्ति होती है। चोर, लम्पट और हत्यारा भी सत्यवादी हो तो सुधर सकता है। यदि सत्य नही तो अच्छे से अच्छा सदाचारी और साहूकार भी गिर जाता है, बिगड़ जाता है।

धर्मरूप कल्पवृक्ष की वृद्धि दया-दान से होती है। इसलिए कहा है कि "दयादानेन वर्धते"। बढ़ा हुआ धर्मवृक्ष क्षमा के बिना स्थिर नही रह सकता, इसलिये कहा है कि "क्षमया च स्थाप्यते धर्म" सहिष्णुता-क्षमा से धर्म की रक्षा होती है, कामादि विकार सहिष्णु साधक को पराभूत नही कर सकते।"

धर्म का नाश किससे होता है? इसके उत्तर मे चरितनायक ने फरमाया कि "क्रोधलोभाद् विनश्यति" क्रोध और लोभ से धर्म का नाश होता है। जहा प्रशांत भाव के बदले क्रोध का प्रभुत्व है, वहा ज्ञानादि सद्गुण सुरक्षित नही रहते, आत्मगुण नष्ट हो जाते हैं। लोभ भी सब सद्गुणो का घातक है, इसलिये इन दोनो को धर्मनाशक कहा गया है।

सृष्टि की आदि कब से है और कैसे हुई? इसका समाधान करते हुए आप श्री ने फरमाया-"सबसे पहले आप को एक अनादि सिद्धान्त ध्यान में लेना चाहिये कि "नाऽसतो विद्यते भावो, नाऽभावो विद्यते सत:" सर्वथा असत् वस्तु की उत्पत्ति नहीं होती और सत् पदार्थों का सर्वथा नाश नही होता। आप जानते हैं कि सुवर्ण की डली को भस्म बनाकर उड़ा दिया जाये तब भी परमाणु रूप में सोना कायम ही रहता है। इसी प्रकार संसार के जड़ चेतन पदार्थ भी सदा विद्यमान रहते हैं, कभी

उनका सर्वप्रथम निर्माण हुआ हो ऐसा नही, जड़ चेतन का विभिन्न रूप में संयोग ही सृष्टि की विचित्रता का कारण है।

यदि ईश्वर सृष्टि का कर्ता नही और जीव स्वय ही अपना कर्मफल भी भोग लेता है तो ईश्वर की विशिष्टता ही क्या रहेगी? इसका समाधान करते हुए चरितनायक ने फरमाया "ईश्वर की विशिष्टता सृष्टि कर्तृत्व आदि की दृष्टि से नही, किन्तु उसके गुण विशेषो से है। ईश्वर शुद्ध, बुद्ध, पूर्ण और मुक्त है। जीव को उसके ध्यान, चिन्तन एव स्मरण से प्रेरणा और बल मिलता है। आत्म शुद्धि मे ईश्वर का ध्यान खास निमित्त है। उसको जीव के कर्मभोग में सहायक मानना अनावश्यक है। गीता मे स्वय श्री कृष्ण कहते है-न कर्तृत्व न कर्माणि, लोकस्य सृजति प्रभु । न कर्मफलसयोग, स्वभावस्तु प्रवर्तते। प्रभु न ससार का कर्तृत्व और न कर्म का ही सर्जन करते है, कर्म फल का सयोग भी नही करते, वस्तु का स्वभाव ही ऐसा है कि वह प्रवृत्त होता है। सोच लीजिये आपके दो बालक है एक अधिक प्रेम पात्र है और दूसरा कम। जो प्रेम पात्र है वह भग की पत्तिया घोट कर पीता है और जिस पर कम प्रेम है वह ब्राह्मी की पत्तिया घोटकर पीता है। प्रेमपात्र नही होने पर भी जो ब्राह्मी का सेवन करता है, उसकी बुद्धि बढ़ेगी या नही और जो प्रेमपात्र होकर भी लापरवाही से भग पीता है उसकी बुद्धि निर्मल और पुष्ट हो सकेगी क्या? जैसे ब्राह्मी से बुद्धि बढ़ना और भग से ज्ञान घटना इसमे किसी गुरु की कृपा अकृपा कारण नही है। वैसे ही भले बुरे कर्म भी जीव के द्वारा ग्रहण किये गये, बिना किसी न्यायाधीश के अपने शुभाशुभ फल देने मे समर्थ होते है। बाल जीवो को ईश्वर की ओर आकृष्ट करने के लिये हो सकता है कि विद्वानो ने उसे एक राजा की तरह बतलाया हो, पर वास्तव मे ज्ञान दृष्टि से सोचने पर मालूम होगा कि ईश्वर तो शुद्ध एव द्रष्टा है, वह हमारी तरह कर्म या कर्मफल भोग का कर्त्ता धर्त्ता नही है।

जीव स्वय चेतनाशील होने से कर्म का कर्त्ता, भोक्ता और सहर्ता है। जड़ चेतन का अन्तर ही यह है कि जड़ चलाये चलता, डुलाये डुलता, दूसरे के सभाले सभलता है, किन्तु चेतन स्वय चलता, डुलता एव अपने बिगाड़ को अनुभव कर अनुकूल निमित्त भी स्वय मिला पाता है। यह घड़ी बिगड़ जाने पर भी स्वय घड़ीसाज के पास नही जाती, पर अपने शरीर मे बिगाड़ हो और मन मे सशय हो तो उसको मिटाने आप, हम स्वय चिकित्सक और गुरु के पास जाते हैं। अत उसके लिए किसी फलदाता की आवश्यकता नही है। रामायण मे तुलसीदास भी कहते है कि-'कर्मप्रधान विश्वकरि राखा, जो जस करहि सो तस फल चाखा।' गीता मे कृष्ण ने अक्षर ब्रह्म को कूटस्थ कहा है, जैसे-

'द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षर सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।'

साकार और निराकार के विषय मे समाधान करते हुए आप श्री ने फरमाया-"ससार मे दो प्रकार की धार्मिक परम्पराए चिरकाल से चली आ रही है, एक प्रतीक प्रतिमा के द्वारा पूज्य देव की पूजा करती है तो दूसरी परम्परा स्मरण एव जप स्तुति द्वारा गुणो को याद कर पूज्य की पूजा करती है। यदि प्रतीक और प्रतिमा को ही कोई देव मान कर पूजता है तो गलत है।

लोक देव-पूजा के स्थान पर प्रतीक पूजा करते हैं और देव के नाम पर बड़ा आडंबर तथा हिंसा करते हैं। यह गलती है। पूज्य और पूजा का विवेक होना चाहिये।" यहा आपके प्रवचन पीयूषामृत से प्रभावित होकर श्री सोहनमल जी एव ठाकुर फौजमलजी ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

समदड़ी से विहार कर पूज्य प्रवर पारलू पधारे। यहां व्याख्यान मे विजय कुवर का प्रसग होने से एक सजोड़े शील का खध हुआ। यहा से कानाना फरसते हुए ५.३० बजे आपका विहार जानियाना के लिए हुआ। रास्ते में सवा छह बजे आप बारहमासी क्वार्टर के पास नीम वृक्ष के नीचे रात्रिवास हेतु ठहरे। दूसरे दिन, जानियाना से आप धोवन पानी लेकर बालोतरा पधारे।

अक्षय तृतीया पर आप बालोतरा बिराजे, जहाँ लूणी, सालावास, करमावास, पाली, जयपुर, अजमेर, जोधपुर आदि स्थानो से आए हुए २० तपस्वियो के पारणे सम्पन्न हुए। इस अवसर पर १३ दम्पतियो (श्री धीगडमलजी बाफना, श्री केसरीमलजी, श्री बुधमलजी पाटोदी वाले, श्री लक्ष्मणजी भण्डारी, श्री मुलतानमल जी भंसाली, श्री मुकनचन्दजी पचपदरा वाले, श्री प्रेमजी गुडवाले, श्री सांवल जी , श्री तुलसीरामजी, श्री मिश्रीमलजी पाटोदी वाले, श्री भगवानदासजी हुण्डिया, श्री हजारीमल जी एव श्री प्रभुलाल जी) ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

यहाँ व्याख्यान मे एक दिन बालकों मे धर्म-जागृति विषयक प्रवचन से प्रभावित होकर श्रावको ने परस्पर विचार-विमर्श कर धार्मिक पाठशाला प्रारम्भ करने की घोषणा की। यह पाठशाला सम्प्रति श्री वर्द्धमान आदर्श विद्या मदिर के नाम से नियमित रूप से चल रही है, जिसमे एक कालाश धार्मिक अध्ययन का होता है। इसमे जैन-जैनेत्तर सभी छात्र जैन धर्म-सिद्धान्तो का अध्ययन करते है।

यहाँ से आपश्री सात किलोमीटर दूर स्थित खरतरगच्छीय बड़ा भडार देखने पधारे। यति सुमेरमलजी, यति माणकचन्द जी ने पूर्ण सहयोग किया। वहाँ भगवती सूत्र और सचित्र कल्पसूत्र दर्शनीय थे। यहाँ छह व्यक्तियो ने सपत्नीक शीलव्रत स्वीकार किया। कुरूढियो के निवारण की भी आचार्य श्री ने महती प्रेरणा की। इस प्रकार क्षेत्र पर उपकार व धर्मोद्योत करते हुए आप बालोतरा से ७ मील का विहार कर पचपदरा पधारे जहाँ तीनों समय व्याख्यान होने लगे। कभी यहाँ ओसवालो के ७०० घर थे, वर्तमान मे १००-१२५ घर है। केशरीमलजी लादानी यहाँ के प्रमुख श्रावक थे। सेठ गुलाबचद जी ने सामाजिक एकता का प्रयास किया। पचपदरा से पाटोदी का ११ मील का विहार अत्यन्त विकट था। पाँवो के नीचे चुभती ककरीली भूमि एव ऊपर से तपता हुआ आकाश मानो मुनि धर्म के परीषहो एवं योगीराज की सहिष्णुता का परिचय ले रहा था। पुन पचपदरा होते हुए बालोतरा पधारने पर आपकी प्रेरणा से ज्येष्ठ शुक्ला ३ को धार्मिक पाठशाला की स्थापना हुई। चरितनायक ने यहाँ आत्म-निरीक्षण की प्रेरणा दी। आपने फरमाया— "सत्य, सरलता और सादगी ही साधु का भूषण है। धर्म मे गणना का महत्त्व नही, गुणो का महत्त्व है।" धर्म और विज्ञान के सम्बन्ध मे आपने फरमाया —

१ धर्म विज्ञान का सहारा ले तो मानव की दुर्बलता है।

२ विज्ञान धर्म की शरण ले तो इसमे विश्व की रक्षा है।

३. विज्ञान आरम्भ-परिग्रह को बढ़ाने वाला है।

४ विज्ञान से मानव-मन मे लालसा बढ़कर अशान्ति पैदा होती है।

५ धर्म लालसा का शमन कर मानव मन को शान्ति प्रदान करता है।

६. निष्कपट प्रेम ही विश्व को सुखी करने वाला है। (गुरुदेव की डायरी से)

५१ दयाव्रत के पश्चात् ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी को यहाँ से विहार कर आप जसोल पधारे, जहाँ आपका रात्रि-प्रवचन हुआ।

प्रातः काल आसोतरा के रास्ते मे तपस्वीराज श्री चम्पालाल जी म से आपका स्नेह मिलन हुआ। कुसीप मे ठाकुर हणवतसिंह जी को मद्यमास का त्याग कराकर एव श्री जेठमलजी को शीलव्रत का स्कन्ध कराकर आप सिवाना पधारे। जालोर सघ की प्रबल भावना को दृष्टिगत कर आपने बालवाड़ा होते हुए जालोर की ओर विहार किया। विहार क्रम मे आप बिशनगढ होते हुए तिरखी पधारे। यहाँ पर जिला श्रावक सघ की सभा हुई, जिसमे स्वाध्याय और सामायिक सघ को प्रसारित करने का निर्णय लिया गया। श्री कल्याणविजय जी म. आदि ठाणा ३ का प्रेममिलन हुआ। यहाँ आपकी प्रेरणा से भडार की प्रतिलेखना कर सूची तैयार की गई। जालोर मे आपने लगभग ५० भाइयो को प्रार्थना एव सामायिक का सकल्प कराया।

जालोर से देवावास, भवराणी होते हुए चरितनायक खडप पधारे, जहाँ तीन दिन विराजे। आप श्री के उद्बोधन से प्रभावित होकर श्री लूकड जी ने मुख्याध्यापक जी के सहयोग से धार्मिक-शिक्षण की व्यवस्था की। यहाँ के अमर जैन ज्ञान भडार मे लगभग ११५० पुस्तके एव १७० के लगभग हस्तलिखित प्रतियाँ सुरक्षित है। इसकी व्यवस्था मे धनराजजी लूकड का प्रयत्न प्रशसनीय है। यहाँ से विहार कर आप भोरडा, घाणा, गेलाव-माडावास, जेतपुरा होते हुए रूपावास पधारे, जहाँ वर्षा के कारण आहारादि का योग भी नही बना। यहाँ से विहार कर आपका पाली पदार्पण हुआ।

- पाली पदार्पण

द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ला १३ सवत् २०१८ को आपने पाली समाज मे व्याप्त कलह को दूर करने की दृष्टि से प्रेरणाप्रद उद्बोधन दिया। दोनो पक्षो ने मत्रणा कर गुरुदेव से निवेदन किया कि उनके विराजने से सुलह हो जाएगी और अन्तत तपपूत तेजस्वी सन्त पूज्य गुरुदेव की वाणी के प्रभाव से सोहनराजजी डोसी, घीसूजी, सम्पतजी कोठारी, विजय जी बालिया आदि श्रावको ने सक्रिय भूमिका निभायी एव परस्पर सुलह कर, पूज्य श्री की जय-जयकार बोलते हुए दोनो दलो ने आकर रात्रि १० ३० बजे मगलपाठ सुना। गुरुदेव ने अखड जाप की प्रेरणा की, पक्खी को अखड जाप हुआ। २० दिनो तक यहाँ धर्माराधन का ठाट रहा। यहाँ से आगामी चातुर्मासार्थ जोधपुर की ओर विहार हुआ। मार्ग मे पुनायता, चोटिला, रोहट, लूणी, सालावास मे जैन-अजैन बन्धुओ को अनछना पानी, बीड़ी सिगरेट आदि का त्याग कराया। चोटिला मे दर्जी एव ब्राह्मण भी नमस्कार मन्त्र का जाप करते है। गुरुदेव ने इन्हे

- जोधपुर चातुर्मास (सवत २०१८)

विक्रम सवत् २०१८ का चातुर्मास जोधपुर के सिंहपोल मे ठाणा ८ से विशेष प्रभावशाली रहा। इस चातुर्मास मे अनेक स्वाध्यायी बन्धु तैयार हुए। ५१ लोगो ने ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार किया, चार मासखमण तप हुए। अनेक व्यक्तियो ने १२ व्रत अगीकार किये। सामायिक एव स्वाध्याय का शखनाद हुआ। चातुर्मास की सफलता के मापदण्ड के आज के परिप्रेक्ष्य मे यह समझना आवश्यक है कि त्यागी महापुरुषो के सान्निध्य मे सम्पन्न त्याग-प्रत्याख्यान और व्रत-ग्रहण ही उनकी सच्ची सेवा है, उनकी सच्ची भक्ति है। निज-पर कल्याणकारी महापुरुषो के जीवन का यही लक्षण है कि उनकी स्वय की साधना के विकास के साथ उनके सान्निध्य मे आने वाले भक्तजन भी पापो से विरति कर सवर, सयम-साधना से जुडें। चरितनायक पूज्य प्रवर चातुर्मास खोलते समय भी इसी लक्ष्य को प्रधानता देते व इसी से प्रमुदित होते। चातुर्मास मे आडम्बर, आवागमन व आयोजनो से चातुर्मास को

ऐतिहासिक , अभूतपूर्व व सफल मानने से वे कभी सहमत नही हुए।

आपने समभाव की साधना पर अपने विचार अभिव्यक्त करते हुये फरमाया - "जब भी कोई साधक साधना के महत्त्व का हृदयगम कर उसके वास्तविक स्वरूप को अपने जीवन मे उतारता है, तब उसे एक नया मोड़ आत्मानदी अवस्था का अनुभव होता है।

श्रावक के बारह व्रतो मे नवमा सामायिक व्रत तथा श्रमण-जीवन की हर पल, हर क्षण की सामायिक एक ऐसी साधना है जो तन और मन से साधी जाती है और लक्ष्य को सिद्ध करती है। इस व्रत की आराधना मे तन की दृष्टि से इन्द्रियो पर नियन्त्रण स्थापित कर एक स्थान पर एकाग्रता से शारीरिक स्थिरता लाई जाती है तो मन की दृष्टि से विचारों के उद्वेग एव मन के चाचल्य स्वभाव का निरोध कर उसे आत्मोन्मुखी बनाने का प्रयत्न किया जाता है। मन मे क्षण-प्रतिक्षण जो नाना प्रकार के सकल्प-विकल्प उत्पन्न होते रहते हैं, सामायिक का समभाव उन पर नियन्त्रण कर चित्त-शुद्धि लाता है।

इस ससार मे जितने भी दु ख, द्वन्द्व, क्लेश और परेशानियाँ है, वे सभी चित्त के विषमभाव की देन है। इनसे यदि बचना है, इनको यदि दूर रखना है अपने से, तो उसका एक मात्र उपाय है - समभाव की साधना, सामायिक-व्रत की आराधना। समभाव ऐसा अमोघ कवच है, जो प्राणि-मात्र को हर प्रकार के आघात से सुरक्षित कर सकता है। जो भाग्यवान समभाव के सुरम्य सरोवर में सदा अवगाहन करता रहता है, उस ससार का कोई ताप पीड़ा नही पहुचा सकता । समभाव वह लोकोत्तर रसायन है, जिसके सेवन से समस्त आन्तरिक व्याधियाँ एव वैभाविक परिणतियाँ नष्ट हो जाती है। आत्मा रूपी निर्मल गगन में जब समभाव का सूर्य अपनी प्रखरता के साथ उदित होता है तो राग, द्वेष, मोह आदि उलूक विलीन हो जाते है। आत्मा मे तब अपूर्व ज्योति प्रकट हो जाती है और उसके समक्ष आलोक ही आलोक प्रसारित हो उठता है।" यहा सामायिक संघ की विधिवत् स्थापना कर उसके कार्यों को गति दी गई।

चातुर्मास काल में श्रावणकृष्णा १३ को किशनगढ मे महासती छोटा हरकँवरजी का स्वर्गवास हो गया। महासती जी के संयममय जीवन की जानकारी देते हुए श्रद्धाजलि दी गई।

जोधपुर-चातुर्मास सानन्द सम्पन्न कर चरितनायक मार्गशीर्ष प्रतिपदा को डागा बाजार होते हुए श्री नरसिंहदास जी लूकड की फैक्टरी मे विराजे, जहाँ आपके व्याख्यान से प्रभावित होकर सरदारमल जी लूंकड़ ने वर्ष भर मे बारह व्यक्तियों को हिंसा छुड़ाने एवं दानादि के अनेक नियम स्वीकार किये। पचासो बहनों ने सामायिक में मौनव्रत रखने की प्रतिज्ञा की।

चरितनायक यहा से विहार कर महामन्दिर पधारे व ढालिया स्थानक मे विराजे। जैन स्कूल मे हुए रविवारीय प्रवचन में पूज्य चरितनायक ने फरमाया—"साधना के अंतरंग एवं बहिरग साधन हैं। आहारशुद्धि, सत्सग और आवास शुद्धि बहिरंग साधन है तथा त्याग, विराग एव अभ्यास अंतरग साधन हैं। इनमें त्याग महत्त्वपूर्ण है। त्याग ही सफलता की कुञ्जी है। त्याग से ही धर्म-बीज फलता-फूलता है।" मंगलवार के प्रवचन मे फरमाया — "सघ की आवश्यकताओं का विचार कर श्रावक-श्राविकाओं को भी धर्म नायक का सहकारी होना चाहिए। साधु की अपेक्षा श्रावक के धर्मप्रसार का क्षेत्र विशाल है।" धार्मिक-शिक्षण की आवश्यकता पर जोर देते हुए आपने फरमाया कि अपने बालवर्ग में भी धर्म शिक्षा का प्रसार नही हो, यह हास्यजनक स्थिति है।

• भोपालगढ़, नागौर होकर अजमेर

महामन्दिर से बनाड होते हुए चरितनायक दहीखेड़ा पधारे। मार्ग मे कॉटेदार भुरट बहुत थे, अतः सन्तो ने कष्टपूर्वक मार्ग तय किया। फिर बुचेटी से मार्गशीर्ष कृष्णा ९ को दोपहर का ध्यान कर एक बजे बडा अरटिया के लिए विहार हुआ। रास्ता धूलभरा था। नादिया होते हुए अरटिया पधारे, जहॉ एक कमरे मे रात बितायी। छोटा अरटिया मे दशमी का मौनव्रत था। कुड़ी मे पटेल हरखा जी के पुत्र, दरजी, रेवतरामजी आदि की भक्ति अच्छी रही। यहाँ के अनेक भक्त चौधरी परिवार नियमित सामायिक व धर्माराधन के साथ अच्छी श्रद्धा वाले हैं। इस विहार क्रम में श्री ब्रह्माचदजी भडारी ने विशेष सेवा की। यहाँ से बडलू (भोपालगढ) पधारने पर आपने जैनरत्न विद्यालय मे 'विद्यार्थी, विद्या और विद्वान्' विषय पर प्रवचन फरमा कर बालको को झूठ, चोरी , नशा और वर्ष मे २ से अधिक चित्रपट (फिल्म) देखने का त्याग कराया। सस्कारशीलता की प्रेरकशक्ति चरितनायक मे अनुपम थी। मार्गशीर्ष शुक्ला पचमी को ध्यान के पश्चात् विहार कर नारसर होते हुए वारणी पधारे, जहॉ महासती जैनमतीजी, केसरजी आदि ठाणा छह से दर्शनार्थ पधारी। रजलाणी से भी तेरह सतियॉ दर्शनार्थ आयी। एक किसान ने भेड़-बकरे बेचने और तम्बाकू पीने का त्याग किया। यहाँ से आसावरी, रूण, खजवाणा पधारे। यहा नमस्कार मन्त्र के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए फरमाया – "**आत्मिक विकास की अपेक्षा से ही अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधुओं को आराध्य माना गया है। ये पाँचों ही स्तुति योग्य, नमन योग्य और पूज्य है। चैतन्य एवं उपयोग गुण से सभी जीव समान है, किन्तु रागादि विकारों की अधिकता और ज्ञान की क्षीणता से जीव निंदा योग्य तथा रागादि की हीनता और ज्ञान की अधिकता से स्तुति योग्य होता है। जैन धर्म में इस मंत्र की बड़ी भारी महिमा बतलायी गयी है। दुःखी-सुखी आदि किसी भी अवस्था में इस मंत्र का जप करने से समस्त पापों का क्षरण हो जाता है।**" फिर मूडवा होते हुए नागौर पधारे।

नागौर में आपका मूर्तिपूजक सत पूज्य पदमसागर जी म.सा. से पौष कृष्णा पचमी को प्रेम मिलन हुआ। उन्होंने अपने यहाँ के शास्त्र दिखलाये। उत्तराध्ययन सूत्र की एक प्रति आपको भेट की गई। अठियासण होते हुए कुचेरा पहुँचने पर स्वामी जी श्री ब्रजलाल जी महाराज, पडित श्री मिश्रीमल जी 'मधुकर' आपको लेने सामने पधारे। पौष कृष्णा दशमी को छात्रो ने पार्श्वनाथ जयती मनाई। आपश्री ने मौन होते हुए भी व्याख्यान देकर श्रोताओ को वीतराग वाणी से तृप्त किया एव स्थायी लाभ हेतु सबको स्वाध्याय की प्रेरणा की। यहॉ पर मत्री जी महाराज के साथ सघ की समस्याओ पर विचार-विमर्श हुआ। उनमे से प्रमुख है-

१ गत काल से अब तक नियमो का पालन किसके द्वारा कैसा हुआ?

२ अधिकारी मुनियो ने अपने अधिकार का किस हद तक पालन किया?

३. समाचारी के भेद मिटाना, एकरूपता लाने का प्रयास करना आदि।

यहाँ से पूज्यप्रवर बुटाटी पधारे। प्रातःकाल आपने दुःखमुक्ति हेतु तप, जप और स्वाध्याय-साधना की प्रेरणा की। बुटाटी मे सत्सग का जागरण करने वालो से ब्रह्म एव माया पर चर्चा हुई। कई भाइयो को माला फेरने एव कम नही तोलने का नियम कराया। रेण होते हुए पौष कृष्णा १३ को मेड़ता पहुचे। पौष शुक्ला तीज को भूधरजी म.सा. के जीवन पर प्रवचन करते हुए आपने शास्त्रो के रक्षण व स्वाध्याय की प्रेरणा की। अनन्य गुरुभक्त श्री हेमराजजी डोशी ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर गुरुचरणो मे श्रद्धा अभिव्यक्त की। यहाँ के उत्साही भक्त श्री जौहरीमलजी

ओस्तवाल व श्री डोशी जी के उल्लेखनीय प्रयासो से भूधर जैन ज्ञान भण्डार की स्थापना हुई। श्री भूरमलजी बोकड़िया की अध्यक्षता व श्री जतनराजजी मेहता के मत्रित्व में पुरातत्त्व साहित्य के सरक्षण का निश्चय किया गया। यहाँ स्थित मन्दिर के भण्डार का पूज्य प्रवर ने तीन घण्टे अवलोकन किया। इसमे ४०-४५ पुट्ठे थे एव पाँचवी शताब्दी से पूर्व का भी साहित्य उपलब्ध था। कल्याणकर पूज्यवर ने भण्डार को व्यवस्थित करने की प्रेरणा की। [illegible] आश्वासन पर स्वीकार किया था। अत. आपके पदार्पण से पारस्परिक कलह, प्रेम के सुखद वातावरण में बदल गया। प्रवचन मे 'दु.ख का कारण कषाय है' ऐसा समझाते हुए क्रोध के सम्बन्ध मे दुर्योधन का उदाहरण दिया, जिससे महाभारत का युद्ध हुआ। बडी पादू के उपाश्रय के खम्भे पर सवत् १७४८ के दो शिलालेख थे, जिनकी नकल श्री जतनराजजी मेहता मेड़ता ने की। प्रवचन मे आप श्री ने फरमाया –"ससार का राग देव, गुरु एव धर्म के प्रति अनुराग मे बदल दो। तन, धन एव कुटुम्ब का राग ससार का फेरा बढ़ाने वाला है और देव, गुरु एव धर्म के प्रति अनुराग फेरा घटाने वाला है।" विहार मे श्रावको का प्रेम द्रष्टव्य था। मेवड़ा पहुचने पर आपने शान्तिनाथ की प्रार्थना के साथ शान्तिनाथ भगवान के पूर्वभव मेघरथ राजा का परिचय देते हुए प्रवचन फरमाया कि मेघरथ ने कबूतर की रक्षा के लिये अपने प्राणो की परवाह नही की, वचन को निभाया । इसलिये शान्तिनाथ के रूप मे माता के उदर मे आते ही सर्वत्र शान्ति हो गई। तापत्रय को मिटाने हेतु पूज्य श्री ने गॉव-गाँव एव घर-घर मे शान्तिनाथ की प्रार्थना करने हेतु प्रेरणा की। चरितनायक कई बार भगवान शान्तिनाथ की स्तुति करते थे। आत्मिक शान्ति हेतु प्रभु शान्तिनाथ पर उन्होने प्रार्थना की रचना भी की, जिसमें सर्वत्र शान्ति की भावना भायी गई है –

भीतर शान्ति, बाहिर शान्ति, तुझमे शान्ति मुझमे शान्ति।
सबमे शान्ति बसाओ, सब मिल शान्ति कहो ॥

मेवड़ा से भेरूदा, थावला एव तिलोरा मे भोग से योग की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा करते हुये सन्तमण्डल सहित आपका अजमेर नगर मे पदार्पण हुआ।

अजमेर मे पौष शुक्ला द्वादशी, १७ जनवरी, १९६२ को ओसवाल हाई स्कूल के विशाल प्रागण मे आपश्री के श्रीमुख से श्रीमती इचरज कुवर जी (धर्मपत्नी श्री मोहनलाल जी नवलखा) की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई। इस अवसर पर जयपुर निवासी श्री केवलचन्दजी हीरावत, श्री किशोर चदजी बोथरा व ब्यावर के श्री मिश्रीमलजी बोथरा ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। पौष शुक्ला चतुर्दशी को पाली, जयपुर और सैलाना की विनतियाँ हुई।

• आचार्य श्री आत्मारामजी महाराज का स्वर्गवास

माघकृष्णा दशमी को अजमेर मे प्रातःकाल जगल से लौटते ही ज्ञात हुआ कि रेडियो की खबर के अनुसार आचार्य श्री आत्माराम जी म.सा. का स्वर्गवास हो गया है। इस समाचार को सुनते ही पूज्य हस्ती अवाक् रह गए। सभी सन्तो ने कायोत्सर्ग किया। इस शोक में पूरा अजमेर बद रहा। मुस्लिम भाइयो को प्रेरणा देने से उन्होने भी कत्लखाने बद रखे। अपराह्न दो बजे श्रद्धाजलि सभा आयोजित की गई जिसमे चरितनायक ने फरमाया कि आत्माराम जी म.सा. जैसे आचार्यों का जीवन- चरित्र प्रेरणाओ का झरना होता है जो अविरल बहता रहता है। उन्होने आचार्य श्री आत्माराम जी म.सा. के जीवन की अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाओ एव विशेषताओ का उल्लेख करते हुए उनके जीवन से प्रेरणा लेकर अपना जीवन सार्थक करने को कहा। आपश्री ने बताया कि स्व. आचार्य श्री आत्माराम जी म. के जीवन को दो विशेषताएँ थी। प्रथम तो वे सतत स्वाध्यायनिरत रहते थे। शास्त्रो एव ग्रथों का

अध्ययन, मनन, चिन्तन उनकी दिनचर्या थी। दूसरा इस गहन अध्ययन व मनन से उत्पन्न विचारो को लेखनबद्ध कर नवीन ग्रथों का आलेखन किया करते थे। चरितनायक ने सस्कृत भाषा मे 'आत्माराम-अष्टक' बनाकर उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। तीन दिन शान्तिजाप चला।

अपराह्न में आगम-वाचना का क्रम पूज्यप्रवर की नियमित दिनचर्या का अग था। अजमेर में बृहत्कल्प सूत्र की वाचना पूर्ण होने पर माघ शुक्ला २ को निशीथसूत्र की वाचना प्रारम्भ की गई। श्रावको मे साप्ताहिक सामूहिक स्वाध्याय प्रारम्भ कराया।

- किशनगढ होकर विजयनगर

अजमेर मे २७ दिन विराज कर आपने मदनगंज की ओर विहार किया। पुलिस लाइन के पीछे लोहारवान के क्वार्टर मे रात्रि बितायी। फिर माघ शुक्ला चतुर्दशी को १४ मील का विहार कर ध्यान का समय होने पर दोपहर १२ बजे सड़क पर ही ध्यान किया एव दिन में १.३० बजे मदनगज के उपाश्रय मे पदार्पण किया।

मदनगज में माघपूर्णिमा के पावन दिवस पर गुरुदेव ने फरमाया —'**आत्मा का स्वरूप समझकर विकार दूर कीजिए। पानी गर्म होकर भी अपना स्वभाव नही छोड़ता, आग को बुझा ही देता है। इसी प्रकार क्रोधादि की अवस्था में भी हम अपना गुण क्यों छोडे। मनुष्य को काच के बर्तन की तरह कमजोर नही होकर सुवर्ण पात्र की तरह ठोस होना चाहिए। कांचभाण्ड के समान मूर्ख व्यक्ति जरा सी ठेस में टूट जाता है, स्वार्थ की चोट से उसका प्रेम वैर में परिणत हो जाता है । परन्तु ज्ञानी सुवर्ण भाण्ड के समान होता है। बड़ी चोटों या प्रहारों से भी वह सहसा टूटना नही जानता। आप सुवर्ण भाण्डसम बनें, कांच भाण्ड सम नही। स्वर्ण और पानी अपना स्वभाव नही छोड़ते, तब हम चेतन मानव अपना शान्त, शुद्ध स्वभाव कैसे छोड़ सकते हैं। जरा शान्त मन से सोचिए।**"

आपके प्रवचन व प्रेरणा से कई व्रत-प्रत्याख्यान हुए, बारह श्रावको ने प्रतिमाह दया-पौषध का नियम लिया। मदनगज से आपका किशनगढ पदार्पण हुआ। यहाँ आपने सघ मे ऐक्य व समन्वय के लिए महती प्रेरणा की। सघ-एकता के लिए बैठक रखी गई। रावसा पारख एव श्री कुन्दनमल जी नाहर के सत्प्रयत्नो से बैठक सफल रही। यहाँ से गोधियाणा, तिहारी, कानपुरा मडाणी, नसीराबाद, झडवासा, बादनवाड़ा सिगावल आदि ग्रामो मे व्यसन-मुक्ति, धर्म शिक्षण, स्वाध्याय, सामायिक आदि की प्रेरणा करते नसीराबाद होते हुए विजयनगर पधारे, जहाँ स्वामी जी श्री पन्नालाल जी म सा. के सन्त आपकी अगवानी के लिए आए।

विजयनगर के प्रागण में स्थविर पद विभूषित पण्डितरत्न श्री पन्नालालजी म.सा., मत्री श्री पुष्कर मुनि जी म.सा. एव चरितनायक ने श्रमण-सघ की स्थिति पर विचार विनिमय कर प्रस्ताव तैयार किया—"समस्त स्थानकवासी समाज के अन्तर्मानस की भव्य-भावना को लक्ष्य मे रखकर श्रद्धेय आचार्य श्री और उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. के चरणारविन्दों मे निवेदनार्थ हमने एक प्रस्ताव भी निर्मित किया, पर ३० नवम्बर १९६० को उदयपुर में उपाचार्य श्री ने उपाचार्य पद का त्याग करके अपने को श्रमण संघ से अलग घोषित किया, जिसे हम सघ-हितकर नही मानते है। हमारी यह हार्दिक भावना है कि वे पुन संघहित व जिनाशासनोन्नति को लक्ष्य मे रखकर इस पर गभीरता से विचार करे और उलझी हुई समस्याओ को परस्पर विचार-विमर्श द्वारा किसी माध्यम से हल करके संघ-श्रेय के भागी बने।

हमारा यह दृढ मतव्य है कि वर्तमान मे हमारी आचार-व्यवस्था किन्ही कारणो से शिथिल हो गई है। अत: उस पर कड़ा नियन्त्रण आवश्यक है, क्योंकि आचार-निष्ठा मे ही श्रमण सघ की प्रतिष्ठा है। हम चाहते हैं कि प्रमुख मुनिवरो के परामर्श से शिथिलाचार को आमूल नष्ट करने के लिये दृढ कदम उठाया जाय। हम शिथिलाचार को हर प्रकार से दूर करने के लिय तैयार हैं। जब तक सघ में पारस्परिक मतभेद दूर होकर इसके लिए सुव्यवस्था न हो जाय तब तक अधिकारी मुनिवर अपने आश्रित श्रमणवर्ग की आचार शुद्धि पर पूर्ण ध्यान रखे। यदि कदाचित् किसी भी सन्त व सतीजन की मूलाचार मे कोई स्खलना सुनाई दे तो तत्काल उसकी जाच कर शुद्धि कर दी जाय। बहिनो का संसर्ग व स्वय हाथ से पत्र लेखन जो साधक जीवन के लिये अयोग्य है, उन्हे बिल्कुल बन्द कर दिया जाय।

अत मे हमारी ही नही, अपितु सघ के सभी सदस्यो की भावना है कि श्रमण-संघ अक्षुण्ण व अखड बना रहे। आचार और विचार की दृष्टि से दिन-प्रतिदिन प्रगति के पथ पर दृढता से बढ़ता रहे व जन-जन के हृदय से यही नारा निकले कि अखंड रहे यह सघ हमारा।"

तीनो सन्त-प्रवरो ने मिलकर आचार्य श्री के समक्ष कतिपय विचारणीय बिन्दु भी रखे-

१. सर्वप्रथम हम चाहते हैं कि आचार्य श्री एव उपाचार्य श्री हमारे निवेदन को सम्मान देकर पारस्परिक मतभेद मिटा दे और पुन. वे सघ का सचालन करें।

२. यदि वे पारस्परिक मतभेद नही मिटाते हैं तो संघ को अखड बनाने के लिए आचार्य श्री की घोषणानुसार पाच मुनियो की समिति वृहद् साधु-सम्मेलन तक काम करे।

३ यदि वह भी सभव न हो और संघ छिन्न-भिन्न होने की स्थिति मे हो तो सघ मे वर्तमान मे एकता बनाये रखने के लिये निम्नाङ्कित योजना कार्यान्वित की जा सकती है -

जिन श्रमण-श्रमणियो का लोक व्यवहार में आचार शुद्ध है और सयम के रंग मे रगा हुआ प्रतिष्ठित जीवन है, उनके साथ निम्नाङ्कित व्यवहार अवश्य रखा जाय -

१ सघ के श्रमण-श्रमणियो का एक क्षेत्र में एक ही वर्षावास हो और एक ही व्याख्यान हो। कारणवशात् एक ही क्षेत्र मे विभिन्न स्थानो मे सत-सतीजन विराज रहे हो तो अनुकूलता होने पर वे एक स्थान पर सम्मिलित व्याख्यान करे, पृथक् व्याख्यान न करे।

२. दीक्षा, सथारा आदि विशिष्ट प्रसगो पर जाने मे किसी भी प्रकार का संकोच न करे।

३ किसी सत व सतीजन के रुग्ण होने पर उन सन्त-सतीजन की सेवा आदि के लिए उचित व्यवस्था की जाय, उपेक्षा बुद्धि न रखी जाय और अनुकूलता के अनुसार उनकी पूछताछ की जाय।

४. परस्पर ज्ञान के आदान-प्रदान करने मे किसी भी प्रकार का संकोच नही रखा जाये।

५. एक-दूसरे सत-सतीजन के मिलने पर सम्मानपूर्वक शिष्टाचार का व्यवहार किया जाय।

६. व्याख्यान-वार्तालाप आदि मे किसी भी प्रकार दूसरे सत-सतीजन की निन्दा व हीनता सूचक शब्दावली का प्रयोग न किया जाय और न व्यवहार से सूचित ही किया जाय कि इनमे परस्पर मे मतभेद है, वैमनस्य है।

७. स्नेह-सम्बन्ध रहने पर भी वन्दन, आहार और शिष्य का आदान-प्रदान ऐच्छिक रखा जाय।

यहाँ कुछ दिन विराजकर आपने होली चातुर्मास गुलाबपुरा में किया। जयपुर एवं सैलाना संघ की ओर से विनति हुई। सामायिक संघ एवं स्वाध्याय के संचालन का कार्य प्रारम्भ हुआ। गुलाबपुरा से आप हुरड़ा में प्रार्थना

एवं स्वाध्याय का नियम कराते हुए कोण्डी, कोठिया, सागरिया, धनोप, फूलिया, रडावास, देवरिया, खामोर प्रधारे जहाँ बालचन्दजी ने शीलव्रत अगीकार किया व श्री हरिसिंह जी ने श्रावक के बारह व्रत ग्रहण किए। यहाँ से भटेरा जाने के लिये उपरेडा होते हुए बनेड़ा पधारे।

बनेड़ा मे सैलाना सघ की विनति लेकर परम गुरुभक्त श्रावक श्री प्यारचन्दजी राका ने उपस्थित होकर अपने सघ की भावभरी विनति प्रस्तुत करते हुए निवेदन किया –"भगवन् ! हम १२ वर्ष से प्रतिवर्ष श्री चरणो में चातुर्मास की विनति प्रस्तुत करते रहे हैं। १२ वर्ष मे तो आम्रवृक्ष भी फल देता है, पर हमे आपकी स्वीकृति का कृपाप्रसाद नही मिला।" भक्त हृदय सुश्रावक की विनति को लक्ष्य लेकर सहज मुस्कान के साथ पूज्यप्रवर ने सवत् २०१९ के चातुर्मास हेतु स्वीकृति फरमा दी।

• भीलवाड़ा चित्तौड़ होकर उदयपुर

मारवाड़ एव मेवाड़ की ओर से अब आपका विहार सैलाना की ओर होना स्वाभाविक था। इस क्रम मे आप मालपुरा, केकड़ी मे सामायिक सघ की स्थापना करते हुए विक्रम सवत् २०१९ की महावीर जयन्ती पर भीलवाड़ा के ज्ञान भवन मे विराजे। आपने महावीर जयन्ती को अन्य जयन्तियो से भिन्न बताते हुए भगवान महावीर के शासन की विशेषताओ की विशद व्याख्या की। आपने फरमाया-"वैशाख शुक्ला १० को भगवान महावीर ने पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर एकादशी को धर्मदेशना दी। प्रभु की अमोघ वाणी श्रवण कर हजारो मुमुक्षुओ ने सयम ग्रहण किया और अनेको ने देशविरति श्रावक-धर्म अगीकार किया। महावीर के शासन मे तब साधारण स्खलना भी उपेक्षित नही होती थी। आज उसी वीर की मगल जयन्ती है। हमारा कर्त्तव्य है कि सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का अधिकाधिक प्रचार-प्रसार कर स्व-पर कल्याण करे।" आपने भगवान महावीर के सदेश को जीवनव्यापी बनाने की आवश्यकता प्रतिपादित की तथा यह फरमाया कि वीतराग भाव की ओर बढ़ना ही महावीर की सच्ची भक्ति है। भीलवाड़ा के भोपालगज एव शान्ति भवन मे नियमित सामायिक एव स्वाध्याय करने वाले तैयार हुए। आचार्य भगवन्त ने अपनी डायरी मे अनुभवो मे लिखा है – "धार्मिक रुचि सामान्य रूप से घटती चली जा रही है । चन्द लोग श्रद्धाबल से आते-जाते रहते है। परस्पर कुछ मतभेदो से युवको मे उत्साह घट गया है। स्वाध्याय की प्रवृत्ति बिल्कुल नही है। धार्मिक कक्षा चलती है। मास्टरजी एक घण्टा परिश्रम करते है, परन्तु बच्चे पूरे नही आते हैं।" माणक जी आदि युवको ने स्वाध्याय को चालू रखने का विचार किया। चॉदमल जी सिघवी, अमरचन्दजी सकलेचा, भूरालालजी गाधी, पॉचूलाल जी गॉधी आदि यहॉ के उत्साही कार्यकर्त्ता थे।

यहॉ पर उदयपुर का शिष्ट मण्डल सघमत्री श्री तखतसिहजी, उपाध्यक्ष श्री लक्ष्मीलालजी, श्री डूगर सिंहजी वकील एव श्री केशूलालजी ताकडिया के नेतृत्व मे विनति करने हेतु आप श्री के चरणो मे उपस्थित हुआ। वहॉ पर पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा विराजमान थे। चरितनायक ने सकारात्मक आश्वासन दिया। आप पुर, गाडरमाल, पहुना होते हुए ऐतिहासिक नगर चित्तौड़ पधारे। यहाँ आपने खातर महल मे व्याख्यान फरमाया। उदयपुर का शिष्ट मण्डल पुन उपस्थित हुआ। यहॉ से पाडोली फरसकर दो फलाग दूर ग्राम के बाहर वटवृक्ष के नीचे रात्रिवास किया। एक भाई ने संवर किया। फिर आप श्री सावता, नालेरा, सिंहपुर, कांकरिया, निम्बाहेड़ा, केसरखेड़ी होते हुए कपासन पधारे। यहॉ प्रार्थना पर आपका प्रभावशाली प्रवचन सुनकर २१ व्यक्तियो ने प्रतिदिन धर्मस्थान मे आकर सामूहिक प्रार्थना करने का नियम लिया। सनवाड़ पधारने पर मेवाड़ी मुनि श्री मागीलाल जी आदि सन्त जो यहाँ पहले से ही बिराजे हुए थे, आचार्यश्री की अगवानी के लिए सामने आए।

• उदयपुर में पूज्य गणेशीलालजी म.से मिलन

यहाँ से खेमपुर, वल्लभनगर, खेरी, डबोक देबारी , आयड़ होते हुए आपका ज्येष्ठ शुक्ला प्रतिपदा रविवार के दिन उदयपुर के भोपालपुरा में पदार्पण हुआ, जहाँ तपस्वी श्री केशूलाल जी म.सा. एव पण्डित श्री नानालाल जी म.सा. अगवानी के लिए पधारे। चरितनायक ने उदयपुर नगर मे प्रवेश करते ही सर्वप्रथम उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म.सा का दर्शनलाभ लिया। दोनों चारित्रिक आत्माओं के हर्ष का पारावार नही रहा। प्रेम के आधिक्य मे पूज्य श्री गणेशीलाल जी म.सा ने फरमाया-"बूढ़े को याद कर लिया।" यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि श्री गणेशीलालजी म.सा. वर्द्धमान श्रमणसघ को छोड़ चुके थे एवं चरितनायक उन्हें सघ मे ही सम्मिलित रहने का प्रेम पूर्वक निवेदन कर रहे थे। चरितनायक ने प्रवचन में फरमाया-"मैं उदयपुर देखने नही आया। मैं तो गणेश सागर से मोती लेने आया हूँ।" चरितनायक ने दो दिनों तक उपाचार्य श्री से पारस्परिक विचार-विनिमय किया एव सघ मे रहकर ज्ञान-क्रिया को सुदृढ़ बनाने पर बल दिया, किन्तु जिन स्थितियो मे उपाचार्य श्री ने सघ छोड़ा था, उनका निराकरण नही होने से बात आगे नही बढ़ पाई।

चरितनायक का उदयपुर से विहार हो गया। आपने आयड़ मे फरमाया-"पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष जैसे रोगों को समूल नष्ट करने के लिए एक ही औषधि है, 'स्वाध्याय'। समाज मे यदि स्वाध्याय को बढ़ावा दिया जाए तो इससे ज्ञानवृद्धि होगी और ज्ञान से वैर, ईर्ष्या, द्वेष आदि का शमन होगा। झगड़े टटे नही रहेगे।" देवारी से दरवाजे की ओर शाम को विहार कर आप सूर्यास्त पूर्व वहाँ पहुंचे। स्थानाभाव के कारण दो सन्तों ने द्वार पर, दो ने बाहर वृक्ष के नीचे और एक ने द्वार के बाजू की खोह मे शयन किया। यहाँ लगूर बहुतायत में थे। दैनन्दिनी मे आपने अकित किया है कि द्वार पर लगूरो का प्रभुत्व था। मन्दिर और कपाटो पर उनके नियत निवास थे ।

दरौली पधारने पर बहुश्रुत श्री समर्थमलजी म.सा. की सतियाँ, जो वहाँ विराजित थीं, दर्शनार्थ पधारी। दरौली मे अग्रवाल, ओसवाल, माहेश्वरी, ब्राह्मण आदि विभिन्न जातीय सज्जनो मे किसी सामाजिक विषय को लेकर पारस्परिक सघर्ष चल रहा था। प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे को नीचा दिखाने की ताक मे रहता था और मौका मिलते ही भड़क उठता था। अपने इस आपसी सघर्ष मे लोग हजारों रुपयो का पानी कर चुके थे। ऐसे समय मे चरितनायक का पदार्पण दरौली के लिए वरदान सिद्ध हुआ।

आपने अपने सदुपदेशो द्वारा वैमनस्य भाव दूर किया, जिससे वहाँ सौहार्द और भाईचारे का वातावरण बना।

• भगवान की आज्ञा में चलने वाले का कल्याण

खेरोदा होते हुए चरितनायक ज्येष्ठ शुक्ला ९ सोमवार को कुसावास (कुथुवास) पधारे। यहाँ आप रावला मे ठहरे। रात्रि मे षट्कर्म का विवरण देते हुए अर्जुन माली की कथा कही। आप श्री ने लोगो से कहा कि जो भगवान की आज्ञा मे चलेगा, वैर-विरोध घटायेगा, उसका कल्याण होगा। कौरव आपसी फूट मे नष्ट हो गये। राम, लक्ष्मण सुमति के कारण आबाद रहे। इसलिए आपसी वैर-विरोध को त्याग कर प्रेमभाव एव भाईचारे का भाव रखना चाहिए। यहाँ से आप मगरे की ऊँची-नीची भूमि और खजूर के वृक्षो युक्त वनप्रदेश को पारकर भीण्डर पहुँचे। शीतल वायु एव बादलों के कारण दिन ठण्डा रहा। यहाँ से आपने कानोड़ के लिए प्रस्थान किया एव जवाहर विद्यापीठ के छात्रो के जयनाद के साथ पंचायत भवन में विराजे। व्याख्यान में स्वाध्याय की प्रेरणा करते हुए फरमाया — "स्वाध्याय के बिना ज्ञान प्राप्त नही होगा। मनोबल में स्थिरता नही रहेगी। नन्दन मणियार प्रभु महावीर

का श्रावक होकर भी स्वाध्याय एव सत्सग के अभाव मे चलचित्त हो गया और आर्तध्यान मे मरकर मेंढक हुआ। तुगिया के श्रावक स्वाध्यायी थे। ३३ श्रावक मित्र स्वाध्याय एव सत्सग से स्थिरभाव मे करणी करके इन्द्र के गुरु हुए। स्वाध्याय से सामायिक की साधना भी व्यवस्थित होती है। साधना-बल से आकुलता समाप्त होकर मानव को परम शान्ति प्राप्त होती है।" पूज्य प्रवर ने फरमाया — "दु:ख के तीन कारण है— १ अज्ञान, २ कुदर्शन और ३ मोह। प्रभु ने दुःख मुक्ति के लिए भी उत्तराध्ययन सूत्र के ३२ वे अध्ययन मे तीन उपाय बताये है—१. ज्ञान का प्रकाश करो। २ अज्ञान - मोह को दूर करो। ३ राग-द्वेष का नाश करो।" गुरुदेव की प्रेरणा से पाँच युवको ने नियमित स्वाध्याय का नियम लिया। आप यहाँ से विहार कर बोहेडा होते हुए बड़ी सादड़ी के बडी न्यात के नोहरे मे विराजे।

- **बड़ी सादड़ी**

बड़ी सादड़ी मे गोकुल हरिजन ने आजीवन जीव-हिंसा व मास-भक्षण का त्याग किया। यहाँ महासती चूना जी आदि ठाणा ४ स्थिरवास विराजमान थे। उन्होने गुणस्थानो मे आहारक-अनाहारक सम्बन्धी प्रश्न किये जिनका पूज्यवर ने तात्त्विक समाधान किया। श्रावको ने प लक्ष्मीचन्द जी म सा के चातुर्मास हेतु विनति की। यहाँ के जागीरदार के काका श्री भीमसिह जी का मद्य-मास का सेवन और शिकार करना दैनिक कार्य था। ऐसा करना वे राजपूतो के लिये जरूरी मानते थे। आचार्य श्री ने मूक प्राणियो की हत्या का विवेचन करते हुए कहा कि **"प्रत्येक प्राणी जीवित रहना चाहता है। कैसी भी स्थिति हो लेकिन उसकी जिजीविषा की भावना सदैव बलवती रही है और मृत्यु का नाम सुनते ही वह भयभीत हो उठता है। मनुष्य होकर जो धर्म के नाम पर या अपनी आकांक्षा पूर्ति के लिए प्राणि-हत्या करते है वे मनुष्य होकर भी राक्षसी वृत्ति वाले है। ऐसे व्यक्ति दूसरो का विनाश करने के साथ-साथ अपने लिए रौरव नामक नरक का रास्ता बनाते हैं।"** आचार्य श्री का सदुपदेश सुनकर भीमसिह जी का हृदय द्रवित हो उठा। उन्होने अपने किये हुए पर पश्चात्ताप किया और सदैव के लिए जीव-हिसा तथा मद्य-मास का त्याग कर दिया।

बड़ी सादड़ी से साटोला होते हुए धाकडो के गॉव मानपुरा पधार कर धाकडो की पोल के बाहर रात्रि विश्राम किया। यहाँ से कच्चे रास्ते पहाड़ की घाटी उतर कर छोटी सादड़ी पधारे। धर्म-ध्यान अच्छा रहा। गुरुदेव ने अपनी डायरी मे लिखा है—"यहाँ पर पढे-लिखे काफी हैं, पर स्थानीय सघ मे उनके द्वारा कोई लाभ नही लिया जाता।" यहाँ का गोदावत जैन गुरुकुल किसी समय बड़ा जाना माना गुरुकुल रहा है। यहाँ पर रतनलाल जी सघवी अच्छे अभ्यासशील श्रावक थे, किन्तु समाज मे ऐक्य नही था। यहाँ से चीताखेड़ा, जीरण, मल्हारगढ़ को फरसते हुए मेवाड़ मे स्वाध्याय-सामायिक की अलख जगाकर एव व्यसनो से अनेकों को मुक्त कराकर आप पीपलिया मडी पधारे। दोपहर मे यहाँ विराजित महासत्ती रामाजी की शिष्या सती दीपकवर जी और कचनकवर जी दर्शनार्थ पधारी एव शास्त्रीय प्रश्नोत्तर हुए।

- मालव प्रदेश की ओर

पीपलिया मडी से विहार कर आप विहारक्रम से बोतल गज, नयी बस्ती, जनकपुरा एव मन्दसौर पधारे। प्रात: जनकूपुरा मे आषाढ कृष्णा १० को गुरुदेव ने प्रवचन मे फरमाया —"जिनशासन जीवन निर्माण की कला सिखाता है। चण्डकौशिक ने प्रभुकृपा से इसी कला को सीखकर आत्म-कल्याण किया।" "समाज धर्म है — उपशम भाव। सर्वथा कषाय के वेग को स्वाधीन नही कर पाओ तो इतना तो अवश्य ध्यान रखना कि घर के झगड़े धर्म-समाज मे

नही डालना। घर के झगड़े समाज मे डालना बड़ी भूल है।" यहाँ पर तपस्वी मुनि श्री मनोहरलालजी म ठाणा २ का मिलन हुआ एवं साथ ही ठहरे। प्रेम वात्सल्य रहा। यहाँ के पुस्तकालय मे एक हजार पुस्तको मे कई प्राचीन भी हैं। मन्दसौर के व्याख्यान मे पूज्यप्रवर ने फरमाया –"**वीतराग बनने के लिए पहले देव, गुरु एवं धर्म के प्रति अनुरागी बनना होगा। यदि इनके प्रति अनुराग होगा तो आप त्याग भी कर सकेंगे। बिना प्रीति के त्याग नही होता।**" यहाँ पर पूज्य मन्नालाल जी म सा की पुण्य तिथि पर आपने फरमाया – "पूज्य श्री मन्नालालजी म को स्वाध्याय एव आगम प्रिय थे। आप उनका आदर करते हैं तो उनकी प्रियवस्तु को अपनाइए अन्यथा आपकी उनके प्रति श्रद्धा कहने मात्र की होगी।" प्रात मन्दसौर से विहार कर आप आषाढ़ कृष्णा चतुर्दशी, शनिवार को खिलचीपुरा धर्मस्थानक मे पधारे। श्रद्धालु भक्तजनो की विशाल सख्या मे उपस्थिति को देखते हुए धर्मस्थानक मे व्याख्यान नही हो सकने के कारण बाजार मे व्यवस्था की गई।

चरितनायक पूज्य श्री ने धर्म और नीति शिक्षा पर जोर दिया तथा सत्सग का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए फरमाया कि सदाचार ही जीवन को उन्नत बना सकता है। पश्चिम के लोग नीति के नाम से कुछ शिक्षाएँ जीवन में उतारते हैं। भारत धर्मप्रधान देश है। यहाँ के वासियो को विशेष ध्यान देकर धर्म को जीवन मे उतारना चाहिए। इसी मे देश का कल्याण है।" यहाँ से विहारक्रम मे दलोदा, कचनारा, ढोढर होकर आप श्री जावरा पधारे।

जावरा के श्रावक बहुत दिनो से चातक की भाति आपश्री की प्रतीक्षा कर रहे थे। यहाँ आपने पूज्य श्री मन्नालाल जी म सा के श्रावक-समुदाय के स्थानक मे पदार्पण किया। यहाँ का श्री सघ दो दलो मे विभक्त था। चरितनायक ने अपने प्रवचन मे उन्हे वार्तालाप द्वारा समस्या के समाधान का सुझाव दिया। आपने फरमाया-"**जिणधम्मो य जीवाणं अपुव्वो कप्पपायवो' जिनधर्म जीवों के लिए अपूर्व कल्पवृक्ष है, इससे सभी अभिलाषाओ की पूर्ति स्वतः हो जाती है अतः मनमुटाव छोड़कर जिनधर्म का आश्रय ग्रहण करें। आपको कैंची नही, सुई बनना है। कैंची एक बड़े कपड़े को काट कर अनेक टुकड़े कर डालती है, जबकि सुई अनेक बिखरे हुए टुकड़ों को सिलती हुई बढ़ती है। इसी प्रकार श्रावकों को अपने संघ में एकता लाने के लिए सुई की तरह व्यवहार करना चाहिए।**"

प्रामाणिक वृहत् जैन इतिहास के लेखन के लिए मूल स्रोतो का पता लगाने हेतु आपने मेवाड़, मारवाड़, महाराष्ट्र और गुजरात के सुदूरवर्ती गाँवो की लम्बी यात्राएँ की। सैकड़ो हस्तलिखित ग्रन्थो का अवलोकन किया। जावरा मे भी आपने १६वी शताब्दी के ५ बस्ते देखे जिनमे हस्तलिखित ग्रन्थ थे। श्रेष्ठिवर राकाजी के साथ सैलाना का श्रावक मण्डल उपस्थित हुआ। चरितनायक ने आषाढ़ शुक्ला चौथ को प्रवचन मे फरमाया –"धर्मरूप कल्प वृक्ष की शरण आये हो। इसका सिंचन करो। डाल पर बैठकर इसका छेदन मत करो। धर्म ससार का त्राण करने वाला है। मगधाधिपति श्रेणिक ने जिनशासन की सेवा कर तीर्थङ्कर गोत्र का उपार्जन किया। पूज्य माधव मुनि ने धर्म दिपाने वाले श्रावक को सूर्य के समान तपने वाला बताया है। धर्म तभी दिपेगा जब आपमे उपशम भाव होगा। चतुर्विध संघ मे प्रीति का व्यवहार होगा।" जावरा से पालिया, लुहारी, नामली होते हुए पचेड़ी पधारे। आपश्री के प्रवचन से प्रभावित होकर ३ व्यवसायियों ने खोटे तोल-माप का त्याग किया।

पचेडी से विहार कर धामनोद पधारे। यहाँ चरितनायक ने उद्बोधन मे फरमाया– " किसी के यहाँ जब कोई अतिथि आता है तो गृहपति अच्छे-अच्छे पदार्थों से उसका सत्कार करता है। हम सत भी अतिथि है परन्तु भेट पूजा, पैसे लेने वाले नही है। हमारा आतिथ्य व्रत-नियम से होता है। सत्सग से आप शिक्षा लेकर जीवन शुद्धि करे, इसी

में संतों की प्रसन्नता है।"

चरितनायक ने अपने तात्त्विक उद्‌बोधन मे मनुष्य-जन्म की दुर्लभता व इसका महत्त्व समझाते हुए सोने की चरी मे खल पकाने वाले सेठ व सुद उपसुद की कथा सुनाते हुए फरमाया कि अनन्त ज्ञानादि निधि को पाकर जो हिंसा, झूठ, मान, बड़ाई और भोगो मे अपने को खोता है उसे अत मे पछताना पड़ता है। प्रवचन से प्रभावित होकर सात महाजनो ने कूट तोल-माप का त्याग किया और किसान बधुओ ने सामूहिक हिंसा छोड़ी। सामायिक और स्वाध्याय के भी कई नियम लिये गये।

• सैलाना चातुर्मास (संवत् २०१९)

यहा से विहार कर आषाढ शुक्ला नवमी को आपने चातुर्मासार्थ सैलाना नगर मे प्रवेश किया। ३० वर्षों के बाद मालवा के इस प्रदेश मे आचार्य श्री का चातुर्मास प्राप्त कर सभी फूले नही समा रहे थे। चरितनायक के दर्शनार्थ जैन जैनेतर आबालवृद्ध युवक सभी उमड़ पड़े। इससे पहले आप रामपुरा मे चातुर्मास करके दक्षिण प्रवास की ओर बढ़ते हुए सैलाना पधारे थे। आपने अपने प्रथम प्रवचन मे फरमाया–"अब आप और हमको चार मास के इस समय का सदुपयोग करना है। छोटे को विनय और अनुशासन का पालन करना और बडो को प्रेम से सबका ध्यान रखना होगा। तरुण बन्धु ऐसी व्यवस्था करे कि उनको भी कुछ ज्ञान का लाभ हो और सेवा कार्य भी होता रहे। ज्ञान-दर्शन-चारित्र की वृद्धि मे ही आपके हमारे समय का सदुपयोग होगा।" आषाढ शुक्ला दशमी को फरमाया –**"जो विकारों को नष्ट करता है वही पूर्ण ज्ञानी होता है। जो पूर्ण ज्ञानी हो वही धर्म या तीर्थ की आदि कर सकता है। स्तुति करने वाले यह शंका करते हैं कि प्रभु तारने वाले नही, फिर स्तुति क्यों? उनको समझना चाहिए कि प्रभु भक्ति तुम्ब की तरह तारक है। मन की मशक में प्रभु भक्ति एवं सद्‌विचार की वायु भरने से आत्मा हल्की होकर तिर जाती हैं।"** इस चातुर्मास मे आपने एक दिन प्रवचन मे फरमाया-"सन्त लोग त्याग-विराग का उपदेश प्रतिदिन क्यों देते है? जैसे जल को ऊपर चढ़ाने के लिए नल की अपेक्षा होती है वैसे ही जीवन की धारा को ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए सत्सग, शास्त्र-श्रवण और शिक्षा का सहारा अपेक्षित है। **भौतिकता के प्रभाव में जो लोग जीवन को उन्नत बनाना भूल जाते है वे ससार में कष्टानुभव पाते हैं और जीवन को अशान्त बना लेते हैं।"** गाँव के बाल, तरुण और हिन्दू-मुस्लिम सब मे अपूर्व उत्साह था। एक मुसलमान भाई ने प्रवचन मे उर्दू कविता सुनाकर वातावरण को हर्षित कर दिया। चातुर्मास मे महासती श्री मदनकवर जी (बदनकँवरजी) म सा भी यही विराज रहे थे और जयपुर की तेजकवर जी, नागौर की बरजीबाई जोधपुर के मानमल जी सेठिया और मगनमल जी मुणोत विरक्तावस्था मे ज्ञानाभ्यास कर रहे थे। चातुर्मास मे उपासकदशाग सूत्र, अतगडदशाग सूत्र, निरयावलिका आदि पाँच सूत्रो का वाचन हुआ। आवश्यक सूत्र पर टीका प्रारम्भ की। यहाँ आपश्री के प्रभाव से धर्म-ध्यान एव तपश्चर्या का ठाट रहा। श्री केसरीमल जी सिंघवी, श्री इन्द्रचन्द जी हीरावत आदि अनेक श्रावको ने ब्रह्मचर्य का नियम लिया।

आचार्यप्रवर का यह मन्तव्य था कि जैनो का कोई सघ-धर्म होना चाहिए, जिसका सभी लोग पालन करे। आपश्री का चिन्तन था कि सघधर्म के बिना श्रुत और चारित्र धर्म दृढ नही रह सकते। आपने संवत् २०१९ के सैलाना चातुर्मास की दैनन्दिनी मे एतदर्थ कुछ आवश्यक नियम सूचित किए है, जिनका पालन प्रत्येक जैन भाई के लिए अपेक्षित है–

१ चलते-फिरते किसी जीव पर आक्रमण कर नही मारना।

२ मद्य, मांस, मछली एव अण्डे का सेवन नही करना।

३. वीतराग परमात्मा और निर्ग्रन्थ गुरु को ही वन्दनीय मानना।

४. सामूहिक प्रार्थना एव स्वाध्याय को चालू करना।

५ धर्म-स्थान या सन्तो के पास फल-फूल या सचित जल नही लाना।

६ सन्तो -सतियो के पास रुमाल या मुँहपत्ती लगाये बिना नही जाना।

७ रात्रि में सामूहिक भोजन नही करना।

८ प्याज, लहसुन आदि तामसी भोजन नही करना।

९ गॉव में रहे साधु-साध्वी के दर्शन करना।

१०. बिना छना जल नही पीना।

चातुर्मास की समाप्ति पर सैलाना के स्थानकवासी जैन श्रावक सघ ने दृढ़धर्मी, बारहव्रती एव सेवाभावी श्रावक श्री प्यार चन्द जी राका को उनकी उत्कृष्ट सेवाओं के लिए एक अभिनदन पत्र भेट किया। इसमे उल्लेख किया गया कि राकाजी ने हनुमान बनकर सजीवनी पहाड़ को उठा लाने का महान् कार्य किया है।

यहॉ ९ नवम्बर १९६२ को सामायिक सघ का प्रथम अधिवेशन सम्पन्न हुआ। जयपुर के उत्साही कार्यकर्ता श्री चुन्नीलालजी ललवानी को सामायिक सघ का सयोजक मनोनीत किया गया। विहार के दिन सैकड़ों नर-नारियों के मन उदास थे। सबको चार माह मे धार्मिक सत्प्रवृत्तियो मे व्यतीत किये गये समय का एक-एक क्षण स्मरण हो रहा था। जयपुर, जोधपुर, पाली, धुलिया, अमरावती, भोपालगढ एव मालवा के अनेक ग्राम नगरो के श्रावक भी उपस्थित थे। कार्तिक शुक्ला १५ को जोधपुर मे स्थिरवास विराज रही महासती श्री हुलासकवर जी म.सा. का स्वर्गवास हो गया। आप नारी समाज मे धर्म-ध्यान की जागरणा करती रही। आपका जीवन सरल एव तपस्या मे सलग्न था।

यहॉ से चरितनायक आदिवासी बस्ती मे पधारे, जहॉ उनके प्रभावी प्रवचन के परिणाम स्वरूप कई बच्चो और आदिवासी व्यक्तियो ने कुल-परम्परा का खाना-पीना मास-मदिरा आदि का त्याग किया।

■

मालवा से पुनः राजस्थान की धरा पर

(संवत् २०१९ शेषकाल से संवत् २०२२)

• सैलाना से भोपाल होकर कोटा

सैलाना से धामनोद, डेलनपुर, पलसोडा आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए आप मार्गशीर्ष कृष्णा ४ को रतलाम पधारे। सैलाना से मुहम्मद अजीज आदि भक्त साथ मे थे। यहाँ लक्ष्मीचन्द जी मुणोत के माध्यम से शास्त्र भण्डार देखे। आपकी प्रभावी प्रेरणा से अनेक पशुओ को अभयदान मिला। आपका प्रवचन सुनने के लिए रतलाम नरेश भी उपस्थित हुए। ६ दिसम्बर १९६२ मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी को विरक्ता बरजीदेवी (धर्म पत्नी स्व श्री मदनलालजी कर्णावट) की दीक्षा धामनोद एव सैलाना के बीच मे आपके द्वारा विधिपूर्वक सम्पन्न हुई। नवदीक्षिता का नाम वृद्धिकवर रखा गया और उन्हे महासतीश्री बदनकवर जी म सा की शिष्या घोषित किया गया। पुन नामली होकर सेंमली पधारे। यहाँ कुवर भारतेन्द्र सिंह सत्सग मे आये। रिंगणिया रात्रि विश्राम कर खाचरोद मे आपने प्रवचन फरमाते हुए कहा—" **जीवन का लक्षण गतिमत्ता है। जिसमें गति नही वह जीवन कैसा? साधक को भी साधना में गतिमान होना चाहिए। संसार में आप तरक्की चाहते है वैसे अध्यात्म में भी तरक्की का विचार आवश्यक है।** " यहाँ पर महासती सूरजकवरजी (मैन कँवरजी की शिष्या) ने जिज्ञासाएँ रखी एव समाधान प्राप्त किया। दया-पौषध हुए। नियमित स्वाध्याय के नियम कराये गए। यहाँ से आप नागदा पधारे। यहाँ आपने जैन रत्न पुस्तकालय का अवलोकन भी किया। फिर चरितनायक महीदपुर, खेडा खजूरिया, घट्टिया (वैष्णव मदिर में विराजे) लिपाणी होते हुए पौषकृष्णा ९ को उज्जैन पधारे।

उज्जैन मे आपने शास्त्र भडार का अवलोकन किया। इस भडार मे मूल एव अर्थ सहित शास्त्रो और टीकाओ का अच्छा सग्रह है। लगभग ३०० वर्ष प्राचीन भगवती, पन्नवणा, चन्द्रप्रज्ञप्ति एव उत्तराध्ययन सूत्र मूल के साथ सचित्र विद्यमान हैं। यहाँ अनेक हरिजन भाई भी आपके प्रवचन श्रवणार्थ आते थे। व्याख्यान सभा मे उन्हे दूर बिठाने का व्यवहार चरितनायक को उचित प्रतीत नही हुआ। वे भी जिनवाणी का रसास्वादन कर सके, अत आपके उपदेश से हरिजन भाइयो को प्रवचन सभा मे आगे बिठाया गया। हरिजन भाइयो ने करुणाकर महापुरुष के मगलमय उद्‌बोधन से मद्य मास का त्याग कर दिया। उज्जैन से नयापुरा होते हुए आप फ्रीगज पधारे। यहाँ जेसिंगपुर ग्रन्थ भडार एव सुमतिनाथ के मदिर मे सुखराम जी यति का सग्रह देखा। और चार ग्रन्थ रद्दी मे से निकाल कर उन्हें व्यवस्थित करने की प्रेरणा दी। ताजपुर विजयगज मडी, कायथा, लक्ष्मीपुर, मक्सी, कनासिया को फरसते हुए १ जनवरी १९६३ को आप शाजापुर पधारे। मध्यप्रदेश युवक सघ के अध्यक्ष श्रीसागरमल जी बीजावत एम.ए ने ५० पर्युषण-सेवा देने वाले स्वाध्यायी श्रावक एव २५० साधारण स्वाध्यायी बनने तक तली हुई वस्तु न खाने का नियम लिया । ३० व्यक्तियो ने सप्त कुव्यसन के त्याग किये। युवक सघ की सभा हुई, जिसमे ५० युवको ने प्रतिदिन स्वाध्याय करने एव सामूहिक भोज मे रात्रि मे नही खाने की प्रतिज्ञा ली। मार्ग के ग्रामो को फरसते हुए आप नलखेड़ा होकर सारगपुर पधारे। यहाँ एव मार्गस्थ ग्रामो मे कई भाइयो ने मांस-मदिरा, शिकार एवं

बीड़ी के त्याग किये।

माघ कृष्णा ४ रविवार को व्याख्यान के पश्चात् पूज्य गणेशीलाल जी म.सा. के ११ जनवरी १९६३ को स्वर्गवास होने के समाचार मिले। आचार्यश्री व संतो ने निर्वाण कायोत्सर्ग किया एव दूसरे दिन श्रद्धाजलि सभा आयोजित हुई।

चरितनायक ने उनके जीवन पर प्रकाश डालते हुए श्रद्धाञ्जलि के रूप में भावभीनी काव्याञ्जलि प्रस्तुत की—

पूर्ण संयम संगठन के मार्ग दर्शक सो गये।
जब सुना हमने गणेशीलाल मुनि सुर हो गये॥
गत दिनो की याद से मन सहज तरंगित बन गया।
नेष्ट काल कराल ने हा कार्य निन्दा का किया॥१॥
शील संयम का धनी मुनिवर जगत से हर लिया।
लाभ क्या तुमको हुआ नरलोक सूना कर दिया॥
लघु चाल से संचय प्रदेशों का नही तेरे कहा।
जीत तेरी है नही अमरत्व चेतन मे रहा॥२॥
अनजान बदला रूप लख मन शोक करते मोह से।
मतिमन्द जन उत्सव मनाते ज्ञान के संदोह से॥
रथ दूर करके कर्म का निजरूप पाना इष्ट है।
हो अमर पूज्य गणेश हार्दिक कामना यह श्रेष्ठ है॥३॥

सारगपुर से सुरसलाई, आकोदिया होकर सुजालपुर पधारे, जहाँ शास्त्र भडार का अवलोकन कर उसे व्यवस्थित करने की प्रेरणा दी।

यहाँ से मण्डी अरण्डिया हकीमाबाद आस्टा, सीहोर आदि मार्गस्थ अनेक ग्राम-नगरो को धर्म-गगा से पावन करते हुए आप माघ शुक्ला २ को भोपाल पधारे। **'श्रमण ' शब्द की व्याख्या करते हुए आपने फरमाया - "लोभ, काम और स्वार्थ से किये जाने वाले श्रम एवं निष्काम भाव से आत्म-शुद्धि की भावना से किए जाने वाले श्रम में अन्तर है। यही कारण है कि एक श्रमिक कहलाता है तथा दूसरा 'श्रमण' । समण का दूसरा अर्थ है मन को आकुलता - व्याकुलता रहित सम रखना या दुर्मन को त्याग कर सुमन रखना।"** अन्य दिन फरमाया - "आज के उपासक अपना कर्त्तव्य भूल गए हैं। अब फिर उन्हे उत्साहपूर्वक धर्मरक्षा में लगना है। चित्त ने प्रदेशी राजा को केशी श्रमण के चरणों मे लाने का काम किया। उसके माध्यम से प्रदेशी का सुधार हो गया। सम्प्रति ने भी धर्मप्रसार में बड़ा योग दिया । **आज भी प्रचार का क्षेत्र श्रावक सम्हालें तो परस्पर के सहयोग से शासन की अनुपम सेवा हो सकती है।"**

भोपाल मे २ व ३ फरवरी १९६३ को सामायिक-स्वाध्याय सम्मेलन आयोजित हुआ, जिसमें वैद्य सतोषी लालजी , डा. शिवलालजी, श्री विजयसिंहजी सुराना, वकील निहालचन्दजी , श्री रतनसिंहजी , श्री बालारामजी बरेली आदि कई श्रावक स्वाध्यायी बने। यहाँ आपने शास्त्र भण्डार का अवलोकन किया। इस भडार में आपको कई रचनाएँ प्रभावी लगी। 'देश श्रावक चरित्र' प्राकृत रचना अपूर्व सी लगी। जोधपुर मे वैरागी मानचन्द्रजी तथा विरक्ता तेजकँवरजी की सम्भावित दीक्षा के कारण चरितनायक के विहार की गति तीव्र हो गई। ग्रामो मे ठहराव भी कम रहा। भोपाल से माघ शुक्ला १४ को विहार कर आपने टेकरी पर महावीर मन्दिर के पास गुफा मे रात्रिवास किया।

यहाँ ५-६ पौषध भी हुए। यहाँ से आप खजूरी, सीहोर, इच्छावर पधारे, जहाँ भोपाल के सेठ छोगमलजी, रतनचन्दजी कोठारी, सेजमलजी आदि उपस्थित हुए। यहाँ रात्रि मे मोतीलाल जी से साख्य एव वेदान्त दर्शन मे अन्तर पर चर्चा हुई। प्रातकाल व्याख्यान मे अधिकतम अजैन लोग थे। हाईस्कूल के प्रधानाध्यापक के आग्रह से पूज्यप्रवर ने बच्चो को नैतिक शिक्षा पर उद्बोधन दिया। बालको ने चोरी, नशा, निरपराध की हत्या एव हिंसात्मक आन्दोलन के त्याग किये। शिक्षको को भी जीवन निर्माणकारी शिक्षा देने हेतु प्रेरणा की। फिर चरितनायक धामनदा, पोंचानेर से नदी-मार्ग तय करते हुए अरणिया सुजालपुर मण्डी, तलेन, पचोर, खुजनेर छापेडा, जीरापुरा, बकाणी रीछवा आदि क्षेत्रो मे जीवन निर्माणकारी नियम दिलाते हुए फाल्गुन शुक्ला तीज को पाटन पधारे। यहाँ के पचायती भण्डार मे १६ वी शती तक के तीन चार बस्ते हैं। गोडीदासजी महाराज के शास्त्र दो पेटियो मे बन्द है। पाटन तक छोटे-छोटे ग्रामो मे भी दूर दूर से भक्त श्रावक कृपालु गुरुदेव के दर्शनार्थ पहुँचते रहे। चरितनायक के प्रवचन-पीयूष से न जाने कितनो को सही राह मिली। बकाणी मे आपने फरमाया—"मनुष्य जीवन का काम भाग मे गवाना केसर को गारे मे मिलाना है।" पाटन मे प्रश्नोत्तर आदि के माध्यम से धर्म प्रेरणा कर रायपुर पधारकर आप धूपियाजी की धर्मशाला मे विराजे। प्रात ९ बजे तक व्यवसाय के हाथ न लगाने हेतु धूपिया जी ने ३ वर्ष की प्रतिज्ञा स्वीकार की। फिर पूज्यपाद ने झालावाड़, सुकेत, मोडक, मडाणा अलनिया फरसते हुए कोटा मे होली चातुर्मास किया।

यहाँ आपश्री ने व्याख्यान मे फरमाया—**"समकित किसी को दी या ली नही जा सकती। वह तो वास्तव में आत्मा का गुण है। मोह का आवरण दूर करने पर स्वतः प्राप्त होती है। व्यवहार में तत्त्व समझाने की दृष्टि से सम्यक्त्व देना कहते हैं और बोधदाता गुरु को सम्यक्त्वदाता कहते है। असलियत में सम्यग्दर्शन आत्मा का ही गुण है।"** सुस्पष्ट है कि सम्यक्त्व बोध देने के बारे मे आपके विचार कितने पवित्र पावन थे। आपने जीवन मे बड़े से बड़े व्यक्ति को भी स्वय उनका प्रबल आग्रह व अतिशय भक्ति होने पर भी कभी पूर्व गुरु आम्नाय परिवर्तन कर गुरु आम्नाय नही दी। आपसे उपकृत व प्रेरित अनेको भक्तहृदय साधक आपसे गुरु आम्नाय न मिलने पर भी आपको सदा भगवद् तुल्य मान कर आपकी सेवाभक्ति का लाभ लेने मे कभी पीछे नही रहे। यही पर किसी दिन आपने श्रावकों को उद्बोधन करते हुए प्रवचन मे फरमाया —"अतिशय ज्ञान की प्राप्ति मे चार बातो का ध्यान रखना आवश्यक है—१ आहारशुद्धि का बराबर ध्यान रखे। २. चार विकथाओ का परित्याग करे। ३ विवेक और व्युत्सर्ग से आत्मा को सम्यक् रूपेण भावित करे। ४ पूर्वापर रात्रि के समय धर्मजागरण करे।" "कम से कम श्रावक में तीन बाते तो होनी ही चाहिए। तभी वह साधारण श्रेणि का श्रावक होता है। वे तीन बाते हैं-

१ इच्छा पूर्वक किसी त्रस जीव को जानकर नही मारना।

२. मद्य-नशा और मांस-अण्डे आदि प्राण्यग का उपयोग नही करना।

३ नमस्कार मन्त्र को ही आराध्य मानकर श्रद्धा रखना।

सच्चे श्रावक-श्राविका वीतराग को छोड़कर इधर-उधर नही भटकते। सुख-दुःख तो स्वकृत पुण्य-पाप का फल हैं।

यहाँ पर कोटा, भोपालगढ़, पाली , पीपाड़, अजमेर , जयपुर, विजयनगर, मेड़ता आदि सघो ने चातुर्मास हेतु आग्रहपूर्ण विनति रखी। कोटा के श्रावकसघ मे पारस्परिक मनमुटाव था। चरितनायक के प्रेरक उद्बोधन से युवकों एव बुजुर्गो मे एकता कायम हुई एव सघ मे हर्ष का वातावरण बन गया। कोटा मे चरितनायक ने विजयगच्छ का भण्डार देखा। अनेक पुस्तके सन्दूको में बन्द थी। समुचित व्यवस्था न होने के कारण करीब गाड़ी भर पुस्तके मिट्टी

हो जाने से प्रवाहित करनी पड़ी। यहाँ आपने खरतरगच्छ का समृद्ध ज्ञान भण्डार भी देखा। इसमे १०० बस्ते लिखित एव अन्य मुद्रित थे। सुरक्षा की व्यवस्था ठीक थी। देवीलाल जी पोरवाड नित्यनियमी एव गम्भीर स्वभावी थे। महिलाओ ने सामायिक का स्वरूप समझा और अच्छा धर्माराधन हुआ।

- बूँदी, केकड़ी होकर अजमेर

कोटा के नयापुरा से तालेडा, नया गाँव, देवपुरा होते हुए आप बूँदी पधारे व कलक्टर मेहता सा. की कोठी पर विराजे। पीपाड़ के श्रावक विनति करने आए। दूसरे दिन चैत्र कृष्णा नवमी को आदिनाथ जयन्ती पर बूँदी शहर में प्रभावी प्रवचन हुआ। प्रभु के आदेश पर चलने की प्रेरणा की। यहाँ पर आपने दिगम्बर एव श्वेताम्बर ज्ञान भण्डार का अवलोकन किया। बूँदी से विहार कर आपने बडा नयागॉव के उच्चतर विद्यालय में शिक्षा के साथ सस्कार के महत्त्व पर पौन घण्टे प्रवचन फरमाया। घाटी उतरने चढ़ने के कारण इस गाँव का हिण्डोली नाम सार्थक है। पहाड़ी और तलाई के कारण प्राकृतिक दृष्टि से रमणीक है। देवली मे बीड़ी के अभिकर्ता कालूजी तेली के निवेदन पर उनके बच्चो को १० मिनट जप, सूर्योदय के समय निद्रित नही रहने एव चोरी नही करने के नियम दिलाए। वहा से चलकर आपने नदी के पास मण्डपी मे रात्रि विश्राम किया। फिर बोगला के आदिवासी आश्रम पर ठहरे। मार्ग मे श्रमिक को शराब एव सिगरेट का त्याग कराते हुए आप कालेड़ा एव फिर केकड़ी पधारे।

केकड़ी मे सामायिक पर प्रवचन करते हुए पूज्यपाद ने फरमाया -"**प्रभु ने वीतराग स्वरूप की प्राप्ति के लिए सामायिक की साधना बतलायी। वह साधनारूप भी है और सिद्धिरूप भी। इसका आरम्भ चतुर्थ गुणस्थान से ही हो जाता है। यह साधना का प्रारम्भिक रूप है। दूसरी श्रेणि पंचम गुणस्थान और तीसरी श्रेणि पूर्ण संयमी की है। यथाख्यात चारित्र सामायिक का सिद्धि स्थान है। प्रारम्भिक काल में राग-द्वेष की विषमता रहती है, उसको सम करने के लिये ही मुहूर्त भर का अभ्यास किया जाता है। जो लोग सोचते हैं कि मन शान्त एवं स्थिर रहे तभी सामायिक करना, तो यह भूल है।**" यहाँ जयपुर का शिष्ट मण्डल उपस्थित हुआ। केकडी मे दीपचन्दजी पांड्या प्राचीन साहित्य के अन्वेषणशील थे। एक व्याख्यान के बाद ही केकड़ी से सरवाड़ के लिए प्रस्थान करते समय प्रात.काल कुछ श्रावको ने धर्मस्थानक मे नियमित एव कुछ ने साप्ताहिक स्वाध्याय करने का नियम लिया। आपने मास्टर कन्हैयालाल जी लोढा को धर्म शिक्षण के लिए प्रेरणा दी।

सरवाड़ मे आपने अपने प्रवचन मे फरमाया-"मनुष्य की विशेषता शरीर और परिवार के विकास से नही, आध्यात्मिक विकास से है। भारत मे अध्यात्म-परम्परा शिथिल हो रही है। उसे जगाइए। इसी मे देश, समाज एव आपका कल्याण है।" गोयला मे रात्रि-उद्बोधन करते हुए फरमाया -"चार प्रकार के मनुष्य है - एक राम की तरह वैभव-सुख पाकर सदुपयोग से सुख , कीर्ति एव सद्गति का भागी बनता है। दूसरा रावण और ब्रह्मदत्त की तरह दुरुपयोग से दुःख, अकीर्ति तथा दुर्गति का भागी होता है। तीसरा साधनहीन भी सुमति एव सद् आचार से सुगति का भागी होता है तथा चौथा दोनों खोता है। "

उस समय विहार में लोग अन्य गाँवो से साइकिल के द्वारा भी आते थे। सोकल्या की ओर विहार के समय दो सज्जन नसीराबाद से साइकिल द्वारा आये।शुभकरण गुरां कम्पाउण्डर ने सजोड़े शीलव्रत अगीकार किया एव झूठ बोलने का त्याग किया। सीकल्या पहुँचने पर बादलों के छा जाने से दिन ठण्डा रहा। दो-तीन गर्जन के साथ वर्षा भी हुई। यहाँ आपने धनराज को उसकी योग्यता के अनुसार नवकार मंत्र की जगह 'अरिहत सिद्ध - साहू' सिखाया।

नसीराबाद में आपने शान्तिनाथ की प्रार्थना के बाद नश्वरता का अर्थ बतलाकर प्रत्येक को शान्तिनाथ के समान वीतराग बनने की प्रेरणा की। चरितनायक ने स्वाध्याय की विशेष प्रेरणा की। आपने अपनी दैनन्दिनी मे लिखा है - "तरुणवर्ग मे इस समय ठीक जागरण दिखाई दिया। प्रार्थना का कार्यक्रम बराबर चलता है। स्वाध्याय का सिलसिला नही जमा है। माला, पाठ और भजन मे ही अधिकाश समय बीत जाता है। हर सन्त एव सतीवर्ग इसके लिये प्रेरणा करे, यह अपेक्षित है।"

आचार्य श्री का यह कथन मात्र नसीराबाद के लिए नही, अपितु अनेक ग्राम नगरो के लिये प्रेरणाप्रद है। यहाँ पर व्याख्यान मे फरमाया - **"मनुष्य बच्चों के घरोंदे की तरह नाशवान को ही बनाने का प्रयत्न करता है। जो अपना और अविनाशी है उसको बनाने की फिक्र नही करता वह अज्ञान और मोह के पर्दे में सत्य को देख नही सकता। यदि इन पर्दों को दूर कर लिया जाय तो पूर्णता और प्रकाश दूर नहीं।"** नसीराबाद से दाता होकर माखूपुरा के पास आने पर सूर्यास्त का समय हो जाने से आप होटल के पास ठहरे। प्रात. अजमेर के निकट प. कुन्दनमुनि जी एव सोहनमुनि जी सामने पधारे। यहा आप विष्णुदत्त जी के बगले पर विराजे। महासती सुन्दरकवरजी, महासती बदनकवरजी एव ज्ञानकवरजी भी सेवा मे पधारे। दोपहर बाद सन्तो के स्वाध्याय के अनन्तर सतीमण्डल से प्रश्नोत्तर हुए। जयपुर के श्रावक बोथरा जी, श्रीचन्दजी गोलेछा, ललवाणी जी, बडेरजी, हरिश्चन्द्रजी, रतनलालजी सेठ एव श्राविकाओ ने दर्शनलाभ कर चातुर्मास हेतु विनति रखी। हरिश्चन्द्र जी बडेर से श्रद्धा, दान और विदेश के व्यवहारो पर वार्ता हुई।

सवत् २०२० चैत्र शुक्ला एकादशी गुरुवार प्रात काल अजमेर मे स्वामीजी श्री पन्नालालजी महाराज एव कवि जी (अमरचन्दजी) म.सा. के साथ मधुर मिलन हुआ। आपने महावीर जयन्ती पर सामूहिक स्वाध्याय पूर्वक सामायिक की प्रेरणा दी। अनुशासन के सम्बन्ध मे आपने स्वामीजी महाराज से हुई चर्चा मे अपने विचार रखे—**"अनुशासन का संघ में कठोरता से पालन हो। ढुलमुल नीति से संघ का तेज अक्षुण्ण नही रहेगा। वर्तमान में कई स्थानों पर स्मारक, मूर्त्ति और कीर्तिस्तम्भ बन रहे हैं। यह श्रमण संस्कृति के सर्वथा विपरीत है।"** प्रमुख सन्तो से एक समाचारी और गणव्यवस्था पर वार्ता हुई। जयपुर, भोपालगढ, विजयनगर, बालोतरा आदि स्थानों के श्रावक विनति लेकर पुन उपस्थित हुए।

अजमेर मे महावीर जयन्ती का कार्यक्रम उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। भगवान महावीर के जीवन की झाकी प्रस्तुत करते हुए उनके उपदेशो को अपनाने की प्रेरणा की गई।

- जोधपुर की ओर

जोधपुर में दीक्षा का प्रसग सन्निकट था, अत दो दिन के अल्पप्रवास के बाद आपका जोधपुर के लिये द्रुत गति से विहार हुआ। ढढ्ढा जी के बाग मे एक दिन विराजने के अनन्तर फिर आपने दो दिन मे पुष्कर किशनपुरा, गोविन्दगढ एव आलणियावास फरस कर आगे के लिये विहार किया। आलणियावास में आपने प्रवचन मे फरमाया —"प्रदेशी ने आत्म तत्त्व को समझकर तदनुकूल आचरण किया तो सद्गति का अधिकारी हुआ। इसी प्रकार आत्मविश्वास के साथ जीवन शुद्धि का अभ्यास करे।" पीसांगण के भाइयो की विनति समयाभाव के कारण स्वीकार नही की जा सकी। बडी रीया मे मध्याह्न के ध्यान के पश्चात् व्याख्यान मे फरमाया -"लोग समझते हैं - गरीब धर्म नही कर पाते, परन्तु ऐसा समझना भूल है। धर्म और पाप के चार साधन है - तन, मन, वाणी और धन। दान से तिजोरी खाली होने का और व्रत से शरीर दुर्बल होने का भय रहता है, पर शुभ विचार एवं प्रियवचन

उच्चारण में क्या तकलीफ है? परन्तु कर्माधीन प्राणी से यह भी नही होता।" वहाँ से जडाऊ होकर आज चामुडिया पहुँचे जहाँ रात्रि मे रामदेव के चबूतरे पर विराजे।

मेड़ता सिटी में बालकों के सस्कार हेतु करुणाकर ने फरमाया -**"आप में से बहुत से भाई पिता बने हुए हैं। बालक के लालन-पालन व रक्षण में हजारों रुपया पूरा कर देते है। समझते हैं कि बच्चे को पढ़ा लिखा शादी कर काम लायक कर देना हमारा फर्ज है, किन्तु उसको सद्ज्ञान देना, सुनीति एवं सदाचारमय जीवन बनाना फर्ज नहीं है क्या ?"** "आप समझ रहे हैं कि धर्मरक्षा एव सत्शिक्षा साधुओ का काम है। किन्तु यह भूल है। चार-पाँच भी श्रावक हर स्थान पर ब्रह्मचारी वर्ग के रूप में सेवा दे तो सघ-व्यवस्था उचित ढग से चल सकती है।" प्रार्थना आदि के नियम कराये गए।

वैशाख कृष्णा ७ को मेड़तासिटी से इन्दावड़ पधारे। यहाँ आपने अपने प्रवचनामृत मे सद् गुरु का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए फरमाया - **"गुरु कर्म काटने का मार्ग बतलाते हैं, परन्तु कर्म स्वयं को काटना पड़ता है। जैसे किसी अटवी को पार करते समय अकेले यात्री को पीछे कदम रखता हुआ ज़वान साथी मिल जाय तो साहस आ जाता है। वैसे ही जीव को सद्गुरु के सहयोग से बल मिलता है।** "कच्चे मार्ग से बायड़ होकर आप पुन्दलु पधारे, जहाँ ग्रामीणजनो को आपने बीडी, तमाखू छोड़ने की प्रतिज्ञा करायी। यहाँ एक पजाबी बाबा ने अपनी निर्लेपवृत्ति का परिचय दिया। फिर कवासपुरा, चौकडी होकर कोसाणा पधारे तो ग्राम के जैन - अजैन अनेक भाई सम्मुख आए। व्याख्यान मे फरमाया-"स्वार्थ एवं माया की चकाचौंध मे भगवान को न भूलना। भगवान को भूलने वाला मार्ग चूक जाता और पश्चाताप का भागी होता है। अपना काम व्यवहार मे करते हुए भी प्रभु की आज्ञा का ध्यान रखना। "

प्रार्थना के पश्चात् प्रातःकाल प्रस्थान करते समय भी चरितनायक प्रेरणा करना नही भूलते थे। यहाँ भी प्रेरणा की। फलत तीन लोगो ने बीड़ी पीने के त्याग किए। बच्चो ने माह मे पाँच दिन सामायिक का नियम लिया। पीपाड़ पहुँचने से एक मील पूर्व ही श्रावको का आना प्रारम्भ हो गया। पहुँचने पर पार्श्वनाथ की प्रार्थना के पश्चात् उद्बोधन दिया। कटारियाजी प्रभृति श्रावको की भावना वैरागियो की बन्दोली निकालने की थी, पर गाजे-बाजे का आडम्बर बढ़ाने की बात सामने आने पर आपने निषेध कर दिया। यहाँ पुखराजजी ने सजोडे शीलव्रत ग्रहण किया। बुचकला, डांगियावास होते हुए टांका की प्याऊ पर रात्रिवास किया। फिर बनाड़ मे जोधपुर के श्रावक मोदीजी आदि सेवा मे पहुचे। जोधपुर पधारने पर कम से कम २५ बारहव्रती एव २५ स्वाध्यायी तैयार होने के लिए प्रेरणा की।

अक्षय तृतीया पर आपका प्रवचन सिंह पोल मे हुआ। श्री कानमुनिजी म. भी साथ थे। इसी स्थान पर ३३ वर्ष पूर्व चरितनायक को आज ही के दिन आचार्य पद की चादर ओढाई गई थी। चरितनायक ने अपने मगलमय उद्बोधन में दानधर्म और तपधर्म की विशिष्टता बतलाई। इस अवसर पर वर्षीतप के ११ पारणक हुए। श्रद्धालु गुरुभक्त सुश्रावक श्री उमरावमलजी जालोरी ने अपने आराध्य गुरुवर्य के आचार्यपद दिवस पर सजोडे शीलव्रत अगीकार कर सच्ची श्रद्धा अभिव्यक्त की।

वैशाख शुक्ला सप्तमी को आपने वर्धमान जैन कन्या पाठशाला भवन घोड़ो का चौक मे अपने प्रवचन में फरमाया - **"साधु और श्रावक की श्रद्धा और प्ररूपणा में साम्य तथा स्पर्शना में अंतर है। गृहस्थ संसार में रहते हुए संपूर्ण हिंसा आदि पापों का त्याग नहीं कर सकता है, फिर भी उसका विचार शुद्ध होता है,**

वह पाप को पाप और षट्कायिक जीवों को अपने समान समझता है। चतुर्थ से तेरहवें गुणस्थान तक की श्रद्धा प्ररूपणा एक है, समान है, क्षयोपशम का अंतर होने पर भी दोनों की दृष्टि एक है। ज्ञान के बिना कषाय का जोर नहीं हटता, आप भी स्वाध्याय शील रहें तो आचार की त्रुटियाँ सहज दूर हो सकती हैं।"

अष्टमी को अपने प्रवचन मे आपने नय निरूपण करते हुए फरमाया - "महावीर ने कहा - **सापेक्ष वचन सत्य है। सिक्के का एक बाजू मुद्रांकित और दूसरा राज सिंहासन अशोक चक्र वाला है। सिक्के के दोनों बाजू समझने पर ही उसका पूर्ण परिचय हो सकता है। मंडप का खंभ मेरी दृष्टि से पूर्व में ही है, पूर्व वाले की अपेक्षा पश्चिम, दक्षिण वाले से उत्तर और उत्तर वाले से दक्षिण में कहना सर्वमान्य है। प्रत्येक वचन अपना कथन करता है पर दूसरे का निषेध नहीं करता, यही सुनय है।"** नवमी को अपने प्रभावोत्पादक प्रवचनामृत में चरितनायक ने फरमाया - "प्रभु ने दो मार्ग बतलाये है एक विचार का और दूसरा आचार का। विचार मार्ग मे ज्ञान, दर्शन समाविष्ट हैं एव आचार मार्ग को साधु और गृहस्थ की दृष्टि से, त्याग की पूर्णता की दृष्टि से भिन्न भिन्न कर दिया है।" दशमी को चरितनायक ने अपने हृदयोद्बोधकारी प्रवचन मे धर्ममार्ग मे पुरुषार्थ की महिमा निरूपित करते हुए फरमाया - **"त्यागी पुरुष संसार के भोगों का अमूर्छित भाव से उपभोग कर मधुमक्खी की तरह उड़ जाता है, किन्तु रागी-अज्ञानी मल की मक्खी की तरह फंस कर प्राण गंवा देता है। दुःखमय संसार में प्राणियों की रति देख कर शास्त्रकार भी आश्चर्य करते है-"अहो दुक्खो हु संसारो, जत्थ कीसंति जंतुणो"।**

• मुमुक्षुद्वय की दीक्षा

वैशाख शुक्ला १३ सोमवार ६ मई १९६३ को सरदार हाई स्कूल के प्रागण मे ५८ वर्षीय मुमुक्षु श्री मगनराजजी मुणोत (सुपुत्र श्री सोनराजजी एव अमरकवर जी मुणोत) और बालब्रह्मचारी मुमुक्षु श्री मानचन्द्र जी सेठिया (सुपुत्र श्री अचलचन्दजी एव छोटा बाई जी सेठिया) की भागवती दीक्षा सोल्लास सम्पन्न हुई। वीर पिता श्री अचलचद जी सेठिया ने चारो खन्ध (सचित्त जल का त्याग, रात्रि चौविहार-त्याग, ब्रह्मचर्य पालन, हरी का त्याग) किए। महामन्दिर मे बड़ी दीक्षा हुई। **म.सा. वर्तमान में उपाध्यायप्रवर के रूप में प्रतिष्ठित होकर जिन शासन की सेवा कर रहे है।**

दीक्षा के पश्चात् महामन्दिर एव मुथाजी के मन्दिर पधारे। पुन. सरदारपुरा होकर जस्टिश भडारी जी के बंगले पहुँचे। वहाँ शान्तिनाथ की प्रार्थना के बाद सभी आगन्तुको को दस मिनट प्रार्थना एव स्वाध्याय के नियम की प्रेरणा की। जोधपुर के उपनगरों को फरसने के बाद यहाँ से आपका विहार हुआ। बनाड़ होते हुए आप ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी को जाजीवाल पधारे। भीषणगर्मी व लू के कारण आपके अन्तेवासी सुशिष्य श्री सुगनमुनिजी का असामयिक स्वर्गवास हो गया। लाडपुरा निवासी श्रीमान चुन्नीलालजी एव श्रीमती अलोलबाई के सुपुत्र इस साधक ने ज्येष्ठ शुक्ला दशमी सवत् २०१० को दीक्षा अगीकार की थी। आप थोकड़ो के ज्ञाता सरल मनस्वी सतरल थे। सयम मे प्रतिपल जागरूकता आपके जीवन मे झलकती थी। थोकड़े सीखने सिखाने मे आपकी विशेष अभिरुचि थी। मारणान्तिक उपसर्ग आने पर भी आपने हंसते हसते मृत्यु का वरण स्वीकार किया। सयम के उत्कृष्ट पर्याय आचार्य देव के चरणो मे जिन्होंने अपना जीवन समर्पण किया, गुरुदेव की शिक्षा को जिन्होंने भगवत् प्रसाद के रूप में सहज स्वीकार किया वे महापुरुष भला उपसर्गों से कब घबराने वाले थे।

भोपालगढ़ पधारने पर चरितनायक भक्तजनो को चैत्र की अमावस्या के पश्चात् तिल नही रखने का नियम दिलाया। श्री जैन रत्न विद्यालय के कार्यकर्ताओ को प्रेरित करते हुए आपने विद्यालय मे धार्मिक शिक्षा की सुचारु व्यवस्था तथा बच्चों को धार्मिक व नैतिक सस्कार प्रदान करने पर बल दिया। गुरुदेव ने प्रवचन मे फरमाया— **"छोटा सा दुकानदार लाइन से काम करे तो पाँच-दस वर्ष में तरक्की कर लेता है। फिर साधना में बीसियों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी सफलता क्यों नही, इसके तीन कारण हैं- चल, मल और विक्षेप। जब तक किसी भी कार्य में स्थिरता न आ जाय सिद्धि नही मिलती। इसी प्रकार मल को दूर करना भी आवश्यक है। जब चल और मल दोष दूर हो जायें तब विक्षेप ही बाधक रहता है। इसके लिए सत्पुरुषों ने एकान्त एवं शान्त स्थान में साधना करना अभीष्ट माना है। शरीर के त्रिदोष की तरह साधना के इन दोषों को दूर कर लें तो दिल के दर्पण में आत्मा की शुद्ध छाया दिख सकती है"।** पूज्यप्रवर द्वारा महारम्भ को छोड़कर अल्पारम्भ से जीने की शिक्षा दी गई।

यहाँ कतिपय दिवस ठहरकर चरितनायक रतकूडिया पधारे। रतकूडिया मे आपने ग्राम निवासियो को हिंसा से विरत करते हुए फरमाया कि अपने प्राणो के समान ही दूसरे के प्राणों को जानना चाहिए। लोगो को धन प्यारा है, पुत्र प्यारा है, परन्तु प्राणो के सामने वे भी निर्मूल्य हैं। कहा है—

प्रथम तो प्रिय धन सब ही को
द्रव्य से लागे सुत नीको।
पुत्र से वल्लभ तन जानो
अंग में अधिक नयन मानो।
नयन आदि सब इन्द्रियाँ
अधिक पियारा प्राण।
या कारण कोई मत करो
पर प्राणन की हाण॥

यहाँ से खागटा होकर पूज्य प्रवर का कोसाणा पदार्पण हुआ। यहाँ पर वाचस्पति श्री मदनलालजी म.सा. के स्वर्गवास के समाचार मिलने पर निर्वाण कायोत्सर्ग किया गया। व्याख्यान बन्द रहा। संवेदना पत्र अमृतसर भेजा गया। यहाँ पर पूज्य प्रवर ने अपने प्रवचन मे फरमाया कि किसी भी समाज की उन्नति के लिए सार-सम्भाल करने वाले प्रचारको की आवश्यकता है। पूज्यप्रवर के इस सदुपदेश का अनुकूल प्रभाव हुआ और धीरे-धीरे अनेक स्थानो पर ऐसे धर्म प्रचारक तैयार हुए जिन्होने समाजहित मे भी कार्य किया। यहाँ से चरितनायक ने पीपाड़ चातुर्मास हेतु विहार किया।

• पीपाड़ चातुर्मास (संवत् २०२०)

वि.स. २०२० के पीपाड़ चातुर्मास मे अनेक उपलब्धियाँ हुईं। पर्याप्त त्याग-प्रत्याख्यान हुए। प्रवचन श्रवण के लिए लोग उमड़ पड़े। आपके विविध विषयो पर प्रवचन हुए।

उन दिनो सोवियत रूस द्वारा वेलेन्तीना तेरिस्कोवा नामक महिला को अन्तरिक्ष मे भेजा गया था। चरितनायक ने इस सम्बन्ध मे ३ जुलाई १९६३ को अपने विचार प्रकट करते हुए व्याख्यान मे फरमाया — **"आज का युग भौतिक उन्नति का है। रूस आदि राष्ट्रों में मानव को अन्तरिक्ष में भेजने की होड है। विज्ञान**

के इस प्रयोग में मानव भले ही अन्तरिक्ष में उड़ान का उपक्रम करले पर उसे अन्ततः नीचे आना ही पड़ता है। हमारा आध्यात्मिक विज्ञान मानव को अन्तर के अनन्त आकाश में ऊपर उठने की शिक्षा देता है। अन्तरिक्ष - यात्री को कई मास की साधना से शरीर को हल्का और वातावरण के अनुकूल बनाना होता है। यदि हम आत्मा को हल्का करें और मन को संतुलित रखने की तालीम हासिल करें तो अनन्त आकाश में स्थित हो सकते हैं और सदा-सदा के लिये लोकाग्र में स्थित सिद्ध शिला में स्थिर ज्योति पुञ्ज बन सकते हैं, जहाँ से कभी भी वापस नीचे नही आना पड़ता। साधकों का यह विलक्षण उड्डयन है।" यह उड़ान सामायिक की साधना से ही सम्भव है। कहा भी है –

"करने जीवन का उत्थान, करो नित समता रस का पान ।"

चातुर्मास मे श्रमणसघ के अनुशासन को दृष्टिगत रख कर एक दिन आपने फरमाया- **"शास्त्र और श्रमण संघ की मर्यादा है कि साधु साध्वी फोटो नही खिचवावें और मूर्ति पगल्ये आदि कोई स्थापन्न करे तो उपदेश देकर रोके। रुपये पैसे के लेन-देन में नही पड़े और न कोई टिकिट आदि पास रखे। साधु-साध्वी स्त्री-पुरुषों को पत्र नहीं लिखे और न मर्यादा विरुद्ध स्त्रियो का सम्बन्ध ही रखे। तपोत्सव पर दर्शनार्थियों को बुलाने की प्रेरणा नही करे। महिमा पूजा एवं उत्सव से बचे। धातु की वस्तु नही रखे, न अपने लिए क्रीत वस्तु का उपयोग करे। इत्यादि बहुत सी बातो का सम्मेलन में निर्णय हो चुका है। जिनको हमने चतुर्विध सघ के समक्ष स्वीकार किया है। इसको दृढ़ता से पालन करना हम साधु-साध्वी का पुनीत कर्तव्य है। "** (जिनवाणी, नवम्बर १९६३ के अक से उद्धृत) श्रमण सम्मेलनो मे स्वीकृत समाचारी श्रावको के समक्ष रखने का स्पष्ट हेतु यही प्रतीत होता है कि जिन लक्ष्यो व पुनीत भावना से श्रमण सघ का गठन किया गया था, वह समाज के समक्ष रखा जावे व सघ मे आती शिथिलता दूर हो सके। चरितनायक सगठन के लिये सयम व साध्वाचार निष्ठा को अनिवार्य मानते थे। सगठन के नाम पर सयम व मर्यादा मे शैथिल्य आपको कतई इष्ट नही था।

चातुर्मास मे उपासकदशाग सूत्र के आधार पर कामदेव आदि श्रावको के जीवन का बहुत ही रोचक एव प्रेरणाप्रद विवेचन हुआ। लेखन, आगम वाचनी आदि के कार्यक्रम नियमित रूप से चलते रहे। चरितनायक स्वय भी कभी-कभी आहार-गवेषणा के लिए पधारते थे।

यहाँ पर बहुत से लोगो ने निम्नाकित त्याग-प्रत्याख्यान या नियम किये–

१. चैत्र की अमावस्या के बाद तिल को अधिक समय नही रखना।

२. बारात वालो को रात्रि भोजन नही कराना, खाने के बाद जूठा नही छोड़ना।

३ प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय करना।

४ बीड़ी-सिगरेट, शिकार, मास-मदिरा और चाय का उपयोग नही करना।

५. सामूहिक बदोली में बीड़ी सिगरेट, नृत्य आदि का त्याग रखना।

६. गाय, भैंस, सुअर आदि की हिंसा के कारणभूत चरबी लगे वस्त्रो का त्याग करना।

७ तपस्या मे आडम्बर और जीमणवार मे रात्रि-भोजन का त्याग करना।

८. मुनि दर्शन के लिए जाने पर रात्रि-भोजन नही करने का सामूहिक नियम।

९. मुखवस्त्रिका या रूमाल (उत्तरासन) का प्रयोग करके ही मुनि दर्शन करना।

१०. शादी पर टीका प्रथा का त्याग।

११. मृत्यु पर रात्रि रुदन का त्याग।

• मुमुक्षु हीरालालजी की दीक्षा

कार्तिक शुक्ला षष्ठी विक्रम सं. २०२० को प्रात ९ बजे पीपाड़ मे हिन्दू महासभा के पाण्डाल मे २५ वर्षीय मुमुक्षु श्री हीरालालजी गाँधी (सुपुत्र श्री मोतीलालजी गाँधी) को चरितनायक ने अपने मुखारविन्द से विधिवत् दीक्षा प्रदान की। दीक्षा के अवसर पर पूज्यपाद ने अपने विचार प्रकट करते हुए फरमाया - "भाइयों और बहिनो ! अभी जिस मगलमय प्रसग पर आप सब उपस्थित हुए हो, वह प्रेरणा दे रहा है कि मानव को आत्म-साधना द्वारा भौतिक प्रपचो से अलग होकर आत्म-कल्याण करना चाहिये, क्योंकि भोग से योग की ओर, राग व भोग से त्याग की ओर, तथा अन्धकार से प्रकाश की ओर बढ़ना ही मानव जीवन का परम लक्ष्य है। अधिकतर जीव भोगो मे फसकर हाय हाय कर खाली हाथ रवाना हो जाते हैं। कोई शूरवीर ही यह सोचता है कि दुनिया और उसका वैभव मुझे छोड़ेगा, उसके पहले मै दुनिया को छोड दूँ। धन, पद, कुटुम्ब और परिवार ये सब मुझे छोड़ेगे, उसके पहले मैं इनको छोड़ दूँ। विश्व की रक्षा के लिए शस्त्रधारी सेना की अपेक्षा शास्त्रधारी सेना की अधिक आवश्यकता है। यदि सयमधारी सेना मजबूत नही होगी तो देश की आध्यात्मिक रक्षा नही होगी। मानसिक विकार, आध्यात्मिक रोग, वैर-विरोध, कलह और अनीति के हमले से बचाने वाली सेना संयमधारी ही है। इस अवसर पर हर समाज के लोग बडी उमग, उत्साह व लगन से आए है। मै समझता हूँ कि इन सबको भी कुछ व्रत ग्रहण करना है। स्वाध्याय की प्रवृत्ति और सामायिक-साधना की लहर हर गाव के बच्चे से लेकर बूढे तक जगानी है।"

प्रव्रजित होने के पश्चात् नवदीक्षित सन्त का नाम 'मुनि हीराचन्द्र' रखा गया। आप सम्प्रति रत्नवश के अष्टम पट्टधर आचार्य के रूप मे जिन शासन की महती सेवा कर रहे हैं।

चातुर्मास मे तप-त्याग का ठाट रहा। अनेक लोगो ने चारो खन्ध लिए। युवक भी स्वाध्याय से जुड़े। यहाँ पर डॉ. नरेन्द्र भानावत दर्शनार्थ पधारे तथा पूज्य श्री से आपकी धर्म, साहित्य, संस्कृति, और इतिहास विषयक कई बिन्दुओ पर चर्चा हुई। कई स्थानो से अनेक प्रमुख श्रावक-श्राविकाओ ने आकर लाभ लिया। श्री इन्दरनाथजी मोदी के नेतृत्व में सामायिक संघ का अधिवेशन हुआ।

• पीपाड़ से जोधपुर होकर जयपुर

चातुर्मास के पूर्ण होने पर पालासनी आदि विभिन्न ग्रामों को पावन करते हुए चरितनायक का जोधपुर नगर मे पदार्पण हुआ। मुनि श्री मिश्रीमल जी म.सा. एव पारस मुनि जी म. से स्नेहमिलन हुआ। यहाँ आपके प्रवचन से प्रभावित होकर सिन्ध निवासी मजिस्ट्रेट इंगानी ने जीवन भर के लिए मद्य-मास का त्याग किया।

पाली पधारने पर पूज्यप्रवर का मंत्री श्री पुष्करमुनिजी म. एवं श्री देवेन्द्र मुनिजी म से स्नेह मिलन हुआ व परस्पर ज्ञानचर्चा हुई। चरितनायक जहां भी पधारते , आबालवृद्ध सहज ही खिंचे चले आते। सयमशिरोमणि महापुरुष के सान्निध्य मे आकर सामायिक स्वाध्याय व व्रत प्रत्याख्यान से अपने जीवन को भावित करते। आपके इस पाली प्रवास में अनेकों व्रत-प्रत्याख्यान हुए। लगभग २०० बालकों व तरुणों ने दयाव्रत की आराधना की।

भक्तो की उपस्थिति व व्रताराधन से शेखेकाल मे ही चातुर्मास सा दृश्य उपस्थित हो गया। पाली से विहार कर आप जाडन, सोजत सिटी आदि क्षेत्रों में धर्मोद्योत करते हुए साडिया पधारे, जहा आपने हनुमानजी की तिबारी मे रात्रिवास किया। यहां से पूज्यप्रवर चण्डावल, करमावास, कुशालपुरा फरसते हुए निमाज पधारे।

महापुरुषों के सान्निध्य में आने वाला व्यक्ति सहज ही आधि-व्याधि व कष्टो से मुक्त हो जाता है। आपके जीवन में ऐसे अनेक प्रसग आये कि भयंकर से भयंकर प्रेत बाधा से ग्रस्त व्यक्ति सहज ही आपके दर्शन कर मुक्त हो गये। यहां भी एक भाई प्रेत बाधा से मुक्त हुआ। यहां से महेसिया, गिरी, बूँटीवास, रास, सेवरिया होते हुए पीसागण पधारने पर आपकी प्रेरणा से समाज का झगड़ा मिट गया। पूज्यश्री ने फरमाया-"कोई किसी को बुलावे या कोई जावे तो रोक-टोक नही होनी चाहिए। अर्हन्त की साक्षी से आज तक की सब गलतियो को भूलकर परस्पर क्षमा प्रदान करे तो सब एक हो सकते हैं।"

गोविन्दगढ़, पुष्कर, अजमेर, डीडवाडा, दूदू, गाडोता, बगरू होते हुए माघ कृष्णा ११ को आपने जय-जयकारो की ध्वनियों के साथ जयपुर के लाल भवन में प्रवेश किया। यहाँ पजाब से आ रहे मत्री श्री प्रेमचन्द जी म.सा., पं.फूलचन्द जी म.सा. आदि सन्तो के सम्मुख सतगण गए और सब सत साथ ही विराजे। १६ सन्तो को एक साथ विराजे देख सघ ने हर्ष की अनुभूति की। मुनि श्री प्रेमचन्द जी म ने चरितनायक से पजाब की समस्या और सघ सम्बधी वार्तालाप किया।

माघ शुक्ला २ वि.सं. २०२० दिनांक १६ जनवरी १९६४ को विरक्ता तेजकंवर जी (सुपुत्री सेठ श्री उमराव मल जी) जयपुर की आतिश मार्केट में सविधि दीक्षा सम्पन्न हुई। दो विदेशी व्यक्ति एव जयपुर की महारानी गायत्री देवी भी इस समारोह मे सम्मिलित हुई। जर्मनी के युवक-युवतियो की जिज्ञासाओ का पूज्यप्रवर ने लाल भवन मे समाधान करते हुए मासाहार एव शाकाहार का सही तात्पर्य बताया। फाल्गुन कृष्णा एकम बुधवार को कवि श्री अमरमुनि जी पधारे, जिनके साथ चर्चा मे श्रमण-सघ की स्थिति की समीक्षा की गई।

जयपुर के उपनगरो को फरस कर आप गाडोता पधारे। वहाँ महादेव जी पटेल ने आपकी प्रेरणा से आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। विविध ग्रामो को अपनी पद रज से पवित्र करते हुए आप अजमेर पधारे।

- शिखर सम्मेलन (अजमेर)

यहाँ अधिकारी मुनियो का शिखर सम्मेलन आयोजित हुआ, जिसमे अनेक मुद्दो पर विचार किया गया। आचार्यश्री आत्माराम जी म.सा. के स्वर्गस्थ हो जाने के पश्चात् आचार्य का पद रिक्त था। इस सम्मेलन मे उपाध्याय श्री आनद ऋषि जी म.सा को श्रमण सघ का आचार्य मनोनीत किया गया। फाल्गुन शुक्ला एकादशी रविवार को उन्हे अजमेर मे ही समारोह पूर्वक आचार्य पद की चादर ओढ़ायी गई।

चरितनायक का यहाँ प्रवर्तक श्री पन्नालाल जी म.सा और अन्य विराजित सन्तों के साथ सघ विषयक विचार-विमर्श हुआ। ध्वनियत्र प्रयोग सम्बंधी विचार भी हुआ जिसमे सभी ने इसका निषेध किया।

तबीजी, जेठाणा, खरवा होते हुए आप ब्यावर पधारे। यहाँ आपका प्रवर्तक श्री मिश्रीमलजी म. मधुकर से मधुर मिलन हुआ तथा महासती जी श्री जसकंवर जी ने भी आपकी सेवा व सान्निध्य का लाभ लिया। द्वितीय चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को महावीर जयन्ती पर आपने अस्वस्थ होते हुए भी प्रवचन मे फरमाया – "जयन्ती के विविध बाहरी रूप तो आप प्रस्तुत करते हो। हमे उसके अन्तररूप का भी विचार करना चाहिए। महावीर ने बोलने के पहले

धर्म का आचरण किया । उसका जीवन मे साक्षात्कार कर फिर साढे बारह वर्ष के पश्चात् उपदेश दिया। एक ही उपदेश मे ४४०० प्रतिबुद्ध हो गए। आप भी महावीर जयन्ती पर कुछ क्रियात्मक कार्य करे —१. रात्रि भोज छोड़ें २. शीलव्रत का पालन करें। ३. एक घंटा शास्त्र-वाणी का स्वाध्याय करे एव ४. कटुवचन का त्याग करे।" स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से आप यहाँ पर मासकल्प विराजे।

यहाँ से गोला, नागेलाव, कालेसरा, पीसागण , गोविन्दगढ में धर्मजागृति करते हुए मेवड़ा पधारने पर कई किसान भाइयो ने आपसे कसाइयों को पशु न बेचने व धूम्रपान न करने का नियम लिया। काटो से युक्त मार्ग तय करते हुए पीपल के नीचे रात्रि बिताकर आप मेड़ता पधारे।

ज्येष्ठ कृष्णा प्रतिपदा को चरितनायक मेड़ता मे विराज रहे थे। भारत के प्रधानमत्री प. जवाहरलाल नेहरू का देहान्त होने से दो दिन बाजार बन्द रहे। चरितनायक ने ससार की क्षण भगुरता को देखकर विषय-कषाय घटाने की प्रेरणा की । यहाँ से कुचेरा पधारे, जहाँ स्वामीजी श्री रावतमलजी म. से मेघकुमार के पूर्व भव में समकित प्राप्ति की चर्चा कर आप फिरोजपुर मूडवा, इठ्यासण होकर नागौर पधारे। यहाँ पर आपने व्याख्यान मे फरमाया-"आज का मानव जीवन-शोधन भूल रहा है। **तन पर जरा-सा भी धब्बा लग जाए तो हम उसको साफ करते हैं। लोग प्रतिदिन नहाते-धोते हैं, किन्तु मन पर चारों ओर मैल जमा है, उसकी जरा भी परवाह नही करते। ज्ञान के निर्मल जल में सत्करणी की धुलाई से आत्मा को शुद्ध करो तो कल्याण ही कल्याण है।**" यहाँ पर प्राचीन हस्तलिखित शास्त्रों मे रुचिशील पडितरत्न श्री पद्मसागर जी म आप श्री के दर्शन करने पधारे एवं प्रसन्न भाव से ज्ञान-चर्चा की। मन्त्री श्री पुष्करमुनि जी म.सा के भी कई दिन व्याख्यान साथ में हुए। दोनो के सान्निध्य से नागौर का सामाजिक तनाव दूर हुआ। यह मिलन आनन्ददायी रहा तथा कई विषयो पर चर्चा हुई।

खजवाणा, रूण, नोखा, हरसोलाव, बारणी एवं नारसर फरसकर आषाढ शुक्ला ९ को चरितनायक भोपालगढ़ पधारे।

• भोपालगढ चातुर्मास (सवत् २०२१)

विक्रम सवंत् २०२१ मे आपका चौवालीसवाँ चातुर्मास भोपालगढ़ मे हुआ, जहाँ सामायिक व स्वाध्याय का शखनाद फूकने के साथ आपने व्याख्यान में निम्नाकित पॉच नियमो के संकल्प की प्रेरणा दी—

१ मुनि-दर्शन को जाते समय मिठाई का त्याग।

२ सामूहिक रात्रि-भोजन का त्याग।

३ मास मे कम से कम एक एकाशन करना।

४ सामायिक में हेण्डलूम या खादी के अलावा मिल आदि के वस्त्रो का त्याग।

५. डोरा टीका की माँगनी का त्याग।

यहाँ पर लगभग २५ अठाई तप और ३ मासखमण तप हुए। तपस्या की झड़ी सी लग गई । तीन दिनो मे ही ४२५ व्रत हुए। एक नापित भाई ने ब्रह्मचर्य की महिमा सुनकर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। एक हरिजन बहन ने सुश्रावक श्री जोगीदास जी बाफणा की धर्मपत्नी मानकवर जी के मासखमण तप से प्रभावित होकर अठाई तप किया। इस बहन के अठाई तप के पारणे पर हरिजन मंडल ने सामूहिक मद्य-मास का त्याग किया। गुरुदेव के श्रीमुख से अनेक श्रावको ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। विद्यालय के बालकों ने भी दयाव्रत आदि मे भाग

लिया।

इस चातुर्मास मे एक महत्त्वपूर्ण योजना जैन धर्म के मौलिक इतिहास के लेखन की बनी जिसके अनुसार भाद्रपद कृष्णा १३ शुक्रवार को इसका लेखन कार्य भी प्रारम्भ कर दिया गया।

आचार्यश्री ने समागत जैन विद्वान् हरीन्द्रभूषण जी को प्रेरणा करते फरमाया – "जो विद्वान् सस्कृत प्राकृत आदि भाषाओं के ज्ञाता हैं, उन्हे इन भाषाओ मे रचना करना चाहिए। अनुवाद के आधार पर शोध-कार्य तो अन्य विद्वान् भी कर लेगे पर इन भाषाओ मे मौलिक लेखन तो इनके विशेषज्ञो द्वारा ही सम्भव है। इन भाषाओं की अप्रकाशित पाण्डुलिपियो के सम्पादन का कार्य प्राथमिकता के तौर पर किया जाना चाहिए। लेखन के साथ-साथ सस्कृत-प्राकृत की रचना-धर्मिता को जीवित रखने के लिए यह आवश्यक है।"

पूज्यप्रवर ने सस्कृत-प्राकृत की पत्रिका की भी आवश्यकता प्रकट की। उल्लेखनीय है कि पूज्यश्री की यह प्रेरणा कालान्तर में 'स्वाध्याय शिक्षा' पत्रिका के रूप मे सफल हुई।

पूज्यश्री ने नारी शक्ति को सगठित होने की प्रेरणा दी, जिसके फलस्वरूप महावीर जैन श्राविका सघ का गठन हुआ। उन्होने आह्वान किया -'नारी शक्ति कुरीतियो से मुक्त होकर अपना सर्वागीण आध्यात्मिक विकास करे।' आपके इस आह्वान एव नारी-शिक्षण की प्रेरणा के फलस्वरूप सैकड़ो-हजारो बहनो का जीवन बदला है और उन्होंने अपने जीवन का विकास किया है।

इस चातुर्मास मे पूज्यप्रवर की प्रेरणा से युवक सघ का गठन हुआ जिसके अन्तर्गत युवक सम्मेलन आयोजित हुआ और उसमे कई क्रान्तदर्शी निर्णय लिये गये।

आचार्यप्रवर ने युवको को सम्बोधित करते हुए फरमाया –"आप मे शक्ति है, जोश है, पर ध्यान रखिएगा अपनी शक्ति का दुरुपयोग न हो और जोश मे आप अपने होश को न भूल जाए। आपकी शक्ति सदैव रचनात्मक कार्यों मे लगनी चाहिए। आज की युवा पीढ़ी जिस तरह फैशन, विदेशी सस्कार, व्यसन, नशा, होटलो- टी.वी., सिनेमा आदि की शिकार हो रही है, आपको उससे बचकर रहना है। आप मादक पदार्थो के सेवन तथा अन्य व्यसनो से दूर रहे। अपने जीवन मे सादगी और अपने खान-पान मे सात्त्विकता बरते।"

बालको को सस्कार देने हेतु आपने चार नियम कराये – १ चोरी नही करना २ नशा नही करना ३ गाली नही देना और ४ नमस्कार मन्त्र का जाप करना। अनेक स्थानो से श्रद्धालु श्रावक - श्राविकाओ ने आकर त्याग-तप एव व्रत-नियम अगीकार किए।

स्वाध्याय का महत्त्व आप श्री के रोम-रोम में व्याप्त था। आपने एक दिन श्रावक-समाज को उद्बोधन देते हुए फरमाया–"स्वाध्याय वर्तमान समय की प्रथम आवश्यकता है। इसके लिये रुचि का जागृत होना आवश्यक है। लोकाशाह ने अपने स्वाध्याय के बल पर शासन मे बडी क्रान्ति उत्पन्न की, तब स्वाध्याय के लिए आज जैसे ग्रथादि भी सुलभ नही थे, किन्तु जिज्ञासा ऐसी थी कि आपके पूर्वज श्रावक लोकाशाह के घर जाकर धर्म श्रवण करते थे। आज आपको स्वाध्याय के लिए विशाल सामग्री तो उपलब्ध है, पर जिज्ञासा की कमी है। आपको जिज्ञासा जागृत करनी चाहिए, रुचि बढ़ानी चाहिए।"

सम्पूर्ण चातुर्मास स्थानीय श्रावकों के उत्साह एव उमग के साथ सम्पन्न हुआ। यह चातुर्मास धार्मिक, सामाजिक एव शैक्षिक दृष्टियो से अत्यन्त उपलब्धि पूर्ण रहा। विदाई के समय विद्यालय के बालको सहित लगभग तीन हजार नर-नारियो का विशाल समूह जय जयकार करता हुआ साथ चल रहा था, जो अपने आप मे अपूर्व था।

• जोधपुर एवं पाली की ओर

भोपालगढ़ से विहार कर खागटा मे ३२ वर्ष के तरुण नथमलजी कोठारी को आजीवन शीलव्रत का प्रत्याख्यान कराकर आप रणसीगाव , पीपाड़, बिसलपुर, पालासनी आदि ग्रामो मे जिनवाणी का अमृतरस पान कराते हुए पौष शुक्ला पचमी ८ जनवरी १९६४ को जोधपुर पधारे।

पौष शुक्ला १४ सवत् २०२१ को चरितनायक की जन्म जयन्ती जोधपुर मे प्रवर्तक पण्डित श्री पुष्कर मुनिजी महाराज आदि के सह-सान्निध्य मे तप-त्याग पूर्वक मनाई गई। चरितनायक ने इस अवसर पर फरमाया कि मेरा जीवन-लक्ष्य सामायिक-स्वाध्याय है। चतुर्विध सघ के सहकार से यदि मैं सामायिक-स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार का अपना उद्देश्य पूर्ण कर सका तो जीवन की सफलता समझूँगा। प. श्री लक्ष्मीचन्दजी म.सा. एव श्री मगनमुनि जी की चिकित्सा के कारण आप जोधपुर में लगभग साढे तीन माह विराजकर स्वाध्याय, सामायिक एव धर्म प्रवृत्तियो का वर्धापन करते रहे। सरदारपुरा मे माघकृष्णा द्वादशी २९ जनवरी १९६५ को आपने प्रवचन मे फरमाया - **"राजशासन के लिए कोष और सैन्यबल समृद्ध होना अपेक्षित है। वैसे ही धर्मशासन में चारित्र कोष और श्रावक हमारी सैन्य शक्ति है। इनमें निष्ठा एवं व्यक्तिगत मोह से ऊपर उठकर शासन के प्रति वफादारी होनी चाहिए। सम्मेलन के नियमों का जो पालन करे उन्ही को साधु मानना चाहिए। श्रमणों को आचारधर्म का प्रामाणिकता से पालन करना चाहिए। आचार ही शासन की निधि है। हमें संगठन या सुधार के नाम पर संयम या आचार को नही झुकाना है। ज्ञान, क्रिया, विचार या आचार की तुलना में आचार के बिना विचार निर्मूल्य हैं।"** मेवाड़ प्रान्तमन्त्री श्री पन्नालालजी म.सा की सम्प्रदाय की वयोवृद्धा महासतीजी श्री धनकुँवरजी ८० वर्ष की अवस्था में भी ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई आपके दर्शनलाभ कर प्रमुदित हुई।

जोधपुर से लूणी पधारते समय मार्ग मे आपका यति भेरूजी से वार्तालाप हुआ। एक वैष्णव साधु की हाथी पर सवारी निकल रही थी, आचार्य श्री को देखकर वह हाथी से उतरा, वन्दन किया और कहा कि मैंने आपके प्रकाण्ड पाडित्य, प्रवचन-पटुता और वाग्वैभव आदि गुणो की यशोगाथाएँ सुन रखी थी, आज आपके दर्शन कर मै धन्य धन्य हो गया।

अक्षय तृतीया पर पाली के पचायती नोहरे मे वर्षीतप के पारणे हुए। चरितनायक ने यहाँ प्रवचन मे प्रेरणा दी कि वैशाख शुक्ला एकादशी शासन जयन्ती के रूप मे मनाई जानी चाहिए। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी महावीर के भौतिक पिण्ड का जन्म-दिन है जबकि वैशाख शुक्ला एकादशी महावीर की महावीरता का जन्म-दिन है। जन्म-जयन्ती लौकिक मंगल है तो शासन जयन्ती लोकोत्तर मगल है। इससे आचार्य श्री के मौलिक चिन्तन का बोध हुआ। पाली से पुनायता, केरला, गढवाडा, जेतपुरा आदि को फरसते हुए आप माडावास पधारे। यहाँ पर मदिरमार्गी व स्थानकवासियों में मनमुटाव था। आपस में हुई गलत फहमियों को दूर करने हेतु गुरुदेव के द्वारा प्रेरणा की गई, जिससे परस्पर शीघ्र ही सुलह हो गई। यहाँ से आप गेलावास, ढीढस (यहा श्री चुन्नीलालजी ने शीलव्रत अगीकार किया), मजल, कोठड़ी, राणी दहिपुरा एवं दसीपुरा पधारे, जहाँ १५ वर्ष के भेरू ने १० वर्ष शीलपालन का नियम लिया। यहाँ से समदड़ी में पुष्करमुनिजी म. से विचार-विमर्श कर देवेन्द्र मुनिजी को साहित्य एव अध्ययन लेखन की प्रेरणा करके आप करमावास, राखी, मोकलसर होते हुए वीर दुर्गादास की ऐतिहासिक भूमि सिवाना पधारे, जहाँ आपको विदित हुआ कि सिवांची क्षेत्र के १४४ ग्राम पारस्परिक कलह में डूबे हुए हैं। पूज्य प्रवर ने इस कलह को

दूर करने का मन मे दृढ़ सकल्प कर लिया एव कलह - निवारण न होने तक दुग्ध - सेवन का त्याग कर दिया, जिसका सन्तो के अतिरिक्त किसी को भी पता नही था। तप का अपना प्रभाव होता है। गुरुदेव सन्तमण्डली के साथ चातुर्मासार्थ बालोतरा पधारे।

- बालोतरा चातुर्मास (संवत् २०२२)

सवत् २०२२ के बालोतरा चातुर्मास मे पूज्यश्री ने सिवाची क्षेत्र मे व्याप्त इस पारस्परिक मतभेद को दूर करने हेतु प्रयत्न किए, जो सफल रहे। यहाँ के कलह की यह स्थिति थी कि रोटी बेटी का व्यवहार बद था। वधू को लाने गया हुआ जामाता ससुराल का अन्न-जल भी ग्रहण नही कर सकता था तो लाडले भय्या को राखी बांधने पितृगृह आई हुई बहिन, पितृगृह मे पानी भी स्वीकार नही कर सकती थी। गुरुदेव की भावना थी कि ये टूटे तार फिर से जुड़ जाने चाहिए। इसके लिए आपने समाज-प्रमुखो को समझाया। प्रवचन भी क्रोध-कलह के शमन एवं प्रेम-भाव की अभिवृद्धि को लक्ष्य में रखकर फरमाये। आपने फरमाया कि धर्म ऋजु हृदय मे ठहरता है और ऋजु होने के लिए कलह-द्वेष का निराकरण आवश्यक है। समाज में एक-दूसरे पर विश्वास आवश्यक है। शरीर में आख मे चूक से कभी पैर मे काँटा लग जाय तो क्या पैर आख पर भरोसा नही करेगा ? और क्या आँख पैर का काटा निकालने मे सहयोग नही करेगी ?

पूज्यपाद गुरुदेव ने फरमाया कि मनुष्य मे इतना प्रेम क्यो नही कि वह दूसरे के हृदय मे स्थान बना सके। छोटा सा कीड़ा पत्थर मे घर कर लेता है। वह इंसान क्या जो दिल में घर न कर सके। आचार्य श्री यहॉ पर प्रतिदिन प्रवचन मे कषाय शमन की प्रेरणा करते थे। वह प्रेरणा हृदयस्पर्शी बन गई। चरितनायक ने बालोतरा के प्रमुख श्रावक श्री बच्छराजजी अन्याव को दायित्व बोध कराते हुए फरमाया —"अन्याव जी ! समय बीत जाएगा, मात्र यश-अपयश शेष रहना है। आप इस प्रकरण मे अपनी भूमिका निभाकर क्षेत्र को लाभान्वित करे।" अन्यावजी ने आपके शान्ति व प्रेम के सदेश को हृदयगम कर समाज प्रमुखो को बुलाकर बातचीत करना प्रारम्भ किया। जोधपुर के वकील श्री सपतमलजी व गणपतचन्दजी को मध्यस्थ तय किया गया।

चरितनायक ने समाज एव मध्यस्थों का मार्गदर्शन करते हुए फरमाया —"जैन धर्म अनेक दृष्टियो और वस्तु को भीतर-बाहर दोनो दृष्टि से निर्णय करने को कहता है। इसके सन्देशानुसार चलने से सघर्ष नही होता। जातीय खार मिटाने हेतु दो धाराओ को नदी के रूप मे प्रवाहित करना है। छोटा सा किसान भी धारा के बीच की मिट्टी को अलग कर दे तो दोनो धाराएँ एक हो जाती हैं। आपने चतुरविज्ञानी व शोधक बुलाये है। उन्हें खारे स्रोत के स्थान पर मीठे पानी का स्रोत निकालना है। आप उनके सहायक होगे, शान्ति बनी रहे। मध्यस्थ मध्य मे रहने वाले होते हैं। उनको सबकी सुनकर मन की करना है। समाज के हित की करना है, दोनो को थोड़े निकट लाना है। आशा ही नही, पूरा भरोसा है कि मध्यस्थ समाज की समस्या को सुलझा कर सर्वांग पूर्ण निर्णय देंगे। भविष्य की बाधा की रोकथाम करेगे।'

इस कलह को दूर करने हेतु पहले विभिन्न सम्प्रदायो के महापुरुषो ने प्रयत्न किया, किन्तु सिवांची पट्टी के लोग अड़े रहे। अन्त मे चरितनायक के द्वारा स्नेह एव सद्भाव के लिए की गई प्रवचनामृत रूपी औषधि ने मनमुटाव के विष को धो दिया।

चरितनायक के प्रवचनामृत से प्रभावित होकर श्री बच्छराज जी अन्याव के साथ श्री बादरमलजी अन्याव, श्री धनराजजी चोपड़ा, श्री भीकमचन्दजी सिवाणा, श्री आसाराम जी, श्री श्रीमलजी हुंडिया, आहोर के श्री हजारीमल जी,

मुकनजी आदि भी आगे आए।

मध्यस्थगण श्री सम्पतमलजी एव श्री गणपतचन्दजी ने समत्वसाधक चरितनायक के मैत्री एव समरसता के सन्देश के अनुसार समाधान निकालने हेतु सबकी बात सुनकर समझकर सुलह का फैसला सुनाया तो समूचे सिवाची क्षेत्र में प्रेम व हर्ष की लहर दौड़ गई। सभी युगमनीषी चरितनायक का उपकार मान रहे थे। सर्वत्र एक ही चर्चा थी कि जो कार्य अनेक प्रयासों से नही हो पाया, वह इन आबाल ब्रह्मव्रती महापुरुष के पदार्पण व अतिशय से सहज ही सम्पन्न हो गया। धन्य है महापुरुष जिनके चरण जिस ओर भी अंकित हो जाये वहा कलह अशान्ति रह ही नही सकते। समाज में छायी शान्ति, प्रसन्नता व मैत्री भाव के संचरण से चरितनायक को भी प्रमोद व स्वाभाविक सन्तोष था। झगड़ा प्रेम में बदल गया, पारस्परिक क्रोध का शमन हुआ, शान्ति सरिता लहराने लगी, स्नेह सद्भाव के तराने गूजने लगे।

सितम्बर १९६५ मे सीमा पर भारत की सेनाएं आक्रान्ता पाक सेनाओं का सामना करते युद्धरत थी। पाकिस्तान द्वारा जोधपुर तक अपने युद्धक विमानो द्वारा बम वर्षा की जा रही थी। जोधपुर के लोग भयाक्रान्त थे। हजारो की सख्या मे नागरिक जन सुरक्षित स्थानो की चाह व मृत्युभय से जोधपुर छोड़ चुके थे। जैसे ही रात्रि होती, नगर जनो मे एक ही आशका थी कि न जाने कल का प्रभात देख पायेगे या नही? कहीं आज की रात्रि काल रात्रि बन कर हम नगरवासियो को सामूहिक रूप से अपने आगोश में न ले ले।

ऐसे समय मे देश के कोने-कोने मे रहे हुए हजारो लाखो भक्तो के मन के किसी कोने मे अपने आराध्य गुरु भगवत के बालोतरा विराजने से अनेक आशकाए व दुश्चिन्ताए जन्म लेना सहज स्वाभाविक था। अन्य महापुरुषो के मन मे भी पूज्य श्री के कुशल-मगल के बारे मे चिन्ता लगी रहती थी। स्वय परम पूज्य आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी महाराज साहब का परामर्श था कि ऐसी स्थिति मे पूज्य श्री बालोतरा से अन्यत्र विहार कर दे तो आपवादिक स्थिति मे शास्त्रीय मर्यादा के निर्वहन मे कोई बाधा नही है। पर स्वय भगवन्त के मन मे तो कोई ऊहापोह नही था, उन्हे तो अपने आत्मबल पर पूर्ण विश्वास था, अपनी सयम-साधना के सुरक्षा कवच में यह महापुरुष अडोल अकम्प था। आपवादिक परिस्थितियो मे भी उनके मन में अन्यत्र विहार करने की कल्पना भी न थी।

भेद विज्ञान का ज्ञाता जीवन-मरण की चिन्ताओ से परे, साधना सुसम्पन्न, संयम व्रती महापुरुष तो विपरीत परिस्थितियो में दृढ रहे सभव है, पर बालोतरा के दृढ आस्तिक गुरु भक्तो के ही नही वरन् सामान्य-जन के मनो में भी न तो कोई चिन्ता थी , न कोई ऊहापोह। यद्यपि जोधपुर बम वर्षा करने आने वाले पाक विमानो का मार्ग बाड़मेर के सीमान्त जिले से ही था, युद्धक्षेत्र सन्निकट ही था, पर बालोतरावासियो को तो मृत्यु का भय छू भी नही पाया था। वे तो अभय थे। उनके मन मे सहज विश्वास था कि असंख्य देवी-देवताओ द्वारा स्मरणीय पच परमेष्ठी मत्र के तृतीय पद का धारक, जिनशासन का अनुशास्ता, अभय का देवता एव प्राणिमात्र के हित को चाहने वाला, भगवत् तुल्य महायोगी हमारे यहा साक्षात् विराजमान हो जिनवाणी की पवित्र गगा प्रवाहित कर रहा है तो मृत्यु हमे भला छू भी कैसे सकती है, क्योकि जहॉ जहॉं महापुरुष विराजते हैं, वहॉं वहॉ विपत्तियॉं या प्राकृतिक आपदाए प्रवेश भी नही कर पाती। परम पूज्य भगवन्त के प्रति ऐसी जन आस्था जिनशासन की महिमा बढ़ा रही थी व सुदूर बैठे भक्तों की आशकाओ को निर्मूल कर उन्हे भी परम पूज्य की छत्रछाया के रक्षा कवच मे आने को प्रेरित कर रही थी।

गुरुदेव ने सभी को साहस बंधाते हुए फरमाया कि आप सब धैर्य रखे। कुछ भी नही होगा और यही हुआ,

खाइयाँ खुदी की खुदी रह गई और सुरक्षा परिषद् ने ४८ घटों में युद्ध बन्द का आदेश दे दिया। चरितनायक का यहाँ पर लेखन कार्य चलता रहा। धर्म श्रद्धालुओं का दूर-दूर से आवागमन रहा तथा बहुविध तप-त्याग से चातुर्मास पूर्ण सफल रहा। इन क्रियानिष्ठ ज्ञान के सगम, प्रबल पुण्यवानी व अतिशय के धनी महापुरुष के प्रति जिन धर्मानुयायी ही नही, समूचा बालोतरा नगर श्रद्धा व समर्पण से नत मस्तक था। चारों माह की अवधि तक सभी ने चरितनायक व संत मुनिराजो के ज्ञान क्रियासम्पन्न जीवन को देखा था, उनकी पातक प्रक्षालिनी वाणी का श्रवण किया था व उनके साधनातिशय का प्रत्यक्ष अनुभव किया था। जन - जन के मन-मन्दिर के वे आराध्यदेव थे, जिनकी प्रेरणा पर वे सब कुछ समर्पण करने को तत्पर थे। भक्तो के इस श्रद्धा समर्पण व भक्ति को चरितनायक ने सामायिक-स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार से जोड़ने का अभिनव प्रयास किया। कहना न होगा बालोतरा क्षेत्र को धर्म क्षेत्र के रूप मे प्रतिष्ठित करने मे यह चातुर्मास मील का पत्थर साबित हुआ।

आपने कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा को लोकाशाह जयन्ती के अवसर पर फरमाया कि लोकाशाह ने स्वाध्याय के बल से ज्ञान प्राप्त कर क्रान्ति का शख फूका। आज भी उसी स्वाध्याय और क्रान्ति की आवश्यकता है।

*

गुजरात की भूमि पर

(संवत् २०२३)

बालोतरा से विहार कर विभिन्न ग्रामों को अपनी पद रज से पावन बनाते हुए चरितनायक सुदूरवर्ती रेगिस्तानी क्षेत्र बाड़मेर पधारे। यहाँ लम्बे समय के बाद क्रियानिष्ठ सतो का पदार्पण हुआ था। सच्चे सयम आराधक सतों के सान्निध्य के अभाव मे लोग सामायिक स्वाध्याय आदि सम्यक् आराधना की बजाय द्रव्य परम्पराओ की ओर आकर्षित व समर्पित हो रहे थे। ऐसे समय मे भगीरथ के समान इस रेतीले प्रदेश मे आपका पदार्पण हुआ। आपके श्रीमुख से जिनवाणी का पान कर लोग पुन. शुद्ध परम्परा मे दृढ हुए। धर्माचरण मे शिथिल हुए लोग पुनः स्थिर बने। कहना न होगा आपने पधार कर सुप्त लोगो को पुनर्जागृत किया, धर्म व आचार के शुद्ध स्वरूप का लोगों को पुन बोध कराया। आपकी प्रेरणा से यहा सामायिक सघ की स्थापना हुई। आपने यहाँ शास्त्र भडार का अवलोकन भी किया। बाड़मेरवासियो को धर्मोपकार से उपकृत कर आप ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए सिणधरी पधारे। अचला जी जाट ने आजीवन शीलव्रत का नियम लिया एवं कई चारण और जाट लोगो ने तम्बाकू, बीड़ी आदि के त्याग किये। वहॉ से पायला, नादिया, मोरसीम, बाली, झाब होते हुए आप साचोर पधारे, जहाँ सामायिक सघ की स्थापना हुई एव एक दिन मे १००० सामायिके हुईं। यहाँ से धानेरा, डीसा आदि विभिन्न क्षेत्रो मे धर्मजागृति करते हुए आप गुजरात पधारे। आपने कई स्थानो पर व्यसन-त्याग कराये तथा सामायिक एव स्वाध्याय की प्रेरणा की। धानेरा मे आपने फरमाया – **"सामायिक विश्वकल्याण की साधना है। दुःख का मूल ममता है और उसके उच्छेद का उपाय समता है। सामायिक मन की विषमता मिटाने का प्रमुख उपाय है।"** आपकी प्रेरणा से डीसा मे ९ भाई साप्ताहिक सामूहिक स्वाध्याय के लिए तैयार हुए।

पालनपुर के ज्ञान भंडार मे आपने भूधरवंशी सन्तो के लिखे कई शास्त्रों का अवलोकन किया और संवेगी उपाश्रय के ज्ञान भण्डार की करीब १६००-१७०० प्रतियां (४१ डिब्बो में) देखकर आप प्रमुदित हुए। यहाँ पर जैन दर्शन में भक्ति के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए आपने एक दिन फरमाया - **"हमारी मूल परम्परा में भक्ति को विनय शब्द से कहा है । विनय में स्व-पर के हित का खयाल होता है। वहाँ मोह नही होकर गुणानुराग होता है। भक्त भजनीय के स्वरूप में अपने को एक रूप करता जाता है।"**

इसके अनन्तर १२ दिनो के प्रवास मे पाटण के प्राचीन ग्रन्थ भण्डारो के सिंहावलोकन मे गुरुदेव ने १४वी एवं १५ वी शती की दो ताड़पत्रीय प्रतियाँ देखी। सवत् ११८८ की प्राचीन प्रति, कतिपय प्रशस्तियाँ, तेलगू लिपि के कई ग्रन्थ एव लगभग डेढ़ हजार ग्रन्थ सुरक्षित देखकर आप अत्यत प्रमुदित हुए। विमलगच्छ के भण्डार मे तीन हजार हस्तलिखित प्रतियाँ, ज्ञानमंदिर मे १३ हजार प्रतियाँ, श्री विमल उपाध्याय भण्डार मे तीन हजार ग्रन्थो (संवत् १५२२ स्वर्णाक्षरी कल्पसूत्र सहित) का अवलोकन कर पाटण के ताड़पत्रीय संग्रह से आपश्री अत्यधिक पुलकित हुए। इसमें मुनि पुण्यविजयजी का पूरा सहयोग रहा। चरितनायक यहाँ से धीणोज, मेहसाणा, धोलासण, झूलासण होकर कलोल पधारे। कलोल मे आपसे पूज्य श्री चुन्नीलालजी म. एवं महासती ताराबाई का मिलन हुआ। सुशील मुनि जी

अगवानी में आए। अडालज में आपका श्री पारस मुनिजी के साथ प्रवचन हुआ। यहाँ से पूज्यवर्य साबरमती पधारकर चैत्र शुक्ला ४ संवत् २०२३ को बुधाभाई आगममदिर शान्तिनगर स्थानकवासी जैन सोसायटी पधारे।

यहाँ पर प्रवचन मे आपने पुण्य-पाप का विवेचन करते हुए फरमाया - **"नादान भुगत करणी अपनी। पाप लोहे की बेड़ी और पुण्य सोने का कड़ा है। मनुष्य गति , पंचेन्द्रिय जाति आदि का लाभ पुण्य का फल है। बाह्य साधन पाकर भी सत्कर्म में रुचि नहीं होना, यह पाप का फल है। ब्रह्मदत्त को छः खण्ड का राज्य मिला। चित्तमुनि जैसे ज्ञान देने वाले मिले, पर वह आर्यकर्म भी नही कर सका, व्रताराधन नहीं कर सका - यह पाप का उदय है। पुण्यानुबंधी पुण्य मनुष्य को धर्म के अभिमुख करता है, यही उपादेय है ।"** आप आगम-टीकाकार पूज्यश्री घासीलाल जी म.सा के दर्शनार्थ सरसपुर पधारे, जहाँ पूज्यश्री घासीलाल जी म सा. ने स्वय सामने पधार कर दर्शनो की कृपा की और भावभीने गुणाष्टक द्वारा चरितनायक का स्वागत किया। पूज्य श्री घासीलाल जी म सा ने फरमाया-"पुरुषों मे हस्ती की समानता नही। समाज मे मैंने तीन रत्न पाए-श्री आत्मारामजी महाराज, श्री समर्थमल जी महाराज और मेरे पास बैठे श्री हस्तीमल जी म। पुरुषो में गन्धहस्ती ही ग्राह्य है जिनके प्रताप से दूसरे गज भाग जाते हैं, सामना करने की और खड़े रहने की भी उनकी ताकत नही। इन हस्तीमल जी को मैंने आज ही देखा। पहले सुना करता था कि मारवाड़ मे ऐसा तेजस्वी साधु है। (विनोद में कहा) उन्हें मैं क्या कहूँ ? जोधपुर का राजा कहूँ या नव कोटि मारवाड़ का सरताज।" यह कहते हुए उन्होंने संस्कृत में स्वरचित प्रशस्ति सुनाई जिसे बाद में चरितनायक को अर्पित किया। पूज्य श्री घासीलालजी म सा द्वारा अर्पित गुणाष्टक का प्रथम पद्य इस प्रकार है —

> असार ससार वदन्ति सकला आशयमिति नो
> बुध बाह्या अटस्मा सकलजनताबोधनपर ।
> नदीय सद्वाक्य प्रकटति महिमा कोऽप्यनुपमा,
> गणी हस्तिमल्ल शमितकलिमल शुभमति ॥

इस ससार को सब मनुष्य असार अर्थात् मिथ्या कहते हैं, किन्तु इसके सच्चे तात्पर्य को नही समझाते हैं। बुद्धिमान् मनुष्यो मे ज्ञानी मनुष्य ही इसके सत्य स्वरूप को समझाते है। जिनकी सद्वाणी मे कोई अनुपम महिमा प्रकट होती है, ऐसे शुभ बुद्धि के धारक आचार्य श्री हस्तीमल जी को देखकर कलियुग के पाप स्वय शान्त हो जाते है। इस प्रकार अपने भाव बतलाकर आपने प्रसन्नता प्रकट की कि ऐसे शान्त शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार विचरने वाले गणीजी से मेरा मिलन हुआ है।

नगर सेठ के बडे के स्थानक मे सती विमलाजी मजुलाजी ने चरितनायक आचार्य श्री से दण्डक पर प्रश्नोत्तर किये। आपने यहा १५००-२००० मुद्रित पुस्तको एव कुछ हस्तलिखित प्रतियो वाले गुलाबवीर भण्डार को देखा। छीपापोल मे सती वसुमती जी ने भक्तिगीत प्रस्तुत किया। खेड़ा में शातिमुनि जी से आपकी बातचीत हुई।

२० अप्रेल १९६६ को समुद्रतट के किनारे रत्नपारखी नगर खम्भात मे चरितनायक के स्वागतार्थ आचार्य श्री कान्तिऋषि जी पधारे। आपश्री ने ज्ञान-भडारो का निरीक्षण किया। कपाटो मे बन्द ग्यारह अग, उपाग, कल्पसूत्र कर्मग्रन्थ आदि की लगभग २० हजार प्रतियाँ थी। प्रत्येक प्रति अलग कपड़े में बंधी हुई देखी। आपने भण्डार के कई डिब्बो का अवलोकन किया।

अक्षयतृतीया के दिन आठ वर्षीतप आराधको का पारणक हुआ। आप श्री ने प्रवचन मे फरमाया कि भगवान आदिनाथ ने जिस प्रकार इक्षुरस का पान किया उसी प्रकार अपने को ज्ञानरस का पान करना चाहिए। यहा आपकी

संवेगी साधुओं से स्नेह वार्ता हुई। सामायिक सघ के संयोजक श्री चुन्नीलाल जी ललवाणी ने एक दिन व्याख्यान में सामायिक संघ का परिचय दिया। यहाँ पर चरितनायक द्वारा ताडपत्रीय भण्डार का अवलोकन भी किया गया। चरितनायक जहाँ भी पधारते उस ग्राम-नगर के ज्ञान-भण्डार का अवलोकन किए बिना नही रहते। साहित्य एव ज्ञान के प्रति आपकी लगन अनुपम थी। कान्ति ऋषि जी ने आपकी प्रेरणा से लेखन का अभ्यास प्रारम्भ किया।

स्वाध्यायियो को शान्ति सैनिक की संज्ञा देते हुए आपने स्वाध्याय मण्डल के गठन की प्रेरणा की। प दलसुख भाई मालवणिया चरितनायक के दर्शनार्थ पधारे। जैन दर्शन पर ज्ञान-चर्चा खम्भात का अविस्मरणीय प्रसग रहा। आपने उनके साथ सीमन्धर और स्तम्भन पार्श्वनाथ के प्राचीन मन्दिर की कलाकृति देखी एव नयी शाला में शिक्षार्थियो को पढाते हुए सन्तो से मिले। चरितनायक ने खम्भात प्रवास के दौरान यहाँ की स्थिति पर टिप्पणी करते हुए लिखा है –"**धर्मशासन में शिथिलता का इतना प्राबल्य है कि शीघ्र ही किसी महापुरुष को क्रान्ति करनी पड़े। महिमा-पूजा का रोग फैल. चुका है।** " प्रेम सूरि शिक्षायतन मे छात्रों को सम्बोधित करते हुए आपने फरमाया कि अर्थ से अधिक धर्म को महत्त्व देना चाहिए। भरत का उदाहरण देते हुए फरमाया कि वह चक्ररत्न को छोड़कर प्रभुवन्दन को गया। आपश्री खम्भात मे लगभग एक माह विराजे। खम्भात से विहार कर आप अगास आश्रम आए। यहाँ पूज्यपाद ने उपदेश माला और उपदेश तरगिणी पुस्तको का वाचन किया। वहाँ से आप आणद मे वीरवाणी का प्रचार करते हुए नडियाद, सधाणा, वारेजा, बटेवा, मणिनगर होते हुए छीपापोल पधारे, जहाँ इतिहास कार्य के लिए स्थानीय सहकार की प्रेरणा दी।

- अहमदाबाद चातुर्मास (सवत् २०२३)

यहाँ से आपने स्थानकवासी सोसायटी होते हुए विक्रम सवत् २०२३ के चातुर्मास हेतु आषाढ शुक्ला ६ शुक्रवार २४ जून १९६६ को आश्रम भवन मे प्रवेश किया। यहाँ आपकी प. सुखलाल जी सघवी से ज्ञान चर्चा हुई। चातुर्मास मे प रूपेन्द्र कुमार पगारिया ने सेवा का लाभ लिया। एक दिन आप लाल भाई दलपतभाई भारतीय सस्कृति विद्यामन्दिर का अवलोकन करने पधारे, जहाँ आपका प्राकृत एव जैनदर्शन के विद्वान् प. बेचरदास जी एव पं. दलसुख भाई मालवणिया से इतिहास सशोधन के सम्बध मे विचार-विमर्श हुआ। चरितनायक ने उत्तराध्ययन, प्रश्नव्याकरण और भगवती सूत्र से मुँहपत्ती के प्रमाण भी दिये।

यहाँ पर ही २८ जुलाई १९६६ को आपने सम्वत्सरी पर्व के सम्बन्ध मे अपने विचार प्रकट करते हुए फरमाया - "आज हम भगवान महावीर की ज्ञाननिधि के बल से ही अपना जीवन निर्माण करते हुए अपने आचार और विचार में प्रकाश पाते हैं। आगम मे कुछ बातो पर यानी मुक्ति-मार्ग पर स्पष्ट उजाला है , जैसे प्रकाश मे पहाड़ स्पष्ट दिखाई देता है। कुछ बाते ऐसी भी हैं, जिन पर स्पष्ट रूप नही है। जिस बाबत खुली दिशा प्रकट नही की गई वहाँ आचार्य का जीत व्यवहार ही उनके विचारो का निर्णय कहलाता है, जिन्होने प्राचीन परम्परा को लेकर विचारो को सुलझाया है, वही निधि लेकर सघ आज तक चल रहा है।"

यहाँ पर आपका श्री जिनविजय जी से इतिहास के परिचय और परामर्श पर वार्तालाप हुआ और लोंकागच्छ से सम्बंधित सामग्री प्राप्त हुई। चातुर्मास मे पट्टावली का मिलान व सिद्धान्त शतक का अर्थ आदि लेखन-पठन का बहुत काम हुआ। यहां आपने गुजरात विद्यापीठ के संग्रह से योगशास्त्र की पुस्तके देखी। उत्तराध्ययन चूर्णि का वाचन किया। चातुर्मास मे एक दिन आपको सिर में भारीपन व छाती पर दर्द का असर अनुभव हुआ तो भेदविज्ञान ज्ञाता, उन महापुरुष ने यह चिन्तन किया–"मैं यह शरीर नही, मैं तो इसमे अवस्थित चिदानन्द स्वरूप

आत्मा हूँ। मैं तो रोग व शोक से सर्वथा परे हूँ। शुद्ध स्वरूपी आतम राम। रोग रहित मैं हूँ निष्काम। ये रोग और शोक भला मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं।" "रोग शोक नही देते मुझे जरा मात्र भी त्रास, सदा शान्तिमय मैं हूँ, मेरा अचल रूप है खास" इस अध्यात्म चिन्तन से तुरन्त लाभ हुआ व चरितनायक स्वस्थ हो गये। चरितनायक के गायक भक्त दौलतरूपचन्दजी भण्डारी एव विद्वान् स्वाध्यायी पारसमलजी प्रसून भोपालगढ ने यहाँ भी अपने गायन का प्रभाव छोड़ा। चातुर्मास मे सदार शीलव्रत के अनेक प्रत्याख्यान हुए। बाहर से कई प्रमुख श्रावक-श्राविकाओ का आगमन हुआ। यहाँ सामायिक-स्वाध्याय का अच्छा प्रचार हुआ। पूनमचद जी बरडिया जैसे अनेक श्रावको ने इस चातुर्मास मे सक्रिय सेवा का लाभ लिया। चातुर्मासकाल में लगभग १२०० अठाई तप हुए। स्वधर्मी वात्सल्य का लाभ लालभाई ने लिया।

अहमदाबाद मे विविध प्रकार की सत्प्रवृत्तियो मे विस २०२३ का वर्षावास व्यतीत कर चरितनायक ठाणा ७ से मार्गशीर्ष कृष्णा एकम को साबरमती होते हुए जब सरसपुर पधारे तो पूज्य श्री घासीलाल जी म.सा आपका सम्मान एव स्नेह व्यक्त करने हेतु द्वार तक पधारे और प्रार्थना के पश्चात् दो शब्द व्यक्त करते हुए चरितनायक को कल्पवृक्ष की उपमा देकर अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त की। पालड़ी, सरखेज (आचार्य श्री धर्मदासजी म.सा. की जन्म भूमि), नड़ियाद, आणद, वासद एव छाणी होते हुए आपने बड़ौदा की ओर विहार किया। छाणी मे आपका प्रेमविजयसूरिजी से मधुर मिलन हुआ।

आपने बड़ौदा मे श्री आत्माराम जैन ज्ञानमन्दिर मे कान्तिविजयजी और हसविजय जी के शास्त्र सग्रह का अवलोकन किया, जिसमे करीब ८००० हस्तलिखित ग्रन्थ थे। नरसीजी की पोल के सामने स्थित इस ज्ञानमन्दिर की प्रथम मजिल मे मुद्रित ग्रथ और ऊपरी मजिल मे ताडपत्र एव कर्गल लेख है। कुल ६५ ताडपत्र प्रतियॉ तथा नक्शे, चित्रपट और सुवर्णाक्षरी कल्पसूत्र आदि भी हैं। सूचीपत्र स्पष्ट एव लेखनकाल सहित उपलब्ध है। वहॉ पर स्थित प्राच्य विद्या मन्दिर मे आपने तीन दिन पधारकर विभिन्न ग्रन्थो का निरीक्षण किया। इस पुस्तकालय मे जैन ग्रन्थ हजारो की सख्या मे हैं। कहते है कि दस हजार प्रतियाँ इस विद्यामन्दिर को यति श्री हेमचन्द जी ने दी है। यहां आपने स्थानकवासी तेजसिंह गणी जी की कई रचनाएँ देखी एव १७ प्रशस्तियो का लेखन किया।

आप बड़ौदा मे १५ दिन विराजकर छाणी, वासद आदि ग्रामो को फरसकर २६ जनवरी को प्रातीज पधारे जहाँ धार्मिक पाठशाला प्रारभ हुई। मास्टर चदूलाल जी ने शाला मे शिक्षण प्रारभ किया। गणतन्त्र दिवस के दिन श्रावकों की सख्या उत्साहजनक थी। यहाँ बुद्धिसागरसूरि जैन ज्ञानमन्दिर का अवलोकन करते समय आपने आर्यामहाकंवर का निरयावलिका सूत्र स १७७९ का लिखा हुआ देखा। यहा आपने ढुंढकरास का अध्ययन कर उसका सार लिखा। गुजरात मे ज्ञान भण्डारो से इतिहास विषयक सामग्री मिली। अध्यात्मरसिक एव आत्मलक्ष्यी सन्त होते हुए भी इतिहास मे आपकी गहन रुचि थी। हिन्दी, प्राकृत, संस्कृत के साथ प्राचीन भाषा एवं लिपि के आप विशेषज्ञ थे। इस प्रवास में आपने 'जैनाचार्य चरितावली' का पद्यबद्ध लेखन किया एवं जैनधर्म का मौलिक इतिहास प्रस्तुत करने हेतु आपके प्रयासो को बल मिला।

■

जयपुर, पाली, नागौर एवं मेड़ता के चातुर्मास (संवत् २०२४-२०२७)

- **उदयपुर की ओर**

राजस्थान मे दीक्षा की सम्भावना के कारण प्रान्तीज से सताल, हिम्मतनगर, आगियोल, रूपाल , सरडोई, टीटोई, सामलाजी, बीछीवाड़ा खेरवाड़ा, ऋषभदेवजी (संवत् १७५४ काष्ठा सघ का शिलालेख नोट किया), प्रशाद, टीडी आदि ग्राम-नगरों को सम-विषम मार्गों से पावन करते हुए माघपूर्णिमा सवत् २०२३ को आपका मेवाड़ की धरा उदयपुर मे आगमन हुआ। यहाँ पर आप भोपालपुरा के गाँधीधाम में विराजे। यहाँ महासती शीलकवरजी एव अन्य साध्वियों ने चरितनायक के दर्शन किये तथा प्रान्तीज आदि स्थानो के श्रावक दर्शनार्थ आए। अस्वस्थ सतियो (कौशल्याजी व समर्थमल जी म सा की सतियो) को दर्शन देने आप स्वय पधारे। महासती कुसुमवतीजी के पधारने पर अनुयोगद्वार सूत्र के प्रश्नोत्तर हुए।

उदयपुर मे मास्टर पूनमचन्दजी, बम्ब सा, बिहारीलालजी सुराणा आदि बहुत सेवाभावी श्रावक थे। यहां आपके दर्शनार्थ सिविल जज श्री उमरावमलजी चोरडिया वकील जीवनसिंह जी के साथ आए। एक दिन रात्रि में परमाणु के वर्णादि परिवर्तन के सम्बन्ध में चर्चा हुई। **चरितनायक ने फरमाया कि एक गुण से अनन्तगुण कालादि का परिणमन सम्भव है। मूलगुण का परिवर्तन सम्भव नही, क्योंकि गुण गुणी से सर्वथा भिन्न नही रहता।** आप यहाँ कान्तिसागर जी महाराज का संग्रह देखने गए तथा उनसे चर्चा भी हुई। यहाँ पर आपने एक दिन व्याख्यान में फरमाया – **"आत्मा के पतन और दुःख का कारण अज्ञान एवं मोह है। अज्ञान ज्ञान से मिटाया जाता है और ज्ञान सत्संग तथा स्वाध्याय से मिलाया जाता है। जब तक सद्ज्ञान का प्रसार नहीं होगा, समाज सुधर नही सकेगा।"** यही पर एक दिन अपने प्रवचनामृत में फरमाया– **"सद्गृहस्थ भोगसामग्री को मिलाते हुए भी असद्मार्ग से बचकर चलता है। असद्मार्ग से मिलायी गई सम्पदा से वह धन की गरीबी को अच्छी मानता है। शरीर की सहज कृशता शोथ (सूजन) के मोटापे से अच्छी है।"**

- **नाथद्वारा, भीलवाड़ा, अजमेर होकर जयपुर**

तदनन्तर आपश्री एकलिंगजी होकर फाल्गुन शुक्ला ६ संवत् २०२३ को देलवाड़ा पधारे। वहाँ आपने पाँच भाइयो को प्रतिमाह एक दयाव्रत दो वर्ष तक करने के नियम कराये, राजमलजी बोकाड़िया को दैनिक सामायिक करने, रात्रि-भोजन, जमीकन्द और अब्रह्म सेवन की मर्यादा तथा अधिक ब्याज न लेने का नियम कराया, कुछ भाइयो को माह में १५ सामायिक करने के नियम कराये एवं तीन युवकों को दो वर्ष तक दैनिक प्रार्थना का सकल्प कराया। ओडण में भी इसी प्रकार धर्मप्रेरणा की। यहाँ पर अध्यात्म साधक चरितनायक ने एक धुन की रचना की –

भगवन् पाप से मुक्त करा, विमल ज्ञान उद्योग करा।
दुर्बलता मन दूर करो, साहस का भण्डार भरो॥
शरण तुम्हारा श्री वर्धमान, आज्ञा पालू हो बलवान्।
शुद्ध-बुद्ध मै निर्मल रूप, काम क्रोध नही मेरा रूप॥

नाथद्वारा मे पूज्यपाद के विराजने से लगभग ४०-५० दयाव्रत हुए, सामायिक एव स्वाध्याय की ज्योति जगी। कांकरोली एव नाथद्वारा क्षेत्र मे वकील, शिक्षक, सी. ए., इजीनियर आदि का पढा-लिखा वर्ग भी चरितनायक के 'साधना क्यो'? विषयक प्रवचन से प्रभावित हुआ। यहा से कुवारिया, पोटला होते हुए साहडा पधारे, जहाँ श्री वल्लभमुनिजी गंगापुर से अगवानी हेतु सामने उपस्थित हुए। वहाँ से गगापुर होकर भीलवाड़ा पधारे। कलक्टर नारायणदास जी मेहता को रात्रिकालीन प्रश्नचर्चा मे गुणस्थानो के सम्बन्ध मे अपनी जिज्ञासाओ के समाधान प्राप्त कर प्रमोद हुआ। वहाँ से मांडलगाँव, वेरा, सरेडी, कवलियास मे धर्म-प्रेरणा करते हुए गुलाबपुरा पधारे। श्री कुन्दनमुनि जी एवं श्रावक-श्राविका सामने अगवानी में उपस्थित थे। श्री वल्लभमुनिजी ने चरितनायक की स्तुति मे अष्टक सुनाया, जिसका प्रथम पद्य इस प्रकार था -

श्रामण्यदीक्षा जिनधर्म शिक्षाम्
तत्त्वपरीक्षा, भवना मुमुक्षाम्,
बाल्यात्प्रभृत्येव न य सिषेव
विद्वद्वरोऽयं जयताद् गजेन्द्र ॥

यहा आपकी प. श्री शोभाचन्द्र जी भारिल्ल से इतिहास विषयक बातचीत हुई। यहाँ के विद्यालय एव छात्रावास के विद्यार्थियो को स्वाध्याय के महत्त्व और उपयोग पर प्रेरणात्मक सन्देश दिया। फिर चैत्रशुक्ला २ सवत् २०२४ को आपाक विजयनगर पदार्पण हुआ। दो दिन पश्चात् यहाँ सम्वत्सरी के सम्बन्ध मे वार्तालाप हेतु ब्यावर से शिष्टमण्डल उपस्थित हुआ। चरितनायक ने अपना मन्तव्य फरमाया – "आषाढी चौमासी से ४९-५० दिन मे सम्वत्सरी पर्व हो। अर्थात् चातुर्मास मे मास वृद्धि की स्थिति मे दो श्रावण हो तो दूसरे मे और दो भाद्रपद हो तो प्रथम मे पर्व मनाया जावे, तो कोई बाधा नहीं।"

चरितनायक श्रमणसघ की गिरती स्थिति से चिन्तित थे। **उनका चिन्तन इस प्रकार था –"समयधर्मी ग्रुप से हमारे विचारों का मेल सम्भव नही लगता।"** यहाँ से राताकोट, बादनवाड़ा, झडवासा, नसीराबाद, दाता होते हुए आप अजमेर पधारे, जहाँ फरमाया कि सामायिक के आन्तरिक अभ्यास से मोह का जोर घटाया जा सकता है। यहाँ पर महावीर जयन्ती सहित दो दिन विराजकर आपने जयपुर की ओर विहार कर दिया। वैशाख कृष्णा ११ को मोती डूँगरी, जयपुर मे प्रवचन करते हुए शास्त्र-रक्षण के सम्बन्ध मे फरमाया – "द्वादशांगी वाणी अर्थ से नित्य एव शब्द से अर्वाचीन है। भगवान् महावीर के पश्चात् ९८० वर्ष तक यह परम्परा चलती रही। तब देवर्धिगणी ने आगम लिपिबद्ध कराये। उनके अनुग्रह से ही हमको आज श्रुत उपलब्ध हो रहा है। इसका संरक्षण करना हमारा पवित्र कर्त्तव्य है।" वैशाख शुक्ला तृतीया को लालभवन में अनेक स्थानो के श्रावको ने अपने-अपने क्षेत्र की विनतियाँ प्रस्तुत की। वैशाख शुक्ला ६ स २०२४ को गीजगढ निवासी श्री कुन्दनमल जी चोरडिया एवं श्रीमती रूपवती जी चोरड़िया की सुपुत्री रतनकवर जी का दीक्षा-समारोह सम्पन्न हुआ, जिन्हें महासती श्रीमदनकवर जी म.सा की शिष्या घोषित किया गया। बड़ी दीक्षा के दिन लालभवन में राजस्थान विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. माथुर से शैक्षिक वातावरण के सम्बन्ध मे वार्तालाप हुआ।

• जयपुर चातुर्मास (सवत् २०२४)

चरितनायक का ४७वां सवत् २०२४ का चातुर्मास जयपुर में विशेष उपलब्धियो वाला रहा। महासती श्री बदनकँवर जी म.सा. का चातुर्मास भी यही पर था। स्वाध्याय और सामायिक का इस चातुर्मास मे विशेष शखनाद किया गया, जिसकी गूँज अन्य प्रदेशों में भी सुनाई दी। आचार्यप्रवर की प्रेरणा से स्वाध्याय सघ की जगह-जगह पर स्थापना हुई। स्वाध्यायी श्रावक तैयार हुए, जो पर्युषण पर्व में विभिन्न स्थानो पर जाकर शास्त्रवाचन, व्याख्यान, त्यागव्रत आदि के कार्यक्रम आयोजित करवाते रहे। अपने संघ के साधु-साध्वियो को भी आपने यह समझाया कि दीक्षा के पूर्व शिक्षा होना जरूरी है। प्रथम शिक्षा, फिर परीक्षा, फिर दीक्षा और उसके बाद भिक्षा सफल होती है। इसी चातुर्मास में आपने प्रबंध पट्टावली का सम्पादन एव आवश्यक सशोधन किया। चरितनायक आचार्य श्री की प्रेरणा से रत्नव्यवसायी श्री नथमल जी हीरावत ने कर्मग्रन्थ सीखना शुरू किया, गलुण्डिया जी ने प्रतिक्रमण याद किया। इस प्रकार श्रावको में ज्ञान-ध्यान की होड़ लगी और श्राविकाओं मे तपस्या की। इस चातुर्मास में १० मासखमण तप, शताधिक अठाइयाँ हुई और १२ ब्रह्मचर्यव्रती बने। बालक-बालिकाओं, किशोर-किशोरियो और युवक-युवतियों में भी सामायिक, प्रतिक्रमण, आगम आदि कण्ठस्थ करने की होड़ लगी। पूज्यप्रवर ने एक दिन फरमाया – **"जिनशासन दूसरे की महरबानी पर जीने की बात नही कहता। वह भीतर से शक्ति प्रकट करने को कहता है। महावीर ने स्वयं ऐसा ही किया।"** यहाँ जिनवाणी मासिक पत्रिका की व्यवस्था का कार्य श्री नथमलजी हीरावत ने सम्हाला। उनकी सूझबूझ से जिनवाणी पत्रिका निरन्तर सुदृढता पूर्वक आगे बढ़ती गई। चरितनायक ने श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण सघ के दिवंगत आचार्य श्री आत्माराम जी म के जन्म-दिन के उपलक्ष्य मे भाद्रपद कृष्णा १२ को आध्यात्मिक हर्षोल्लास के साथ आयोजित प्रवचन-सभा मे उनके गुणानुवाद करते हुए आपने चतुर्विध सघ को श्रमण-सघ के नियमो, उपनियमों का पूर्णतः पालन करने की प्रेरणा की।

• श्रमणसंघ से पृथक् होने की घोषणा

चातुर्मास सम्पन्न कर तत्कालीन 'श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण सघ' के उपाध्याय चरितनायक पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. जब जयपुर के उपनगर आदर्शनगर में पधारे तब आपने मार्गशीर्ष कृष्णा द्वितीया दिनाक १९ नवम्बर १९६७ को श्रमण संघ से पृथक् होने की घोषणा करते हुए उसका स्पष्टीकरण किया। चरितनायक 'श्री वर्धमान स्थानकवासी श्रमण संघ' के गठन के समय से ही सर्वत्र श्रावकों को 'श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ' के अन्तर्गत एक सूत्र मे बाधने हेतु प्रयत्नशील रहे। संघ का ऐक्य उन्हे स्वीकार्य था, किन्तु शैथिल्य नही। उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. पहले ही श्रमण सघ छोड़ चुके थे। चरितनायक ने उन्हें भी सघ से पुन जोड़ने का प्रयत्न किया, किन्तु सफलता नही मिली। कांफ्रेंस के लोग भी युगीन परिवर्तन के नाम पर शिथिलाचार को प्रोत्साहन दे रहे हैं, यह उन्हें उचित नही लगा। ध्वनि-वर्धक यन्त्र की अनुमति चरितनायक को स्वीकार्य नहीं थी, किन्तु कान्फ्रेस के आग्रह पर श्रमणो ने इसका उपयोग प्रारम्भ कर दिया था। संवत्सरी की एकता का प्रश्न भी उलझा रहा। साधु-साध्वी अपनी अनुकूलतानुसार कभी गुरु से तो कभी प्रान्तमन्त्री से आज्ञा प्राप्त करते हुये किसी एक के अनुशासन में नही रहे। प्रधानमंत्रीजी के त्यागपत्र एव उपाचार्य श्री के पृथक् होने के पश्चात् सघ मे व्यवस्था शिथिल हुई। चरितनायक जब सघ से जुड़े थे तब आपने अपना यह दृष्टिकोण स्पष्ट रूपेण व्यक्त किया था –"जिनशासन की मर्यादा के अनुकूल सम्पूर्ण ऐक्य बना रहे तो सघ-हितार्थ मजूर है।" चरितनायक ने ऐक्य के लिए पूरी

शक्ति लगा दी थी। बढ़ते शैथिल्य को गुरुदेव निराकृत करना चाहते थे। किन्तु उसमे सहयोग न मिलने एव अव्यवस्थाओ के मद्देनजर सयम आराधक, प्राच्य संस्कृति एव विशुद्ध साध्वाचार के हिमायती चरितनायक के समक्ष एकमात्र विकल्प श्रमण सघ से पृथक् होना ही शेष था।

मार्गशीर्ष कृष्णा अष्टमी को आपने धर्म की आस्था विषयक प्रवचन फरमाया। इस प्रवचन सभा में राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री मोहनलालजी सुखाडिया ने भी उपस्थित होकर आपके मगलमय पावन दर्शन व वचनामृत का लाभ प्राप्त किया।

• सवाई माधोपुर की ओर

आचार्य श्री ने जयपुर के गाँधीनगर, बजाजनगर आदि को पावन करते हुए सवाई माधोपुर की ओर चरण बढ़ाए। मार्ग मे सागानेर, शिवदासपुरा होकर लोक भारती सस्थान मे अहिसक जीवन पर उद्बोधन देते हुए आप चाकसू पधारे, जहाँ विद्यालय के बालको को नशा, चोरी और गाली का प्रयोग न करने का सकल्प दिलाया। यहाँ आपका पूज्य आनन्दऋषि जी से मधुर वार्तालाप हुआ। फिर कौथून के पचायत भवन, गुनसी की पाठशाला मे एक रात्रि ठहर कर आपने निवाई, सिरस, पावडेढा होते हुए सन्त रामनिवासजी म, महासतियॉ जी एव श्रावक-श्राविकाओं द्वारा की गई जय-जयकार के साथ चौथ का बरवाड़ा के स्थानक भवन मे प्रवेश किया। आपने पौष कृष्णा १० को पार्श्वनाथ जयन्ती पर भ पार्श्वनाथ द्वारा कमठ उद्धार की घटना से शिक्षा लेने की प्रेरणा की। स्वाध्याय और धर्म शिक्षा हेतु अभिमुख होने का उद्बोधन दिया। यहॉ गोविन्दरामजी आदि श्रावको ने बारह व्रत अगीकार किए। तदनन्तर आचार्यश्री ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए सवाईमाधोपुर पहुचे, जहॉ अनेक श्रावको ने १२ व्रत अगीकार किए और स्कूल के बच्चों ने नैतिक नियम स्वीकार किये। सवाईमाधोपुर पधारते समय आपने बणजारी, एकडा, डेकवा आदि ग्रामो को भी फरसा। यहाँ से आलनपुर, शेरपुर, रावल, कुण्डेरा, श्यामपुरा, एण्डा, धनोली, सूरवाल, पुनः आदर्शनगर, सीमेण्ट फैक्ट्री, आलनपुर, कुस्तला, पचाला होते हुए आपने चोरू पदार्पण किया, जहाँ ३ फरवरी माघ शुक्ला पचमी सवत् २०२४ को वयोवृद्ध श्री पन्नालाल जी म.सा. के स्वर्गवास पर आपश्री ने [illegible] कायोत्सर्ग किया।

श्रद्धाञ्जलि सभा मे आचार्य श्री ने उनके जीवन एव व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए फरमाया- "स्वामीजी महाराज के स्वर्गवास से श्रमण समाज मे एक क्रियावान, निष्ठावान, मर्यादाशील, सिद्धान्तवादी सन्त की रिक्तता हुई है। मेरे साथ आपका वर्षो से प्रेम सम्बन्ध चलता रहा। पारस्परिक विश्वास के साथ सामाजिक स्थिति में विचार की हमारी एकता निरन्तर अद्यतन निभती रही। वे आज नही हैं, पर उनके सद्गुण और प्रेरक उद्बोधन आज भी समाज को जागृत कर रहे है। वे एक विद्वान सन्त, प्रखर वक्ता और सुन्दर साहित्य सर्जक थे। क्रान्ति और शान्ति दोनों का स्वामीजी मे एक साथ वास था। स्थानकवासी समाज ऐसे मुनिरत्नो का स्मरण कर अपने आप मे गौरवानुभव करता है।"

दृढ़तापूर्वक जैन धर्म का पालन करने वाले मीणा जैनों के ५०-६० घर वाले अलीनगर (जैनपुरी) ग्राम में पधारे, जहाँ आपने जन समुदाय को जीवन की असारता का उद्बोधन दिया। उखलाना मे मुनिश्री गोपीलालजी म.सा.से आपका स्नेह मिलन हुआ। यहॉ से अलीगढ़-रामपुरा मे आपकी प्रेरणा से त्रिदिवसीय सामायिक शिविर मे २५ सामायिक सघों की स्थापना हुई, जिसका क्षेत्रीय कार्यालय सवाईमाधोपुर एव प्रधान कार्यालय जयपुर तय किया गया। तदुपरान्त बिलोता पाटोली, देवली, गाडोली, खातोली, समिधी, जरखोदा, बणसोली, देई, नैनवा, दूणी, आवाँ, भरणी होते हुए चरितनायक

फाल्गुन शुक्ला अष्टमी को टोंक पधारे। इन क्षेत्रों में कई भाइयों ने रात्रि- भोजन के त्याग किए, १२ व्रत अंगीकार किए सपत्नीक शीलव्रत ग्रहण किये और व्याख्यान से प्रभावित हो सप्त कुव्यसन का त्याग किया। नैनवाँ मे आपने अग्रवाल भाइयों को स्पष्ट किया कि साकार और निराकार भक्ति में निराकार भक्ति श्रेष्ठ है, शास्त्र बिना गुण के आकार को वन्दनीय नही मानता। टोंक में चातुर्मास की विनतियो तथा तप-त्याग के वातावरण मे आचार्यश्री के दर्शनो का लाभ पाकर चतुर्विध सघ हर्षित हुआ। फाल्गुन शुक्ला ग्यारस १० मार्च को महासती श्री नैनाजी के स्वर्गवास के समाचार पाकर चरितनायक ने कायोत्सर्ग के साथ सतीजी के जीवन का परिचय दिया।

- विजयनगर होकर अजमेर

यहाँ से चरितनायक डोडवाड़ी, लाम्बा, टोडारायसिंह (पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म.सा. की जन्मस्थली), केकड़ी, सेवदा होते हुए फूलिया पधारे, जहाँ महासती यशकंवरजी म.सा. ने श्रावक के देशावगासिक पौषध सबधी जिज्ञासाएँ रखी। यहाँ से आप धनोप, देवलिया, बड़ली, विजयनगर पधारे। गुलाबपुरा मे १४ अप्रैल ६८ को हुई स्वाध्यायियो की बैठक इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रही कि उस दिन कई श्रावको ने स्वाध्यायी बनने का सकल्प किया। रामगढ़, ब्यावर, खरवा, जेठाणा, तबीजी होते हुए आप अजमेर के मदार गेट स्थानक में पधारे, जहाँ अक्षयतृतीया को वर्षीतप के पारणे हुए तथा उमरावमलजी चौधरी आदि ने १२ व्रत अगीकार किए। वहाँ से किशनगढ़ प्रवास पर आप श्री ने नये पुराने कार्यकर्ताओ को मिलजुल कर चलने का सदेश दिया, जिससे पूर्व मनमुटाव मिटकर कई समस्याएँ हल हुई। आचार्य श्री के प्रवासकाल मे उनके जहाँ जहाँ पधारने की खबर मिलती, आस-पास विचरणशील सत-सती स्वय आकर आपश्री के दर्शन कर स्वयं को कृतार्थ समझते थे।

- पाली चातुर्मास (सवत् २०२५)

किशनगढ से विहार कर पूज्यपाद अजमेर, पुष्कर, तिलोरा आदि क्षेत्रों को पावन करते हुये थावला पधारे। यहाँ समाज मे लम्बे समय से पारस्परिक कलह का वातावरण था। समत्व व साधना के पर्याय महामनीषी चरितनायक के पावन अतिशय व समाज ऐक्य की प्रेरणा से वैषम्य समाप्त हुआ और समाज मे एकता व मैत्री का सचार हुआ। यहाँ से विहार कर आप मेवड़ा, पादू, मेड़ता, इन्दावर, गगराना, कवासपुरा, कोसाना, पीपाड़ आदि क्षेत्रो को फरसते हुए भगवन्त जोधपुर पधारे। चातुर्मास काल समीप था। आपका आगामी चातुर्मास पाली स्वीकृत हुआ था। अत. जोधपुर मे अल्प प्रवास के बाद ही आप लूणी, रोहट, चौटीला आदि विहारवर्ती गावो को फरसते हुए आषाढ शुक्ला दशमी दिनाक ५ जुलाई १९६८ को ठाणा ६ से चातुर्मासार्थ सुराणा मार्केट, पाली पधारे। महासती श्री सुन्दरकंवजी म.सा. आदि ठाणा ३ के चातुर्मास का लाभ भी पाली को मिला।

पूज्यपाद के विराजने व चतुर्विध संघ के सान्निध्य से पाली निवासियो मे प्रबल उत्साह था। आपने धर्म नगरी पाली के श्रोताओ को उद्‌बोधित करते हुए फरमाया – "जैसे बिना पाल के तालाब मे पानी नही ठहरता उसी प्रकार व्रत-प्रत्याख्यान के बिना जीवन मे सदगुण नही ठहरते।" आपकी प्रेरणा से नगर वासियों में व्रत-प्रत्याख्यान की होड़ लग गई। मासखमण अठाई, आयम्बिल आदि तपस्याओं की झडी लगी थी तो अनेक भाई बहिन सवर-साधना मे भाग लेकर अपने जीवन को भावित करने लगे। इस चातुर्मास में प्रति रविवार सामूहिक दयाव्रत में लगभग ५०० भाई बहिन सम्मिलित होते। मासक्षपण के पूर के दिन एक साथ ८०० आयम्बिल हुए, पाप भीरू अनेक भाई बहिनो ने आपसे श्रावक के बारह व्रतों का स्वरूप समझ कर अपने जीवन को मर्यादा मे स्थिर किया, तो अनेक दम्पतियो ने

शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को सुशोभित किया। जैनेतर भाई भी तपत्याग में पीछे नही रहे। प्राणिमात्र को अभय देने वाले षट्काय प्रतिपालक सन्त-महापुरुषो की वाणी से हिंसक व्यक्तियो मे भी दया व करुणा का संचार हुआ। आपसे प्रतिबोध पाकर तीन मछुआरो ने जीवन पर्यन्त मछली मारने का त्याग कर दिया, कई हरिजन भाइयों ने आपके पावन दर्शन कर मद्य-मास का त्याग कर अपने आपको पवित्र बनाया। तप-त्याग ही नही, धार्मिक-शिक्षण के क्षेत्र मे भी चातुर्मास विशेष उपलब्धिपूर्ण रहा। पाली के अनेक मोहल्लों मे धार्मिक पाठशालाए प्रारम्भ हुई। पूज्यपाद द्वारा छोटे सतो को ज्ञानदान देने व सन्त-सती वृन्द के साथ शास्त्र-वाचन का क्रम चलने से चातुर्मास ज्ञानाराधन की दृष्टि से भी उपयोगी रहा।

चातुर्मास मे जोधपुर , जयपुर, बालोतरा आदि स्थानो के श्रावको का विशेष आवागमन बना रहा। सामायिक सघ एव स्वाध्याय सघ की गतिविधियों को आगे बढाने हेतु कार्यकर्तागण चिन्तनशील रहे।

• राणावास, पीपाड़, भोपालगढ होकर जोधपुर

चातुर्मासोपरान्त यहाँ से आप रावल गॉव, लाम्बिया, खारची, मारवाड़ जक्शन, रडावास, केसरीसिंह जी का गुडा आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए मार्गशीर्ष शुक्ला पचमी को राणावास पदार्पण कर छात्रावास में विराजे। कन्या पाठशाला की भी जानकारी ली। यहा से आप सिरीयारी, सारण होते हुए वोपारी पधारे, जहॉ आपकी पावन प्रेरणा से सघ का मतभेद समाप्त हुआ। यहॉ से सोजत रोड, सोजत शहर, पिचियाक, भावी आदि क्षेत्रो को स्पर्श करते हुए आपने पीपाड़ पदार्पण किया, जहॉ महासती श्री तेजकवर जी म सा आदि ठाणा दर्शनार्थ पधारे। लकवे से ग्रस्त वयोवृद्धा महासती श्री रुकमा जी म सा को दर्शन देने आचार्य श्री स्वय पधारे।

तपागच्छ के आचार्य श्री समुद्रविजय जी म सा एव उनके आज्ञानुवर्ती श्री जयविजयजी म.सा का भी इसी समय पीपाड़ आगमन हुआ। रीया मे हिन्दू-मुस्लिम समस्त धर्मावलम्बियो ने आचार्य श्री के दर्शनो का लाभ लिया। पीपाड़ मे पुन पधारने पर आचार्य श्री की जन्म जयन्ती सामायिक, स्वाध्याय, दया, तप, त्यागपूर्वक २ जनवरी १९६९ को मनायी गई। आचार्य श्री का जैन एकता पर सदा से बल रहा। सम्प्रदायातीत भगवान महावीर के सिद्धान्तो का प्रतिपालन चतुर्विध सघ का प्रमुख ध्येय रहे, एतदर्थ एकता के विभिन्न प्रस्ताव आचार्य श्री के सान्निध्य मे श्रावको द्वारा पारित किए गए, यथा—

१. धर्मस्थान धर्माराधन के लिए है, किसी जाति या सम्प्रदाय द्वारा उस पर अधिकार जता कर झगड़ा करने हेतु नही, अत: धर्म-स्थानों के लिए झगड़ा नही किया जावे।

२. सम्प्रदाय या संघभेद के बिना पंच महाव्रतधारी साधु-साध्वी की सेवा एवं उनकी संयमसाधना मे सहयोग देंगे तथा संयमविरुद्ध प्रवृत्ति को रोकने हेतु व्यक्तिगत निवेदन करेंगे। पर्चे निकालना अथवा समाज का वातावरण दूषित करना उचित नही।

३. सम्प्रदाय परिवर्तन के लिए प्रेरणा देना प्रेम में बाधक है, अत: विभिन्न सम्प्रदायों में प्रेम सम्बंध बढ़ाया जावे, एतदर्थ सम्प्रदाय परिवर्तन की प्रेरणा नही करेंगे।

इस प्रसग मे नैतिक एव चारित्रिक उत्थान के प्रयत्नों हेतु मार्मिक अपील की गई। १४ जनवरी ६९ को धार्मिक पाठशाला भी प्रारम्भ हुई।

पीपाड़ से साथिन, कोसाणा, खागटा, रतकूड़िया, कूडी होते हुए चरितनायक के भोपालगढ़ पधारने पर मद्य

निषेध दिवस मनाया गया। यहाँ मेघवाल बंधुओं ने व्याख्यान में मद्य-निषेध की प्रतिज्ञा की। कई जोड़ो ने शीलव्रत अगीकार किए। यहाँ से आप नाडसर, वारणी, हरसोलाव, नोखा, रूण, खजवाणा, मूडवा आदि मे धर्म-प्रचार करते हुए नागौर पधारे। रात्रि मे विविध विषयों पर प्रश्नोत्तर हुए। बालको तथा बड़ो ने बीड़ी सिगरेट के त्याग किए। चरितनायक के ग्रामानुग्राम विचरण करते समय जैनेतर घरो के सदस्यों में भी तपस्या, कुव्यसन-त्याग आदि के प्रति अनन्य उत्साह देखा गया। डेह में आचार्यश्री ने भृगु पुरोहित पर प्रवचन दिया जो जैन तथा जैनेतर समाज के लिए अत्यत प्रेरणास्पद रहा। कुचेरा, मेड़ता होते आप रणसीगाँव पधारे। शिक्षा या विद्या, जीवन चलाने के लिए नही, किन्तु जीवन-निर्माण के लिए है, इसे समझाते हुए आचार्य श्री ने फरमाया कि **साक्षरता रहित ज्ञान वाले पशु-पक्षी भी जीवन चलाते देखे जाते हैं। भोजन, पान तथा गृह निर्माण आदि कलाओं में निपुण, किन्तु अनपढ़ पशु-पक्षी जीवन बना नहीं सकते, केवल चलाते हैं। यदि हम मानव होकर विद्या पढ़कर भी इसी प्रकार जीवन चलाकर संतोष कर लें तो यह हमारी भूल होगी।** रणसीगाँव में दिया यह शिक्षा व्याख्यान किसी दीक्षान्त समारोह के वक्तव्य से भी बढ़कर था।

जोधपुर के सरदार विद्यालय के विशाल प्रागण में ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी सवत् २०२६ गुरुवार २२ मई १९६९ को आचार्य श्री के सान्निध्य मे विरक्ता सुशीलाकुमारीजी (सुपुत्री श्री भैरव सिंह जी एव श्रीमती उगमकवर जी मेहता, जोधपुर) को दीक्षा प्रदान कर उन्हें महासती श्री मदनकवर जी म की शिष्या घोषित किया गया ।

जोधपुर के सभी सम्प्रदायो व जातियो के भक्तो पर आपका व्यापक प्रभाव रहा है। आप जब कभी जोधपुर पधारते, स्थानकवासी , मूर्तिपूजक, वैष्णव सभी लोग बिना किसी साम्प्रदायिक भेद के आपके दर्शन, प्रवचन-श्रवण का लाभ लेने हेतु उद्यत रहते। इस प्रवास मे तपागच्छ के क्रिया भवन मे आपके दो प्रवचन हुए। उन प्रवचनो मे आपने पाच समवाय मे पुरुषार्थ की प्रधानता का निरूपण किया। सरदारपुरा, मुथाजी का मन्दिर, महामन्दिर आदि उप नगरो मे भी आपका विराजना हुआ।

• नागौर चातुर्मास (सवत् २०२६)

सवत् २०२६ (सन् १९६९) का आपका चातुर्मास नागौर मे हुआ। नागौर पुराना क्षेत्र है। रत्नवशीय परम्परा से इस क्षेत्र का दीर्घकाल से सबध रहा है। अपने आराध्य गुरु भगवत जन-जन की आस्था के केन्द्र पूज्य चरितनायक का वर्षावास पाकर नागौर निवासियों मे प्रबल उत्साह था। इस चातुर्मास मे ज्ञान, ध्यान, तप-त्याग व व्रत-प्रत्याख्यान का ठाट रहा। इस चातुर्मास मे ९ दम्पतियो ने शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को भावित किया, कई व्यक्ति पर्युषण सेवा देने हेतु सक्रिय स्वाध्यायी बने। इस चातुर्मास मे स्वाध्यायियो के ज्ञानाराधन हेतु पत्राचार पाठ्यक्रम की रूपरेखा बना कर चार कक्षाएँ निर्धारित की गई एव उनके प्रशिक्षणार्थ दिनाक २६ अक्टूबर से ५ नवम्बर तक शिक्षण शिविर का आयोजन भी किया गया। इस चातुर्मास मे सरदारपुरा, जोधपुर मे विराजित स्वामी जी श्री लाभचन्दजी म सा का स्वर्गवास हो गया। श्री लाभचन्दजी म.सा ने विक्रम सवत् १९७० की अक्षय तृतीया को १८ वर्ष की युवावय में पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द जी म.सा. से भागवती श्रमण दीक्षा अगीकार कर साधना-मार्ग में अपने कदम बढ़ाये थे। कायोत्सर्ग कर स्वामी जी म.सा. को श्रद्धांजलि समर्पित की गई।

• शीलव्रत के पालन पर बल

नागौर का वर्षावास सम्पन्न कर चरितनायक कडलू, मूदियाड, गोवा, बासनी, गच्छीपुरा, सोयला फरसते हुए

धनारी पधारे। साधना एव शील के साकार स्वरूप आचार्य भगवन्त जिन क्षेत्रो मे पधारते, वहाँ सामायिक स्वाध्याय के सदेश गूजने लगते। ब्रह्मचर्य भी आपकी प्रमुख प्रेरणा थी। बचपन से वैरागी अखड बालब्रह्मचारी इन महापुरुष के ब्रह्मचर्य दीप्त मुख मडल को निहार कर भक्त निहाल हो जाते, नयन कभी तृप्त ही नही होते, तो दूसरी ओर आपका पावन सान्निध्य भक्तजनों को सहज ही शील आराधन की प्रेरणा देता। इस विहारक्रम मे आपने बराबर इस बात पर बल दिया कि शीलव्रत के पालन से आरोग्य, बुद्धिबल व सहनशीलता बढ़ती है। शील पालन के लिये उत्तेजक आहार एव विषय विकारो को प्रोत्साहित करने वाले निमित्तो से बचना आवश्यक है, तो नयनो की चपलता से बचना भी आवश्यक है। साधक के मन मे माताओ बहिनो के लिये मातृभाव व भगिनी भाव हो तो भोग की ओर आकर्षण ही नही होगा। आपके साधनानिष्ठ जीवन, ब्रह्मचर्य-दीप्त तेजोपुञ्ज मुखमडल के दर्शन, पीयूष पाविनी वाणी व प्रेरणा से इन छोटे-छोटे क्षेत्रो मे भी लोग शीलव्रत ग्रहण हेतु सहज प्रेरित हुए और २३ दम्पतियो ने शीलव्रत अगीकार कर आपके चरणारविन्दो मे सच्ची भेट प्रदान की।

आपकी प्रेरणा से बावड़ी मे धार्मिक पाठशाला प्रारम्भ हुई। यहा से विहार कर चरितनायक वीराणी, हीरादेसर, भोपालगढ़, अरटिया, दईकड़ा, थबूकड़ा, सूरपुरा होते हुए पौष शुक्ला ११ को जोधपुर के उपनगर महामदिर पधारे। घोड़ो के चौक स्थानक मे आपश्री की जन्मतिथि त्याग-तप से मनायी गई।

१९ फरवरी १९७० माघशुक्ला १३ सवत् २०२६ को वैरागी शीतलराज जी (पुत्र श्री मदनराजजी सिंघवी) की सादगीपूर्ण वातावरण मे दीक्षा सम्पन्न हुई। इस प्रसग पर १५ भाई-बहिन आजीवन ब्रह्मचारी बने। दीक्षा के एक दिन पूर्व पूज्य आचार्य प्रवर ने फरमाया था – **"दीक्षार्थी एवं साधना का सत्कार बाहरी आडम्बर से नहीं, साधना से करो। दीक्षार्थी जीवनपर्यन्त पूर्ण ब्रह्मचर्य अगीकार करता है। आप सब भी अब्रह्म त्याग की मर्यादा करें तथा जो भुक्तभोगी हो चुके, उन्हें तो पूर्ण खंध कर लेना चाहिये।"**

• अजमेर होकर जयपुर

यहाँ से पालासनी, बिलाड़ा, जैतारण, निमाज, बर, कोटड़ा, ब्यावर क्षेत्रो मे ज्ञान-वर्षा करते हुए एव कन्हैयालाल जी छाजेड़, बक्सीराम जी राजपूत, सेठ भवरलाल जी निमाज वाले, भवरलाल जी पदावत खरवा वाले आदि कई भव्यो को ब्रह्मचारी बनाते हुए आप चैत्र शुक्ला एकादशी को अजमेर पधारे। आपके सान्निध्य मे महावीर जयन्ती को विदुषी महासती श्री जसकवर जी म सा. की निश्रा मे विरक्ता बहिन मीना कुमारी मेहता की दीक्षा सम्पन्न हुई। फिर अजमेर से आप किशनगढ़ होते हुए जयपुर पधारे जहाँ अक्षय तृतीया पर १८ पारणक हुए। आचार्य श्री ने यहाँ भगवान आदिनाथ के तप एव लोकधर्म शिक्षण पर प्रकाश डाला तथा फरमाया कि तप लोकसुख की कामना से करने पर आत्म-कल्याणक नही बनता। तप का एक मात्र उद्देश्य कर्म-निर्जरा होना चाहिये।

• स्वाध्याय शिक्षण शिविर

२० से २८ मई १९७० तक सम्यग्ज्ञान प्रचारक मडल के तत्त्वावधान मे जयपुर मे स्वाध्यायी शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया, जिसमे सवाईमाधोपुर क्षेत्र के ३० अध्यापको सहित ८९ शिविरार्थियो ने भाग लिया। आचार्यप्रवर ने शिविरकाल मे प्रात काल व्याख्यान के समय श्रावक के १२ व्रतो का सुन्दर प्रभावकारी विवेचन किया, अपराह्न काल मे जैन दर्शन के मूल तत्त्वो का बड़ी बारीकी के साथ सरल सुबोध शैली में विश्लेषण किया तथा रात्रि मे शिविरार्थियो के प्रश्नो का समाधान किया। इस अवसर पर ४० नये स्वाध्यायी बने। यह अपने आपमें

बहुत ही महत्त्वपूर्ण शिविर था, जिसके पश्चात् ग्रीष्मकाल में लगभग प्रतिवर्ष शिविरो का आयोजन प्रारम्भ हुआ।

आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म.सा. की पुण्य तिथि ज्येष्ठ शुक्ला १४ को ५०० सामायिक दया, पौषध की आराधना के अनन्तर आप जयपुर से किशनगढ़ होते हुए अजमेर पधारे। अजमेर से पादू पधारने पर पडितमुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी म.सा. आदि ठाणा ३ के साथ मिलन हुआ एव एक दिन साथ विराजकर आपका चातुर्मासार्थ मेड़ता की ओर विहार हुआ।

- मेड़ता चातुर्मास (संवत् २०२७)

सवत् २०२७ के पचासवे चातुर्मास के लिए आपका जयघोष करते नर-नारियो, बालक-बालिकाओ के विशाल समूह के साथ ठाणा ६ से आषाढ शुक्ला ९ सोमवार १३ जुलाई १९७० को मेड़ता स्थानक मे प्रवेश हुआ। आपकी प्रेरणा और सदुपदेश से श्रावण पूर्णिमा के दिन मीरा की नगरी मेड़ता में भूधर जैन पाठशाला का उद्घाटन हुआ। यही पर श्री गजेन्द्र जैन सामायिक स्वाध्याय मडल की स्थापना हुई। यहॉ श्री हीराचन्द जी म.सा. (वर्तमान आचार्य) ने 'जय श्री शोभाचन्द्र' पुस्तक लिखी। आपकी आज्ञानुवर्तिनी स्थविरा महासती श्री हरकँवरजी म.सा. ठाणा ४ से यहाँ ही विराजमान थी। महासती श्री किशनकवरजी ने मासक्षपण की तपस्या की। श्री रतनलालजी सिंघी के जीवन में परिवर्तन हुआ।

इस चातुर्मास मे छोटी-बड़ी अनेक तपस्याओ का ठाट रहा, ग्यारह श्रावक १२ व्रती बने एव पाँच दम्पतियो ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया।

पूज्य गुरुदेव के साधनाकाल के ५० वर्ष आगामी माघ शुक्ला द्वितीया सवत् २०२७ को पूर्ण होने के परिप्रेक्ष्य मे श्रावक समुदाय ने इसे समारोहपूर्वक मनाने हेतु अपनी भावना बार-बार पूज्यवर्य के समक्ष प्रस्तुत की, पर पूज्य वर्य का स्पष्ट उत्तर था—"आप हमे साधक मानते है, साधकों के जीवन प्रसग पर तो सयम साधना व त्याग-प्रत्याख्यान की ही भेट देकर अपनी भावनाएँ प्रस्तुत की जा सकती है।"

आपश्री के श्रीमुख से यह फरमाने पर कि "मेरा क्या, इस समय (माघ शुक्ला पचमी) तो मेरे जीवन निर्माता पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचदजी म.सा की दीक्षा की शताब्दी का प्रसग है" श्रावक वर्ग ने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के तत्त्वावधान मे इस अवसर पर साधना कार्यक्रम आयोजित करने का निर्णय लिया।

तदनुसार न्यायमूर्ति श्री इन्द्रनाथजी मोदी की अध्यक्षता मे सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की बैठक आयोजित की गई एव "आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा दीक्षा शताब्दी साधना-समारोह समिति" का गठन कर मात्र अठारह वर्ष के छात्र श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफना को इसके मत्री पद का दायित्व सौंपा गया।

पूज्यपाद को अपनी प्रशसा, अभिनन्दन व अपने स्वयं के नाम मे कोई आयोजन स्वीकार्य ही नही था। निरतिचार साधना के ५० वर्ष पूर्ण होने पर भी आपसे ऐसे किसी आयोजन की सहमति मिलने की कोई सभावना नही थी। सयोग से पूज्यपाद गुरुदेव की दीक्षा शताब्दी का प्रसग साथ मे होने से व भक्तो का प्रबल भक्तियुक्त आग्रह होने से आपने भक्तो के उत्साह को साधना एव त्याग-वैराग्य से जोड़ने का यह अभिनव प्रयास किया। जो भी कार्य हुआ उसे पूज्य गुरुवर्य के नाम से जोड़ना आपकी निर्लिप्तता , उत्कट गुरुभक्ति तथा आपकी विनम्रता का परिचायक रहा।

■

शोभागुरु की दीक्षा-शताब्दी एवं स्वयं की दीक्षा-अर्द्धशती अजमेर में

मेड़ता का चातुर्मास सानद सम्पन्न कर श्रावको के अत्यंत आग्रह पर आचार्यश्री थॉवलॉ, बांदनवाडा, भिनाय, विजयनगर होते हुए सती-मडल धनकवरजी, उमराव कवरजी, महासतीश्री विचक्षणश्रीजी की शिष्याओं को प्रेरणा देते अजमेर पधारे, जहॉ स्व. आचार्यश्री शोभाचन्द्र जी म.सा. का दीक्षा शताब्दी साधना-समारोह माघ शुक्ला प्रतिपदा से सप्तमी वि. सवत् २०२७ (२७ जनवरी से २ फरवरी ७१) तक 'साधना सप्ताह' के रूप में पं रत्न श्री सोहनलालजी म.सा. ठाणा ३ के सह-सान्निध्य मे सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के तत्त्वावधान मे मनाया गया। यह मणिकाचन सयोग था कि गुरु-शिष्य की दीक्षा तिथियों मे मात्र तीन दिन का अन्तर था। पूज्यपाद आचार्य श्री शोभाचन्द जी म.सा. की दीक्षा तिथि माघ शुक्ला पचमी **है** तो उनके सुयोग्य श्रेष्ठ शिष्य चरितनायक की दीक्षा तिथि माघ शुक्ला द्वितीया है। गुरु शिष्य दोनों की दीक्षा मैं ५० वर्ष का अतर था। इस समारोह समिति के अध्यक्ष श्री रिखबराज जी कर्णावट एव मत्री श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना के नेतृत्व मे श्री मदनराजजी सिंघवी जोधपुर, श्री पारसमलजी बाफना भोपालगढ़, श्री सपतराजजी बाफना भोपालगढ़, श्री रामसिह जी हुडा ओस्तरा (हीरादेसर), श्रीमती सरदार बाई मुणोत अजमेर प्रभृति अनेक भक्त श्रावको के सत्प्रयासो से यह साधना समारोह गॉव-गॉव और नगर-नगर मे मनाया गया। समारोह के आयोजकों ने प्रचार-प्रसार के निवेदन-पत्रो मे प्रेरणा की कि मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय आदि से बचने के लिए सत्पुरुषो के सत्सग, सस्मरण, दीक्षा आदि के प्रसग सुषुप्त मानव-मन को जागृत करते है। फलस्वरूप आशा से अधिक सफलता मिली। कार्यकर्त्ताओ ने १०० नये स्वाध्यायी, १०० बारह व्रतधारी , १०० एक वर्षीय शीलव्रतधारी, १०० आजीवन शीलव्रती १०० शाकाहारी, १०० मद्यत्यागी, १०० धूम्रपान त्यागी एव ५० स्थानो पर सामायिक सघ की स्थापना का लक्ष्य रखा। ग्राम-ग्राम एव नगर-नगर मे उत्साहपूर्ण उपलब्धियॉ रही। स्थान-स्थान पर प्रतिज्ञा-पत्र भरे गए। प्रतिज्ञा-पत्र भरने वालो की संख्या इस प्रकार रही— मास-त्यागी ६८६, मद्यत्यागी ६८१, धूम्रपान-त्यागी ७८१, वार्षिक शीलव्रती २११, स्वाध्यायी २१०, बारह व्रतधारी १२४, आजीवन शीलव्रती १७३ जोड़े, सामायिक सघ ५०, छात्र-वृत्तिदाता ४६ । निर्धारित लक्ष्य से कई गुना अधिक सकल्प-पत्र भरना सबके लिए प्रमोद का विषय था। इनमे से अनेको व्यक्तियो ने पूज्यपाद आचार्य श्री शोभाचदजी म सा की दीक्षा शताब्दी के पावन दिन पर व्यक्तिश उपस्थित होकर पूज्य चरितनायक के मुखारविन्द से प्रत्याख्यान अंगीकार कर अपने जीवन को भावित करते हुए जिनशासन की महती प्रभावना की। इनके साथ ही फूलिया कला में स्वाध्याय मित्र मडल, धनोप व बागसुरी मे जैन धार्मिक पाठशाला, जोधपुर मे महिला स्वाध्याय मंडल का शुभारम्भ हुआ। इस पावन प्रसग पर अनेक महानुभावो ने श्री वर्धमान सेवा समिति के कोष सवर्धन एव स्वाध्याय संघ , जोधपुर को पॉच वर्षों तक अर्थ-सहयोग देने का सकल्प किया।

आचार्य श्री के मौन, माला और मनन का चतुर्विध सघ पर अनूठा प्रभाव परिलक्षित हुआ। २८ से ३१ जनवरी १९७१ तक अजमेर के मोतीकटला मैदान मे भव्य समारोह का आयोजन हुआ। हजारो धर्मानुरागी तप-त्याग, व्रत-नियम, सामायिक-स्वाध्याय की श्रद्धा से प्रमुदित एव अभिभूत थे। अनेक साधु-साध्वी तथा श्रावकों ने आचार्य

श्री के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए उनके कठोर साधक जीवन का गुणगान कर अपने जीवन को यत्किंचित् आगे बढाने की प्रेरणा ग्रहण की। पण्डितमुनि श्री सोहनलालजी म.सा., पं. श्री चौथमलजी म.सा., प मुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी म.सा., महासती श्री सुन्दरकंवरजी, महासती श्री मैनासुन्दरी जी आदि ने गुरु-शिष्य की अद्भुत गुणसम्पन्न जोड़ी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से जनसमुदाय को उद्बोधित किया।

अन्त मे चरितनायक ने अपने गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा के अनन्य गुणो का गान कर गुरु का अपने जीवन पर उपकार मान कृतज्ञता प्रकट करते हुए उन्हें नमन किया तथा विशाल जनमेदिनी को सम्बोधित करते हुए फरमाया -"सामाजिक और पारिवारिक क्षेत्र मे व्यक्ति का अभिनदन उसे प्रसन्न कर सकता है, किन्तु हमारा साधक जीवन दूसरे ही प्रकार का है। हमने इन सारे झंझटो को छोड़कर केसरिया कसूमल, दाग-दागिने, भूषण-आभूषण, विभूषण आदि सभी भौतिक वस्तुओं का पूर्णत. परित्याग कर दिया है।"

"साधना के पथिक को आत्मा का खटका होता है। अत स्वाध्याय और सामायिक से सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर अपने आपको पढ़ो और अपने आपको सोचो, सभी समस्याओ का समाधान पुरस्कृत हो जाएगा। जिस भूमि पर आप और हम बैठे हैं, वह कई कारणो से महत्त्वपूर्ण है। इसी भूमि पर पट्टा बिछाकर आचार्य श्री शोभाचन्द जी म सा., आचार्य श्री मन्नालाल जी म.सा., जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा. और प श्री मोखमचन्द जी म सा जैसी बड़ी-बड़ी विभूतियों ने त्याग और तप की रोशनी से जिनवाणी की वर्षा की थी। ५० वर्ष पश्चात् यह मैदान फिर सजीव हो उठा है। (५० वर्षों पूर्व इसी भूमि पर चरितनायक की श्रमण-दीक्षा सम्पन्न हुई थी।) अब समय है सामाजिक और साम्प्रदायिक वैमनस्य को छोड़ स्वाध्याय से ज्ञान-प्राप्ति कर भ्रातृत्व तथा संयम का पथ अपनाएँ। जयन्तियाँ मनाने की सार्थकता तभी होगी जब जीवन में आध्यात्मिकता की पहल होगी। साधु-जीवन की मर्यादा होने से समाज और देश-विदेश मे सुसस्कारो का प्रचार-प्रसार एक ऐसे श्रावक समुदाय से हो जो सुसस्कृत, सुशिक्षित तथा सुव्रती हो।"

चरितनायक ने स्वाध्याय का महत्त्व प्रकट करते हुए फरमाया - "सम्यग्ज्ञान प्राप्त करना है तो स्वाध्याय करो। हमारे सामने हजारों समस्याएँ हो परन्तु उन सबका समाधान मैंने स्वाध्याय और सामायिक मे पाया है। समाज मे झगड़े क्यो होते हैं ? सम्प्रदाय मे झगड़े क्यो होते हैं? इनके पीछे भी मूल कारण यही है कि आज समाज मे स्वाध्याय की प्रवृत्ति नही है।"

अपने गुरु आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. के सम्बन्ध मे विचार प्रकट करते हुए कहा –

"आचार्य श्री मेरे धर्मगुरु , मेरे धर्माचार्य , परम मगल जीवन जीने वाले श्री शोभाचन्द्र जी महाराज, की साधना के आज १०० वर्ष पूरे हो गए। स. १९२७ में १३ वर्ष की वय मे उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य ही नही, बल्कि तन, मन और वाणी से सयमित रहने के महाव्रत स्वीकार किये। पूज्य श्री शोभाचन्द्रजी महाराज ने सन्त-जीवन का आदर्श प्रस्तुत किया। वे महान् त्यागी, तपस्वी, शान्त, सरल और मृदु स्वभाव के थे। वे सम्प्रदाय के भेदभाव की भावना से ऊपर उठे हुए थे। किसी के प्रति तिरस्कार की भावना उनमें नही थी। सबके साथ उनके बड़े मधुर सम्बन्ध थे। उन्होंने हृदय से प्रेम करना सीखा था। हम सत्कार करने वालों से प्रेम कर सकते हैं, पर विरोध करने वालों से प्रेम करना मुश्किल है। विरोधियों से प्रेम करने वाले वे पूजनीय सन्त थे।"

"आचार्य श्री शोभागुरु ज्ञान और क्रिया दोनों के धनी थे। शार्दूल केसरीवत् आप श्री शान्त एव सौम्य थे तथा निर्धारित पथ पर चलने में उसकी भाति तेजस्वी भी थे। उनका मन्तव्य था कि अपनी नीति-रीति पर चलने

वाले व्यक्ति को किसी से डरने की आवश्यकता नही हैं। उनकी नीति थी —

जे आचार ऊजला, ते शार्दूला सीह।
आपो राखे ऊजलो, नो किण रो आणे बीह॥

जो आचार मे उज्ज्वल हैं, वे शार्दूल सिंह की भाँति है। उन्हे फिर किसी अन्य से डरने की आवश्यकता नही होती।

"गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी महाराज के मेरे पर अनन्त उपकार हैं। उनके चरणों में रहकर मैंने बहुत कुछ पाया है। मै उनके संघाड़े का अधिकारी हूँ, लेकिन मेरे मन में उन्होंने इस प्रकार के संस्कार भरे हैं कि एक सम्प्रदाय में रहकर भी सम्पूर्ण जिनशासन के हित में काम करूँ। एक समय आया, जब मै संघ में रहा, पर वहाँ जब मैं काम नही कर सका तो अपने आपको सुरक्षित रखते हुए अलग हो गया। उसके बाद भी मेरा यही लक्ष्य रहा कि मै चतुर्विध संघ की उन्नति के लिए कार्य करता रहूँ।"

"एक समय की बात है, आचार्य गुरुदेव किसी नये क्षेत्र मे पधारे तो वहाँ के सम्प्रदायवादी लोग बोले—"महाराज! आप जैसे सन्तो की सेवा का मन तो रहता है, पर आप हमारे विरोधी सम्प्रदाय के सतो के साथ बैठकर व्याख्यान करते हो। यदि ऐसा न करो तो हम आपकी सेवा भक्ति करने को तैयार हैं।"

आचार्य श्री शोभाचन्द जी मसा ने कहा — **"भाई! तुम्हारी भक्ति और वन्दना रहने दो। मैंने तुम्हारी वन्दना के लिए संयम नही लिया है, जो तुम्हारे कहे अनुसार संतों के साथ बैठना छोड़ दूँ। हाँ, जिन-आज्ञा के विपरीत किसी का व्यवहार दिखा तो जरूर विचार करूँगा। संयम को निर्मल रखकर चलने वालों को स्वर्ग के देव भी वन्दन करते हैं और यदि हम अपने मार्ग पर नही चलेंगे तो वन्दना करने पर भी हमारा कल्याण नही होगा।"**

आचार्य श्री शोभागुरु की दृढ़ता और सयमनिष्ठा से विरोधी भी नतमस्तक थे। आचार्य श्री त्यागी, विरागी, विद्वान्, तपस्वी और पहुचे हुए संत थे। स्वमत-परमत के ज्ञाता होकर भी वे जिन-वचनो पर अटल श्रद्धावान थे। आहार, विहार, आसन, शयन, स्वाध्याय, ध्यान मे वे नियमित थे। वे आचार्य की आठ सम्पदाओ से युक्त एव निरभिमानी थे। हम सत्कार करने वालो से प्रेम करते हैं, पर विरोध करने वालो से प्रेम करना मुश्किल होता है। वे विरोधियो से प्रेम करने वाले पूजनीय सन्त थे। उनके हजारो गुणो मे से मैंने कुछ ही गुणो को गिनाया है।"

चरितनायक ने फरमाया — "यदि जिनशासन को उन्नत करना है, साधु समाज को ऊँचा रखना है तो साधुओ और श्रावको के बीच एक मध्यमवर्ग की स्थापना करना आवश्यक है। यह वर्ग देश विदेश मे धर्म प्रचार कर सकता है।"

आपने इस समारोह के अतिम दिन शताधिक लोगो को शीलव्रत का नियम कराते हुए फरमाया —**"बुराई की जानकारी के उपरान्त उसके त्याग से ही सुख-समृद्धि सम्भव है।"** परिवार नियोजन के आज तरह-तरह के कृत्रिम उपाय किए जाते है, परन्तु भगवान महावीर ने इसका बड़ा सरल उपाय बताया है। उनके द्वारा बताये गए ब्रह्मचर्य से तेजस्विता आएगी। परिवार-नियोजन भी यथेच्छ हो जाएगा और जीवन बड़ा आनन्दमय होकर व्यतीत होगा।" इस प्रसग पर मद्य-मास त्याग, धूम्रपान-निषेध आदि अनेक उपलब्धियो के साथ शताधिक दम्पतियों द्वारा ब्रह्मचर्यव्रत का नियम स्वीकार किया गया। तत्कालीन कलक्टर श्री अनिलजी बोरदिया ने आचार्य श्री के अजमेर

पदार्पण को अजमेर के लिए सौभाग्य तथा सुखद सयोग माना। अजमेर शहर के कत्लखाने बन्द रहे। समापन समारोह के अवसर पर सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के माननीय अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री इन्द्रनाथ जी मोदी ने 'साधना समारोह समिति' के मानद मत्री श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना को स्वर्णपदक प्रदान कर सम्मानित किया। साधना-समारोह समिति के मत्री के आभार-प्रदर्शन के साथ समारोह सम्पन्न हुआ।

अजमेर का यह कार्यक्रम धर्म-क्रियाओं एवं धर्म-प्रभावना की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण सोपान सिद्ध हुआ।

जोधपुर, कोसाणा और जयपुर चातुर्मास

(संवत् २०२८ से २०३०)

दीक्षा शताब्दी एव दीक्षा स्वर्णजयन्ती के अनन्तर चरितनायक ठाणा ७ से अजमेर से विहार कर किशनगढ, गोदियाणा, तिहारी, झाडोल, गोठियाणा, डबरैला आदि क्षेत्रो को फरसते हुए फतेहगढ पधारे। यहाँ आपकी प्रेरणा से जैन पाठशाला प्रारम्भ हुई। फतेहगढ से विहार कर आप सरवाड, केकड़ी, देवली आदि क्षेत्रो मे धर्मोद्योत करते हुए होली चातुर्मासार्थ दूणी विराजे। होली चातुर्मासोपरान्त पूज्यपाद नैनवॉ, देई, जरखोदा, खातोली होते हुए सवत् २०२७ चैत्र कृष्णा एकादशी को अलीगढ - रामपुरा पधारे। यहाँ पूज्य आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी म.सा विराज रहे थे। उनके दो सन्त पूज्य प्रवर की अगवानी हेतु पधारे। आचार्यद्वय का स्नेह मिलन श्रद्धालुओ के आकर्षण का केन्द्र था। दोनो आचार्यप्रवर ने सयुक्त सघ-योजना पर विचार-विमर्श करते हुए इसके लिये प्रस्तावित नियमावली पर चर्चा की।

दोनो महापुरुषो के कन्या पाठशाला मे सयुक्त व्याख्यान हुए। तीन दिनो के विचार-विनिमय के अनन्तर विहार कर आप चैत्र शुक्ला २ सवत् २०२८ को सवाईमाधोपुर पधारे। यहा चार दिन विराजे। मुमुक्षु खेमसिंह जी ने गुरु-चरणो मे उपस्थित होकर शीघ्र दीक्षित कर अपने चरण-सरोजो मे लेने की प्रार्थना की।

मुमुक्षु खेमसिंह की तीव्र वैराग्य-उत्कण्ठा व जयपुर श्री सघ की विनति को लक्ष्य मे रखकर परम पूज्य आचार्य भगवन्त ने दीक्षा-महोत्सव जयपुर मे आयोजित करने की स्वीकृति प्रदान की।

सवाईमाधोपुर से विहार कर पूज्यप्रवर श्यामपुरा, कुण्डेरा व चौथ का बरवाड़ा क्षेत्रो मे धार्मिक शिक्षण की प्रेरणा करते हुए निवाई पधारे। वहॉ से मार्गवर्ती विभिन्न क्षेत्रो को पावन करते हुए वैशाख कृष्णा अष्टमी को जयपुर पधारे।

२ मई १९७१ विक्रम सवत् २०२८ वैशाख शुक्ला अष्टमी को यहा के रामलीला मैदान मे मुमुक्षु युवक श्री खेमसिंह (सुपुत्र श्री राम जस जी राजपुरोहित) की भागवती श्रमणदीक्षा सोल्लास सम्पन्न हुई। दीक्षार्थी की महाभिनिष्क्रमण यात्रा अनन्य गुरुभक्त श्री अनोपचन्द जी सिरहमलजी बम्ब के निवास स्थान से प्रारम्भ हुई, जिसमे स्थानीय व आगन्तुक हजारो भाई-बहिन सम्मिलित हुए। बड़ी दीक्षा भी जयपुर मे ही सम्पन्न हुई तथा नवदीक्षित मुनि श्री का नाम 'मुनि शुभचन्द्र' रखा गया। दीक्षा-प्रसग पर भोपालगढ के मूल निवासी श्री भवरलालजी बोथरा ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर सयम का सच्चा अनुमोदन किया।

• जोधपुर चातुर्मास (सवत् २०२८)

जयपुर से विहार कर आचार्य श्री बगरू, दूदू, किशनगढ, अजमेर, पुष्कर, गोविन्दगढ, मेड़ता, गोटन आदि क्षेत्रों मे धर्म-ज्योति का पावन प्रकाश फैलाते हुए खागटा पधारे, जहाँ श्री मधुकर मुनि जी से सुमधुर वार्तालाप हुआ। यहाँ से आप पीपाड़, पालासनी आदि क्षेत्रो मे वीतरागवाणी की ज्ञान गंगा बहाते हुए आषाढ शुक्ला १० को ठाणा ९ से

संवत् २०२८ का ५१वा चातुर्मास करने हेतु जोधपुर पधारे। आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री बदनकवरजी म.सा भी अपने सतीमण्डल के साथ घोडों का चौक विराज रहे थे। इस अवधि में श्रावको ने श्री गजेन्द्र सेवा समिति का गठन किया। २० से २४ अक्टूबर ७१ तक आयोजित स्वाध्याय शिक्षण शिविर का उद्घाटन श्री शान्तिचन्द्रजी भडारी ने किया। प्रो श्री चॉदमल जी कर्णावट, श्री कन्हैयालाल जी लोढा, श्री पारसमलजी प्रसून आदि ने प्रशिक्षण दिया। अन्य विद्वानो ने भी वार्ताएं दी। श्री नेमीचन्द्रजी भावुक के मुख्यातिथ्य तथा प्रसिद्ध एडवोकेट श्री थानचन्द जी मेहता की अध्यक्षता में शिविर का समापन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमे महिला जागृति की ओर विशेष ध्यान आकर्षित किया गया। आपने स्वाध्यायियो को उद्बोधन मे फरमाया – "स्वाध्यायी अपने विचारबल से छोटा सा भी ऐसा वर्ग निर्मित करे, जो शासन को सही रूप मे दिपा सके।" अज्ञान-आवरण दूर करने के लिए आपने स्वाध्याय एव सामायिक की आराधना को आवश्यक बताया। इस समय सामायिक पर आपने एक पद की रचना की, जिसकी कतिपय पक्तियॉ इस प्रकार हैं –

सामायिक मे सार है, टारे विषय विकार है।
करलो भय्या (प्यारे) सामायिक तो, होगा बडा पार है ॥टेर॥
भरत भूप ने काच भवन मे, सामायिक अपनाया हो।
विषय कषाय को दूर हटाकर, वीतराग पद पाया हो॥
जड़ जग से मन मोड के, पाया केवल सार है ॥करलो ॥२॥
मतारज मुनि सामायिक कर, तन का मोह हटाया हो -२
प्रबल वेदना सहकर उसने, केवलज्ञान मिलाया हो २॥

चातुर्मास मे पाँच मासखमण तप बिना बाह्य आडम्बर के हुए। चरितनायक ज्ञान को समाज की ऑख के रूप मे मानते थे। आपने इतिहास के ज्ञान को भी वर्तमान को समुन्नत, भविष्य को उज्ज्वल एव कल्याणकारी बनाने हेतु आवश्यक प्रतिपादित किया। चातुर्मास मे अच्छी ज्ञानाराधना हुई। इस चातुर्मास मे मारवाड़, मेवाड़, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मद्रास आदि प्रान्तो के श्रावको का आगमन विशेष रहा। बैगलोर से ६०० श्रावको का सघ सघपति श्री मागीलालजी गोदावत के नेतृत्व मे आचार्यप्रवर के दर्शन लाभ कर कृतार्थ हुआ। श्री जसराज जी गोलेच्छा की धर्मपत्नी श्रीमती धापूबाई ने ८५ वे उपवास का प्रत्याख्यान किया।

जोधपुर के पावटा, महामन्दिर, मुथाजी के मन्दिर आदि उपनगरो मे विराजकर चरितनायक शास्त्रीनगर पधारे, जहाँ श्री पुखराज जी भसाली एव जवरीलालजी कूमट ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। उपनगरो में जिनवाणी की ज्ञानगगा बहाते हुए आपने जन-जन को देश-विदेश मे धर्म-प्रचार की प्रेरणा दी। यहाँ से आप बम्बोर, आगोलाई, ढाढणिया होकर बालेसर पधारे। यहा आपके प्रवचनामृत रूपी पावन उद्बोधन व केरू वाले श्री मोहनलालजी के प्रयासों से समाज मे पारस्परिक झगड़ा समाप्त हुआ व परस्पर मैत्री व स्नेह भाव का सचार हुआ। बालेसर सता से मार्गशीर्ष पूर्णिमा को बालेसर दुर्गावता पधारे, तब भारत-पाकिस्तान के युद्ध मे ३-१२-७१ को जोधपुर पर बमबारी हुई, किन्तु, आयम्बिलव्रत की आराधना से जैसे द्वारिकानगरी पर देव का वश नही चला, उसी प्रकार धर्म के प्रताप से शहर में कुछ भी हानि नही हुई। मात्र एक बम फट कर रह गया।

बालेसर दुर्गावता मे सीढियों से फिसलने के कारण आपके कमर मे गहरी चोट आयी। किन्तु आपमें इतनी शान्ति एवं समता की अजस्रधारा प्रवाहित थी कि आपके चेहरे पर कोई शिकन नही। जोधपुर से आए चिकित्सक डॉ. पी.एल. बाफना ने जब चोटग्रस्त अग को देखना चाहा तो आपने रात्रि मे टार्च से देखने की भी अनुमति नही दी। शरीर पर चोट का प्रभाव तो था ही। इसलिए आपको यहाँ पर पाच दिन विराजना पड़ा। इसके पश्चात् आप

आगोलाई में स्वास्थ्य लाभ हेतु १७ दिन विराजे। यहा कुवर महेन्द्रसिंहजी द्वारा शराब के त्याग, घेवरजी सचेती द्वारा धूम्रपान-त्याग एव रूपा घाची द्वारा चिलम पीने का त्याग किया गया, जो यह सिद्ध करते हैं कि आचार्य श्री का प्रभाव गाँव-गाँव, ढाणी-ढाणी के जन-जन पर था। ग्रामवासियो ने धर्माराधन व ज्ञानाराधन का उस अवधि मे जो लाभ लिया उसे ग्रामवासी आज भी स्मरण करते हैं। पूज्यपाद के विराजने से आगोलाई ग्राम धन्य धन्य हो गया। आज यह छोटा सा गाँव रत्नवंश का विशिष्ट क्षेत्र है व यहाँ के सभी भाई-बहिन सामायिक-स्वाध्याय व सघ-सेवा में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

आगोलाई से चरितनायक कल्याणपुर पधारे। यहाँ आपने ज्ञान भडार का अवलोकन किया। यहाँ से डोली, धवा, लूणावास बोरानाडा आदि क्षेत्रो को फरसते हुए आपने जोधपुर के उपनगर सरदारपुरा क्षेत्र मे पदार्पण किया। अपने आराध्य गुरुदेव के पदार्पण से उत्साहित जोधपुर वासियो ने पूज्यपाद के पावन दर्शन, वन्दन व प्रवचनामृत का सोत्साह लाभ लिया। पूज्यवर्य का जोधपुर के जन-जन पर कितना व्यापक प्रभाव था, इसका अनुमान आपके अनन्य भक्त प्रसिद्ध भजनीक श्री दौलतरूपचदजी भडारी द्वारा व्यक्त इस बात से लगाया जा सकता है कि जब भी पूज्य महाराज पधारते हैं तो भीतो (दीवारों) से आदमी निकल आते है। कहने का आशय यही कि आप भले ही ग्राम-नगर, महानगर अथवा जगल मे जहाँ कही भी विराजते, नित्यप्रति सैकडो भक्त आपके दर्शनार्थ पहुँच कर अपने आपको सौभाग्यशाली समझते।

यहाँ फाल्गुन कृष्णा १२ शुक्रवार दिनाक १३ फरवरी १९७२ को आपके अन्तेवासी सत श्री मगनमुनि जी म.सा का ज्वर के अनन्तर घोड़ो का चौक स्थानक मे स्वर्गवास हो गया। श्री मगनमुनि जी म.सा. जोधपुर के सुश्रावक श्री सोनराज जी मुणोत के सासारिक पुत्र थे व आपने जोधपुर मे ही सवत् २०२० वैशाख शुक्ला त्रयोदशी को परम पूज्य चरितनायक के मुखारविन्द से श्रमण दीक्षा अगीकार की थी। आप शान्त, दान्त, तपस्वी एव सेवाभावी सन्त थे। थोकड़े सीखने सिखाने-मे आपकी विशेष अभिरुचि थी। आपके सयमनिष्ठ जीवन का परिचय देते हुए आपको श्रद्धाजलि दी गई।

यही पर दिनाक १७ फरवरी को आचार्यप्रवर के परम भक्त, प्रखर प्रतिभा के धनी, अग्रगण्य सघसेवी प्रखर विचारक इस यशस्वी परम्परा के यशस्वी श्रावक श्री इन्द्रनाथ जी मोदी का स्वर्गवास हो गया। मोदी सा राजस्थान उच्च न्यायालय के कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश पद से सेवानिवृत्त हुए । वे ओसवाल सिंह सभा, जोधपुर वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ एव सम्यग्ज्ञान प्रचारक मडल आदि विभिन्न सस्थाओं के वर्षो तक अध्यक्ष रहे। समर्पित सुज्ञ श्रावक एव विवेकशील व्यक्तित्व के निधन से श्रावक समाज को धक्का लगा।

फाल्गुनी चातुर्मासिक पूर्णिमा को सरदार स्कूल के प्रागण मे चरितनायक का प्रभावी प्रवचन हुआ, जिसके श्रवणार्थ जोधपुर के पूर्व नरेश गजसिंह जी ने उपस्थित होकर अपने आपको कृतकृत्य समझा। जोधपुर से विहार कर आप काकेलाव पधारे। यहाँ आपने पल्लीवाल मन्दिर मे ज्ञान भडार का अवलोकन किया। यहा से रोहट पधारने पर जैन जैनेतर सभी ने आपके पावन-दर्शन एव प्रवचन-पीयूष का लाभ लिया। आपके सयमनिष्ठ जीवन एव तपःपूत व्यक्तित्व से प्रभावित होकर श्री गणेशजी पुरोहित ने आपसे धर्म का स्वरूप समझा व आपको अपना गुरु बना कर अपने आपको धन्य-धन्य माना। यहा से खारडा, गुमटी होते हुए चरितनायक चैत्रकृष्णा १२ को पाली पधारे। यहाँ ज्ञानगच्छीय महासती जी श्री सुमति कवरजी, महासती श्री उमराव कुंवरजी 'अर्चना' , मेवाड़सिंहनी

महासती श्री जसकंवर जी, महासतीजी केसर कवर जी तथा पजाब से पधारे महासती मंडल ने आपके दर्शन व सान्निध्य का लाभ लिया। यहां आपका स्वामी श्री ब्रजलालजी म. पं. रत्न श्री मधुकर मुनिजी म से स्नेह मिलन हुआ व महावीर जयन्ती के पावन प्रसंग पर कपड़ा बाजार मे सम्मिलित प्रवचन भी हुआ। आपके इसी प्रवास के मध्य यहा बहुश्रुत पडित रत्न श्री समर्थमलजी म.सा का पदार्पण हुआ। दोनों महापुरुषो ने परस्पर चर्चा व वार्तालाप किया। बहुश्रुत जी म सा ने आपको अपने सन्तो का परिचय देते हुए प्रमोद का अनुभव किया।

प्रथम वैशाख शुक्ला पचमी संवत् २०२९ को बड़े हरकँवरजी म.सा. का मेड़ता सिटी मे स्वर्गवास हो गया। राजस्थान के बूदी जिला स्थित समिधी ग्राम मे श्री छोगालाल जी पोरवाल की धर्मपत्नी की कुक्षि से पौष कृष्णा ५ विक्रम सवत् १९५४ को जन्मे हरकँवरजी ने सवाईमाधोपुर मे कार्तिक शुक्ला १२ सवत् १९७२ को भागवती दीक्षा अगीकार कर प्रव्रज्या पथ अपनाया था। बड़े धनकवर जी म.सा की शिष्या रही इन महासती ने ५७ वर्षो तक निरतिचार सयम का पालन कर अपनी आत्मा को भावित किया।

पाली से विहार कर पूज्यप्रवर जाडण, बागावास, सोजत, साडिया, पीपलिया, निमाज, बर, ब्यावर, पीसागन पुष्कर आदि विभिन्न क्षेत्रों मे धर्मोद्योत करते हुए प्रथम वैशाखी पूर्णिमा को अजमेर पधारे। यहॉ द्वितीय वैशाख शुक्ला तृतीया को सम्यग् ज्ञान प्रचारक मण्डल की ओर से जैन स्थानक लाखन कोटडी मे गुणी अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। न्यायमूर्ति श्री सोहननाथ जी मोदी के मुख्य आतिथ्य व डॉ नरेन्द्र भानावत के सयोजकत्व मे सम्पन्न इस समारोह मे शास्त्रीय विद्याध्ययन के लिये श्री हिम्मत सिंह जी सरूपरिया उदयपुर का, जीवन मे ज्ञान व क्रिया के योग हेतु श्री चांदमलजी कर्णावट भोपालगढ का अध्यात्म चिन्तन एव नूतन गवेषणा हेतु चिन्तनशील मनीषी विद्वान् श्री कन्हैयालालजी लोढा, केकडी का एव सघ-सेवा हेतु श्री सरदारमलजी साड का अभिनन्दन किया गया। इस अवसर पर अपने मगल उद्बोधन में आपने समाज में ज्ञान एव आचार के सामंजस्य की आवश्यकता पर बल दिया।

पूज्यप्रवर का चिन्तन था कि सघ व समाज मे अनेको कार्यकर्ताओ, त्यागव्रती श्रावक -श्राविकाओ एव चिन्तनशील प्रबुद्ध विद्वानो की भूमिका विकास मे महनीय है, पर उनका योगदान जन-सामान्य के समक्ष नही आ पाता, वे तो बिना यश कामना के अपनी भूमिका अदा कर जाते हैं। वस्तुत सघ-रचना एव शासन की प्रभावना के मुख्य सूत्रधार तो ये ही नीव के पत्थर है। शीर्ष के कंगूरो की शोभा इन्ही नीव के पत्थर माफिक सघ-सेवियो द्वारा किये गये योगदान से है। सघ-समाज के समक्ष इनके योगदान को लाया जा सके, इसी पुनीत लक्ष्य से सघ ने गुणी-अभिनन्दन योजना को अपनाया। 'गुणिषु प्रमोद' की महनीय भावना से प्रारम्भ इस योजना के पीछे उन महापुरुष के मनोमस्तिष्क मे जहाँ एक ओर इन छिपे रत्नो को प्रकाश मे ला कर समाज मे प्रमोद भाव को बढ़ावा देने का लक्ष्य था, वही कार्यकर्ताओ के पुरुषार्थ, विचारशील विद्वद्वर्ग के चिन्तन एव त्यागव्रती श्रावकगण के अतर्हृदय से उद्भुत शुभ कामनाओ को सूत्रबद्ध कर एकाकार करना भी था। वस्तुत. तीनो ही ज्ञान, दर्शन एव चारित्र की तरह एकाकार होकर सुन्दर आदर्श संघ-सरचना का दायित्व निर्वहन कर सकते हैं।

एक भावना यह भी परिलक्षित होती है कि विद्वान् मात्र ज्ञान-साधना तक ही सीमित न हो, उसके ज्ञान मे श्रद्धा एव सघ के प्रति समर्पण का बल हो और इसी समर्पण भाव के साथ वह भी 'ज्ञानस्य फलं विरतिः' का आदर्श अपना कर अपने जीवन में यथाशक्य व्रत-प्रत्याख्यान ग्रहण कर धर्म को अपने आचरण में अपनाये। त्यागव्रती सुश्रावकगण तपत्याग के साथ ही ज्ञान-स्वाध्याय-साधना को अपना कर सोने मे सुहागा की कहावत चरितार्थ करे

एव अपने तप-त्याग के बल से कायकर्ताओं का बल बने। कार्यकर्तागण अपने को सघ सेवा मे समर्पित करने के साथ विद्वद्वर्य के चिन्तन एवं त्यागी सुश्रावकगण के सरक्षण के प्रति पूर्ण समादर रखें तथा उनके मार्गदर्शन में सघ को प्रगति पथ पर अग्रसर करने का पुरुषार्थ करे तथा स्वयं भी अपने जीवन मे स्वाध्याय से ज्ञान ज्योति प्रज्वलित करने व सामायिक से व्रत ग्रहण कर साधना-शीलता को साथ मे अपनाने का लक्ष्य रखे।

इन्हीं सब भावनाओं को समाहित करते हुये संघ ने गुणी-अभिनन्दन योजना के अन्तर्गत प्रतिवर्ष कम से कम एक विद्वान्, एक साधक श्रावक एव एक समाजसेवी कार्यकर्ता का अभिनन्दन कर उनके महनीय योगदान को उजागर करने का लक्ष्य रखा।

पूज्यवर्य फरमाया करते कि गुणीजनो का अभिनन्दन वस्तुत गुणो का अभिनन्दन है, गुणीजनो द्वारा समाज पर किये गये उपकार से उऋण होने का एक छोटा सा प्रयास मात्र है। गुणियो के अभिनन्दन से गुणी- जन नही वरन् स्वयं समाज गौरवान्वित होता है।

अजमेर मे इस समय प्रवर्तक श्री छोटमल जी म सा., प. रत्न श्री सोहनलाल जी म भी ठाणा ३ से विराज रहे थे, अचानक प्रवर्तक स्वामी श्री छोटमलजी म का अक्षय तृतीया पर स्वर्गवास हो गया। कायोत्सर्ग कर गुणानुवाद सभा की गई।

• कोसाणा चातुर्मास (सवत् २०२९)

अजमेर से तिलोरा, थावला, भैरूदा, मेवड़ा, पादू बड़ी-छोटी, मेड़तासिटी, गोटन, रजलाणी नारसर, भोपालगढ़, रतकुड़िया, खागटा, मादलिया फरसते हुए चरितनायक आचार्य श्री ने ठाणा ६ (लघु लक्ष्मीचन्दजी म.सा., श्री माणकचन्दजी म.सा., श्री जयन्तमुनि जी म सा., श्री हीराचन्दजी म सा., श्री शुभमुनिजी म.सा. सहित) के साथ सवत् २०२९ का ५२वा चातुर्मास करने हेतु कोसाणा गाव मे आषाढ शुक्ला प्रथम दशमी को प्रवेश किया। पूरा गॉव स्वागत मे उमड़ पड़ा और आप श्री के प्रवचन प्रभाव से दशाधिक युगलो ने आजीवन शीलव्रत ग्रहण किया तथा मद्य-मास त्याग के साथ ही प्रतिवर्ष ५ जीव अमर करने का नियम भी लिया। कोसाणा मे आयम्बिल, दया, उपवास, बेले, तेले, अठाई आदि तपस्याओ का अद्भुत ठाट रहा। विश्नोई समाज के अमराजी ने २१ दिन की तपस्या की। धर्मध्यान मे विश्नोई भाई मोतीजी, अणदाजी, फगलूजी, सालू जी आदि पचासो व्यक्तियो ने लाभ लेकर आचार्यप्रवर के चरणो मे अपनी भक्ति अर्पित की।

कोसाणा से साथिन पदार्पण पर आपकी प्रेरणा से ठाकुर गोविन्दसिंहजी ने जीवन पर्यन्त शिकार एव अखाद्य के त्याग का नियम लिया। यहॉ से सेठो की रिया मे आजीवन शीलव्रत कराते हुए पीपाड़ पधारे। श्रावकधर्म पर आचार्य श्री के प्रवचन से प्रेरणा लेकर अनेक भाई-बहनो ने १२ व्रत अगीकार किए। यहॉ से भावी, बिलाड़ा, बालाग्राम, कापरड़ा, बीनावास, पालासनी, बिसलपुर, डागियावास, बनाड़ को फरसते हुए तथा अनेक श्रावक-श्राविकाओ को शीलव्रत से मर्यादित करते हुए आप जोधपुर पधारे। इस बीच बालाग्राम से कापरड़ा की ओर विहार के समय आचार्य श्री चलते-चलते अचानक अपने साथ चल रहे श्रावको से बोल उठे - "जिन शासन रूपी मान सरोवर का हसा आज उड़ गया है।" यह जानकर विस्मय होता है कि कुछ समय पश्चात् जोधपुर से आये श्रावक श्री पारसमलजी रेड ने बताया कि बहुश्रुत पण्डितरत्न श्री समर्थमलजी म.सा. का स्वर्गवास हो गया है। आचार्यप्रवर को बहुश्रुत पण्डित मुनि जी के स्वर्गवास का पूर्वाभास हो गया था। श्री रेड जी से सूचना मिलने पर निर्वाण कायोत्सर्ग कर श्रद्धाजलि दी गई।

ग्रामानुग्राम विहार करते हुए आचार्य श्री जोधपुर पधारे, जहाँ आपका श्री पुष्करमुनि म.सा. के साथ व्याख्यान हुआ। ४ जनवरी १९७३ को पूज्य श्री घासीलालजी म.सा के स्वर्गवास की सूचना मिलने पर उन्हे कायोत्सर्ग के साथ श्रद्धाञ्जलि दी गई। पूज्य श्री घासीलालजी म.सा के द्वारा स्थानकवासी सम्प्रदाय को मान्य आगमो की सस्कृत टीका करने सहित अनेक ग्रन्थो के रूप में उनके योगदान का स्मरण किया गया। आचार्यप्रवर की प्रेरणा से जोधपुर में अनेक श्रावक-श्राविकाओ ने शीलव्रत एव १२ व्रत अगीकार किए। महिलाओ ने सामायिक मे विकथा न करने का नियम लिया। महामंदिर, मडोर, बावड़ी, बिराई फरसते हुए आप माघ कृष्णा अष्टमी को भोपालगढ़ पधारे। यहाँ ठाकुर रामसिंहजी ने आचार्य श्री से प्रभावित होकर अहिंसा का प्रचार किया तथा पच दिवसीय अल्पकाल मे २० व्यक्तियो ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। यहाँ से आप रजलाणी, गोटन, लाम्बाजाटा होते हुए मेड़ता पधारे। यहाँ से भखरी पधारने पर माघ शुक्ला १३ दिनाक १५ फरवरी १९७३ को बस्तीमल जी लोढा (सुपुत्र श्री खेमराजजी लोढा) और श्रीमती सूरज कुवर (धर्मपत्नी श्री मोहनलालजी सुराणा) की दीक्षा सम्पन्न हुई। यहाँ से आप थॉवला, तिलौरा, पुष्कर होते हुए अजमेर पधारे, जहाँ गणेशमलजी बोहरा की बहिन को सथारा कराया जो ६ घटे बाद सीझ गया। यहाँ से मदनगज पधारने पर बादरमल जी मोदी को यावज्जीवन सथारा कराया और मागलिक दिया। शाम को ६ बजे उनका सथारा सीझ गया। यह घटना सबके लिए आश्चर्यजनक थी। यहाँ से आचार्य श्री किशनगढ़, डीडवाना, पडासोली, गागरडू, हरसोली, दूदू , पालू, गाढ़ोता, बगरू, हीरापुर को पावन करते हए जयपुर पधारे। कुछ दिन वहाँ विराज कर आप आमेर, कूकस, अचरोल होते हुए चदवाजी पधारे, जहाँ पर एक हरिजन भाई ने मास-मद्य व निरपराध जीव की हत्या का जीवन पर्यन्त त्याग किया। यहा सरपच देवीसहाय जी से सस्कृत मे वार्ता करते समय प्रसगवश भगवद्गीता के 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेक शरण व्रज' श्लोकाश पर जिज्ञासा का समाधान करते हुए आपने फरमाया-" जो लोग कृष्ण के आश्रय से वर्ग, धर्म सम्प्रदाय आदि सब धर्मो का परित्याग अर्थ बतलाते है, वे वस्तु तत्त्व से अनभिज्ञ है। कृष्ण जैसे उदारमना महापुरुष इस प्रकार मानव को मानव से विग्रह का शिक्षण नही दे सकते। यहा स्वधर्म का अभिप्राय आत्मधर्म से है। भूतधर्म शरीर और इन्द्रिय के धर्मों को छोड़कर मेरी अर्थात् आत्मा की शरण स्वीकार करने के लिए कृष्ण का उपदेश हो सकता है।"

यहाँ से आप मनोहरपुरा, शाहपुरा होते हुए भीलवाड़ी पधारे। ग्राम पचायत के समीप आपने शिक्षको को साधुधर्म से अवगत कराया। एक शिक्षक ने पृच्छा की- शरीर का तप हिंसा है या नही ? पूज्यपाद ने समाधान करते हुए फरमाया-"शरीर का तप हिंसा नही अहिंसा है। शरीर शुभाशुभ क्रिया मे करण है, अत. हितभाव से शिक्षक द्वारा बालक के ताड़न की तरह शरीर का तप-सयम से नियन्त्रण किया जाता है।" पूज्यपाद के सदुपदेश से प्रभावित शिक्षको ने सदा के लिए धूम्रपान का त्याग कर दिया।

भीलवाड़ी से बैराठ, थानागाजी होते हुए वैशाख कृष्णा १४ को आपने अलवर पदार्पण किया व विशाल जनसमूह के जयघोषो के साथ महावीर भवन मे प्रवेश किया। यहाँ आप १७ दिन विराजे। श्री जवरीमलजी चौधरी, ज्ञानचन्द जी ठाकुर, जयचन्दजी सचेती सहित अनेक बधुओ ने सजोड़े शीलव्रत अगीकार किया। वैशाख शुक्ला १२ को कुचेरा मे स्वामीजी श्री रावतमलजी के स्वर्गस्थ होने पर श्रद्धाञ्जलि दी गई।

अलवर मे ५ मई ७३ को अक्षय तृतीया पर न्यायमूर्ति श्री सोहननाथ जी मोदी की अध्यक्षता मे सम्पन्न समारोह में समाज-सेवा हेतु कमला बहिन का अभिनन्दन किया गया। प्रश्नोत्तर के समय आत्मा के होने की सिद्धि मे आपने फरमाया कि स्वानुभूति ही आत्मा के होने मे पुष्ट प्रमाण है। आप यहाँ पर लगभग १५ दिन विराजे। यहाँ

से आप बुर्जा, मालाखेड़ा, बारा भड़कोल, मौजपुर, हरसाना पधारे। आप द्वारा ब्रह्मचर्य पर दिए गए प्रवचन से प्रेरणा लेकर पटवारी लक्ष्मीनारायण जी आदि ने शीलव्रत का नियम लिया। यहाँ से कच्चे मार्ग से पहाड़ की तिरछी चढ़ाई को पार करते हुए खोह गाँव पधारे। पल्लीवाल क्षेत्र आपकी अमृतवाणी से उपकृत हुआ। क्षेत्र मे व्रत-नियमो की महत्ती प्रभावना हुई। वहाँ से मण्डावर, रसीदपुर, सिकन्दरा, दौसा, कानोता होते हुए आपने जयपुर के सेठी कॉलोनी, आदर्श नगर, तिलक नगर आदि उपनगरो को पावन किया। आचार्य श्री के साथ समय-समय पर श्री खेलशकर दुर्लभजी, डा शीतलराज जी मेहता, श्री डी.आर. मेहता आदि दर्शनार्थी श्रावको द्वारा ज्ञान-विज्ञान की चर्चा होती रही। आचार्य श्री उपवास को स्वास्थ्य के लिए हितकारी मानते हुए कई रोगो के निदान में भी उसे सहायक मानते थे। इस सदर्भ मे आपने फरमाया – "मनुष्य नियमित रूप से समय-समय पर उपवास करके अपने पेट को विश्राम देता रहे, तो उसे व्याधियाँ परेशान नही करेगी। उपवास से सात्त्विक भाव का जागरण और तामस-राजस भावो का विनाश होता है।"

आचार्य श्री के सवत् २०३० के चातुर्मास हेतु जयपुर की विनति स्वीकार करने पर समूचा जयपुर समाज प्रफुल्लित हो उठा। इसी दौरान लाल भवन स्थित आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भडार के सक्रिय एव उत्साही सयोजक श्री सोहन लाल जी कोठारी का २६ मई ७३ को स्वर्गवास हो जाने के समाचारो ने सबको विह्वल कर दिया। आचार्यप्रवर ने कोठारी जी को एक ऐसा प्रचेता बताया जिसका विभिन्न क्षेत्रो मे मूल्यवान योगदान रहा।

श्री कोठारी जी जैन इतिहास समिति के मत्री, निष्ठावान कार्यकर्ता और समर्पित समाज सेवी थे। विद्वान् एव प्रोफेसर नही होने पर भी आपने जिस सूझबूझ से आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार को व्यवस्थित किया वह अपने आप में अप्रतिम उदाहरण था।

• जयपुर-चातुर्मास (संवत् २०३०)

आचार्य श्री सवत् २०३० के वर्षावास हेतु जब ठाणा १२ (प लक्ष्मीचन्दजी म.सा , सेवाभावी श्री लघु लक्ष्मीचन्दजी म.सा., श्री माणकचन्द जी म.सा., प. श्री चौथमलजी म.सा., बाबाजी श्री जयन्तमुनिजी म.सा., श्री श्रीचन्द्रजी म.सा., श्री मानचन्द्रजी म.सा., श्री हीराचन्द्रजी म.सा., श्री शीतलमुनिजी म.सा., श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा. तथा श्री बस्तीमलजी म.सा.) से लालभवन मे पधारे तब सम्पूर्ण नगर मे हर्ष की लहर दौड़ गई और विशाल जनमेदिनी अगवानी हेतु उपस्थित हुई। इस चातुर्मास की अनेक उपलब्धियाँ रही। देश मे भगवान महावीर के २५०० वे निर्वाण वर्ष की तैयारियाँ चल रही थी, इसी क्रम मे सघ की ओर से न्यायमूर्ति श्री सोहनलालजी मोदी की अध्यक्षता मे 'अखिल भारतीय वीर निर्वाण साधना समारोह समिति', का गठन किया गया, जिसका मत्री उत्साही कार्यकर्ता श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना को बनाया गया। समिति ने समाज के समक्ष २५ सूत्री साधना-सकल्प का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। समिति का मुख्य कार्यालय घोडो का चौक जोधपुर में था। इस कार्यक्रम मे मास-भक्षण, मद्यपान, धूम्रपान आदि दुर्व्यसनो का त्याग, दहेज एव सामूहिक रात्रि-भोज आदि कुरीतियो का उन्मूलन तथा सामायिक, स्वाध्याय आदि जीवन निर्माणकारी प्रवृत्तियो का प्रचार-प्रसार तथा इन्द्रिय-सयम, ब्रह्मचर्य एव श्रावक व्रत अगीकार करने जैसे जीवनोत्थानकारी कार्यक्रम सम्मिलित थे। २५ सूत्री कार्यक्रम के क्रियान्वयन के फलस्वरूप ६ माह की अल्पावधि में समिति के कार्यकर्त्ताओ के प्रयासो व आपश्री के सदुपदेश से ४३० ब्रह्मचर्यव्रती, ९३ बारह व्रती,१३९ स्वाध्यायी श्रावक, ९०४ प्रेमी स्वाध्यायी, ८३३ साप्ताहिक सामायिक व्रती,१२२७ मास-त्यागी, १३१७ मद्यत्यागी, ९३२ धूम्रपान-त्यागी, ६६५ प्रामाणिक मापतौल व्रती,२२ सघ सर्वेक्षक तथा ४५० सामायिक-सघ के सदस्य बने।

आचार्यप्रवर ने प्रेरणा दी कि "जैसे छोटे से बीज मे भी बड़ी सामर्थ्य-शक्ति होती है वैसे ही मानव की चेतना-शक्ति में बड़ा सामर्थ्य होता है, आवश्यकता उसे क्रिया द्वारा प्रकट करने की है।" इसी अवधि मे आचार्य श्री द्वारा लिखित 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' के दोनो भाग उदयपुर विश्वविद्यालय द्वारा एम.ए. पाठ्यक्रम में स्वीकृत किए गए।

इस चातुर्मास में लगभग ३० मासखमण एवं ३०० अठाई तप हुए जो एक नूतन कीर्तिमान रहा। मेवाड़सिंहनी महासती श्री जसकंवर जी म.सा भी इस समय जयपुर में ही विराज रहे थे। श्री अस्थिर मुनिजी के ५७ दिवसीय तप के समापन समारोह पर ६२ अठाई तपस्वियों का जुलूस शिवजीराम भवन से लाल भवन आया। यह दो परम्पराओ के सुन्दर मिलन व सौहार्द का अनुपम अवसर था। ऐसे ही ३० जुलाई को तपस्वियो का एक विशाल जुलूस सुबोध कालेज से रवाना होकर लाल भवन आया। यहाँ अठाई तप वाले १८१ तपस्वियो ने परमपूज्य आचार्य भगवन्त से एक साथ प्रत्याख्यान किये। मध्याह्न में आचार्य श्री प्रतिदिन श्री सूयगडांग सूत्र एवं बृहत्कल्पभाष्य की वाचना फरमाते थे, जिसमे सन्तो के साथ अनेक ज्ञानरसिक श्रावक लाभ लेते थे। ५ से ९ अक्टूबर ७३ तक धार्मिक कार्यकर्ताओ का शिक्षण शिविर लगाया गया, जिसमें जोधपुर, जयपुर, उदयपुर, सवाई माधोपुर आदि क्षेत्रो के ३२ कार्यकर्ताओ ने भाग लिया।

चातुर्मास की समाप्ति के अनन्तर ठाणा ६ से पुलिस मेमोरियल, आदर्श नगर होते हुए गाधीनगर पधारे, जहाँ आप श्री चन्द्रराजजी सिंघवी के बगले पर विराजे । यहाँ जैन विद्वान तैय्यार करने के पुनीत लक्ष्य से 'श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण सस्थान' की स्थापना की रूपरेखा बनी । संस्थान के माध्यम से सस्कृत, प्राकृत, दर्शन एव जैन विद्या की उच्च स्तरीय शिक्षा प्रदान कर जैन धर्म के मर्मज्ञ विद्वान, प्रभावी वक्ता, सफल लेखक और कुशल सम्पादक तैयार करने का लक्ष्य रखा गया।

आचार्य प्रवर ने शिक्षा, दीक्षा और संस्कार के समन्वित प्रयासो पर बल देते हुए फरमाया– "आज बोध और शोध दोनो दृष्टियाँ आवश्यक है।" उद्घाटन अवसर पर राजस्थान सरकार के सहकारिता मत्री श्री रामनारायणजी चौधरी ने भगवान महावीर के सिद्धान्तो को आज के युग के लिए उपयोगी बताया और उनके व्यापक प्रचार-प्रसार पर बल दिया। मुख्य अतिथि श्री निरजननाथ जी आचार्य ने भगवान महावीर के अहिंसा-अपरिग्रह जैसे सिद्धान्तो को युग की माग बताते हुए जीवन मे मानव मूल्यो को प्रतिष्ठित करने के लिए ऐसे सस्थानो की स्थापना को महत्त्वपूर्ण बताया। समारोह की अध्यक्षता श्री श्रीचन्दजी गोलेछा ने की।

२१ नवम्बर को आचार्य श्री विनयचन्दजी म.सा. की पुण्यतिथि पर श्री निरजननाथ जी आचार्य, राजस्थान के वित्तमत्री श्री चन्दनमल जी बैद एव खाद्यमंत्री ने प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया तथा आचार्य श्री से जीवनोपयोगी विचार-विमर्श किया।

■

सवाईमाधोपुर, ब्यावर, बालोतरा एवं अजमेर चातुर्मास (संवत् २०३१ से २०३४)

• भरतपुर होकर आगरा : पल्लीवाल समाज में धर्म जागरण

गाधीनगर से १ दिसम्बर १९७३ को गोलेछा गार्डन होते हुए आप कानोता पधारे। यहाँ छात्रो को उद्बोधित कर मोहनपुरा, गोठड़ा, भडाणा को पावन करते हुए दौसा पधारे। जन-जन को हितबोध देते हुए आप लालसोट, मण्डावरी, डाबर, बड़ा गाँव, बामनवास, सफीपुरा होते हुए प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र श्रीमहावीर जी पधारे।

मार्ग मे बन्धे की पाल से गुजरते समय आपको जो अनुभूति हुई वह आपके ही शब्दो मे दैनन्दिनी से उद्धृत है—**"पाल पर से पानी हिलोरें खाते ऐसा दिख रहा था, मानो अन्तर मे मोह पवन से तरंगित मन की तरंगें संयम-नियम की पाल से टकराकर पीछे जा रही हो।"** आपकी यह अनुभूति प्रकृति से भी अध्यात्म का अध्ययन करने की प्रवृत्ति को इगित करती है। जो सीखना चाहता है वह प्रकृति के तत्त्वो से भी अध्यात्म की सीख ग्रहण कर सकता है। मार्गस्थ ग्राम-जनो को धर्म के प्रति प्रेरित कर आप बरगमा, झारेडा एव हिण्डौन पधारे। यहाँ २४ दिसम्बर को स्वाध्याय शिविर आयोजित हुआ। नई मडी, शेरपुर जैसे गॉवो मे किसानो द्वारा वृद्ध पशु के विक्रय करने का त्याग करना तथा आपश्री को अपना गुरु बनाना, आपश्री के प्रभावी व्यक्तित्व एव पातक प्रक्षालिनी वाणी का प्रत्यक्ष प्रमाण था। कच्चे मार्ग पर बसे धाधरेन जैसे गॉव मे ४०-५० गूजरो द्वारा धूम्रपान, मद्यपान, तम्बाकू-सेवन आदि व्यसनो का त्याग, मानव जीवन निर्माण की कड़ी मे महत्त्वपूर्ण कदम था। पौष शुक्ला ७ को बयाना पदार्पण के समय तहसीलदार रणविजयजी एव उपजिलाधीश ललितप्रसादजी शाह अगवानी के लिये सामने आए। जिलाधीश एव भरतपुर के भाई भी दर्शनार्थ उपस्थित हुए। बयाना से आप उच्चैन पधारे, जहॉ पुराने ताड़पत्रो का अवलोकन आचार्यश्री के विद्या-व्यसन को परिलक्षित कर रहा था। ४ जनवरी १९७४ पौष शुक्ला एकादशी को आपने भरतपुर मे प्रवेश किया। भरतपुर के जिलाधीश पशुपति नाथ जी भडारी ने सप्त व्यसन तथा रिश्वत लेने-देने का त्याग करने के नियम ग्रहण किए। स्थानीय जेल मे आपका प्रभावी व्याख्यान हुआ। महावीर भवन मे श्री चदूलालजी, हजारीमलजी, रेवतीलालजी और फूलचदजी ने आजीवन शीलव्रत का नियम लिया। यहॉ से आप बछामदी पधारे, जहॉ राजस्थान के डीआईजी. ज्ञानचन्दजी सिंघवी ने दर्शनलाभ लिया। वहॉ से चिकसाना, अछनेरा, अगूठी होते हुए चरितनायक लोहामडी, आगरा पधारे। यहाँ उपाध्याय कवि श्री अमरचन्द जी मसा. ने आप श्री की अगवानी की और आपके आचार्य पद का सम्मान किया। दोनो मुनिवरो का बड़ा आत्मीय मिलन हुआ। आप पौषधशाला पधारे, जहॉ आपका पूज्य श्री पृथ्वीचदजी मसा से मिलन हुआ। आपने मोतीकटरा, बेलनगज एव मेयरकोठी को भी पावन किया। मोतीकटरा मे धर्म, अहिंसा और श्रावक के दायित्व पर सरस प्रवचन करते हुए आपने फरमाया "सयम-साधना मे सहयोग दे सके तो दे, पीछे तो नही खीचे।" लोहामण्डी कोठी मे २८ जनवरी १९७४ माघशुक्ला पचमी वि सवत् २०३० को जैन महिला महाविद्यालय के प्रांगण मे पीपाड़ निवासी दीक्षार्थी भाई श्री चम्पालालजी (सुपुत्र श्री जीवराजजी मुथा एव श्रीमती तीजा बाई, पीपाड़ सिटी) को आपश्री ने भागवती दीक्षा

प्रदान की। कवि जी म.सा. ने नवदीक्षित मुनि का नाम चम्पक मुनि दिया। यहाँ आचार्य श्री एव कवि अमरचन्दजी म.सा. के ज्ञान एव क्रिया विषय पर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व्याख्यान हुए।

आचार्य श्री वापसी में भरतपुर से सेवर, पहरसर, डेहरा, मही, बरखेड़ा, वैर, भुसावर, साथा, खावदा को पावन कर नया गाँव होते हुए फाजिलाबाद पधारे। यहाँ पर कुन्दनमल जी, प्यारेलाल जी, प्रभुदयाल जी, रामदेव जी खावदा और रामजीलाल जी ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। यहाँ से विहार कर पूज्य प्रवर ने हिण्डौन, कजानीपुरा, रायपुर, वजीरपुर, सेवाग्राम, गगापुर को पावन किया। फाल्गुनी पूर्णिमा पर आप गगापुर विराजे। यहाँ आपकी प्रेरणा से श्री प्रकाशचन्दजी भागचन्द जी के संयोजकत्व में स्वाध्याय प्रशिक्षण शिविर का आयोजन सम्पन्न हुआ। तदुपरान्त आप मच्छीपुर,वाटोदा, बेहतेड़, चकेरी, श्यामपुरा, कुण्डेरा पधारे, जहाँ पंडित जगन्नाथजी ज्योतिषी से ज्योतिष पर विचार-विमर्श किया। पण्डित जी ने आपके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर सस्कृत मे एक पद्य समर्पित किया —

> चातुर्यं चतुराननस्य निभृत गाम्भीर्यमम्भोनिध
> राद्धार्यं विबुधद्रुमस्य मधुरा वाच च वाचस्पते ।
> धैर्यं धर्मसुतस्य शर्म सकल देवाधिपस्याहरत् ।
> श्रीमान् ख्यातनय सदा सविनय श्रीहस्तिमल्ल सुधी ॥

यहाँ से चैत्रकृष्णा अमावस्या को आप सवाईमाधोपुर पधारे। सवत् २०३१ का शुभागमन सवाई माधोपुर मे हुआ।

• सवाईमाधोपुर में पोरवाल समाज की जागृति

सवाईमाधोपुर मे आपके आगमन से वहाँ के पोरवाल समाज मे जागृति की लहर आई। फलस्वरूप संगठित होकर घर-घर मे नियमित सामूहिक प्रार्थना, स्वाध्याय एव सामायिक की प्रवृत्ति प्रारम्भ हुई। ५० श्रावक स्वाध्याय-सघ के सदस्य बने, जिनमे से अधिकांश बाहरी क्षेत्रो मे जाकर धर्माराधन कराने मे सक्षम थे। करीब २० भाई-बहन १२ व्रती बने। महावीर जयन्ती के अवसर पर त्याग, तप और नियमों की झड़ी लग गई। वीरवाल, खटीक, गूजर, कोली आदि जातियों के लोगों ने शराब, मास-सेवन एवं जीवहिंसा न करने के संकल्प लिए। यहाँ से विहार कर आलनपुर, कुस्तला, चोरू, बिलोता, खातोली, समिधि, जरखोदा, देई, बांसी, राणीपुरा, दबलाणा होते हुए आप बूदी पधारे। यहाँ कोटा, इन्दौर, सवाईमाधोपुर तथा सौराष्ट्र के श्री सघ द्वारा क्षेत्र स्पर्शन की विनति की गई। यहा डॉ कल्याणमलजी लोढा ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया तथा आगम साहित्य सेवा हेतु श्री गजसिंह जी राठौड़ का अभिनन्दन किया गया। चरितनायक ने कोटा प्रवास काल मे संकल्प व्यक्त किया - 'जहाँ चातुर्मास मे नि शुल्क सामूहिक भोजन की चौका पद्धति होगी, वहाँ मैं चातुर्मास नही करूँगा।" यह आचार्य प्रवर का युगानुकूल क्रान्तिकारी कदम था।

आप दूरदर्शी एव चिन्तनशील साधक थे। आपने समझ लिया था कि अब आवागमन के साधनो की उपलब्धता बढ़ती जा रही है। अतः नि.शुल्क चौका प्रथा के रहते छोटे-छोटे क्षेत्र अपने यहाँ चातुर्मास कराने का साहस कैसे जुटा पायेंगे। करुणा सिन्धु पोरवाल क्षेत्र को वीतरागवाणी से उपकृत करना चाहते थे, अत. उनका संकल्प लोगो को अटपटा लगते हुए भी यह एक क्रान्तिकारी एव समुचित कदम था। आचार्यप्रवर के इस सकल्प का परिणाम तत्काल ही सामने आया और सवाईमाधोपुर के श्रद्धालु-भक्तो की मनोकामना पूर्ण हो गई। चातुर्मासार्थ उनकी भावभरी विनति स्वीकृत हो गई।

कोटा छावनी मे महासती छगनकुंवर जी ठाणा १२ से वंदन हेतु पधारीं। पजाबी महासती श्री

कौशल्याकुंवरजी आदि ठाणा ४, महासती श्री मैना सुन्दरी जी म.सा. ठाणा ४ ने भी दर्शन-वन्दन आदि की सेवा का लाभ लिया। प्रवचन से प्रभावित हो त्रिलोकजी कोठारी ने २५० शराब-त्यागी एवं २५० शाकाहारी बनाने की प्रतिज्ञा की। महावीरजी भण्डारी, चाँदमलजी बोथरा, राजमलजी पोरवाल आदि अनेक श्रावको ने सजोड़े शीलव्रत अंगीकार किया।

अपने जीवन का निर्माण करने के प्रति आप सदैव सजग रहते थे। उसमे कभी विराम का अवकाश ही नही था। सयम जीवन के ५३ वर्ष व्यतीत हो जाने पर आपने एक दिन विचार किया-"परमात्मा का जो शुद्ध-बुद्ध वीतरागतामय स्वभाव है वही मेरा स्वभाव है। कर्मो के आवरण ने जो मेरे स्वभाव को ढक रखा है, दृढ सकल्प के साथ मुझे आवरण दूर कर अपना शुद्ध स्वरूप प्राप्त करना है। काम-क्रोध-लोभ-मोह मेरा स्वभाव नही है। मै दृढता से निश्चय करता हूँ कि कैसी भी परिस्थिति हो, मुझे काम-क्रोध-लोभादि के अधीन नही होना है। जब भी प्रसग आयेगा, मै दृढता से विकारो का मुकाबला करूंगा।" गुरुदेव का यह सकल्प उनके जीवन का लक्ष्य बन गया। उस शुद्ध स्वर्णमय चारित्र मे मणि का प्रकाश मिल गया।

- सवाईमाधोपुर चातुर्मास (सवत् २०३१)

कोटा से केशोराय पाटन, कापरेन, लबान, लाखेरी, इन्द्रगढ़, बाबई, बगावदा, पचाला,चौथ का बरवाड़ा, बिलोपा,बजरिया, आलनपुर होते हुए सवत् २०३१ के ५४ वे चातुर्मासार्थ आप सन्तमण्डल के साथ ठाणा ८ से आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी को सवाईमाधोपुर पधारे। बड़े महापुरुषो के चातुर्मास का सवाईमाधोपुर क्षेत्र मे यह क्वचित् प्रथम सयोग था। सतो की सुविहित परम्परा के शुद्ध साध्वाचार की समाचारी से बहुत कम लोग परिचित थे, लोगो के धर्मध्यान के लिये अपेक्षित स्थान भी उपलब्ध नही था। सामान्यत क्षेत्र की स्थिति साधारण थी। कोई कल्पना ही नही कर सकता था कि लक्षाधिक भक्तो के पूज्य, जन-जन के आराध्य, देश के कोने कोने मे जिनवाणी की पावन गगा प्रवाहित करने वाले भगीरथ, सामायिक स्वाध्याय के सदेशवाहक ही नही वरन् पर्याय, ज्ञानक्रिया के उत्कृष्ट आराधक, प्रबल अतिशय के धनी, युगमनीषी युग प्रभावक आचार्य भगवन्त के चातुर्मास का लाभ छोटे से क्षेत्र सवाईमाधोपुर को मिल सकता है ? यहाँ के सीधे सरल सामान्य लोग भी मन ही मन सोचते रहते, व्यवस्था होगी, पूज्यपाद के दर्शनार्थ पधारने वाले सहस्रो श्रद्धालु भक्तो का स्वधर्मी वात्सल्य हम 'सुदामा के चावल' के माफिक किस प्रकार कर पायेगे।

पूज्यपाद बस स्टेण्ड के पास बसल भवन मे विराजे। प्रवचन योग्य कोई स्थान नही था। भक्तगण ने बसलभवन के बाहर ही पाट लगाकर प्रवचन की व्यवस्था की। चार माह तक का यह दृश्य सहज ही पूर्वाचार्यों द्वारा दुकानो मे किये गये वर्षावासो की स्मृति दिला देता था। इसीलिये तो स्थानकवासी परम्परा के महापुरुषो को 'ढूढिया' सबोधन से सबोधित किया गया है।

महापुरुषो की कृपा जिस पर हो जाय, उसका भाग्योदय होना सहज स्वाभाविक है। भला 'पारस' का स्पर्श कर लोहा 'स्वर्ण' बनने से कब रुका है। महापुरुषों की चरण रज जिस धरती पर पड़ जाय वह क्षेत्र साक्षात् प्रत्यक्ष तीर्थधाम हो जाता है। कहना न होगा, पूज्यप्रवर के इस चातुर्मास ने सवाईमाधोपुर क्षेत्र का कायाकल्प कर दिया। जिस क्षेत्र मे कम ही लोग सामायिक करने वाले मिलते, वहा सैकडो स्वाध्यायी तैयार हो गये, जो आज भी भारत के कोने-कोने मे पर्युषण के अवसर पर अपनी सेवाएँ प्रदान कर 'गुरु हस्ती' के सदेश स्वाध्याय व सामायिक का उद्घोष करते हुए जिनशासन की महती प्रभावना कर रहे हैं। आज सवाईमाधोपुर क्षेत्र आर्यभूमि भारत के धार्मिक

नक्शे मे प्रमुख क्षेत्र के रूप मे अंकित है।

इस चातुर्मास के कारण सवाईमाधोपुर क्षेत्र के बन्धु बाहर के भक्तों के परिचय व सम्पर्क मे भी आये। आज यह क्षेत्र आर्थिक सम्पन्नता, सामाजिक प्रतिष्ठा व धर्माराधन सभी क्षेत्रो में आगे बढा है।

आचार्य श्री का सवाईमाधोपुर चातुर्मास पोरवाल क्षेत्र के लिए वरदान सिद्ध हुआ। यहाँ पर २ स्वाध्यायी शिविर लगे, ५१ स्वाध्यायी बने, लगभग २० दम्पतियो ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया तथा अनेक बारह व्रती बने। पचासों व्यक्तियों ने एक वर्ष का शीलव्रत स्वीकार कर अपने जीवन को संयम की ओर मोड़ा। इस चातुर्मास से इस क्षेत्र में न केवल धार्मिक जागृति आई , अपितु सामाजिक एवं सास्कृतिक दृष्टि से भी सुधार हुआ। अनेक अजैन बन्धुओ ने भी चातुर्मास का लाभ उठाया। निकटवर्ती ग्राम-नगरो एव पल्लीवाल क्षेत्र के बन्धु भी लाभान्वित हुए। इस पंचमासी वर्षावास मे आचार्यश्री ने साम्वत्सरिक पर्व को सभी जैन सम्प्रदायो द्वारा एक दिन मनाये जाने हेतु अपनी भावना अभिव्यक्त की तथा समाज में एकता की दृष्टि से उत्सर्ग करने का आह्वान भी किया। जयन्ती भाई, हिम्मत भाई, आनन्दराज जी, वृद्धिचन्दजी आदि के नेतृत्व मे बम्बई से एक शिष्टमण्डल भी उपस्थित हुआ जो ज्ञान क्रिया के समन्वय इन महायोगी के पावन दर्शन व शासन हितकारी विचारो से प्रभावित हुआ। आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे प्रथम भाद्रपद मे सम्वत्सरी पर्व मनाया गया तथा दूसरे भाद्रपद मे साधना- सप्ताह मनाया गया। इसी चातुर्मास मे देशभर मे भ. महावीर का २५०० वा निर्वाण महोत्सव मनाया जा रहा था। (जिसकी उपलब्धियो का सकेत पहले सवत् २०३० के जयपुर चातुर्मास के विवरण के साथ मे किया गया है।) आचार्यप्रवर ने इस अवसर पर साध्वीप्रमुखा श्री सुन्दरकवर जी म.सा को प्रवर्तिनी पद प्रदान किया तथा महासती श्री जसकवरजी म.सा. को शासन प्रभाविका के पद से अलकृत किया।

वीर निर्वाण दिवस पर प्रवचन मे आपने फरमाया कि वर्तमान में भगवान महावीर के उपदेशो को अपनाने की महती आवश्यकता है। अपरिग्रह पर विचार प्रकट करते हुए आपने उद्बोधन दिया —**"पशु वनों में मुक्त मन से मिलकर खाते-पीते है, अधिकार नही जताते, वैसे ही मानव बिना अधिकार एवं ममता के रहे तो कोई दुःख नहीं हो।"**

आचार्य श्री को अपने नाम, प्रशसा आदि से दूर रहना ही प्रिय था। आपके कितने ही लेख जिनवाणी मे पूर्व मे 'बटुक' के नाम से प्रकाशित होते रहे। इस चातुर्मास का यह भी एक क्रान्तिकारी कदम ही कहा जाएगा, जब आपने यह घोषणा की कि भविष्य मे आपके नाम के पूर्व १००८ नही लगाया जाए। तीर्थङ्करो मे १००८ गुण होने के कारण उनके पूर्व ही यह सख्या लगाना उचित है। आपने ने फरमाया कि साधु तो षट्काय प्रतिपालक होता है। इससे बढ़कर उसके लिए और क्या विशेषण हो सकता है ? कोई नही।

चातुर्मासकाल मे राजस्थान उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री भगवती प्रसादजी बेरी, भरतपुर के सेशन जज श्री जसराज जी चौपड़ा, राज्य के शिक्षामन्त्री श्री फारुख हुसैन आदि ने आचार्य श्री के दर्शन कर प्रमोद का अनुभव किया। यादव जी, दरडाजी एवं मुसिफ जज ने सप्त व्यसनों का त्याग किया। ज्ञानाराधन, तप-आराधन आदि के साथ गुरुदेव का लेखन कार्य भी प्रगति पथ पर चलता रहा। बहनों ने भारी मूल्य के कपड़े एव जेवर पहनकर व्याख्यान मे आने का त्याग किया। धर्म की आवश्यकता का प्रतिपादन करते हुए आपने फरमाया — **"धर्म केवल स्थानक की वस्तु नहीं, वह जीवन-व्यवहार के हर क्षेत्र से जुड़ा हुआ होना चाहिए। धर्म को जीवन की प्रयोगशाला में लाना चाहिए। जिस प्रकार रक्त सारे शरीर में व्याप्त न रहे, केवल किसी एक अंग – हाथ, पैर या**

मस्तिष्क में ही केन्द्रित रहे तो शरीर के अन्य अंग रक्त के अभाव में निष्प्राण हो जायेंगे। इसी प्रकार धर्म की सार्थकता या उपयोगिता जीवन के हर अंग, हर व्यवहार में प्रवाही रहने में ही है। प्रवाही धर्म जीवन में उसी प्रकार तेजस्विता लाता है जिस प्रकार प्रवाही रक्त तन में तेजस्विता लाता है।"

इस चातुर्मास काल मे लगभग एक माह आपने आलनपुर के स्थानक मे विराजकर साधना की । यहॉ अन्नाजी आदि हरिजन बन्धुओ , मोहनजी गूजर, सीता शर्मा आदि ने सप्तव्यसन, होटल गमन, मद्यपान, प्याज एव अण्डा सेवन आदि का यथेच्छ त्याग किया। कई भाइयो ने चातुर्मास मे मद्य-मास के त्यागी बनाने के सकल्प लिए। वीर निर्वाण दिवस पर उपवास, दयाव्रत एव मौन सामायिक का आराधन हुआ। कार्तिक शुक्ला एकम को २५ व्यक्तियो ने सामूहिक रूप से एक वर्ष के लिए ब्रह्मचर्यव्रत का नियम लिया।

आप समागतो को नियम दिलाकर उनका जीवन-निर्माण करने के प्रति भी सदैव जागरूक रहे। आपने जीवन-निर्माण के लिए जो नियम प्रस्तावित किए, वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं—

१ प्रात एक प्रहर दिन तक क्रोध नही करना।

२ परस्पर बातचीत मे सामने वाले को जोश आवे तब बात को आगे के लिए स्थगित कर देना।

३ किसी भी साथी की पीछे से निन्दा नही करना।

४ किसी भी सस्था या सभा को वचन देकर पार निभाना।

५ एक घण्टा मौन का अभ्यास करना।

६ प्रतिदिन १५ मिनट 'ॐ अर्हम्' या 'सोऽहम्' का ध्यान करना।

७ कम से कम १२ बार अरिहन्त को वन्दन करना।

८ अपने साथी स्वाध्यायी मे बन्धुभाव रखना।

सवाईमाधोपुर का ऐतिहासिक चातुर्मास सम्पन्न कर आचार्य श्री मुनिमडल सहित बजरिया पधारे, जहॉं कई खटीको ने मास-सेवन का त्याग किया। आबाल ब्रह्मव्रती महापुरुष के पदार्पण एव अपने निवास पर विराजने की खुशी मे श्रद्धाभिभूत भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी गुलाबसिंह जी दरडा ने एक वर्ष के शील का नियम स्वीकार कर अपनी श्रद्धाभक्ति अभिव्यक्त की। वहॉं से करेला, चौथ का बरवाड़ा, पावडेढ़ा होते हुए आप सिवाड़ पधारे। उल्लेखनीय है कि विभिन्न ग्रामो मे २५ चमार घरानो ने मास-मदिरा का त्याग किया, विभिन्न जातियो के विभिन्न लोगो मे आपसी मनमुटाव का शमन हुआ तथा शीलव्रत के नियम लिए गए।

• जयपुर मे तप-महोत्सव

परम पूज्य गुरुदेव का विहार मालव भूमि की ओर होने की सभावना थी। इधर जयपुर मे महातपस्विनी सुश्राविका श्रीमती इचरजकवर जी लुणावत की दीर्घ तपस्या चल रही थी। उनका दृढ सकल्प था कि परम पूज्य गुरुदेव के मुखारविन्द से प्रत्याख्यान लेकर ही वे अपनी दीर्घ तपस्या का पारणक करेगी। जयपुर संघ व लुणावत परिवार ने भावभरी विनति व महातपस्विनी बहिन का सकल्प भगवन्त के चरणों में प्रस्तुत किया।

तपस्विनी बहिन की भावना का समादर करते हुए आचार्यप्रवर का विहार जयपुर की ओर हुआ। ग्रामानुग्राम विहार करते हुये आपका जयपुर पदार्पण हुआ।

बहिन इचरजकंवर जी की १६५ दिवसीय दीर्घ तपस्या का पूर सन्निकट था । जयपुर सघ तप के इस महा आयोजन को विराट् रूप देने को उत्सुक था। इस दिन का प्रवचन जयपुर के रामलीला मैदान मे था, प्रवचन सभा मे अनेको ग्राम नगरो के भाई-बहिन तप का अनुमोदन करने हेतु उपस्थित थे। भारत सरकार के तत्कालीन खाद्य मत्री श्री जगजीवन राम राज्य के मुख्यमत्री श्री हरिदेव जोशी, वित्तमंत्री चन्दनमल वैद आदि राजनेता भी उपस्थित थे।

परम पूज्य गुरुदेव ने तप का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए राजनेताओ एव जन समुदाय मे तप की प्रेरणा की। अपने विचार व्यक्त करते हुये आपने फरमाया कि देश के स्वतत्रता सग्राम मे गाधी के तप की महनीय भूमिका रही है, आज के राजनेताओ को भी इस बात को समझना चाहिये। हितकर पथ्य श्री जगजीवनराम को मित व इष्ट नही लगा एव वे अपने भाषण मे अति कर गये। भक्त समुदाय की भावनाए आहत थी, पर क्षमा आदि यतिधर्म के आराधक महासत ने इसे सहज रूप मे लिया और ध्यान का समय होते ही वे अपने दैनन्दिन नियम के अनुसार ध्यान-साधना मे निरत हो गये।

पश्चात् लाल भवन पधारे । प्रबल उत्साही युवा भक्त श्री विमल चन्दजी डागा, जयपुर ने गुरुदेव के चरणो मे निवेदन किया —"भगवन् ! आज तो तीसरा नेत्र खोल देते।" क्षमा सागर, सयम साधक का त्वरित प्रत्युत्तर था— "भोलिया ! तूने बैठे-बैठे ही पचेन्द्रिय जीव की हत्या का पाप मोल ले लिया। करना तो दूर, मेरे मन मे भी ऐसा ख्याल आ जाता तो मेरी साधुता ही चली जाती।"

आपके दर्शन पाकर तथा आपसे वार्ता कर मत्रीगण, न्यायाधिपति, वैज्ञानिक, दार्शनिक, कवि,लेखक, प्रशासनिक अधिकारी, प्रोफेसर, चिकित्सक, वकील, उद्योगपति, व्यापारी आदि लक्ष्मी तथा सरस्वती के प्रतीक अपने को गौरवान्वित अनुभव करते थे। जनसाधारण भी आपसे प्रभावित था।

आचार्य श्री विहार क्रम मे ठाणा ७ के साथ दूदू, हरसोली, पडासोली, डीडवाना, किशनगढ़ मदनगज आदि क्षेत्रो को फरसते हुए आप ३ फरवरी १९७५ को अजमेर पधारे, जहाँ १३ फरवरी को महावीर भवन पाण्डाल मे आपश्री की दीक्षा जयन्ती मनायी गयी। जिलाधीश रणजीतसिह जी कूमट ने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि हमे इस आध्यात्मिक हीरे से आध्यात्मिकता का प्रकाश प्राप्त कर अपने हृदय मे स्वाध्याय की ज्योति जगानी चाहिए। १६ फरवरी को वयोवृद्ध प्रवर्तक श्री हगामीलालजी म.सा. के साथ स्वामीजी श्री पन्नालालजी म.सा की पुण्यतिथि एव आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी मसा की दीक्षा तिथि पर सयुक्त प्रवचन हुआ। यहाँ से केसरगज, तबीजी, बिडगच्यावास होते हुए लीड़ी, खरवा, ब्यावर, बर, निमाज, जैतारण, बिलाड़ा, भावी, पीपाड़, कोसाणा, मादलिया, रतकूड़िया होते हुए आप चैत्रशुक्ला पचमी को भोपालगढ़ पधारे। भोपालगढ़वासियो ने महावीर जयन्ती हेतु भावभरी विनति गुरुचरणो मे प्रस्तुत की। चरितनायक ने पाँच कार्यों के सकल्प की भावना के आधार पर स्वीकृति प्रदान की —१ मौन सामायिक २. दयाव्रत ३ व्यसन-त्याग ४. अहिंसा प्रचार ५ शिक्षण का उचित सकल्प। महावीर जयन्ती के अनन्तर आप बड़ा अरटिया, बुचेटी, दईकड़ा बनाड़ होते हुए जोधपुर पधारे।

• जोधपुर में दीक्षा-प्रसङ्ग

जोधपुर के सिंहपोल में अक्षय तृतीया के अवसर पर वर्षीतप के १७ पारणे हुए तथा न्यायाधिपति श्री श्रीकृष्णमलजी लोढा एवं प्रियगायक भण्डारी दौलत रूपचन्दजी ने सदार आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। आपश्री के सान्निध्य में भीवराज जी कर्णावट भोपालगढ़ की वैशाख शुक्ला त्रयोदशी को और श्री ज्ञानराज जी

अब्बाणी (सुपुत्र श्री गुलराज जी एव रतनकंवर जी अब्बाणी) जोधपुर तथा श्री महेन्द्र जी लोढा (सुपुत्र श्री पारसमलजी एव सोहनकवर जी लोढा) महामन्दिर जोधपुर की भागवती दीक्षा वैशाख शुक्ला चतुर्दशी संवत् २०३२ तदनुसार २४ मई १९७५ को स्टेडियम मैदान मे सम्पन्न हुई। स्थविर सौभागमुनि जी एव श्रुतधर प्रकाशमुनि जी आदि ठाणा दीक्षा मे पधारे। महासती सुन्दरकँवरजी म., उमरावकवरजी 'अर्चना', बिलमकवरजी आदि सती-मंडल भी दीक्षा के अवसर पर उपस्थित हुआ। समस्त कत्लखाने बन्द रहे। यह दिवस अहिसा दिवस के रूप मे मनाया गया। आचार्यप्रवर ने फरमाया– **"दीक्षा आत्मा को अन्तरात्मा और फिर परमात्मा बनाने का साधन है। आत्मा पर राग, द्वेष एव मोह का आवरण आया हुआ है। इसी आवरण के कारण आत्मा का असली स्वरूप दिखाई नही देता। दीक्षा इसी आवरण को हटाने का साधन है।"**

• ब्यावर चातुर्मास (संवत् २०३२)

यहाँ से ज्येष्ठ कृष्णा १२ को विहार कर फिटकासनी होते हुए चरितनायक काकेलाव पधारे, जहाँ गगाविष्णु सरपच, लालचन्दजी माहेश्वरी आदि ने धूम्रपान का त्याग किया। फिर पालासनी, भेटूदा, सावलता मोटा, भाखरी, दूधिया बगड़ी, कानजी मदिर होते हुए आप पाली विराजे। आषाढ कृष्णा एकम सवत् २०३२ को महासती छोटे किशनकवरजी का स्वर्गवास होने पर श्रद्धाजलि दी गई। फिर जाडन, धाकड़ी, सोजत सिटी, सोजत रोड़, सांडिया, चडावल, पीपलिया, झूठा, कुशालपुरा, निमाज, बर, सेदडा आदि मे कइयो को सामायिक स्वाध्याय का नियम दिलाते, अनेकों से कुव्यसन छुड़ाते, रात्रि भोजन न करने के महत्त्व को समझाते, अभक्ष्य भक्षण का निषेध कराते आप ग्रामानुग्राम विहार करते सवत् २०३२ के चातुर्मास हेतु ब्यावर पधारे, जहाँ तपश्चर्या के कीर्तिमान स्थापित हुए। विरक्त गौतम जी आबड पालासनी से ही ज्ञानाराधन हेतु आचार्य श्री के चरणो मे साथ थे। महासती सायरकवरजी, महासती मैनासुन्दरीजी आदि ठाणा ५ का चातुर्मास भी यही हुआ। आचार्य पूज्य श्री शोभाचन्द्रजी म सा की पुण्यतिथि पर ५०० आयबिल हुए तथा आयम्बिल साधना का क्रम अनवरत चलता रहा। सप्त दिवसीय स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर का आयोजन हुआ। 'स्वाध्याय सघ' तथा 'श्री महावीर जैन वाचनालय' का शुभारम्भ हुआ। स्वाध्याय सघ जोधपुर के सभी स्वाध्यायियो का पहली बार त्रिदिवसीय सम्मेलन रखा गया, जिसमे आचार्यप्रवर ने श्रावक समाज मे स्वाध्याय द्वारा ज्ञानवृद्धि कर भगवान् महावीर के पावन सन्देश को घर-घर पहुँचाने की पावन प्रेरणा की। स्वाध्याय सघ के तत्कालीन सयोजक श्री सपतराजजी डोशी ने सम्मेलन मे बताया कि सवत् २००२ मे तीन क्षेत्रो मे सेवा देने वाले ५-६ स्वाध्यायियो से प्रारम्भ स्वाध्याय सघ मे सम्प्रति ४८५ स्वाध्यायी है तथा ८८ स्थानो पर १८८ स्वाध्यायियो ने पर्युषण-सेवा दी है। स्वाध्याय सघ की इस प्रगति पर सबने प्रमोद का अनुभव किया। इस अवसर पर स्वाध्यायियो एव श्रावक-श्राविकाओ ने निम्न लिखित व्रत-नियम धारण किए–

१ शादी मे दहेज, टीका आदि का ठहराव नही करेगे और दहेज उत्पीड़न नही करेगे।

२ सप्त कुव्यवसन तथा बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू सेवन का त्याग रखेगे।

३ दीपावली, उत्सवो एव समारोहो मे आतिशबाजी नही करेगे।

४ होली के अवसर पर अपशब्दोच्चारण तथा कीचड़ आदि का प्रयोग नही करेगे।

५ बारात मे नृत्य नही करेगे।

६ प्रतिदिन २० मिनट स्वाध्याय करेंगे।

इसके अतिरिक्त तपस्या पर आडम्बर और लेन-देन न करने तथा मृत्यु भोज न करने पर भी बल दिया गया। बरेली के नोहरे मे 'श्री वर्धमान जैन रत्न पुस्तकालय' का शुभारम्भ हुआ। चातुर्मास समापन अवसर पर स्वाध्याय सघ के सयोजक श्री सम्पतराज जी डोसी का अभिनंदन किया गया।

अभी तक चतुर्विध सघ की सार सम्हाल व सघ सदस्यो से सम्पर्क का कार्यभार सम्यग् ज्ञान प्रचारक मडल द्वारा सम्पादित किया जा रहा था। मडल पर साहित्य प्रकाशन, स्वाध्याय सघ के संचालन आदि अन्य महनीय कार्यों का दायित्व भी था। अनेक सुज्ञ एव सगठन प्रेमी श्रावको की लम्बे समय से भावना थी कि सघ श्रावको का औपचारिक सगठन कायम किया जाकर सघ सदस्यो के सगठन, समन्वय व उनसे सतत सम्पर्क का कार्य व्यवस्थित रूप से आगे बढाया जाय। इस चातुर्मास काल मे ब्यावर मे विभिन्न क्षेत्रो के श्रावकों का सम्मलेन हुआ एव सर्वसम्मति से 'अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ' के नाम से श्रावक सघ का औपचारिक सगठन कायम किया गया। न्यायमूर्ति श्री सोहननाथ जी मोदी को सस्थापक अध्यक्ष मनोनीत किया गया और नवयुवक ज्ञानेन्द्रजी बाफना को मत्री पद का दायित्व सौपा गया। सघ सगठन कायम करने मे भीलवाड़ा निवासी दृढ सघनिष्ठ सुश्रावक श्री पाचूलालजी गाधी व जयपुर निवासी सगठनप्रेमी श्रावक श्री चन्द्र सिंहजी बोथरा की महनीय भूमिका थी।

• बाड़मेर की ओर

ब्यावर से विहार कर आप जैतारण, सोजत, राणावास, नाडोल होते सादड़ी, फालना, साडेराव, तखतगढ़ को पावन करते हुए आहोर पधारे। आहोर तथा गोदन मे आपने प्राचीन हस्तलिखित भण्डारो का अवलोकन किया। आपके जालोर पदार्पण पर शिक्षाविदो, न्यायविदो तथा विज्ञानविदो के साथ धर्म-चर्चा का चिरस्थायी प्रभाव रहा। यहाँ से ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आप सिवाना पधारे, जहाँ धार्मिक पाठशाला का शुभारम्भ हुआ, स्वाध्याय की प्रवृत्ति अभिवृद्ध हुई। यहाँ से कुशीप, थापण, आसाढा, नाकोडा, सिणली, डाडाली, सणपासरनु, रावतसर आदि को पावन कर बाड़मेर पधारे। यहाँ पर श्री मधुकरजी म. एव श्री कन्हैयालालजी म. 'कमल' के साथ मधुर मिलन हुआ।

• माणकमुनि जी का सथारा

पूज्यवर्य का विहार क्रम बाड़मेर की ओर था। इधर जोधपुर में विराजित भजनानन्दी श्री माणकमुनि जी महाराज साहब ने सथारा स्वीकार कर लिया।

इधर सथारा दिन प्रतिदिन आगे बढ रहा था, उधर गुरुदेव के चरण बाड़मेर की ओर बढ़ रहे थे। सथारास्थ मुनिवर्य की भावना बलवती थी, मन में प्रबल विश्वास था कि जीवन की इस अतिम बेला व अतिम मनोरथ की पूर्णाहुति मे जीवन के अनन्य उपकारी सयमदाता महनीय गुरुदेव दर्शन व साज देने एव पाथेय प्रदान करने अवश्य पधारेगे। जन-मानस मे भी यह चर्चा थी कि गुरुदेव के बाड़मेर की ओर बढ़ते चरण इस बात के इगित है कि सथारा अभी लम्बा चलना है। सथारा आगे बढ़ रहा था, स्वास्थ्य मे निरन्तर सुधार हो रहा था, आत्मबल बढ़ रहा था।

संथारा-ग्रहण के पूर्व जो साधक भयंकर क्षुधारोग से त्रस्त था, भूख जिसे असह्य थी, आज अपने अतिम मनोरथ की साधना मे शांत सहज लेटे आत्मभाव में लीन था। मानो जीवन की सभी इच्छाएँ आकाक्षाएँ पूर्ण हो गई हो, आत्म-विजय का यह अपने आप मे अद्वितीय उदाहरण था। महामुनि के चेहरे पर अपूर्व तेज था। दर्शनार्थी ही नही अन्य धर्मो के साधक, फक्कड़ भी समाधिस्थ महात्मा को देखकर आश्चर्याभिभूत रह जाते। बाड़मेर पधारने के पश्चात् पूज्य गुरुदेव का पुन. जोधपुर की ओर विहार हुआ और उग्र विहार कर २८ फरवरी १९७६ को गुरु भगवन्त जोधपुर पधारे।

गुरु से पाथेय पाकर शिष्य आत्म-विकास की ओर सतत गतिमान था। विभिन्न ग्राम नगरो से दर्शनार्थी उपस्थित हो रहे थे। यही नही विभिन्न धर्मावलम्बी भी जीवित समाधि का यह साक्षात् स्वरूप देखकर आश्चर्याभिभूत थे। मरणविजेता महासाधक से साता पूछने पर एक ही प्रत्युत्तर था-आनन्द है।

३५वे दिन फाल्गुन शुक्ला अष्टमी को प्रशान्तात्मा श्री माणकमुनि जी म.सा. का यह मनोरथ सीझा और उनकी आत्मा इस नश्वर मानव देह का त्याग कर देवलोक गमन कर गई। दूसरे दिन उनके पार्थिव देह की अतिम यात्रा मे जोधपुर व अन्य ग्राम-नगरों के हजारों लोग उपस्थित थे। अतिम यात्रा के मार्ग मे दोनो ओर हजारो लोग पंक्तिबद्ध श्रद्धाजलि समर्पित करने हेतु उपस्थित थे। जोधपुरवासियो की स्मृति मे यह अनूठी अतिम यात्रा थी।

ऋषभदेव जयन्ती के अवसर पर आपने शीतला माता की पूजा के बहाने ठडे और बासी भोजन सेवन की प्रथा मे निहित अज्ञान के मर्म को उजागर किया। आपने फरमाया –"प्राचीन काल मे लोग फल-फूलो पर निर्भर थे। उन लोगो के गरम खाने का तो प्रश्न ही नही था, अत महिलाओ को शीतला माता के प्रकोप का झूठा बहम दिल से निकाल देना चाहिए।" केन्द्रीय कारागार मे एक दिन आप प्रवचन हेतु पधारे। कैदियो को देखकर आप द्रवित हो उठे। हृदय करुणा से आप्लावित हो गया। जैन दर्शन के कर्म सिद्धान्त का स्मरण हो आया। आपने प्रवचन मे फरमाया "बुराइयो के फल से बचने का उपाय है – जीवन मे सदाचार को अपनाना। दूसरो के साथ हम अच्छा आचरण करके अच्छे बन सकते है। कृतकर्मों का परिणाम सबको भोगना पड़ता है, किन्तु सहज रूप से कर्मो का परिणाम भोगने वाला व्यक्ति कर्मों के बोझ से हलका होकर भविष्य को सुधार लेता है।"

- भोपालगढ़ मे दीक्षाएँ

यहाँ से भोपालगढ़ पधार कर आपने तीन दीक्षार्थिनी बहनो की दीक्षा के अवसर पर सयम और साधना मार्ग के महत्त्व तथा साधक जीवन के कष्टो को धैर्य, साहस और समभाव से सहन करने के मर्म को उद्घाटित किया। श्रीमती सज्जनकवर खीवसरा जोधपुर, कु. सोहनकवर काकरिया, भोपालगढ़ तथा कु मजु चगेरिया अजमेर की दीक्षाविधि चैत्र शुक्ला नवमी वि सवत् २०३३ दिनाक ८ अप्रैल १९७६ को आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से सोल्लास सम्पन्न हुई। इस दीक्षा मे १० सन्त मुनिराज तथा साध्वीप्रमुखा सुन्दर कवर जी आदि १२ महासतियो का सान्निध्य प्राप्त था। दीक्षा प्रदान करते हुए आचार्यप्रवर ने फरमाया –"जीवनभर के लिए सयम ग्रहण करने वाली इन मुमुक्षुओ का अब कोई सासारिक परिवार नही रहा। सारा साधु-साध्वी समाज ही अब इनका परिवार है। इन्हे सयममार्ग मे आने वाले कष्टो को धैर्य और समभाव के साथ सहन करना होगा।" दीक्षित बहनो के नाम क्रमश सरल कवर जी, सौभाग्यवतीजी एव मनोहरकवर जी रखे गए।

भोपालगढ़ से आचार्य श्री २८ अप्रेल ७६ को पीपाड़ पधारे, जहाँ मानव सेवा और स्वधर्मी वात्सल्य के लिए पद्मश्री मोहनलाल जी चोरड़िया का, धार्मिक शिक्षण एव समाज सेवा के लिए श्रीमती सज्जनजी बाई सा. (धर्मपत्नी श्री स्व श्री जवाहरनाथ जी मोदी) तथा श्रीमती इन्द्रकँवर जी बाई सा (धर्मपत्नी स्व श्री चादमल जी मेहता) जोधपुर का अभिनदन किया गया। अक्षय तृतीया के इस प्रसग पर ज्ञानगच्छीय महासती श्री भीका जी, सुमति कवर जी ठाणा ७, श्री कानकवरजी ठाणा ३, श्री लाड़कवरजी ठाणा ४ एव मुनि धर्मेशजी, गौतममुनिजी आदि ठाणा भी विराजमान थे। तदनन्तर आप रीया, पालासणी होकर जोधपुर पधारे।

आपके जोधपुर प्रवास पर आपके सान्निध्य मे २९ मई से १ जून १९७६ तक चार दिवसीय साधक शिविर का आयोजन किया गया, जिसमे सर्वश्री कन्हैयालालजी लोढ़ा, केवलमलजी लोढ़ा, डा. नरेन्द्र भानावत, श्री

चादमलजी कर्नावट, श्री जसकरण जी डागा, श्री सम्पतराजजी डोसी जैसे १६ वरिष्ठ साधको ने भाग लिया। आचार्य श्री ने साधना-पद्धति, साधना का महत्त्व, साधको की तैयारी तथा योग्यता पर विशेष प्रवचन और प्रेरक उद्बोधन दिए। स्वाध्याय के साथ चरितनायक श्रावकों को साधना की श्रेष्ठता एव उसमे निरन्तर अभिवृद्धि से जोड़ना चाहते थे। यह प्रयत्न उसी दिशा मे प्रारम्भ हुआ।

• बालोतरा चातुर्मास (सवत् २०३३)

आचार्य श्री का ५६वा चातुर्मास सवत् २०३३ मे बालोतरा मे ठाणा ६ से हुआ। जनमेदिनी ने दर्शन तथा जिनवाणी का श्रवण कर अपने आपको धन्य किया। आचार्यप्रवर की प्रेरणा से बालोतरा की लूनी नदी मे मछली मारना तथा कसाईखाना बद रहा।

पर्युषण पर्व से कुछ दिनो पूर्व व्याख्यान मे आचार्यप्रवर ने फरमाया कि यदि इस पर्व के पुनीत अवसर पर आठ दिनो तक अपना व्यापार, कारोबार, कँमठा आदि आरम्भ का कार्य बन्द रखा जाए तो आपके समाज के लिए गौरव की बात होगी। इससे सहज ही आप आरम्भ परिग्रह से बच कर दया सवर आदि व्रताराधन से जुड़ कर अपने जीवन का निर्माण तो करेगे ही, पर्वाराधन का सच्चा स्वरूप भी शासन प्रभावना का हेतु बनेगा तथा भावी पीढी को भी धर्म के सम्मुख होने का सहज अवसर समुपलब्ध होगा।

इस सकेत का फल यह हुआ कि **संघ ने सर्व सम्मति से पर्युषण के आठ दिनों पर आरम्भ एव व्यवसाय के कार्य बन्द रखने का निर्णय कर लिया। स्थानकवासी समाज के इस निर्णय से प्रभावित होकर तेरापथी एव मन्दिरमार्गी समाज का भी मन हुआ कि सम्पूर्ण ओसवाल जैन समाज में पर्युषण के दिनों में व्यापार एव आरम्भ के कार्य बन्द रखे जावें तो अत्युत्तम रहे।** तीनो समाज ने मिलकर ओसवाल समाज को इसके लिए प्रार्थना पत्र दिया। यह योजना ओसवाल समाज की बैठक मे सर्वसम्मति से पारित कर दी गई। इस प्रकार गुरुदेव का सकेत ऐसा सफल हुआ कि आज तक सम्पूर्ण जैन समाज के सदस्य पारस्परिक समन्वय से ८ या ९ दिनो के लिए पर्युषण मे अपने व्यापारिक प्रतिष्ठान एव निर्माण कार्य बन्द रखते है।

अनेक प्रभावशाली लक्ष्मीपति दम्पतियो द्वारा आजीवन शीलव्रत ग्रहण करना, त्रिदिवसीय ध्यानयोग-साधना शिविर का आयोजन, श्री अखिल भारतवर्षीय महावीर जैन श्राविका समिति का द्वितीय अधिवेशन समारोह, नारी शिक्षा एव नारियो मे अधविश्वास निवारण हेतु चेतना-जागृति कार्यक्रम बालोतरा चातुर्मास की महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ रही। प्रवचनो से प्रेरित होकर सपूर्ण जैन समाज ने पर्युषण पर्व के पावन दिनो मे आरभ समारभ रूप व्यवसाय बद रखने का निर्णय लिया, जो अब भी फेक्टरियों को बद रखकर पालन किया जा रहा है। चातुर्मास समापन के अवसर पर जिलाधीश सज्जननाथ जी मोदी ने जैसलमेर पधारने की विनति की।

आत्म-नियन्ता आचार्य श्री यहाँ से विहार कर कनाना, पाडलू तथा समदड़ी पधारे। आप श्री के प्रभाव से तीनो गाँवो में व्याप्त विवाद एव मन मुटाव दूर होकर परस्पर सौहार्द का वातावरण बना। निकटवर्ती क्षेत्रो मे अपने सयम के आदर्श से जन-जीवन को मूक तथा मुखर साधना संदेश देते हुए आपश्री २४ दिसम्बर ७६ को पाली पधारे। स्थविर सौभागमुनिजी, श्रुतधर प्रकाशमुनि जी, उत्तम मुनि जी आदि ठाणा ४ अगवानी मे सामने पधारे। यहाँ तपस्वीराज श्री चपालालजी म. ठाणा ८ का सुराणा मार्केट स्थानक में मिलन हुआ। पौषशुक्ला चतुर्दशी को परमपूज्य चरितनायक के जन्मदिन पर तपस्वीराज पूज्य श्री चपालालजी म.सा ने 'हलाहल कलयुग मत जाणो रे बडे

बड़े मुनिराज...' भजन द्वारा अपने भाव व्यक्त किये। वीर पुत्र प रत्न श्री घेवरचदजी म.सा ने अपनी श्रद्धाभिव्यक्ति करते हुए 'बाल्येऽपि सयमरुचि चतुर' नामक सस्कृत श्लोक की रचना कर आपका गुणानुवाद किया।

इस अवसर पर उपाध्यायप्रवर श्री पुष्करमुनिजी मसाके शिष्य श्री रमेशमुनिजी शास्त्री ने आपके यशस्वी जीवन पर सस्कृत मे अष्टक प्रेषित किया, जिसके कुछ पद्य इस प्रकार थे-

जगत्सु सन्तो बहवो महान्त
[illegible] महता महान्तम् ।
[illegible] मुनिषट्पद [illegible] ।
[illegible] हस्तिमल्लं स्तवीमि ॥१॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible] सन्तोऽपि [illegible]
[illegible] ॥२॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥३॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥४॥

पाली से सोजत, बगडी, पीपलिया होते पूज्यपाद २८ दिसम्बर को निमाज पधारे। यहाँ महासती कचन कवर जी मोतीझरा की अस्वस्थता के कारण विराज रही थी। आचार्य श्री ने स्वय पधार कर मगलपाठ सुनाया। जैतारण मे आपने प्रवचन मे फरमाया – "आत्मा का धर्म एक है। सस्था भेद से धर्म भिन्न नही होता। [illegible] पानी को साफ करने के प्रकार भिन्न-भिन्न है, वैसे ही आत्म-शुद्धि के प्रकार अलग-अलग हो सकते है। मूल मे जो आत्मशुद्धि की ओर विशेष अग्रसर करे वही प्रचार सस्था उपादेय है।" यहाँ से बिलाड़ा, पिचियाक, खेजरला, चिलराणी , पीपाड़, रीया, चोढ़ा , पालासनी फरसकर आप जोधपुर पधारे, जहाँ यथासमय २ मार्च ७७ को दृढ़धर्मी सेवाभावी स्व विजयमल जी कुम्भट की धर्मपत्नी राजुल बाई जी कुम्भट की दीक्षाविधि सम्पन्न हुई। नवदीक्षिता राजमती जी को महासती श्री बदनकवर जी मसा की निश्रा मे रखा गया। दीक्षा प्रसग पर स्वामीजी ब्रजलालजी म., मिश्रीमल जी म 'मधुकर' भी ठाणा ४ से पधारे।

कोसाणा मे अक्षय तृतीया पर्व-प्रसग पर निःस्वार्थ समाजसेवी दाऊलाल जी सारड़ा, न्यायाधीश श्री मगरूप चन्द जी भण्डारी, डा बख्तावरमल जी मेहता एव श्री मनोहरलाल जी चण्डालिया (अजमेर) का समाजसेवा के लिए अभिनदन किया गया। यहाँ बरवाला (गुजरात) परम्परा के आचार्य श्री चम्पक मुनि जी म.सा. के शिष्य श्री सरदारचन्द जी मसा., श्री तरुणमुनि जी एव श्री सवाईमुनि जी से स्नेह वार्ता हुई। मरुधर केसरी प्रवर्तक श्री मिश्रीमल जी म.सा की अस्वस्थता के समाचार प्राप्त हुए। आचार्य श्री उनकी सुखसाता की पृच्छा हेतु खवासपुरा

पधारे। यहाँ से गोटण, हरसोलाव होते हुए आपश्री आसावरी पधारे, जहाँ महासती श्री झणकार कवर जी ने वन्दन-प्रवचन सेवा का लाभ लिया। यहाँ से आप नोखा, खजवाणा, नीमली, कुचेरा, मुडवा होते हुए नागौर पधारे, जहाँ आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म.सा की १३२वी पुण्यतिथि १३२ दया-पौषध के साथ मनायी गई। एक स्वाध्याय शिविर भी आयोजित हुआ।

- अजमेर चातुर्मास (सवत् २०३४)

नागौर मे धर्मोद्योत कर खजवाना, मेड़ता रोड़, मेड़तासिटी, जसनगर (केकीन), गोविन्दगढ़ को पदरज एव वाग्वैभव से समृद्ध करते हुए आपका अजमेर मे सवत् २०३४ के चातुर्मासार्थ शुभागमन हुआ। यह आपश्री का सत्तावनवा चातुर्मास था.। आपके गुरु पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी की म पुण्यतिथि के उपलक्ष्य मे आपश्री ने देव और गुणी आचार्य गुरु के स्वरूप का प्रतिपादन कर तीर्थंकर महावीर मे दोनो रूपो की विद्यमानता बतायी तथा वर्तमान मे हमारे देव प्रत्यक्ष नही होने से सद्गुरु की आराधना को ही मानव के लिए कल्याणकारी बताया। क्योकि निर्दोष मार्ग का पथिक तथा प्रणेता सद्गुरु ही होता है।

पर्युषण मे आपके उद्बोधन विषय-विकारो का शमन कराने वाले, तप और सयम की प्रेरणा करने वाले तथा जीवन मे अध्यात्म आलोक को प्रज्वलित करने वाले थे। जिससे देश-देशान्तरवर्ती श्रावको के जीवन को सही दिशा मिली और उनके चिन्तन का दृष्टिकोण निर्मल हुआ। यहाँ पहली बार बहनो एव भाइयो मे दया-पौषध की अलग-अलग नवरगी की आराधना हुई। २० अक्टूबर १९७७ से षड्-दिवसीय स्वाध्याय-साधना शिविर प्रारम्भ हुआ जिसमे ४० स्वाध्यायी साधको ने भाग लिया। शिविर में विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, अधिवक्ता, शिक्षक एव व्यापारियो ने भाग लेकर ध्यान एव मौन के साथ कषाय-विजय का अभ्यास किया। सहायक आयकर आयुक्त श्री बीआर कुम्भट ने शिविर का उद्घाटन किया तथा समापन समारोह के मुख्य अतिथि माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान के अध्यक्ष श्री सत्यप्रसन्न सिहजी भण्डारी थे। जयपुर की श्राविकारत्न श्रीमती लाडबाई जी बोथरा (धर्मपत्नी श्री उग्रसिह जी बोथरा) अपने ३३ उपवास पर अजमेर आई एव ४२ दिन की तपस्या पूर्ण की।

मासखमण तप करने वाली तपस्विनी श्राविकाओ का अभिनदन, शिविरार्थियो का स्वाध्याय साधना-शिविर,-श्राविका समिति का अधिवेशन, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल का वार्षिक अधिवेशन, लोकाशाह जयन्ती समारोह आदि प्रसग उल्लेखनीय एव प्रेरणादायी रहे।

- भोपालगढ म आचार्य श्री नानालालजी म. से मिलन

अजमेर के उपनगरो को फरसते हुए पुष्कर पधारने पर मरुधर केसरी जैन पारमार्थिक सस्था भवन मे आपका प्रवचन अतीव प्रभावोत्पादक रहा। नदी मे पानी के कारण मार्ग बदलकर तबीजी, सराधना, लीडी खरवा होते हुए आप ब्यावर के गोलेच्छा गार्डन मे विराजे। यहाँ से फिर गिरी मे सामाजिक सामरस्य स्थापित कर निमाज, जैतारण होकर आप बिलाड़ा पधारे। यहाँ पर आपके कृष्णादशमी का मौनव्रत था। आचार्य श्री प्रत्येक गुरुवार एव कृष्णादशमी को मौनव्रत रखते थे। प्रवचन , वाचना आदि को छोड़कर आप मौन के समय मे आत्म-साधना, स्वाध्याय एव ध्यान मे ही सलग्न रहते थे। बिलाड़ा से पीपाड़, कोसाणा होते हुए १७ जनवरी १९७८ को आप भोपालगढ पधारे।

भोपालगढ़ प्रवासकाल मे आचार्यश्री की ६८वी जन्म-जयन्ती पर आचार्य श्री नानालाल जी म सा. तथा आपश्री के सयुक्त प्रवचन हुए। दोनो आचार्यों के मधुर-मिलन को देखकर आबालवृद्ध नरनारी भावविभोर हो उठे।

दोनो परम्पराओं के महापुरुषों का पीढ़ियों से प्रेम सम्बन्ध था। पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज सा. व पूज्य श्री मन्नालालजी म.सा की परम्परा के मध्य विवाद के समय भी उन महापुरुषों के मन में यह श्रद्धाभिभूत भाव था कि रत्नवंशीय प्रशान्तात्मा महामुनि श्री चन्दनमल जी म.सा. जो भी निर्णय देंगे, वह स्वीकार्य है।

चरितनायक के पूज्यपाद गुरुदेव पूज्य श्री शोभाचद जी म.सा के बीकानेर पधारने पर श्रावको को पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. ने यही समाचार कराये कि ये महनीय महापुरुष ज्ञान, क्रिया व सयम के उत्कट धनी हैं, इनकी सेवा मेरी सेवा है, यह समझ कर सघ इनके सेवा-सान्निध्य का पूर्ण लाभ ले।

चरितनायक जी का युवावय से ही पूज्य जवाहराचार्य व उनके उत्तराधिकारी महापुरुषों से निकट सम्पर्क रहा।/प्रथम श्रमण-सम्मेलन में वरिष्ठ आचार्यों में से एक पूज्य जवाहराचार्य ने वय में सबसे छोटे आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज साहब की प्रतिभा को पहिचानते हुए फ़रमाया- "ये यहाँ उपस्थित सभी आचार्यों में वय में छोटे हैं, पर सलाह सूचन में मैं इनको अपने से भी आगे देख रहा हूँ।"/

बाद मे श्रमण सघ के गठन से ही चरितनायक का उपाचार्य पूज्यश्री गणेशीलाल जी महाराज साहब से निकट सम्बन्ध रहा। दोनों महापुरुषों मे वैचारिक साम्य, एवं परस्पर निकटता तथा शासन हित भावना रही।

अब इन्ही महापुरुषों के उत्तराधिकारी आचार्य श्री नानालाल जी म.सा के मारवाड़ की ओर पधारने पर एव मैत्री सम्बन्ध को नवीन रूप देने की भावना ने आपके मन को भी सहज आकर्षित किया। दोनो महापुरुषो का क्रियोद्धार भूमि भोपालगढ़ मे स्नेह मिलन हुआ। परस्पर चर्चा-विमर्श हुए। दोनों परम्पराओ मे निकटता स्थापित हुई। अनुयायी श्रावक सघों के कार्यकर्ताओ में भी परस्पर चर्चाएं हुईं। दोनो महापुरुषो मे हुई चर्चा के उपरात परस्पर मैत्री सम्बन्ध मजबूत करने हेतु कई बाते तय हुईं। आचार्य श्रीनानालालजी म सा का आगामी चातुर्मास मारवाड़ के पट्टनगर जोधपुर में घोड़ो का चौक मे हुआ जिसमे रत्नवंशीय श्रावक-श्राविकाओ ने सेवा का पूर्ण लाभ लिया।

श्री जैन रत्न विद्यालय के स्वर्ण जयन्ती वर्ष के शुभारम्भ के उपलक्ष्य में नशाबदी अभियान तथा धार्मिक-शिक्षण के विकास को गति प्रदान की गई। २६ जनवरी को आचार्य श्री गणेशीलालजी महाराज की स्वर्गारोहण तिथि मनाने के अवसर पर दोनों आचार्यों ने महान् आत्माओ के पद-चिह्नो पर चलकर जीवन सफल बनाने की प्रेरणा की। यहाँ से २८ जनवरी को आप हीरादेसर पधारे। लोढा एव बोथरा परिवार ने सेवाभक्ति का लाभ लिया। यहाँ से विराई, विराणी, सेवकी आदि ग्रामो में धर्मोपदेश देते हुए जोधपुर पधारने पर पुन: उक्त आचार्यद्वय का सम्मेलन हुआ।

• पालासनी मे दीक्षा

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ के तत्त्वावधान में माघ शुक्ला दशमी १७ फरवरी १९७८ को दीक्षार्थी श्री गौतमचन्द जी आबड़ (सुपुत्र श्री जावतराजजी श्रीमती शान्तादेवीजी आबड़, पालासनी) , विरक्ता सुश्री कौशल्या देवीजी (सुपुत्री श्री पन्नालालजी कमलादेवी जी कटारिया, थाँवला) और सुश्री सोहनकवरजी (सुपुत्री श्री उदारामजी दाखीबाई भाटी, बारणी खुर्द) को पालासनी मे आचार्यप्रवर द्वारा आजीवन सामायिक-व्रत अंगीकार करा कर भागवती दीक्षा प्रदान की गई। बरगद की सघन छाया युक्त सभामडप जय घोषो के नारों से गूज उठा। इस अवसर पर प्राणिमित्र करुणामूर्ति, सतत स्वाध्यायी श्री डी.आर. मेहता का अभिनदन किया गया। धार्मिक एवं सामाजिक सेवाओ के उपलक्ष्य मे श्री सोहननाथ जी मोदी तथा श्री सिरहमल जी नवलखा का बहुमान किया गया। जोधपुर मे

बड़ी दीक्षा २४ फरवरी को आचार्यद्वय के सान्निध्य में सम्पन्न हुई। यहाँ सिंहपोल मे आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी मसा ठाणा १४, आचार्य श्री नानालालजी म.सा ठाणा ८, प्रवर्तिनी महासती श्री सुन्दरकवरजी मसा ठाणा २२ एव महासती नानूकवरजी मसा आदि सतीमण्डल का सौहार्दपूर्ण मिलन सबके हृदय - स्थल मे अकित हो गया। यहाँ पर धर्मोद्योत की अद्भुत लहर रही। नवदीक्षितो के नाम क्रमश गौतम मुनि, महासती कौशल्यावती एव महासती सोहनकंवर रखे गए।

यहा से आपका विहार पीपाड़ की ओर हुआ। दूरी कम करे पीपाड़ मे फाल्गुन कृष्णा १४ को प रत्न श्री लालचदजी म अगवानी हेतु सामने पधारे। महासती नन्दकंवरजी ने शका-समाधान प्राप्त कर प्रमोद का अनुभव किया।

विहार क्रम मे आप पीपाड़ से चिरडाणी, खेजडला, रणसीगाव, हरियाडाणा, बोरुन्दा, गगराना होते हुए इन्दावर पधारे, जहाँ आचार्य श्री नानालालजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी सती बादामकवरजी आदि ठाणा ४ सेवा मे पधारी एव तत्त्व-चर्चा कर आपसे सम्यक् समाधान प्राप्त कर प्रमुदित हुई। यहाँ से विहार कर आप मेड़ता पधारे तब धर्मशाला के पास ही अगवानी मे प्रवर्तक श्री कुन्दनमुनि जी आदि सन्त उपस्थित थे। फाल्गुनी शुक्ला एकदशी को मेड़ता मे इन्दौर सघ का प्रतिनिधिमण्डल श्री फकीरचन्दजी मेहता के नेतृत्व मे आगामी चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ। फाल्गुनी पूर्णिमा पर मेड़ता सघ धर्माराधन से कृतार्थ हुआ। जयपुर के श्री श्रीचन्दजी गोलेछा ने गुरुदेव से तत्त्वचर्चा की । सवाईमाधोपुर क्षेत्र की विनति हुई। सवाईमाधोपुर क्षेत्र के जागरण पर आपकी फूलचन्दजी आदि श्रावको से वार्ता हुई। चैत्रकृष्णा द्वितीया को जयपुर का श्रावक सघ श्राविकावृन्द के साथ चातुर्मास हेतु आग्रहभरी विनति लेकर उपस्थित हुआ। चोरड़ियाजी, मन्त्री सरदारमलजी चोपड़ा और इन्दरचन्दजी हीरावत ने अत्यन्त आग्रह किया। आचार्यप्रवर ने इस दिन प्रवचन मे फरमाया –"धर्मतीर्थ मे सन्तो के साथ श्रावको के सहयोग की भी अपेक्षा है। श्रावको के सहयोग से ही धर्म का प्रचार-प्रसार व्यापक रूप ग्रहण करता है। भरत, बिम्बिसार, चेड़ा, उदायन, सम्प्रति, कुमारपाल आदि राजा त्यागी जैन सन्तो से प्रभावित थे। उन्होने धर्म की बड़ी प्रभावना की। उस समय राजतन्त्र पर धर्म का अकुश था। धर्म को आज भी श्रावक व्यापकता दे सकते है।" जयपुर की विनति को बल देते हुए समर्पित श्रद्धालु श्रावक श्री इन्दरचन्दजी हीरावत ने कहा कि चौमासा होने पर वे चार माह अपना व्यावसायिक कार्य छोड़ देगे। आचार्य श्री का मानस मध्यप्रदेश की ओर विहार का हो चुका था। अत चोरड़िया जी एव चोपड़ा जी ने कहा – "मध्यप्रदेश की ओर आगे न बढ़ना हो तो जयपुर को कृतार्थ करे।" आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे विनतियो का क्रम चलता रहता था। चातुर्मास हेतु विनतियाँ प्राय फाल्गुनी पूर्णिमा के आस-पास हुआ करती थी। इसके पूर्व भी लगातार भावनाएँ अभिव्यक्त करने के अवसर का श्रीसघ लाभ उठाया करते थे। किन्तु आचार्य श्री स्वविवेक से निर्णय लेते थे। चातुर्मास खोलने के पूर्व अनेक बातो को ध्यान मे रखने के साथ धर्माराधन की उत्कृष्ट भावना एवं सम्भावना को वे अधिक महत्त्व देते थे। एक ग्राम से दूसरे ग्राम पदार्पण करते समय ग्रामवासियो की धर्मभावना को आगे बढ़ाना एव स्वय की सयम-यात्रा को निर्मल रखना आपके जीवन का उच्च लक्ष्य था।

विनति की प्रबलता से कभी लघु मार्ग को छोड़कर दीर्घ एव कष्टपूर्ण मार्ग पर चरण बढ़ाते हुए भी आपको प्रमोद का ही अनुभव होता था। जिनशासन के सेवक एव जन-जन मे धर्मनिष्ठा और सदाचारी जीवन के प्रेरक आचार्यश्री को कैसा कष्ट? आपने जयपुर संघ को स्वीकृति न देकर धर्म-प्रचार की भावना से इन्दौर का पथ लिया। डागावास जाते समय मार्ग मे वर्धमानसागरजी आदि तीन दिगम्बर मुनियो से मिलन हुआ। उनसे कुशलता एव

विचरण विहार के बारे में वार्ता हुई । यहाँ व्याख्यान के पश्चात् एक वकील के प्रश्न पर मन एव आत्मा की भिन्नता समझाते हुए फरमाया कि मन पौद्‌गलिक है, जबकि आत्मा चेतन तत्त्व है। मन करण है और आत्मा कर्ता है। आपने रात्रिवास धर्मशाला मे किया। विजयनगर के श्रावको ने दर्शन लाभ लिया ।

तदुपरान्त आप मेवड़ा (स्थविरपद विभूषित प रत्न श्री चौथमल जी म.सा. की जन्म-स्थली), पादुकला, छोटी पादू, रीया बड़ी होकर आलणियास पधारे। आहार के अनन्तर नित्य नियत ध्यान के पश्चात्, ग्रामीणो को प्रेरणा कर आपने उन्हे धूम्रपान के त्याग कराये। ग्रामीण किसी भी जाति या समाज के हो, पूज्यचरणो मे बैठकर जीवन को नया मोड़ देकर प्रसन्न होते थे। गोविन्दगढ़ जाते समय वर्षा आने से आप मुस्लिम ढाणी के छप्पर मे ठहरे एव वर्षा की बूदे बन्द होने पर विहार किया। पीसागन मे सूयगडाग सूत्र की वाचना हुई। रात्रि तत्त्व-चर्चा मे श्री मिलापचन्द जी आदि श्रावकगण ने भाग लेकर सतुष्टि प्राप्त की। पीसागन से कालेसरा होकर सवत् २०३५ के प्रथम दिन जेठाना मे विराजे। ब्यावर का शिष्ट मण्डल उपस्थित हुआ। यहाँ से किराप और फिर मसूदा पधारे। श्रावकों का आवागमन बना रहा। फिर गोविन्दगढ़, शेरगढ़, राताकोट, सथाना, फरसते हुए आप विजयनगर पधारे।

- विजयनगर , गुलाबपुरा होकर भीलवाडा

विजयनगर मे इन्दौर का शिष्टमण्डल (फकीरचन्द जी मेहता, भवरलालजी बाफना, माणकचन्दजी साड, शिरोमणिचन्द जी जैन आदि सहित) चातुर्मास की विनति लेकर पुन उपस्थित हुआ। उज्जैन की ओर से भी पारसमलजी चोरड़िया ने विनति प्रस्तुत की। सैलाना के सेठ प्यारचन्दजी रांका ने भावभरी विनति श्री चरणो मे रखी। धनोप, फूलिया आदि के श्रावक भी उपस्थित हुए। महावीर जयन्ती पर धर्माराधन का ठाट रहा। यहाँ से आप गुलाबपुरा पधारे, जहाँ पर विधानसभा के पाँच विधायको ने आचार्यश्री के दर्शनो का लाभ लिया। यहाँ के किस्तूर चन्द जी नाहर (मुनीम जी) ने रात्रिकालीन प्रश्नचर्चा के समय आपसे धर्मचर्चा की। यहा १५-२० युवको ने सामूहिक स्वाध्याय का नियम लिया।

यह उल्लेखनीय है कि ग्रामानुग्राम विहार के अवसरो पर स्थानीय श्रावक-श्राविकाओ के अतिरिक्त देश-विदेश के नागरिक आचार्य श्री की सेवा मे प्रस्तुत होकर दर्शन लाभ लेते रहे। इनमे से अनेक श्रावक स्वय भी अपने कार्य क्षेत्र के ख्यातिलब्ध व्यक्तित्व वाले रहे हैं। विस्तार भय से नाम-गणना अशक्य है, तथापि यह भी कहे तो अतिशयोक्ति नही होगी कि आचार्य श्री की चरण-सेवा मे आने वाले ऐसे श्रावक भी थे जो श्रावक स्वय मे एक-एक सस्था रही है। अपने-अपने क्षेत्रो के लिए विनति करते हुए सहृदय श्रावको के सजल नेत्रो को अनेकश. सभाओ मे देखा गया है। विदाई अवसरो पर महिलाओ और पुरुषो की कतारो के बीच अश्रुजलधार प्रवाह ने अनेको बार सहृदयो को हिलाया है। गुरुदेव का चतुर्विध सघ के प्रति यह वात्सल्य ही तो है जिससे विश्व के कोने-कोने मे बसे आपके अनुयायी और अनुमोदक इस प्रकार जुड़ गए, जैसे एक माला में विभिन्न वर्णों के रत्न पिरोए हो। सम्पूर्ण जैन समाज एव रत्नवश का एक-एक श्रावक और श्राविका आपके धर्म-स्नेह से सराबोर है। जो कार्य कई सरकारे मिलकर अथाह अनुदान राशि खर्च करके असख्य अधिकारियो के प्रयास से नही कर सकती, वह कार्य आचार्य श्री की गाँव-गाँव और डगर-डगर, शहर-शहर और नगर-नगर की पदयात्राओ के माध्यम से मानव-ससाधन के सुधार और स्नेह सवर्धन के रूप में सम्पन्न हुआ। भारत का वैभव अचेतन धन-सम्पदा की वृद्धि की अपेक्षा सचेतन मानव-ससाधन के सकारात्मक विकास में निहित है। इसीलिए गुरुदेव ने सयम पथ का मार्ग सुझाकर स्वयं सहकर दूसरो के लिए सुख-साधनों के विसर्जन की कला/अपरिग्रह का पाठ जन-जन को पढ़ाया और

अपने उस मर्यादित साधु जीवन का अद्वितीय आदर्श जन-जन के समक्ष प्रस्तुत कर यह सिद्ध कर दिया कि दृढ़ इच्छा-शक्ति हो तो साधना कठिन नही है।

गुलाबपुरा से पुरातत्त्ववेत्ता मनीषी जिनविजयजी की जन्मभूमि रूपाहेली में मास्टर चाँदमल जी आदि को ज्ञान-चर्चा से लाभान्वित कर वैशाखकृष्णा तृतीया को कंवलियास पधारे। यह धर्म रुचि की दृष्टि से अच्छा क्षेत्र है। यहाँ पर भारतीय जहाजरानी निगम, दिल्ली के निदेशक श्री वी.आर. मेहता ने सपत्नीक दर्शनलाभ कर प्रसन्नता का अनुभव किया। यहां से सरेड़ी के साताकारी धर्मस्थान मे एक रात्रि व्यतीत कर आप रायला रोड के माच्छर भवन मे विराजे। दूसरे दिन आपने बनेडा जाते समय वटवृक्ष के नीचे चबूतरे पर रात बिताई। बनेड़ा मे रतलाम के प्रतिनिधि मण्डल (पी.सी. चौपड़ा, जीतमल जी छाजेड, बसन्तीलाल जी सेठिया आदि) ने चातुर्मास हेतु विनति की। सायकाल चाँदनी चौक दिल्ली के लाला किशोरीलाल जी जैन ससंघ उपस्थित हुए।

फिर छापरी, सागानेर होते हुए आपका भीलवाड़ा में प्रवेश हुआ। भोपालगज भीलवाड़ा मे वर्षीतप पारणो का तपोत्सव-समारोह आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत वातावरण मे सम्पन्न हुआ। भोपालगंज मे उपस्थित जन-जन आचार्य श्री को परम पावन तीर्थराज का मूर्त रूप समझ रहा था, जिनके मुखारविन्द से प्रकट जिनवाणी-सरिता मे अवगाहन कर सभी स्वय को निर्मलमना बनाने का प्रयास कर रहे थे। यहाँ वर्षीतप पारणे के अवसर पर अन्य मासक्षपण आदि तपस्याओ के भी पारणक हुए। क्षुधा-पिपासा विजय तथा दृढ़ इच्छा-शक्ति के प्रतीक तपाराधन से उत्पन्न तेज का अनूठा माहौल जैन तथा अजैन समाज को विस्मित कर रहा था। प्रवचन सभा मे महासती श्री यशकुवरजी म.सा. ने पूज्यचरण आचार्यप्रवर के विशिष्ट व्यक्तित्व एव कृतित्व पर अपने विचार प्रकट करते हुए फरमाया - **"मुझे आचार्य श्री के सान्निध्य में दो चातुर्मास करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैंने साधना का अति उत्कृष्ट रूप जैसा आप में देखा, अन्यत्र दुर्लभ है। अगर मै आपको श्रमण वर्ग के पुष्करराज की संज्ञा दूँ तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।** " आचार्य प्रवर ने प्रवचन मे तप के महत्त्व पर प्रकाश डाला। गुरुदेव की जयघोषो के साथ समारोह सम्पन्न हुआ। रणजीत मुनिजी आदि ठाणा ३, शासन प्रभाविका यशकवर जी म आदि ठाणा १५, सती पानकवरजी आदि ठाणा ६ के साथ अनेक सघ प्रमुखो से यहाँ चतुर्विध सघ की विकास चर्चाएँ हुई। जोधपुर निवासी भडारी प्रकाशचंदजी ने ३२ वर्ष की अवस्था में वर्षीतप के साथ आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया।

विगत कतिपय माह से चल रही विनति को इन्दौर संघ ने पुन पुरजोर शब्दो में रखा एव यह भरोसा दिलाया कि आचार्य श्री की विचारधारा एव रीति-नीति का इन्दौर सघ पूर्णरूप से पालन करेगा। ध्वनियन्त्र का उपयोग नही किया जायेगा। तदनन्तर आचार्यप्रवर ने इन्दौर सघ को साधु-मर्यादा के अनुरूप स्वीकृति फरमायी। यहाँ पर एक दिन व्याख्यान मे मोक्षमार्ग का विवेचन करते हुए सम्यग्दर्शन का विश्लेषण किया एव फरमाया — "भगवान महावीर ने देव-देवियो के पुजारियो को आत्मपूजा और आत्मजागरण की शिक्षा दी। शान्ति का स्रोत अपने भीतर बतलाकर पुरुषार्थ को उसकी प्राप्ति का उपाय बताया।"

- चित्तौड़ स्पर्शन

काशीपुरी, स्वरूपगज, हमीरगढ़, गंगरार रोड, पुठोली को फरसते हुए आचार्यप्रवर वैशाख शुक्ला ११ वि सवत् २०३५ को मीरानगर चित्तौड़ पधारे। आपके प्रवचनों से प्रभावित युवकों ने नित्य स्थानक मे आकर सामायिक-स्वाध्याय करने का नियम लिया। आचार्य श्री ने हिन्दूकुल सूर्य प्रताप के हितैषी भामाशाह की आन, बान और शान का स्मरण कराते हुए उपस्थित श्रोताओं को धर्म-क्षेत्र में अपनी शक्ति लगाने का आह्वान किया। ■

मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश एवं कर्नाटक में धर्मोद्योत

(संवत् २०३५से २०३९)

• राजस्थान से मालव भूमि की ओर

चरितनायक आगामी चातुर्मास मे इन्दौर विराजने की स्वीकृति प्रदान कर चुके थे। उसी लक्ष्य से अब आपके चरण शस्य श्यामला मालव भूमि की ओर बढ रहे थे। आप सेती, सतखडा, मागरोल, निम्बाहेड़ा, बागेड़ा होते हुए राजस्थान से मध्यप्रदेश पधारे। दिनाक २७ मई १९७८ को धारा १४४ लगी होने पर भी जावद मे आपका भव्य प्रवेश हुआ। आपकी पातकप्रक्षालिनी पीयूषपाविनी मगलमय प्रवचन सुधा कर पान करने जावदवासी भारी सख्या मे उपस्थित थे। यहाँ सैलाना सघ विनति लेकर उपस्थित हुआ। जावद से दो किलोमीटर का विहार कर आप पुलिस स्टेशन भवन विराजे। वहाँ से प्रात विहार कर नीमचछावनी पधारे। यहाँ आपने ज्ञान मन्दिर मे प्रवचन फरमाया। यहाँ से कृपानिधान का विचरण-विहार नीमच सिटी, कटआर सिटी, सावन, महागढ, झाड़ी नारायणगढ रोड, पीपल्या मडी, बोतलगज प्रभृति ग्राम नगरो मे हुआ। आप जहाँ भी पधारे, आबालवृद्ध सभी आपके प्रवचनामृत से प्रभावित हो अध्यात्म मार्ग पर चलने को प्रेरित हुए। नीमच मे अपने मगलमय उद्बोधन मे आपने विचारो की पवित्रता एव स्थिरता के लिये आहार-शुद्धि पर बल दिया। नीमच से विहार कर रास्ते मे आपका रात्रिवास आम्रवृक्ष के नीचे हुआ। साथ चल रहे तीन भाइयो ने भी अपने आराध्य गुरुदेव के सान्निध्य मे ही सवर किया। गर्मी का मौसम, हवा का झोका तक नही, ऐसी प्रतिकूलता मे भी जिनकी आत्मा मे समत्व, क्षमा व शान्ति का सागर लहरा रहा हो, उन्हे भला बाह्य परीषह क्या प्रभावित कर पाते। प्रातःकाल जो चिन्तन चला, उसके बारे मे आपने अपनी दैनन्दिनी मे अकित किया है –**"प्रातः सामने प्रहरी वृक्ष अडोल खड़े अपने मोहक आदर्श से शिक्षा दे रहे थे"। अध्यात्मचेता मनीषियों के लिये तो प्रकृति व बाह्य परिवेश भी शिक्षा के सूचक होते हैं। आपने चिन्तन किया कि जिस प्रकार विषम परिस्थितियों में भी वृक्ष अडोल रहकर अपने कर्तव्य का निर्वाह करते है वैसे ही संत को भी जीवन में अनुकूलताओं-प्रतिकूलताओं में अडिग रहकर कर्त्तव्य का निर्वहन करते रहना है।** हिन्दी कवि ने भी अपनी रचना मे कहा है –"खड़ा हिमालय बता रहा है , डरो न आँधी पानी से। खड़े रहो तुम अविचल होकर, सब सकट तूफानो मे ।" ज्येष्ठ माह, भयकर गर्मी, धूप से तप्त भूमि पर परीषह विजेता महापुरुष को अपनी शिष्य मडली के साथ नगे पाँव पाद-विहार करते देख जैनेतर ग्रामीण जन आश्चर्य-विमुग्ध सहज श्रद्धाभिभूत हो आपके चरणो मे झुक जाते।

निकटवर्ती ग्राम-नगरो के श्रावक-श्राविका आत्म-साधक आचार्य श्री हस्ती के सान्निध्य मे पहुँचकर अपने को धन्य मानते थे। जिस ग्राम की ओर विहार सम्भावित है, वहा से विनति के लिए श्रावको का पूर्व ग्राम मे उपस्थित होना एव बाद मे निकट के गावो मे पहुचने पर सन्तो की सेवा मे उपस्थित होकर अपनी धर्मभावना को आगे बढ़ाना

एक सहज साधारण बात थी। छोटे-छोटे ग्रामो में बड़े बड़े शहरों के धर्मनिष्ठ श्रावक-श्राविकाएँ पहुँच कर जब सामायिक, संवर, उपवास, पौषध आदि करते थे तो वहाँ के लोग इन तपःपूत महासाधक के ज्ञान-दर्शन चारित्र के साथ ही इनके पुण्यातिशय एव भक्तों के अपने आराध्य गुरुदेव के प्रति अनन्य श्रद्धा भक्ति से सहज ही प्रभावित हो जाते।

इस विचरण विहार में अनेक व्यक्ति सामायिक स्वाध्याय से जुड़े तो कई व्यक्तियों ने महाव्रतधारी इस महापुरुष से बारहव्रत अगीकार कर अपना जीवन मर्यादा में स्थिर किया।

पूज्यपाद के ज्येष्ठ एवं श्रेष्ठ तथा गणधर गौतम के समान अहर्निश गुरुचरणों में समर्पित सुशिष्य श्री छोटे लक्ष्मीचन्द जी म.सा. ने जब से दीक्षा अगीकार की, उनके सासारिक परिजनो की ही नही समस्त महागढ वासियों की उत्कट आकांक्षा उनका चातुर्मास अपने यहाँ कराने की थी। गुरु के चरणों में ही जिन्होंने स्वर्ग समझा था, गुरु-सेवा ही जिनके जीवन का लक्ष्य व साधना का केन्द्र बिन्दु था, वे महापुरुष गुरुचरणों से पृथक् चातुर्मास करने के अनिच्छुक थे। पर पूज्यपाद के मालव भूमि में प्रवेश करते ही महागढवासियों की दीर्घकाल से अन्तहृदय मे संचित भावना पुन हिलोरे लेने लगी व वहाँ के श्रीसंघ ने अपनी भावना सम्पूरित विनति आपके चरणसरोजों में प्रस्तुत की तो आपने महागढवासियो की भावना समझते हुए श्री छोटे लक्ष्मीचन्द जी म.सा. का वर्षावास महागढ के लिये स्वीकृत किया।

• मन्दसौर में दीक्षा प्रसंग

सवाईमाधोपुर निवासी मुमुक्षु श्री महावीर प्रसादजी जैन लम्बे समय से पूज्य गुरुदेव की सेवा में ज्ञानाराधन कर रहे थे। उनकी दीक्षा लेने की उत्कट भावना थी, उनके वैराग्यसिक्त हृदय में यही कामना थी कि मैं शीघ्रातिशीघ्र पूज्य गुरु चरणो मे सदा-सदा के लिये समर्पित हो आत्म-कल्याण के मार्ग पर आगे बढूँ। धर्मनिष्ठ संयमानुरागी भक्त सुश्रावक श्री प्यारचदजी राका, सैलाना ने मुमुक्षु महावीरप्रसादजी के परिजनो से आज्ञा प्राप्त कर दीक्षा नियत करने में निर्णायक भूमिका का निर्वाह कर जिनशासन सेवा का उत्कृष्ट लाभ प्राप्त किया।

विहारक्रम मे पूज्यपाद नारायणगढ पधारे, जहां आपने धर्म का सही स्वरूप समझाया व सप्त कुव्यसन त्याग की प्रभावी प्रेरणा की। पीपल्यामडी मे अपने प्रेरक उद्बोधन मे धर्मस्थान व प्रवचन सभा में आते समय श्रावक के लिये ध्यान रखने योग्य पाच अभिगमो की उपादेयता श्रोताओं को समझाते हुए फरमाया कि श्रावक को धर्मस्थान व प्रवचन सभा मे प्रवेश के पूर्व सचित्त वस्तुओं का बाहर ही त्याग कर देना चाहिये, अचित्त वस्तुओं का भी विवेक रखना चाहिए यानी जूते, चप्पल, मुकुट आदि को भी अन्दर नही लाना चाहिए, मुख पर मुखवस्त्रिका या उत्तरासन धारण कर ही प्रवेश करना चाहिये। इस विवेक के साथ ही जैसे ही पूज्य संत-सतीवृन्द दृष्टिगत हो, हाथ जोड़कर दोनों हाथ ललाट पर लगाकर मन को सांसारिक कार्यों से हटा कर धार्मिक कार्यों में एकाग्रता के साथ गुरुचरणों मे वन्दन करना चाहिये। यहाँ पर नयी आबादी मे सांसद श्री सुन्दरलाल जी पटवा (मुख्यमंत्री भी रहे) ने युगमनीषी आचार्य भगवन्त के पावन दर्शन व वन्दन का लाभ लिया।

बोतलगज से विहार कर इतिहासमार्तण्ड आचार्य श्री ने आर्यरक्षित की विचरण भूमि, दशार्णभद्र की दीक्षास्थली ऐतिहासिक वैभव सम्पन्न दशपुर (मन्दसौर) में प्रवेश किया। मगल स्तुतियों तथा स्वागत गीतों को गुजाती जनमेदिनी आचार्य श्री की अगवानी कर विशाल व्याख्यान सभा के रूप में परिणत हो गयी। मंदसौर में

ज्येष्ठ शुक्ला दशमी संवत् २०३५ तदनुसार १६ जून १९७८ को आचार्यश्री के मुखारविन्द से श्री रामनिवासजी जैन के सुपुत्र एवं श्री रमेशचन्द जी के अनुज श्री महावीरप्रसाद जी जैन (सवाई माधोपुर) की भागवती दीक्षा चतुर्विध सघ की जनमेदिनी की जय-जयकार के बीच सम्पन्न हुई। 'नन्दीषेण' सज्ञा को प्राप्त नवदीक्षित मुनि की दीक्षा के समय आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा आदि ठाणा ८ से विराजमान थे। इस अवसर पर श्री इन्दरमलजी म.सा., श्री महेश मुनि जी, श्री उदयमुनि जी म.सा. ठाणा ३ , आचार्य श्री नानालाल जी म.सा की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री वल्लभ कवर जी म.सा., महासती श्री पेपकवर जी म.सा आदि ठाणा १२ तथा पूज्य चरितनायक की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री सायरकवर जी म.सा. आदि ठाणा ४ का आशीर्वाद एव सुसान्निध्य प्राप्त हुआ।

- सैलाना में समरसता का सचार कर रतलाम पदार्पण

मन्दसौर से विहार कर चरितनायक दलोदा, कचनारा, ढोढर होकर जावरा पधारे , जहाँ जवाहर पेठ के स्थानक एव चौपाटी के स्वाध्याय भवन मे आपके प्रभावी प्रवचन हुए। चौपाटी के प्रवचन मे विनति लेकर उपस्थित रतलाम के तीनो सघो को लक्ष्य कर फरमाया– **"हमें निश्चय करना है आचार की प्रधानता हो या प्रचार की? आचार्य श्री धर्मदासजी महाराज ने जिनशासन की सेवा के लिए जीवन दे दिया, फिर भी संघ ने पगलिये नही रखे, किन्तु आज आप भूल रहे है।" जिनशासन की सुविहित आचार परम्परा के प्रबलपक्षधर आचार्य भगवन्त द्रव्य निक्षेप की बजाय भाव निक्षेप के हिमायती थे। आपने जीवन में कभी भी प्रचार को महत्ता नही दी। आपका स्पष्ट मंतव्य था कि साधक का आचारसम्पन्न जीवन स्वय जो छाप छोड़ने में सक्षम है वह छाप प्रबल प्रचार नही छोड़ सकता। स्वयं के जीवन में दोष लगाकर धर्मप्रचार का प्रयास तो वैसा ही है "हाथ भी जले व होले भी बुले"।** रात्रि मे षड्द्रव्य, नवतत्त्व आदि विषयो पर हुए प्रश्नोत्तरो से जन समुदाय लाभान्वित हुआ। प्रतिक्रमण के पश्चात् रात्रि मे प्राय जब भी जहाँ भी श्रावको द्वारा जिज्ञासाएँ रखी जाती थी, तो उनका समाधान आचार्यप्रवर बहुत ही रस लेकर किया करते थे। श्रावको के न पूछने पर आप ही सन्तो या श्रावको से प्रश्न पूछकर उनका रोचक शैली मे ज्ञानवर्धन किया करते थे। मानव मुनि जी ने यहाँ आचार्यप्रवर की सेवा मे उपस्थित होकर अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासा शान्त की। यहाँ से पीपलोदा होकर आप सैलाना पधारे। सैलाना के स्थानीय सघ मे परस्पर समन्वय मे कुछ कमी थी। पूज्यपाद के 'कषाय-नियन्त्रण' विषयक उपदेश से सघ मे मधुर ऐक्य की लहर दौड़ गई। सैलाना से २५ जून को विहार कर आचार्य श्री धामनोद होते हुए आषाढ कृष्णा षष्ठी सवत् २०३५ को रतलाम पधारे। वहाँ धर्मदास मित्रमडल मे आपने मागलिक और व्याख्यान फरमाकर जन-जन की प्यास बुझाई। रतलाम का जैन ट्रस्ट बोर्ड तीन सम्प्रदायो (आचार्य श्रीनानालाल जी, पूज्य श्री धर्मदास जी एव जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा). की सयुक्त-सस्था है, जिसके तत्त्वावधान मे आचार्यप्रवर के रतलाम आगमन पर हुई सयुक्त-व्यवस्था एव दया आदि कार्यक्रमो का आगन्तुको ने लाभ उठाया। २०० से अधिक दयाव्रत हुए। रतलाम मे तीनों सम्प्रदायो के पृथक्-पृथक् स्थानक व सघ-व्यवस्था है। परस्पर अपेक्षित समन्वय नही है, पर समता साधक चरितनायक का जीवनादर्श व पुण्यातिशय ही ऐसा था कि आप जहाँ भी पधारते, अनेकों पक्ष के लोग सारे भेद-विभेद भूलकर एक हो जाते एव आपके सान्निध्य का लाभ लेते।

रात्रि मे किसी श्रावक के द्वारा प्रश्न किया गया कि जैन धर्म में मन्त्र-साधना क्यो प्रचलित हुई? इतिहासज्ञ

आचार्यप्रवर ने फरमाया—"सघर्षकाल में जिनशासन की रक्षार्थ मन्त्रसाधना का प्रचलन हुआ।" यहाँ से आपश्री धराड़, विलपाक, सर्वन-जामुनिया, सिमलावदा फरसते हुए बदनावर पधारे, जहाँ प्रवर्तक सूर्यमुनिजी के दो सन्त आचार्यप्रवर की अगवानी मे सामने पधारे और भव्य नगर-प्रवेश हुआ। यहाँ आपका प्रवर्तक सूर्यमुनिजी एवं श्री उमेश मुनिजी 'अणु' से इतिहास और शासन के उत्थान हेतु विचारो का आदान-प्रदान हुआ। यहाँ से विहार कर आप कानवन पधारे, जहाँ तपस्वी श्री लालमुनि जी म. एव श्री कानमुनि जी म. ने आचार्यदेव से अनेक विषयों पर उचित समाधान पाकर प्रमोद व्यक्त किया।

४ जुलाई को आचार्यप्रवर नागदा पधारे। आचार्यप्रवर की प्रेरक वाणी के प्रभाव से यहाँ स्वाध्याय मडल का गठन हुआ, जिसमे श्री सागरमल जी सियाल श्री लालचन्द्र जी नाहर, श्री गेदालाल जी चौधरी (सपत्नीक चारों खधो के पालक), श्री रामलाल जी नाहर व श्री तेजमल जी चौधरी पाँच सदस्य चुने गये। चार आजीवन ब्रह्मचर्य के स्कन्ध हुए। नागदा से आचार्यश्री शादलपुर, वेढमा, शिरपुर होते हुए अहिल्या की नगरी इन्दौर के उपनगर जानकी नगर पधारे। महासती श्री सायरकवर जी म.सा. ठाणा ४ का भी इन्दौर पदार्पण हुआ।

• इन्दौर चातुर्मास (संवत २०३५)

इन्दौर सघाध्यक्ष श्री सुगनमल जी भडारी, काग्रेस मत्री श्री फकीरचन्द जी मेहता एव समस्त श्री सघ के उत्साह और उल्लास का पारावार नही था, क्योकि विक्रम सवत् २०३५ मे आचार्य श्री का ५८वा चातुर्मास इन्दौर मे हो रहा था। भावुक भक्तो की भावभीनी अगवानी ने चातुर्मास के सम्भाव्य फल का सकेत कर दिया था। यहाँ महावीर भवन, इमली बाजार मे जनमेदिनी मानो सागर की तरह उमड़ पड़ी और व्याख्यान सुनने एव धर्माराधन करने हेतु सब तत्पर रहे।

युगमनीषी युगप्रभावक चरितनायक आचार्य प्रवर ने अपने मगलमय प्रवेश के अवसर पर अपने प्रभावी प्रवचन के माध्यम से जनमानस को उद्बोधित करते हुए फरमाया —"श्रावक-श्राविकाओ को चाहिए कि वे अपने को सामायिक-स्वाध्याय की प्रवृत्ति से जोड़े। बालको मे सस्कारों का वपन करे। धर्मस्थानो मे नियमित स्वाध्याय की प्रबल प्रेरणा करते हुए भगवन्त ने फरमाया—"धर्मस्थान में आने वालों के लिए बैठने के आसन तो मिलेगे, किन्तु पाठको के लिए रुचिपूर्ण स्वाध्याय-ग्रन्थो का छोटा-सा भी सग्रह नही मिलता।"

"मुनिराजों के स्वागत समारोह, अभिनन्दन और पुस्तक-विमोचन जैसे जलसे निर्ग्रन्थ - संस्कृति के अनुरूप नही हैं। व्यक्तिगत महिमा-पूजा से अधिक संघ एवं शासनहित का लक्ष्य रखेंगे तो वर्षाकाल में शक्ति का अपव्यय नहीं होगा।"

"हजारों दर्शनार्थियों का चाहे मेला न लगे, पर नगर के लोग यदि ज्ञान-ध्यान से अपने पैरों पर खड़े हो गए और चातुर्मास के पश्चात् भी धर्मस्थान में साधना और स्वाध्याय की गंगा बहती रही तो चातुर्मास की सच्ची सफलता होगी।"

"प्राचीन समय मे जहाँ एक चातुर्मास हो जाता, वहाँ आबालवृद्ध जनों मे ऐसी धर्म चेतना आती कि वर्षों के बाद भी धर्मस्थान मे उसका असर दिखाई देता, लोगो की धर्म-भावना स्थिर होती और बीसियो सामायिक, प्रतिक्रमण एव तत्त्वज्ञान के ज्ञाता तैयार हो जाते। कई अजैन बन्धु भी जैन धर्म के श्रद्धालु बनते और वर्षों तक चातुर्मास की सुवास बनी रहती। आज दर्शनार्थियो के मेलो पर साधु-साध्वियाँ और श्रावकगण सन्तोष मान लेते है।

फलस्वरूप चार माह मे चार-पाच श्रावक भी जानकार तैयार नही होते।"

"समय की मांग है कि जैन समाज त्यागी सन्तों के सत्संग का मूल्य समझे और उसमें समाज-निर्माण के किसी ठोस कार्य को गति दे। अभी जैन समाज की स्थिति बड़ी दयनीय है। गांव या नगर , कही भी देखिए, धर्मस्थान मे रजोहरण और पूजनी की भी बराबर व्यवस्था नही मिलेगी। बिल्डिंग लाखों की होगी, पर नियमित आने वाले दस - बीस भी मुश्किल से होंगे।"

"आवश्यकता है वर्षाकाल मे समाज की इस दुर्बलता को दूर करने हेतु स्थान-स्थान पर स्वाध्याय और साधना का शिक्षण देने की। **शिक्षण देते समय शिक्षक और सन्त-सती वर्ग सम्प्रदायवाद से बचकर तुलनात्मक ज्ञान देने का खयाल रखें तो संघ के लिए अधिक लाभकारी हो सकता है। व्यक्तिगत या वर्गगत किसी की न्यूनता बताकर, अपने आपको ऊँचा बताने का समय नही है, इससे शासन की प्रभावना नहीं होगी।** साधु-धर्म, श्रावक धर्म और सिद्धान्त की मौलिक जानकारी देते हुए परम्परा भेदो का तटस्थ परिचय कराइए, पर स्वय आलोचना कर रागद्वेष को जागृत न कीजिए।"

"स्थानकवासी समाज को साधुवृन्द का ही अवलम्बन है। त्यागीवर्ग पर जिनशासन की रक्षा का बड़ा दायित्व है। उन्हें अपनी महिमा का खयाल छोड़कर चतुर्विध संघ की रक्षा के लिए गांव-गांव और नगर-नगर में स्वाध्याय और सामायिक-साधना का व्यवस्थित रूप चालू करना चाहिए।"

"जिनशासन की रक्षा और हित में हमारी रक्षा एवं हित है। इसलिए परस्पर की निन्दा-आलोचना छोड़कर त्यागीवर्ग भी समाज में निष्पक्ष भाव से ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि हो, ऐसा कार्य करेगा तो चातुर्मास की सफलता, संघ की स्थिरता और धर्मभाव में दृढ़ता की वृद्धि होगी। "

सयममूर्ति चरितनायक ने सयम, सगठन, स्वाध्याय और साधना रूप मार्गचतुष्टयी के लिए गतिशील होने का आह्वान किया।

श्रावक-श्राविकाओ मे विशेष धर्माराधन, युवको मे ज्ञानवृद्धि, स्वाध्याय, शिक्षण और बालको हेतु श्री महावीर जैन स्वाध्याय शाला का प्रारम्भ इस चातुर्मास की उपलब्धि रही। उपनगरों मे चार स्वाध्याय केन्द्र स्थापित हुए। महावीर भवन मे शास्त्र ग्रन्थो के सग्रह हेतु आध्यात्मिक ग्रन्थालय का श्रीगणेश किया गया। इन्दौर मे पहले पर्युषण के दिनो मे धर्मस्थानक में ध्वनि यत्र से प्रतिक्रमण कराया जाता था। उसकी व्यवस्था मे परिवर्तन हुआ। स्वाध्यायी भाई के द्वारा प्रतिक्रमण कराया गया और पूर्व प्रचलित प्रथा बन्द हो गई। **इस चातुर्मास की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि रही-'अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्' का गठन।**

दिनाङ्क १२ व १३ नवम्बर १९७८ को जैन विद्वानो का सम्मेलन हुआ, जिसमे जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, रायपुर, इन्दौर, अहमदाबाद, बैंगलोर, बम्बई, भोपाल, छोटी सादड़ी, कानोड़, सवाई माधोपुर, शुजालपुर, शाजापुर, ब्यावर आदि नगरो के ५० से अधिक विद्वानो ने भाग लिया। अलग-अलग क्षेत्रो मे बिखरे समाज के जैनविद्या मे निरत विद्वानो, श्रीमन्तो, कार्यकर्ताओ और सस्थाओं मे पारस्परिक सम्पर्क व सामंजस्य स्थापित करते हुए जैन धर्म, दर्शन, साहित्य, इतिहास आदि के अध्ययन-अध्यापन, पठन-पाठन, संरक्षण-सवर्धन, शोध-प्रकाशन आदि को प्रोत्साहन देने के लिए यहाँ अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् का गठन किया गया। परिषद् के अध्यक्ष श्री सौभाग्यमलजी जैन मनोनीत किए गए तथा महामन्त्री का दायित्व जिनवाणी के मानद सम्पादक डॉ. नरेन्द्र जी भानावत को सौंपा गया। इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. देवेन्द्र जी शर्मा ने परिषद् का उद्घाटन किया।

आचार्यप्रवर ने विद्वानों को उद्बोधन देते हुए फरमाया कि वे जैन शास्त्र और श्रद्धा को सुरक्षित रखने के लिए वैज्ञानिक चिन्तन प्रस्तुत करे, धर्म-परम्परा के लिए विघटन या विध्वस की नीति न रखकर निर्माणात्मक-रक्षणात्मक नीति का उपयोग करे, इतिहास के भ्रान्त विचारो का निराकरण करे, स्वाध्याय का प्रचार करे और स्वय शास्त्र-ग्रन्थो का अध्ययन करें। श्री फकीर चन्द जी मेहता ने विद्वत् परिषद् के अन्तर्गत जैन दिवाकर जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य मे प्रतिवर्ष 'जैन दिवाकर स्मृति व्याख्यानमाला' आयोजित कराने की घोषणा की। परिषद् का कार्यालय जयपुर रखा गया।

चातुर्मास मे प्यारचद जी राका सैलाना वालो ने सपरिवार सेवा का लाभ लिया। अनेक भाइयो ने सदार शीलव्रत अगीकार किया। प्रात. तत्त्वार्थसूत्र एव दोपहर मे व्यवहार सूत्र का वाचन-विवेचन चला।

१२ से १४ नवम्बर १९७८ तक अ.भा. श्री जैनरत्न हितैषी श्रावक सघ जोधपुर, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल जयपुर, अ.भा. श्री जैन रत्न युवक सघ एव अ.भा. श्री महावीर जैन श्राविका समिति के अधिवेशन सानद सम्पन्न हुए। जोधपुर से अधिवेशन के अवसर पर भोपालगढ निवासी सुज्ञ श्रावक श्री जोगीदासजी बाफना के सुपुत्र श्री सुगनचन्द बाफना के सौजन्य से ५५० सदस्यो की विशेष ट्रेन आई तथा जयपुर आदि क्षेत्रो से भी अनेक बसे आई।

चातुर्मास मे श्री भवरलाल जी बाफना, श्री बादलचन्दजी मेहता, श्री बस्तीमलजी चोरड़िया, श्री फूलचन्दजी जैन, हस्तीमलजी आदि की उल्लेखनीय सेवाए रही। श्राविकाओ मे श्रीमती हीरा बहन बोरदिया एव श्रीमती भुवनेश्वरी देवी भण्डारी का उत्साह प्रशसनीय रहा।

• उज्जैन में धर्मजागरण

मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को जयघोष के नारो के साथ आचार्य श्री का चातुर्मास स्थल से विहार हुआ। चरितनायक न्यू पलासिया स्वाध्याय भवन, महावीर नगर, क्लर्क कालोनी, जानकी नगर, स्नेहलता गज, भवरसला, धर्मपुरी, तराणा सांवेर, पिपलाई आदि विभिन्न क्षेत्रो को पावन करते हुए १ दिसम्बर १९७८ को फ्रीगज होकर मध्याह्न मे उज्जैन के महावीर भवन मे पधारे।

कालिदास की प्रिय नगरी अवन्ती (उज्जैन) की पुण्यभूमि मे २ दिसम्बर को आचार्य श्री के दर्शनार्थ पजाब से विरक्त बधु श्री राजेन्द्र कुमार एवं श्री राकेश कुमार (प. रत्न श्री सुदर्शन मुनिजी म.सा. के सान्निध्य मे अध्ययनरत) उपस्थित हुए। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मडल जयपुर के अध्यक्ष श्री उमरावमल जी ढड्ढा अजमेर, श्री चुन्नीलाल जी ललवाणी जयपुर तथा श्री समर्थमल जी बम्ब जयपुर ने आचार्य श्री की सेवा का लाभ लिया। अ.भा. श्री साधुमार्गी जैन सघ के प्रमुख श्रावको श्री गणपतराजजी बोहरा, श्री सरदारमलजी काकरिया , श्री पी.सी. चौपड़ा एवं श्री गुमानमलजी चोरड़िया का शिष्टमण्डल सेवा मे उपस्थित हुआ।

महागढ़ का चातुर्मास सम्पन्न कर श्री छोटे लक्ष्मीचन्दजी म.सा. आदि ठाणा ३ तथा जानकीनगर इन्दौर का चातुर्मास सम्पन्न कर महासती श्री सायरकवरजी म.सा. आदि ठाणा ४ का भी पदार्पण उज्जैन मे हुआ। १४ दिसम्बर को आचार्य श्री नानालालजी म.सा. के शिष्य श्री प्रेममुनि जी आदि ठाणा ३ ने भोपाल का चातुर्मास सम्पन्न कर उज्जैन मे आचार्य श्री का सान्निध्य लाभ लिया। आचार्यश्री के सान्निध्य में १९वे तीर्थंकर भगवती मल्लिनाथ के जन्म-कल्याणक महोत्सव के अवसर पर सामायिक-स्वाध्याय, दया-पौषध, तप-त्याग आदि धार्मिक कार्यक्रम सम्पन्न हुए। इस अवसर पर स्थानीय सघ प्रमुखो ने स्वाध्यायशाला प्रारम्भ करने का निश्चय किया। आध्यात्मिक अभिरुचि

व उल्लास के साथ ही २४ दिसम्बर को आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे २३वे तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का जन्म-कल्याणक सामूहिक दयाव्रत के साथ मनाया गया।

• धूलिया की ओर

अवन्ती मे धर्मोद्योत की पावन अमृतधारा बहाकर आचार्य श्री ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए २८ दिसम्बर को पुन इन्दौर पधारे। यहाँ तपस्वीराज श्री लालमुनि जी मसा व पडित श्री कानमुनि जी मसा अगवानी हेतु आपके सामने पधारे। सामायिक स्वाध्याय के पर्याय आचार्य भगवन्त द्वारा वर्षावास मे लगी स्वाध्याय बगिया का पुन सिचन करने पर सबने प्रमोद व्यक्त किया। ७ जनवरी १९७९ को जोधपुर मे प्रातः ८.३० बजे पडित श्री बड़ लक्ष्मी चन्द जी म.सा का देवलोक गमन हो गया. व्याख्यान स्थगित रखकर प्रकाश दाल मिल के भवन मे प्रात १० बजे सभा मे चार लोगस्स से श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गई। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर ने फरमाया - 'रत्नवश रूपी बहुमूल्य हार की एक अनमोल मणि निकल गई है।' प रत्न श्री लक्ष्मी चन्द जी मसा वास्तव मे एक बहुमूल्य रत्न मणि थे। आप मर्मज्ञ शास्त्रवेत्ता, आगम रसिक, शोधप्रिय इतिहासज्ञ एव विशुद्ध श्रमणाचार पालक और प्रबल समर्थक सन्त थे। लगभग ५६ वर्षो की सुदीर्घ अवधि तक अनन्य निष्ठा के साथ श्रमणधर्म का पालन करते हुए आपने अनेक हस्तलिखित एव प्राचीन ग्रन्थो का अनुशीलन कर स्थानकवासी परम्परा के विशिष्ट कवियो, तपस्वियों, साध्वियो आदि के जीवन और कृतित्व पर प्रकाश डाला। श्री रतनचन्द्र पद मुक्तावली, सुजान पद सुमन वाटिका, तपस्वी मुनि बालचन्द्रजी, सन्त-जीवन की झाकी आदि अनेक कृतिया आपके परिश्रम से ही प्रकाश मे आ सकी। सन्त-सतियों के विद्याभ्यास मे आपकी गहन रुचि थी और समय-समय पर आप उनको पढ़ाया भी करते थे। स १९६५ मे मारवाड़ के हरसोलाव ग्राम मे श्री बच्छराजजी बागमार की धर्म पत्नी श्रीमती हीराबाई की कुक्षि से जन्मे लूणकरण जी अल्पायु मे पिताश्री का वियोग होने पर विक्रम सवत् १९७९ मार्गशीर्ष शुक्ला पूर्णिमा को १४ वर्ष की वय मे मुथाजी के मदिर, जोधपुर मे आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्रजी म.सा के सान्निध्य मे भागवती दीक्षा अगीकार कर मुनि लक्ष्मीचन्द बन गए थे। आपको प्राकृत, सस्कृत, अपभ्रश, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषाओ का अच्छा ज्ञान था। पुराने सन्त-सतियो का जीवन चरित्र, जो सहज उपलब्ध नही होता था, उसे श्रमपूर्वक खोज कर आपने समाज के सामने रखा। सयम धर्म की उपेक्षा आपको कतई पसन्द नही थी। आप सत्य बात कहने मे स्पष्ट रहते थे। अन्दर और बाहर से आप एक थे। सरल एव भद्रिक प्रकृति के सन्त थे। लम्बे कद एव सुडौल देहधारी पण्डित श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज विहार का सामर्थ्य न रहने पर गत दो वर्षो से जोधपुर मे स्थिरवास विराजित थे। आपके सुशिष्य श्री मानमुनि जी म.सा ने आपकी तन-मन से सेवा कर एक अनूठा आदर्श प्रस्तुत किया। बाबा जी श्री जयन्तमुनि जी एव बसन्त मुनि जी ने भी सेवा का लाभ लिया। कालधर्म को प्राप्त होने के लगभग १० दिन पूर्व पाट से गिर जाने के कारण आपकी गर्दन की हड्डी टूट गई थी, जिसके अनन्तर आपने देह की विनश्वरता को जानकर आचार्यप्रवर की स्वीकृति मिलने पर आलोचना प्रायश्चित्तपूर्वक चित्त को समाधि मे लगा लिया था।

आपके देहावसान पर जोधपुर, पीपाड़ , पाली, भोपागढ, फलौदी, मडावर, ब्यावर, सोजत सिटी, रतलाम, मेड़ता सिटी, जयपुर आदि अनेक स्थानो पर श्रद्धाजलि अर्पित कर गुण-स्मरण किए गए।

मरुधर केसरी श्री मिश्रीमलजी मसा. ने काव्य रूप मे अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा -

ले गयो जस लक्ष्मी मुनि, झोलो घर-घर जोर।
शिष्य सुजान की साधना, मानी दूनी कठोर॥

सरल और शास्त्रज्ञ थे, रखते मधुर मिलाप।
संगठन चाहते सदा, पच्चखे पाप प्रलाप॥
व्याधि से विरला गयो, शान्ति उर अपनाय।
कसर पड़ी मुनि सघ में, वा पूरण किम थाय॥

पौषशुक्ला चतुर्दशी को चरितनायक के ६९ वें जन्म-दिवस पर श्रावको ने वर्ष मे ५ दिन दाल मिले बन्द रखने का निर्णय कर षट्काय प्रतिपालक गुरुदेव के प्रति सच्ची श्रद्धा अभिव्यक्त की तथा श्री महावीर जैन स्वाध्याय शाला के छात्रों ने अच्छी सख्या मे दयाव्रत किए।

२१ जनवरी को आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे व्यसन-निवारण दिवस मनाया गया, जिसमे दाल मिलो के लगभग ८० श्रमिको ने मास-मदिरा सेवन का त्याग किया। २३ जनवरी को यहाँ से विहार कर ठाणा ४ से कस्तूरबा ग्राम, सिमरोल, वाई, चोरल, बलवाड़ा होते हुए बड़वाह पधारे। यहॉ आचार्य श्री की दीक्षा-तिथि पर श्री संघ द्वारा स्वाध्याय सघ की शाखा तथा स्वाध्याय शाला की स्थापना की गई। यहॉ से आप सनावद, बेड़िया फरसते हुए रोड़िया पधारे, जहॉ भावसार बधुओ और दशोरा महाजनो ने आचार्य श्री के प्रति अत्यत श्रद्धा- भक्ति प्रदर्शित की। फिर आप अन्दड़, गो गाव, खरगोन, ऊन, सैगाव, जुलवानियाँ, बालसमन्द होते हुए सेंधवा पधारे। यहॉ पर धर्म की ज्योति प्रदीप्त कर गवाड़ी पधारे, जहाँ पचायत भवन मे विराजे। यहॉ सेन्धवा एव खरगोन के श्रेष्ठि श्रावक उपस्थित हुए। जैनधर्म के कर्मवाद एव गीता के कर्मयोग पर चर्चा करते हुए आचार्य श्री ने फरमाया –**"गीता का कर्मयोग निष्काम भाव से कर्म/पुरुषार्थ करने की प्रेरणा करता है, जिससे जैनधर्म का विरोध नही है, किन्तु कर्मबन्धन से बचने के लिए जैन कर्मवाद में विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। कर्मों को ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य , नाम, गोत्र और अन्तराय के भेद से आठ प्रकार का बताया है। इनके पूर्णक्षय से ही मुक्ति सम्भव है। इसके लिए सबसे पहले मोहकर्म को जीतना होता है, क्योंकि वही कर्मों का राजा है। मोह को जीतने पर ज्ञानावरण, दर्शनावरण एवं अन्तराय कर्म स्वतः नष्ट हो जाते हैं। ये चारों घाती कर्म हैं। शेष चार कर्म अघाती है जो केवलज्ञानी का शरीर छूटने के साथ क्षय हो जाते हैं। जैन कर्म-सिद्धान्त के अनुसार स्वयं आत्मा ही अपने कर्मों का कर्त्ता, भोक्ता एवं उनसे मुक्ति पाने वाला है। इस दृष्टि से जैन दर्शन आत्मवादी एवं पुरुषार्थवादी है। निष्कामभाव से कर्म करना भी मोह को जीतने का ही उपाय है।"** आचार्यप्रवर से इस तात्त्विक विषय का सहज सरल भाषा मे समाधान प्राप्त कर श्रोताओं को प्रमोद का अनुभव हुआ। फिर आप बीजासन घाट, पलासनेर, हाड़ाखेड़, दहीवद होते हुए शिरपुर पधारे। मालव एव मध्यप्रदेश मे चरितनायक के इस विचरण-विहार से जिनशासन की महती प्रभावना हुई। विशुद्ध जिनशासन की जाहो जलाली व जन-जन के जीवन मे धर्म सस्कार के बीज वपन करने के पुनीत लक्ष्य से आप द्वारा सदाचार, निर्व्यसनता, स्वाध्याय एवं सामायिक की प्रेरणा से अनेको व्यक्तियो ने अपने जीवन को भावित किया। ज्ञान, दर्शन, चारित्र के सगम पुण्यनिधान पूज्यपाद की असाम्प्रदायिक वृत्ति, जन-जन की कल्याण-कामना व एकमात्र जिनशासन की प्रभावना की निःस्वार्थवृत्ति से यहा के लोग आपसे बहुत प्रभावित हुए व आप उनकी अनन्य आस्था के केन्द्र तथा हृदय सम्राट बन गये। अब आपका लक्ष्य महाराष्ट्र मे धर्मोद्योत करने का था। महाराष्ट्र की धरा पर आपके पदार्पण का उसी प्रकार स्वागत हुआ, जैसे कई वर्षों की अनावृष्टि के बाद हुई वर्षा का । महाराष्ट्र के विभिन्न ग्रामों व नगरों के श्रद्धालुओं का मन हुआ कि इन अध्यात्मनिष्ठ संतो की पदरज एव अमृतमयी वाणी से उनका हृदय एवं ग्राम नगर भी पावन बनें, अत. आगे से आगे विनतियों का सतत क्रम चलता

रहा।

शिरपुर मे श्रावक-श्राविकाओ ने विविध प्रत्याख्यान अंगीकार कर विशेष श्रद्धा-भक्ति का परिचय दिया। प्रात एव अपराह्न दोनो समय यहाँ उपस्थित होकर धुलिया, जलगाव, गोलयाना, नन्दुरबार, वर्शी, नरडाणा आदि क्षेत्रों के धर्मप्रेमियो ने भगवन्त की सेवा मे अपने-अपने क्षेत्र स्पर्शन हेतु आग्रह एवं विनययुक्त निवेदन किया। शिरपुर से आपश्री वर्शी पधारे । यहाँ श्री कान्तिलाल जी बाफना जो अमेरिका में कोयले से पेट्रोल तैयार करने सम्बधी विषय पर पी- एच डी के लिए शोध कार्य कर रहे थे, ने आचार्य श्री से विधिवत् श्रावक धर्म की दीक्षा ग्रहण की। आपके पदार्पण पर नरडाणा मे सघ का मतभेद प्रेम मे बदल गया।

आप विद्वत्ता के साथ सरलरूपेण तत्त्वज्ञान को श्रोतृ-समुदाय को समझाने में दक्ष थे। इसलिए आपके शान्त, गम्भीर एव मन्द स्वर भी एकाग्रतापूर्वक सुने जाते थे। आपको अपने यश की नही, जिनशासन की सेवा एव जन-जन के सच्चे जीवन-निर्माण की चिन्ता थी। इसलिए आप किसी को अपने से न जोड़कर जिनेन्द्र भगवान एव उनकी वाणी से ही जोड़ने का लक्ष्य रखते थे। किन्तु भक्त की आस्था, भगवान से अधिक गुरु के प्रति जुड़ जाए, यह भी स्वाभाविक विकास की प्रक्रिया है। अत कई भक्तो ने तो गुरु हस्ती को ही अपने हृदय के भगवान के रूप मे स्वीकार किया है।

नरडाणा से मालिच, सोनागिर, नगाव होते हुए आप २३ फरवरी को धुलिया पधारे। आपके शुभागमन पर महाराष्ट्र के लोकप्रिय दैनिक 'स्वतत्र भारत' ने पूरे पृष्ठ मे आपश्री के विराट् व्यक्तित्व पर महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रकाशित की, जिसकी सैकड़ो प्रतियाँ हाथो-हाथ समाप्त हो गईं।

नगरप्रवेश का दृश्य अतीव मनमोहक था। "आचार्य श्री आये है, नयी रोशनी लाये है" के जयघोषो से सम्पूर्ण नगर आह्लादित था। चरितनायक ने यहाँ अमोलक ज्ञानालय मे हस्तलिखित शास्त्रो एव ग्रन्थो का अवलोकन कर ऐतिहासिक तथ्य संकलित किये। यहाँ स्वाध्याय सघ की स्थापना हुई। प्राकृत ग्रन्थ 'कुवलयमाला' मे वर्णित चण्डसोम, मान भट्ट, मायादित्य, लोभदेव और मोहदत्त के आख्यानो के माध्यम से आत्म-कर्तृत्व, कर्म, कषाय, सम्यक्त्व, भव-भ्रमण, मुक्ति आदि विषयो पर आचार्य श्री द्वारा की गई व्याख्या से शिवाजी विद्या प्रसारक सस्थान के कला, विज्ञान और वाणिज्य कालेज के प्रोफेसर (प्राकृत) श्री विश्वनाथ जगम तथा अनेक विद्यार्थी अत्यत प्रभावित और श्रद्धाभिभूत हुए। यहाँ ३० व्यक्तियो ने नित्यप्रति स्वाध्याय करने व माह मे एक दया करने का सकल्प कर साधनामार्ग मे अपने चरण बढाये। २ मार्च से एक सप्ताह तक आपने मालेगाव के विभिन्न उपनगरो को फरसते हुए धर्म की महत्ती प्रेरणा की। यहाँ सुश्रावक श्री मालूजी के नेतृत्व मे बीस-पच्चीस युवको ने स्थानक मे नित्य आकर सामूहिक सामायिक-स्वाध्याय करने के सकल्प लिए। यहा महासती प्रीतिसुधाजी म सा. आदि ठाणा एवं मूर्तिपूजक परम्परा के सन्त श्री चन्द्रशेखरजी आदि ठाणा चरितनायक के दर्शनार्थ पधारे। हीरादेसर (मारवाड़) के लोढा बन्धुओ की गुरुभक्ति एवं संघसेवा उल्लेखनीय रही। लासलगॉव की प्रबल विनति एव आन्तरिक भावना को महत्त्व देकर करुणानिधान ने शताधिक मील की अतिरिक्त पदयात्रा के कष्ट को भी गौण कर दिया। इसलिए लासलगाँव होकर जलगॉव जाने का लक्ष्य बनाया।

• लासलगॉव होकर खानदेश में प्रवेश

मालेगाव से पाटणा, सोदाणा फरसते हुए आप उमराणा पधारे। यहाँ फाल्गुनी चौमासी पर आपकी महती प्रेरणा से दैनिक स्वाध्याय की प्रवृत्ति प्रारम्भ हुई। रामदेव टेकरी के अहिंसा भगत जबरी बाबा ने आध्यात्मिक-सन्त

शिरोमणि आचार्य श्री को अपने यहाँ विराजने का आग्रह किया। फिर चिचुआ से चादवड़ पधारते समय आपने ३ मील की दुर्गम पहाड़ी पार कर मार्ग में नेमिनाथ ब्रह्मचर्याश्रम में छात्रों को सम्बोधित किया। फिर काजी, सागवी होते हुए चरितनायक लासलगांव पधारे। वहाँ श्री आनन्दराज जी मूथा के नेतृत्व मे 'युवक धर्म से विमुख क्यो ?' विषय पर आयोजित गोष्ठी में आचार्य श्री ने अनेक युवको की शकाओ का समाधान करते हुए उन्हे नित्य स्वाध्याय की प्रेरणा दी। आपने फरमाया—**"भौतिकता का आकर्षण मनुष्य को जल्दी प्रभावित करता है, धर्म एवं अध्यात्म का महत्त्व देर से समझ में आता है। किन्तु जो धर्म और अध्यात्म के लिए गुरुजनों की सत्संगति में नही आते, वे सदा के लिए सही समझ से वंचित हो जाते हैं। बुजुर्गों का आचरण भी इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। वे धर्म को अपने जीवन-व्यवहार में अपना लें तो कोई कारण नही कि उनके सम्पर्क में आए युवा धर्म से विमुख हों। धर्म की आवश्यकता क्यों, इसका चिन्तन युवकों में प्रसारित करने की आवश्यकता है।"**

आचार्य श्री के ३६ वर्षों बाद शुभागमन से लासलगाँववासियों को यह प्रतीत हुआ कि हमारा भाग्योदय है कि ऐसे उत्कृष्ट सयमधनी युग-मनीषी अध्यात्म योगी के चरण इस छोटे से गाव में पड़े हैं। ग्रामवासियो ने पूर्ण मनोयोग से आपके पदार्पण का लाभ उठाने मे कोई कोर-कसर नही रखी। तपस्या का तांता लग गया। सामूहिक दयाव्रत, पौषध, उपवास आदि के साथ ३५ युवको ने प्रतिदिन स्थानक मे आकर सामूहिक स्वाध्याय करने का सकल्प लिया। पूरे एक सप्ताह पर्युषण जैसा धर्माराधन का ठाट रहा। ब्रह्मेचा एव साड परिवार ने आगन्तुको के सेवा-सत्कार का लाभ लिया। जोधपुर मे महासती श्री बिरदीकवर जी म.सा के देहावसान के समाचार प्राप्त होने पर धर्मसभा मे आचार्य श्री ने सतीजी की सेवा, कष्टसहिष्णुता एवं सयमी जीवन पर प्रकाश डाला और चार लोगस्स का कायोत्सर्ग कर स्वर्गस्थ आत्मा के प्रति शान्ति की कामना की।

अप्रमत्त साधक आचार्य श्री दक्षिण भारत के दुर्गम मार्गों को पार करते हुए भी बिना थके पूर्ण उत्साह के साथ जिनशासन प्रभावना व जनकल्याण के कार्यों के प्रति जागरूक थे। आपका इन क्षेत्रों में यह आगमन जन-जन के मानस मे त्याग, तप, स्वाध्याय, सामायिक एव व्रत-नियमो के प्रति आस्था एव उमग प्रकट कर रहा था। जहा-जहा भी आपके कदम पड़ते, वहाँ के लोग अपने जीवन को धन्य-धन्य समझते।

लासलगाँव से विहार कर आचार्य श्री पालखेड़, पीपलगाँव, बसवन्त, दावचवाड़ी, नान्दूर्डी, तलेगॉव रोडी होते हुए मनमाड़ पधारे, जहाँ स्वाध्याय-प्रवृत्ति का श्री गणेश हुआ। श्री पी.एस सिंघवी सयोजक नियुक्त किये गए। अकाई मे मद्रास के सुश्रावक श्री पृथ्वीराजजी कवाड़ ने सपरिवार धर्मलाभ लिया। पूज्यपाद यहाँ से २१ किलोमीटर का उग्र विहार कर येवला पधारे। यहाँ से १ अप्रेल १९७९ को विहार कर आपके अन्दरसूले पधारने पर औरगाबाद एव जालना सघ के प्रतिनिधिमण्डल अक्षयतृतीया पर अपने यहाँ विराजने हेतु भावपूर्ण विनति लेकर उपस्थित हुए । सूरेगाँव से बैजापुर पधारने पर आपके प्रवचन से युवकों मे धार्मिक चेतना का सचार हुआ व उन्होने श्री ऋषभचन्दजी संचेती के नेतृत्व में नित्य स्वाध्याय करने की प्रतिज्ञा की। फिर खण्डाला, भीवगाव, घूघरगाव मे जिनवाणी का पान कराते हुए आप लासूर स्टेशन पधारे, जहाँ १० अप्रेल १९७९ महावीर जयन्ती पर अध्यात्म-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। आचार्य श्री ने भगवान महावीर के उपदेशो की उपादेयता का प्रभावी प्रतिपादन किया। आपकी प्रेरणा से लासूर गांव एवं लासूर स्टेशन पर स्वाध्याय मण्डल का गठन हुआ। यहाँ जलगाँव का शिष्टमण्डल विनति लेकर उपस्थित हुआ। बोदवड़ जामनेर विराजित सेवाभावी श्री लघु लक्ष्मीचन्दजी महाराज आदि

ठाणा की सहमति जानकर करुणानाथ ने अक्षयतृतीया पर औरगाबाद पधारने की स्वीकृति फरमायी, जिससे औरंगाबाद सघ को अतीव प्रमोद हुआ और जामनेर विराजित सन्तो ने भी अपने विहार की दिशा औरगाबाद की ओर की।

आचार्य श्री जहाँ भी पधारते, प्राय· श्रद्धालु भक्तों का वहाँ आगमन होता रहता था। यह क्रम न केवल मारवाड़ एव मेवाड़ के ग्रामो मे देखा गया, अपितु मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एव दक्षिण भारत के प्रान्तो मे भी इसकी छाप दृष्टिगोचर हुई। इसमे आचार्य श्री का प्रभावशाली व्यक्तित्व ही प्रमुख कारण था, जो श्रावको को दुर्गम एव दूरस्थ स्थलो पर भी खीच लेता था। आपके सान्निध्य मे श्रद्धालुभक्त शान्ति का अनुभव करने के साथ अपने आपको आध्यात्मिक ऊर्जा से समृद्ध अनुभव करते थे। आपश्री लासूर से डोण गाव, जम्भाला होते हुए औरगाबाद छावनी पधारे। वहाँ के उपनगरो मे आपके आध्यात्मिकता से ओतप्रोत प्रेरणादायी प्रवचन हुए। उनमे अक्षयतृतीया के दिन महावीर भवन कुमारवाड़ा के विशाल प्रागण मे भगवान् आदिनाथ की तपसाधना की महत्ता पर दिया गया आध्यात्मिक प्रवचन अद्वितीय रहा। इस अवसर पर अभा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ एव सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के द्वारा न्यायाधिपति श्री चाँदमलजी लोढा जोधपुर, डॉ सूर्यनारायणजी अजमेर, श्री चन्द्रराज जी सिंघवी जयपुर, श्री बादल चन्दजी मेहता इन्दौर का उल्लेखनीय सेवाओ के लिए अभिनन्दन किया गया तथा यहाँ स्वाध्याय समिति का गठन किया गया। महाराष्ट्र क्षेत्र मे स्वाध्याय के व्यापक प्रचार-प्रसार हेतु श्री टीकमचन्दजी हीरावत जयपुर एव श्री पनराजजी ओस्तवाल ने कतिपय क्षेत्रो का दौरा किया। लम्बे समय से जलगाव श्री सघ आगामी चातुर्मास हेतु आपकी सेवा मे विनति कर रहा था। अक्षय तृतीया के प्रसग पर उन्होने अपनी विनति पुन करुणाकर गुरुदेव के चरणो मे प्रस्तुत की। चातुर्मास की स्वीकृति पाकर जलगाव वासियो के मन मयूर नाच उठे और वहाँ के सघ मे हर्ष की लहर दौड़ गई। यहा से पूज्यपाद दौलताबाद, विश्वविख्यात लेणी गुफा होते हुए एलोरा पधारे व श्री पार्श्वनाथ ब्रह्मचर्याश्रम विराजे। यहाँ से आप हत्तनूर, कन्नड़-अन्धानेर एव भाँवरवाड़ी पधारे। यहाँ मराठवाड़ा की सीमा समाप्त होकर खानदेश की सीमा प्रारम्भ होती है।

मराठवाड़ा से खानदेश मे प्रवेश करते हुए आपका विहार चालीसगाव की ओर हुआ। यहा अगवानी मे विशाल सख्या मे भक्तजनो ने चुगी चौकी से ही विहार मे सम्मिलित होकर जय-जयकारो के साथ पूज्यपाद का प्रवेश कराया। यहा के ४-५ दिन के प्रवास में अनेक श्रद्धालु भक्तो ने नियमित स्वाध्याय एव मासिक व साप्ताहिक दयाव्रत के नियम अगीकार किये। चरितनायक चालीसगाव से बागली, कजगाव, भडगाव, पाचोरा, महिन्दले, टिटवी, शिरसमणी, पारोला, बहादुरपुर आदि क्षेत्रो को अपनी पदरज से पावन बनाते हुए आमलनेर पधारे, जहा ५ जून से जैनधर्म सस्कार शिविर प्रारम्भ हुआ। शिविर मे ३४ छात्रो व ३५ छात्राओ ने भाग लिया। यहा से पूज्यपाद दहीवद नीमगवाड़ फरसते हुए चौपड़ा पधारे, जहा २० छात्रो व ३० छात्राओ ने भीषण गर्मी मे भी स्थानीय धार्मिक सस्कार शिविर मे नियमित उपस्थित होकर ज्ञानार्जन किया। युगप्रभावक आचार्य भगवन्त के पावन प्रवचनामृत से प्रभावित भव्य जनो ने अनेक व्रत-प्रत्याख्यान स्वीकार किये। मधुर व्याख्यानी श्री हीरामुनि जी मसा. (वर्तमान आचार्य प्रवर) ने अपने प्रवचनो के माध्यम से रात्रि-भोजन त्याग व सामायिक स्वाध्याय की प्रभावी प्रेरणा की। चौपड़ा से २० जून १९७९ को श्रद्धासिक्त भावभीने वातावरण मे विहार कर करुणाकर अडावद चिंचोली, साकली, यावल व नीमगांव में धर्म प्रेरणा करते हुए भुसावल पधारे। भुसावल मे जिनवाणी की पावन सरिता प्रवाहित करते हुये आपका विहार चातुर्मासार्थ जलगाव की ओर हुआ।

• जलगांव चातुर्मास (वि.सं. २०३६)

जलगाव चातुर्मास की स्वीकृति के समय से ही जलगाववासी अति उत्साहित मन से आचार्य भगवन्त के पावन पदार्पण की प्रतीक्षा मे थे। सबके मन में प्रबल उत्कठा व दृढ सकल्प था कि शीघ्र भगवन्त पधारें और हम उनके चातुर्मासिक सान्निध्य मे नित्य प्रति पावन दर्शन, वन्दन व प्रवचन श्रवण का लाभ ले। अपने जीवन मे व्रत-नियम, त्याग-प्रत्याख्यान अगीकार कर साधना के सुमेरु आचार्य देव के चरणारविन्दो मे अपनी भक्ति के पुष्प अर्पित करे तथा अपने आपको धन्य धन्य बनाये। साकेगाव, नशीराबाद होते हुए दिनाक ५ जुलाई १९७९ को पूज्यपाद के विसं २०३६ के ५९ वें चातुर्मासार्थ जलगाव पदार्पण से जलगाव का कण-कण मानो नाच उठा, सभी के चेहरो पर अपने सौभाग्य के प्रति प्रमोद व्यक्त होने के साथ ही इस चातुर्मास मे कुछ कर गुजरने का प्रबल उत्साह व श्रद्धा का आवेग परिलक्षित हो रहा था। जैन धर्म, श्रमण भगवान महावीर एव गुरु हस्ती की जय-जयकार से जलगाव के राजमार्ग व नवजीवन मगल कार्यालय की ओर जाने वाले सभी मार्ग गूंज उठे। श्रावक श्राविका आबालवृद्ध जैन-जैनेतर के कदम मानो स्वत. आपके चातुर्मास स्थल की ओर उठ रहे थे। मगलमय प्रवेश की वेला मे जलगाव के अग्रगण्य श्रावक प्रबुद्ध स्वाध्यायी श्री नथमलजी लूकड़, उज्ज्वल विरासत के धनी श्री ईश्वर बाबू ललवानी, परम पूज्य गुरुदेव के प्रति सर्वतोभावेन समर्पण करने को समुत्सुक समाजसेवी श्री सुरेशकुमार जी जैन, शाकाहार के प्रबल प्रेरक भी रतनलाल जी बाफना आदि गणमान्य सुश्रावकगण व अन्य वक्ताओ ने प्रमुदित मन से आराध्य गुरुदेव का अभिनन्दन करते हुए अपने मन के भाव श्री चरणो मे अर्पित किये। यहा प्रथम प्रवचन मे ही पूज्यपाद गुरुदेव ने स्वाध्याय का सदेश प्रसारित करते हुए जलगाव वासियो को धर्मसाधना से जुड़ कर स्वाध्याय के माध्यम से जिनवाणी की पावन सरिता को महाराष्ट्र के कोने-कोने मे पहुचाने का आह्वान करते हुए फरमाया - "आत्मा के भीतर अनन्त शक्ति और सामर्थ्य है, इसका पहिचानने का माध्यम है 'स्वाध्याय'। ज्ञान की ज्योति जगाने का सशक्त साधन है 'स्वाध्याय'। श्रद्धाशील भक्तो के मानस पटल पर आपके जादुई शब्द मानो अकित हो गये थे। समाजसेवी सुश्रावको ने अपनी आस्था के अनन्य केन्द्र आचार्य हस्ती की प्रेरणा को मूर्त रूप देने का दृढ सकल्प किया और ८ जुलाई को ही यहा महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ की स्थापना हुई जो अद्यावधि स्वाध्याय सघ, जोधपुर की क्षेत्रीय ईकाई के रूप मे महाराष्ट्र प्रान्त मे स्वाध्याय की अलख जगाये हुए है व इसके द्वारा शिविरो और धार्मिक पाठशालाओ के माध्यम से सक्रिय स्वाध्यायी तैयार करने व पर्युषण पर्वाराधन हेतु सैकड़ो क्षेत्रो मे स्वाध्यायी भेज कर जिनशासन-सेवा का महान् कार्य किया जा रहा है।

महाराष्ट्र स्वाध्याय सघ की स्थापना मानो इस चातुर्मास मे सम्पन्न होने वाले कार्यो का शुभारम्भ था। पूरे चातुर्मास मे दीर्घगामी सस्थाहितकारी प्रवृत्तियों के शुभारम्भ का क्रम चलता ही रहा। चातुर्मास मे धीरे धीरे बहूमडल व सास मडल की बहिनो मे जैनधर्म व दर्शन के शिक्षण के माध्यम से ज्ञान-प्रसार का कार्य तो आगे बढ़ा ही, साथ ही जैन आचार शैली, समन्वय-शान्ति युक्त गृहस्थ जीवन के सस्कारो को हृदयगम कर बहिनो ने घर-घर मे शान्ति, स्नेह व समन्वय का आदर्श अपना कर आदर्श जैन परिवारों की सरचना का अभिनव कार्य किया। उस समय ज्ञानाराधन कर जो बहिनें श्राविका-मडल से जुड़ी, उनमें श्रीमती विजया जी मल्हारा, रसीला जी बरडिया प्रभृति बहिने आज बहूमडल व स्वाध्याय संघ के माध्यम से बहिनो मे स्वाध्याय, शिक्षा व संस्कार निर्माण का सन्देश प्रचारित करने मे कुशलतापूर्वक अपना योगदान कर रही हैं।

यह चातुर्मास महाराष्ट्र में स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार हेतु मील का पत्थर साबित हुआ। यहा के कुशल कर्मठ

कार्यकर्ताओं ने पूज्य गुरुदेव की प्रेरणा को साकार स्वरूप देने मे कोई कसर न रखी। इस चातुर्मास मे स्वाध्याय शिक्षण हेतु, तीन शिविर आयोजित किये गये, जिनमे सख्या व प्रतिनिधित्व क्षेत्र का निरन्तर विस्तार होता गया। जलगांव मे आयोजित प्रथम स्वाध्यायी शिक्षण शिविर मे महाराष्ट्र के २० स्थानो से आये विद्यार्थियों, अध्यापकों, श्रेष्ठिवर्यों, डाक्टरो व प्रोफेसरो ने भाग लेकर अपने आपको गुरु हस्ती की प्रेरणा की अजस्र धारा स्वाध्याय-सघ का सदस्य बन कर जिनशासन संरक्षण हेतु सजग शास्त्रधारी शान्ति सैनिक बनकर अपना सौभाग्य समझा। इस शिविर मे शिविरार्थियो को विविध श्रेणियो मे विभक्त कर उन्हे वक्तृत्व कला , शास्त्राध्ययन, थोकड़ो आदि का ज्ञानाभ्यास कराया गया। आचार्य भगवन्त ने इस प्रथम शिविर मे उपस्थित प्रबुद्ध शिविरार्थियो को उद्बोधित करते हुए फरमाया - "आकाक्षा यह है कि एक-एक माह मे दस-दस के हिसाब से चातुर्मासकाल मे चालीस स्वाध्यायी भाई तैयार हो जाने चाहिए। मै यह कोटा कम दे रहा हूँ , अधिक नही दे रहा हूँ। जब आप इस दीपक को प्रज्वलित करेगे तब ऐसा लगेगा कि हम सब मौजूद हैं, हमारे साथ मे सैकड़ो, हजारों समाज सेवी है। स्वाध्याय का ऐसा दीपक प्रज्वलित कर दे तो आपके धर्मस्थान, उपासना मन्दिर, स्थानक, ज्ञान शिखर से प्रदीप्त रहेगे। आप अपनी भावी पीढ़ी को भी प्रेरणा दे सकेगे।" युग प्रभावक आचार्य भगवन्त का यह आह्वान महाराष्ट्र के लिये एक युगान्तरकारी सन्देश था।

दिनाक २२ से २६ सितम्बर १९७९ तक श्री महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय सघ की ओर से द्वितीय शिविर का आयोजन किया गया, जिसमे ४२ स्वाध्यायी भाइयो व ६१ बहिनो ने भाग लेकर १३ क्षेत्रो का प्रतिनिधित्व किया। शिविरकाल मे हजारो सामायिक, उपवास, बेले, दया आदि के साथ शिक्षण-प्रशिक्षण के कार्यक्रम हुए। दिनांक २८ अक्टूबर से यहाँ साधना-शिविर का आयोजन हुआ। दिनाक ३० अक्टूबर से प्रारम्भ तृतीय शिविर मे १३४ शिविरार्थियो ने भाग लिया।

चरितनायक आचार्य भगवन्त के सान्निध्य मे इस वर्ष का पर्युषण-पर्वाराधन जलगांववासियो के लिये एक अनूठा अनुभव था। श्रमण भगवान महावीर स्वामी द्वारा प्ररूपित साधुमर्यादा के अनुरूप श्रमण समाचारी का पालन करने वाले रत्नाधिक सतों द्वारा शास्त्र-वाचन, वीरशासन के ८१ वे पट्टधर युगमनीषी युग-प्रभावक, आचार्य देव का जीवन निर्माणकारी उद्बोधन, व्रत-प्रत्याख्यान हेतु तत्पर जलगाव के जन-जन — ये सब मिल कर समवसरण का दृश्य उपस्थित कर रहे थे। प्रार्थना, प्रवचन, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान सभी कार्यक्रमों मे आशातीत उपस्थिति आध्यात्मिक आनन्द की छटा को शतगुणित कर रही थी। महापर्व सवत्सरी के पावन प्रसग पर तपोधनी आचार्य भगवन्त ने नवतत्त्वो का निरूपण करते हुए आत्म-निरीक्षण पर बल देते हुए श्रद्धा, सगठन, सयम एव स्वाध्याय की आवश्यकता प्रतिपादित की।

परम पूज्य भगवन्त जहा एक ओर अपने प्रभावक प्रवचनो के माध्यम से सहज ही भक्तजनों के हृदय मे नैतिकता, निर्व्यसनता, प्रामाणिकता व अनुकम्पा के भाव जागृत कर देते, वही अपनी सहज सरल भाषा में धर्म का स्वरूप समझा देते। वर्षावास में नैतिक बल जागृत करने व श्रावक के तीसरे व्रत अदत्तादान के अतिचार 'चोर की चुराई वस्तु ली हो' से बचने की प्रेरणा देते हुए करुणाकर ने फरमाया - "आप सोना-चादी के व्यापारी हैं, दुकान पर बैठे हैं - कोई आदमी आभूषण बेचने आया या घड़िया बेचने आथा और कम कीमत मे बेच रहा है। एक ओर मन मे विचार आया कि १००-१५० घड़िया खरीद लेनी चाहिए। ३०० रुपये की घड़ी १५० रुपये मे मिल रही है, यह लोभ मन में आ गया। दूसरी ओर उसी वक्त यह ध्यान आया कि हराम की चीज है, मुझे किसलिए लेनी है, हो न हो यह चोरी या तस्करी का माल है, मुझे ऐसा माल नही चाहिए। इसको लेने से मेरा मन चंचल और भयभीत रहेगा, अन्याय को प्रोत्साहन मिलेगा। यह व्यर्थ में खतरे का प्रसग है, इसलिये मुझे नही चाहिए। मन को रोका तो गिरती

हुई आत्मा को रोक लिया।"

मनुष्य की मकड़ी से तुलना करते हुए आपने फरमाया - "**मकड़ी अपना जाल फैलाती है सुरक्षा के लिए, किन्तु वह जाल बन जाता है मकड़ी को उलझाने के लिए। यही हालत मनुष्य की है। वह भी अपने बनाये हुए जाल में स्वयं फंस जाता है । फिर भी दोनों में एक अन्तर है। जाल बनाने वाली मकड़ी में जाल बनाने की ताकत है, जाल को तोड़ने की नहीं। लेकिन मानव में दोनों योग्यताएं हैं । वह ज्ञान एवं क्रिया के माध्यम से अपने जाल को समाप्त कर सकता है।**"

साधर्मी सेवा के सम्बन्ध में एक दिन करुणाकर आचार्य भगवन्त ने अपने प्रवचनपीयूष मे फरमाया- "आप लोगो के यहा शादी-विवाह के अवसर पर लापसी या गुड़ बाटने का मौका आया होगा। घर-घर मे हाती दी जाती होगी, पाव-आधा पाव लापसी की। पहले उस हाती से कमजोर स्थिति वालो की गुजर चलती थी। समाज में जब उसका वितरण होता था, तब यह देखा जाता था कि किसी बुढ़िया या विधवा के यहा हाती जा रही है , जिसके कोई कमाने वाला नही है। उसके घर पर पहुँचते और लापसी के नीचे सोने की मुहर रख कर लापसी के बहाने उसके घर पहुचा देते। क्या आपके इतने बड़े नगर में ऐसा वात्सल्य करने वाला मिलेगा ? जलगाव क्या, पूरे महाराष्ट्र मे खोजने जायेगे तो कोई मिलेगा, जो **यह कहे कि मेरी जो बहिनें और मेरे जो भाई आर्थिक स्थिति से कमजोर हैं उन भाई-बहिनों की मदद करना, वात्सल्य करना मेरा काम है, क्योंकि मेरे पास दो पैसे का साधन है और इनके पास नही है। इनकी मदद नहीं करूंगा तो मेरी हलकी होगी।** कई ऐसी बहिने है जो गावो मे गोबर चुनकर लाती हैं और अपना गुजर चलाती है। आप लोग गद्दी पर बैठकर काम चलाते हैं, लेकिन महाजनों की लड़कियाँ दूसरे के यहाँ पानी भरती है, दूसरो के यहां सिलाई का काम करती है, आटा पीसती हैं और इस तरह से अपना गुजर चलाती है। मेरे कहने का मतलब यह है कि भगवान महावीर के अहिंसा एव संयम धर्म का पालन करने वाले गृहस्थ ऐसे होते हैं, जिन्हें अपने धन का त्याग करना पड़े तो त्याग मे सकोच नही करते।"

जगतवत्सल करुणानाथ के इस प्रवचन का सकारात्मक प्रभाव हुआ। परम पूज्य गुरुदेव का चिन्तन था कि **अनुकम्पा भाव सम्यक्त्व का लक्षण है। समाज के अग्रगण्य मुखियाओं का यह कर्तव्य है कि वे ये समझें कि समाज एक देह की भांति है जिसके सभी अंगों की देखभाल करने की उनकी जिम्मेदारी है। पूज्यपाद का चिन्तन था कि समृद्ध व्यक्ति यदि त्यागवृत्ति अपनाते है तो इसका द्विविध लाभ होगा, समृद्ध व्यक्तियों के जीवन में आरम्भ, परिग्रह व ममत्व घटेगा और जरूरतमंद भाई-बहिन अभावजन्य आर्त-रौद्र से बचकर सहज ही धर्म से जुडेंगे।** चरितनायक के प्रियभजन "दयामय ऐसी मति हो जाय" की उद्बोधकारी कड़ियो को आपकी पीयूषपाविनी मंगलमयी वाणी-सुधा से श्रवण कर भला किनका हृदय वात्सल्यसिक्त व अनुकम्पा सम्पन्न नही हो जाता—

"औरो के दु.ख को दु.ख समझूं, सुख का करूं उपाय.... दयामय ऐसी मति हो जाय...."

चातुर्मास समाप्ति के पूर्व चतुर्दशी को आपने फरमाया—"आज चातुर्मास समाप्ति की चवदश हो गई। आज प्रतिक्रमण जो कर सकें उनको प्रतिक्रमण करना चाहिए। रात्रि-भोजन और कुशील का त्याग आज सबको करवा रहा हूँ। सामायिक साधना का कार्यक्रम भी आपके ध्यान मे रहे।

हम संतो से सबधित दो बातो की ओर आपका ध्यान रहे। एक तो विहार के समय अथवा कभी भी कोई भी व्यक्ति हम संतो में से किसी की भी फोटो खीचे नही और खिचावे नही। फोटो खिचाने की हमारी परम्परा नही

है । मुनि सम्मेलन मे प्रतिबधित है और हमारी परम्परा में भी इस पर प्रतिबध है। आपके सिद्धान्त आपके पास हैं, उनके अनुसार हर अवसर पर फोटो खीच लेने की आपकी परपरा है, उसको सतो के फोटो खीचने के काम में न लावें। ऐसे नमूने हो चुके है , इसलिए आपको सावधान किया है। कोई भी व्यक्ति सतो के फोटो नही खीचेगा। (आपने सबको इसका त्याग करवाया)

दूसरी बात याद रहे कि **अब तक पुस्तकें और कुछ ग्रंथ लिखने, संपादन करने, संशोधन करने-कराने का जो काम आया उसमें हम संशोधन करते रहे। छपाने के सम्बन्ध में प्रेरणा करने का ऐसा हमारा सम्बन्ध नही रहा, तथापि कुछ विचार करके हमने उचित समझा कि आज से लेखक के नाम से किसी ग्रन्थ पर हमारा नाम प्रकाशित नही किया जायेगा। हमारे नाम से किसी पुस्तक का प्रकाशन नही किया जायेगा। यह निर्णय आज लिया गया है।**

जलगाँव मे पूज्यपाद का यह चातुर्मास स्वाध्याय, साधना, धर्मप्रचार सभी दृष्टियो से एक सफल ऐतिहासिक चातुर्मास था। इस वर्षावास का प्रभाव खानदेश के बहुत बड़े भूभाग के ग्राम-नगरो पर पड़ा। इसका कारण रहा विचार की ठोस नीव पर आचार का प्रचार। इस चातुर्मास से जलगाव आर्यधरा भारत के धार्मिक नक्शे पर प्रमुख केन्द्र बिन्दु के रूप मे मण्डित हो गया। महाराष्ट्र स्वाध्याय सघ की स्थापना के साथ-साथ उदीयमान समाजसेवी, अनन्य गुरुभक्त श्री सुरेश दादा जैन द्वारा २५ अक्टूबर १९७९ को 'महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ' की स्थापना इस चातुर्मास की प्रमुख उपलब्धि और जिनशासन सेवा का उल्लेखनीय सोपान था। प्रबुद्ध विद्वान् स्वाध्यायी श्री प्रकाशचन्द जी जैन के प्राचार्यत्व मे विद्यापीठ द्वारा जैन दर्शन के विद्वान अध्यापक तैयार करने का महान् कार्य किया जा रहा है। श्री सुरेश दादा जैन के जीवन एव विचारो मे परम पूज्य गुरुदेव के पावन दर्शन व सान्निध्य लाभ से आया परिवर्तन एव उनके परिवार की मर्यादित जीवन शैली, उनके द्वारा शासन सेवा हेतु किया गया समर्पण और अपने आराध्य गुरुदेव की प्रेरणाओ को साकार स्वरूप देने की तत्परता, सघ व समाज के लिये गौरव का विषय है। जलगाव के सुज्ञ उदारमना श्रीमन्त श्रावको द्वारा वात्सल्य समिति के गठन के माध्यम से जरूरतमद स्वधर्मी बन्धुओ को आजीविकोपार्जन के साधन जुटाकर आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास सराहनीय एव अन्य क्षेत्रो के लिये प्रेरक है।

- **महाराष्ट्र भ्रमण**

जलगाव का ऐतिहासिक वर्षावास सम्पन्न कर चरितनायक का विहार महाराष्ट्र के विभिन्न ग्राम-नगरो के विचरण के लक्ष्य से हुआ। यहा से मार्गस्थ विभिन्न ग्रामो को अपनी पद रज से पावन बनाते हुए पूज्यपाद जामनेर पधारे। सामायिक स्वाध्याय के सदेशवाहक आचार्य भगवन्त के पावन सान्निध्य एव मगलमय उद्बोधन से ५१ व्यक्तियो ने सामायिक व २५ व्यक्तियो ने स्वाध्याय के नियम अगीकार किये। ज्ञानाराधन हेतु आपकी प्रेरणा से यहा स्वाध्यायशाला का शुभारम्भ हुआ। दक्षिणवासी भक्तजन दीर्घकाल से यह भावना मन मे सजोये हुए थे कि परम पूज्य गुरुदेव राजस्थान से आगे बढे तो हम उनके पावन विचरण-विहार की हमारी चिर सचित अभिलाषा को श्री चरणो मे निवेदन करे। इस अभिलाषा को मद्रास सघ-अध्यक्ष पद्मश्री मोहनमलजी चौरडिया ने जामनेर उपस्थित होकर भगवन्त के चरणो मे अपने सघ, तमिलनाडु व समूचे दक्षिण क्षेत्र की ओर से भावभीनी विनति प्रस्तुत की।

जामनेर से आचार्य श्री पहुर पधारे। यहा समाज मे १५ वर्षो से परस्पर वैमनस्य का वातावरण था। मैत्री, करुणा एव प्रमोदभाव के जीवन्त प्रतीक पूज्यप्रवर ने अपने मागलिक उद्बोधन मे पारस्परिक कषाय छोड़कर प्रेम, सद्भाव एव मैत्री भाव अपनाने की प्रेरणा की, जिसके फलस्वरूप दोनो गुटो के मुखिया श्री ऋषभजी व श्री मोहनजी

ने परस्पर क्षमा माग कर इस कलह को समाप्त कर संघ को सामरस्य एवं सद्भाव में आबद्ध किया।

पहुर से पूज्यपाद सेंदूर्णी, पलासखेडा, बाकोद मे धर्म का अलख जगाते हुए तोडापुर पधारे। यहा श्री नामदेव पाटिल ने आपसे सजोड़े शीलव्रत अंगीकार कर अपनी भक्ति का परिचय दिया। यहां से आप फतेपुर पधारे। यहा आपकी पावन प्रेरणा व मंगलमय आशीर्वाद से युवको व बालिकाओ के धार्मिक शिक्षण के लिये भी महावीर जैन स्वाध्यायशाला की स्थापना हुई। धर्मनिष्ठ श्रद्धालु युवारत्न श्री रतनलाल जी ने संयमधनी तपःपूत आचार्यदेव के फतेपुर पधारने की खुशी मे सजोड़े एक वर्ष का शीलव्रत अंगीकार कर श्रद्धा-भक्ति का क्रियात्मक रूप प्रस्तुत किया। मार्गस्थ गांवों व यहां पर कई अन्य व्यक्तियो ने आजीवन शीलव्रत के प्रत्याख्यान किये।

फतेपुर से पूज्यवर्य गोदरी पधारे, जहां मात्र एक जैन घर होते हुए भी सम्पूर्ण गांव के लगभग ७०० व्यक्ति आपके दर्शनार्थ उपस्थित हुए। यहा से आपका विहार पहाड़ी घाटियों के विकट मार्ग को पार करते हुए हुआ। परीषह विजेता साधक महापुरुषो की परीक्षा मे प्रकृति भी पीछे नहीं रहती है। अचानक वर्षा प्रारम्भ हुई एव पूज्यपाद ने शिष्य मडल के साथ एक किसान की कुटिया मे विराज कर उसे पावन किया। ५ घंटे वहा विराजने के उपरान्त विहार कर आप जब धावड़ा ग्राम पहुंचे तो शाम हो चुकी थी। सभी सन्तवृन्द के सहज ही उपवास हो गया था। धावड़ा से पीपलगाव, भोकरदन, केदारखेडा, चांडई, राजूर आदि क्षेत्रो को फरसते हुए भगवन्त जालना पधारे। यहा अपने प्रेरक उद्बोधन मे आपने कषाय भाव को पाप कर्मों के बन्धन का हेतु बताते हुए सगठन व सद्भाव की प्रेरणा की। आपकी मगलमयी ओजस्वी प्रवचन सुधा के प्रभाव से समाज मे परस्पर समझौता होने से स्नेहमय वातावरण का निर्माण हुआ। स्वाध्याय की आपकी प्रबल प्रेरणा से बच्चो मे सस्कार व धार्मिक शिक्षण देने हेतु यहा स्वाध्यायशाला का श्री गणेश हुआ। यहा पर आपने श्री शोभागसिंहजी चण्डालिया के सग्रह का अवलोकन किया, जिसमे १५५५ लेख-निर्युक्तियाँ थी। यहा वस्त्र, पात्र एव ओघा आदि उपकरणो का भी भडार था। फतेपुर से धर्मनिष्ठ श्रावक श्री रतनलालजी फूलफगर के नेतृत्व में ७० भाई-बहिनो के सघ ने आकर पूज्यपाद के पावन दर्शन व वदन का लाभ लिया।

पूज्यवर्य जालना से विहार कर गोलापागरी, अम्बड, धाकलगांव गेवर, गेवराई, गड्डी आदि क्षेत्रों मे धर्मोद्योत करते हुए बीड पधारे। मार्ग मे धाकलगाव मे श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेस के अध्यक्ष श्री जवाहरलालजी मुणोत ने सपरिवार एव मत्री श्री चम्पालालजी सकलेचा ने पूज्यपाद के पावन दर्शन, वन्दन व सान्निध्य का लाभ लेकर मार्गदर्शन प्राप्त किया। गेवराई मे श्री लक्ष्मीनारायण मदिर मे सर्वजनहिताय आपका प्रवचन हुआ। पूज्य गुरुदेव २ दिन बीड विराजे। आपके दो दिनो के इस अल्पकालिक प्रवास मे ही ओस्तवाल, खीवसरा एव डूगरवाल भाइयो ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को सुशोभित करते हुए आपके श्री चरणो मे श्रद्धा भक्ति समर्पित की। बीड से विहार कर भगवन्त पाली होते हुए मोरगांव पधारे। यहा शोलापुर सघ एव चौशाला के श्रावक-श्राविकाओ ने आचार्य देव की सेवा मे अपना क्षेत्र फरसने की पुरजोर विनति प्रस्तुत की। उस्मानाबाद जिले की सीमा मे आपका प्रवेश होते ही चौशाला गाववासी प्रमुदित हो उठे। आपने यहा अपने प्रेरक उद्बोधन मे श्रावक द्वारा करणीय षट्कर्म का विवेचन करते हुए 'देव' का स्वरूप समझाते हुए फरमाया कि जो राग-द्वेष से रहित होते है एव कनक व कामिनी को पूर्णत. जीत लेते हैं, वे ही सच्चे देव है, श्रावक के लिये वे ही आराध्य हैं। कहा भी है—

देव वही जो राग रोष से हीना।
कनक कामिनी विजय करन प्रवीना ॥

परम पूज्य गुरुदेव से जिन्हें सम्यक्त्व बोध लेने का सौभाग्य मिला है, वे सब इस बात के साक्षी हैं कि गुरुदेव सम्यक्त्व के माध्यम से जैन श्रावक-दीक्षा देते हुए भक्तजनो को आत्मा, धर्म व आराध्य का सरल सहज भाषा में बोध करा देते थे। आप फरमाया करते थे कि जो राग-द्वेष से सर्वथा परे हैं, जो न तो स्तुति प्रशसा से प्रसन्न हो वरदान देते हैं, और न ही निन्दा से नाराज हो अभिशाप देते हैं, जो सांसारिक ऐश्वर्य, धन-वैभव व शृंगार की बजाय अनन्त आत्मवैभव से सम्पन्न हैं, जिनके पार्श्व मे न तो देवी है न ही जिनके हाथो में हिंसा प्रतिहिंसा के प्रतीक अस्त्र-शस्त्र ही हैं, जो सदा-सदा के लिये कृतकृत्य हो चुके हैं, जिन्होंने सदा सर्वदा के लिए जन्म-मरण का बन्धन समाप्त कर दिया है, जो न तो लीला करते है, न ही देह धारण, जो अठारह दोषो से रहित हैं, वे ही सच्चे परमात्मा हमारे आराध्य देव हैं। उनकी आराधना कर यह आत्मा भी परमात्मा बन सकता है, फिर आराधक और आराध्य में कोई भेद नही रहता।

चौशाला से विहार कर चरितनायक पार गाव पधारे, जहा विराजित महासती श्री शीतलकवर जी आदि ठाणा ने आपके दर्शन, वंदन व प्रवचन-सेवा का लाभ लिया। यहा पर प्रवचन मे बीड , वार्शी, चौशाला आदि क्षेत्रो के श्रावक-श्राविका भी उपस्थित थे। पूज्यपाद जहा भी पधारे, निकटवर्ती ग्राम-नगरो के श्रावक-श्राविकाओ मे यह क्रम चलता रहा। पारगाव से विहार कर पूज्यपाद ने येसमडी, तेरखेडा, पीपल पाथरी, धानोरा, कुशलब आदि क्षेत्रो को अपनी पद रज व पीयूष प्रवचनामृत से पावन बनाते हुए ३८ वर्ष के दीर्घ अन्तराल के पश्चात् वार्शीनगर पदार्पण किया। यहा रायचूर का शिष्टमडल आपके चरणो मे क्षेत्र स्पर्शन व आगामी चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ। वार्शीनगर से करुणानाथ पानगाव, वैराग, बडाला होते हुए महाराष्ट्र के सीमावर्ती औद्योगिक नगर शोलापुर पधारे। यहा पौष शुक्ला १४ को आपका ७० वा जन्म दिवस मनाने हेतु महाराष्ट्र की जनमेदिनी उमड़ पड़ी। जलगाव, मद्रास, बैगलोर, जयपुर, इन्दौर, उज्जैन, रायचूर, बीजापुर, बागलकोट प्रभृति विभिन्न क्षेत्रो से श्रद्धालु भक्तजन अपनी अनन्य आस्था के केन्द्र महनीय गुरुदेव की जन्म-जयन्ती के इस पावन प्रसग पर मगलमय दर्शन-वन्दन व पातकहारिणी पीयूष पाविनी वाणी का पान करने हेतु उपस्थित थे। त्यागमूर्ति गुरुदेव का जन्म-दिवस उपवास दयाव्रत, सामायिक व स्वाध्याय की आराधना के साथ मनाया गया। स्थानकवासी समाज के करीब ५०, मन्दिर मार्गी समाज के २०० और दिगम्बर परम्परा के करीब चार हजार घरों वाले इस श्रद्धाशील नगर के युवको ने सड़कों पर नृत्य करने का सामूहिक त्याग कर समूचे जैन सघ की ओर से जिन शासन के युगप्रभावक आचार्यदेव को सच्ची भेट प्रदान की। युवा बन्धुओ ने स्वाध्याय का नियम अगीकार कर "गुरु हस्ती के दो फरमान, सामायिक स्वाध्याय महान्" को जीवन मे अगीभूत करते हुए धर्मशासन की प्रभावना की। इस अवसर पर यादगिरि से उपस्थित एक बहिन ने ३० का प्रत्याख्यान कर त्याग-तप के इस आयोजन मे अपनी भक्ति का अर्घ्य दिया तो आपकी सेवा में निरत श्री हरिप्रसाद जी जैन भी रात्रि मे चौविहार त्याग एव एक वर्ष का शीलव्रत अगीकार कर श्रद्धा समर्पण मे पीछे नही रहे।

शोलापुर से विहार कर मार्गस्थ क्षेत्रों को पावन करते हुए चरितनायक लश्कर पधारे। मार्ग मे श्राविका नगर मे आपने दु:खमुक्ति एव अनन्त अव्याबाध अक्षय सुखो की प्राप्ति पर उत्तराध्ययन सूत्र की गाथा नाणस्स सव्वस्स पगासणाए ' का मार्मिक विवेचन करते हुए फरमाया - "वस्तुत. मोह एव अज्ञान ही दुःख के मूल कारण हैं। इन पर विजय से दु:खो से मुक्ति निश्चित है।"

• कर्नाटक में प्रवेश

महाराष्ट्र के विभिन्न अचलो में जिनवाणी की पावन सरिता प्रवाहित कर अपूर्व धर्मोद्योत व जिन शासन का जय-जय नाद दिग्-दिगन्त में गुंजायमान करने के पश्चात् युगप्रभावक आचार्य पूज्य हस्ती के चरणारविन्द कर्नाटक की ओर अग्रसर थे। आपने बडकवाल, टाकली होते हुए कर्नाटक प्रान्त की सीमा मे प्रवेश किया तो समूचे कर्नाटक मे हर्ष की लहर दौड़ना स्वाभाविक था। पीढ़ियो व बरसों से यहां बसे प्रवासी राजस्थानी भाइयो के हर्ष का पारावार न था। उन्हे तो यह लगा कि शास्त्र मर्यादा के सजग प्रहरी, आगमो के तलस्पर्शी ज्ञाता एव जिनशासन के कुशल नायक आचार्य हस्ती के रूप मे साक्षात् धर्म ने ही कर्नाटक प्रान्त मे अपने चरण अकित किये है। सुश्रावक श्री सुगनमलजी भण्डारी निमाज के सुपुत्र अनन्य गुरभक्त श्री गणेशमलजी भण्डारी एव श्री मोतीमलजी भण्डारी जोधपुर के सुपुत्र श्रद्धानिष्ठ समर्पित सुश्रावक श्री महावीरमल जी भण्डारी बैंगलोर ने बीजापुर से दुर्गम विहार-सेवा व गुरु भक्ति का लाभ लिया।

कर्नाटक प्रान्त मे विचरण विहार के क्रम में पूज्यपाद बल्लोली, होर्ति, तिरुगुण्डी को फरसते हुए प्राचीन ऐतिहासिक नगर बीजापुर पधारे। बीजापुर का इतिहास गौरवशाली रहा है। सम्प्रति यहाँ लगभग २५० जैन घर एव स्थानक, मन्दिर आदि अनेको धर्म स्थान हैं। यहा गोडल सम्प्रदाय की महासती श्री पुष्पाजी आदि ठाणा ५ ने पूज्यपाद के सान्निध्य एवं ज्ञानध्यान मे वृद्धि का लाभ लिया। पूज्यप्रवर ने अपने प्रवचनो के माध्यम से जिनशासन की उन्नति के लिये ज्ञान-साधना पर बल दिया। आपकी अमृततुल्य वाणी को हृदयगम कर यहा के सुज्ञ श्रावको ने यहा १० जनवरी १९८० को स्वाध्याय सघ की स्थापना की व १४ जनवरी को वर्द्धमान जैन रत्न पुस्तकालय का शुभारम्भ किया। सस्कार-निर्माण व धार्मिक-अध्ययन की आपकी महती प्रेरणा से यहा धार्मिक शिक्षणशाला का श्रीगणेश हुआ। आपकी पातक प्रक्षालिनी भवभय हारिणी पीयूषपाविनी वाणी व आपके सहज सरल शैली मे फरमाये गये उद्बोधक प्रवचनो का यहा व्यापक प्रभाव पड़ा। युवको ने आपसे सप्त कुव्यसन एव नृत्य के त्याग कर जीवन निर्माणकारी एव समाजहितकारी प्रवृतियों को अपनाया, तो सुज्ञ श्रद्धालुवृन्द श्री हीरालालजी, श्री ताराचन्दजी, श्री देवीलालजी, श्री दुर्गालाल जी, श्री देवकिशन जी तोषनीवाल, श्री गोपीलालजी भूतड़ा आदि कई भाइयो ने शीलव्रत अगीकार कर अखड बाल ब्रह्मचारी पूज्य हस्ती के सान्निध्य से अपनी आत्मा को भावित किया। यहा कर्नाटक प्रान्त के हुबली, गजेन्द्रगढ, गुलेदगढ, सोरापुर, यादगिरि प्रभृति विभिन्न क्षेत्रो के सघ क्षेत्र-स्पर्शन की विनतियाँ लेकर उपस्थित हुए। अन्य क्षेत्रो की भांति यहाँ पर भी पूज्य हस्ती ने सामायिक-साधना से जीवन-निर्माण की प्रेरणा दी। आपका फरमाना था –

> करला सामायिक रा साधन जीवन उज्ज्वल होवेला।
> सामायिक स जीवन सुधर जो अपनावेला।
> निज सुधार स देश, जाति, सुधरी हो जावेला॥

सामायिक से व्यक्ति, जाति, समाज व राष्ट्र सभी का सुधार सम्भव है।

बीजापुर से विहार कर करुणाकर गुरुदेव जुमनाल, होगनहल्ली, रुणिहाल होते हुए कृष्णा नदी के तट पर स्थित कोर्ति पधारे। षट्काय प्रतिपाल, प्राणिमात्र के अभयदाता आचार्य हस्ती ने अहिंसा का प्रभावकारी उपदेश देते हुए दया को धर्म का मूल बताया व फरमाया कि पशुबलि पाप है, धर्म के नाम पर की गई हिंसा भी धर्म नही वरन् हिंसा ही है। प्रवचन सभा में गांव के कन्नडभाषी मुखिया एव स्थानीय ग्रामीण भी उपस्थित थे। एक भाई ने

पूज्यपाद के मंगल उद्बोधन का कन्नड़ भाषा मे अनुवाद किया। अहिंसा, संयम एव तप रूप धर्म के साकार स्वरूप, करुणासागर की वाणी से धर्म का सच्चा स्वरूप समझ कर पाप भीरू मुखिया व ग्राम के अन्य लोग प्रभावित हुए और देवी के समक्ष होने वाली बलि रुक गई, मारे जाने वाले बकरे को अभयदान मिला। लोगों ने मूक बकरे की आँखो से बार-बार झलकते कृतज्ञता के भावो को अनुभव किया। यह पशुबलि हमेशा के लिए रुक जाय व ग्रामीण जन सकल्पबद्ध हो जाए, इस हेतु कर्मठ समाजसेवी श्री भरतकुमार जी रुणवाल बीजापुर आदि ने सद्प्रयत्न किये, जिससे गाव वालो ने भविष्य मे पशुबलि न करने की लिखित प्रतिज्ञा की। दयाधर्म के आराधक, जघन्यातिजघन्य प्राणी को भी अपने समान समझने वाले, प्राणिमात्र के प्रति मैत्री एव करुणा बरसाने वाले अकारण करुणाकर सत महापुरुष जहा जहां पधारते हैं, वहा सहज ही घर-घर मे मंगल तथा जन-जन का कल्याण हो जाता है। कहा भी गया है—

साधु सरिता बादली चलें भुजंगी चाल।
ज्यां ज्यां देसा संचरे त्यां त्यां करे निहाल॥

साधु, सरिता व बादल अपनी इच्छा पूर्वक चलते है, बुलाये नही आते, पर जहा-जहा से होकर निकलते है, उन उन स्थानो को निहाल कर देते है, समृद्ध बना देते हैं। इसीलिए तो सन्त महापुरुष नियमित विचरण करते रहते है।

कोर्ति मे दया धर्म का सन्देश प्रदान कर पूज्यपाद अनगवडी, बागलकोट, सिरुर आदि क्षेत्रो मे वीतरागवाणी की अमृत गगा बहाकर गुलेजगढ पधारे। यहा धर्मस्थान के बारे मे परस्पर विवाद से सुज्ञ श्रद्धालु चिन्तित थे। उनकी भावना थी कि समता, स्नेह व समन्वय की त्रिवेणी बहाने वाले पूज्य गुरुदेव के पावन चरणारविन्द हमारे क्षेत्र की ओर बढ रहे है तो एकता के सूत्र मे आबद्ध होकर हमको भी पवित्र पावन बन जाना है। इसी मगल भावना को सजोकर यहा के श्रावकगण माघ शुक्ला षष्ठी को ही सिरुर में पूज्यपाद की सेवा मे उपस्थित हो गये । पूज्यपाद से सघ मे बन्धुत्व, मैत्री, क्षमा व सामरस्य का सन्देश पाकर गुलेजगढवासियो का परस्पर वैमनस्य व कलुष समाप्त हो गया। श्री दलीचन्द जी ने आगे होकर अपने ट्रस्ट का मकान जैन सघ को समर्पित करने का निश्चय किया तो सघ व समाज मे सौहार्द का वातावरण बन गया। पूज्य गुरुदेव के गुलेजगढ पधारने पर सबने एक होकर उनके सान्निध्य का लाभ लेते हुए व्रत-प्रत्याख्यान व धर्माराधन मे अपने कदम बढाये।

गुलेजगढ से चरितनायक कमतगी की मलयप्रभा नदी के किनारे पर वृक्ष तले रात्रिवास कर अमीनगढ, हुनगुंद होते हुए इलकल पधारे। यहा के लोग धर्मरुचि वाले व सरल थे तथा यहा धार्मिक अध्ययन हेतु धार्मिक पाठशाला भी सचालित थी । यहा अपने प्रवचन मे चरितनायक ने फरमाया - "बुढापा आने पर शरीर, इन्द्रियो व मन की शक्ति क्षीण हो जाती है, अत जब तक जरा का आक्रमण न हो, शरीर, इन्द्रियॉ व मन स्वस्थ हैं, तब तक धर्म-साधना कर लेनी चाहिये।" यहा से विहार कर आपने बलकुण्डी मे मजदूरो के डेरे के पास विश्राम किया व प्रात: यहा से २४ किलोमीटर का दीर्घ विहार कर हनमसागर पधारे। यहा पर विद्यालय के शिक्षको की प्रार्थना पर पूज्यप्रवर ने बालको को सस्कार-निर्माण व दुर्व्यसन-त्याग की प्रभावी प्रेरणा की। विहार सेवा का लाभ ले रहे श्रावको ने हिन्दी भाषी आचार्य भगवन्त के इस मगल उद्बोधन का स्थानीय कन्नड़ भाषा मे अनुवाद कर छात्रो तक पहुचाने का गौरव हासिल किया। यहा से विहार कर चरितनायक बेनकनाल होते हुए माघ शुक्ला पूर्णिमा ३१ जनवरी ८० को गजेन्द्रगढ पधारे। यहा आपके सुशिष्य श्री हीरामुनि जी म सा (वर्तमान आचार्य श्री) ने स्थानीय कालेज में प्रवचन फरमाया। व्यसनमुक्ति के सदेश से कालेज के अनेको छात्रो ने व्यसन त्याग के नियम लिये। गजेन्द्रगढ में गदग, हुबली, कोप्पल, सिन्धनूर एव होस्पेट के सघो ने उपस्थित होकर पूज्य वर्ग के चरणो मे अपने क्षेत्र-स्पर्शन की

भावभीनी विनतियाँ प्रस्तुत की।

एलबुर्गा, कुकनूर ,भानापुर होते हुए पूज्य चरितनायक कर्नाटक के धार्मिक ऐतिहासिक क्षेत्र कोप्पल नगर पधारे। यहां की गिरिशालाओ पर अनेकों जैन मुनियों व उपासकों के संलेखना व्रतो की प्रसिद्धि है। यहां कई जगह खुदाई में शिलालेखों मे चन्द्रगुप्त, भद्रगुप्त, चामुण्डराय एव प्राचीन जैन गौरव तथा इस क्षेत्र में जैन धर्म के व्यापक प्रभाव के उल्लेख मिलते हैं। जब पाटलिपुत्र आर्यधरा भारत की राजधानी था, तब कोप्पल नगर उपराजधानी रहा। यानी एकीकृत शासन के समय में यह नगर दक्षिण भारत का प्रमुख केन्द्र रहा। पूज्यपाद का यहा ४० वर्ष के लम्बे अन्तराल के बाद पदार्पण हुआ था। आपके सान्निध्य व प्रवचनामृत का स्थानीय सघ ने धर्माराधन व व्रत ग्रहण कर पूरा लाभ लिया। सामायिक स्वाध्याय के आपके सन्देश से यहा धार्मिक पाठशाला प्रारम्भ हुई व २५ नवयुवकों ने सामायिक करने का नियम लिया।

कोप्पल से विहार कर आचार्य देव किन्डदाल, गिनगेरा, होसल्ली, मुनिराबाद (रायचूर जिले का अन्तिम ग्राम) फरसते हुए होस्पेट पधारे। होस्पेट मे तुगभद्रा नदी पर विशाल बांध बना हुआ है व इससे बिजली उत्पन्न की जाती है। आचार्य भगवन्त सासारिक घटनाओ व स्थानो से भी अध्यात्म के सूत्रो का पोषण करने मे दक्ष थे। ससारी प्राणी जहाँ धर्माराधन के क्षेत्रों व अवसरो पर भी कर्मों से अपनी आत्मा को भारी कर लेता है, वही वीतराग मार्ग का पथिक ससार के स्थानो व घटनाओ से भी शिक्षा व प्रेरणा लेकर कर्म रज को झाड़ लेता है। श्रमण भगवान महावीर का उद्घोष रहा है - 'जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा।"

सब कुछ व्यक्ति के चिन्तन मनन पर निर्भर है। भगवन्त तो निकटभवी महापुरुष थे, जिनका ससार परिमित हो जाता है, उनका चिन्तन भी उच्च शिक्षाप्रद व आत्महितकारी ही होता है । तुगभद्रा पर बने इस विशाल बाध को देखकर आपके साधनानिष्ठ मानस में जो चिन्तन हुआ, वह उन्ही महापुरुष की हस्तलिखित दैनन्दिनी से उद्धृत है- "वैज्ञानिको ने दिमागी चिन्तन से पानी का बहाव नियत्रित कर लिया। भगवान महावीर ने वासना की विशाल नदी को सयम के बांध से नियन्त्रित करने की सीख देकर जनगण को विनाश से बचाया। महावीर ने स्वय के अनुभव से सवर के बाध से विनष्ट होती आत्मगुणो की सम्पदा बचाकर कितना अपूर्व लाभ का मार्ग प्रस्तुत किया। प्रभु की ज्ञान गरिमा का क्या वर्णन किया जा सकता है।"

यहा से पूज्यपाद पुन होस्पेट सदर, कारीगनूर, धर्मसागर, तोरगल, कुरतनी आदि ग्रामो मे विचरण करते हुए कोल बाजार पधारे तथा गणपति मंदिर मे विराजे। मार्ग मे भी आपको कही शालाभवन तो कही पचायत भवन मे विराजना पड़ा। यह विहार अति दुष्कर था, मार्ग मे गोचरी की पर्याप्त उपलब्धता नही थी। सन्त कभी उपवास तो कभी एकाशन करते हुए दीर्घ विहार कर रहे थे। कोल बाजार से करुणाकर गुरुदेव बल्लारी पधारे , जहाँ पूज्य श्री कान्ति ऋषिजी आदि ठाणा ४ आपकी अगवानी हेतु सामने पधारे। बल्लारी मे पूज्यपाद का विराजना धर्म प्रभावना का निमित्त बना। यहाँ के सघ ने सामायिक और स्वाध्याय प्रवृत्ति को प्रारम्भ कर पूज्य हस्ती के सदेश को साकार रूप प्रदान किया। १६ भाइयो ने दयाव्रत एव २५ व्यक्तियो ने प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय का सकल्प स्वीकार किया। आपकी महती प्रेरणा से यहा धार्मिक शिक्षण की व्यवस्था प्रारम्भ हुई व अनेको युवको ने व्यसन-त्याग का संकल्प लिया। भण्डारी, बालड, भोजाणी, नाहर आदि कई भाइयों ने सपत्नीक शीलव्रत अंगीकार कर गुरुदेव के चरणों में सच्ची श्रद्धाभिव्यक्ति की।

आचार्य प्रवर के इस दक्षिण प्रवास में अनेक कठिनाइयां एव परीषह उपस्थित हुए, किन्तु आचारनिष्ठ साधना

के अडोल अविचल साधक इस परीषह विजेता महापुरुष ने तनिक भी शिथिलता को अवकाश नही दिया। ग्रामों की दूरिया, उग्र विहार, प्रासुक आहार व निरवद्य जल की उपलब्धता मे कठिनाई, श्रावको द्वारा टिफिन से आहार ग्रहण करने की भावपूर्ण अनुनय विनति, किन्तु उस आत्मसाधक ने प्रतिकूल-अनुकूल किसी भी परीषह मे कभी साध्वाचार मे टण्टा नही लगने दिया। अपने आराध्य गुरु की शिक्षा, श्रमण भगवान द्वारा प्ररूपित निर्मल साध्वाचार एव रत्नवश की गौरव गरिमायुक्त समाचारी के प्रति प्रतिबद्ध सन्त महापुरुष गवेषणा करते, पर मार्गवर्ती ग्रामीणजन विशुद्ध साधु मर्यादा, ग्रहणीय गोचरी के नियमो से अनभिज्ञ, दो समय आहार मिलने की सभावना ही क्षीण, कई बार एक बार भी प्रासुक आहार मुश्किल से मिलता तो रत्नाधिक शिष्य परिवार उपवास, एकाशन कर अपनी श्रमण गरिमा अक्षुण्ण रखता एव महनीय गुरु की सेवा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना कर निरन्तर आगे बढ़ता रहता। ससारी जन जहा सुविधाओ के प्रति लालायित रहते है, वहा सच्चे सन्त तो सुविधा को नही वरन् साध्वाचार की सुरक्षा को ही महत्त्व देते हैं।

- पूज्यपाद का पदार्पण आन्ध्र की धरती पर

२३ फरवरी १९८० को कर्नाटक के सीमावर्ती ग्राम जोलदराशि फरसकर पूज्य चरितनायक आन्ध्रप्रदेश सीमा के प्रथम ग्राम गडेकल होते हुए गुण्टकल पधारे। यहा आपने मगलमय उद्बोधन मे सामायिक-साधना का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए फरमाया—

अगर जीवन बनाना है, तो सामायिक [illegible]।
हटाकर विषमता मन की साम्य रस पान [illegible]॥

सामायिक जीवन मे राग-द्वेष, काम-क्रोध जन्य आकुलता को नष्ट कर समभाव को सस्थापित करने वाली साधना है। आपकी भव्य प्रेरणा से प्रेरित १५ व्यक्तियो ने सामायिक के नियम अगीकार किये। दक्षिण के इस प्रवास मे आपके प्रवचन पीयूष के पूर्व प्राय श्री हीरामुनिजी म सा (वर्तमान आचार्य प्रवर व अन्य सत व्याख्यान फरमाया करते थे। आन्ध्र का यह विचरण विहार अत्यन्त दुष्कर था। प्राय दीर्घ विहार करने होते, मार्गस्थ ग्रामो मे मास-भक्षण करने वाले लोगो की बहुलता थी, शाकाहारी लोगो मे भी अधिकतर जैन साध्वाचार की मर्यादा से अनभिज्ञ थे, जिससे सतो को इस विहार मे आहार-पानी की गवेषणा मे बहुत अधिक श्रम करना पड़ा व अनेक परीषहो का सामना करना पड़ा। २९ फरवरी को पूज्य चरितनायक २९ किलोमीटर का उग्र विहार कर गुत्ती पधारे। आचार्य भगवन्त के तमिल भाषी उग्र तपस्वी शिष्य श्री श्रीचन्दजी म सा राजस्थान के भरतपुर से १८०० किलोमीटर का दीर्घ विहार कर ठाणा ३ से गुत्ती पधारे एव पूज्य गुरुदेव के पावन दर्शन कर अत्यन्त हर्षित हुए। आचार्यप्रवर जब पामडी, गार्डिन्ने, अनन्तपुर, मरूर, चिन्ने, कोत्तपल्ली गुट्टूर होते हुए विषम दुर्गम पहाड़ी मार्ग से आगे बढ रहे थे, तो वहाँ कुछ ग्रामीण महिलाए इस अद्भुत योगी व सत महापुरुषो के प्रति सहज भक्ति से कदलीफल लेकर आई व स्वीकार करने का आग्रह करने लगी तो उन्हे समझाया गया कि जैन सन्त इस प्रकार सामने लाया हुआ प्रासुक आहार भी ग्रहण नही करते है। इस युग मे भी दृढव्रती ऐसे साधको से प्रेरित होकर उन ग्रामीण बहिनो ने रविवार को व्रत करने का नियम अगीकार कर अपना अहोभाग्य माना। यहाँ से पूज्यपाद चालकूर होते हुए १३ मार्च को ठाणा १० से आन्ध्रप्रदेश के सीमावर्ती नगर हिन्दुपुर पधारे। कहने को तो इस नगर का नाम हिन्दुपुर था, किन्तु वहां मासाहार सेवन करने वाले लोगो की बहुलता होने से करुणानिधान आचार्य भगवन्त को ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो वहाँ अहिंसा सासे ले रही हो।

• पुनः कर्नाटक में

हिन्दुपुर से आपका विहार पुनः कर्नाटक की ओर हुआ। यहाँ से पूज्यपाद कुडमलकुटे, गोरी, बिदनूर आदि छोटे-छोटे गावो को अपनी पद रज से पावन करते हुए तोंडभावि पधारे। रविवार का दिन होने से बैगलोर महानगर के अनेक श्रावक-श्राविका पूज्य आचार्य भगवन्त की सेवा मे उपस्थित हुए और बैंगलोर फरसने की विनति की। यहा से आप खम्भात सम्प्रदाय के २ सन्तो को मिलाकर ठाणा १२ से दौंड बालापुर पधारे। पूज्य कान्तिऋषि जी म.सा. आदि ठाणा ४ भी आगे-पीछे विहार करते हुए यहाँ तक साथ पधारे। यहाँ श्री मागीलाल जी रुणवाल के नेतृत्व मे मैसूर संघ ने उपस्थित होकर क्षेत्र स्पर्शन की विनति प्रस्तुत की। मद्रास, मड्या, बैंगलोर, चिकबालपुर आदि अनेक क्षेत्रों के श्रावक भी यहा उपस्थित थे।

पूज्यपाद ने उपस्थित जन समुदाय को प्रेरणादायी सम्बोधन करते हुए फरमाया - **"धन के लिये पुत्र, मित्र घर-द्वार एवं अपना देश-प्रदेश छोड़ने वाले व्यक्ति जिनशासन और धर्म के लिये त्याग को भारी मानें, यह आश्चर्य की बात है।"** आपकी पावन प्रेरणा से यहाँ कई भाई बहिनो ने कई नियम अगीकार किये।

यहाँ से विहार कर पूज्यवर्य राजनकूटे, यलहका, गगेणहल्ली आदि गावो मे धर्मोद्योत करते हुए दिनाक २३ मार्च १९८० को दश ठाणा से कर्नाटक की राजधानी बैंगलोर के उपनगर यशवन्तपुर पधारे। यहाँ पधारने वाले आप स्थानकवासी परम्परा के प्रथम आचार्य थे। नगर-प्रवेश के अवसर पर बैगलोर शहर के श्रावक-श्राविकाओ एव अन्य ग्राम-नगरो से आए सघ-सदस्यो की विशाल जनमेदिनी के उल्लास एव उमग का दृश्य अद्भुत था। जिसे शब्दो मे नही बाधा जा सकता। यशवन्तपुर श्री सघ के साथ श्री मोतीलालजी कोठारी, श्री नौरतन जी नन्दावत, श्री सुगनमलजी गणेशमलजी भण्डारी आदि के परिवार प्रसन्नता से आप्लावित थे। वर्षों की भक्ति व पूर्वजो के सस्कारो से समृद्ध भण्डारी परिवार ने श्रद्धा-समर्पण के साथ भक्ति का परिचय दिया। आपके पावन सान्निध्य व मगलमय उद्बोधन से प्रेरित होकर यहा २० युवा बन्धुओ ने सामायिक करने के नियम अंगीकार किए। यशवन्तपुर दो दिन विराज कर पूज्यप्रवर २५ मार्च को २५ जैनघरो की आबादी वाले मल्लेश्वरम् मे पधारे। तदनन्तर आपका पावन पदार्पण श्रीरामपुर में सघ ऐक्य का सन्देश लेकर हुआ। आपके उद्बोधन से स्थानीय सघ मे कलह कलुष दूर हुआ व सामरस्य का संचरण हुआ। यहाँ से पूज्यपाद बैंगलोर महानगर के हृदयस्थल चिकपेट पधारे। चिकपेट मे लगभग ५००० जैन परिवार निवास करते हैं। यहाँ आप श्री ने २५० हस्तलिखित ग्रन्थो का अवलोकन कर प्राच्य ग्रथो के प्रति अपनी अभिरुचि प्रकट की। चिकपेट मे आपके विराजने से धर्म की लहर दौड़ गई। यहाँ के लालबाग ग्लास हाऊस मे २९ मार्च को महावीर जयन्ती के पावन प्रसग पर आयोजित प्रवचन सभा मे हजारो श्रोता उपस्थित थे। इस अवसर पर पूज्यपाद के प्रवचन पीयूष से बैगलोर सामायिक-स्वाध्याय सघ की स्थापना हुई। बैंगलोर महानगर के लब्धप्रतिष्ठ समाजसेवी श्री फूलचन्दजी लूणिया एव श्री भँवरलालजी गोटावत ने सकल्प लिया कि जब तक धर्मस्थान में सामायिक करने वालों की संख्या २०० तक नही पहुँचती है व १०० व्यक्ति स्वाध्यायी नही बन जाते हैं, वे मीठा नही खायेगे। इसी अवसर पर कर्नाटक प्रान्तीय स्वाध्याय सघ की स्थापना, कर्नाटक प्रान्त मे सामायिक-स्वाध्याय का सन्देश पहुँचाने की ओर एक बड़ा कदम था। बैंगलोर नगर के सुज्ञ श्रावकगण श्री प्रकाशजी मास्टर, श्री पन्नालालजी चोरड़िया, श्री सोहनजी रेड़ व मुखियाद्वय श्री लूणिया जी व श्री गोटावत जी के सकल्प युक्त प्रयासों से स्वाध्याय की गति को बल मिला।

आगामी अक्षयतृतीया वि.स. २०३७ दिनाक १७ अप्रेल १९८० को प्रभावक आचार्य हस्ती के आचार्य पद

ग्रहण के पचास वर्ष पूर्ण होने वाले थे। सघ के कार्यकर्ताओं ने साधना-कार्यक्रम के लक्ष्य के साथ पूज्य चरितनायक की दीक्षा अर्द्धशताब्दी मनाने का निर्णय किया। ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि एव सामाजिक कुरीतियो के निकन्दन के लक्ष्य से पन्द्रह सूत्री कार्यक्रम हाथ में लिया गया यथा—मासभक्षण त्याग, मद्यपान-त्याग, धूम्रपान-त्याग, एक वर्ष तक रात्रि-भोजन त्याग, नित्यप्रति १५ मिनट स्वाध्याय, सप्ताह में कम से कम एक सामायिक, प्रतिदिन कोई एक प्रत्याख्यान अवश्य करना, एक वर्ष शीलव्रत का पालन, आजीवन रात्रि भोजन त्याग, आजीवन चौविहार त्याग, आजीवन ब्रह्मचर्य पालन, श्रावक के १२ व्रत अगीकार करना, नित्यप्रति सामायिक, सक्रिय स्वाध्यायी बनकर पर्युषण-पर्वाराधन हेतु प्रवास करना, दहेज मे लेन-देन व ठहराव और प्रदर्शन का त्याग, जीवो को अभयदान का संकल्प, जीवन व्यवहार मे हिंसक वस्तुओं का त्याग , जरूरतमद भाई-बहिनो को शैक्षणिक व आर्थिक सहयोग प्रदान करना आदि। इन नियमो मे प्रत्येक के लिये पचास-पचास व्रतियो का लक्ष्य रखा गया। यह भी तय किया गया कि स्थानीय समारोह अपने-अपने क्षेत्रो मे आयोजित किये जाये। बैंगलोर श्री सघ ने भावभीनी विनति प्रस्तुत करते हुए पूज्यपाद से इस अवसर पर बैंगलोर विराजने की प्रार्थना की। त्रिदिवसीय समारोह के अन्तर्गत सामूहिक नियम तय कर सभी श्रद्धालुजनो को इनके पालन की प्रेरणा की गई—(१) सभी व्यक्ति तीन दिनो मे कम से कम तीन घण्टे स्वाध्याय करे (२) तीन दिनो मे कम से कम तीन सामायिक करे (३) तीन दिनो तक ब्रह्मचर्य का पालन करे (४) तीन दिन का समय प्रमाद मे व्यतीत न करे (५) तीन दिनो तक कोई रात्रि भोजन नही करे। (६) प्रत्येक घर मे कम से कम एक उपवास, एकाशन या आयम्बिल अवश्य हो (७) तीन दिन कषाय शमन का प्रयास करे। शिक्षाप्रेमी शासन हितैषी श्रेष्ठिवर्य श्री छगनमलजी मुथा की आग्रहभरी विनति को लक्ष्य में रखकर पूज्यपाद चामराज पेठ, ब्लाक पल्ली एव शिवाजी नगर आदि उपनगरो को फरस कर शूले बाजार स्थित हिन्दी विद्यालय पधारे, जहाँ सामायिक के गणवेश में श्रावको ने सामायिक-स्वाध्याय पर्याय आचार्य भगवन्त की अगवानी की। यहाँ वैशाख कृष्णा चतुर्दशी व अमावस्या को सामूहिक दयाव्रत का आयोजन हुआ। सामूहिक व्रताराधन का यह अपूर्व नजारा देखकर ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो पूज्यपाद मरुधर मारवाड़ के धर्मक्षेत्र मे ही विराज रहे है, जहाँ महापुरुषो के पधारने पर दया-सवर आराधना का क्रम चलता ही रहता है। चरितनायक के दीक्षा अर्द्धशताब्दी पर त्रिदिवसीय साधना-समारोह विषयक सभी कार्यक्रम इसी हिन्दी विद्यालय के प्रागण मे सम्पन्न हुए।

दिनाक १५ अप्रेल से १७ अप्रेल तक आयोजित त्रिदिवसीय कार्यक्रम का प्रथम दिवस ज्ञानाराधना, द्वितीय दिवस सामायिक-साधना एव तृतीय दिवस तप-साधना हेतु समर्पित था। प्रथम दिवस मे व्याख्यान के अतिरिक्त विद्वद् गोष्ठी एव ज्ञान-चर्चा आयोजित की गई, दूसरे दिन सामूहिक सामायिक मे भाग लेकर गुरु हस्ती के सामायिक सदेश को साकार किया गया, तो तीसरे दिन व्रत-प्रत्याख्यान कर इस त्रिविध साधना -कार्यक्रम को सम्पूर्णता प्रदान की गई। इस अवसर पर अनेको व्यक्तियो ने बारह व्रत एवं शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन मे साधना का सूत्रपात किया। अक्षय तृतीया के इस पावन प्रसग पर वर्षीतप के २९ पारणे हुए। सघ की ओर से समाजसेवियो व तपस्वियो का अभिनन्दन किया गया। इस कार्यक्रम को सफल बनाने मे श्री गणेशमलजी भंडारी, श्री सुकनराजजी भोपालचंदजी पगारिया, श्री जसराजजी गोलेछा, श्री महावीरमलजी भडारी, श्रेष्ठिवर्य श्री छगनमलजी मुथा, श्री मोतीलालजी सांखला श्री सपतराजजी मरलेचा, श्री अनराजजी दुधेड़िया, श्री जोधराजजी सुराणा आदि की सराहनीय सेवाएँ रही।

अक्षय तृतीया के पावन पर्व के पश्चात् पूज्यवर्य अलसूर बयपनहल्ली, कृष्णराजपुरम आदि क्षेत्रों में जिनवाणी की पावन धारा प्रवाहित करते हुए होसकोटे पधारे। यहाँ वैशाख शुक्ला दशमी को चरम तीर्थंकर शासनपति श्रमण

भगवान महावीर का कैवल्य कल्याणक मनाया गया। यहाँ से चरितनायक २८ अप्रेल को विहार कर तावरीखेड़ा होते हुए ४० किलोमीटर दूर कोलार तथा वहां से ३१ किलोमीटर दूर कोलार गोल्ड फील्ड पधारे। वहां से भगवन्त वेतमगला, वी कोटे, नाइकनेरी पेरणम पैठ, गुडियात्तम ग्राम, केवीकुप्पम् फरसते हुए विरजीपुरम पधारे। प्राणिमात्र के अभयदाता षट्काय प्रतिपालक पूज्य आचार्य भगवन्त की प्रेरणा से यहाँ पशुबलि बन्द हुई व अबोध जीवो को अभयदान मिला। यहाँ से विहार कर आप ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या दिनाक १२ मई को वेल्लूर पधारे।

आराध्य गुरुदेव के वेल्लूर पधारने पर समूचे तमिलनाडु मे निवास कर रहे श्रद्धालु भक्तो व प्रवासी राजस्थानी भाइयो के मन मे नव उत्साह का संचार हुआ और उनके मन में गुरु-भक्ति के साथ शासन-सेवा हेतु समर्पण भाव हिलोरे लेने लगा। अपने चिकित्सा केन्द्र व क्रिश्चियन मेडिकल कालेज के कारण प्रसिद्ध इस वेल्लूर नगर मे पूज्य चरितनायक की प्रेरणा से विश्रान्ति गृह 'शान्ति भवन' के मैनेजर श्री लालसिंह जी राजपूत द्वारा सपरिवार आजीवन मास-भक्षण का त्याग वेल्लूरवासियो के लिये प्रेरणा का स्रोत रहा। यहाँ पूज्यपाद ने अपने प्रभावक प्रवचन मे दर्शन, श्रवण, अवधारण व आचरण रूप चतुर्विध भक्ति का निरूपण करते हुए दर्शन-भक्ति के अन्तर्गत धर्मस्थान मे जाने के लिये पॉच अभिगम की व्याख्या करते हुए निम्नाकित रचना प्रस्तुत की -

कर सचित्त परिहार, अचित्त सवृत कर राखे।
अजलि बाँधो विनय सहित, गुरुवर मुख देखे।
तन-मन पाप निषेध, जिनेश्वर आज्ञा पाले
मुख पर उत्तरासग धार, निरवद्य वच बोले।
अभिगम पाँच पाले सही, चूक करे नहीं एक ही
समझो श्रावक मान लो, जिन आराधक वही॥

यहा से पूज्यवर्य दिनाक २३ मई को विहार कर तमिलनाडु के महत्त्वपूर्ण स्थल आरकाट, बालाजी पेठ, बालचेट्टिछत्रम् आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए २८ मई को वैष्णव सस्कृति के प्रमुख स्थल काचीपुरम पधारे, जहा पूज्य सतो के शुभागमन से चिलचिलाती धूप भी प्रसन्न प्रकृति मे बदल गई। यहाँ पर प्रथम ज्येष्ठ शुक्ला १४ को क्रान्तद्रष्टा क्रियोद्धारक पूज्य आचार्य श्री रतनचन्दजी म. सा की १३५ वी पुण्यतिथि के पावन प्रसग पर पूज्य आचार्य भगवन्त ने उनके जीवन की झाकी व जीवन मूल्यो को प्रस्तुत करते हुए धर्मशासन मे मर्यादा पर बल दिया।

काचीपुरम् से विहार कर बालाजाबाद सुकुवारछत्रम् पेरुम्बुदूर आदि मार्गस्थ क्षेत्रों को अपनी पद रज से पावन करते हुए पूज्यपाद ठाणा ८ से मद्रास महानगर के प्रवेश द्वार पुनमली पधारे। पुनमली मे धर्म प्रेरणा कर आप कुणतुर फरसते हुए ताम्बरम् पधारे, जहाँ नवयुवक मंडल गठित हुआ ताम्बरम् से क्रोमपेठ होकर आप पल्लावरम् पधारे।

यहाँ अपने प्रवचनामृत में पूज्यप्रवर ने बुभुक्षु से मुमुक्षु बनने की प्रेरणा करते हुए श्रावक के तीन कर्तव्य बताये - श्रद्धा, विवेक और क्रिया। ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या को आलन्दूर में आपने त्याग व सयम की श्रेष्ठता का विवेचन करते हुए फरमाया -**"परिग्रह से चिपका आज का श्रावक धर्म को अच्छा मान कर भी उसका आचरण क्यों नही करता ? भोग से अलग कर संयम के सिंहासन पर बिठाने पर भी जो दुःख का अनुभव करे, वह कैसा जैन?"** यहाँ समाज मे काफी लम्बे समय से मतभेद व मनोमालिन्य था, जो आपके पदार्पण व पावन प्रेरणा से मिटा तथा समाज में स्नेह व मैत्री का वातावरण निर्मित हो गया। संघ व समाज को अनेकविध उपकारो से उपकृत करते हुए पूज्यप्रवर सइदापेठ पधारे। यहा क्रान्तदृष्टा चरितनायक ने अपने क्रान्तिकारी उद्बोधन मे

फरमाया - अहिंसक समाज मे दहेजप्रथा क्षोभजनक है, समाज के लिये यह कलक है। समाज को इसे दूर कर महिलाओ की पीड़ा को दूर करना चाहिये। प्रेरक उद्बोधन से प्रेरित कई व्यक्तियों ने इस सबध मे सकल्प लेकर समाज सुधार की दिशा मे अपने कदम बढ़ाये। यहाँ से भगवन्त माम्बलम् पधारे। प. रत्न श्री छोटे लक्ष्मीचदजी म.सा., प. रत्न श्री हीरामुनि जी म.सा (वर्तमान आचार्य प्रवर) भी अन्य उपनगरो को फरस कर यहाँ पूज्य गुरुदेव की सेवा मे पधार गये। १९ जून ८० को आप मैलापुर पधारे। जोधपुर विराजित प. रत्न श्री चौथमलजी म. सा. का द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी को सथारा पूर्वक स्वर्गगमन के समाचार से मैलापुर की व्याख्यान सभा ने श्रद्धाजलि सभा का रूप ले लिया। पूज्यप्रवर ने अपने सहदीक्षित गुरुभ्राता मुनि श्री के प्रति भावपूर्ण मार्मिक उद्गार व्यक्त करते हुए उनका गुण स्मरण किया। प. रत्न श्री चौथमलजी म. सा. सरल, सहज, शान्त, प्रसन्नवदन, सेवाभावी, मधुर व्याख्यानी, आगम ज्ञाता सत थे। आपने अनेक प्रान्तो मे विचरण विहार कर धर्म-प्रचार व जिन-शासन की प्रभावना मे अपना महनीय योगदान किया। दिवगत मुनिवर्य के गुण-स्मरण के पश्चात् चार लोगस्स का ध्यान कर श्रद्धाजलि प्रस्तुत की गई। जोधपुर मे ही २१ जून को महासती ज्ञानकवर जी म.सा. के सथारा पूर्वक स्वर्गारोहण पर श्रद्धाजलि दी गयी।

२३ जून को पूज्य आचार्यप्रवर अडयार पधारे। यहॉ धर्म प्रेरणा कर आप रायपेठ व इसके अनन्तर नक्शा बाजार पधारे। यहा द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी दिनाक २७ जून को क्रियोद्धारक आचार्य भगवन्त श्री रत्न चन्द जी म सा. की १३५ वी पुण्यतिथि के उपलक्ष्य मे सामूहिक व्रताराधन का आह्वान किया गया। इस अवसर पर १३५ से अधिक दया-पौषध हुए। (ज्येष्ठ माह दो होने से यह पुण्य तिथि दूसरी बार मनायी गई।)

चिन्ताद्रिपेठ, इग्मोर, पुरुषवाक्कम, शूले आदि उपनगरो मे धर्म ज्योति का प्रकाश फैलाते हुए पूज्यपाद पेराम्बूर पधारे। यहाँ प्रवचन मे आपने जीवन मे धर्म की महत्ता प्रतिपादित करते हुए फरमाया - **"संसार की बड़ी से बड़ी सम्पदा पाकर भी जीवन में धर्म के बिना शान्ति नही मिलती, अतः धन-जन से ममता बढ़ाना उचित नहीं। कामनाओं पर नियन्त्रण , कोमलता का त्याग व तप का आराधन दुःख-मुक्ति का सच्चा उपाय है।"**

• मद्रास चातुर्मास (वि.स. २०३७)

पूज्यपाद ने १९ वर्ष की वय मे जब आचार्य पद को सुशोभित किया, तब से ही मद्रास मे व्यवसाय हेतु निवास कर रहे भडारी परिवार, चोरड़िया परिवार, दुग्गड परिवार , सुराणा परिवार, बागमार परिवार, हुण्डीवाल परिवार एव अन्य ग्राम-नगरो से यहाँ आये भक्तो की यह भावना थी कि रत्नवश के जाज्वल्यमान रत्न, जिनशासन के उदीयमान सूर्य पूज्य हस्ती के पावन पाद विहार से तमिलनाडु समेत दक्षिण अचल पवित्र-पावन बने व हम मद्रास स्थित प्रवासी मारवाड़ी भक्त अपने आराध्य गुरुवर्य के वर्षावास से निरन्तर चार माह तक पावन दर्शन, वन्दन व मगल प्रवचन- श्रवण का लाभ लेकर व्रताराधन व ज्ञानाराधन मे आगे बढ अपना आत्म-कल्याण कर सकें, साथ ही तमिलभाषी जनता भी अध्यात्म सूर्य हस्ती से जीवन के मर्म व धर्म के स्वरूप को समझ कर वीरवाणी के प्रसाद से लाभान्वित हो सके। अपने शासन के प्रारम्भिक काल मे सतारा तक पधार कर भी आपका यहा पधारना नहीं हो सका। बुजुर्ग लोग अपनी आस हृदय मे ही सजोये परलोकगमन भी कर गये। अब इस ज्ञान सूर्य का सयम जीवन के ६० वर्ष व्यतीत करने के उपरान्त इस सुदूर भूमि पर पदार्पण हुआ है। आपने अर्द्ध शताब्दी से भी अधिक समय से प्रतिपल सजगता, अपनी अद्वितीय प्रतिभा व शासन सचालन योग्यता से शासन की प्रभावना करते हुए आचार्य

पद सुशोभित किया है। ऐसे महनीय दीक्षा स्थविर, वय-स्थविर, पद-स्थविर व ज्ञान-स्थविर पुण्य निधान आराध्य गुरु भगवन्त के चरणो से पवित्र होने का तमिलनाडु की धरा को यह प्रथम अवसर मिला है और क्वचित् दूसरी बार मिलना भी सभव नही है। इस देव दुर्लभ अवसर का लाभ उठाने मे हमें कोई कोर कसर नही रखनी है, अपने पूर्वजों की अतृप्त अभिलाषा को पूरा कर हमें तमिलनाडु मे परमपूज्य भगवन्त के सन्देशो व जिनवाणी की पावन गगा को प्रवाहित करने के भगीरथ प्रयासों मे सहयोगी बनना है। ज्यों-ज्यो चातुर्मास सन्निकट आ रहा था, भक्तो के मन मे कुछ कर गुजरने का उत्साह उत्ताल तरंगो की भाति बढ़ता जा रहा था।

कुडीतोप, धोबीपेट रायपुरम आदि उपनगरों मे सामायिक स्वाध्याय का उद्घोष करते हुए पूज्यपाद का शिष्य मडली के साथ ठाणा १० से सवत् २०३७ की आषाढ कृष्णा त्रयोदशी २५ जुलाई १९८० को उल्लसित श्रावक-श्राविकाओ द्वारा उच्चरित जय-जयनादो के बीच विशाल जनमेदिनी के साथ, चातुर्मासार्थ साहूकार पेठ स्थित धर्मस्थानक मे मगल प्रवेश हुआ। यह पूज्यवर्य का ६० वा चातुर्मास था।

चिर प्रतीक्षा के बाद प्राप्त इस वर्षावास का मद्रास वाले भाई बहिन पूर्ण लाभ ले रहे थे। चातुर्मासार्थ पूज्य गुरुदेव के मगल प्रवेश के साथ ही धार्मिक गतिविधियो ने जोर पकड़ लिया। प्रात प्रार्थना से लेकर रात्रि में ज्ञानगोष्ठी पर्यन्त सभी कार्यक्रमो मे मद्रासवासी पूर्ण अभिरुचि व उत्साह से भाग लेकर ज्ञानाराधन कर अपने आपको समृद्ध कर रहे थे। साहूकार पेठ धर्मस्थानक का विशाल हाल प्रवचन मे श्रद्धालु श्रोताओ की उपस्थिति के कारण छोटा पड़ने लगा। चातुर्मास मे राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र कर्नाटक आदि प्रान्तों के श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ के आराध्य गुरुदेव के दर्शनार्थ सतत आवागमन बना रहा।

महामहिम आचार्य भगवन्त अपनी पातकप्रक्षालिनी भवभयहारिणी वाणी-सुधा द्वारा धर्म के मर्म को अपनी सहज सुबोध सुग्राह्य भाषा मे समझाते तो उपस्थित श्रद्धालु जन 'खम्मा, खम्मा' बोल उठते। प्रवचन सुधा मे अवगाहन कर वे अपने आपको धन्य-धन्य बना रहे थे। पूज्यवर्य ने यथासमय अपने जीवन निर्माता गुरुदेव आचार्य भगवन्त पूज्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा., आदर्श साधुता के श्रेष्ठ पर्याय, मरण विजेता गुरुभ्राता श्री सागरमल जी म. सा. आदि महापुरुषो की पुण्यतिथियो के प्रसगो पर उनके गुणानुवाद करते हुए जीवन को उन्नत व सयत बनाने की प्रेरणा की। सम्वत्सरी महापर्व के दिन तमिलनाडु के तत्कालीन राज्यपाल महामहिम श्री प्रभुदासजी पटवारी ज्ञान-क्रिया के उत्कृष्ट आराधक , जिनशासन सरताज पूज्यप्रवर आचार्य श्री हस्ती के पावन दर्शनार्थ पधारे। अनन्त पुण्यनिधान साधनातिशयसम्पन्न आचार्यदेव के पावन दर्शन व उनकी आध्यात्मिक आनन्द प्रदायिनी अमोघवाणी से नि.सृत जिनवाणी को श्रवण कर माननीय राज्यपाल महोदय ने अपने आपको धन्य-धन्य माना। क्षमापर्व संवत्सरी पर पूज्यप्रवर ने "भूलों का पुनरावर्तन रोकना, क्षमादिवस मनाने की सार्थकता है" इस सार गर्भित सदेश से जन-जन को आत्मोत्थान की प्रेरणा की।

जिनशासन प्रभावक आचार्य भगवन्त का चिन्तन था कि अहिंसा, अनेकान्त व अपरिग्रह एक दूसरे के पूरक ही नही, वरन् सहधर्मी जीवन मूल्य है? श्रमण भगवान महावीर के ये सार्वजनिक, सार्वकालिक चिन्तन सत्य-सिद्धान्त विश्व शाति व मानव मात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। युग मनीषी इतिहासवेत्ता आचार्य देव के मन मे एक पीड़ा थी कि जो जैनधर्म कभी दक्षिण में जन-जन का धर्म था, वह आज व्यवसायी वर्ग तक सिमट गया है। आज पुनः तमिलभाषी भाई-बहिनों को श्रमण भगवान महावीर के सिद्धान्तो एव जैन जीवन शैली से जोड़ने की आवश्यकता है।

चातुर्मास काल मे एकदा आपने प्रवचनामृत मे साधन-सम्पन्न जैन समाज को अपना कर्तव्य बोध कराते हुए फरमाया –"दक्षिण में जैन श्रावको के सत्तारूढ होने से शताब्दियो तक जैन धर्म का प्रचार-प्रसार होता रहा। जैन साहित्य की अमूल्य निधि दक्षिण मे मूडबिद्री के जैन भडारो मे सुरक्षित है। आज यद्यपि जैन समाज सम्पन्न है, तथापि अहिंसा के प्रचार के लिये ठोस कार्य करने की आवश्यकता है। आवश्यकता इस बात की है कि जैन समाज स्थानीय समाज मे अहिंसा की उदात्त भावना जागृत करे। शासन सेवा में श्रम, शक्ति व अर्थ का सदुपयोग करने वाले ही सदा यशस्वी बने है।"

चातुर्मास काल मे जिनवाणी के मानद् सम्पादक प्रख्यात जैन विद्वान् डॉ नरेन्द्र भानावत के संयोजकत्व मे विद्वद् गोष्ठी का आयोजन हुआ। देशभर से आये हुए मनीषी विद्वानो ने महामनीषी आचार्य भगवन्त का आशीर्वाद पाकर युवापीढी की समस्याओं पर चिन्तन-मनन करते हुए उन्हे धर्म, अध्यात्म व रचनात्मक कार्यो से जोड़ने हेतु चिन्तन प्रस्तुत किया।

भेदविज्ञान के ज्ञाता, आगमवेत्ता, सयम-जीवन के उषा काल से ही देह भिन्न, मै भिन्न, ये तन-जन-परिजन मेरे नही, मै तो शुद्ध बुद्ध मुक्त, शाश्वत अविनाशी हूँ, यह चिन्तन स्वरचित आत्म बोधकारी रचनाओ "मै हूँ उस नगरी का भूप", मेरे अन्तर भया प्रकाश" के माध्यम से प्रकट कर चुके थे। समय के साथ आपका यह चिन्तन निरन्तर निखरता गया। धर्म के नवनीत सम यह चिन्तन आपके प्रवचनामृत मे समय-समय पर प्रकट होता रहा। जन्म, जरा व मत्यु ये जीवन के अटल सत्य हैं। जरा व मृत्यु के शाश्वत सत्यो को समझने वाला साधक इनमे कष्टानुभव नही करता, वरन् इनमे भी हित भाव ढूँढ लेता है। कार्तिक शुक्ला ९ को अपने आत्मोद्बोधक प्रवचन मे पूज्यपाद ने बुढापावाचक जरा के बारे मे फरमाया -

जरा [illegible] का आना मत्यु निकट पहचान
[illegible] को छोड़कर [illegible] प्रभु ध्यान।
नश्वर तन मे बसत है [illegible] देव।
अजर अमर निर्मल दशा, करलो उसकी [illegible]।।
तन धन यौवन [illegible] है, [illegible] के [illegible]
निज मे निज को देख लो, [illegible] आनन्द, [illegible] समान।।"

चातुर्मास काल मे अनन्य गुरुभक्त अग्रगण्य समाजसेवी श्री हसराज चन्दजी भडारी (सुपुत्र स्वर्गीय श्री मागीचद जी भडारी) के असामयिक निधन से रत्न श्रावक समाज व मद्रास स्थानकवासी समाज मे अपूरणीय क्षति हुई। परम पूज्य आचार्य भगवन्त ने परिजनो को धर्म की शरण ग्रहण करने की प्रेरणा करते हुये फरमाया "अल्पवय की मृत्यु और रोग-शोक से बचने का मार्ग नियत एव शुद्ध आहार तथा आसक्ति का परिहार है।"

यह चातुर्मास विविध धार्मिक आयोजनो, जन-जन की सहभागिता एव व्रत-प्रत्याख्यानो की आराधना से सम्पन्न अनूठा चातुर्मास रहा। इस चातुर्मास की अनेक उपलब्धियाँ रही, यथा-

(१) शताधिक भाइयो तथा बहिनो द्वारा थोकड़ों और शास्त्रो का अध्ययन किया गया (२) ३०० से भी अधिक बालको व युवको द्वारा सामायिक , प्रतिक्रमण, २५ बोल आदि कण्ठस्थ किये गये (३) शताधिक अजैन भाइयो द्वारा कुव्यसनो तथा अभक्ष्य-भक्षण का त्याग किया गया (४) शताधिक युवको द्वारा सामायिक और स्वाध्याय के नियम लिए गए (५) सन्त सान्निध्य मे धर्म-चर्चा के आयोजन का लाभ मिलता रहा (६) शान्ति सप्ताह, साधना सप्ताह

आयम्बिल आराधना, मौन-साधना, दया-संवर का आराधन, रात्रि सवर, स्वधर्मीवात्सल्य, दान आदि प्रवृत्तियाँ प्रभावक रहीं (७) अनेक दम्पतियों ने आजीवन ब्रह्मचर्य का स्कध व कइयो ने ब्रह्मचर्य की मर्यादा स्वीकार की (८) मासक्षपण, अठाई आदि विविध तपों का ठाट रहा (९) धर्मनिष्ठ गुरुभक्त श्रावक श्री शकर लालजी ललवानी, जलगाव ने ६० दिनो तक अखण्ड मौन साधना की। (१०) कौनबरा, अड्यार तथा मद्रास विश्वविद्यालय के पुस्तकालयो के उपयोग से जैन धर्म व इतिहास विषयक कई नवीन बातें प्रकाश मे आयी, जिससे इतिहास लेखन के कार्य को गति मिली।

- बैंगलोर की ओर

मद्रास का ऐतिहासिक वर्षावास सम्पन्न कर पूज्य चरितनायक २३ नवम्बर १९८० को शिष्य समुदाय के साथ विहार कर चिन्ताद्रिपेठ पधारे। यहाँ श्री भभूतचन्दजी मुथा ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार कर शीलधर्म के आराधक महापुरुषो का सच्चा स्वागत किया। यहाँ से सन्तमण्डल का तीन सघाटको मे अलग-अलग क्षेत्रो मे विहार हुआ। अपने ज्येष्ठ शिष्य सेवाभावी प. रत्न लघु लक्ष्मीचन्दजी म सा., आगमज्ञ श्री हीरामुनि जी म सा (वर्तमान आचार्यश्री) आदि ठाणा ४ को कालाड़ीपेठ, तमिलभाषी आत्मार्थी सन्त तपस्वीश्री श्री चन्दजी म सा आदि ठाणा २ को बडपलनी की ओर विहार कराकर पूज्यपाद दूसरे दिन बडपल्ली पधारे। आपने यहाँ सामायिक स्वाध्याय की प्रेरणा देते हुए फरमाया –"स्थानक की शोभा सामायिक एव स्वाध्याय से है।" आपकी प्रभावी-प्रेरणा से कई श्रद्धालुओ ने नियमित सामायिक-स्वाध्याय के नियम लिए। यहाँ से आप कोडमवाक्कम् व पोरुर मे भी सामायिक-स्वाध्याय का अलख जगाते हुए पुनमली पधारे। सन्तो की अस्वस्थता के कारण आप यहा १० दिन विराजे। इस अवधि मे आपके दर्शनार्थ श्रद्धालुओ का आवागमन बराबर बना रहा। पुनमली से पूज्यपाद आवड़ी, तिन्नानूर, त्रिवल्लूर, कड्मतूर, पेरमवाकम आदि क्षेत्रो में धर्मोद्योत व नियमित सामायिक-स्वाध्याय की प्रेरणा करते हुए तक्कोलम पधारे, जहाँ श्री मोहन लालजी कोठारी ने एक वर्ष तक शीलव्रत पालन का सकल्प लिया। २१ दिसम्बर को आपका पदार्पण आरकोनम हुआ। यहाँ बैंगलोर के दृढधर्मी श्रावक श्री चम्पालालजी डूगरवाल, श्री सागरमलजी बोहरा, श्री सुकनराजजी पगारिया, श्री भँवरलालजी गोटावत, श्री प्रेमचन्दजी भण्डारी, स्वाध्याय प्रेमी श्री प्रकाशजी मास्टर आदि श्रावकों ने उपस्थित होकर बैंगलोर पधारने के साथ ही दीक्षा की भावभीनी विनति प्रस्तुत की। आपकी प्रेरणा से यहा अनेको व्यक्तियो ने सामायिक-स्वाध्याय का संकल्प लिया, धर्मप्रेमी श्रावक श्री कन्हैयालालजी गादिया ने महीने मे चार दयाव्रत आराधन का नियम लिया। पूज्यप्रवर यहा से नीमली, कावेरीवाकम, बालाजापेठ, आरकाट, रत्नागिरी आदि क्षेत्रों को अपने पादविहार से पावन करते हुए पौष कृष्णा सप्तमी को बेल्लूर पधारे। प रत्न श्री छोटे लक्ष्मीचन्दजी म.सा. आदि ठाणा व आत्मार्थी श्री श्री चन्दजी म.सा. आदि ठाणा भी विविध क्षेत्रो मे धर्म प्रेरणा करते हुए यहाँ पूज्य गुरुदेव की सेवा मे पधार गये। पूज्य गुरुदेव ३१ दिसम्बर १९८० पार्श्वनाथ जयन्ती तक शिष्य समुदाय के साथ वही विराजे। पूज्यपाद ने अपने प्रेरक उद्बोधन द्वारा प्रेरणा की कि मोह व अज्ञान तिमिर को नष्ट कर ज्ञान प्रकाश के प्रकट होने से ही आत्म-कल्याण सम्भव है। पूज्यपाद के विराजने से यहा व्रत-प्रत्याख्यान , तप-त्याग का ठाट लगा रहा, श्री भँवरलालजी भटेवड़ा ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

वेल्लूर से विरंजीपुरम, केबी कुप्पम्, गुडियातम, परनामवह् आदि क्षेत्रों को अपनी पदरज से पावन करते हुए पूज्यपाद ने तमिलनाडु से आंध्रप्रदेश के नाइकनेरी में पदार्पण किया। इस पूरे विहार क्रम मे मार्ग मे भक्त श्रावको का आगमन बराबर बना रहा। पूज्यपाद चाहे किसी महानगर मे विराज रहे हो, चाहे वन-खण्डो अथवा छोटे-छोटे ग्रामों में, हर जगह पुण्यनिधान पूज्य हस्ती के पावन-दर्शन करने हेतु श्रद्धालु भक्तगण आते ही रहते, यह आपके

साधनातिशय व साधक-जीवन का दिव्य प्रभाव था। विहार काल मे मद्रास, वेल्लूर व बैंगलोर आदि क्षेत्रों के भक्त श्रावकों ने विहार-सेवा का लाभ लेकर गुरु-भक्ति का परिचय दिया। मुस्लिम बहुल ग्राम विकोटा मे पूज्यप्रवर डाक बंगले पर ठहरे। दयाधर्म के आराधक आचार्य भगवन्त ने यहा चार-पाच व्यक्तियो को अण्डा, मास व मछली का त्याग करा कर उन्हे हिंसा से विरत किया। बेतमगल मे आप पाठशाला भवन मे विराजे। यहां से पूज्य आचार्य भगवन्त के. जी एफ पधारे। आचार्य श्री नानेश के शिष्य श्री धर्मेश मुनिजी ठाणा ३ आपकी अगवानी में सम्मुख पधारे। श्रावक समुदाय भी उल्लसित भाव से पूज्यपाद की अगवानी मे उपस्थित था। श्री धर्मेशमुनि जी आदि ठाणा पूज्यपाद के साथ ही विराजे। पौष शुक्ला अष्टमी को आचार्य श्री नानेश की दीक्षातिथि पर पूज्य चरितनायक ने फरमाया–"भोपालगढ की पुण्य भूमि मे उन्होने एव हमने स्थानकवासी समाज के सगठन की भूमिका स्वरूप मैत्री सम्बन्ध किया। मैत्री के इस कल्पवृक्ष का रक्षण, पोषण एव सिंचन चतुर्विध सघ को करना है। सरलता व आत्मीयता से ही इसका रक्षण सवर्धन सभव है।"

के. जी. एफ मे पौष शुक्ला चतुर्दशी सवत् २०३७ को चरितनायक पूज्य हस्ती का ७१ वा जन्म दिवस तपत्याग एव दया-सवर की आराधना के साथ मनाया गया। बैगलोर, मद्रास, जलगांव, जयपुर, भोपालगढ एव आस-पास के क्षेत्रो के श्रावकगण ने पूज्यपाद के पावन दर्शन व अमृतमयी जिनवाणी का पान करते हुए धर्म-साधना का लाभ लिया। परम गुरु भक्त श्री रतनलाल जी बाफना ने इस अवसर पर पाच वर्ष के लिये रात्रि चौविहार के प्रत्याख्यान किये।

परमपूज्य गुरुदेव के लिये जन्म-दिवस साधना-संकल्प दिवस था, बालवय मे महनीय गुरु के चरणो में जो समर्पण किया, उसे स्मरण कर आगे बढने हेतु सकल्प लेने का दिवस था। पूज्यप्रवर ने इस दिन अपनी रचना के माध्यम से जो सकल्प लिया, उसकी कुछ पक्तिया प्रस्तुत है -

> गुरुदेव चरण वन्दन करके, मैं नूतन वर्ष प्रवेश करूँ।
> शम-संयम का साधन करके, स्थिर चित्त समाधि प्राप्त करूँ।
> हो चित्त समाधि तन मन से, परिवार समाधि के हितकार।
> अवशेष क्षणों का शासनहित अर्पण कर जीवन सफल करूँ।

उपर्युक्त पक्तिया पूज्य हस्ती की उत्कट गुरु-भक्ति, आत्मोन्नति की तीव्र अभिलाषा, शासनहित समर्पण, शम दम के प्रति प्रीति आदि गुणो को प्रकट करते हुए हमे भी जन्म-दिवस मनाने के सच्चे प्रयोजन का दिग्दर्शन कराती है।

ग्रामानुग्राम विचरण-विहार करते हुए आचार्य भगवन्त बगारपेठ फरसते हुए कोलार पधारे जहाँ श्री जेवतराज जी धारीवाल ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। यहा से नरसापुर, होस्कोटे आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए पूज्यपाद २६ जनवरी १९८१ को कृष्णराजपुरम पधारे। दिनाक २७ जनवरी को करुणाकर बैंगलोर के उपनगर अलसूर पधारे।

के जी एफ से बैंगलोर का यह विहार परीषहो से पूर्ण था। आहार पानी का कोई योग नही था। मार्ग मे सेना के आवास थे । सेना के लोग मांसाहार का प्रयोग करते थे। दयाधर्म के आराधक षट्काय प्रतिपाल पूज्य हस्ती की प्रेरणा से बटालियन के अधिकारी ने सकल्प किया कि बटालियन के सामूहिक भोजन मे मासाहार का उपयोग नही किया जायेगा। यह अहिंसा के पुजारी महान सन्त इस महायोगी के प्रबल पुण्यातिशय का ही दिव्य

प्रभाव था।

अलसूर मे दीक्षार्थी विरक्तो का अभिनन्दन किया गया। यहां श्री माणकचन्दजी गादिया ने पाच वर्ष के लिये शीलव्रत पालन का सकल्प लिया। यहा से पूज्यप्रवर अशोक नगर शूले पधारे, जहा श्री चम्पालालजी बोरूंदिया ने आजीवन शीलव्रत का स्कन्ध स्वीकार किया। आपके शिवाजी नगर पधारने पर प्रख्यात जैन विद्वान श्री शान्तिलालजी वनमाली सेठ ने आपके पावन दर्शन, सान्निध्य व तत्त्वचर्चा का लाभ लिया।

बैंगलोर महानगर के हृदयस्थल चिकपेट मे आपका दर्शनाचार के आठ अगो पर बड़ा ही मार्मिक प्रवचन हुआ। माघ कृष्णा चतुर्दशी ३ फरवरी १९८१ को पूज्यप्रवर के सान्निध्य मे बाबाजी श्री सुजानमलजी म.सा. व खादीवाले श्री गणेशीलालजी म.सा. की पुण्यतिथि विशेष तपत्याग व व्रताराधन पूर्वक मनाई गई। इस अवसर पर यहां विरक्त मुमुक्षुओ का अभिनन्दन भी किया गया।

मद्रास पधारने के पूर्व पूज्यपाद के बैंगलोर पदार्पण के अवसर पर महासघ अध्यक्ष श्री फूलचन्दजी लूणिया व चिकपेट सिटी सघ अध्यक्ष श्री भवरलालजी गोटावत ने धर्मस्थानक मे २०० व्यक्ति नियमित सामायिक साधना वाले होने तक मिठाई त्याग का जो सकल्प लिया था, वह पूर्ण हो गया था। आचार्य हस्ती का सामायिक-स्वाध्याय का पावन सन्देश अब बैंगलोर महानगर के कोने-कोने मे पहुँच चुका था। बैगलोर के प्रत्येक उपनगर के स्थानक नियमित धर्म-साधना के केन्द्र के रूप मे सुशोभित हो रहे थे। जहा- जहा चरितनायक का पदार्पण हुआ, वहा धर्माचरण का वातावरण निर्मित हुआ। पूर्व में जिन धर्मस्थानकों के कपाट यदा-कदा ही खुलते, वहा नियमित सामायिक-साधना व जिनवाणी के पावन उद्घोष की ध्वनियाँ गुञ्जित होने लगीं।

यहा के उपनगर जयनगर मे ९ फरवरी १९८१ को श्री प्रकाशमलजी भडारी, जोधपुर श्री धनञ्जय जी चोरडिया शिरपुर, कावेरी पट्टनम् निवासी श्री गुरुमूर्ति एव श्री जम्बू जी ने पूज्यपाद से श्रमण दीक्षा अगीकार की। इनके साथ ही पजाब सिंहनी महासती श्री केसरदेवी जी म.सा. की निश्रा मे मुमुक्षु बहिन विजया देवी बैगलोर ने भी पूज्यपाद के मुखारविन्द से भागवती दीक्षा अगीकार की। भारत के पूर्व उपराष्ट्रपति श्री बासप्पा दानप्पा जत्ती एव कर्नाटक के तत्कालीन राज्यपाल श्री गोविन्द नारायणसिंह राग से विराग, भोग से योग एव असयम से सयम की ओर बढते मुमुक्षुजनो के पुरुषार्थ से दीक्षा समारोह में अभिव्यक्त वैराग्य से एवं सयम के गौरव व सयमनिष्ठ तप. पूत ज्ञान-क्रिया के सगम युग मनीषी पूज्य आचार्य देव की दिव्य विभूति से अभिभूत थे।

दीक्षा समारोह के अनन्तर पूज्यपाद ठाणा १४ से लालबाग मे स्व श्री हसराज चन्दजी भडारी के बगले विराजे। यहा श्रेष्ठिवर्य श्री छगनमलजी मूथा व सरलमना गुरुभक्त श्री मोतीलालजी सांखला ने बडी दीक्षा अशोक नगर शूले मे करने की आग्रह पूर्ण विनति प्रस्तुत की। उनके आग्रह व भक्ति को मान देते हुए पूज्य आचार्य भगवन्त के सान्निध्य मे दिनांक १६ फरवरी को नवदीक्षित सन्तो की बड़ी दीक्षा अशोक नगर शूले मे सम्पन्न हुई। इस अवसर पर महानगर सघ अध्यक्ष श्री फूलचन्दजी लूणिया व श्री कन्हैयालालजी सिंघवी, चिकपेट ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत अंगीकार कर सयम-साधकों का अनुमोदन किया, ४० श्राविकाओ ने दयाव्रत आराधन व कई व्यक्तियो ने पौषधोपवास का लाभ लिया। इस अवसर पर कावेरी पट्टनम के १८ तमिल भाइयो ने जन-जन कल्याणकारी जैन धर्म स्वीकार कर अपने आपको पावन बनाया।

कुमारा पार्क, मल्लेश्वरम् आदि उपनगरों को फरसते हुए पूज्यप्रवर यशवन्तपुरा पधारे व सुज्ञश्रावक श्री सुगनमलजी गणेशमलजी भडारी के निवास पर विराजे। यहा श्री गोविन्दस्वामी जी ने सदार आजीवन शीलव्रत

अगीकार किया। पूज्यपाद ने यहा सुखी जीवन के लिए भोगोपभोग परिमाण व्रत की प्रेरणा की।

विहारक्रम मे पूज्यप्रवर जिन्दल फैक्ट्री विराजे। फैक्ट्री की अनूठी विशेषता थी कि यहा के सभी कर्मचारी निर्व्यसनी व संस्कारशील थे, कोई भी मद्य-मास सेवन व धूम्रपान नही करता था। फैक्ट्री परिसर मे ही व्यवस्थापको ने कर्मचारियो के धर्माराधन का सेवन व उपासना हेतु समुचित प्रावधान कर रखा था। सस्कार, सदाचार, सात्त्विकता व निर्व्यसनता की इस भावना से पूज्यप्रवर भी प्रमुदित हुए।

यहा से विहार कर नलमगला, टी वेगुर, दासवपेठ, हीरहेल्ली, टुमकुर, कोराग्राम, नलिहाण्ड, कल्लमबेला, सीराग्राम, मानगी, जवानगोदन हल्ली, आदिवाड़शाला आदि मार्गवर्ती क्षेत्रो को पद रज से पावन करते हुए चरितनायक हिरियूर पधारे। यहा से पुनः सतो का अलग-अलग सघाटको में विहार हुआ। आचार्य भगवन्त होर्तीकोटा, सणिकेरा, वल्लकेरा (चर्णिगेरा) को पावन करते हुए तलक पधारे। यहा उर्दू भाषा के अध्यापक श्री सैयद जिज्ञासा भाव से आपकी सेवा मे उपस्थित हुए। वे आपसे जैन साधु-चर्या का परिचय पाकर अत्यन्त आश्चर्याभिभूत व प्रमुदित हुए। अहिंसा धर्म से प्रभावित हुए श्री सैयद ने करुणानाथ के श्री चरणों मे निवेदन किया कि हमे पहले खबर की जाती तो दो चार सौ लोग आपका उपदेश सुनने को उपस्थित हो जाते, और वे भी अहिंसा धर्म के सिद्धान्तो से परिचित हो जाते। अहिंसा धर्म श्रेष्ठ है, पर जैन लोग आप जैसे गुरुओ की सेवा का लाभ खुद ही लेते हैं, इससे हमको क्या फायदा ? जैसे क्रिश्चियन लोग बाइबिल के उपदेश को साधारण लोगो मे वितरण करते है, वैसे ही महावीर के उपदेश को छोटी छोटी बुक (पुस्तक) के रूप मे अवाम को दे तो उसका उन्हे लाभ मिल सकता है। हम ऐसी पुस्तके यहा लाइब्रेरी मे भी रख सकते है। उर्दू-अध्यापक द्वारा व्यक्त विचारो पर जैन समाज विचार कर इसे कार्यरूप मे परिणत करे तो जैन-धर्म जन-जन तक पहुँच सकता है व लाखो लोगो को अहिसा का पावन सन्देश देकर हिंसा की प्रवृति के प्रसार को रोकने मे सफलता प्राप्त कर सकता है। उर्दू अध्यापक ने मुसलमानो मे मास के प्रचलन पर कहा–"मुसलमानो मे गोश्त का प्रचार कैसे हुआ ? लड़ाई के समय एक बार अरब मे मास खाने की बात कही गई, क्योकि वहाँ पर दूसरी व्यवस्था नही थी, परन्तु वह रिवाज अब तक चल रहा है।" इससे ज्ञात होता है कि मास का सेवन मुसलमानो मे भी एक रूढि ही है, धर्म नही।

तलक से जगतवत्सल आचार्य भगवन्त हिरेहल्ली, विजीकेरा आदि क्षेत्रो को फरसते हुए पहाड़ी मार्ग से प्रकृति की विस्मयकारी रचना से गुजरते हुए रायपुरा पधारे। अमकुण्डी मे बल्लारी निवासी ड्राइवर श्री रसूल शेख ने पूज्यपाद से मास-मदिरा व धूम्रपान का त्याग कर अपने जीवन को पापो से विरत करने के साथ ही कइयो के लिये अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया।

- ### आन्ध्र की सीमा में प्रवेश कर पुनः कर्नाटक की धरा पर

अब आचार्य भगवन्त का कर्नाटक प्रदेश से पुन आध्र सीमा मे प्रवेश हुआ। ओवलपुर ग्राम, रायल सीमा को पार कर चरितनायक बल्लारी पधारे। यहां पूर्व विराजित श्वेताम्बर मूर्तिपूजक आचार्य श्री पद्मसागर जी म.सा. आपके दर्शनार्थ पधारे। यहा आचार्यप्रवर के तमिलभाषी आत्मार्थी शिष्य श्री श्रीचन्दजी म.सा. आदि ठाणा भी तमिलनाडु, कर्नाटक व आध्र के विभिन्न क्षेत्रो को फरसते हुए पधारे। फाल्गुनी चौमासी के अवसर पर पूज्यपाद ने अपने प्रवचन पीयूष मे कषाय भाव को जला कर आत्मा को तपस्या के रग मे रग कर कर्म-निर्जरा करने की प्रेरणा दी तथा द्रव्य होली की बुराइयों से ऊपर उठने का आह्वान किया - दूसरे लोग द्रव्य कचरा जला कर, धूल मिट्टी उछाल कर, गालियाँ आदि बोल कर कर्मबन्ध का कार्य करते हैं, जबकि सच्चे जिनधर्मानुयायी इस दिन तपाग्नि द्वारा

कर्मों की निर्जरा कर अपने आपको आत्म-गुणों के रंग मे रंग कर सुशोभित करते हैं । यही पर चैत्र कृष्णा अष्टमी को आदिनाथ जयन्ती के अवसर पर आपने जन-साधारण के भगवान ऋषभदेव के आदर्शों एव मानव जाति पर किये गये उपकारो से अवगत कराया। आपकी प्रेरणा से यहा धार्मिक-शिक्षण प्रारम्भ हुआ।

विहार क्रम मे अलीपुर ग्राम में आचार्य भगवन्त मुनिदयाल जाति की वृद्धा नर्स की पुत्री पार्वती देवी के मुख से वन्दनोपरान्त नमस्कार मंत्र का शुद्ध उच्चारण सुन कर अत्यन्त प्रमुदित हुए । सत्य है गुण पूजा के आदर्श को प्रस्तुत करने वाला जैन धर्म जाति, कुल, देश एव वेश के बधनों मे आबद्ध नही है।

यहाँ से विहार कर भगवन्त कुडतनी ग्राम पधारे व वैष्णव मदिर मे विराजे। दक्षिण भारत के ग्राम-ग्राम में करुणाकर आचार्य भगवत ने 'सब जीवों को जीवन प्यारा, रक्षण करना धर्म हमारा' का मन्त्र पाठ दिया। नई दरोजी मे करुणानाथ ने ग्रामवासियों को मास त्याग का उपदेश दिया, जिससे ग्रामवासियों को हिंसा से विरत होने की प्रेरणा मिली। आपके प्रेरणादायी उपदेश से प्रभावित नवयुवक सरपच श्री नरसिंह ने सदा-सदा के लिए मद्य-मास का त्याग कर अपने जीवन को पाप-कालिमा के गर्त में डूबने से बचाया।

यहाँ से पूज्यप्रवर पहाड़ी मार्ग से मेट्रो, कम्पली के लिंगायत मठ होते हुए गगावती पधारकर श्री पन्नालालजी बाठिया के मकान पर बिराजे। यहां आपके प्रवचन सेठी भाई के भवन में हुए। तीनो सम्प्रदायो के लोगो ने आपके प्रवचन पीयूष का लाभ लिया। पूज्यपाद के सान्निध्य लाभ से ग्रामवासियो का उत्साह देखते ही बनता था। यहाँ आपने अपने प्रेरक उद्बोधन मे फरमाया - "श्रमण भगवान महावीर के उपदेश को श्रवण, ग्रहण, और धारण कर आचरण मे लाना है, तभी कल्याण है।" श्री रामनगर कार्डगी होते हुए आप गोरेवाल ग्राम पधारे व नहर के तट पर अवस्थित चरण वसवेश्वर के मन्दिर में विराजे। यहाँ अजैन भाइयो की सेवा-भक्ति सराहनीय रही। यहा से विहार कर पूज्यप्रवर सिन्धनूर पधारे, जहा महावीर जयन्ती उत्साहपूर्वक मनाई गई। इस अवसर पर देश के विभिन्न २१ नगरो के सघ प्रतिनिधि उपस्थित थे। महावीर जयन्ती के पावन प्रसग पर श्री पुखराजजी रुणवाल ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया व कई युवाओ व प्रौढ व्यक्तियों ने जीवपर्यन्त सप्त कुव्यसन का त्याग कर अपने जीवन को पावन किया।

सिन्धनूर से विहार कर चरितनायक जबलगेरे, पोतनाल, कोटनेकल, मानवी होते हुए कपगलु (कफगल) पधारे। जहा करुणाकर गुरुदेव ने अब्दुल्लाह को उसके मकान पर मास-सेवन, धूम्रपान व परस्त्रीगमन का त्याग कराया। यहाँ से विहार कर आप कल्लूर, रेड्डीकेम्प फरसते हुए रायचूर पधारे।

• भागवती दीक्षा का आयोजन

रायचूर में आचार्य श्री के सान्निध्य मे अक्षय तृतीया का पावन पर्व व्रत-प्रत्याख्यान व तप-त्याग के साथ मनाया गया। परम पूज्य चरितनायक आचार्य हस्ती के आचार्य पद दिवस पर स्थानीय बंधुओ के साथ देश के विभिन्न भागो से आये भाई-बहिनों ने प्रवचनामृत का लाभ लिया।

वैशाख शुक्ला षष्ठी दिनाक ९ मई ८१ को मुमुक्षु बहिन बालब्रह्मचारिणी सरला जी काकरिया सुपुत्री श्री रिखबचन्दजी कांकरिया मद्रास एवं बाल ब्रह्मचारिणी चन्द्रकला जी हुण्डीवाल सुपुत्री श्री भंवरलालजी हुण्डीवाल भोपालगढ ने परमाराध्य आचार्य गुरुदेव के मुखारविन्द से भागवती श्रमणी दीक्षा अंगीकार कर मुक्ति मार्ग मे अपने कदम बढाये। दीक्षा-महोत्सव पर उपस्थित स्थानीय व बाहर से पधारे श्रद्धालु श्रावक श्राविकाओ ने दीक्षा के

अनुमोदनार्थ अनेक व्रत-व्याख्यान स्वीकार किये। वीर पिता श्री रिखबचन्दजी काकरिया मद्रास, श्री मदनलाल जी कांकरिया भोपालगढ, श्री किशनलालजी भण्डारी रायचूर, श्री सज्जनराजजी भण्डारी रायचूर, श्री लालचन्दजी धोका यादगिरी एव श्री सन्तुराजनजी मदुरै ने बाल ब्रह्मचारिणी बहिनो द्वारा जीवन भर के लिये सयम ग्रहण के इस प्रसग पर आजीवन शीलव्रत अगीकार कर सच्ची भेट प्रदान की। काकरिया परिवार ने अपनी लाडली सुपुत्री के साधना-मार्ग पर प्रवेश की खुशी मे अपने मूल निवास क्रियोद्धार भूमि भोपालगढ मे सम्यग्ज्ञान जैन धार्मिक पाठशाला स्थापित करने की घोषणा की।

बड़ी दीक्षा के अनन्तर पूज्यपाद ठाणा ४ से विहार कर ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए यादगिरी पधारे। यहाँ ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी को परमपूज्य आचार्य भगवन ने क्रियोद्धारक आचार्य देव श्री रत्नचन्द्रजी म.सा की १३६ वी पुण्य तिथि पर उन महापुरुष के आदर्शो व उपदेशो को प्रस्तुत करते हुए उन्हे जीवन मे अपनाने का आह्वान किया। कियोद्धारक महापुरुष के पुण्य दिवस पर श्री पन्नालालजी धोका ने सदार आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। अनेको भाई-बहिनो ने दया, उपवास, आयम्बिल आदि विविध तप व पाच-पाच सामायिक की आराधना कर अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त की।

• रायचूर चातुर्मास (सवत् २०३८)

आन्ध्रप्रदेश व कर्नाटक के विभिन्न ग्राम-नगरो मे सामायिक-स्वाध्याय का शखनाद और जिनवाणी की पावन गगा प्रवाहित करने वाले आचार्यप्रवर का १० जुलाई आषाढ शुक्ला १० को ठाणा ७ से उल्लसित भक्तो द्वारा उच्चरित जय-जयनाद के साथ रायचूर चातुर्मासार्थ मगलप्रवेश हुआ।

पूज्यपाद का यह ६१ वा वर्षावास ज्ञान-दर्शन-चारित्र की सौरभ से सुरभित व तपाराधन की दीप्ति से दीप्तिमान रहा। इस चातुर्मास में रायचूरवासियो ने आचार्य देव के पावन सान्निध्य व त्यागी सत-महापुरुषो की सेवा का पूर्ण लाभ लेते हुए ज्ञानाराधन व व्रताराधन दोनो ही क्षेत्रो मे आगे बढने का पुरुषार्थ कर अन्य क्षेत्रो के लिये भी चातुर्मास के उद्देश्यो का सच्चा अनुकरणीय आदर्श प्रशस्त किया। रायचूर के शान्त वातावरण मे सम्पन्न चरितनायक का यह वर्षावास सभी दृष्टियो से सफल रहा। प्रतिदिन प्रार्थना व प्रवचन मे आबाल वृद्ध सभी ने पूरे चातुर्मास मे उपस्थित होकर जिनेन्द्र-भक्ति व पावन जिनवाणी में अवगाहन कर प्रवचन-सुधा का पान किया। अपराह्न आचार्य श्री के विद्वान् आगमज्ञ शिष्य प रत्न श्री हीरामुनिजी म.सा (वर्तमान आचार्य प्रवर) द्वारा शास्त्र-वाचना का क्रम बराबर चलता रहा। सयमधनी महापुरुषो के सान्निध्य मे रायचूरवासियो ने सवर-साधना मे अपनी गतिशीलता का आदर्श उपस्थित किया। प्रत्येक रविवार को २०० से अधिक दया-सवर, चातुर्मास की विशेषता रही। बहिनो में सतरगी, अठाई, मासक्षपण की आराधना बराबर चलती रही। चातुर्मास प्रारम्भ से सम्वत्सरी महापर्व तक अखण्ड जप-साधना बराबर चलती रही। सामूहिक क्षमापना की गरिमामयी परम्परा रायचूर सघ की अनूठी विशेषता है।

चातुर्मास काल में अनेको अठाइयो के साथ ५ मासक्षपण हुए, विजयाबहिन चोपड़ा ने ५१ दिन की तपस्या की। गुरु भक्त श्रावक श्री शकरलालजी ललवानी, जामनेर ने ६५ दिवस की मौन साधना कर वाणी - सयम का आदर्श उपस्थित किया। श्री ईश्वर बाबू ललवानी द्वारा अपने पिता श्री की इस मौन साधना का अनुमोदन दान द्वारा किया गया। आचार्य भगवन्त के समर्पित श्रावक श्री पूनमचन्द जी बडेर, जयपुर ने चातुर्मास काल में अखण्ड मौन, जप, ध्यान एव दयाव्रत की साधना की। चातुर्मास काल मे ११ दम्पतियो (१. श्री पुखराजजी रुणवाल २. श्री सुगनचन्दजी कर्नावट, इन्दौर ३ श्री बस्तीमलजी बाफना, भोपालगढ ४ श्री केशरीमलजी नवलखा, जयपुर ५. श्री

सूरजमलजी मेहता, अलवर ६. श्री हीरालालजी ७. श्री प्रेमचन्दजी डागा, जयपुर ८ श्री सायरचन्दजी चोरडिया, मद्रास ९. श्री जोधराजजी सुराणा, बैंगलोर १०. श्री प्यारेलालजी काकरिया, रायचूर एव ११. श्री रत्नकुमारजी रत्नेश, बम्बई) ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

चातुर्मास काल मे पाली, निवाई, जयपुर, सवाईमाधोपुर, जलगांव, मद्रास, जोधपुर, महागढ, नीमच आदि के श्रावकों ने आकर कई दिनो तक धर्मसाधना का लाभ लिया। इन्दौर से श्री भॅवरलालजी बाफना ने परिवार की पाच पीढियों व सघ के साथ परमाराध्य गुरुदेव के पावन-दर्शन, वन्दन व प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया। गुरुदेव के अनन्य भक्त करुणामूर्ति श्री देवेन्द्रराजजी मेहता ने २७ सितम्बर को पूज्यपाद के दर्शन कर स्थानीय सघ को अहिसा के क्षेत्र मे सक्रिय कार्य करने की प्रेरणा की।

१४ अगस्त को प्रवचन मे युवकों व प्रौढों ने समाजसुधार एवं दहेजप्रथा उन्मूलन हेतु कतिपय सकल्प लिये, यथा - (१) विवाह सम्बन्ध मे दहेज, डोरा या बीटी की माग नही करेंगे (२) किसी अन्य माध्यम से माग नही करायेंगे (३) दहेज का प्रदर्शन नही करेंगे (४) कम अधिक देने की बात को लेकर पुत्रवधू अथवा सम्बन्धी जन से ऊँचा नीचा नही कहेगे। अगले ही दिन जैन युवक संघ की साधारण सभा व १९ अगस्त को श्रावक सघ की साधारण सभा ने इन नियमो को सर्व सम्मति से पारित कर सामाजिक नियम के रूप में स्वीकार किया। इसी सम्बन्ध मे यहा दक्षिण भारत जैन सम्मेलन का भव्य आयोजन हुआ, जिसमे दहेज प्रथा उन्मूलन व सामाजिक कुरीतियो के निकन्दन हेतु ठोस निर्णय लिये गये।

चातुर्मास मे बालको व युवको को संस्कारित करने व उन्हें धार्मिक शिक्षण से जोड़ने के विशेष प्रयास हुए। विभिन्न प्रतियोगिताओ के माध्यम से छात्रों व युवकों को वतर्मान युग मे महावीर के सिद्धान्तो की उपयोगिता का बोध दिया गया। महान अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. की प्रेरणा से १०० से अधिक छात्र-छात्राए धार्मिक शिक्षण मे प्रगति कर धार्मिक-परीक्षा मे सम्मिलित हुए।

यहा दिनाक ८ से १० नवम्बर तक २० क्षेत्रो से पधारे ७० विद्वानो व स्वाध्यायी बन्धुओ ने स्वाध्याय सगोष्ठी में भाग लेते हुए पूज्यपाद के चिन्तन "यस्तु क्रियावान् पुरुष· स विद्वान्" यानी जो क्रियावान है वही विद्वान् है, को चरितार्थ करने पर बल दिया। 'आचार्य श्री रत्नचन्द्र स्मृति व्याख्यानमाला' के अन्तर्गत श्री गजसिंह जी राठौड जयपुर, श्री चम्पालालजी मेहता कोप्पल, श्री जोधराजजी सुराना बैंगलोर, प्रो. एस. एन पाटिल हुबली, डॉ एम.डी. वसन्तराज, मैसूर प्रभृति इतिहासविदों व विद्वानों ने 'कर्नाटक मे जैन धर्म' व कन्नडभाषा और साहित्य को जैनो का योगदान' विषयो पर सारगर्भित शोधपूर्ण व्याख्यान देकर श्रोताओ का ज्ञानवर्द्धन किया।

इस चातुर्मास मे परम पूज्य गुरुवर्य हस्ती के विराजने से रायचूर सघ को चिरस्थायी लाभ प्राप्त हुआ। चातुर्मास मे हुए ज्ञानाराधन व स्वाध्याय के शंखनाद से यह क्षेत्र आज भी उपकृत है। अद्यावधि इस क्षेत्र में निरन्तर ज्ञानगगा प्रवाहित हो रही है। चातुर्मास मे श्री रिखबचन्दजी सुखाणी, श्री किशनलालजी भण्डारी, श्री शान्तिलालजी भण्डारी, श्री सोभागराजजी भण्डारी, श्री मोहनलालजी संचेती, श्री जंवरीलालजी मुथा, श्री पारस जी, श्री प्यारेलालजी काकरिया, श्री हुकमीचंदजी कोठारी, श्री माणकचन्दजी राका, श्री मोहनलालजी बोहरा, श्री बाबूलालजी बोहरा आदि सुश्रावको का उत्साह, संघ-सेवा व समर्पण सराहनीय रहा।

• हैदराबाद की ओर

रायचूर का सफल चातुर्मास सम्पन्न कर पूज्य चरितनायक का विहार हैदराबाद की ओर हुआ। राजेन्द्र गज, कल्याण मडप, शक्तिनगर, मेहबूबनगर आदि क्षेत्रो मे ज्ञान सूर्य आचार्य हस्ती के पदार्पण व प्रवचनामृत का जनमानस पर प्रेरणादायी प्रभाव रहा। मेहबूब नगर के जिलाधीश श्री मुरलीधर जी ने पूज्यपाद के साधना सम्पूरित व्यक्तित्व से प्रभावित होकर मद्यपान का त्याग कर अपने जीवन को व्यसन मुक्त बनाया। उदारमना श्री भीमराजजी ने जैनभवन की ऊपरी मजिल सदा के लिये धर्माराधन हेतु उपलब्ध कराने की घोषणा की, जो सघ मे स्थान की उपलब्धता से सामूहिक सामायिक-साधना व स्वाध्याय करने वाले भाई बहिनो की सख्या मे अभिवृद्धि एव सघ के उत्साह अभिवर्धन का कारण रहा। स्थानीय सघाध्यक्ष श्री लक्ष्मीचन्दजी कोठारी, श्री मिलापचन्दजी कोठारी व श्री जीवराजजी ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत, अगीकार कर अपने जीवन को यशस्वी बनाया। इस विहारकाल मे प. रत्न श्री हीराचन्दजी म सा (वर्तमान आचार्य श्री) के हृदयग्राही ओजस्वी प्रवचनो का श्रोताओ के मानस पर व्यापक प्रभाव पड़ा। सुश्रावक श्री अनराजजी विमलचन्दजी अलीजार की भक्ति सराहनीय रही।

आध्रप्रदेश की राजधानी हैदराबाद, इसके सहनगर सिकन्दराबाद, बोलाराम, शमशीरगज, डबीरपुरा, लालबाजार, काचीगुडा आदि प्रमुख उपनगरो मे पूज्य आचार्य श्री हस्ती के सामायिक स्वाध्याय के आह्वान से यहाँ के धर्म स्थानको मे धर्मसाधना का क्रम प्रारम्भ हुआ एव इनके कपाट नियमित रूप से खुलने लगे। आप श्री की प्रेरणा से धर्मस्थानको मे आकर सामायिक-स्वाध्याय करने वाले भाई-बहिनो की सख्या निरन्तर बढ़ती गई।

८ जनवरी १९८२ पौष शुक्ला चतुर्दशी को पूज्य आचार्य हस्ती की जन्म जयन्ती गुजराती भवन मे सामायिक सकल्प, श्रावक व्रत-ग्रहण, दहेज-त्याग व शीलव्रत ग्रहण के साथ मनाई गई। श्री किशनलालजी बोहरा झूठा, श्री माणकचन्दजी डोशी पाली एव श्री पन्नालालजी मुणोत ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर श्रद्धाभिव्यक्ति की।

९ जनवरी १९८२ को रात्रि मे बीजापुर मे वयोवृद्ध स्थविर प. रत्न श्री छोटे लक्ष्मीचन्दजी म.सा. का अकस्मात् हृदयाघात होने से स्वर्गवास हो गया। प रत्न श्री छोटे लक्ष्मीचन्दजी म सा आचार्य भगवन्त के ज्येष्ठ व श्रेष्ठ शिष्य थे। आप वैय्यावृत्य, साधुचर्या, विनय एव उत्कट गुरुभक्ति के पर्याय थे। आप गोचरी के विशेषज्ञ सत व सतो के लिये 'धाय मा' के तुल्य थे। प रत्न श्री छोटे लक्ष्मीचन्दजी म सा. स्वय थोकड़ो के विशेषज्ञ थे व आपकी आगन्तुक भक्तो को थोकड़ो का ज्ञान कराने की विशेष अभिरुचि थी। सकेत तो दूर की बात, आप शारीरिक चेष्टामात्र से ही समझ लेते कि गुरुदेव को क्या अभीष्ट है, ऐसे गुरु आज्ञा में सदा तत्पर, शासनसेवी इन सतरत्न के देवलोक गमन से इस यशस्वी श्रमण परम्परा मे अपूरणीय क्षति हुई। परम पूज्य आचार्य भगवन्त ने अपने सुशिष्य श्री लक्ष्मीचन्दजी म.सा के आदर्श सन्त-जीवन एव निरतिचार सयम-साधना का स्मरण करते हुए श्रद्धाजलि व्यक्त की।

सिकन्दराबाद से विहार कर आचार्य श्री ठाणा ६ से मनोहराबाद, तूपरान, चेगुण्टा, बिकनूर, कामारेडी होते हुए निजामाबाद पधारे, जहाँ से प रत्न श्री शुभेन्द्र मुनि जी एव श्री गौतम मुनि जी ने जालना होते हुए राजस्थान की ओर विहार किया। कामारेडी मे श्री पन्नालालजी बोहरा ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया तथा कई धर्म प्रेमियों ने प्रतिदिन सामायिक करने का सकल्प ग्रहण किया।

• आन्ध्र से महाराष्ट्र की सीमा मे

आचार्यप्रवर ठाणा ४ से निजामाबाद से २६ जनवरी ८२ को विहार कर मामीडीपल्ली, आरमूर, किसाननगर,

निर्मल घाटा पार कर ३ फरवरी को आदिलाबाद पधारे, जहाँ तपागच्छीय आचार्य श्री पद्मसागर जी एवं महासती श्री जयश्री जी से मिलन के साथ तत्त्व चर्चा हुई। यहाँ से माघ पूर्णिमा को महाराष्ट्र की सीमा मे प्रवेशार्थ पेनगगा नदी को पार कर आचार्य श्री पाटन बोरी होते हुए पांढरकवड़ा, पधारे, जहाँ सघ प्रमुख श्री धनराजजी चोपड़ा ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया। पीतलिया, बोगावत आदि परिवारों ने सेवा- भक्ति का अच्छा लाभ लिया। यहाँ से पिंपरी, मारेगाव, मागरूल होते हुए वणी पधारे, जहाँ उदयराज जी मोहनराज जी मूथा ने दर्शन प्रतिमा एव एकान्त बाल सम्बधी प्रश्नों का आचार्यप्रवर से सटीक समाधान प्राप्त किया। फिर सावरला फरसते हुए वरोरा पधारे, जहाँ गोडल सम्प्रदाय की महासती सन्मतिप्रभाजी आदि ठाणा ३ ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के अतिरिक्त शास्त्रीय प्रश्नो के समाधान प्राप्त किए। फाल्गुन कृष्णा ११ को विहार कर माढेली, नागरी होते हुए हिंगनघाट पदार्पण हुआ। मार्ग मे श्री विमलमुनिजी, वीरेन्द्र मुनि जी म ठाणा २ ने आगरा से आध्र की ओर जाते समय सुखशान्ति की पृच्छा की।

१ मार्च ८२ को आचार्यप्रवर ने नागपुर सदर मे प्रवेश किया, जहाँ स्थानकवासी और मदिर मार्गी भाई एक सघ के रूप मे मिलकर कार्य करते हैं। तीन दिवस तक वहाँ धर्मोद्योत करके आचार्य श्री वर्धमान नगर एव फिर इतवारी नगर पधारे, जहाँ कई स्थानों के श्री सघो ने आचार्यश्री के दर्शन किये। इस अवसर पर १३-१४ फरवरी को विदर्भ जैन श्वेताम्बर सम्मेलन रखा गया, जिसमें समाज-सुधार के विभिन्न मुद्दो पर व्यापक चर्चा व सहभागिता के साथ अनेक निर्णय लिए गए। सम्मेलन के अवसर पर आये प्रतिनिधियों को उद्बोधन देते हुए पूज्यप्रवर ने शुद्ध आहार-विहार व परिग्रह-परिमाण की प्रेरणा देते हुए तपस्या के प्रसगों पर आडम्बर व मृत्यु के पश्चात् रोने-विलाप करने जैसे अनर्थदण्ड के त्याग का आह्वान किया। इस अवसर पर श्री भवरलाल जी सुराणा, श्री भीकमचन्दजी सुराणा, श्री मोहनलालजी कटारिया, श्री चम्पालालजी भण्डारी, श्री भवरलालजी मुणोत, श्री हीराचन्दजी फिरोदिया, लाला किशन चन्दजी तातेड दिल्ली एव श्री जवरीलालजी मुथा हास्पेट इन आठ दम्पतियो ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

२५ मार्च ८२ को आचार्य श्री पवनार स्थित विनोबा आश्रम मे विराजे। आचार्य श्री का मौन दिवस था। यहाँ विनोबा जी के लघु भ्राता वयोवृद्ध शिवाजी राव भावे ने आचार्य श्री के दर्शन कर उन्हे आश्रमवासियो की ब्रह्मचर्य के साथ सादगीपूर्ण ढग रहने की दिनचर्या सम्बधी जानकारी दी। विक्रम सवत् २०३९ के नये वर्ष मे वर्धा से अगवानी करने आए हुए अनेक भाई-बहनों ने भगवान महावीर एव आचार्य श्री के जयनारो से आकाश गुंजायमान करते हुए नगर प्रवेश कराया।

वर्धा विदर्भ का एक जिला है। महात्मा गाँधी और विनोबा भावे के आदोलन का यह केन्द्र रहा है। वर्धा से विनोबा भावे का आश्रम ९ कि.मी. दूर है। आस-पास के जन-मानस पर अहिंसा का प्रभाव परिलक्षित होता है। कर्मठ कार्यकर्ता श्री मूलचन्द जी वैद्य के श्रम से महावीर भवन में छोटा सा पुस्तकालय, छात्रावास और सामायिक प्रार्थना का क्रम चलता है। यहाँ रालेगाँव, यवतमाल, धामनगाँव, पूलगाँव, चान्दूर रेलवे आदि क्षेत्रो के सघ पूज्यपाद के दर्शन तथा जिनवाणी-श्रवण का लाभ लेकर आनंदित हुए। यवतमाल के चार भाइयो ने १०० स्वाध्यायी बनाने का सकल्प लिया। इस धर्म-प्रभावना से आचार्यश्री ने ११० कि.मी. का चक्कर होते हुए भी यवतमाल की ओर विहार किया। २८ मार्च को आचार्य श्री वर्धा से विहार कर सांवगी, देवली, भिड़ी, कामठवाड़ा होते हुए कात्री पधारे, जहाँ एक रात्रि के धर्मोपदेश के फलस्वरूप २३ व्यक्तियो ने मांस-मदिरा सेवन का त्याग किया ।

कात्री से रालेगाँव पधारने पर ७० भाई-बहनों ने सामायिक-स्वाध्याय के नियम ग्रहण किए। रात्रि मे

'जिन-शासन' शब्द पर चर्चा चलने पर आचार्य प्रवर ने फरमाया-"जीवन मे हिताहित की शिक्षा देने वाले वचन संग्रह को शासन कहते हैं। सत् शिक्षा से जीवन मे सुमार्गस्थ रहने वाले आचार्य शास्ता और उनके द्वारा सारणा, वारणा, धारणा 'शासन' कहलाता है।"

फिर आप चापरड़ा होते हुए यवतमाल पधारे, जहाँ भगवान महावीर का जन्म-कल्याणक महोत्सव उत्साहपूर्वक मनाया गया। १०० भाई-बहनो ने सामायिक एव नित्य स्वाध्याय की प्रतिज्ञाएँ ग्रहण की। ९ अप्रैल ८२ को उत्तरवाढोणा मे शीलव्रत के नियम कराकर आप नेर, परसोयत, बडफली, नादगॉव, बड़नेरा होते हुए अमरावती पधारे। ३५० जैन घरो की बस्ती वाले इस प्रसिद्ध नगर मे अच्छा धार्मिक उत्साह देखा गया, स्वाध्याय सघ की भी स्थापना हुई। अक्षय तृतीया पर ३५ नगरो के श्रावक -श्राविकाओ ने उपस्थित होकर तपोधनी आचार्य भगवन्त के दर्शन-वन्दन व प्रवचनामृत का लाभ लिया। सामायिक स्वाध्याय का शखनाद करने वाले आचार्य देव के आचार्य पद - ग्रहण - दिवस के इस अवसर पर विदर्भ मे स्वाध्याय के रथ को गतिशील करने का सकल्प लिया गया। श्री जवाहरलाल जी मुणोत आदि ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। तपस्या करने वालो का अभिनदन किया गया। वैशाख शुक्ला तृतीया २६ अप्रेल १९८२ को ही आचार्यप्रवर की आज्ञा से जोधपुर मे २० वर्ष की वय मे महासती शान्तिकवरजी मसा की शिष्या के रूप मे बालब्रह्मचारिणी मुमुक्षु बहिन सुश्री इन्दुबाला सुराना (सुपुत्री श्री मागीलाल जी एव श्रीमती ज्ञानबाई जी सुराना नागौर) की भागवती दीक्षा उत्साह एव उल्लास के साथ सम्पन्न हुई।

पूज्यपाद के आगामी चातुर्मास हेतु नागपुर, अमरावती, जलगाव, भोपाल आदि क्षेत्रो की भाव भीनी विनतिया हुई। अपने-अपने क्षेत्र के लाभ हेतु श्रावकवृन्द प्रयत्न शील थे, किन्तु आपका लक्ष्य राजस्थान की ओर बढने का होने से तथा सघहित व धर्मप्रभावना के स्थायी कार्य को दृष्टिगत रखकर पूज्यपाद ने जलगाव सघ को चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान की।

अमरावती से विहार कर आचार्य श्री भगवान महावीर के केवलज्ञान-कल्याणक पर बड़नेरा मे विराजते हुए कुरूम पधारे, जहॉ गोडल सम्प्रदाय की महासती श्री मुक्ताप्रभाजी ठाणा ८ ने चरितनायक के दर्शन किए एव अपनी अनेक जिज्ञासाओ का समाधान प्राप्त कर प्रमुदित हुई। फिर यहॉ से आकोला, बालापुर, खामगॉव, नादूरा होते हुए मलकापुर पधारे। खामगॉव मे श्री माणकचन्दजी लुणावत ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। मलकापुर मे श्रुतरसिक भीकमचन्द जी सचेती के सत्प्रयत्न से बुलढाणा भडार मे पुरातत्त्व प्रेमी इतिहास मार्त्तण्ड आचार्यप्रवर ने प्राचीन हस्तलिखित पन्नो का अवलोकन किया। यहॉ से देवढाबा, चिचखेड़ा, सिरसाले होते हुए कच्चे मार्ग से आचार्य श्री बोदवड़ को फरसकर जामठी, सेलवड़, राजनी क्षेत्रो मे धर्म-प्रभावना कर फतेहपुर पधारे जहॉ बाबू रतनलालजी फूलफगर की बीमार मॉ श्रीमती मदन कंवरजी ने भेदविज्ञान ज्ञाता आचार्य हस्ती से सथारा स्वीकार कर अपना जन्म सफल किया। श्राविकाजी का यह सथारा २३ घण्टे चला। इस उपलक्ष्य मे श्री भवरलालजी ढेढिया एव बशीलालजी ओस्तवाल ने सपत्नीक आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। पूज्यप्रवर की प्रेरणा से यहाँ धार्मिक पाठशाला प्रारभ हुई। कई व्यक्तियो ने नियमित प्रार्थना एव सामायिक के नियम लिए। फिर आपने वाकडी शाहपुर होते हुए जामनेर मे प्रवेश किया जहॉ महासती श्री सायरकवर जी मसा आदि ठाणा तथा भुसावल चातुर्मासार्थ जाते महासती श्री कमलावती जी मसा ठाणा ११ दर्शनार्थ पधारी। जामनेर से विहार कर आप शकरलाल जी ललवाणी के बगले पर रुककर आषाढ़ शुक्ला ११ को शकरलाल जी चोरड़िया के बगले पधारे, जहॉ मदिरमार्गी श्री चन्द्रकीर्ति जी मसा. दर्शनार्थ पधारे। श्री नेमीचन्दजी मुणोत ने जीवन भर के लिए शीलव्रत लिया।

• जलगाँव चातुर्मास (संवत् २०३९)

जलगांव का संघ उन इने गिने सौभाग्यशाली क्षेत्रो में से एक था जिन्हे युगप्रभावक आचार्य हस्ती के दो चातुर्मास के अन्तराल के बाद ही पुन. वर्षावास का लाभ मिला। सभी के हृदय मे संवत् २०३६ मे हुए धर्मोद्योत की स्मृतिया सजीव थी। जलगाववासी पूज्यपाद के सान्निध्य का पुनः लाभ पाकर हर्षोत्फुल्ल थे। सभी के मानस मे यह चिन्तन था कि परमपूज्य का यह वर्षावास जलगाव ही नही, महाराष्ट्र में पूज्यपाद के सामायिक-स्वाध्याय संदेश को व्यापक बनाने का निमित्त बने व यह क्षेत्र शासन-सेवा के चिरस्थायी महत्त्व के कार्यों का केन्द्र बने।

चातुर्मास में धर्मध्यान का अनूठा ठाट रहा। आचार्य श्री की पातक प्रक्षालिनी वाणी का भव्य श्रोताओ द्वारा नित्यप्रति रसास्वादन किया जाता रहा। आचार्य भगवन्त ने अपने प्रेरक उद्बोधनो मे जलगाववासियो को समाज और धर्म की अभ्युन्नति, शासनहित व समष्टिहित के लिये पूर्ण सामर्थ्य से आगे बढने का आह्वान किया। सामायिक के पर्याय व स्वाध्याय के सूत्रधार ज्ञान सूर्य हस्ती का मन्तव्य था कि साधु अपने सयम जीवन की मर्यादा मे आचार के माध्यम से प्रचार का कार्य करते है, उनके विचरण विहार की सीमाएँ हैं। देश-विदेश मे जैन धर्म का प्रचार-प्रसार श्रमण भगवान महावीर के शास्त्रधारी शान्ति सैनिक स्वाध्यायी बधुओ द्वारा किया जा सकता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि सम्राट् सम्प्रति ने जैन धर्म को देश विदेश मे फैलाने के लिये धर्म प्रचारको को भेजने का कार्य किया था। आज इस कार्य को आगे बढा कर श्रमण भगवान महावीर का विश्वकल्याणकारी सदेश विश्व के कोने-कोने मे प्रसारित किये जाने की आवश्यकता है। हिंसा, कदाचार व हठाग्रह से पीड़ित मानवता के घावो को जिनवाणी की पावन ज्ञान गगा के मरहम से ही भरा जा सकता है।

पूज्यपाद की सयम-यात्रा मे देश के विभिन्न कोणो मे किये गये दीर्घ विचरण-विहार से स्वाध्याय का राजस्थान मे पूर्व से पश्चिम तक, उत्तर से दक्षिण तक व मध्यप्रदेश से महाराष्ट्र, दक्षिण मे आन्ध्र से कर्नाटक व तमिलनाडु आदि सभी क्षेत्रो मे शखनाद हुआ। जलगाव वर्षावास मे आप द्वारा की गई महती प्रेरणा से महाराष्ट्र के विभिन्न ग्राम-नगरो में स्वाध्यायशालाओ की स्थापना हुई, जिनमे आज तक हजारों व्यक्तियो ने सामायिक, प्रतिक्रमण से आगे का भी अध्ययन कर ज्ञानाराधना मे अपने चरण बढाये हैं। यहा ५ से ८ अगस्त तक स्वाध्याय प्रशिक्षण शिविर व एक दिवसीय स्वाध्यायी अधिवेशन का आयोजन हुआ, जिसमे प्रतिक्रमण, व्याख्यान, भजन, अन्तगडसूत्र, कर्म-प्रकृति, समिति-गुप्ति, जैन इतिहास व सप्त कुव्यसन आदि विषयो का विशद अध्ययन-अध्यापन हुआ।

प्राच्य पुरातन साहित्य एव ज्ञाननिधि के सरक्षण बाबत परम पूज्य के पावन उद्बोधन से प्रेरणा पाकर समाजसेवी श्री सुरेश दादा जैन ने 'श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ' के अन्तर्गत 'श्री महावीर जैन रत्न ग्रन्थालय' की स्थापना करने की घोषणा की व चातुर्मास मे ही चार-पाँच हजार से अधिक पुस्तको का सग्रह कर इस घोषणा को अमली रूप दिया गया।

चातुर्मास काल दया सवर, व्रताराधन व तपाराधन से समृद्ध रहा। प्रत्येक रविवार को सामूहिक दया का सफल आयोजन रहा। सरलमना गुरुभक्त सुश्रावक श्री पूनमचद जी बडेर, जयपुर ने मौन पूर्वक ६० दिवसीय दया-सवर की साधना कर व्रताराधन का आदर्श उपस्थित किया। जलगाव के मनीषी श्रावक श्री नथमलजी लूंकड़ की पुत्रवधू सौ. उज्ज्वला ने 'तपस्या का एक मात्र उद्देश्य कर्म-निर्जरा है, के अनुरूप १५ उपवास की निराडम्बर तपस्या की। तपस्या के निमित्त कोई भी जुलूस, जीमणवार अथवा आरम्भ-समारम्भ नही कर लूंकड़ परिवार ने अन्य

भाई-बहिनो के लिये मार्गदर्शन किया। चातुर्मास मे श्रीमती प्रेमाबाईजी श्रीश्रीमाल ने श्रेणी तप, श्री गोविन्दप्रसादजी की धर्मपत्नी ने मासक्षपण, श्रीमती जतनबाईजी के ५१ उपवास एव सुश्रावक श्री शकरलालजी ललवाणी की १०३ दिन की अखड मौन पूर्वक जप-तप-सवर साधना तपाराधन के क्षेत्र मे कीर्तिमान रहे। श्री केवलमलजी सुराणा दुर्ग, श्री सूरजमलजी करेला वाले सवाई माधोपुर, श्री चम्पालालजी कर्णावट मुम्बई, श्री माणकचन्दजी कर्णावट कुडी, श्री सम्पतराजजी खिवसरा जोधपुर, श्री उमरावमलजी अजमेर आदि श्रद्धालु गुरुभक्तो ने परमाराध्य गुरुदेव से आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को शील सौरभ से सुवासित किया।

परमाराध्य गुरु भगवन्त द्वारा अपने प्रवचनो के माध्यम से समय-समय पर सैद्धान्तिक जानकारिया भी दी जाती रही। प्रवचन मे एक दिन पूज्यपाद ने मुनि ज्ञानसुन्दरजी द्वारा रचित 'मूर्ति पूजा का प्राचीन इतिहास' का सन्दर्भ देते हुए फरमाया "आर्य सुधर्मास्वामी से आर्य शय्यम्भव तक किसी ने जड़मूर्ति को वन्दन किया हो, दर्शन करने हेतु कोई मन्दिर गये हों, ऐसा कही शास्त्रीय उल्लेख नही है। यदि उस समय मूर्तिपूजा चालू होती तो शास्त्र मे श्रमण भगवान महावीर की प्रतिमा और मन्दिर का उल्लेख अवश्य होता।"

कहना न होगा करुणाकर पूज्य आचार्य भगवत के इस चातुर्मास से यहा ज्ञान-दर्शन-चारित्र व तप सभी क्षेत्रो मे सर्वांगीण प्रगति हुई व जलगॉव धर्मशासन सन्देश के प्रमुख केन्द्र के रूप मे प्रतिष्ठित हुआ। चातुर्मास मे शिक्षा, स्वाध्याय और समाज सेवा के क्षेत्र मे श्री सुरेशकुमारजी जैन, श्री दलीचन्दजी चोरड़िया और श्री रमेश कुमारजी जैन का सराहनीय योगदान रहा। चातुर्मास मे भगवान महावीर विकलाग सहायता समिति, जयपुर के सहयोग से विकलाग सहायता शिविर का आयोजन किया गया व २०३ विकलागो के कृत्रिम पैर लगाकर उन्हे कैलिपर प्रदान कर सेवा व अनुकम्पा का आदर्श प्रस्तुत किया गया। समाजसेवी श्री सुरेशकुमार जी जैन द्वारा शासन प्रभावना हेतु किये गये उल्लेखनीय योगदान हेतु उनका 'समाज चिन्तामणि' की उपाधि से बहुमान किया गया।

• इन्दौर की ओर

जलगॉव से विहार कर पूज्य चरितनायक मार्गवर्ती अनेक क्षेत्रो को पावन करते हुए हिगोना, धरणगाव, अमलनेर को फरसते हुए धुलिया पधारे। यहॉ श्री हीरा ऋषि जी, श्री महेन्द्र ऋषिजी एव श्री कल्याण ऋषि जी तथा महासती जी श्री चॉदकवरजी म.सा. ठाणा ८ पूज्यपाद के दर्शनार्थ पधारे। श्री उत्तमचन्दजी वेदमुथा, श्री दीपचन्दजी सचेती, श्री धर्मचन्दजी सचेती आदि ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार कर पूज्यवर्य के श्री चरणो मे अपनी श्रद्धा समर्पित की। धुलिया से माण्डल, नरडाणा, शिरपुर होते हुए आप २१ दिसम्बर को बाडी पधारे। यहॉ इसी दिन स्थविर वयोवृद्ध श्री जयन्तमुनि जी म सा का जोधपुर मे मार्गशीर्ष शुक्ला ६ सवत् २०३९ को स्वर्गवास होने के समाचार मिलने से निर्वाण कायोत्सर्ग कर श्रद्धाजलि दी गई। पीपाड़ निवासी श्री दानमल जी चौधरी के सुपुत्र श्री जालमचन्दजी चौधरी ने ५६ वर्ष की प्रौढावस्था मे पूज्य आचार्य भगवत से मार्गशीर्ष शुक्ला १० सवत् २००९ को दीक्षा अगीकार कर 'पाछल खेती निपजे तो भी दारिद्र दूर' का आदर्श उपस्थित किया। आप पिछले कुछ समय से जोधपुर स्थिरवास विराज रहे थे। 'जयन्तमुनि जी' के नाम से ख्यात बाबाजी म सा का सयम-जीवन साधना, सेवा व वैय्यावृत्य हेतु समर्पित था। सयम मे आपका प्रबल पुरुषार्थ प्रेरणादायी था। आप सरल, सयमनिष्ठ और सहनशील व्यक्तित्व के धनी थे।

बाडी से विहार कर पूज्यपाद खेतिया, सेन्धवा, धामनोद, नाईघाट, भेरूघाट, जामली आदि क्षेत्रो व राजेन्द्र नगर, आडा बाजार, राज मोहल्ला, राजवाड़ा आदि इन्दौर के उपनगरो को अपनी पदरज से पावन करते हुए उपनगर

जानकीनगर पधारे। करुणाकर के आत्मार्थी शिष्य श्री श्रीचंदजी म.सा. काफी समय से अस्वस्थ थे, स्वास्थ्य मे सुधार परिलक्षित नही हो रहा था। उनकी शारीरिक स्थिति को देखकर संथारे का प्रत्याख्यान कराया गया। १७ जनवरी १९८३ को मुनि श्री का समाधिमरण के साथ महाप्रयाण हुआ। मूलत तमिलनाडु के निवासी श्री राम सुपुत्र श्री बंकट स्वामीजी नायडू के मन में भोपालगढ में करुणाकर गुरुदेव के पावन दर्शन से जीवदया एव धर्म के सस्कार जागृत हुए। नवकार मंत्र से आपने ज्ञानाराधन प्रारम्भ किया। अपने अटल सकल्प से उन्होने परिजनो से आज्ञा प्राप्त कर जयपुर मे वि.स. २०१६ में करुणाकर चरितनायक पूज्य हस्ती के चरणो मे श्रमण दीक्षा अगीकार कर अपने जीवन की दिशा ही बदल ली। भवभव से सचित कर्मरज के भार को हलका करने की महनीय कामना से उन्होने निरन्तर विविध तप- साधना का मार्ग चुना। पचोले-पचोले की तपस्या कर कर्म-निर्जरा की। इसी कारण वे 'तपस्वी' श्री श्रीचदजी म.सा. कहलाये। मुनिश्री ने १८ वर्षो तक आडा आसन नही किया। ऐसे घोर एव उग्र तपस्वी ने कई थोकड़े कण्ठस्थ कर प्रवचन कला मे भी प्रावीण्य प्राप्त किया। भक्तों को पाप से विरत कर धर्म से जोड़ने व प्रवचन देने मे उनकी विशेष अभिरुचि थी। भजनकला का आपको विशेष शौक था। उन्होने 'निर्ग्रन्थ भजनावली' के रूप मे भजनो, स्तोत्रो व प्रार्थनाओं का सकलन भी किया। राजस्थान के पोरवाल एव पल्लीवाल क्षेत्रो मे आपने आचार्य देव के स्वाध्याय-सामायिक सन्देश को ग्राम-ग्राम पहुचाकर विशेष शासन प्रभावना की। उनके मन मे अदम्य इच्छा थी कि मै तमिलनाडु प्रवास कर तमिलभाषी भाइयो को इस पतित पावन पातकप्रक्षालिनी जिनवाणी का सुधापान करा कर उन्हे दयाधर्म के संस्कारो से जोड़ सकूँ। तमिलभाषी इस यशस्वी महापुरुष ने अपने जीवन से यह सिद्ध कर दिया कि सकल्पधर्मा व्यक्ति अपने जीवन की धारा को बदल कर साधना मार्ग मे गति कर सकता है, पूर्व जीवन कोई बाधा उपस्थित नही कर पाता। उनके देहावसान से रत्नवंश ही नही वरन् समूचे जैन सघ को कमी का अहसास हुआ।

१९ जनवरी को जानकीनगर इन्दौर मे चरितनायक आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा, मधुर व्याख्यानी श्री हीरामुनि जी म.सा ठाणा ८ एव महासती श्री सायरकंवर जी म.सा ठाणा ४ के सान्निध्य मे कडलू (राजस्थान) निवासी सुश्रावक इन्द्रचन्द जी मेहता की सुपुत्री सुश्री शान्ता मेहता की भागवती दीक्षा का भव्य आयोजन सम्पन्न हुआ। इन्दौर मे स्वाध्याय सघ के कार्यकर्ताओ और स्वाध्यायियो का सम्मेलन उल्लेखनीय रहा। यहाँ अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ की आमसभा के अवसर पर आचार्य श्री कुशलचन्द जी म.सा. की पुण्यतिथि की द्विशताब्दी को समारोहपूर्वक मनाने का निर्णय लिया गया। तदर्थ २९ सूत्री कार्यक्रम स्वीकार किया गया। मध्यप्रदेश स्वाध्याय सघ की ओर से अ.भा महावीर जैन श्राविका सघ की उपाध्यक्ष श्रीमती भुवनेश्वरी देवी भडारी को समाजप्रभाविका उपाधि से अलकृत किया गया। २७ जनवरी को महावीर भवन मे १०० से अधिक दयाव्रत हुए। बाहर के अनेक श्री सघो ने आचार्य श्री से अपने क्षेत्रों को फरसने एव चातुर्मास करने की विनति की। मालवा की प्रसिद्ध नगरी इन्दौर मे धर्मजागरण का एक प्रेरक दृश्य जैन-जैनेतर समाज को देखने को मिला।

भौतिकवादी इस युग में जहाँ वस्त्रों से कपाट भरे होने पर भी खरीद रुकती नही, वहाँ तन ढकने मात्र के श्वेत वस्त्र धारण किये, बिना तकिया-बिछौने के शयन एव बिना वाहन और पादत्राण के विहार करने वाले सन्तो का, मुख वस्त्रिका और रजोहरण के प्रतीक वाला अहिंसक वेश सबको लुभा रहा था। कई कमरो वाले भवनो की भारी सज्जा के उपरान्त भी जिनका जी नही भरता, ऐसे लोगो को घर की चिन्ता से विहीन, वैराग्य की मूर्तिस्वरूप, विहार में ही रमण करने वाले सन्तो को देखकर विस्मय तो होता ही। तपता सिर, झुलसते पैर, पास मे पैसा नही, परिवार का परिग्रह नही, निर्दोष आहार मिलने की गारण्टी नही, फिर भी देदीप्यमान ललाट, करुणा सरसाते नेत्र, दया पालन

के प्रेरक सन्त-सती मडली को देख चकित होना स्वाभाविक था। ऐसी पावनमूर्ति आचार्य श्री की ७३वी जन्म तिथि पर २८ जनवरी ८३ को आचार्य श्री के जीवन पर चतुर्विध सघ द्वारा प्रकाश डाला गया। गुणानुवाद की स्वरलहरियाँ सभी के हृत् तत्रो को झकृत करने लगी। आचार्य श्री के अभिनन्दन स्वरूप श्रावक-श्राविकाओ ने तप, त्याग और नियम की भेट अर्पित की। मध्यप्रदेश स्वाध्याय सघ ने स्वाध्याय के पर्याय आचार्य हस्ती के ७३ वे जन्म दिवस के उपलक्ष्य मे आगामी वर्ष मे ७३ स्वाध्यायी पर्युषण पर्वाराधन हेतु भेजने का सकल्प किया। समाजसेवा के रूप मे भूख-प्यास और गरीबी मिटाने के कई उपक्रम इस अवसर पर हुए। चरितनायक ने महावीर नगर कॉलोनी, परदेशीपुरा कॉलोनी, पद्मावती पोरवाल भवन, जगमपुरा आदि स्थानो को भी प्रवचनामृतो से पावन किया। १५ फरवरी को आपकी ६३ वी दीक्षा जयन्ती जानकीनगर मे सामूहिक दयाव्रत एव सामायिक स्वाध्याय के प्रेरणाप्रद वातावरण मे मनायी गयी। इस अवसर पर जयपुर का पचास सदस्यीय शिष्टमण्डल चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ। १७ फरवरी ८३ को खरतरगच्छ सघ की प्रभावक आर्या श्री विचक्षण श्री जी म सा की शिष्या श्री मणिप्रभा श्री जी म सा. आचार्यप्रवर के दर्शनार्थ पधारी। श्रमणोचित कुशलक्षेम के पश्चात् आचार्य श्री ने साध्वी जी को विचक्षण श्री जी के समान जिनशासन को देदीप्यमान करने की प्रेरणा एव मगलपाठ दिया।

- उज्जैन होकर राजस्थान की ओर

विहार क्रम से उज्जैन पधारने पर बालोतरा की ९ विरक्ता बहनो ने आचार्य श्री के दर्शन एव प्रवचन का लाभ लिया। विहार मार्ग मे अनेकानेक साधु-साध्वी आचार्य श्री के दर्शन एव प्रवचन लाभार्थ पधारते ही रहते थे। उज्जैन मे तपस्वी श्री लालचन्दजी म सा ठाणा ३, महासती श्री कौशल्याजी एव महासती श्री मैनाजी आदि ठाणा १० ने दर्शन-लाभ लिया। महासती श्री विचक्षण श्री जी की शिष्या श्री वर्द्धमान श्री जी ने ठाणा ४ से दर्शन किए।

यहाँ से चरितनायक नजरपुर, घोसला होते हुए महिदपुर पधारे, जहाँ आपकी पावन प्रेरणा से धार्मिक पाठशाला प्रारम्भ हुई एव नवयुवको ने १५ मिनट स्वाध्याय करने का सकल्प लिया। यहाँ से झारेड़ा पधारने पर मूर्तिपूजक समाज की महासती श्री अमितगुणाजी की दो शिष्याएँ आपके दर्शनार्थ पधारी। यहाँ से इन्दोख होते हुए आप बड़ोद पधारे। लगभग १०० जैन घरो के इस नगर मे आचार्य प्रवर के प्रवचनो से प्रभावित होकर कई युवको ने प्रतिदिन/ सप्ताह मे १५ मिनट स्वाध्याय करने का सकल्प लिया।

■

राजस्थान की धरा पर पुनः प्रवेश

जयपुर, जोधपुर एवं भोपालगढ़ में चातुर्मास (संवत् २०४० से २०४२)

- आवर होकर कोटा सवाईमाधोपुर

फाल्गुन कृष्णा अष्टमी को बड़ोद से कच्चे मार्ग से ककरीली भूमि पार करते हुए पूज्य चरितनायक राजस्थान की सीमा मे प्रवेश कर प्रात. लगभग ११.३० बजे डग के धर्मस्थानक में पधारे। यहा १०० जैन घरो की बस्ती है। रात्रि मे ज्ञान पिपासु श्रावक श्री मागीलालजी ने ज्ञान सूर्य आचार्य हस्ती से अपनी जिज्ञासाओ का समाधान प्राप्त कर अपने ज्ञान मे अभिवृद्धि की। यहा से विहार कर आप हरनावदा पधारे व मन्दिर मे विराजे। दूसरे दिन आप आवर पधारे। सवत् २०३९ फाल्गुनी पूर्णिमा के अवसर पर इस छोटे से ग्राम आवर मे ७२ दयाव्रत , उपवास व पौषध हुए। सयम साधक आचार्य भगवन्त की पावन प्रेरणा से प्रतिवर्ष स्थानक के समक्ष होने वाला होलिका-दहन नही हुआ, इतना ही नही जन समुदाय ने भविष्य के लिये भी होलिका-दहन व रग खेलने का त्याग कर दिया। करुणाकर के साधनातिशय व पावन प्रेरणा का ही सुफल है कि यहा जैन-अजैन कोई भी व्यक्ति होलिका-दहन नही करता व रग कीचड़ नही उछालता।

जन-जन की अनन्य आस्था के केन्द्र पूज्य आचार्य हस्ती का पाच वर्ष से अधिक अन्तराल के पश्चात् राजस्थान की भूमि पर पदार्पण हुआ था। धर्मभूमि राजस्थान के सभी क्षेत्रो के निवासियो के मन मे आशा, उमग व उत्साह का सचार था। सभी इस बात से प्रमुदित थे कि हम अब सहजता से पूज्यपाद के पावन दर्शन, वन्दन व सान्निध्य का लाभ ले सकेगे व जिनवाणी की पावन गगा अब हमारे क्षेत्र को भी पावन कर भक्तो के हृदय के अज्ञान तिमिर को हर कर ज्ञान का शुभ्र प्रकाश फैलायेगी। सभी क्षेत्र समुत्सुक थे कि उनके क्षेत्र को इस ज्ञान सूर्य के सान्निध्य का शीघ्र व प्रथम लाभ मिले। इसी भावना से आवर मे होली चातुर्मासी के अवसर पर जोधपुर, कोटा, सवाई माधोपुर , अलीगढ-रामपुरा के श्री सघ एव जयपुर का शिष्ट मडल अपनी-अपनी विनति लेकर उपस्थित हुए।

आवर से २९ मार्च १९८३ को विहार कर पूज्यपाद के करावन पधारने पर १२ बन्धुओ ने सामायिक सघ के सदस्य बन कर नियमित सामायिक आराधना का सकल्प लिया व श्री अमरालाल जी मेहर ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को सम्पन्न बनाया। यहा से पूज्यप्रवर बोलिया, मिश्रोली, पचपहाड़ आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए भवानीमण्डी पधारे। मार्गस्थ क्षेत्रों मे पं. रत्न श्री हीरामुनिजी म.सा (वर्तमान आचार्य प्रवर) के सामायिक, स्वाध्याय एव शीलव्रत पर प्रेरक प्रवचन हुए। महापुरुषो का सान्निध्य जीवन-निर्माण करने वाला व वाणी सुफलदायिनी होती है। बोलिया मे श्री कन्हैयालालजी एवं श्री शंकरलालजी ने आजीवन शीलव्रत अँगीकार कर अपना जीवन धन्य किया। आचार्य हस्ती के सामायिक स्वाध्याय सदेश को जीवन मे अपना कर अनेक व्यक्तियो ने सामायिक व स्वाध्याय के नियम ग्रहण किये।

भवानीमण्डी से आपका पदार्पण भैंसोदा हुआ। यहाँ चैत्र कृष्णा सप्तमी को शीतला सप्तमी के दिन करुणाकर ने माता का सच्चा स्वरूप बताते हुए फरमाया कि आज 'दयामाता' का आश्रय लेकर धर्म-मार्ग मे प्रवृत्त होने की

आवश्यकता है। 'दया माता' की शीतल छाव मे ही यह आत्मा पाप कालिमा व भव-भ्रमण से सुरक्षित रह सकती है। यहाँ ज्ञातासूत्र का वाचन हुआ। सायकाल विहार कर आप ग्राम की धर्मशाला मे विराजे। सधारा मे धर्मोद्योत कर पूज्यप्रवर रामगजमडी पधारे। यहाँ कोटा, मोडक, चेचट आदि क्षेत्रो के दर्शनार्थियो ने अपने-अपने क्षेत्र की विनतियाँ प्रस्तुत की। पूज्यप्रवर ने यहा श्री हरबसलालजी, कोटा को परिग्रह मर्यादा हेतु प्रेरणा की। ज्ञानाराधना की प्रेरणा देते हुए करुणाकर गुरुदेव ने अपने मगल उद्बोधन मे फरमाया कि सद्ज्ञान ही शुभ सस्कारो को फैलाने व बढ़ाने का कारण है। अपराह्न मे प्रश्नोत्तर के माध्यम से आपने बहिनो को तत्त्वज्ञान सीखने की प्रेरणा की। आपकी महनीय प्रेरणा से यहा २१ व्यक्तियो ने नित्य सामायिक-स्वाध्याय व २६ व्यक्तियो ने साप्ताहिक स्वाध्याय के नियम लिए। इस विहारकाल मे परमगुरुभक्त श्री बिशनचन्दजी मुथा, हैदराबाद ने एक मास तक आराध्य गुरुदेव की सेवा का अनुपम लाभ लिया।

रामगजमडी से विहार कर पूज्यपाद ११ अप्रेल को आदित्यनगर मोडक स्टेशन पधारे। यहाँ पर अपने प्रभावी प्रवचनामृत के माध्यम से आपने फरमाया—"अर्थ-लाभ के साथ धर्म-लाभ का भी लक्ष्य रखे, धर्मलाभ को गौण न समझे। आत्मा के लिए तो धर्मलाभ अर्थलाभ से भी बढकर है।" विहारक्रम मे आपने दरागाव मे गूजर परिवार के लोगो को अनछना पानी काम में न लेने एवं जीव हिंसा न करने का उपदेश दिया। घाटी पार कर दरा स्टेशन होते हुए सवत् २०४० के प्रथम दिन चैत्रशुक्ला प्रतिपदा को मडाणा पधारे। बदलते मौसम एव असमय बून्दे गिरती देखकर आचार्य भगवन्त का चिन्तन चला "परिवर्तनशील काल को जान कर उससे लाभ उठाने वाला ही सुज्ञ है।" केवलनगर फैक्ट्री होते हुए पूज्यपाद १६ अप्रेल को अनन्तपुरा पधारे।

यहाँ कच्चे मकानो वाले अजैन घरो की बस्ती थी। आचार्यप्रवर सरपच के मकान मे विराजमान थे, जिसके पास देवी का चबूतरा था। यहाँ एक हरिजन परिवार देवी को बकरे की बलि चढाने वाला था। इस परिवार को बलि न चढ़ाने हेतु प्रेरित किया गया। उसे देवी के रूठने की आशका थी, अत समझाने पर भी नही माना। अन्त मे जिसे देवी आती थी, वह पुजारी आया। सन्त एव श्रावक सायकालीन प्रतिक्रमण कर रहे थे। पुजारी को जैसे ही देवी आयी, वह बोला – "अरे दुष्टो ! मेरा नाम बदनाम करते हो। जो महापुरुष यहाँ बैठा हुआ है, देवताओं का राजा इन्द्र भी जिसकी वाणी को नही ठुकराता है, उसके सामने तुमने मुझे बदनाम किया है कि देवी बलिदान मागती है। मैने कब बकरे मागे हैं ? तुम तुम्हारे खाने के लिए बकरे मेरे नाम पर बलि करते हो । तुम्हारे कार्य का फल तुम भोगोगे।" इतना कहकर देवी शरीर से निकल गई। गॉव वाले करुणावतार की महत्ता से चकित रह गए और वहाँ सदैव के लिए बकरे की बलि देना बन्द हो गया। बलिबद मे सरपच देवीदयाल जी का प्रयास सराहनीय रहा।

अनन्तपुरा से ५ कि मी का विहार कर रविवार १७ अप्रैल ८३ को कोटा के उपनगर तलवण्डी मे धर्मध्वजा फहराते हुए चरितनायक ने कोटा के दादाबाड़ी, छावनी आदि उपनगरो को पावन किया तथा रामनवमी के पावन प्रसग पर रामपुरा बाजार के बूदी चौक मे व्याख्यान सभा को सम्बोधित किया। आपने राम के आदर्श चरित्र को अपनाने की प्रेरणा करते हुए सस्कार निर्माण मे चार कारणो को समझने एव सुधारने पर बल दिया – (१) घर का वातावरण (२) शिक्षा (३) सगति और (४) भाषा। जोधपुर, जयपुर, सवाई माधोपुर , भोपालगढ, कोटा आदि विभिन्न सघों की विनति के अनन्तर जयपुर सघ को चातुर्मास हेतु एव सवाईमाधोपुर सघ को अक्षयतृतीया हेतु स्वीकृति प्रदान की। इसी दिन सत्र न्यायाधीश श्री जसराजजी चौपड़ा के निवेदन पर अपराह्न मे कोटा सेन्ट्रल जेल मे आपका प्रभावी प्रवचन हुआ। सिविल लाइन्स मे करुणानाथ के प्रभावक प्रवचन से प्रेरित हो तत्कालीन जिलाधीश श्री परमेशचन्द्र जी ने मास-भक्षण त्याग का नियम लिया तथा भारतीय प्रशासनिक अधिकारी श्री इन्द्रसिंह जी कावडिया

ने आजीवन धूम्रपान छोड़ दिया। आपने प्रवचन में फरमाया कि मानव समाज की शान्ति एव सुव्यवस्था के लिए चार भूमिकाएँ हैं –(१) शरीर-स्वास्थ्य के लिये चिकित्सक (२) सामाजिक एव आर्थिक व्यवस्था के लिए शासक (३) संस्कृति की रक्षा के लिए शिक्षक (४) मन की पवित्रता के लिए सन्त ।

कोटा के जे.के. बेडमिंटन हाल में आयोजित महावीर जयन्ती कार्यक्रम के अवसर पर आपने फरमाया कि हमे आहार, व्यवहार, विचार और आचार को शुद्ध रखते हुए जन समाज मे निर्व्यसनता के साथ भगवान महावीर के सदेशो का प्रचार करना चाहिए। सभा मे तत्कालीन न्यायाधीश श्री जसराज जी चौपड़ा ने इस पावन प्रसग पर सघ-एकता का आह्वान किया। श्री बशीलालजी लूकड, श्री पुखराजजी सकलेचा, श्री हरबसलालजी जैन एवं श्री सावतमलजी मेहता ने आजीवन शीलव्रत ग्रहण कर गुरु चरणो मे श्रद्धासुमन अर्पित किए। आपके कोटा जक्शन पधारने पर श्री हेमराजजी सुराना एव श्री प्यारचन्दजी सुराना ने शीलव्रत अगीकार किया। आचार्यप्रवर ने दूसरे दिन प्रवचन मे युवको को जीवन-निर्माण की दिशा मे आगे बढ़ने का आह्वान किया। आपने फरमाया कि "भारतीय सस्कृति मे सदा से त्याग-तप और आचार की महिमा रही है। क्योकि यहाँ राम, कृष्ण और महावीर की जयन्ती मनायी जाती है, किसी बादशाह की नही।" सामायिक के सम्बन्ध मे आपने फरमाया कि सामायिक आत्मा को पाप से हल्का करने की कला है। इन दिनो विरक्त प्रमोदजी आचार्यप्रवर के श्री चरणो मे अपना समर्पण कर चुके थे। विहारकाल मे भी वे कुछ माह से साथ मे थे। कोटा से आचार्य श्री केशोरायपाटन, अरनेठा, कापरेन , घाट का बराना, लबान, लाखेरी, सुमेरगज मडी, इन्द्रगढ आदि ग्राम-नगर फरसते हुए ७ मई को बाबई ग्राम पधारे। मार्ग मे अजैन बस्तियो को निर्व्यसनता की प्रेरणा की, जैनो के आचार की जानकारी से ग्रामीण प्रसन्न हुए। करुणाकर के पावन दर्शन व प्रेरणा से प्रेरित हो लाखेरी मे युवक अशोक कुमार ने एक वर्ष के लिए मास एव शराब का त्याग किया। सुमेरगजमण्डी एवं इन्द्रगढ मे स्वाध्याय एव सामायिक की प्रेरणा करते हुए आपने फरमाया कि स्वाध्याय से मन की चचलता को कम किया जा सकता है, सामायिक से समभाव की कला सीखी जा सकती है। बाबई मे रात्रि के समय वृक्ष के नीचे विराजे। ध्यानस्थ आचार्य श्री से अत्यत प्रभावित हुए राजपूत कुल के सवाईमाधोपुर के निवर्तमान जेलर, जो प्रतिदिन शराब पीकर परिजनो को कष्ट पहुँचाते थे, ने आजीवन शराब न पीने की सौगन्ध ली। यहाँ से १३ किमी का विहार कर आप बगाव्दा पधारे, जहाँ श्री लड्डूलालजी एव गहरीलालजी ने शीलव्रत का नियम लिया। रात्रि मे धर्मकथा से प्रभावित अनेक ग्रामवासियो ने व्यसनमुक्ति के नियम लिए । आचार्यप्रवर की प्रेरणा और जयपुर के श्रावको के सत्प्रयासो से सघ मे पुन. एकता कायम हुई। यहाँ से आप कुस्तला ग्राम होकर आलनपुर पधारे। १३ मई ८३ को प्रात: सवाई माधोपुर के परकोटे मे पधारते ही भक्तो ने बड़ी सख्या मे एकत्र होकर भाव भरे नारो के जयघोष से दिग्दिगन्त गुजा दिया–

'खुला बगीचा प्यारा है, हस्ती गुरु हमारा है।'
'हिमालय की ऊंची चोटी हस्ती गुरु की पदवी मोटी।'
'प्रेम का झूला झूलेंगे, हस्ती गुरु को नही भूलेंगे।'

ठाणा १० से आचार्य श्री तथा ठाणा ४ से महासती श्री शान्तिकवर जी म.सा. के यहाँ विराजने से महावीर भवन में धर्मध्यान का अपूर्व ठाट लग गया। अक्षयतृतीया पर ७९ तपस्विनी बहने आचार्यप्रवर के दर्शन-वन्दन से कृतकृत्य हो उठी। आगन्तुकों ने अनेक व्रत-नियम धारण किए गए। क्षेत्र मे धार्मिक आयोजन का उत्साह देखने योग्य था। जयपुर, पाली, धनारीकला, मद्रास एव पल्लीवाल क्षेत्र से लगभग २००० श्रावक-श्राविका तथा पोरवाल क्षेत्र से लगभग ५००० व्यक्तियो ने सन्त-दर्शन एव तप-अनुमोदना का लाभ लिया। परमपूज्य चरितनायक के

आचार्य पदारोहण के इस दिवस पर श्री बजरगलाल जी सवाईमाधोपुर, श्री रूपचन्दजी बणज्यारी, श्री मागीलालजी सुराणा नागौर, श्री हरिवल्लभ जी सूरवाल तथा श्री सोहन लालजी मूथा, पाली ने आजीवन शीलव्रत ग्रहण कर श्रद्धाभिव्यक्ति की। भगवन्त की प्रभावी प्रेरणा से अनेको व्यक्तियो ने तपस्या के अवसर पर लेन-देन व आडम्बर का त्याग कर अन्यो के लिये प्रेरणा का कार्य किया। आपने सघ मे समन्वय व एकता की प्रेरणा की। पूज्यप्रवर के आलनपुर पधारने पर सघ के सभी सदस्यो ने धर्मध्यान का अच्छा लाभ लिया।

आलनपुर से विहार कर आचार्य श्री बजरिया, आदर्श नगर होते हुए गम्भीरा पधारे। इस छोटे से ग्राम मे सामूहिक रूप से सप्त कुव्यसनो का त्याग कराया। यहा बाबूलालजी उज्ज्वल के पिताजी ने सदार आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। यहाँ से वैशाख पूर्णिमा को कुस्तला पधारने पर आपने अपने मगल प्रवचन मे फरमाया कि वैशाखी पूनम के चाँद की तरह आत्मा को भी पूर्णत. द्युतिमान करने मे ही सत्सग और उपदेश-श्रवण की सार्थकता है। यहाँ से पचाला, चोरू होते हुए आप चौथ का बरवाड़ा पधारे, जहाँ रत्नवश के मूलपुरुष पूज्य श्री कुशलचन्द जी म.सा. की पुण्यतिथि का द्वि शताब्दी समारोह तप-त्याग और सामायिक-स्वाध्याय की साधना के साथ मनाया गया। उसके अनन्तर ३ जून को आपश्री पुन चोरू होते हुए जैनपुरी पधारे, जहाँ मीणा जाति के अनेक जैन भाइयो ने धूम्रपान का त्याग किया तथा नियमित सामायिक का नियम लिया। यहाँ से उखलाना पधारने पर वहाँ भी सामायिक, आयम्बिल, एकाशन आदि के व्रत दिलाने के साथ धूम्रपान का त्याग कराया गया।

• टोक, निवाई होकर जयपुर

६ जून ८३ को साय ६ बजे दशमी की मौन-साधना मे विहार कर आचार्य श्री अलीगढ़- रामपुरा पधारे, जहाँ बीस से अधिक युवको ने उस वर्ष पर्युषण मे बाहर जाकर स्वाध्यायी-सेवा देने की प्रतिज्ञा की, कइयो ने सामायिक व्रत के नियम लिए। श्री गजानन्दजी उखलाना एव श्री श्रीनारायणजी गाडोली ने शीलव्रत के नियम लिए। ज्ञानसूर्य आचार्य हस्ती ने प्रवचन मे ज्ञानवर्धन की प्रेरणा करते हुए फरमाया — सूर्य का प्रकाश [illegible] जिस प्रकार पक्षी चहचहाते है, उसी प्रकार आप भी ज्ञान के प्रकाश मे गतिशील बनिये। यहाँ चार दिनो तक पातक प्रक्षालिनी वाणी का प्रभाव अकित कर आप उनियारा पधारे, जहाँ आपके पावन सान्निध्य एव प रत्न श्री हीरामुनि जी म सा की प्रेरणा से यहाँ का वर्षो पुराना वैमनस्य समाप्त हो गया तथा सघ मे एकता की लहर व्याप्त हो गई। फिर आप ढिकोलिया, ककोड़, घास, चदलाई होते हुए टोक पधारे। धर्म जागरणा के साथ आप सोयला, पहाड़ी होते निवाई पधारे, जहाँ २३ जून को जलधारा कण्डक्टर्स प्रा लि के प्रागण मे पचासो श्रमिको ने आपकी ओजस्वी वाणी का रसास्वादन कर धूम्रपान का त्याग किया। २४ जून को दिगम्बर जैन नसिया मन्दिर मे क्रियोद्धारक महापुरुष आचार्य श्री रत्नचन्द्रजी म सा का १३८ वॉ स्मृति-दिवस तप-त्याग के साथ मनाया गया। डॉ नरेन्द्र भानावत ने आचार्य श्री रत्नचन्द्रजी म.सा की काव्य -साधना पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर जोधपुर, जयपुर, अलीगढ (टोक), चौथ का बरवाड़ा, सवाईमाधोपुर, टोक, उखलाना आदि के भक्तो की अच्छी उपस्थिति थी। भँवरसिह जी मीणा उखलाना ने आजीवन शीलव्रत का नियम लिया ।

निवाई मे 'जैन धर्म की प्रासगिकता' विषय पर विचार गोष्ठी मे डा. लक्ष्मीलाल ओड, प्रिन्सिपल वनस्थली विद्यापीठ आदि शिक्षाविदो ने अपने विचार प्रस्तुत किये। आचार्यप्रवर ने इस अवसर पर फरमाया—"भगवान महावीर ने साधारण आदमी को उपदेश देते हुए फरमाया कि यदि व्रत ग्रहण नही कर सकते हो तो कम से कम सम्यक्त्व तो स्वीकार करो। जो मनोबल वाला है, व्रत की भावना रखता है उससे कहा कि देखो, सबसे उत्तम तो यह

है कि तुम श्रमणधर्म ग्रहण करो, साधुवृत्ति अगीकार करो। सम्पूर्ण अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एव अपरिग्रह का पालन करो। यदि तुम महाव्रत नही ले सकते हो तो अणुव्रत लो। सर्वथा क्रियाशून्य मत रहो। बिना मर्यादा के मत रहो। श्रावक धर्म को स्वीकार करने से मानव शान्ति की ओर बढ़ सकता है।" २५ जून को निवाई से विहार कर कौथून, चाकसू, शिवदासपुरा, बीलवा सागानेर आदि क्षेत्रो को फरसते हुए पूज्यप्रवर १ जुलाई को जयपुर के महावीर नगर मे पधारे एव श्री चन्द्रराजजी सिंघवी के बगले बिराजे। यहा करुणाकर गुरुदेव के दर्शनार्थ जयपुर के आबालवृद्ध नर नारियो का ताता लग गया। सिंघवी दम्पती ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को धन्य किया।

३ जुलाई ८३ को आचार्य श्री साधना-भवन बजाज नगर पधारे, यहाँ धुलिया मे दिवगत स्वामी जी श्री ब्रजलाल जी म. को श्रद्धाजलि देने हेतु व्याख्यान स्थगित कर कायोत्सर्ग किया गया। आचार्य श्री सौहार्द और वात्सल्य की प्रतिमूर्ति थे। चतुर्विध सघ के सदस्य किसी सम्प्रदाय या जाति के हो, किसी देश या प्रान्त के हो, दीक्षा पर्याय अल्प या अधिक हो, उनकी उदार गुणग्राहकता चारित्र की कसौटी पर परख करती थी और वे चारित्रात्माओ के प्रति अनन्य वात्सल्य भाव रखते थे। यहाँ श्री बलवन्तराजजी सिंघवी ने सजोड़े शीलव्रत अगीकार किया। साधना-भवन मे श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण सस्थान मे अध्ययनरत छात्रो से चर्चा कर उनका मार्गदर्शन किया। ४ जुलाई को श्री सिरहमल जी नवलखा ने अपने निवास पर विराजित आचार्यप्रवर के श्रीमुख से सजोड़े शीलव्रत अगीकार किया। तदनन्तर पूज्यप्रवर श्री गुमानमलजी चोरड़िया एव श्री पूनमचन्दजी हरिश्चन्द्रजी बडेर के बगले पर विराजे। जयपुर मे आपके इस प्रवास मे श्री चुन्नीलालजी ललवाणी के नेतृत्व मे घर-घर जाकर चलाये गये अभियान से बडी सख्या मे श्रावक-श्राविका सामूहिक प्रार्थना एव सामायिक साधना से जुड़े। १६ जुलाई को प्रख्यात वैज्ञानिक तथा जैन दर्शन के विद्वान डॉ डी एस कोठारी ने आचार्य श्री के सान्निध्य मे आयोजित विचार-गोष्ठी 'वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे जैन धर्म की खोज' विषय पर महत्त्वपूर्ण एव नूतन चिन्तन प्रस्तुत किया। **आचार्यप्रवर के साथ डॉ. डी. एस. कोठारी की विद्युत एव अग्नि के सम्बन्ध मे चर्चा हुई। संगोष्ठी मे यह चिन्तन उभरा कि आज धर्म मे व्यवहार के स्थान पर व्यवहार में धर्म की अधिक आवश्यकता है।**

- जयपुर चातुर्मास (सवत् २०४०)

वि सवत् २०४० के चातुर्मास की खुशी मे जयपुर सघ मे प्रबल उत्साह, गुरुश्रद्धा मे समर्पण का भाव, व्रत-प्रत्याख्यान द्वारा जीवन निर्माण की उमग व अभिरुचि परिलक्षित हो रही थी। १८ जुलाई १९८३ को चातुर्मासार्थ लालभवन मे सभी सन्तो के साथ आपके प्रवेश के अवसर पर विशाल जनमेदिनी अगवानी को उपस्थित थी। 'शासनपति श्रमण भगवान महावीर की जय', 'परमपूज्य आचार्य हस्ती की जय', 'जैन धर्म की जय' के जयघोष करते हुए उल्लसित भक्तो की उपस्थिति ने सहज एक भव्य दृश्य उपस्थित कर दिया। स्थानीय श्रद्धालुओ के अतिरिक्त इस मगलप्रवेश के अवसर पर अनेक स्थानो के श्रावक-श्राविका भी उपस्थित थे। अपने मगलमय उद्बोधन मे आचार्यप्रवर ने जयपुर सघ के साथ अपनी यशस्विनी परम्परा के ऐतिहासिक सबध की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए फरमाया कि "विक्रम सवत् की १६ वी शती के अन्त मे जयपुर स्टेट के दीवान श्री टोडरमल जी थे। उस समय किसी स्थानकवासी तपस्वी सन्त का अकस्मात् जयपुर आगमन हुआ। उनकी तेजस्विता एव तपस्या के प्रभाव से दीवान सा विशेष प्रभावित हुए और तब से इस क्षेत्र मे स्थानकवासी सतो का आगमन प्रारम्भ हुआ।"

"हमारी परम्परा के पूज्य आचार्यों एव मुनिराजो का यहाँ विशेषतौर से आगमन होता रहा। हम जयपुर के

लिए नये नही हैं। पूज्य आचार्य श्री विनयचन्द्र जी म सा ने १४ वर्षो तक लगातार यहाँ विराजकर जैन-सघ को मजबूत किया। वे एक सम्प्रदाय के आचार्य थे, परन्तु उनका जीवन सम्प्रदायवाद से परे था। पजाब, मालवा की सम्प्रदायो के सन्तों के साथ प रत्न श्री ज्ञानचन्दजी म सा की परम्परा, बाबा जी पूर्णचन्द्र जी म., इन्द्रमल जी म. आदि विभिन्न परम्पराओ के विशिष्ट सत महीनो तक उनकी सेवा मे बैठकर ज्ञान-ध्यान की आराधना करते रहे। पूज्य माधवमुनि जी म ने आचार्य श्री विनयचन्द्र जी म.सा की सेवा मे रहकर ज्ञान-ध्यान की आराधना की। दोनो पूज्य सन्त एक साथ विराजे। दोनो की काया भिन्न थी, परन्तु मन में वैचारिक समरूपता तथा हृदय मे आत्मीयता व साहचर्य भाव था।

आचार्य श्री ने सघ-सौहार्द की सुदृढ़ परम्परा के निर्वाह पर बल दिया। खरबूजे और नारगी के स्वरूप के माध्यम से प्रेरणा देते हुए आपश्री ने फरमाया कि सघ के सदस्यो को चाहिए कि वे बाहर से नारगी की भाति एक प्रतीत हो तथा भीतर से खरबूजे की तरह एक हो। इस प्रकार एक रूप एव एक रस होने पर ही 'सघ' शासन की जिम्मेदारी की भूमिका तन्मयता से निभा सकेगा। मागलिक-श्रवण के लिए उत्सुक अपार जनमेदिनी को आचार्य श्री ने मागलिक प्रदान किया। महासती श्री शान्तिकँवर जी म सा आदि ठाणा ४ का २१ जुलाई को चातुर्मासार्थ बारह गणगौर स्थानक मे प्रवेश हुआ।

आचार्य श्री के सान्निध्य मे ध्यान एव मौन -सामायिक शिविरो का आयोजन, दया की पचरगिया, अतिविशिष्ट एव विशिष्ट व्यक्तियो का दर्शनार्थ आगमन उल्लेखनीय रहे। **फ्रास के विद्वान् डॉ. जे.एन. मोनसुयर, आचार्य श्री के संयम एवं त्यागमय जीवन से अत्यंत प्रभावित हुए उन्होंने जैन-धर्म-दर्शन पर आचार्य श्री से विचारो का आदान-प्रदान किया। अंग्रेजी-हिन्दी रूपान्तर श्री उमरावमल जी ढड्ढा ने किया। प्रसिद्ध वैष्णव संत श्री ओंकारानन्द जी स्वामी भी आपके दर्शन हेतु पधारे।** श्री दिनेन्द्र कुमार जी छाजेड़ जयपुर ने ४२ वर्ष की तरुणायु मे आजीवन शीलव्रत का आदर्श प्रस्तुत किया। सवाईमाधोपुर से युवक सघ के ३५ सदस्यो ने उपस्थित होकर सामायिक-स्वाध्याय का नियम ग्रहण किया।

इस चातुर्मास काल में पर्वाधिराज पर्युषण की महावेला मे महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म सा ने १० दिवसीय एव तपस्वी श्री प्रकाश मुनि जी म सा ने १२ दिवसीय तप किया। दीर्घ तपस्विनी श्रीमती इचरज कवरजी लुणावत ने ७५ उपवास किए, १५ मासक्षपण तप हुए, बेले-तेले की तपस्याएँ अगणित हुई, १०० अठाई तप हुए, रत्न व्यवसायी श्री पूनमचन्दजी बडेर ने ६५ दिन की मौन-साधना जपसवर के साथ की। कुशलचन्द जी हीरावत ने अपना व्यवसाय छोड़कर सवर-साधना के साथ पूरे चार माह मौनव्रत रखा। इस प्रकार अनेकविध तपस्वियो ने लालभवन को तपोभवन बना दिया। अधिकाश तपस्वियो के पारणे बिना आडम्बर के सादगीपूर्वक हुए। प रत्न श्री मानमुनि जी (वर्तमान उपाध्याय प्रवर), मधुर व्याख्यानी श्री हीरामुनिजी (वर्तमान आचार्य श्री) आदि सन्तो के प्रवचनामृत से जन-जन प्रभावित थे। उनके व्याख्यान श्रावक-श्राविकाओ को सत्पथ पर अग्रसर करने मे जादू सा कार्य करते थे। कोई सूक्तियो, दोहो, पद्यो और लघु कथाओ के माध्यम से गहन आध्यात्मिक विषय को समझाने मे निपुण रहे तो कोई स्वरचित भजनो, गीतिकाओ और भाव भरे उद्बोधनो से सरलता और सहजता को अगीकार करने का पाठ पढाते रहे। कोई धैर्यपूर्वक सधी हुई वाणी से द्रव्यानुयोग, चरणानुयोग, धर्मकथानुयोग और गणितानुयोग के मर्म को स्थानीय भाषा मे प्रकट करने मे सिद्धहस्त रहे तो कोई उपमा, उत्प्रेक्षा की थाह को भापते हुए, देश, काल और परिवेश के अनुकूल सुमधुर और प्रभावशाली भाषा मे अपने चिन्तन को मुखरित कर जन-जन को आत्म विभोर करते रहे। साध्वी मडल भी पीछे नही रहा। गुरु हस्ती की कृपा का प्रसाद अद्भुत है। पात्र के भीतर छिपी योग्यता

को विकसित करने की विलक्षण प्रतिभा चरितनायक के अनूठे व्यक्तित्व को प्रमाणित करती थी।

आचार्य श्री चातुर्मासकाल में मोती डूँगरी तथा तख्तेशाही रोड पर क्रमश. नवलखाजी एव बडेरजी के बगले पर भी विराजे। यहाँ भी धर्माराधन का ठाट रहा। अपराह्न में प. श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा ने जैन इतिहास पर विशद व्याख्यान दिए। पर्युषण पर्व पर लाल भवन मे एव 'प्रेम निकेतन' मोती डूगरी पर सात दिन नवकार मन्त्र का अखण्ड जाप चला।

१४ से १६ अक्टूबर तक विशिष्ट साधको का साधना-शिविर एवं ३० अक्टूबर से १ नवम्बर तक स्वाध्याय प्रशिक्षण शिविर का आयोजन हुआ। आचार्य श्री ने स्वाध्यायियो को ज्ञान एवं आचार के क्षेत्र मे आगे बढ़ने की प्रभावी प्रेरणा की तथा महिला स्वाध्यायी तैयार करने हेतु समाज का ध्यान आकृष्ट किया। अ भा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ, जोधपुर , अ भा महावीर जैन श्राविका सघ, मद्रास के वार्षिक अधिवेशन तथा अ भा. श्री जैन विद्वत् परिषद् द्वारा आचार्य श्री रत्नचन्द्र स्मृति व्याख्यानमाला और सामायिक सगोष्ठी के सफल आयोजन हुए।

इस चातुर्मास मे स्थानीय सघ ने तन, मन, धन से सेवा एव धर्माराधना के सकल्प को साकार किया। बरसाती झरनो की तरह दर्शनार्थी बधुओ का आवागमन जारी रहा, स्थानीय सघ पलक पावड़े बिछाए स्वागत सत्कार मे लगा रहा। अपने आराध्य आचार्य प्रवर के चातुर्मास की पूर्णाहुति पर दर्शनार्थ उपस्थित हुए देश के कोने-कोने के हजारो लोगो मे परस्पर सौहार्द और भ्रातृत्व-भाव सजीव हो उठा। चारो दिशाओ से आए लोगो के व्यापार और वाणिज्य, शिक्षा और रहन-सहन की जानकारी और आदान-प्रदान के साथ सयम पथ पर अग्रसर होने का सम्बल बढ़ा। देश के कोने कोने से आये लोगो मे परस्पर अपनेपन की जागृति हुई। हजारो लोग यह जानते और मानते थे कि गुरुदेव मेरे है/हमारे है और मै गुरुदेव का हूँ/हम गुरुदेव के है। आचार्य श्री के इस विराट् व्यक्तित्व को ऋग्वेद के शब्दो मे -'सहस्रशीर्षा पुरुष सहस्राक्ष' कहा जा सकता है।

२१ नवम्बर १९८३ को आचार्य श्री एवं सतो की विदाई वेला मे जयपुर का 'चौड़ा रास्ता' भी सकड़ा पड़ गया। लाल भवन से विहार कर आचार्य श्री मोती डूगरी एव सुबोध कॉलेज होते हुए कइयो को एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष एव जीवन पर्यन्त के लिए शीलव्रत कराते हुए २५ नवम्बर को उपनगर बजाजनगर के साधना-भवन मे पधारे। यहॉ श्रमण सघ के युवाचार्य श्री मधुकर मुनि जी म.सा के हृदयाघात से नासिक (महाराष्ट्र) मे देवलोक होने की सूचना मिली। सवेदना सभा मे युवाचार्य श्री के जीवन पर विस्तृत प्रकाश डालते हुए चतुर्विध सघ ने श्रद्धाजलि अर्पित की। आचार्यप्रवर की अनुज्ञा से मद्रास मे शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म सा द्वारा तीन वैरागिन बहनो को मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशी को भागवती दीक्षा प्रदान की गई। सुश्री पूर्णिमा, सुश्री सविता तथा सुश्री अजू का दीक्षा के पश्चात् नाम क्रमश. साध्वी ज्ञानलताजी, दर्शनलताजी एव चारित्रलताजी रखा गया।

• मुमुक्षु प्रमोद कुमार जी की दीक्षा

१५ दिसम्बर ८३ गुरुवार को विजय योग के शुभ मुहूर्त मे दोपहर सवा बारह बजे जयपुर के बालोद्यान रामनिवास बाग मे हजारो श्रद्धालुओ के मध्य आचार्य श्री ने श्रमणजीवन की सार्थकता का विवेचन करते हुए विरक्त बधु श्री प्रमोदकुमार जी मेहता (सुपुत्र श्री सूरजमलजी मेहता FCA एव श्रीमती प्रेमबाई मेहता, अलवर) को भागवती दीक्षा प्रदान की। अलवर के सुशिक्षित सुसस्कारित परिवार के इस उच्च शिक्षा प्राप्त युवक के मोक्ष-मार्ग मे अग्रसर होने के इस क्षण के साक्षी बन हजारों श्रद्धालु अपने को धन्य मान रहे थे एव साधनानिष्ठ गुरु के पावन सान्निध्य मे उनके सर्वतोभावेन समर्पण का यह स्वर्णिम सुअवसर अपलक दृष्टि से देख अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करे रहे थे। इससे पूर्व दीक्षार्थी प्रमोद कुमार की उत्कट वैराग्य भावना एवं अनूठे त्याग की अनुमोदना मे अ.भा श्री जैन रत्न

हितैषी श्रावक सघ, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, महावीर जैन श्राविका संघ, जयपुर श्रावक सघ आदि अनेक सस्थाओ की ओर से भावभीना अभिनदन किया गया। इस अवसर पर लम्बे समय से प्रतीक्षित 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग-३' की प्रति डॉ. डी. एस कोठारी को ससम्मान प्रदान कर विमोचित की गई। परमपूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य मे २२ दिसम्बर को नवदीक्षित श्री प्रमोदमुनिजी म.सा की बड़ी दीक्षा सम्पन्न हुई और उन्होने सामायिक चारित्र से छेदोपस्थापनीय चारित्र मे आरोहण किया। चारित्र आरोहण के इस अवसर पर डिस्ट्रिक्ट जज श्री गणेशचन्द जी सक्सेना ने आजीवन मद्यपान का त्याग किया तथा श्री जौहरीलाल जी पटवा, श्री दलपतराज जी सिंघवी जयपुर, श्री अमरचन्दजी लोढा, श्री मनमोहनचन्द जी लोढा नागौर, श्री महताब जी नवलखा, कमलजी मेहता, जयपुर एव श्री हरिप्रसादजी जैन महुआ ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

• अजमेर की ओर

३१ दिसम्बर को १३ किमी का लम्बा विहार कर आचार्य श्री बगरू होते हुए महला, गाड़ोता, पालू, गिधाणी, दूदू, पड़ासोली, दातड़ी, डीडवाना, किशनगढ़ आदि मे धर्मोद्योत करते हुए मदनगज पधारे। यहाँ श्रमणसघ के उपाध्याय श्री पुष्करमुनि मसा एव प रत्न श्री देवेन्द्र मुनि जी शास्त्री (पश्चात् आचार्य श्रमण सघ) अपने मुनि मडल सहित आचार्य श्री की अगवानी मे सामने उपस्थित हुए। यह सगम चतुर्विध सघ के लिए प्रमोदकारी था। दोनो महापुरुषो ने चरितनायक आचार्यप्रवर का गुणानुवाद करते हुए जीवन के विभिन्न स्नेहिल प्रसगो का उल्लेख किया। यहाँ से कालूसिह जी बाफना की डाइग फैक्ट्री पधारने पर बाफनाजी ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत पालन का नियम लेकर श्री चरणो मे अपनी आदर्श श्रद्धा अर्पित की। फिर यहाँ से आचार्य श्री १४ जनवरी मकर सक्रान्ति को १४ किमी का विहार कर गगवाना, घूघरा होते हुए अजमेर पधारे, जहाँ सन्त-सती मडल द्वारा आचार्यश्री का अपूर्व स्वागत किया गया। यहाँ शास्त्रीनगर मे आप मूलराज जी चौधरी के बगले विराजे।

आचार्य श्री की ७४ वी जन्म-जयन्ती पर ५७ सन्त-सतियो (प्रवर्तक प रत्न श्री कुन्दनमलजी मसा, प रत्न श्री सोहनलालजी मसा आदि ठाणा ५, मेवाड़सिंहनी महासती श्री जशकवरजी म.सा आदि ठाणा, महासती श्री कुसुमवतीजी मसा. आदि ठाणा) एव हजारो की सख्या मे उपस्थित श्रावको ने १७ जनवरी को अजमेर की महावीर कॉलोनी मे उसी बरगद के पेड़ के समीप एकत्रित हो आपके साधनामय जीवन का गुणगान किया, जहाँ लगभग ६४ वर्ष पूर्व आचार्यप्रवर की चारित्र साधना 'दीक्षा' का श्री गणेश हुआ था। इस अवसर पर राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक प्रान्तो के करीब ४० क्षेत्रो के लगभग ४००० श्रद्धालु श्रावक-श्राविका उपस्थित थे। मेवाड़सिहनी महासती श्री जसकवर जी मसा ने आचार्य श्री को जिनशासन का तीर्थराज बताते हुए फरमाया कि समाज की महान् हस्ती ने सस्कृति-रक्षण और मर्यादा-पालन मे बहुत बड़ा योगदान दिया है। ऐसे गुरुराज की मेरी एक जुबा क्या महिमा कर सकती है। प रत्न श्री मानमुनि जी मसा (वर्तमान उपाध्यायप्रवर) ने आचार्य देव को मिश्री की डली की उपमा से उपमित किया और कहा कि आपके जीवन की हर क्रिया एव अप्रमत्त भाव मिश्री की भाति मधुर है। वे कथनीय के साथ अनुकरणीय भी है।

चतुर्विध सघ ने आचार्यप्रवर को नाना उपमाओ से मण्डित किया। महासती श्री दिव्यप्रभा जी म.सा. ने जीव से शिव, नर से नारायण और आत्मा से परमात्मा को जोड़ने वाले गुरु की उपमा दी। पण्डित रत्न श्री सोहनलाल जी मसा (पश्चात् आचार्य) ने सामायिक और स्वाध्याय को घर-घर फैलाकर ज्ञान-क्रिया की ज्योति का शुभ सन्देश देने वाले चरितनायक आचार्यश्री की दीर्घायु की प्रार्थना की। महासती श्री कमला जी मसा., श्री वल्लभ मुनि जी, श्री

गौतम मुनि जी आदि ने अपनी भावाजलि व्यक्त की। प रत्न श्री हीरामुनि जी म सा. (वर्तमान आचार्य प्रवर) ने अजमेर नगर को चतुर्विध सघ-मिलन का जक्शन, मेला, तीर्थ और समवसरण बताते हुए सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र और सम्यक् तप रूप मार्गचतुष्टय की आराधना का अनूठा सगम-स्थल बताया और आराध्य आचार्य भगवन्त के चरणो मे अधिकाधिक चतुरंगी साधना का सकल्प करने का आह्वान किया।

परमपूज्य आचार्य भगवन्त सत-मुनिराजो व भक्तो के द्वारा व्यक्त हृदयोद्‌गारो को अनमने भाव से श्रवण करते हुए आत्मोत्थान का ही चिन्तन कर रहे थे। अपने मगल उद्बोधन मे आपने फरमाया—" गुण-ग्राम करने की अपेक्षा आप यदि व्रताराधन, तप-त्याग व प्रत्याख्यान अगीकार करते हैं व जिनवाणी के पावन सदेश को जीवन मे उतारने व जन-जन तक पहुँचाने का कार्य करते है तो यह आपके जीवनोत्थान व शासन प्रभावना का कारण होगा, यही आपकी सच्ची भेट होगी।" प्रवर्तक श्री कुन्दनमलजी म.सा के साथ पन्द्रह दिनो का सहवास बड़ा आनन्दप्रद एव परिवार सा रहा।

• मेड़ता होकर मारवाड़ भूमि में

श्रावको द्वारा 'गुरु हस्ती के दो फरमान सामायिक स्वाध्याय महान्' आदि उद्घोषो के बीच शिष्य-मडली सहित आचार्य श्री ३० जनवरी १९८४ को पुष्कर पधारे। वहाँ धर्मोद्योत कर आप तिलोरा, थावला, भैरुदा, होते हुए हुए मेवड़ा पधारे। यहाँ श्री मोतीलालजी राजपूत एव श्री भवरलालजी छाजेड़ ने सपत्नीक आजीवन शीलव्रत का नियम लिया। बड़ीपादु मे सामायिक सघ की शाखा स्थापित की गई। आप जहाँ कही भी पधारते, आपकी महनीय प्रेरणा से स्थानक मे सामूहिक सामायिक करने वालो की सख्या बढ़ती गई। फिर छोटी पादु, सेसड़ा, जड़ाउ, चामुण्ड्या फरसते हुए आप मेड़ता पधारे।

दक्षिण भारत की सुदूर पद-यात्रा के पश्चात् परम पूज्य आचार्य श्री का मारवाड़ मे यह प्रवेश अनन्य आस्था एव उमग के वातावरण मे सम्पन्न हुआ। अनेक क्षेत्रो के श्रावक-श्राविकाओ ने विनतियाँ प्रस्तुत की। इसी शृखला मे जोधपुर श्री सघ की ओर से न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल जी लोढा एव आशुकवि स्वाध्यायी श्री दौलतरूपचन्दजी भण्डारी द्वारा चातुर्मास हेतु हृदय को झकृत कर देने वाली काव्यमयी विनति प्रस्तुत की गई। गोटन, नागौर, भोपालगढ एव पीपाड़ के श्री सघो ने क्षेत्र-स्पर्शन हेतु विनति रखी।

मेड़ता मे त्रिदिवसीय बाल-सामायिक शिविर आयोजित किया गया। २० फरवरी १९८४ को प्रवर्तक श्री कुन्दनमलजी म सा के स्वर्गवास के समाचार पाकर हार्दिक श्रद्धाजलि दी गई तथा चार लोगस्स द्वारा कायोत्सर्ग किया गया। प्रवर्तक श्री शान्त स्वभावी, सरल परिणामी श्रमण सस्कृति के हिमायती एव निराडम्बरी सन्त थे। यहाँ श्री नेमीचन्दजी बाफना ने आजीवन शीलव्रत की प्रतिज्ञा ली।

चरितनायक यहाँ से कलरू, गोटन, हरसोलाव, नोखा (चादावता) रूण, खजवाणा आदि ग्रामो मे धर्मगगा प्रवाहित करते हुए पालड़ी (जोधा) पधारे। वहाँ ज्ञानगच्छीय महासतीजी श्री भँवरकवर जी म आदि ठाणा ८ आचार्य श्री के दर्शनार्थ पधारी।

७ मार्च १९८४ को पूज्य गुरुवर मूण्डवा फरस कर गेदतालाब, अट्यासन होते हुए नागौर पधारे, जहाँ शिष्यमंडली अगवानी हेतु उपस्थित हुई। ११ मार्च को श्री माणकमुनि जी म.सा. की पुण्यतिथि श्रावको द्वारा विविध तप-त्याग, सामायिक, स्वाध्याय के नियमो को स्वीकार करते हुए मनाई गई। फाल्गुनी चौमासी पर अनेक क्षेत्रो ने श्री

चरणों मे अपनी-अपनी विनतियाँ प्रस्तुत की। पूज्यपाद ने अहमदाबाद के लिए सन्तो के एक सिंघाडे के चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान की। यहाँ निकटवर्ती स्वधर्मी बन्धुओ का आवागमन बना रहा। ससद सदस्य श्री नाथूरामजी मिर्धा ने प्रवचन-सभा मे समाज की कुरीतियो को दूर करने हेतु बल दिया।

नागौर मे पूज्यपाद के विराजने से स्वाध्याय मडल की स्थापना, जैन पुस्तकालय की सुव्यवस्था आदि उल्लेखनीय कार्य हुए। आचार्य श्री के नागौर आगमन पर चातुर्मास की तरह तपस्याओ का ठाट रहा। सामूहिक दया, सामायिक की पचरगी, १२ व्रतधारण के अतिरिक्त आजीवन शीलव्रत भी ग्रहण किए गए एव वैरागिन बहन सुश्री निर्मला जी सुराणा की दीक्षा निश्चित होने की प्रसन्नता में सुराणा भाइयो ने अपनी विशाल भूमि श्री जैन रत्न श्रावक सघ को ट्रस्ट बना कर समर्पित की।

• दीक्षा-प्रसङ्ग

७ अप्रैल ८४ चैत्र शुक्ला षष्ठी को नागौर स्थित प्रेमजी सुनार की बाड़ी मे अपार जनसमूह के बीच आचार्य श्री ने सन्तवृन्द ठाणा ११, महासती श्री सुगनकवरजी आदि ठाणा ४, जयमल्लगच्छीया महासती श्री झणकार कवरजी आदि ठाणा ६, बहुश्रुत जी म सा की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री भीखा जी आदि ठाणा ४, पायचन्द गच्छ की महासती श्री सुमगला जी आदि ठाणा २ की उपस्थिति मे सोमपुरगोत्रीय विरक्त बधु हरिदास जी (यल्लपा) एव बाल ब्रह्मचारिणी विरक्ता बहन सुश्री निर्मला जी सुराणा (सुपुत्री श्री भवरलालजी एव श्रीमती किरणदेवी जी सुराणा, जोधपुर) को जैन भागवती दीक्षा प्रदान की। दीक्षा के इस पावन प्रसग पर जिला एव सत्र न्यायाधीश श्री नगराज जी मेहता ने नित्य सामायिक व्रत, पुलिस अधीक्षक श्री रामकिशन जी मीणा तथा उप पुलिस अधीक्षक श्री प्रेमनाथ जी ने सप्त कुव्यसन-परित्याग का व्रत लिया।

अपने-अपने क्षेत्रो मे पधारने हेतु अत्यत आग्रहपूर्ण विनतियो के होने पर भी आचार्य श्री ने अनुकूलता रहते वि सवत् २०४१ का चातुर्मास जोधपुर मे करने, अक्षय तृतीया पर पीपाड़ सिटी मे विराजने और बड़ी दीक्षा तथा महावीर जयन्ती कडलू मे करने के भाव साधु-मर्यादा मे फरमाए।

• पीपाड़ सिटी में अक्षयतृतीया

तदनुरूप रामनवमी को आचार्य श्री मेहलसर (ताउसर) की ओर विहार करते हुए फिडोद से कडलू पधारे और १३ अप्रैल को दशवैकालिक सूत्र के छज्जीवणी अध्ययन से श्री हरीशमुनि जी (पूर्व नाम यल्लपा जी) तथा सती निशल्यवती जी (पूर्व नाम निर्मला जी) को बड़ी दीक्षा प्रदान की। यहाँ से आचार्य श्री मुदियाड़, गोवा, वासनी, आसोप, वारणी, नाडसर आदि क्षेत्रो को अपने पाद विहार से पवित्र करते हुए भोपालगढ़ पधारे। यहाँ श्री सूरजराजजी ओस्तवाल एव श्री सोहनलालजी हुण्डीवाल ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को समृद्ध किया। भोपालगढवासियो को सम्बोधित करते हुए आचार्यप्रवर ने प्राचीन गौरव की स्मृति, परस्पर ऐक्य व सगठन का सन्देश देते हुए फरमाया –"**हाथों की पांचों अंगुलियाँ एक पंजे के रूप मे सक्षम और कार्यशील रहती हैं। एक अगुली कोई भी कार्य नही कर सकती।** आचार्य श्री रत्नचदजी म सा की क्रियोद्धार भूमि का यह क्षेत्र महापुरुषो के उपकार से उपकृत रहा है। आप सब परस्पर प्रेम से हिल मिलकर रहे तो धर्म प्रभावना के साथ भोपालगढ का गौरव सुरक्षित रह सकता है।"

यहाँ से विहार कर पूज्यपाद रतकूड़िया, खागटा, कोसाणा होते हुए पीपाड़ पधारे, जहाँ अक्षय तृतीया के

उपलक्ष्य मे २१ पारणार्थी तपस्वी भाई-बहनों के पारणे हुए। १४ मई को वैशाख शुक्ला चतुर्दशी को आचार्य श्री जयमल जी म.सा. की १८८ वी पुण्यतिथि पर लगभग २०० दयाव्रत हुए। चरितनायक ने आचार्यप्रवर श्री जयमलजी म.सा के जीवन पर प्रकाश डालते हुए फरमाया कि जीवन के सग्राम मे समता से विजयी बनना चाहिए। आचार्य श्री जयमलजी म.सा. साहस और सत्पुरुषार्थ के धनी थे। पूज्य श्री कुशलचन्दजी म.सा. के साथ उनका अविचल सम्बन्ध रहा। श्री ज्ञानचन्दजी, श्री धनराजजी मुथा, श्री मागीलाल जी प्रजापत आदि ने शीलव्रत अगीकार कर कृपा निधान के चरणो मे अपनी भेट अर्पित की।

• भोपालगढ में कुशलचन्दजी म. का द्विशताब्दी पुण्यतिथि समारोह

भोपालगढ़ मे आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे राजस्थान उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधिपति सुश्रावक श्री चादमल जी लोढ़ा के मुख्य आतिथ्य मे पूज्य श्री कुशलचन्द जी म.सा. के द्विशताब्दी पुण्य तिथि साधना-समारोह का समापन २० मई को त्याग-व्रत पूर्वक सम्पन्न हुआ, जिसमे श्री हीरामुनिजी, श्री ज्ञानमुनिजी, श्री गौतममुनिजी आदि सन्त-सती गण के अतिरिक्त सुश्री डॉ सुषमा जी गाग (वर्तमान मे श्रीमती सिंघवी), श्रीमती सुशीला जी बोहरा, श्री दौलत रूपचन्द जी भण्डारी, श्री रतनलाल जी बैद, श्री छोटूराम जी प्रजापत आदि ने पूज्य श्री कुशलचन्द जी म सा के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर सारगर्भित विचार प्रकट किए।

३७ वर्ष आड़े आसन नही सोने वाले श्री कुशलचन्द जी म.सा रत्नवश के मूलपुरुष थे। उनकी साधना, सेवा-भावना, अप्रमत्तता एव उनका निश्छल समर्पण-भाव रत्नवंश का वैसे ही आधार रहा जैसे वृक्ष की शोभा का आधार उसका मूल (जड़) होता है। इस अवसर पर उनकी स्मृति मे श्री कुशल जैन छात्रावास की घोषणा हुई जो उच्च शिक्षण के अभ्यासार्थी जैन छात्रो के लिए आज भी जोधपुर मे सचालित है। महासाधक गुरुदेव के साधनामय सान्निध्य मे आयोजित इस साधना समारोह के अवसर पर १२ दम्पतियो (श्री किशनलालजी, श्री सुगनचन्दजी ओस्तवाल, श्री सुगनचन्दजी , श्री दलीचन्दजी काकरिया, श्री सायरचन्दजी खीवसरा, श्री चम्पालालजी हुण्डीवाल, श्री शिम्भुलालजी चोरड़िया, श्री मागीलालजी छीपा, श्री रामसुखजी पुठिया, श्रीलालजी सरगटा, श्री सावतरामजी सुथार एवं श्री गगारामजी गहलोत) ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का नियम लेकर इस अवसर पर आदर्श प्रस्तुत किया। साधना कार्यक्रम के तहत नवयुवको मे व्यसनमुक्ति अभियान चलाया गया, जिसके अन्तर्गत धूम्रपान, चाय आदि व्यसनो का १७९ व्यक्तियो ने प्रत्याख्यान किया। भोपालगढ श्री सघ ने व्यसनमुक्ति कार्यक्रम के साथ २१ दिवसीय शान्तिपाठ एव नवकार मत्र जाप का आराधन किया। नई पीढ़ी के बालक-बालिका विनयशील, सदाचारी तथा जैन सिद्धान्तो के ज्ञाता बनकर भविष्य मे सामाजिक उत्क्रान्ति, नैतिक जागृति और जिनशासन की प्रभावना मे मूल्यवान योगदान दे सके, इसी लक्ष्य से आचार्य श्री की प्रेरणा से २७ मई से १५ दिवसीय बाल शिविर का आयोजन हुआ, जिसमे १३१ शिविरार्थियो ने भाग लिया। इसका समापन समारोह श्री पृथ्वीराज जी कवाड़ मद्रास के मुख्य आतिथ्य मे, श्री चम्पालाल जी कर्णावट मुम्बई की अध्यक्षता मे और श्री केसरीचन्द जी नवलखा जयपुर के विशिष्ट आतिथ्य मे सम्पन्न हुआ। शिविर की निम्नाकित विशेषताएँ रही-

१. प्रतिदिन आचार्यप्रवर से मार्गदर्शन एव तदनुसार क्रियान्विति।

२. शिविरार्थियो को तिक्खुत्तो के पाठ का शुद्ध उच्चारण तथा विधि सहित गुरुवन्दन करने का अभ्यास।

३. पद्मासन लगाकर नमस्कार मंत्र का ध्यान करने का अभ्यास।

४ चोल पट्टे, दुपट्टे आदि सामायिक के वेश मे सामायिक का अभ्यास।

५ शिष्टाचार, सदाचार, नियम एव अनुशासन पर विशेष बल।

६ सामायिक-प्रतिक्रमण के पाठो को शुद्धता के साथ पढ़ने का प्रशिक्षण।

शिविर मे बालक-बालिकाओ द्वारा निम्नाकित नियम लिए गए-

१ महीने मे कम से कम ५ सामायिक उपाश्रय मे आकर करना।

२ अष्टमी, चतुर्दशी को प्रतिक्रमण करना।

३ धूम्रपान एव नशे का आजीवन त्याग करना।

४ यथाशक्ति चाय, पान एव कन्दमूल का त्याग रखना।

५ प्रतिदिन स्वाध्याय करना।

• जोधपुर की ओर

भोपालगढ़ मे १० जून को आचार्य श्री पद्मसागरजी म नागौर से पूज्यपाद के दर्शनार्थ पधारे। ज्ञान-क्रिया के अद्भुत सगम 'गुणिषु प्रमोद' के मूर्त स्वरूप, साधना के साकार देवता, युग मनीषी आचार्य श्री के प्रति उनके हृदय मे अत्यन्त आदर, श्रद्धा व विनय-भाव था। पूज्यपाद के श्रीचरणो मे विराजकर उन्होने साधना के बारे मे मार्गदर्शन प्राप्त किया। १४ जून को भोपालगढ़ से विहार कर आचार्य श्री रतकूड़िया एव साथिन फरसते हुए पीपाड़ शहर पधारे। पूज्यपाद का दो दिवसीय अल्प प्रवास भी सुफलदायी रहा। १७ युवको ने पर्युषण मे स्वाध्यायी के रूप मे सेवा देने का नियम लिया व अनेक युवको ने धूम्रपान एव चाय आदि का त्याग किया।

यहाँ से सेठो की रिया, बुचकला होते हुए आचार्य श्री भसाली परिवार के आग्रह से पहली बार कूड़ पधारे। गाँव के कृषक, मुनियो की चर्या देखकर आश्चर्यचकित रह गए। उनके दर्शन और वीरवाणी श्रवण कर उन्होने भी अपने जीवन मे कुव्यसन-त्याग के महत्त्व को पहचाना। कूड से विहार कर पूज्यवर्य बीनावास, बिसलपुर, पालासनी, बनाड़ होते हुए जोधपुर पधारे।

१ जुलाई १९८४ को अगवानी हेतु सैकडो भक्तगण बनाड़ तक पहुँच गए। बनाड़ से पावटा (जोधपुर) पधारते-पधारते जनमेदिनी उमड़ पडी। १४ किमी के समूचे विहार मे भक्त समुदाय, विशेषत बहिनो एव युवको का उत्साह देखते ही बनता था। भक्तगण जैनधर्म की जय, शासनपति श्रमण भगवान् महावीर की जय, निर्ग्रन्थ मुनिमण्डल की जय, गुरु हस्ती के दो फरमान, 'सामायिक-स्वाध्याय महान्' के जय निनाद से देव, गुरु एव धर्म का जयगान करते हुए परमाराध्य गुरुदेव एव मुनिमण्डल के पदार्पण की आनन्दानुभूति को अभिव्यक्त कर रहे थे। पद-विहार मे अनेक भक्तप्रवर नगे पाव सवर-साधना मे चल रहे थे। व्यवस्था एव विहार मे भक्तो का अनुशासन सराहनीय था।

पावटा पधारते समय मार्ग मे श्री भवरलाल जी बागमार ने अपने आवास को पावन कराते हुए एक वर्ष कुशील सेवन का त्याग किया। गिडिया भवन मे अशेष जन समुदाय पूज्य गुरुदेव के दर्शन-वन्दन एव प्रवचन-पीयूष का पान करने के लिए एकत्रित हो गया। स्वाति के प्यासे चातक की भाति बाट जो रही अत्रस्थ वयोवृद्धा स्थविरा प्रवर्तिनी महासती श्री सुन्दरकवरजी म अपने सती-मण्डल के साथ श्रद्धाकेन्द्र आचार्यदेव के, सात वर्षों पश्चात् दर्शन

कर श्रद्धाभिभूत हो उठी। अखिल भारतीय श्री जैनरत्न हितैषी श्रावक संघ के कार्याध्यक्ष डा. सम्पतसिह जी भाण्डावत तथा चातुर्मास समिति के सयोजक श्री गणपतराज जी अब्बाणी ने अपार जनमेदिनी के साथ आचार्य श्री का भावभीने शब्दो से स्वागत किया।

आचार्यप्रवर ने प्रेरक उद्बोधन मे फरमाया –"आप सभी के हृदय मे भक्ति-भावना है। आपने मानसिक, वाचिक एव कायिक स्वागत तो किया ही, पर इसके आगे भी भक्ति है। मुनि-मण्डल के पदार्पण एव विराजने से आप अपने जीवन को ऊँचा उठाएँ। अपने आपको व्रत-ग्रहण, त्याग-प्रत्याख्यान एवं सामायिक-स्वाध्याय के प्रचार मे आगे बढाये, तभी मुनिमण्डल का सच्चा स्वागत होगा।" श्री पुखराज जी गिड़िया ने एक वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार कर त्याग-प्रत्याख्यान का शुभारम्भ किया।

तदनन्तर पूज्य श्री सरदारपुरा एवं घोड़ो का चौक पधारे। सरदारपुरा मे पारख भवन विराजने पर श्री छोटमलजी पारख ने एक वर्ष तक ब्रह्मचर्य-पालन का नियम लिया। व्याख्यान ओसवाल जैन छात्रावास मे हुआ। घोड़ो के चौक विराजते समय आचार्य श्री रायपुर हवेली मे विराजित ज्ञानगच्छीय वृद्ध सन्त श्री सोभागमलजी म.सा आदि मुनिमण्डल को दर्शन देने पधारे। दूसरे दिन प रत्न श्री घेवरचन्दजी म आदि सन्तवृन्द घोड़ो के चौक मे आचार्य श्री के दर्शनार्थ पधारे।

• जोधपुर चातुर्मास (संवत् २०४१)

पूज्यपाद ७ वर्ष की दीर्घ अवधि के अनन्तर जोधपुर पधारे थे। १३ वर्ष के अन्तराल के बाद आपके चातुर्मास का लाभ रत्नवश के पट्टनगर जोधपुर को प्राप्त हुआ था। जोधपुर के जैन-जैनेतर भक्त पूज्यपाद के चातुर्मासिक सान्निध्य से अपने जीवन-निर्माण व धर्म-प्रभावना की अनेक कल्पनाएँ मन मे सजोये तीव्र उत्सुकता से चातुर्मास प्रारम्भ की प्रतीक्षा कर रहे थे।

शुभ घड़ी आई। ६ जुलाई १९८४ को पूज्यप्रवर ने अपने चातुर्मास स्थल पावटा स्थित रेनबो हाउस के लिये घोड़ो का चौक से शिष्य-समुदाय के साथ विहार किया तो विहार के पूर्व ही सैकड़ो नर-नारी आराध्य गुरुदेव के विहार मे सम्मिलित होने हेतु उपस्थित थे। जयनाद के घोष जोधपुर के कोने-कोने मे पूज्यप्रवर के चातुर्मास की घोषणा कर रहे थे, नगर के कोने-कोने से श्रद्धालु भक्तो का हुजुम उमड़ पड़ा, रेनबो हाउस पहुँचते-पहुँचते विशाल जनमेदिनी उपस्थित थी। वृद्ध, प्रौढ और युवक ही नही जोधपुर के बच्चे-बच्चे मे अपने आराध्य गुरुदेव के प्रति अनन्त आस्था है। जोधपुर की बहिनो मे पूज्यपाद हस्ती के प्रति आस्था का कैसा सैलाब था, इसे प्रत्यक्षदर्शी ही अनुभव कर सकते हैं। आस्था के सैलाब से युक्त पूज्यपाद का यह चातुर्मासार्थ प्रवेश अनुपम था। मगल-प्रवेश के इस भव्य प्रसग पर आपने अपने आशीर्वचन मे फरमाया –"आप लोग जागे हुए तो है, मैं आपको चलाने आया हूँ, मजिल तो चलने पर ही तय होती है।" समाज-ऐक्य व सगठन का सन्देश देते हुए आपने फरमाया - 'पाँचो अगुलियो का उपयोग सहयोग पर निर्भर है। प्रत्येक अगुली का अलग-अलग कार्य है, वे परस्पर हस्तक्षेप नही करती, फिर भी इनमे परस्पर सहयोग व समन्वय समझने योग्य है। इसी प्रकार समाज के छोटे-बडे, पढे-लिखे, अनपढ अनुभवी, समर्थ-असमर्थ, सकोची-मुखर सभी सदस्य परस्पर सहयोग कर कार्य करे, इसी मे सघ, समाज व कार्य की शोभा है।'

१२ जुलाई को चातुर्मासिक चतुर्दशी के दिन परमपूज्य आचार्य श्री हस्ती ने अपनी पातकप्रक्षालिनी प्रवचन

सुधा मे फरमाया – "श्रवण-ग्रहण, धारण व आचरण मे सर्वाधिक महत्त्व आचरण का है। धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्र मे ढिलाई और आलस्य छोड़ उत्साह एवं दृढता से आगे बढना होगा, तभी समाज के स्तर पर स्वाध्याय की गतिविधियाँ आगे बढेगी।"

चातुर्मास मे समय-समय पर पूज्यपाद ने अपनी पीयूषपाविनी वाणी के माध्यम से जिनवाणी की पावन-सरिता प्रवाहित करते हुए विविध विषयो पर अपने हृदयोद्बोधक विचार व्यक्त कर श्रोताओ को धर्म के सम्यक् स्वरूप का बोध दिया, साथ ही जिनशासन प्रभावना व समाजोन्नति विषयक प्रेरणाए भी की। श्रावण कृष्णा द्वितीया, रविवार को प्रवचन सभा मे भक्तगण विशाल सख्या मे पूज्यपाद की पातक प्रक्षालिनी भवभयहारिणी जीवन निर्माणकारी वाणी सुनने को उपस्थित थे। इस धर्मसभा मे राजस्थान उच्च न्यायालय के पाच न्यायाधिपति व सभागीय आयुक्त भी उपस्थित हो आपका मार्गदर्शन पाने को उत्सुक थे। अन्याय, अनीति, व्यसन एव कदाचार से सामान्य जन की रक्षा मे राजनेता, न्यायाधिपति एव धर्माचार्य के लक्ष्य की समानता का उल्लेख करते हुए पूज्यप्रवर ने फरमाया–"राजनेता एव न्यायाधिपति दण्ड-व्यवस्था मे पाप दबाने का कार्य करते है, जबकि धर्माचार्य पापी का मन बदल कर उसे पाप से सर्वथा अलग होने की प्रेरणा करते है।" दीपावली के दिन प्रेम व स्नेह का दीपक ज्योतित करने की प्रेरणा देते आपने फरमाया–"स्वधर्मी भाई को अपने सगे भाई की भाति समझो। स्वधर्मी की कमी को फैलाओ मत, मिटाओ।"

भक्तो का पुरुषार्थ जगाते हुए आपने भाद्रपद शुक्ला द्वितीया को अपने मगल प्रवचन मे फरमाया– "साधना मे गुरु निमित्त होता है, किन्तु कर्म स्वय को ही काटने होते है।" सम्वत्सरी महापर्व पर आपने आत्म-शोधन की प्रेरणा तो दी ही, साथ ही इस अहिंसा पर्व पर नारी-वर्ग के प्रति सामाजिक हिसा के प्रतीक दहेज-त्याग की प्रेरणा भी की।

परम पूज्य आचार्य भगवन्त पचाचार व साधुमर्यादा की कठोरता से पालना के हिमायती थे। अपने स्वय के जीवन मे सकारण दोष भी आपको इष्ट नही था। श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को श्रवणेन्द्रिय मे फुसी की सफाई हेतु टार्च से कान के अन्दर देखने को उद्यत डाक्टर पुरोहित को निषेध करते हुए आपने फरमाया–"आवश्यक हो तो आप धूप मे देख सकते है।" दोष-सेवन से बचने को सजग एव निज पर अनुशासन करने वाला महापुरुष ही सघ का शास्ता बन सकता है।

एक सम्प्रदाय के आचार्य होते हुए भी पूज्यपाद के विराट् व्यक्तित्व से सभी धर्म-सघ प्रभावित थे। आपके सामायिक स्वाध्याय-सन्देश व शासन-प्रभावना हेतु आपके प्रबल पुरुषार्थ, आपकी अप्रतिम प्रतिभा, साधनातिशय व प्रभावक व्यक्तित्व से सभी चमत्कृत थे। पर्युषण के पश्चात् निमाज की हवेली मे विराजित श्रमण सघीय श्री रूपमुनि जी म सा , श्री सुकनमुनिजी म सा सावत्सरिक क्षमापना हेतु पधारे। भाद्रपद शुक्ला ८ को गाधी मैदान मे विराजित तेरापथ सघ के आचार्य श्री तुलसी के विद्वान् शिष्य श्री महाप्रज्ञ भी क्षमापना हेतु पधारे। इसी दिन मूर्तिपूजक परम्परा की प्रभावक महासती जी श्री विचक्षण श्री जी की शिष्या महासती जी सुलोचना श्री जी आदि ठाणा ६ भी क्षमापना हेतु पधारी।

चातुर्मास मे कई विशिष्ट व्यक्तियो ने युगमनीषी आचार्य पूज्य हस्ती के पावन दर्शन कर उनसे मार्गदर्शन प्राप्त किया। प्रख्यात विद्वान प्रो कल्याणमलजी लोढा आपसे अपने प्रश्नों का समाधान प्राप्त कर प्रमुदित हुए। २ अक्टूबर १९८४ को जोधपुर के सासद व केन्द्रीय खेल उपमत्री श्री अशोक जी गहलोत आपके पावन दर्शन व

मगल आशीर्वाद हेतु उपस्थित हुए। पूज्यपाद ने उन्हें अहिंसा का सन्देश देते हुए फरमाया—“राजस्थान जीव-दया उपासक सात्त्विक प्रान्त रहा है। यहाँ हिंसा का प्रसार न हो, परस्पर सद् भाव कायम रहे, इस ओर शासको को सजग रहना है।” ३० अक्टूबर १९८४ को भारत की प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी की हत्या से समूचे राष्ट्र के अन्य हिस्सो की भाति इस नगर मे भी वातावरण शोकमग्न था। दया, अनुकम्पा, सौहार्द व करुणा के सदेशवाहक पूज्य हस्ती ने जैन समाज के माध्यम से राष्ट्र को सन्देश दिया कि हिंसा व प्रतिहिसा से हिंसा ही बढती है। अहिंसा से ही राष्ट्र मे शान्ति सम्भव है। कोई भी मत, पथ या शास्त्र हिंसा का पाठ नही पढाता।

ज्ञानसूर्य पूज्य हस्ती के इस चातुर्मास मे ज्ञानाराधना के महनीय प्रयास हुए। १२ से १४ अक्टूबर तक ‘श्रावकधर्म एव वर्तमान सामाजिक स्थिति’ विषय पर त्रिदिवसीय विद्वद् गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसमे ५० शोध पत्र पढे गये। सेवामन्दिर रावटी के सचालक, क्रियानिष्ठ विद्वान् एव पूज्यप्रवर के प्रति अनन्य श्रद्धानिष्ठ समाज सेवी श्री जौहरीमल जी पारख ने सगोष्ठी का उद्घाटन किया। सगोष्ठी के समापन पर ज्ञान-क्रिया-संगम आचार्य भगवन्त ने विद्वानो को नियमित स्वाध्याय, मौन व सामूहिक रात्रि-भोजन निषेध के नियम करा कर उन्हे क्रियानिष्ठ जीवन जीने का जीवन सूत्र दिया।

आचार्य श्री रत्नचन्द्र स्मृति व्याख्यान माला में डॉ इन्दरराज वैद का ‘आदर्श जीवन के सूत्रकार सन्त तिरूवल्लुवर’ विषयक व्याख्यान महत्त्वपूर्ण रहा। इसकी अध्यक्षता जोधपुर विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डॉ एस.एन.मेहरोत्रा ने की। कुलपति डॉ मेहरोत्रा ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे विद्वत् परिषद् की जैन-विद्या प्रोत्साहन छात्रवृत्ति एव ज्ञान प्रसार पुस्तकमाला योजना को उपयोगी बताया। डॉ मेहरोत्रा ने जोधपुर विश्वविद्यालय मे सस्कृत एव दर्शनशास्त्र विषयो मे एम.ए. स्तर पर जैन धर्म-दर्शन विषयक वैकल्पिक प्रश्न पत्र रखने की घोषणा की।

१४ अक्टूबर से एक सप्ताह का स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर एव १९ से २१ अक्टूबर तक तीन दिनो का स्वाध्यायी सम्मेलन आयोजित हुआ। शिविर एव सम्मेलन का उद्घाटन क्रमश श्री रणतजीत सिंह जी कूमट (आई ए एस) एव डॉ सम्पतसिंह जी भाण्डावत ने किया। शिविर में मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एव राजस्थान के ५८ स्वाध्यायियो ने भाग लिया। समापन के अवसर पर आचार्य श्री ने स्वाध्यायियो को अग्राङ्कित नियम कराये—१ सभी प्रकार के व्यसनो का त्याग, २ दहेज ठहराव नही करना ३. बारातो मे नाच नही करना तथा नाच होने वाली बारात मे शामिल नही होना ४ मृत्यु भोज नही करना तथा उसमे नही जाना। ५ होली पर रग एव दीपावली पर पटाखे नही चलाना। स्वाध्यायियो ने नियमित सामायिक-स्वाध्याय के भी नियम लिए। शिविर के समापन की अध्यक्षता एड्वोकेट हुकमीचन्दजी मेहता ने की। स्वाध्याय सघ के सयोजक श्री सम्पतराजजी डोसी सहित अनेक वरिष्ठ स्वाध्यायियो एव सामाजिक कार्यकर्ताओ को सम्मानित किया गया। तरुण जैन के सम्पादक श्री फतहसिंह जी जैन को भी उल्लेखनीय सेवाओ के लिए प्रशस्तिपत्र प्रदान किया गया। डॉ. सम्पतसिंह जी भाण्डावत अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ के नये अध्यक्ष मनोनीत हुए । निवर्तमान अध्यक्ष प्रबुद्ध चिन्तक श्री नथमलजी हीरावत एव उनके सहयोगियो द्वारा की गई सघ-सेवा के उल्लेख के साथ सघ का अधिवेशन सम्पन्न हुआ।

चातुर्मास मे दया, सवर व तपाराधन के उल्लेखनीय कीर्तिमान बने। स्वाध्यायी सुश्रावक श्री सम्पतराज जी बाफना ने चातुर्मास के प्रारम्भ से ही पूर्ण मौन के साथ सवर की आराधना से अपने जीवन को भावित किया, कर्मठ सेवाभावी सुश्रावक श्री कुन्दनमलजी भसाली ने मौन सहित तप व सवर-साधना का आदर्श प्रस्तुत किया। इस चातुर्मास काल मे कुल २७ मासक्षपण तप सम्पन्न हुए। ३५ वर्षीय युवारत्न श्री मूलचन्द जी बाफना ने मासक्षपण कर

श्रावक वर्ग का प्रतिनिधित्व किया, शेष २६ मासक्षपण बहिनो ने किए। छह मासक्षपण के पूर के दिन ११ अगस्त को नगर मे सभी कत्लखाने बन्द रहे व अबोध मूक जीवों को अभय दान मिलने से अहिसा प्रतिष्ठित हुई। दिनांक १२ अगस्त को 'सामायिक दिवस' के अवसर पर कभी सामायिक नही करने वाले युवा-बधुओ ने भी सामायिक का आराधन कर गुरु हस्ती के सामायिक सन्देश को जीवन मे अपनाया। सवर-साधना के रूप मे इस दिन ५०० दयाव्रत हुए। यह चातुर्मास २७ मासक्षपण तप, २५० अठाई तप, ६०० आयम्बिल एव पर्युषण मे ग्यारह रगी दया पौषध के आराधन से सम्पन्न हुआ। २७ दम्पतियो ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को शील सुवास से सुरभित किया।

चातुर्मास अवधि मे आप ज्वरग्रस्त हुए, स्वास्थ्य चिन्ताजनक हो गया। आराध्य गुरुदेव के स्वास्थ्य की स्थिति से भक्त समुदाय व सघ के कार्यकर्ता विचलित थे। उनके मन मे अनिष्ट आशका के अनेक सकल्प-विकल्प जन्म लेने लगे। शिष्य-परिवार भी गुरुदेव के स्वास्थ्य को लेकर चिन्तित था। प रत्न श्री हीरामुनि जी (वर्तमान आचार्य प्रवर) ने आपके स्वास्थ्य को लेकर चतुर्विध सघ की चिन्ता व्यक्त की तो आपने फरमाया - 'अभी मेरे सथारे का समय नहीं आया है।' तभी आपने अपने सथारा-स्थल के कुछ सकेत बताए, जिन्हे प मुनि श्री द्वारा अपनी दैनन्दिनी मे अकित कर लिया गया। कहने की आवश्यकता नही कि निमाज के सुशीला भवन मे ये सारे सकेत यथार्थ रूप मे मिले।

स्वास्थ्य की विषम स्थिति मे भी धीर-वीर-गम्भीर पूज्यपाद के मन मे कोई ऊहापोह नही था। भेदज्ञान विज्ञाता यह महापुरुष तो आत्म-चिन्तन मे लीन था -"**काया का पिंजर ने पछी, मत घर मान खरा।**" हे आत्मन् पछी! तूने कर्मों के वशीभूत इस देह पिंजर को धारण कर रखा है, वस्तुत यह तेरा घर नही है, तू तो अजर-अमर-अक्षय-अव्याबाध मोक्ष नगर का वासी है।

तन मे व्याधि, पर मन मे अपूर्व समाधि थी। आपका चिन्तन था-"**रोग शोक नही देते, मुझे जरा मात्र भी त्रास, सदा शान्तिमय मै हूँ, मेरा अचल रूप है खास**"। ये रोग इस विनश्वर देह को त्रास दे सकते है मुझे कोई कष्ट नही पहुँचा सकते है, क्योकि मै तो अक्षय शान्ति का भडार हूँ, सुख-दु.ख सभी परिस्थितियो मे सदा अविचल रहने वाला अविनाशी आत्मा हूँ। आत्मचिन्तन के तेज से दीप्त आनन पर अपूर्व शान्ति का दर्शन कर चिकित्सकगण विस्मय विमुग्ध थे। शारीरिक असमाधि मे आत्म-समाधि का यह अपूर्व नजारा देख वे सहज ही योगिराज के चरणो मे श्रद्धावनत हो धन्य-धन्य कह उठते। आत्म-बल, समाधि एव उपचार से आपने त्वरित स्वास्थ्यलाभ प्राप्त किया। आपके स्वास्थ्य-लाभ से भक्तो की समस्त आशकाए दूर हुई और सघ मे हर्ष की लहर दौड़ गई।

३१ अक्टूबर १९८४ को भारत की प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी की हत्या के पश्चात् फैली हिंसा के प्रसग से कर्त्तव्यबोध कराते हुए आपने फरमाया—

"प्रतिशोध के वातावरण मे यदि कोई अविवेकपूर्ण कदम उठाया जाता है तो वह सदैव हानिकारक होता है। यह देश की खुशनसीबी है कि पक्ष और विपक्ष के सब लोग चाहते है कि देश मे शाति हो, लोग मिल-जुल कर रहें, देश का अहित न हो। हम साधक भी यही चाहते हैं कि सभी लोग सहयोग की भावना से कार्य करे और देश मे शाति बनाये रखे। "

"अगर देश मे शाति होगी तो धर्म-साधना मे भी शाति रहेगी। ठाणाग सूत्र के अनुसार राष्ट्र के शासक के दिवगत होने पर अस्वाध्याय होती है। बुधवार को जब हमे दिन मे यह सूचना मिली तो हमने शास्त्रों का स्वाध्याय

बद कर दिया। धर्म-साधक देश से अलग हो, ऐसी बात नही है। धर्म साधक चाहते है कि देश मे शाति हो, देश कल्याण के रास्ते पर चले। आप जानते हैं कि सर्दी के समय गर्म साधन की आवश्यकता होती है और गर्मी के समय ठंडे साधनो की। गर्मी की वेदना शांत करने के लिए ठंडा उपाय किया जाता है। आज देश मे भी गर्मी है, अत· प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि वह हरेक के मन मे स्नेहामृत का सिंचन करे। इस उफान को शात करने के लिये सभी समाज के लोगों का सहयोग आवश्यक है।" "देश की शांति बनाये रखने मे सबसे सद्भावमय आचरण जैनियो को करना होगा। जैन समाज आगे आवे और देश मे शाति कायम करने मे अपना सहयोग दे। जैन धर्म की शिक्षा मात्र जैनियो के लिये ही नही अपितु सपूर्ण विश्व के लिये है।"

"देश को आजादी अहिंसा से मिली, अत देश का प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान हो, सिक्ख हो या ईसाई हो, ऐसे समय मे उसका कर्त्तव्य है कि देश मे शाति कायम करने मे उत्तेजना से बचा रहे।"

रेनबो हाउस मे यह ऐतिहासिक चातुर्मास सम्पन्न कर विशाल जनमेदिनी की उपस्थिति मे मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को पूज्यपाद विहार कर महामन्दिर पधारे। यहाँ आपने अपने प्रवचन मे जोधपुरवासियो को स्वाध्याय का सन्देश देते हुए फरमाया—"सन्तों के जाने के पश्चात् उनकी वाणी एव धर्म क्रिया को न भूले। निराकार उपासक सिक्ख, आर्यसमाजी एव मुस्लिम बन्धुओ की तरह शास्त्र को सम्मुख रख कर स्वाध्याय व साधना करे। जैसे-सूरदास ने हाथ छुडाकर जाने पर भी दिल से इष्ट भक्ति को नही जाने दिया, उसी प्रकार भक्ति को साधना का अग समझे।"

महामन्दिर से करुणाकर गुरुदेव मुथाजी का मन्दिर विराज कर घोड़ो का चौक पधारे। यहाँ मार्गशीर्ष शुक्ला द्वितीया को आचार्य श्री पद्मसागर जी म. आपके दर्शनार्थ व सुख-शान्ति पृच्छा हेतु पधारे। घोडो का चौक के अनन्तर पूज्यपाद निमाज की हवेली, सिंहपोल, कन्या पाठशाला, उदयमदिर फरस कर पावटा पधारे। २८ नवम्बर १९८४ मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठी सवत् २०४१ बुधवार को यहां करुणाकर गुरुदेव के सान्निध्य मे बालब्रह्मचारिणी मुमुक्षु बहिनो सुश्री निर्मला जी पीपाड़ा (सुपुत्री श्री घीसूलालजी पीपाड़ा, बल्लारी) एव सुश्री सुशीला जी चौपड़ा (सुपुत्री श्री भवरलालजी एव श्रीमती बिदामबाई जी चौपड़ा, जोधपुर) की भागवती श्रमणी दीक्षा त्याग, वैराग्य एव उमग भरे वातावरण मे सम्पन्न हुई। दीक्षा समारोह मे साध्वी प्रमुखा प्रवर्तिनी महासती श्री सुन्दरकवर जी म सा., उपप्रवर्तिनी महासती जी श्री बदनकवर जी म सा आदि ठाणा १८ का सान्निध्य भी प्राप्त था। दीक्षा समारोह मे ज्ञानगच्छीय प. रत्न श्री घेवरचद जी म सा ठाणा ५ व महासतीजी श्री भीखाजी, सुमतिकवर जी आदि ठाणा ८ का आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ। मुमुक्षु बहिनों के अभिनिष्क्रमण के इस महान् प्रसंग पर वीरपिता श्री घीसूलालजी पीपाड़ा, वीरपिता श्री भवरलालजी चौपड़ा व सुश्रावक श्री चम्पालाल जी बागरेचा ने सदार आजीवन शीलव्रत अगीकार कर सच्चा त्यागानुमोदन किया। बड़ी दीक्षा के उपरान्त नव दीक्षित महासती द्वय के नाम क्रमश. नलिनी प्रभा जी म सा एव सुश्रीप्रभाजी म.सा. रखा गया।

गुरुभक्त श्रावक न्यायाधिपति श्री श्रीकृष्णमलजी सा लोढा ने करुणाकर गुरुदेव के अपने आवास पर विराजने की खुशी मे आजीवन शीलव्रत अंगीकार कर श्रद्धाभिव्यक्ति की। यहा से पूज्यप्रवर महावीर भवन, नेहरु पार्क विराजे। यहा दर्शनार्थ उपस्थित ७ विरक्त बहिनो को आपने दृढता पूर्वक राग से विराग की ओर बढ़ने की प्रेरणा की। मौन एकादशी के दिन निष्ठावान भक्त श्री दौलतमलजी चौपड़ा, श्री सायरचदजी काकरिया एव श्री शान्तिचन्दजी भण्डारी ने सदार आजीवन शीलव्रत अंगीकार कर अपने जीवन को सयमित बनाया। यहाँ जैन दर्शन के मूर्धन्य विद्वान् डॉ. नथमल जी टाटिया आपके दर्शनार्थ उपस्थित हुए एव विभिन्न विषयो पर आगमो के तलस्पर्शी

ज्ञाता ज्ञानसूर्य चरितनायक से वार्ता कर प्रमुदित हुए।

कोठारी भवन मे महासती मडल को उद्बोधन देते हुए पूज्य चरितनायक ने फरमाया कि संघरक्षा हेतु सती मण्डल का योगदान भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना सन्तों का। यहा से विहार कर आप शास्त्रीनगर पधारे व श्री सोहनराजजी मेहता (हक्कू सा) के बगले विराजे।

शास्त्रीनगर से पूज्यपाद सरदारपुरा, प्रतापनगर, सूरसागर आदि उपनगरो मे धर्मोद्योत करते हुए रावटी पधारे। यहाँ आपने क्रियानिष्ठ विद्वान श्री जौहरीमलजी पारख के सेवा मन्दिर पुस्तकालय का अवलोकन किया। यहाँ से पूज्यप्रवर पावटा, घोड़ो का चौक फरसते हुए महावीर भवन पधारे।

- हीरक जयन्ती एव ६५ वी दीक्षा जयन्ती

६ जनवरी १९८५ पौष शुक्ला चतुर्दशी को पूज्य आचार्य हस्ती का ७५ वा जन्म-दिवस हीरक जयन्ती के रूप मे तप-त्याग के विविध-आयोजनो के साथ मनाया गया। हीरा कठोरता एव आलोक दोनो का ही सूचक है। परम पूज्य गुरुदेव जहाँ एक ओर सयम-पालन एव अनुशासन मे हीरक मणि की तरह कठोर थे, उसमे कोई शिथिलता उन्हे ग्राह्य नही थी, वही उनका जीवन साधना की चमक, आराधना की दमक व गुण सौरभ से देदीप्यमान था। ज्ञानसूर्य पूज्य हस्ती जिनशासन के जाज्वल्यमान दिवाकर एव रत्नवश परम्परा के देदीप्यमान रत्न थे। पूज्य सतवृन्द, महासती वृन्द व श्रावक-श्राविकाओ ने सघशास्ता, चरित्र तेज से तेजस्वी एव ज्ञान-आलोक से ज्योतिर्मान, पूज्य आचार्य हस्ती के साधनामय जीवन की विभिन्न विशेषताओ का गुणानुवाद करते हुए शतायु होने की मगल कामना की। साधना के दिव्य आलोक पूज्यप्रवर के हीरक जयन्ती के इस प्रसग पर श्री सुल्तानमलजी सुराणा, श्री उम्मेदराजजी गाग, श्री दीपचन्दजी कुम्भट, श्री दशरथमलजी भडारी व श्री नारायण स्वरूप जी दाधीच ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर शील के तेज से अपने जीवन को दीप्तिमान बनाया। इस अवसर पर करुणाकर गुरुदेव ने अपने प्रेरक पावन उद्बोधन मे व्यक्ति और समाज को आगे बढाने के चार सूत्रों का निरूपण किया। आत्म [illegible] शिक्षा, [illegible] [illegible] और सेवा, इन चार गुणों का [illegible] [illegible] [illegible]

२३ जनवरी १९८५ माघ शुक्ला द्वितीया को महावीर भवन, नेहरु पार्क मे आपकी ६५ वी दीक्षाजयन्ती ज्ञान, दर्शन व चारित्र की आराधना के साथ आयोजित की गई। इसके ६५ वर्ष पूर्व इसी दिन बालक हस्ती जिनशासन मे 'णमो लोए सव्व साहूण' के पद पर आगे बढ़ कर जैन जगत मे द्वितीया के चन्द्र के रूप मे शोभित हुए थे। साधु, साध्वी, श्रावक व श्राविका इस चतुर्विध सघ मे आज ये ६५ वर्ष की दीक्षा सम्पन्न साधना निष्ठ महापुरुष ग्रह, नक्षत्र व तारो के बीच पूर्णचन्द्र की भाति सुशोभित थे व भव्य जीवो को ही नही, प्राणिमात्र को अपने सुखद सान्निध्य की शीतल छाया प्रदान कर रहे थे। अद्भुत तेजस्विता-सम्पन्न पुण्यनिधान आचार्य भगवन्त के पावन दर्शन व वन्दन कर कृतार्थ जनसमूह, आपकी प्रवचन सुधा का पान करने को आतुर था। उत्सुक श्रद्धालु सघ को अपनी भवभयहारिणी पातकप्रक्षालिनी पीयूषपाविनी वाणी से पावन करते हुए भगवन्त ने फरमाया - "जयन्तियाँ स्नेहानुराग की प्रतीक हैं, मानव द्विजन्मा है, जिसका प्रथम जन्म मातृकुक्षि से प्रकट होना तथा दूसरा जन्म गुरुजनो से सस्कारित होना है। लाखो वर्षो का जीवन भी बध का कारण बनकर व्यर्थ हो जाता है, किन्तु जिस वक्त गुरुजनो के चरणो में व्रत ग्रहण करने का समय आता है, वह क्षण धन्य हो जाता है। असयमी व्यक्ति को सयम-धन प्रदान करते हुए गुरु उसे जीवन मे कठिनाइयो से भयाक्रान्त न होने का आशीर्वाद देते है कि साधक कही अटके नही, भटके नही। पूज्यपाद गुरुदेव

के मंगल आशीर्वाद के प्रताप व उनके पावन शिक्षा सूत्रों से ही मेरे जीवन का निर्माण हुआ है।"

सुदीर्घ सयम-जीवन के धनी, निरतिचार साधना के पालक आचार्य हस्ती के ये विनम्र उद्गार उनकी उत्कट गुरुभक्ति, श्रद्धा, समर्पण एव विनय के साथ इस बात के परिचायक हैं कि उनके जीवन मे सर्वाधिक महत्त्व किसी बात का था तो वह है सयम। वस्तुत सयमविहीन जीवन मृत्यु से भी बदतर है, असयम मे व्यतीत सभी रात्रियॉं सभी घडियाँ व सभी क्षण व्यर्थ हैं। श्रमण भगवान महावीर ने उत्तराध्ययन सूत्र मे अपनी देशना मे फरमाया है –

अधम्म कुणमाणस्स, अफला जंति राइओ।

यहॉं से पूज्यपाद कोठारी भवन पधारे जहॉं डॉ. शिव मुनिजी (सम्प्रति श्रमण सघ के आचार्य) व प रत्न श्री मूलमुनिजी ने आपके पावन दर्शन किए व सेवा का लाभ लिया।

• पॉंच मुमुक्षुओं की दीक्षा

३१ जनवरी १९८५ माघ शुक्ला दशमी गुरुवार का शुभ दिन, रेनबो हाउस स्थान, आचार्य श्री, सन्तमडल तथा प्रवर्तिनी श्री सुन्दरकवर जी म सा एव सतियो सहित ४३ सत-सतियो का सान्निध्य, प्राय २५ से अधिक क्षेत्रो के श्रीसघो की उपस्थिति, मगलाचरण एव दीक्षार्थी भाई-बहनो के अबाध सयमी जीवन की मगल-कामना करती सभा, श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफना का सचालन, सब कुछ दिव्य और अद्‌भुत लग रहा था, और ऐसे मे हुई इन पॉंच मुमुक्षुओ की भागवती दीक्षा-१ श्री दुलेहराज जी सिघवी, पाली २ सुश्री विमला काकरिया, मद्रास ३ सुश्री इन्दिरा जैन भनोखर, अलवर ४ सुश्री सुनीता जैन सहाड़ी, अलवर, ५ सुश्री मीना जैन, हिण्डौन। दीक्षोपरान्त नव दीक्षित साधको के क्रमश श्री दयामुनिजी, विनयप्रभाजी, इन्दिराप्रभाजी, शशिप्रभाजी एव मुक्तिप्रभाजी नाम दिए गए। इस अवसर पर शिक्षा-दीक्षा समिति के सयोजक श्री चम्पालालजी धारीवाल पाली, कर्मठ समाजसेवी श्री भवरलालजी बाघमार मद्रास, श्री सूरजमल जी मेहता अलवर, कुशल वैद्य श्री सुशील कुमारजी जैन जयपुर एव श्री हरिप्रसादजी जैन मण्डावर को उल्लेखनीय सघ-सेवा के लिए संघ द्वारा सम्मानित किया गया।

स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारण से पूज्यपाद का विराजना जोधपुर मे ही रहा, तथापि आप किसी एक क्षेत्र मे न विराजकर सरदारपुरा, पावटा, भाण्डावत भवन आदि विभिन्न स्थानों पर धर्मोद्योत करते रहे। पूज्य गुरुदेव सदैव सघ को प्रमुख समझते हुए व्यक्ति को इसकी एक इकाई मात्र मानते थे। गुरुदेव का दृष्टिकोण था कि व्यक्ति सघ-सिन्धु का एक बिन्दु मात्र है। ९ फरवरी ८५ को पावटा प्रथम पोलो मे महासती-मण्डल ने पूज्यपाद के श्री चरणो मे प्रश्न किया कि भगवन्! व्यक्ति की उन्नति, प्रतिष्ठा, यशकीर्ति की अभिलाषा अच्छी है या सघ की उन्नति मे उन्नति मानना अधिक उपयुक्त है। सघनिष्ठ पूज्यप्रवर ने सहज समाधान करते हुए फरमाया–"महासती जी ज्ञानकवरजी, इन्द्रकवरजी, धनकवरजी, लालकवरजी, राधाजी, केसर कवरजी आदि अनेक महासतिया व स्वामीजी चन्दनमलजी म सा आदि बीसियो संत चले गये, लेकिन वे सघ की उन्नति मे तत्पर रहे, अत सघ आज भी कायम है। व्यक्ति न रहा है, न रहेगा, अत: संघ बड़ा है, इस सिद्धान्त पर चलने की जरूरत है।"

• बालोतरा होकर पाली

जोधपुर से विहार के क्रम मे ११ मार्च को पूज्यपाद शास्त्रीनगर पधारे । यहाँ श्री कोमलचन्दजी मेहता ने सपत्नीक आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को सयमित किया। पालगाव मे श्री जतनराजजी मेहता, मेड़ता ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर श्रद्धा समर्पित की। पाल से बोरानाडा दूरी कम , लुणावास होकर धवा

पधारे। यहाँ भोपालगढ़, पीपाड़ आदि क्षेत्रों के सघ आगामी चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुए। भोपालगढ़ और पीपाड़ क्षेत्र के सघ स २०२० की भाति एक दूसरे के प्रतियोगी थे। चरितनायक ने दोनो क्षेत्रो को बराबर तराजू मे रखते हुए इस बार भोपालगढ को चातुर्मास की वरीयता प्रदान करते हुए स्वीकृति फरमायी। यहाँ से परिहारो की ढाणी, चिंचड़ली आदि मार्गस्थ गावो को अपनी पद रज से पावन करते हुए पूज्यपाद आगोलाई पधारे। आगोलाई गाव का जन-जन पूज्यप्रवर के प्रति श्रद्धालु है। आपकी महनीय प्रेरणा से अनेको व्यक्तियो ने सप्त कुव्यसन व धूम्रपान का त्याग कर अपना जीवन सुरभित किया। कई युवको ने महीने मे पाँच सामायिक करने का नियम लेकर गुरु हस्ती के सामायिक सन्देश को अपनाया। श्रद्धालु भक्त श्री राणीदान जी ने सदार आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को शील सौरभ से सुरभित किया। कोरणा पधारने पर करुणाकर की पावन प्रेरणा से ठाकुर मनोहरसिंहजी ने जीवनपर्यन्त मास, मछली, शराब एव शिकार का त्याग कर अपने जीवन को पाप पक से उबारा। पूज्यपाद जहा भी पधारते, जाति व सम्प्रदाय से परे सभी आपकी करुणा व प्रेरणा से प्रभावित होते, पूर्ण श्रद्धा व आस्था से आपके पावन दर्शन, वन्दन व सेवा का लाभ लेते। मण्डली, बागावास, ढाणीरा, थोब एव पुरोहित-ढाणी मे अनेक कृषक भक्तो ने धूम्रपान, अफीम सेवन व कुशील का त्याग कर अपने जीवन को पावन बनाया। ढाणीरा मे षट्काय प्रतिपालक करुणाकर गुरुदेव से दया धर्म की प्रेरणा पाकर प्राणि-हिंसा व मास-सेवन का त्याग किया। यहाँ आप एक झोपे मे विराजे। झोपे के बाहर खुले शान्त वातावरण मे छोटे वृक्ष के नीचे विराजे सन्त एव श्रद्धालु भक्तगण ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानो वे एक कल्पवृक्ष की छाव तले बैठे हों। वस्तुत पूज्यपाद चतुर्विध सघ एव श्रद्धालुभक्तो के लिये एक कल्पवृक्ष के समान ही तो थे। यहॉ से पूज्यप्रवर पचपदरा फरसते हुए ६ अप्रेल को बालोतरा पधारे, जहा आपके सान्निध्य मे अक्षय तृतीया का पावन पर्व सम्पन्न हुआ।

बालोतरा से विहार कर पूज्य चरितनायक जाणियाना, कनाना (वीर दुर्गादास राठौड़ की जन्म भूमि) , जेठन्तरी, समदड़ी एव करमावास मे व्रत-नियम कराते हुए मजल पधारे। यहॉ पूज्य आचार्यश्री जयमल जी म सा की पुण्यतिथि वैशाख शुक्ला चतुर्दशी के दिन आचार्य श्री ने फरमाया कि पूज्य श्री जयमलजी म.सा के त्याग एव साधनामय तथा स्वाध्यायशील जीवन से शिक्षा लेते हुए हमे भी अपने जीवन को सार्थक करना चाहिए।

मजल से विहार कर आप ढीढस, लाम्बड़ा, माडावास, जैतपुर, गडवाला, चारेलाव, केरला एव जवेड़िया मे धर्म-प्रभावना करते हुए १२ मई को पाली पधारे। यहॉ आचार्य श्री रघुनाथ जी म सा. की परम्परा की श्री तेजकवर जी म सा आदि ठाणा ६, पूज्य हुकमचन्द जी म.सा की परम्परा की महासती श्री सूरजकवर जी म सा आदि ठाणा ५, प. रत्न श्री समर्थमल जी म.सा की परम्परा की श्री सुमति कवर जी म सा ठाणा ४, महासती कमलेशजी आदि ठाणा ४ एव अमरसिह जी म. सा की परंपरा की महासती शीलकवर जी, उमराव जी, चदनबालाजी, चद्रप्रभाजी ठाणा १४ ने आपके पावन दर्शन व प्रवचन का लाभ लिया। प. रत्न श्री समर्थमल जी म सा. की परम्परा के श्री पूसाराम जी म सा के स्वर्गवास के समाचार जानकर उन्हे यथाविधि श्रद्धाजलि दी गई। सुराणा मार्केट के स्थानक भवन मे एक दिन समाज की दोष दर्शन की प्रवृत्ति पर आपने बहुत ही मार्मिक प्रसग सुनाया–" **किसी चित्रकार ने एक सुन्दर चित्र बनाकर नगर के मुख्य मार्ग के चौराहे पर लगा दिया। उसके शीर्ष स्थान पर लिखा था-'गलती बताओ।' आने वाले पथिकों में जो भी देखता, कोई न कोई गलती जरूर बताता। दूसरे दिन चित्रकार ने चित्र को अधिक सुन्दर बनाकर शीर्ष स्थान पर लिखा – 'गलती सुधारो।' किसी ने एक भी गलती नहीं सुधारी। समाज में इसी प्रकार गलती बताने वाले बहुत हैं, पर सुधारने वाला विरला ही होता है।"**

ज्येष्ठ शुक्ला चौथ को आपने भोपालगढ़ के श्रावको के पाली आने पर उद्‌बोधन मे फरमाया –"जेठ आषाढ

की तेज गर्मी मे कष्ट की परवाह किए बिना किसान खेत की सम्भाल करते हैं। आने वाली वर्षा से पूर्व वे खेत साफ करते हैं। आपको भी चातुर्मास में धर्म की अच्छी खेती हो, इसके लिए तैयारी करनी है। कितने प्रतिक्रमण वाले, कितने स्वाध्यायी और कितने बारहव्रती तैयार करने हैं, आदि।"

दूसरे दिन २४ मई को यहाँ से विहार कर करुणानिधि धनराज बछावत की फैक्ट्री, निमली, इन्द्रो की ढाणी, झीतडा, भेटूदा, लोलाव (वैष्णव मन्दिर में विराजे) होकर मौटुका पधारे। यहां करुणाकर से दया धर्म का महत्त्व समझ कर राजपूत युवाओ ने माससेवन व बड़ी हिंसा का त्याग किया व सेशराम ने जीवन भर के लिए मद्यपान का त्याग कर अपने को व्यसनमुक्त बनाया।

वहाँ से गोलगाँव होकर पूज्यपाद ककरीली सड़क पर चलते हुए १ जून ८५ को पालासनी पधारे। यहाँ बाहर से कई भक्तो का आगमन हुआ। जयपुर से श्री सुमेरसिह जी बोथरा के साथ उनकी पुत्री अन्नू अमेरिका जाने की भावना से आराध्य गुरुदेव के दर्शनार्थ आई, इसे आपने सप्त कुव्यसन का त्याग कराया। पालासनी से बिसलपुर, दातीवाडा, कूड, बुचकला, रीया फरसते हुए पूज्यप्रवर पीपाड़ पधारे। यहाँ धर्म प्रभावना कर आप कोसाणा, साथिन, रतकूडिया मे सामायिक-स्वाध्याय का नियम कराते हुए माली ढाणी, होकर नारसर पधारे। यहाँ श्री माणकचन्द जी लोढा ने सपत्नीक आजीवन शीलव्रत अगीकार किया व रमण मुथा ने प्रतिमाह ५ सामायिक का नियम स्वीकार किया। यहाँ से भोपालगढ़ के जैनरत्न विद्यालय एव कूडी ग्राम को पावन कर १ जुलाई ८५ को आचार्य श्री का भोपालगढ़ मे नगर प्रवेश हुआ।

• भोपालगढ़ चातुर्मास (सवत् २०४२)

पूज्य आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी मसा की क्रियोद्धार भूमि बडलू (भोपालगढ) रत्नवश के महापुरुषो के प्रति सर्वतोभावेन समर्पित अनुयायी श्रद्धालु श्रावको का क्षेत्र है। परम पूज्य गुरुदेव की महती कृपा का आशीर्वाद इस क्षेत्र को सदैव मिला है। यहाँ के जैन जैनेतर सभी पूज्यपाद के प्रभावक व्यक्तित्व एव पावन कृतित्व से प्रभावित एव श्रद्धावनत है। २१ वर्ष बाद इस क्षेत्र को पूज्यपाद के वर्षावास का लाभ प्राप्त हुआ था। स्थानीय भक्तो के साथ ही प्रवासी भोपालगढ निवासियो के मन मे आराध्य गुरुदेव के सान्निध्य मे रह कर पावन दर्शन-वन्दन प्रवचन-श्रवण के साथ जीवन-निर्माण की भावनाएँ ज्वार की भाति हिलोरे ले रही थी।

पूज्यप्रवर आचार्य हस्ती का यह वर्षावास ज्ञान-दर्शन-चारित्र साधना से सम्पन्न रहा। चातुर्मास मे अखण्ड जाप एव सामूहिक दया पौषध के आयोजन हुए। चातुर्मास मे १२ मासक्षपण तप सहित अनेक तप एव सवर-साधना के आयोजन हुए। प. रत्न श्री हीरामुनि जी (वर्तमान आचार्यप्रवर) ने अपने प्रवचनो के माध्यम से पाच करणीय कर्तव्यो का निरूपण किया - पारस्परिक प्रेम, गुणग्राहिता, परिग्रह का उचित वितरण, आत्मदोष-निरीक्षण एव सेवा।

यहाँ २५ सितम्बर को हुई शिक्षक-सगोष्ठी के अवसर पर समुपस्थित शिक्षक जनो को आचार्य श्री का उद्बोधन, २० से २२ अक्टूबर को हुई विद्वत्गोष्ठी मे 'अपरिग्रह एव उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत' विषय पर प्रस्तुत विद्वानो के शोध-लेख तथा विद्वानो द्वारा कतिपय नियम ग्रहण, आचार्य श्री रत्नचन्द स्मृति व्याख्यान (पचम) आदि से यह चातुर्मास भोपालगढ़ का ऐतिहासिक चातुर्मास बन गया।

शिक्षक-सगोष्ठी को सम्बोधित करते हुए ज्ञानसूर्य आचार्य श्री ने फरमाया—"**जीवन का निर्माण ज्ञान और क्रिया के समन्वय से होता है। जानना, समझना और विचारों में प्रबुद्ध संस्कारों को जागृत करना, यह**

शिक्षा का काम है। मुमुक्षु की आत्म-साधना हेतु भी ज्ञान की अनिवार्य आवश्यकता है। व्यवहार मार्ग में व्यक्ति के जीवन, समाज और राष्ट्र की समृद्धि के लिए भी ज्ञान पहला कदम है। इसीलिए शिक्षा कैसी हो, सुधार कैसे हो, आदि विचार महात्मा गांधी के युग से लेकर आज तक भी परिचर्चा के विषय हैं। विद्या या शिक्षा वरदान तब होती है जब उसकी वृद्धि के साथ नैतिक आचरण की समृद्धि बनी रहे, बुरी आदतें मिटें। गाँवों की अपेक्षा शहरों में शिक्षक अधिक है, किन्तु चोरी और हत्याओं का सिलसिला शहरों में अधिक क्यों है? जहाँ शिक्षक शहरों में ज्यादा है, वहाँ पर बुराइयाँ क्यों? शिक्षा-पद्धति से देश में शान्ति बढ़े, शिक्षकों का सम्मान बढ़े, ऐसी शिक्षा आवश्यक है।" नैतिक शिक्षा के सम्बन्ध मे आपने फरमाया – "आज जो लड़का सबसे ज्यादा अक लाकर पास होता है उसका तो सम्मान होता है, पर क्या कभी उस लड़के का भी सम्मान किया जाता है जो सत्यवादी है? जो पूर्ण नैतिक जीवन जी रहा है ? उस लड़के का सम्मान क्यो नही हुआ जो निर्व्यसनी है? **सत्यवादी, निर्व्यसनी और अनुशासन में रहने वाले छात्रों के सम्मान से अन्य छात्रों को प्रेरणा प्राप्त होगी।"**

"यदि शिक्षक समुदाय गली-गली, घर - घर जाकर व्यसनमुक्ति के लिए प्रयास करे तो बहुत बड़ा काम हो सकता है।'– **मै सोचता हूँ शिक्षा पद्धति को ऐसा रूप दिया जाय जिससे बुराइयाँ घटे तथा शील, सदाचार, शान्ति, मैत्री एव भाईचारा बढे। शिक्षा से सद्गुण बढ़ने चाहिए। अगर सद्गुण नही बढते तो समझना चाहिए कि शिक्षा-पद्धति में दोष है।"**

"आज शिक्षण प्राप्त लोगो मे स्वावलम्बन कम होता जा रहा है। श्रीमन्त गाड़ी मे बैठता है, पर गाड़ी साफ नही करता, **स्वावलम्बन की कमी के साथ ही हमारी सहनशक्ति भी कम हो गई है। विनम्रता भी कम हो गई है। आप शिक्षा का सुन्दर रूप देखना चाहते है, तो इन विकारों को निकालें।"** "साक्षर व्यक्तियो की बुद्धि उलट जाय तो वे राक्षस बनते देर नही करते। शिक्षा से शान्ति, मैत्री एव सौहार्द का भाव आना चाहिए।"

विद्वत्गोष्ठी मे भारत के विभिन्न प्रान्तो से आए विद्वानो ने 'अपरिग्रह एव उपभोग परिभोग-परिमाण व्रत' विषयक निबध और विचार प्रस्तुत किए। समागत विद्वानो को प्रेरणा देते हुए आचार्य भगवन्त ने फरमाया – **"विद्वान् वह है जो ज्ञान को आचरण मे उतारे। अनगिनत बालकों का जीवन-निर्माण करने वाले शिक्षक और विद्वान् का जीवन सरल, सादगीयुक्त, व्रत और मर्यादा के नियम से युक्त हो, तभी समाज उससे लाभान्वित हो सकता है, अन्यथा नही।" आचार्य श्री के प्रेरणास्पद आह्वान पर उपस्थित विद्वानो ने सामूहिक रूप से एक वर्ष के लिए उपभोग-परिभोग-परिमाण व्रत सम्बंधी नियम ग्रहण किए।**

विद्वानो द्वारा गृहीत प्रमुख नियम इस प्रकार हैं– (१) उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत के अन्तर्गत २६ बोलो मे से २३ बोलों के पदार्थों का प्रतिदिन ५ से अधिक का उपयोग नही करना। वत्थविहि मे वर्ष मे ५ से अधिक पहनने योग्य नई ड्रेस नही बनवाना। सचित्तविहि मे प्रतिदिन १५ से अधिक सचित्त वस्तुओ का उपयोग नही करना और दव्वविहि मे प्रतिदिन ३० से अधिक द्रव्यो का प्रयोग नही करना, (२) आजीविका की दृष्टि से १५ कर्मादानो का त्याग। इसमें भाडीकम्मे के अन्तर्गत ५ मकान तक आजीविका के लिए किराये देने का आगार रखा गया, (३) सप्त कुव्यसनो का त्याग, (४) चाय-दूध को छोड़कर रात्रि-भोजन का त्याग। इस व्रत मे माह मे चार दिन का आगार रखा गया। (५) १०१ हरी - लीलोती की मर्याद. की गई। माह मे अष्टमी, चतुर्दशी अथवा किन्ही चार दिन हरी-लीलोती का उपयोग नही करना (६) हिंसक चमडे का उपयोग नही करना। (७) विदेश से बिना अनुमति के कोई चीज नही

लाना (८) टिकट के बिना यात्रा नही करना। (९) ब्रह्मचर्यव्रत का सप्ताह मे दो दिन अवश्य पालन करना एव अधिकाधिक निजी मर्यादा रखना।

यह थी आचार्य श्री की दृष्टि। विद्वानो को भी वे साधना मे आगे बढ़ा हुआ देखना चाहते थे। स्थानीय सघ की ओर से श्री डी आर मेहता, विद्वत् परिषद के अध्यक्ष श्री भवरलाल जी कोठारी एव महामन्त्री डॉ. नरेन्द्र भानावत का सम्मान किया गया। इस प्रकार यह चातुर्मास शिक्षा, शिक्षक,सेवा एव धर्माराधन की दृष्टि से मगलकारी सिद्ध हुआ।

अन्तिम पाँच चातुर्मास

पीपाड़, अजमेर, सवाई माधोपुर, कोसाणा एवं पाली (संवत् २०४३ से २०४७)

• मेड़ता, अजमेर, ब्यावर, पाली होकर जोधपुर

भोपालगढ़ का ऐतिहासिक चातुर्मास सानद सम्पन्न कर २८ नवम्बर को आचार्य श्री हीरादेसर पधारे। यहाँ से पुन भोपालगढ़ होते हुए नाडसर, वारणी, हरसोलाव, गोटन, लाम्बा, कलरू आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए पूज्यपाद मेड़ता शहर पधारे। यहाँ २२ से २८ दिसम्बर ८५ तक बालको का धर्म-शिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ। मेड़ता मे आपका ७ जनवरी १९८६ तक विराजना हुआ। अनेक श्रद्धालु भक्तो ने सामायिक-स्वाध्याय का नियम स्वीकार कर पूज्यप्रवर के सामायिक-स्वाध्याय के सदेश को जीवन मे अगीकार किया। यहाँ से ८ जनवरी को विहार कर आप पाचरोलिया, झड़ा, सेसड़ा, पादू छोटी, पादू बड़ी एव मेवड़ा मे धर्मोद्योत करते हुए १९ जनवरी को थावला पधारे। थावला मे आचार्यश्री की ७६वी जन्मतिथि मगल आयोजनो के साथ मनायी गई।

थावला से पुष्कर होते हुए भगवन्त अजमेर पधारे। यहाँ न्यायाधिपति श्री श्रीकृष्णमल जी लोढा जोधपुर के साथ उनके सुपुत्र न्यायाधीश राजेन्द्र जी लोढा, न्यायाधिपति श्री मिलापचन्दजी जैन एव न्यायाधिपति श्रीमती कान्ताजी भटनागर ने दर्शन एव चर्चा का लाभ लिया। श्री अमरचन्दजी कासवा, श्री मोतीलालजी कटारिया, श्री चादमलजी गोखरू ने आचार्य श्री के ६६ वे दीक्षा दिवस पर ११ फरवरी ८६ को आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। दिवाकर परम्परा के श्री प्रेम मुनि जी एव श्री गौतम मुनि जी ठाणा २ से दीक्षा-दिवस कार्यक्रम मे पधारे। इस अवसर पर यहा धार्मिक शिक्षण-शाला का शुभारम्भ हुआ। महावीर कालोनी मे श्री सूरजमलजी गाधी ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। यहाँ से १८ फरवरी को विहार कर चरितनायक तबीजी, केशरपुरा होकर फैक्ट्री मे व्यसन-त्याग कराकर जेठाना, नागेलाव होते हुए ब्यावर पधारे। श्री ईश्वरमुनिजी आदि ठाणा अगवानी मे विद्यालय तक पधारे। ब्यावर मे कतिपय भाइयो ने एक वर्ष का शीलव्रत स्वीकार किया। बहुश्रुत प श्री समर्थमलजी म.सा की परम्परा की महासती श्री भवरकवरजी मसा आदि ठाणा २१, महासतीजी ज्ञानलताजी मसा आदि ठाणा ५ भी आचार्य श्री की सेवा मे पधारे। यहाँ श्री भवरलालजी देवलिया ने शीलव्रत का स्कन्ध लेकर अपना जीवन सुरभित किया। फाल्गुन शुक्ला अष्टमी को ७०० आयबिल हुए। होली चौमासी पर वर्षावास हेतु अनेक सघों ने पूज्यपाद के श्री चरणो मे विनतिया प्रस्तुत की। यहाँ से ३१ मार्च को विहार कर चाग, नानणा मे आचार्यप्रवर अरावली की पर्वत शृखलाओ से घिरे गाँव 'गिरी' पधारे। नानणा मे भ ऋषभदेव के जन्म-कल्याणक पर आदिनाथ जैन धार्मिक पाठशाला का प्रारम्भ हुआ। पूज्य चरितनायक की पावन प्रभावक प्रेरणा से छोटे से ग्राम गिरी मे अनेको व्यक्तियो ने व्यसन-त्याग किया व ठाकुर गुमानसिंह जी सहित ८ व्यक्तियो ने शीलव्रत अँगीकार किया। यहाँ से विहार कर हाजीवास एव खोखरी ग्राम मे व्यसन-त्याग कराते श्री आसूलालजी एव पाबूदान जी को सजोड़े आजीवन शीलव्रत दिला कर आप निमाज पधारे, जहाँ ८ अप्रेल को जोधपुर मे साध्वीप्रमुखा प्रवर्तिनी महासती श्री सुदरकवरजी म के सथारा सीझने के समाचार के साथ कायोत्सर्ग किया गया एव गुणानुवाद सभा मे महासतीजी की विशेषताओ पर

प्रकाश डाला गया।

गंगवाल भवन मे धर्मगगा बहाकर आप जैतारण, रानीवाल, खारिया होकर बिलाड़ा पधारे। यहाँ २३ अप्रेल को महावीर जयन्ती का पर्व जोधपुर, कोसाणा, भोपालगढ, पीपाड़ सैलाना आदि स्थानो के श्रावको की उपस्थिति मे तप-त्याग पूर्वक मनाया गया। बिलाडा से वरणा, अटपडा, रुन्दिया, चौरड़ियाजी की फैक्ट्री होते हुए सोजत पधारे। यहां श्री हुकमीचन्दजी ने परिग्रह परिमाण किया।

सोजत रोड में युवाचार्य श्री मधुकरजी म.सा. की परपरा की सती सोहनजी एव कमलाजी प्रवर्तिनी श्री सुन्दर कॅवरजी म.सा. के सस्मरण सुनाने सेवा मे पधारे। यहाँ से घिनावास, धाकडी, जाडण होते नवा गाव के विद्यालय मे पधारे, जहाँ काफी संख्या मे भाई-बहन, सन्तो के दर्शनो के लिए आतुर थे। विद्यालय के बच्चो को प्रसाद रूप मे व्यसन-त्याग आदि के तीन नियम कराये। यहाँ से ६ मई ८६ वैशाखकृष्णा १३ को आप पाली पधारे। अक्षय तृतीया पर वर्षीतप करने वाले २६ तपस्वी श्रावक-श्राविकाओं ने दर्शनलाभ लेकर एव नवीन त्याग-प्रत्याख्यान कर अपने को धन्य समझा।

पाली मे वैशाख शुक्ला षष्ठी १५ मई १९८६ को श्री जवरीलाल जी मुणोत की सुपुत्री मुमुक्षु बहिन श्रीमती मुन्नीबाई धर्मपत्नी श्री लिखमीचन्दजी लोढा घिनावास एव सुश्री समिता सुराणा सुपुत्री श्री मागीलालजी एव ज्ञानबाई जी सुराणा, नागौर ने आराध्य गुरुदेव के मुखारविन्द से चतुर्विध सघ व हजारों दर्शनार्थी भाई-बहिनो की साक्षी मे भागवती श्रमणी दीक्षा अगीकार कर मोक्षमार्ग मे अपने कदम बढाये। दीक्षोपरान्त आपके नाम क्रमश महासती श्री सुमनलता जी एव महासती श्री सुमतिप्रभाजी रखे गए।

रघुनाथ स्मृति भवन मे २२ मई को लगभग ५०० उपवास - आयम्बिल हुए। सुराणा मार्केट से २६ मई को विहार कर हाउसिंग बोर्ड, रोहट, नीवला, काकाणी को फरसकर कच्चे मार्ग से कूडी, झालामण्ड होकर आप जोधपुर पधारे। यहाँ आपने इण्डस्ट्रियल एरिया मे श्री माणकमलजी भण्डारी को आजीवन सदार शीलव्रत एव प्रकाश जी को उनके बगले पर एक वर्ष का शीलव्रत कराया। घोड़ो का चौक, सरदारपुरा, पावटा, महामन्दिर आदि स्थानो मे विराजते समय श्री पारसमलजी कुम्भट, श्री चन्दनराजजी अध्यापक, श्री तखतराजजी सिघवी आदि को आजीवन शीलव्रत कराकर एव तप-त्याग द्वारा जिन शासन की प्रभावना कर आपने २५ जून १९८६ को चातुर्मासार्थ पीपाड़ के लिए विहार किया।

• पीपाड़ चातुर्मास (सवत् २०४३)

मार्ग मे बुचकला एव कोसाणा में विशेष धर्मोद्योत करते हुए पूज्य चरितनायक ने ठाणा १० से १३ जुलाई रविवार आषाढ शुक्ला ६ सवत् २०४३ को ६६ वे चातुर्मास हेतु श्रावक-श्राविकाओ के प्रफुल्लित आस्यो से उच्चरित जयनादो के साथ पीपाड़ शहर के विकास केन्द्र कोट मे मगल पदार्पण किया।

आचार्य श्री की जन्मभूमि पीपाड़ मे त्याग-तप की झडी लग गई। १५ अगस्त के व्याख्यान मे अहिसा का महत्त्व निरूपित करते हुए आचार्य श्री ने फरमाया-"देशवासियो को अहिंसा से आजादी मिली, किन्तु आज हिंसा की आग फैल रही है। इसे रोकने के लिए हमें अहिंसा को ही हृदय मे बिठाना होगा।" त्रिदिवसीय (१५-१७ अगस्त १९८६) स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर मे देश के ३० प्रमुख स्वाध्यायियो ने भाग लिया। आचार्य श्री की धर्मसभा मे स्थानीय हरिजन श्री बसीलाल ने आचार्य श्री से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया तथा मद्यमास का त्याग

किया। समाज द्वारा उनका सम्मान कर त्यागानुमोदन किया गया।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबधक समिति के अध्यक्ष सरदार काबुल सिह तथा महासचिव ओकार सिंह ने अहिंसा के पुजारी आचार्य भगवन्त के मगलमय पावन दर्शन कर उनसे पजाब समस्या के समाधान हेतु मार्गदर्शन प्राप्त किया। राजस्थान प्रदेश काग्रेस (इ) के तत्कालीन अध्यक्ष श्री अशोकजी गहलोत एव विदेश सचिव श्री रोमेशजी भण्डारी ने दर्शन एव प्रवचन-लाभ लिया। ४ सितम्बर ८६ को २० वर्षीय युवक श्री कैलाश जी सिघवी ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया। सघ द्वारा उनका एव डॉ नरेन्द्र जी भानावत का सम्मान किया गया । चातुर्मास मे कुछ समय आप रीया विराजे।

यहाँ पधारने पर जोधपुर जिले के समस्त स्काउट विद्यार्थियो ने आचार्य श्री की अगवानी की। ५ से १२ अक्टूबर तक स्वाध्यायी शिविर का आयोजन हुआ, जिसमे निकट एव दूरवर्ती ११० स्वाध्यायियो ने भाग लिया। शिविरार्थियो के शैक्षणिक स्तर को देखते हुए पाठो को रटाने की अपेक्षा उनका जीवन मे महत्त्व समझाने पर विशेष जोर दिया गया। सच्चे धर्म का स्वरूप, सच्चे सुख की पहचान, विषय-कषाय का स्वरूप आदि तथ्य स्पष्ट करने का प्रयास किया गया। शिविर मे डा सुषमाजी गाग एव डॉ चेतन प्रकाशजी पाटनी के विशेष व्याख्यान हुए।

१० अक्टूबर को स्वाध्यायी शिविर स्वाध्यायी-सम्मेलन के रूप मे परिवर्तित हो गया, जिसका उद्घाटन राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधिपति श्री जसराज जी चौपड़ा ने किया। श्री डी.आर. मेहता ने स्वाध्यायियो को अहिसा और सेवा के क्षेत्र मे व्यक्तिगत स्तर पर कार्य करने का उद्बोधन दिया। साधक श्री जौहरी मल जी पारख रावटी (जोधपुर) ने 'सुखी जीवन कैसे जीएँ?' विषय पर अपने मर्मस्पर्शी विचार प्रकट किए।

स्वाध्यायी सम्मेलन का समापन १२ अक्टूबर को राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल महामहिम श्री वसन्तदादा पाटिल की गौरवपूर्ण उपस्थिति और न्यायाधिपति माननीय श्री गुमानमल जी लोढ़ा की अध्यक्षता मे हुआ। इस अवसर पर अनेक स्वाध्यायी विद्वद्वृन्द का सम्मान किया गया। सभी स्वाध्यायियो ने आचार्य श्री के श्रीमुख से निम्नाकित नियम ग्रहण किए –

(१) स्वाध्यायी आपस मे एक दूसरे पर कोर्ट का मुकदमा नही लडेगे।

(२) प्रत्येक स्वाध्यायी सप्त कुव्यसन का त्यागी होगा।

(३) शादी-विवाह के अवसर पर कन्दमूल का उपयोग नही करेगे।

(४) प्रत्येक स्वाध्यायी धार्मिक क्षेत्र मे वर्षभर मे हुई अपनी प्रगति का लेखा-जोखा रखेगा।

(५) हर स्वाध्यायी कम से कम २० मिनट प्रतिदिन स्वाध्याय करके नया ज्ञान अर्जन करेगा।

'धर्म जीवन में कैसे उतारे' विषयक विद्वत्परिषद् की सगोष्ठी १२ से १४ अक्टूबर तक आयोजित हुई, जिसमे लगभग ४० विद्वानो ने भाग लिया। सगोष्ठी मे डॉ. सागरमल जैन वाराणसी, श्री रणजीत सिह जी कुम्भट जयपुर, डॉ. महेन्द्र भानावत उदयपुर, श्री भवरलाल जी कोठारी बीकानेर के भी व्याख्यान हुए। डॉ इन्दरराज बैद की अध्यक्षता मे एक कवि-गोष्ठी का आयोजन भी किया गया।

१२ से १५ अक्टूबर ८६ तक सम्यग्ज्ञान प्रचारक मडल के अन्तर्गत सचालित साधना-विभाग की ओर से 'समभाव साधना-शिविर' आयोजित हुआ, जिसमे राजस्थान, मध्यप्रदेश एव महाराष्ट्र के प्रतिनिधि साधको ने भाग लिया, जिनमे इन्दौर की ५ बहने भी सम्मिलित थी। शिविर में समभाव का अभ्यास किया गया। इस शिविर में १०

नये साधक बने। समापन समारोह की अध्यक्षता उदारमना गुरुभक्त श्री पृथ्वीराजजी कवाड़ ने की। सभी साधको ने दहेज, सप्त कुव्यसन, मृत्युभोज, विवाह में आतिशबाजी एव नृत्य तथा बड़े भोज मे जमीकन्द के त्याग के नियम लिए। चातुर्मास की सफलता मे श्री मोफतराज जी मुणोत और उनके परिवार की समर्पण युक्त सेवाए सराहनीय रही। चकित कर देने वाली तपस्याओ, नियम-व्रत, अगीकार करने आदि का ठाट रहा। ९ मासखमण एव उससे अधिक की तपस्या के अलावा ५९ अठाई एव १९० तेलातप हुए। श्री बसीलाल जी, श्री मोहनलालजी चौधरी, गजराजजी मुथा आदि ८ व्यक्तियो ने सजोड़े आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार किया। कार्तिक पूर्णिमा को श्राविका मण्डल का अधिवेशन सम्पन्न हुआ।

मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को विहार कर ओसवालो का नोहरा, कन्याशाला, चिरडानी, रुणकियावास (ठाकुर के घर विराजे) होकर पूज्यप्रवर रणसीगाव पधारे। यहाँ आपने फरमाया —"मानव सुख चाहता है, फिर भी क्यो प्राप्त नही कर पाता। इसका कारण है अपने ही कर्म, अपनी ही प्रवृत्तियाँ । कहा है —

कर बुराई सुख चह, कैसे पावे काय।
गप पड़ बबूल का आम कहा न पाय॥

श्रावको द्वारा प्रतिदिन १० दया करने की भावना व्यक्त करने पर आप यहाँ मार्गशीर्ष अमावस तक विराजे। यहाँ से विहार कर एक खेत मे ३ घण्टे विराजित शीलसाधक चरितनायक के जीवन व प्रेरणा से प्रेरित हो लालसिह जी ठाकुर ने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा की । यहाँ से आप मादलिया पधारे। यहाँ भी भक्त श्रावको का दर्शन-प्रवचन एव नियमादि का लाभ लेने हेतु आगमन होता रहा। यहाँ से कोसाणा, साथिन होते हुए पुन पौष शुक्ला ९ को पीपाड़ पधारे।

यहाँ पौष शुक्ला चतुर्दशी १३ जनवरी १९८७ को आचार्य श्री की ७७ वी जन्म जयन्ती उपवास, पौषध, दयाव्रत आदि के साथ उत्साहपूर्वक मनायी गई। अनेक स्थानो से विशिष्ट श्रावको ने उपस्थित होकर अपनी श्रद्धा-भक्ति का परिचय दिया एव गुरुदेव से व्रत-नियम स्वीकार किए।

- जोधपुर पदार्पण

पीपाड़ मे जिनवाणी की गगा प्रवाहित कर रीया, बुचकला आदि मार्गस्थ क्षेत्रो को फरसते हुए पूज्यपाद आचार्यप्रवर २७ जनवरी को जोधपुर पधारे। जोधपुर की जनता के अनन्य आस्था केन्द्र गुरु भगवन्त के पदार्पण का सन्देश पाकर जोधपुर के विभिन्न क्षेत्रो के लोग आपके दर्शनार्थ उमड़ पड़े। उच्च शिक्षित मुसद्दियो के दिलो पर आपका न जाने कैसा अद्भुत प्रभाव था कि जब-जब भी आप जोधपुर पधारते नर नारी, आबालवृद्ध कोई आपके सान्निध्य सेवा से वचित नही रहना चाहता था। आपका शेखे काल प्रवास भी चातुर्मास जैसा दृश्य उपस्थित कर देता। भक्त मानस पर ऐसा व्यापक प्रभाव होने पर भी परमपूज्य साम्प्रदायिकता से सर्वथा परे थे। आपका चिन्तन था कि सम्प्रदाएँ परस्पर प्रेमपूर्वक एकान्त शासन हित के साथ कार्य करें तो ये धर्म प्रभावना मे बाधक नही, साधक हो सकती है व मान्य समाचारी के पालन की सूत्रधार बन सकती है।

३१ जनवरी , माघ शुक्ला द्वितीया को अपने दीक्षा दिवस पर आचारनिष्ठ अनुशास्ता आचार्य भगवन्त ने चतुर्विध सघ को सम्बोधित करते हुए फरमाया - **"उज्ज्वल आचार, परस्पर प्रेम एवं अनुशासन हो तो सभी क्षेत्र अपने हैं।"** सयम-दिवस के इस पावन दिवस पर आपने उत्कट सयम आराधिका उपप्रवर्तिनी स्थविरा महासती श्री बदनकवरजी म.सा. को प्रवर्तिनी पद प्रदान किया। श्री सत्यप्रसन्नसिंहजी भडारी व श्री सोहनराजजी सिंघवी ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार कर अपने जीवन को संयमित बनाया। बड़ी सख्या मे गुरुभक्त श्रद्धालुजनो ने सामायिक

व शीलमर्यादा पालन का सकल्प कर करुणानाथ के प्रति सच्ची श्रद्धाभक्ति समर्पित की। श्री जम्बूविजय जी म.सा से पचसूत्रक एव योगशास्त्र तृतीय भाग ये दो सूत्र प्राप्त हुए।

यहाँ जलगाँव निवासी श्री नथमल जी लूंकड़ से प्राप्त विचारात्मक लेख 'श्रमण संघ का भविष्य' के उत्तर में आपने लिखवाया-"**जैन श्रमण सदा से आचारप्रधान दृष्टि वाला रहा है। सम्प्रदाय के आदिकाल में श्रमण आचारभेद से अलग रहकर भी निन्दा विकथा से बचे रहते थे, सम्प्रदाय के पीछे वाद नहीं था। पूज्य श्री जीवराज जी म., पूज्य लवजी ऋषि जी म., पूज्य धर्मदासजी म. आदि क्रियोद्धारक महापुरुष अलग रहकर भी परस्पर प्रेमपूर्वक धर्मप्रचार करते रहे। कुछ मान्यताओं के भेद हुए तो उन्होंने उनका समाधान कर प्रेम सम्बन्ध को दृढ़ किया।** उदाहरण के रूप मे सवत् १८११ मे पूज्य श्री भूधर जी म., पूज्य अमरसिंहजी म., पूज्य ताराचन्द जी म आदि प्रमुख सम्प्रदायो का सगठन उज्ज्वल अतीत की स्मृति दिला रहा है। श्रमणो मे अपनी स्वीकृत समाचारी का स्वेच्छा से पालन करने की तत्परता होनी चाहिए। वर्तमान की सम्प्रदायो मे एक-दूसरे से अपने को अच्छा बताने की प्रवृत्ति ने स्थान पा लिया, 'अपना सो सच्चा' इस वृत्ति के कारण सघ वाले सम्प्रदायों को, और सम्प्रदाय वाले सघ को दोषी कहने लगे। आवश्यकता है आत्म-निरीक्षण की। सादड़ी और भीनासर सम्मेलन मे अनुभवी मुनियो ने बड़ी चर्चा और शास्त्रीय ऊहापोह के साथ प्राय एक राय से समाचारी निर्मित की है। सघ के समस्त साधु-साध्वी वर्ग उसका निष्ठापूर्वक पालन करे।"

• दो दीक्षाएँ

यहाँ ८ फरवरी को रेनबो हाउस के प्रागण मे श्री रामजीलाल जी 'त्यागी' (खोह-अलवर) एव श्री कैलाश जी सिंघवी सुपुत्र श्री शुभलालजी एव श्रीमती उच्छबकँवरजी (जोधपुर) ने पूज्यप्रवर के मुखारविन्द से भागवती श्रमण दीक्षा अगीकार की। दीक्षा महोत्सव पर १७ सन्तो एव २५ महासतियो का सान्निध्य प्राप्त था। सघ द्वारा मुमुक्षु साधको के जीवन पर्यन्त छहकाय जीवो को अभयदान देने के इस प्रसग पर प्रशासन ने जोधपुर मे कत्लखाने बन्द करने का आदेश प्रसारित कर अभयदान व दयाधर्म का अनुमोदन किया। श्री चन्दजी सुराणा 'सरस' से स्वाध्याय शिक्षा की रूपरेखा के सम्बन्ध मे चर्चा के अनन्तर सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से 'स्वाध्याय-शिक्षा' पत्रिका का शुभारम्भ हुआ। यह पत्रिका प्राकृत, सस्कृत एव आगम-अध्ययन को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से प्रारम्भ हुई, जो अभी डॉ धर्मचन्द जैन के सम्पादन मे प्रकाशित हो रही है। महामन्दिर मे श्री सम्पतराजजी लोढा एव श्री चैनरूपचन्दजी भण्डारी जलगाव वालो ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। यहाँ जज श्री ज्ञानचन्दजी सिंघवी एव जिलाधीश नागौर श्री ललितजी कोठारी ने आपके दर्शन सान्निध्य का लाभ लेकर अपने जीवन को सकल्प सम्पन्न किया। सात दिनो बाद १५ फरवरी को निमाज की हवेली मे बड़ी दीक्षा सम्पन्न हुई। बड़ी दीक्षा के अवसर पर श्री मोहनजी मेहता एव श्री माणकजी सचेती ने एक वर्ष तक कुशील सेवन का त्याग कर अपने जीवन को मर्यादा में आबद्ध किया।

१७ फरवरी १९८७ को प्रात ७६ वर्ष की आयु मे जयमल सघ के आचार्य श्री जीतमल जी म.सा. का जोधपुर मे ही समाधिपूर्वक स्वर्गवास होने के समाचार मिले। व्याख्यान स्थगित रखकर दिवगत आत्मा को चार लोगस्स से श्रद्धांजलि दी गई।

पूज्यपाद गुरुदेव के जोधपुर प्रवास मे अपराह्न शास्त्रवाचन चर्चा व ज्ञानाराधन का क्रम बराबर चलता रहा। यहां आप द्वारा पच्चीस बोलो का नवीन चिन्तनपूर्वक विवेचन लिखवाया गया। आपकी पातकप्रक्षालिनी वाणी-सुधा

मे भक्तजन नियमित अवगाहन कर जीवन-निर्माण के सूत्र ग्रहण करते रहे। सरदारपुरा विराजते समय एक दिन पूज्यप्रवर ने अपने प्रवचनामृत मे श्रावक की श्रेणियो का निरूपण करते हुए व्याख्यायित किया कि श्रावक तीन प्रकार के होते हैं - सरल, ग्राहक एव दर्शक। दर्शक श्रावक के मन मे मात्र दर्शन का भाव होता है। सरल श्रावक के मन मे प्रवचन के प्रति श्रद्धा होने पर भी वह व्रताराधन नही कर पाता, पर ग्राहक श्रेणी के श्रावक मे गुण ग्रहण करने एव व्रत नियम अंगीकार करने का भाव होता है। यहा टाटोटी, विजयनगर आदि स्थानो के श्रावको ने पूज्यपाद के दर्शन व प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया।

३ मार्च १९८७ को आपकी आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री इचरजकवरजी म.सा का ६९ वर्ष की आयु मे स्वर्गवास हो गया। महासती जी ने सवत् २०१८ पौष शुक्ला १२ को महासती श्री सुन्दरकवरजी म सा. की शिष्या के रूप मे प्रव्रज्या पथ अगीकार कर अपना ज़ीवन सेवा, वैय्यावृत्य व साधना मे सम्पन्न किया। महासतीजी ९ वर्षों से जोधपुर के पावटा स्थानक मे स्थिरवास विराज रहे थे।

पूज्यपाद के दर्शनार्थ विभिन्न सम्प्रदायो के सत-सतियो का आगमन बना रहा। कोठारी भवन मे १० मार्च १९८७ को आचार्य श्री विजयसूरीश्वरजी म सा श्री नयरत्नजी म. के साथ पधारे। यहा श्री कान्तिसागर सूरिजी के शिष्यो ने भी पूज्यप्रवर के दर्शन किए। आचार्य श्री नानालालजी म सा की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री सुलक्षणा जी म सा आदि ठाणा ५ पूज्य चरितनायक के दर्शनार्थ पधारी।

फाल्गुनी चतुर्दशी दिनाक १४ मार्च को भोपालगढ सघ महावीर जयन्ती एव अक्षयतृतीया की विनति के साथ उपस्थित हुआ। अलीगढ-रामपुरा के शिष्ट मडल ने श्री गोपाललालजी जैन वैद्य के नेतृत्व मे सन्त-सतियो के चातुर्मास की विनति भगवन्त के चरण सरोजो मे प्रस्तुत की। किशनगढ, जयपुर के श्रावको द्वारा भी अपनी विनतिया प्रस्तुत की गई। १७ मार्च को अजमेर श्री सघ ने पूज्यपाद के आगामी चातुर्मास हेतु अपनी प्रबल आग्रहभरी विनति प्रस्तुत की। पूज्यप्रवर ने सामायिक, स्वाध्याय व शासनप्रभावना को प्राथमिकता देने का चिन्तन व्यक्त किया।

कुछ दिन पावटा विराज कर पूज्य आचार्य देव रेनबो हाउस पधारे। आपके मगल पदार्पण की खुशी मे अनन्य भक्त डॉ सम्पतसिहजी भाडावत ने वर्ष मे तीन माह का समय धर्माराधन व सघ-सेवा हेतु देने का सकल्प किया। उन्होने सन्त-सती मडल के विराजने हेतु रेनबो हाउस सदा खुला रखने की भी भावना व्यक्त की। सन्तो ने त्रिषष्टिश्लाका पुरुषचरित का अध्ययन-वाचन किया।

जैन स्कूल महामन्दिर में भी आपके प्रवचन-पीयूष का लाभ मिला। भोपालगढ की ओर विहार के क्रम मे १ अप्रेल को आपका बनाड़ पदार्पण हुआ। बनाड़ से आप जाजीवाल फरसते हुए थबूकड़ा पधारे। यहाँ हरियाडाणा ग्राम के अध्यापक धर्म पिपासु श्री रामेश्वर जी ब्राह्मण ने करुणाकर गुरुदेव से धर्म का सही स्वरूप समझ कर सिगरेट सेवन के त्याग एव सामायिक-साधना का सकल्प किया। कुछ अन्य व्यक्तियो ने भी आपके पावन सान्निध्य का लाभ लेते हुए धूम्रपान त्याग का नियम लिया। दईकड़ा मे ग्रामीणजनों को अमल, बीड़ी, आदि व्यसनों से मुक्त कराते हुए पूज्यपाद छोटी सेवकी मे विश्वकर्मा मन्दिर मे विराजे। यहा से आप बुचेटी, कुड़ी में धर्मोद्योत करते हुए ९ अप्रेल १९८७ को क्रियोद्धार भूमि भोपालगढ पधारे।

यहा नागौर, जयपुर, मेडता, बीकानेर, अलीगढ-रामपुरा, बजरिया, कोसाणा आदि सघ विनतिया लेकर उपस्थित हुए। अजमेर सघ के ५ अग्रगण्य श्रावकों ने पूज्यपाद का चातुर्मास होने पर ५१ स्वाध्यायी तैयार करने अथवा घृत

या मीठे का त्याग करने का सकल्प किया। धर्म प्रभावना व स्वाध्याय प्रसार के लक्ष्य से पूज्य आचार्य भगवन्त ने साधु भाषा मे अगला वर्षावास अजमेर मे करने की स्वीकृति फरमाई।

दिल्ली के युवाबन्धु श्री सुभाषजी ओसवाल के पत्र के उत्तर मे २८ अप्रेल १९८७ को आपने लिखवाया-"हमारे पूर्वाचार्यों ने स्थानकवासी जैन समाज का आधार शास्त्रानुकूल शुद्ध आचार को माना है। आडम्बर रहित निर्दोष तप-त्याग ही हमारा धर्म चिह्न है। आज युवक सुधारवाद की हवा मे बह रहा है। वह समझ रहा है कि समय के अनुसार धर्म के आचार-विचार मे परिवर्तन होना चाहिए। उनके अनुसार धर्म को टिकाने के लिए परिवर्तन आवश्यक है। यहाँ ध्यान रखना होगा कि समय जैसा आज बदला है, वह आगे भी बदलता रहेगा, किन्तु ऐसा परिवर्तन मूल आचार मे नही होता। यदि मूल नियम भी परिवर्तनीय हो तो जैन सघ आज कहाँ का कहाँ चला जाता। अभी तो ध्वनि-यन्त्र, पैर मे चप्पल, चलने को यान-वाहन, शौच के लिए फ्लश शौचालय जैसी कुछ ही समस्याएँ है। अगली शताब्दी मे और कितने ही नवीन प्रश्नो के साथ आचार-सुधार की लाइन मे बढ़ने को उत्सुक होगे, यथा साधु के पास बिना भाई के साध्वी को पढ़ाना, साधु द्वारा साध्वी को वन्दन, एक पाट पर आसन, स्थानाभाव से एक मकान मे रहना आदि प्रबल रागी गृहस्थ के लिए वर्ज्य नही, तब उपशान्त रागी साधु के लिए वर्ज्य क्यो? क्या वे इतने विश्वास के योग्य भी नही? हर युग व काल मे युवको को ऐसे प्रश्नो, प्रतिप्रश्नो का शास्त्रज्ञान और अनुभव के आधार से चिन्तन कर समाधान प्राप्त करना होगा। त्रिकालज्ञ श्रमण भगवान द्वारा श्रमण-श्रमणियो के लिए नियत की गई साधु समाचारी स्वपर कल्याणक है, साथ ही शासन प्रभावना की हेतु भी है। ज्ञानियो द्वारा सुनिश्चित यह मर्यादा जैन साधु की पहिचान है। यदि युग प्रभाव से इसी प्रकार मर्यादा मे सशोधन समझौते करते रहे तो साधुता कहाँ शेष रहेगी, मात्र वेश ही रह जायेगा।

१ मई अक्षय तृतीया का पावन पर्व पूज्यपाद के सान्निध्य मे आदिनाथ पारणक दिवस, आपश्री के ५७ वे आचार्य पदारोहण दिवस व आचार्यप्रवर श्री कजोड़ीमलजी म सा. की पुण्यतिथि के रूप मे त्याग-तप व सघ-सेवा के उत्साह से उल्लसित वातावरण मे मनाया गया। पूज्यपाद आचार्य भगवन्त ने माधुर्य एव कोमलता की प्रेरणा देते हुए अपने मगलमय प्रेरक उद्बोधन मे फरमाया - "[illegible]" वर्षीतप करने वाली २४ बहनो को स्थानीय सघ के द्वारा सम्मानित किया गया।

भोपालगढ़ से मागलिया की ढाणी, रतकूडिया, खागटा, चौकड़ी, खवासपुरा, पुल्लू, गगराना, इन्दावड़ आदि विभिन्न ग्राम-नगरो मे विचरण कर धर्म-जागरण करते हुए आप १९ मई को मेड़ता सिटी पधारे जहाँ अनेक विशिष्टजनो के साथ राजस्थान के शिक्षा मन्त्री श्री दामोदर प्रसादजी ने दर्शनलाभ लिया। यहाँ आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म सा की १४२ वी पुण्यतिथि पर दया, उपवास, पौषध आदि का विशेष आयोजन हुआ।

वहाँ से १२ जून को ठाणा ६ से आपका विहार हुआ। मार्ग मे लाम्पोलाई, पादू, भेरूदा, थावला, तिलोरा पुष्कर आदि क्षेत्रो को अपनी पद रज से पावन करते हुए पूज्यपाद ने चातुर्मासार्थ अजमेर की ओर प्रयाण किया।

- अजमेर चातुर्मास (संवत २०४४)

अजमेरनगरवासी दीर्घकाल से पूज्यपाद चरितनायक के चातुर्मास के लिये प्रयासरत थे। ६७ वर्ष पूर्व इसी पुण्यधरा पर पूज्यप्रवर ने पूज्यपाद आचार्य श्री शोभाचद जी म सा के मुखारविन्द से श्रमण दीक्षा अँगीकार कर मोक्षमार्ग मे अपने कदम बढ़ाये थे। पूज्य आचार्य श्री कजोड़ीमलजी म सा. प्रभृति महापुरुषों व महासती श्री छोगाजी

म.सा. आदि पूज्या महासतीवृन्द के पावन-सान्निध्य का लाभ समय-समय पर इस क्षेत्र को मिलता रहा है।

पूज्यपाद आचार्यप्रवर के चातुर्मासार्थ पदार्पण से ही अजमेर मे धर्मोद्योत का अपूर्व ठाट लग गया। व्रत-प्रत्याख्यान व तपस्या का वातावरण निर्मित हो गया। चातुर्मास काल में लाखन कोटड़ी व महावीर कॉलोनी दोनो ही क्षेत्र आप श्री के विराजने से लाभान्वित हुए। स्थण्डिल भूमि की सुविधा एवं शान्त वातावरण की दृष्टि से पूज्यप्रवर महावीर कॉलोनी मे अधिक विराजे। सेवाभावी महासती श्री सतोष कवरजी म.सा. आदि ठाणा का भी अजमेर मे चातुर्मास होने से बहिनो मे भी विशेष धर्म जागृति रही। चातुर्मास मे तपस्या का ठाट लगा रहा। आचार्य प्रवर के सान्निध्य मे अठाई तप व सैकडो तेले हुए।

आप श्री के पावन दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण तथा सान्निध्य-लाभ लेने हेतु विभिन्न क्षेत्रो के दर्शनार्थियो का सतत आवागमन बना रहा। परम पूज्य गुरुवर का सदा यही चिन्तन रहता कि सत-समागम जीवन-निर्माणकारी हो व त्याग-प्रत्याख्यान की ओर गतिमान होने मे सहायक हो, अन्यथा यह भ्रमण मात्र है, जो आगन्तुक व स्थानीय दोनो के ही समय व श्रम का अपव्यय है। चातुर्मास काल मे अनेक बार ऐसे अवसर आये कि एक नही अनेक सघो के आतिथ्य सत्कार का अजमेर श्री सघ को लाभ मिला। ऐसे ही अवसर पर अपने सारगर्भित उद्बोधन मे आपश्री ने फरमाया—"दर्शनार्थी बन्धु यहाँ आगमन को मेला नही समझे, अपितु सन्त-सतियों के त्यागमय जीवन एव साधना से कुछ न कुछ प्रेरणा ग्रहण करे, जिससे आपका व आपके परिजनो का जीवन शान्त, सुखी, समृद्ध और सेवाभावी बन सके।"

करुणाकर गुरुदेव का जीवनादर्श था - सत्त्वेषु मैत्री, गुणिषु प्रमोद, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्, माध्यस्थभाव विपरीतवृतौ ।" मैत्री, प्रमोद एव माध्यस्थ भाव के धनी करुणाकर गुरुदेव के हृदय मे प्राणि- मात्र के प्रति अनुकम्पा व असीम करुणा थी। आपके जीवन की मगल कामना थी—"सुखी रहे सब जीव जगत के कोई कभी न घबरावे।" किसी दुखी तड़फते प्राणी को देखकर आपका मन करुणार्द्र हो जाता। ७ अगस्त को स्थडिल पधारते अतीव कृशकाय एक गाय को देखकर आपके करुणार्द्र कोमल हृदय की अनुकम्पा भावना प्रवचनामृत मे प्रकट हुई। अनुकम्पा सम्यक्त्व का लक्षण है। करुणाकर के अनुकम्पाभाव सम्पूरित उद्बोधन से प्रेरणा प्राप्त कर स्थानीय सघ जीव दया की ओर प्रवृत्त हुआ।

दिनाक ३० सितम्बर से ४ अक्टूबर तक यहा विशिष्ट स्वाध्यायियों एव साधको का शिविर आयोजित हुआ। साधना के शिखर आचार्यदेव ने स्वाध्यायियो एव साधको को आत्म-चिन्तन व आत्म-निरीक्षण की सीख देकर उनका पथ प्रशस्त किया। स्वाध्यायी बन्धुओ ने अनेक सकल्प ग्रहण कर क्रिया के क्षेत्र में अपने कदम बढ़ाये। स्वाध्यायी वर्ग द्वारा ग्रहण किये गये सकल्प इस प्रकार है -

१ प्रतिवर्ष कम से कम एक नवीन धार्मिक ग्रथ का वाचन करना।

२ प्रतिवर्ष कम से कम एक नया स्वाध्यायी बनाना।

३. कोर्ट कचहरी के मुकद्दमे बाजी से दूर रहना।

४. दहेज का ठहराव नही करना।

५ चमड़े से बने बेग, जूते, पर्स आदि काम मे नही लेना।

६. मृत्यु भोज का न तो आयोजन करना, न ही उसमे भाग लेना।

साधक श्रावको ने पूज्यपाद से कुछ अतिरिक्त नियम भी अँगीकार किये -

१. प्रतिदिन कम से कम नवकारसी अवश्य करना।

२. रात्रि भोजन नही करना व रात्रि मे चौविहार त्याग का प्रयास करना।

३. भोजन में जूठा नही छोड़ना।

४. प्रतिदिन बड़ा स्नान नही करना।

इस अवसर पर देश के कोने-कोने से आगत कई श्रावको ने सामायिक-स्वाध्याय के नियम ग्रहण किये। श्री प्रेमचन्द जी जैन, रशीदपुर ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपना जीवन शील सौरभ से सुरभित किया।

आश्विन शुक्ला दशमी को तपोधनी आचार्य श्री भूधर जी म सा का जन्म व पुण्य तिथि महोत्सव तथा आश्विन शुक्ला एकादशी को धर्मप्राण आचार्य श्री धर्मदास जी म सा की दीक्षा जयन्ती तपत्याग पूर्वक मनाई गई। इस अवसर पर श्री गुलाबचदजी सचेती, अलवर ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत ग्रहण किया। जयपुर से आये गुरुभक्त सघनिष्ठ कई श्रावकों ने महीने मे दो दिन दया सवर करने का सकल्प किया।

परमपूज्य गुरुदेव सदैव द्रव्य-निक्षेप की अपेक्षा भाव-निक्षेप को ही महत्त्व देते थे। स्थानकवासी परम्परा मे देव के निराकार स्वरूप व गुरु के गुणो का ही महत्त्व व प्रतिष्ठा है। एकदा स्थण्डिल हेतु पधारते समय एक भाई द्वारा अनायास आपका फोटो खीचे जाने पर आपने उसे कड़े शब्दो मे उपालम्भ देते हुए फरमाया – "सन्तो की फोटो खीचना श्रमणाचार के अनुकूल नही है। चोरी छिपे जो श्रावक फोटो खीच कर उसका प्रचार करते है, वे परम्परा का उल्लघन करते है। ऐसा कार्य स्थानकवासी परम्परा के विरुद्ध व शास्त्र-मर्यादा के अनुसार निषिद्ध है।"

लाखन कोटड़ी स्थानक मे आचार्यप्रवर का पदार्पण यदा-कदा होता। व्याख्यान आदि धर्म प्रभावना के दायित्व का कुशलतापूर्वक निर्वहन प रत्न श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा. करते थे।

कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा ५ नवम्बर १९८७ को चातुर्मास की पूर्णाहुति व लोकाशाह जयन्ती के अवसर पर प्रवचन में विशाल जनमेदिनी की उपस्थिति मे सम्वत्सरी पर्व सा ठाट दृष्टिगत हो रहा था।

इस प्रकार सामायिक-स्वाध्याय के उद्घोष व तप-त्याग के अपूर्व ठाट के साथ यह चातुर्मास सम्पन्न करने के अनन्तर पूज्य चरितनायक ने हजारो श्रावक-श्राविकाओ के बीच विहार किया। उल्लसित भक्तो द्वारा जय-जयकार के नारो से गगन-मडल गूज उठा। लाखनकोटड़ी से विहार कर पूज्यप्रवर श्री मोहनलालजी लोढा के बगले पधारे। यहाँ श्री पूनमचन्द जी चोपड़ा ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपना जीवन शील-सौरभ से सुरभित किया, कई भाइयो ने एक वर्ष तक शील पालन का सकल्प किया। बैक कालोनी मे महासती श्री प्रेमकवर जी म.सा ठाणा ३ ने पूज्यपाद के दर्शन व सेवा का लाभ लिया।

• किशनगढ़ मे पार्श्वनाथ जयन्ती

मार्गस्थ ग्रामो को अपनी चरणरज से पावन करते हुए करुणानाथ मदनगज के उपनगर शिवाजी नगर मे श्री बसीलालजी कोचेटा के बगले पर विराजे। तीन दिन तक यहा धर्मोद्योत करने के अनन्तर आपका पदार्पण मदनगज हुआ। यहा से आप किशनगढ शहर पधारे।

यहाँ पौष कृष्णा दशमी को परम पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य मे पार्श्वनाथ जयन्ती जप, तप व सवर साधना

के साथ मनाई गई। इस अवसर पर १५५ दया-सवर हुए व ७५ व्यक्तियो ने स्वाध्याय का सकल्प किया। बालक-बालिकाओ व युवाओ के धार्मिक अध्ययन हेतु यहाँ २२ से २८ दिसम्बर १९८७ तक धार्मिक स्वाध्याय-शिक्षण शिविर का आयोजन हुआ, जिसमें २०० शिविरार्थियो ने ज्ञानार्जन किया।

पूज्यप्रवर आचार्य हस्ती के पावन जन्म-दिवस पौष शुक्ला चतुर्दशी दो जनवरी १९८८ से १२ दम्पतियो ने आजीवन व १० दम्पतियो ने एक वर्ष का शीलव्रत अगीकार कर साधना-मार्ग मे चरण बढ़ाते हुए अपना जीवन संयमित किया। निरतिचार सयम पालक, महाव्रत आराधक आराध्य गुरुदेव के जन्म-दिवस के इस प्रसग पर ३१ श्रावक-श्राविकाओ ने श्रावक के बारहव्रत अगीकार कर उनके सयममय जीवन का सच्चा अनुमोदन किया।

• जयपुर प्रवास

अशक्तता होते हुए भी दृढ मनोबली पूज्य चरितनायक किशनगढ से विहार कर डीडवाना, बादर सीदरी, दातरी, पडासोली, दूदू आदि क्षेत्रो मे धर्मोद्योत करते हुये जयपुर पधारे। जयपुर मे आपका विभिन्न उपनगरो में विराजना हुआ। आपका जब कभी भी किसी के आवास पर विराजना होता, तो उसे कोई न कोई नियम अवश्य कराने का लक्ष्य रखते। श्रद्धाशील भक्त भी आराध्य गुरुदेव की प्रेरणा को जीवन मे उतार कर व उनसे व्रत-नियम लेने मे अपना अहोभाग्य व उद्धार ही समझते तथा त्याग-प्रत्याख्यान को सयम-सुमेरु गुरु भगवन्त से कृपा-प्रसाद के रूप मे ही ग्रहण करते । श्री अजीतराज जी मेहता व श्री चुन्नीलाल जी ललवानी के बगलो पर विराजने पर उन्होने क्रमश: दो वर्ष व एक वर्ष के लिए शीलव्रत का संकल्प किया। सुबोध कालेज परिसर मे विराज कर पूज्यपाद महावीर नगर पधारे। करुणहृदय श्री डी आर मेहता व श्री भवरलाल जी कोठारी ने वनस्पति को कष्ट का अनुभव कैसे होता है, विषय पर ज्ञान दिवाकर गुरुदेव से चर्चा का लाभ लिया।

२८ जनवरी १९८८ को आचार्यप्रवर आदि ठाणा १८ एव महासती श्री सुशीलाकवर जी म सा आदि सतियो के सान्निध्य मे महावीर नगर, जयपुर मे विरक्त बधु श्री रामावतार जैन (मीणा) निवासी उखलाना की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई। जोधपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो. कल्याणमल जी लोढ़ा ने मुमुक्षु के प्रति शुभकामना प्रकट करते हुए जैन धर्म मे प्रतिपादित प्रव्रज्या एव मानवीय मूल्यो को उजागर किया। आचार्यप्रवर ने अपने उद्बोधन में कहा-"**आज विश्व को शस्त्रधारी सैनिकों की नही, शास्त्रधारी सैनिकों की आवश्यकता है। समाज में तप-सयम का बल जितना बढ़ेगा, उतनी ही सुख-शान्ति कायम होगी। वीतराग पद पर कोई भी व्यक्ति अग्रसर हो सकता है, चाहिए दृढ़ इच्छा-शक्ति, वैराग्य और उत्साह।**" बड़ी दीक्षा के पश्चात् नवदीक्षित मुनि का नाम 'अर्हद्दास मुनि' रखा गया। श्री इन्दरचन्दजी डागा एव श्री गोपी जी कुम्हार ने सदार आजीवन शीलव्रत का नियम लिया।

दीक्षा के पश्चात् साधना-भवन बजाज नगर, रामबाग स्थित गुरुभक्त सुश्रावक श्री पूनमचन्दजी बडेर के बगले, श्री एस. आर. मेहता के बगले होकर भगवान महावीर विकलाग सहायता समिति परिसर मे विकलागो को निर्व्यसनता की प्रेरणा करते हुए गुलाब निवास फरसकर पूज्यपाद ४ फरवरी ८८ को लालभवन पधारे। गुरुभक्त चिन्तक श्रावक श्री श्रीचन्दजी गोलेछा ने सन्त-सती मण्डल में ज्ञान की अभिवृद्धि विषयक विचार गुरुचरणो मे प्रस्तुत किये। लाल भवन से बरडिया कॉलोनी, मोती डूँगरी फरसकर आप जवाहर नगर पधारे व श्री राजेन्द्र जी पटवा के बगले पर विराजे। यहां से आप आदर्शनगर पधारे। मोती डूगरी में फाल्गुनी पूर्णिमा ३ मार्च ८८ को सवाईमाधोपुर, अलीगढ, रामपुरा, चौथ का बरवाड़ा आदि स्थानो के श्रावक विनति लेकर उपस्थित हुए। एवरेस्ट कॉलोनी, न्यू लाइट

कॉलोनी होते हुए महावीर जयन्ती पर करुणानाथ महावीर नगर विराजे। श्री प्रकाशजी कोठारी ने विवाह में फूलो की सज्जा का प्रयोग नही करने एव रात्रि भोजन नही करने का व्रत लिया। स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणो से आचार्य श्री का जयपुर विराजना हुआ।

अक्षयतृतीया पर १५ तपस्वी बहनो ने श्रद्धा समर्पित की एवं शीलव्रत के अनेक नियम हुए। आराध्य गुरुदेव के आचार्य पद आरोहण के इस दिवस पर श्री सुमेरसिहजी बोथरा ने वर्ष मे ६१ दिन, श्री लालचन्दजी कोठारी, श्री ज्ञानचन्दजी कोठारी एवं श्री मोतीचन्दजी कर्णावट ने ३१ दिन तथा श्री ज्ञानचन्दजी बालिया ने १५ दिन सघ-सेवा मे देने का सकल्प लेकर गुरु चरणो मे आस्था व्यक्त की। चरितनायक के प्रति श्रद्धालु गुरु भक्त श्रावको की अपार आस्था ही थी कि वे सघ-सेवा के लिए अपना गृहस्थ जीवन का मूल्यवान समय देने के लिये तत्पर होते तथा गुरुदेव भी उन्हे कर्मक्षय का नितनूतन मार्ग प्रशस्त करते रहते। यहॉ पर अपराह्न की वाचना नियमित रूप से चलती रही। सयमधन गुरुदेव से बारह व्रत अगीकार कर श्री चन्द्रराज जी सिघवी ने अपना जीवन सयमित बनाया।

- आचार्य श्री रत्नचन्द्रजी म. की १४३ वीं पुण्यतिथि

आचार्यश्री रत्नचन्द्र जी म सा की १४३वी पुण्यतिथि पर ३० मई ८८ ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी को १४३ दया एव पौषध हुए तथा चरितनायक ने उन पूज्यप्रवर महापुरुष का गुणानुवाद करते हुए फरमाया—"महावीर के प्रतिनिधि के रूप मे धर्माचार्यों की महत्ता सासारिक प्राणियो के लिए बनी हुई है। ससार मे तीन बड़े उपकारी माने गये है—

१ माता-पिता, जो जन्म देकर बड़ा करते है।

२ जीवन को लौकिक व्यवहार मे सक्षम बनाने वाला गुरु, कलाचार्य, शिक्षक आदि।

३ आध्यात्मिक क्षेत्र मे धर्म का बोध देने वाले आध्यात्मिक गुरु।

आज हम ऐसे धर्म गुरु रूप धर्माचार्य का स्मृति-दिवस मना रहे है जो जैन जगत् एव सन्त समुदाय मे कोहिनूर हीरे की भाति प्रकाश फैलाने वाला था। आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी महाराज की परम्परा २२५ वर्षों से जयपुर की जनता को प्रतिबोध देती आ रही है। सभी आचार्यो एव बड़े-बड़े सन्तो ने यहॉं चातुर्मास कर समाज को धर्मदेशना से उपकृत किया है।"

- सवाईमाधोपुर की ओर

२२ जून बुधवार ज्येष्ठ शुक्ला एकम को सवाईमाधोपुर चातुर्मास के लक्ष्य से विहार कर पूज्य चरितनायक सागानेर गोशाला मे पधारे। श्रावक-श्राविकाओ ने यहॉ भी बड़ी सख्या मे आकर अपने गुरुदेव से जीवन के आध्यात्मिक पक्ष को उज्ज्वल बनाने हेतु मार्गदर्शन लिया। यहॉ से पूज्यपाद गुरुदेव ने वाटिका मोड के शिवमन्दिर मे रात्रि विश्राम किया।

विहार मे सन्तो को जो भी उपयुक्त निरवद्य स्थान मिलता है, वहॉ पर ही रात्रि-विश्राम किया जाता है। कभी तरु के तले, कभी मन्दिर मे, कभी विद्यालय भवन मे, कभी पचायत भवन मे तथा कभी किसी बाड़े मे रहकर भी वे अपने चित्त मे किसी प्रकार के भय एव विषम भावो से आक्रान्त नही होते। आचार्य श्री की सहजता एव समत्वभावो से न केवल सहवर्ती सन्त अपितु श्रावक-गण भी अभिभूत थे। औद्योगिक स्थलो मे ठहरते समय श्रमिक वर्ग को निर्व्यसनता की एव उद्योगपतियो को उदारदृष्टि की प्रेरणा करना आपश्री का स्वभाव था। आपने मार्ग मे

अरिहन्त पेपर मिल्स, भण्डारी केबल्स, बडेर जी की फैक्ट्री (चाकसू) आदि के प्राङ्गणो मे भी धर्म सस्कारो व उदात्त जीवन मूल्यो की प्रेरणा की।

विहार-काल मे २९ जून ८८ को कौथून ग्राम मे दिन व रात्रि मे मेघ वर्षा होती रही। जिस तिबारे मे गुरुदेव अपनी सन्तमण्डली के साथ ठहरे थे, वह भी ऊपर से चूने लगा। सन्तो ने बैठे-बैठे रात निकाली। गुन्सी, मुण्डिया , चैनपुरा होते हुए आप निवाई धर्मशाला मे विराजे। यहां सवाई माधोपुर क्षेत्र के पचासो भाई दर्शनार्थ आए। यहॉ से पाद-विहार में लगभग १५ भक्त साथ हो गए। निवाई से रेल की पटरी के साथ वाली पगडडी से विहार मे कांटे एव ककर थे, किन्तु आत्मबली परीषह विजेता महापुरुष के लिये ये साधक जीवन मे आने वाले सहज परीषह थे। दैहिक कोमलता व सुखाभिलाषा त्यागने वाले दृढ आत्मबली महापुरुष ही मोक्षमार्ग का आरोहण कर सकते है। नलागॉव मे जाट ग्रामीणो को बीड़ी, सिगरेट आदि धूम्रपान का प्रत्याख्यान करा कर उन्हे व्यसन मुक्त करते हुए पूज्यपाद सिरस मे महादेवजी के मन्दिर मे विराजकर गॉव मे पधारे। यहा दिगम्बर जैन भाई श्री रतनलालजी अग्रवाल की सेवा-भक्ति सराहनीय रही। शिवाड़ , ईसरदा होकर आपने बनासनदी का पुल भी पटरी के रास्ते मे पार किया। थोड़ी जगह होने से इस पुल को पार करना अत्यन्त कठिन है। अनेक बार यहॉं दुर्घटनाऍं भी हुई है। वर्षा का भी जोर था, किन्तु मार्ग की कठिनाइयो की परवाह न करते हुए पूज्य गुरुदेव सवाई माधोपुर की ओर बढ़ते रहे। कठिनाइया व बाधाए आत्मविजेता महापुरुषो का पथ कब अवरुद्ध कर पाई है। सुरेली ग्राम, चौथ का बरवाड़ा, एकड़ा चौकी, देवपुरा को फरसते हुए धमूण चौकी मे रेलवे क्वार्टर मे रुककर पूज्यप्रवर १५ जुलाई ८८ को बजरिया पधारे।

* सवाई माधोपुर चातुर्मास (सवत् २०४५)

विक्रम सवत् २०४५ सन् १९८८ मे आपके ६८वें चातुर्मास का सौभाग्य सवाईमाधोपुर को प्राप्त हुआ। आचार्य श्री ने जयनाद करते सैकडो श्रद्धालुओ के साथ २० जुलाई ८८ आषाढ शुक्ला ६ को महावीर भवन मे मगल प्रवेश किया । प्रवेश के समय चार सन्तो के बेले की तपस्या थी। सवाईमाधोपुर मे १४ वर्षो के पश्चात् आपका यह द्वितीय चातुर्मास था, जिसमे अतीव प्रबल उत्साह देखा गया। महावीर भवन मे धर्माराधन का ठाट लग गया। महासती श्री सुशीला कंवर जी म.सा आदि ठाणा ६ के चातुर्मास का भी इस नगर को सुयोग मिला, जिससे महिलाओ के ज्ञानार्जन एव धर्माराधन को बल मिला। ५० युवको ने यथाशक्ति एक माह, दो माह एव पूरे चातुर्मास काल में ब्रह्मचर्य पालन का नियम तथा दो माह एव चार माह तक रात्रिकालीन सवर-साधना का संकल्प ग्रहण कर सयमधनी रत्नत्रयाराधक गुरु भगवतो का सच्चा स्वागत अभिनन्दन किया। चातुर्मास मे मासखमण सहित दीर्घ तपस्याऍं, प्रतिदिन लगभग एक हजार सामायिके, अखड नवकार मत्र का जाप, युवको द्वारा धार्मिक अध्ययन आदि कार्यक्रम विशेष आकर्षक रहे। स्थानक के पास रहने वाले सिक्ख सरदारजी ने मांस का त्याग किया तथा उन्होने सत-समागम प्रवचन-श्रवण व धर्म-साधना का नियमित लाभ लिया। जैनेतर बहिन श्रीमती दुर्गा पटवा ने अठाई तप व राठौड़ समाज की एक बहिन ने तेले की तपस्या की। सजोडे आजीवन शीलव्रत के पांच प्रत्याख्यान हुए। श्री सुकनराजजी गुगलिया, हैदराबाद ने वर्ष मे १२ पौषध का नियम लिया। श्री हसराजजी जैन एण्डवा बजरिया ने ६१ दिवसीय मौन साधना कर जप, तप व मौन साधक गुरुदेव के प्रति अपनी श्रद्धा का क्रियात्मक रूप प्रस्तुत किया।

अपराह्न में आचार्य श्री प्रतिदिन साधु-साध्वियो के लिये विशेषावश्यक भाष्य की वाचना करते थे। महासती मण्डल के सान्निध्य मे महिलाओ मे धार्मिक शिक्षण चलता तथा सन्तो के सान्निध्य मे स्वाध्यायरत अनेक युवक स्वाध्यायी बने। परम गुरुभक्त एव प्रज्ञाशील श्री नथमलजी हीरावत जयपुर ने युवको को स्वाध्याय हेतु विशेष प्रेरणा

दी। यहा १ से ५ अक्टूबर तक ध्यान साधना शिविर आयोजित हुआ, श्री महावीर रत्न कल्याण कोष की स्थापना हुई। १ नवम्बर ८८ को आचार्यप्रवर की वयोवृद्ध शिष्या महासती श्री सुगनकवरजी म.सा. का ७९ वर्ष की अवस्था मे मेड़तासिटी मे सथारापूर्वक स्वर्गवास होने पर श्रद्धाजलि अर्पित की गई। चातुर्मास मे बैंगलोर, मद्रास, जयपुर, जोधपुर हैदराबाद, नागौर, अजमेर, भरतपुर, मेड़ता, कोटा, दिल्ली, अहमदाबाद एव पोरवाल पल्लीवाल क्षेत्र के अनेक स्थानो से दर्शनार्थी बन्धुओ का आवागमन विशेष रूप से बना रहा। चातुर्मास मे श्री रामदयाल जी जैन सर्राफ, श्री राधेश्याम जी गोटेवाला, श्री बजरग लाल जी सर्राफ, श्री नरेन्द्र मोहनजी आदि श्रावको सहित समस्त श्रावक-श्राविकावृन्द ने भक्तिभाव व सघ-सेवा का आदर्श प्रस्तुत किया।

वर्षावास की समाप्ति के पश्चात् आप मार्गशीर्ष कृष्णा एकम २४ नवम्बर को विहार कर आलनपुर पधारे। विहार का दृश्य अद्‌भुत था। लगभग पॉच हजार श्रावक-श्राविकाओ के जयनाद से गगन गूँज उठा। सभी के हृदय श्रद्धा से परिपूरित थे। आलनपुर मे अनेक ग्राम-नगरो के श्रावक-मण्डलो ने क्षेत्र स्पर्शन की विनतियॉ प्रस्तुत की। श्री रामप्रसादजी बाबई, श्री जीतमलजी करेला वाले, श्री लड्डूलालजी चौधरी, श्री कल्याणजी माली ने आजीवन शीलव्रत व कतिपय युवको ने दो वर्ष एव एक वर्ष शीलव्रत-पालन का नियम स्वीकार कर अपना जीवन शील सौरभ से सुरभित करते हुए गुरु-चरणो मे सच्ची श्रद्धा समर्पित की।

• अलीगढ-रामपुरा, देई होकर कोटा

आलनपुर से बजरिया पधारने पर पूज्य चरितनायक ने नवयुवको एव स्वाध्यायियो को शासन सेवा व स्वाध्याय की विशेष प्रेरणा दी। श्री सोभागमल जी, श्रीगणपतजी, श्री राजमलजी आदि ने यथाशक्ति एक - दो वर्ष के शीलव्रत का नियम लिया। ४ दिसम्बर को सामूहिक दयाव्रत का आयोजन हुआ। आदर्शनगर होते हुए आप करेला ग्राम पधारे, जहॉ ग्रामीणो ने मास, मदिरा, बीड़ी, सिगरेट के त्याग हेतु नियम लिये।

करुणाकर गुरुदेव ने गम्भीरा ग्राम मे प्राथमिक शाला के छात्र-छात्राओ को कुव्यसन-त्याग का सामूहिक नियम कराया। आपकी प्रेरणा से कुश्तला मे बालको के लिए धार्मिक पाठशाला प्रारम्भ हुई। बिशनपुरा मे फूलचन्दजी को शीलव्रत के प्रत्याख्यान कराकर पूज्यप्रवर पचाला पधारे, जहॉ ३२ वर्षो से चला आ रहा पारस्परिक विवाद समाप्त हुआ एव हर्ष की लहर दौड़ गई। यहॉ श्री पूरणमलजी, श्री चिरजीलालजी, श्री देवीशकरजी सोनी, श्री प्रतापजी गूजर एव श्री बसन्तलालजी प्रजापत ने जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्यव्रत का नियम ग्रहण कर अपना जीवन शील सौरभ से सुरभित करते हुए गुरु चरणो मे अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त की। चोरू ग्राम मे श्री कल्याणमलजी हलवाई, श्री अनोखचन्दजी जैन, श्री नन्दलालजी अहीर, श्री बजरगलालजी खवास, श्री देवीलालजी कलाल एव श्री रामप्रतापजी नायक ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। जैनपुरी अलीनगर मे श्री मोरपालजी मीणा ने आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपना जीवन सयमित बनाया। यहॉ पर मीणा समाज जैनधर्म का पालन करता है। उखलाना ग्राम मे भी मीणा समाज का बाहुल्य है, जो भक्तिपूर्वक जैनधर्म का अनुयायी है। श्री किशनजी मीणा एव श्री बिशनजी मीणा ने शीलव्रत स्वीकार कर गुरु चरणो मे भेट समर्पित की।

आप १७ दिसम्बर ८८ को अलीगढ-रामपुरा ग्राम में पधारे, जहॉ बाजार मे प्रवचन हुए। उत्कृष्टशील साधक पूज्य गुरुवर्य के पावन सान्निध्य का लाभ लेकर श्री कुजबिहारी जी शर्मा, श्री धन्नालालजी माथुर, रामदयालजी माथुर व राजमलजी जैन ने आजीवन शीलव्रत अगीकार किया। श्री राजमलजी जैन ने सादगी पूर्ण सात्त्विक जीवन शैली के २० नियमो से भी अपना जीवन अलकृत किया। ३७ युवा स्वाध्यायी सदस्यो ने पर्युषण सेवा का नियम ग्रहण

कर गुरु हस्ती के स्वाध्याय संदेश को देश के कोने-कोने में प्रसारित करने का सकल्प लिया। यहाँ आयोजित धार्मिक शिक्षण शिविर मे १५८ शिविरार्थियों ने ज्ञानार्जन का लाभ लिया। फिर पूज्यप्रवर ने बिलोता, गाडोली एव खातोली में १० व्यक्तियों को शीलव्रती बनाया तथा धर्म के सस्कारो को आगे बढ़ाने हेतु प्रेरणा की। समिधि, बालापुरा एव जरखोदा मे भी जैन-अजैन भाइयों को शीलव्रती बनाने का प्रभावी क्रम चला। अग्रवाल, धाकड़, मीणा आदि भी शीलव्रती बने। क्रमश विहार करते हुए आप २९ दिसम्बर को देई गाँव में पधारे जहाँ नवयुवको ने विवाह में नृत्य नही करने, सप्त कुव्यसन को छोड़ने और दहेज की माग नही करने के नियम स्वीकार किये। श्री निहालचन्दजी, श्री राजमलजी अग्रवाल एव श्रीनाथजी पण्डित ने जीवनभर के लिए शीलव्रत-पालन का नियम अगीकार किया। देई के अग्रवाल जैन समाज मे श्रद्धा-भक्ति एव धर्माराधन की निराली छटा है।

देई से भजनेरी, बासी, सावतगढ, राणीपुरा, दबलाना, अलोद, धनावा होकर बूँदी पधारे। बूँदी में मात्र दो दिन विराजकर देवपुरा, तालेड़ा, बावड़ी, बडगाव होते हुए आप सन्तमडली सहित मकर संक्रान्ति १४ जनवरी १९८९ को औद्योगिक नगरी कोटा पधारे। आचार्यप्रवर एव सन्तमण्डल के स्वागत मे ५० युवको ने सामायिक की वेशभूषा मे नयापुरा से रामपुरा स्थानक तक साथ विहार-सेवा का लाभ लेते हुए अपने उत्साह व गुरु-भक्ति का परिचय दिया।

• कोटा मे जयन्ती का अद्भुत रूप

आपके ७९ वे जन्म-दिवस के अभिनदन के प्रतीक रूप मे २० जनवरी १९८९ को कोटा मे २० युवा दम्पतियो ने ७९ दिन तक ब्रह्मचर्य व्रत के पालन का सकल्प किया। आचार्य श्री की प्रेरणा से अनेक युगलो ने अपने जीवन मे पति-पत्नी के सम्बन्ध को त्यागकर भावी जीवन को भाई-बहन के समान चलाने का चिन्तन कर ब्रह्मचर्य पालन का सकल्प किया। इन सबका अपराह्न मे सम्मान किया गया। यहाँ पर ५१ स्वाध्यायी नवयुवक तैयार करने के सकल्प के साथ श्री जैन शिक्षण सघ की स्थापना हुई। आचार्यप्रवर ने फरमाया-"उपदेश देने वाले तो बहुत मिलेगे, किन्तु उसे जीवन मे उतारने से ही सच्चे अर्थों मे जीवन निर्माण हो सकेगा। इसके लिए स्वाध्याय परमावश्यक है।" समारोह के अध्यक्ष श्री सुमेरसिंहजी बोथरा (जयपुर) एव विशेष अतिथि श्री शान्तिलाल जी धारीवाल (कोटा) ने भी अपने विचार प्रकट करते हुए आचार्य श्री की दूरदृष्टि एव वात्सल्य भाव की प्रशसा की। आचार्य श्री की प्रेरणा से निर्व्यसनता के भी संकल्प हुए। हजारो की संख्या मे सामायिक, उपवास, पौषध आदि हुए।

आचार्य श्री का सत्सस्कारो पर सदैव बल रहा है। यहाँ पर आपने उपस्थित बहिनो से प्रश्न किया — "ऐसी कितनी बहिने है, जो बच्चो को अच्छे सस्कार देती हैं? माता-पिता को चाहिए कि वे अपने बालको मे शुरू से ही अच्छे सस्कार भरे, जिससे आगे चलकर उनके बच्चे सदाचरण सम्पन्न बन सके।" यहाँ श्री नेमीचन्दजी सुनारी वाले, श्री रामप्रसादजी उखलाना वाले, श्री लड्डूलालजी बिशनपुरा वाले, श्री महेन्द्रकुमारजी वेद, श्री पूरणजी धूपिया, श्री लक्ष्मीचन्दजी पोरवाल, श्री सूरजमलजी धूपिया, अमरचन्दजी कोठारी कुलिश जयपुर आदि ने सदार आजीवन शीलव्रत-पालन का नियम लिया। आचार्य श्री ने महावीर नगर, तलवण्डी आदि उपनगरो को भी पावन किया।

८ फरवरी को आचार्य श्री का दीक्षा-दिवस तप-त्याग पूर्वक मनाया गया। प्रमुख शिष्य प रत्न श्री हीरामुनि जी म.सा. ने आचार्यप्रवर के साधनाशील जीवन की त्याग एव वैराग्यमय झलकियाँ प्रस्तुत करते हुए उनसे शिक्षा ग्रहण कर जीवन-निर्माण की प्रेरणा की। श्री पारसजी धारीवाल एव श्री राजमलजी पोरवाल ने शीलव्रत स्वीकार किया।

• तीन महापुरुषो का स्मरण

१० फरवरी को ठाणा ८ से महावीर मिशन अस्पताल पधारे। यह बसन्तपचमी का दिन था। आचार्य देव ने अपने प्रवचन मे फरमाया –"आपने १०१ शीलव्रत आदि से धर्म की महती प्रभावना की। आज बसन्तपचमी (माघ शुक्ला पचमी) पर पुन इस नगर के उपान्त्य भाग मे एक नई लहर प्राचीन महापुरुषो के जन्म, दीक्षा एवं पुण्य स्मृति के रूप मे उपस्थित है। आज भूधरवश के आचार्य श्री रघुनाथजी महाराज की २७९ वी जन्म तिथि है, स्वामीजी श्री पन्नालालजी मसा की पुण्यतिथि है तथा गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी मसा का दीक्षा-दिवस है । इस अवसर पर हमे चाहिए कि तीनो महापुरुषो के जीवन से प्रेरणा प्राप्त करे।"

"आचार्य श्री रघुनाथजी महाराज भूधरवश के मुख्य आचार्य थे। तेरापथ सम्प्रदाय के प्रथम आचार्य श्री भिक्खुस्वामीजी श्री रघुनाथजी महाराज के ही शिष्य थे। आप बड़े त्यागी, वैरागी एव प्रभावशाली आचार्य थे। मरुधरा मे आचार्य श्री का बड़ा उपकार रहा है। दूसरे महापुरुष स्वामीजी श्री पन्नालालजी महाराज ने जिनशासन की स्थायी रक्षा के लिये स्वाध्याय सघ की स्थापना कर जैन समाज पर बड़ा उपकार किया है। तीसरे महनीय महापुरुष आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी मसा. है, जो हमारे धर्माचार्य एव धर्मगुरु थे। आप बड़े ही शान्त, दान्त, गम्भीर एव लोकप्रिय सन्त थे। समभाव की साक्षात् मूर्ति थे।

तीनो महापुरुषो के गुणस्मरण के प्रसग पर आप कम से कम पॉच-पॉच सामायिक के साथ शीलव्रत की आराधना कर उन्हे सच्ची श्रद्धाजलि अर्पित करे। "

• बूँदी, देवली, दूनी होकर टोंक

यहॉ से ११ फरवरी को विहार कर बडगाव, वल्लोप, तालेड़ा आदि को अपने पाद विहार से पावन करते हुए पूज्यपाद बून्दी पधारे। बैठक मे घाव हो जाने से आपश्री का यहॉ कई दिन विराजना हुआ। आपके दर्शनार्थ एव सुखसाता पृच्छा हेतु अनेक क्षेत्रो के श्रावको का आवागमन बना रहा।

आपकी दैनन्दिनी से ज्ञात होता है कि ६ मार्च १९८९ को आपको ऐसा आभास हुआ कि अब यह जीवन सीमित है। प्रतिपल सजग, अप्रमत्त योगी पूज्य आचार्यप्रवर यद्यपि निस्पृह साधक थे, तथापि सघ व्यवस्था आपके पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा दिया गया उत्तरदायित्व था। आपका चिन्तन चला कि अब मुझे भावी सघ-व्यवस्था का चिन्तन कर शनै-शनै सघ-सचालन से विराम ले लेना है व पूर्ण समय हर क्षण आत्म-भाव मे ही लीन रहना है। दैनन्दिनी से ऐसा भी ज्ञात होता है कि सन्तो मे से एक को आचार्य व एक को उपाध्याय बनाने की इसी समय मे आपके मन मे स्फुरणा हुई। शिष्य मडल को आपने त्याग, तप एव ज्ञानाराधन का बन्धुभाव से लाभ लेने एव कर्तव्य निर्वहन मे सघ की शोभा बढ़े, यह प्रेरणा दी । श्रावक समाज को भी प्रेम, सगठन व अनुशासन की प्रेरणा दी। परस्पर सहयोग, एक-दूसरे को आगे बढ़ाने की भावना सघ-विकास का सूत्र है, यह चिन्तन निरन्तर चलता रहा। ७ मार्च को समागत भक्तो व कार्य कर्ताओ को मार्गदर्शन देते हुए आराध्य गुरुदेव ने हृदयस्पर्शी विचार रखते हुए फरमाया - **"जलता हुआ दीप अपने पास आने वाले दीप को आलोकित कर देता है, तो क्या मानव अपने पुरुषार्थ से अपने साथियों को प्रमुदित-विकसित नही कर सकता? अच्छा बीज मिट्टी में गिर कर भी नये वृक्षों को खड़ा कर देता है, फिर मानव अपने सम्पर्क में आये निर्बल को क्या ऊपर नही उठा सकता है।"**

९ मार्च को बून्दी से २ किलोमीटर का विहार कर आप ठडी बावड़ी प्राकृतिक चिकित्सालय पधारे, जहॉ श्री

बच्छराजजी दुग्गड ने आजीवन शीलव्रत अँगीकार कर गुरुचरणो में अपनी श्रद्धाभिव्यक्ति की। यहाँ से ऐतिहासिक स्थल तलाब गाव, सतूर फरस कर पूज्यप्रवर बडा नयागाँव पधारे। यहाँ बघेरवालो के १४ घर है। यहा पर प्रवचन दिन में गुरुद्वारा में हुआ। गाववालो की श्रद्धा-भक्ति व उत्साह सराहनीय रहा। यहाँ कोटा, बून्दी व देवली के श्रावक दर्शनार्थ उपस्थित हुए। जोधपुर एव जयपुर के श्रावको ने उपस्थित होकर श्री चरणों मे अपनी विनति प्रस्तुत की।

बड़ा नयागाव से विहार कर पूज्यपाद चतरगज होते हुए हिण्डोली पधारे। हिण्डोली से भीमगज तक जैन शिक्षण सघ, जयपुर के युवा सदस्यो ने सामायिक वेश मे विहार-सेवा का लाभ लिया। यहा से पूज्यपाद पेच की बावड़ी, इटून्दा होते हुए टीकड़ गाव पधारे। यहाँ जयपुर श्री सघ के शिष्ट मडल ने उपस्थित होकर चातुर्मासार्थ भावभीनी विनति प्रस्तुत की। मार्गस्थ क्षेत्रों को अपने पाद विहार से पावन करते हुए करुणाकर गुरुदेव देवली पधारे। यहाँ जयपुर जोधपुर, अजमेर, किशनगढ, ब्यावर, केकडी, देई, सवाई माधोपुर आदि क्षेत्रो के प्रतिनिधिगण पूज्यप्रवर के चातुर्मास व क्षेत्र-स्पर्शन की विनति लेकर श्री चरणो मे उपस्थित हुए।

देवली मे धर्मप्रभावना कर परमपूज्य चरितनायक बिसलपुर, पनवाड़, सिरोही, बनथली फरसते हुए दूनी पधारे। यहाँ स्थानकवासी समाज के १९ घर है, एव उनमें धर्म के प्रति रुचि सराहनीय है।

यहा से छानगाव, मेन्दवास, बाडा आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए पूज्य चरितनायक टोक पधारे। यहाँ जैन जैनेतर सभी ने पूज्यपाद आचार्यदेव के पावन दर्शन व सान्निध्य का लाभ लिया। अरबी भाषा शोध सस्थान के निदेशक श्री शौकत अली ने आपके दर्शन व प्रवचन-श्रवण का लाभ लेकर कर अपने आपको कृतकृत्य समझा। जलगाव से दर्शनार्थ उपस्थित अनन्य भक्त अग्रगण्य समाजसेवी एव उदीयमान राजनेता श्री सुरेश दादा जैन को मार्गदर्शन देते हुए पूज्यप्रवर ने फरमाया - "राजस्थान की भाति महाराष्ट्र मे भी अहिसा का प्रचार-प्रसार होना चाहिये।" श्रद्धालु भक्त ने श्रद्धावनत होते हुए निवेदन किया –"भगवन् प्रयास जारी है। पूर्व मे सरकार की ओर से विद्यार्थियो को मासाहार, अण्डे आदि दिये जाते थे, आपकी कृपा से वे बन्द हो गये हैं।"

टोक मे तीन दिन तक धर्मोद्योत कर आपश्री मेवग्राम, मोटूका, पहाड़ी फरसते हुए निवाई पधारे। यहाँ भी विभिन्न क्षेत्रो के श्रद्धालुभक्तो का आराध्य गुरुदेव के पावन-दर्शन, मगलमय-प्रेरणा व धर्माराधन हेतु आवागमन बना रहा। रामनवमी के दिन करुणाकर ने मूण्डिया ग्राम मे भैंसे की बलि बन्द करने की प्रेरणा की, जिसका सकारात्मक प्रभाव हुआ। यहाँ पुजारी को देवी द्वारा प्रेरणा की जाती थी, किन्तु उस दिन देवी नही आई। अहिसा, सयम व तप के धनी मोक्षमार्ग आराधक षट्काय-प्रतिपालक जन्मना अखड ब्रह्मचर्य तेज से दीप्त महापुरुषो के पावन चरण सरोजो मे देव-देवी क्या देवेन्द्र भी झुकते रहे है। श्रमण भगवान महावीर ने अपनी पावन देशना मे फरमाया भी है–

देव दाणव गधव्वा, जक्ख-रक्खस-किन्नरा।
बभयारि नमसति, दुक्कर ज करेति त॥

करुणानाथ की पावन प्रेरणा से यहां बलिप्रथा सदा-सदा के लिये बन्द हो गई, बाद मे सरकार द्वारा भी पशुबलि पर रोक लगा कर इसे वैधानिक तौर पर बन्द कर दिया गया।

कौथून, जयसिंहपुरा चाकसू , यारलीपुरा, भडारी केबल्स, शिवदासपुरा फरसते हुए सुखपुरिया गाव पधारे। यहा जयपुर से बडी संख्या मे श्रावक श्राविका आपके दर्शनार्थ उपस्थित हुए। महावीर जयन्ती लाल भवन जयपुर मे करने की पूज्यपाद की स्वीकृति मिलने पर जयपुरवासियो के उल्लास का पारावर नही था। महावीरनगर होते हुए १७ अप्रेल चैत्र शुक्ला १२ को शिष्य मडली सहित पूज्य आचार्य भगवन्तका जयपुर के लाल भवन मे पदार्पण हुआ।

शासनेश महावीर की जयन्ती के प्रेरक प्रसग पर युगप्रभावक आचार्य भगवन्त ने उपस्थित श्रोता समुदाय को श्रमण भगवान महावीर के उपदेशो को जीवन मे उतारने की प्रेरणा की। श्री उमरावमल जी चोरड़िया ने ५ वर्ष का शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को सयमित करने की ओर कदम बढाये। २१ अप्रेल को आप श्री सग्रामसिंहजी कोठारी के आवास पर विराजे। श्री कोठारीजी ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत अगीकार कर परमाराध्य गुरुदेव की महनीय कृपा पर सच्ची प्रसन्नता व क्रियात्मक उल्लास व्यक्त किया। यहाँ से आप परमभक्त एव विश्रुत विद्वान् प्रो. कल्याणमलजी लोढा के बगले पर विराजे, जहाँ करुणाशील भक्त श्री देवेन्द्रराजजी मेहता व श्री महावीरचन्द जी भण्डारी ने अहिसा के क्रियात्मक स्वरूप के बारे मे आपका मार्गदर्शन प्राप्त किया। श्री उमरावमलजी चोरड़िया व श्री प्रकाश जी कोठारी के फार्म हाउस होकर पूज्यप्रवर बगरू, गाड़ोता, गीदाणी, दूदू पड़ासोली, वानरसिदड़ी, फरसते हुए ३ मई को किशनगढ पधारे। मार्गस्थ जिन-जिन गावो को भी आपश्री के विराजने का लाभ मिला, आपकी जीवन-निर्माणकारी प्रेरणा से अनेक ग्रामीणजनो ने धूम्रपान-त्याग, व्यसन-त्याग आदि विविध त्याग प्रत्याख्यान स्वीकार किये।

• मदनगज में अक्षय तृतीया एव भागवती दीक्षा

वैशाख शुक्ला तृतीया ८ मई १९८९ को अक्षयतृतीया एवं भगवान आदिनाथ पारणक दिवस पर मदनगज मे १५ तपस्वी भाई बहिनो के पारणक हुए। परमाराध्य कृपानिधान गुरुदेव के आचार्यपद आरोहण के इस पावन दिवस पर श्री सुमेरनाथ जी मोदी जोधपुर, श्री विमलचन्द जी जैन डेहराग्राम एव श्री धोकलचन्दजी चोरड़िया ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत अगीकार किया।

११ मई १९८९ को बाल ब्रह्मचारिणी बहिन विमलेश जैन (सुपुत्री श्री मदनमोहन जी जैन एव श्रीमती शकुन्तला जैन, महुआ रोड़) ने पूज्यपाद के मुखारविन्द से स्थानीय व आगन्तुक हजारों श्रावक-श्राविकाओ की उपस्थिति मे भागवती श्रमणी दीक्षा अगीकार कर सयमपथ अपनाकर मोक्षमार्ग मे अपने चरण बढाये। १७ मई को बड़ी दीक्षोपरान्त नवदीक्षिता महासतीजी का नाम महासती श्री विमलेशप्रभाजी रखा गया। इस अवसर पर शाकाहार एव सेवा-भावना हेतु सघ की ओर से डा फैयाज अली का सम्मान किया गया।

शुद्ध सयम एव साध्वाचार की मर्यादाओ के पालक आचार्य भगवन्त ने कभी भी आचार से अधिक प्रचार को महत्ता नही दी। सघशास्ता पूज्यप्रवर ने सघ मे सदा श्रद्धा, समर्पण व अनुशासन को प्रधानता दी। आपश्री स्वय को भी सघ सेवक ही समझते, साथ ही दृढता से सयम व अनुशासन का पालन करवाते थे। मर्यादाओं के पालन मे कभी भी व्यक्ति, परिवार, क्षेत्र या सख्या कभी भी आपकी शासन व्यवस्था मे आड़े न आई। सयम धन अमूल्य है। अनन्त-अनन्त जन्मो की पुण्यवानी से ही मोक्षमार्ग मे गतिशील होने का अवसर मिलता है। करुणार्द्र गुरुदेव ने सघविरोधी गतिविधियो के लिये श्री शीतल मुनि जी को पृथक् करने का निर्णय सुरक्षित रखते हुए भी उन्हे सघमर्यादा मे स्थिर होने का अवसर प्रदान किया तथा एक वर्ष के साधना वर्ष (परीक्षा वर्ष) की व्यवस्था दी। उनके साथ श्री धन्ना मुनि जी का चातुर्मास बून्दी मे होना तय हुआ।

२७ मई को मदनगज से विहार कर पूज्य चरितनायक गगवाना, घूघरा, अजमेर, पुष्कर, मेड़ता सिटी, सातलास आदि मार्गस्थ ग्राम-नगरो मे धर्म प्रभावना करते हुए इन्दावड़ पधारे। प्रभावक प्रवचन मे रात्रि भोजन त्याग की महती प्रेरणा से २०-२५ व्यक्तियो ने रात्रि-भोजन त्याग का सकल्प किया।

• कोसाणा चातुर्मास (संवत् २०४६)

इन्दावड़ से गगराणा, पुरलू, खवासपुरा, चौकड़ी कला, नारायणजी चौधरी की ढाणी आदि मार्गस्थ गावो को अपनी पदरज से पावन करते हुए चरितनायक पूज्य आचार्य हस्ती ने उल्लसित भक्तों द्वारा 'जैन धर्म की जय', 'श्रमण भगवान महावीर स्वामी की जय' 'आचार्य हस्ती की जय,' 'निर्ग्रन्थ गुरुदेवों की जय' 'अहिसा परमो धर्म की जय' के जयनादो के साथ १३ जुलाई १९८९ आषाढ शुक्ला १० गुरुवार को सवत् २०४६ के चातुर्मासार्थ कोसाणा के धर्मस्थानक मे शिष्य समुदाय के साथ पदार्पण किया। पूज्यपाद के चातुर्मास से गाव का चप्पा-चप्पा पुलकित था व बच्चा-बच्चा हर्षित था। धर्म सभा मे चौधरी , वनमाली, विश्नोई, ब्राह्मण, सुथार, सोनी, राजपूत व महाजन, हर जाति के लोग उपस्थित हो, आपके मगलमय दर्शन व पावन प्रवचनामृत से कृतकृत्य हो रहे थे। उपस्थिति को देखकर ऐसा लग रहा था कि सारा गॉव ही पतितपावन गुरुदेव एव सन्तों के पावन दर्शन हेतु उमड़ आया हो। हर्ष विभोर सघ-मत्री श्री घीसूलालजी बागमार एव श्री जवाहर लाल जी बागमार ने समग्र ग्रामवासियो की श्रद्धा व समर्पण का इजहार करते हुए स्वागत वचन व गीतिका प्रस्तुत की। मगल-प्रवेश के इस अवसर पर कृपानाथ ने निर्माणकारी प्रेरणा देते हुये फरमाया –" कोसाणा छोटा सा गाँव है और परमप्रतापी आचार्य श्री रत्नचन्द्रजी म.सा. का कृपा पात्र क्षेत्र रहा है। यहाँ पर हमारा यह दूसरा चातुर्मास केवल महाजनों को देखकर नही वरन् सारे अहिंसक समाज को ध्यान मे रखकर हुआ है। अहिंसक समाज मे यहाँ वनमाली, विश्नोई और चौधरी मुख्य है। इनका अहिसा के प्रति अच्छा आदर भाव है।" व्यसन मुक्ति का सन्देश देते हुए आपने फरमाया - "ग्रामवासी ऐसा वातावरण तैयार करे, जिससे यह गॉव व्यसन-मुक्त बन सके।" आपने समस्त ग्रामवासियो को मिलकर प्रेम से रहने, पीड़ित एव असहाय भाइयो की सेवा करने, पशुओ के प्रति दया भाव रखने, पर्वतिथियो पर पशुओं से काम न लेने, कम से कम श्रावण एव भाद्रपद माह मे रात्रि भोजन का त्याग करने व सन्त-समागम का लाभ उठाने की प्रभावी प्रेरणा की।

चातुर्मास मे आपके विद्वान् शिष्य प. रत्न श्री हीरामुनिजी म.सा. (वर्तमान आचार्यप्रवर) ने अपनी सरल सहज सुबोध शैली मे व्यसन-मुक्ति की प्रभावी प्रेरणा की। जैन रामायण के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम शलाका पुरुष श्री राम के जीवनादर्शों का निरूपण करते हुए आपने ग्रामवासियो को मातृपितृ-भक्ति तथा आदर्श घर, समाज व राज्य कैसा हो, पर अपनी प्रभावी प्रेरणा की। आपके मार्मिक उद्बोधन से कई भाइयों ने अमल, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू सेवन, शराब आदि दुर्व्यसनो का त्याग किया।

कोसाणा ग्राम मे आचार्य भगवन्त के मगल-प्रवेश के साथ ही भाइयो एव बहनो मे तपस्या की होड़ सी लग गई। श्री झूमरमलजी बाघमार, श्री रेखचन्दजी बाघमार की धर्मपत्नी, श्री सम्पतमल जी बोथरा की धर्मपत्नी आदि ने तपस्या मे कदम बढ़ाये। १७ जुलाई को जैनेतर भाइयो ने एकाशन व्रत की आराधना कर सम्पूर्ण दिवस धर्माराधना मे बिताया। श्रावणी अमावस्या को विश्नोई, ब्राह्मण, माली, राजपूत, बढई, चौधरी एव सोनी जाति के भाइयो ने दयाव्रत का आराधन किया। मालावास के श्री जीवनसिंह जी राजपूत एव उनकी पत्नी ने अठाई तप किया। कोसाणा निवासी अमरारामजी विश्नोई ने १२ दिवसीय तप एव श्री अखेराजजी बाघमार ने मासखमण तप किया। श्री सायरचन्दजी बाघमार, श्री विमलचन्दजी डागा जयपुर आदि श्रावको ने सदार शीलव्रत के नियम लिए। श्रद्धालुओं का विभिन्न स्थानों से आवागमन बना रहा। कई श्रावक-श्राविकाओ ने आपके सान्निध्य मे श्रावक के बारह व्रतों का स्वरूप समझ कर अपने जीवन को मर्यादा में स्थिर किया।

कोसाणा चातुर्मास अवधि में १२ से १४ अगस्त तक त्रिदिवसीय साधना-शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर मे साधको को सबोधित करते हुए चारित्रनिष्ठ पूज्य आचार्य श्री ने फरमाया –"स्वाध्यायी ज्ञान की साधना करता है, पर ज्ञान के साथ क्रिया की साधना भी जरूरी है। स्वाध्यायी अच्छे वक्ता, लेखक एव प्रवचन व भाषणकला मे निपुण हो सकते है , परन्तु उनमे आचरण भी उसी के अनुरूप होना आवश्यक है। साधक साधना के द्वारा आचरण की रूपरेखा तैयार करते हैं तथा कषाय, इन्द्रिय आदि को वश मे कर साधना के क्षेत्र मे आगे बढ़ते हैं। सभी साधको को साधना के क्षेत्र मे आगे बढ़ना है। ध्यान एव मौन की साधना के साथ यदि ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की आराधना करेगे तो आपकी आत्मा का कल्याण होगा।"

पर्युषण पर्व पर आचार्य श्री के उद्बोधन का लाभ सभी धर्मावलम्बियो ने लिया। आपने फरमाया कि "दूर-दूर से सन्त-सती-सेवा मे आने वाले लोगो को अपने आगमन के उद्देश्य का विचार-चिन्तन करना चाहिए। सन्त-जीवन का नमूना अपने जीवन मे उतारने से ही यहाँ आने का आपका प्रयोजन सिद्ध हो सकेगा।"

"पर्युषण लौकिक पर्व नही है, इन दिनो को मेला नही समझकर जप-तप के साथ मनाने मे ही सार्थकता है। तपस्या के साथ त्याग भी जरूरी है। तपस्या करने वाले भाई-बहन बाहरी आडम्बरो से दूर रहे। तपस्या के प्रसग पर मायरा आदि न ले। बहिने स्वर्णजटित आभूषणो से सुसज्जित होकर तपस्या न करे। तपस्या को प्रदर्शन का रूप न दे। तपस्या के साथ कुछ त्याग करे। स्वधर्मी भाइयो को सहयोग दे। दिखावे के भाव से की गई तपस्या का पूरा लाभ नही मिलता। दिखावे मे खतरा है तथा तपस्या में आत्मशान्ति है। पर्युषण के आठ दिनो मे आठ मदो को छोड़ना है, आठ कर्मो की गाठ काटनी है। पॉच समिति तीन गुप्ति रूप आठ गुण प्रकट करने है।"

"शुभप्रवृत्ति मे दान भी श्रावकोचित गुणो का विकास करता है।" "जीवन मे सरलता आवश्यक है, तभी धर्म टिकेगा और जीवन सफल बनेगा। किसान भी तो जुते हुए खेत मे बीज डालता है, सड़क या खण्डहर मे नही, क्योकि वह अकुरित नही होगा और व्यर्थ चला जायेगा।"

पूज्यपाद का चिन्तन था कि अहिंसा व अपरिग्रह एक दूसरे के पूरक ही नही वरन् अंगभूत है। अपरिग्रह का साधक ही अहिंसा को जीवन में उतार सकता है। तप का यथावत् आसेवन भी अहिंसा का पालक ही कर सकता है। तप का मुख्य उद्देश्य हिंसादि पापों से विरत होकर जीवन में अहिंसा को प्रतिष्ठापित करना है। परिग्रह निवृत्ति व परिग्रह बढाने की लालसा रोकने की ओर, प्रदर्शन रोकना अनिवार्य व प्रथम कदम है। जितना-जितना प्रदर्शन रुकेगा, समाज में परिग्रह का महत्व घटेगा, और अधिक कमाने की दौड़ स्वत· कम होगी, येन केन प्रकारेण धन जोड़ने की अंधी दौड़ से मुक्त हो व्यक्ति स्वय आरम्भ-परिग्रह की प्रवृत्तियों से परे होकर धर्म-साधना व तप से जुड़कर साधना-पथ पर अग्रसर होगा। परिग्रह का ममत्व कम कर व्यक्ति स्वयं दुःखी जनों को सहयोग देने व दान देने की ओर आगे बढ़ेगा, किसी प्रेरणा की आवश्यकता ही नही रहेगी।

आचार्य श्री ने नशाबदी कराने, हिसा एव व्यभिचार को रोकने, बूचड़खाने नही खुलने देने, श्रावको को अपनी शक्ति तथा मत्रिजन को अपने प्रभाव का उपयोग करने की प्रेरणा की। इस अवसर पर राजस्थान के तत्कालीन गृहमत्री श्री अशोक जी गहलोत, देवस्थान विभाग मत्री श्री राजेन्द्र जी चौधरी और सहकारिता मत्री श्री रघुनाथ जी विश्नोई ने आचार्य श्री के दर्शन एव प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया। आचार्यश्री के सान्निध्य मे ११ नवम्बर को त्रिदिवसीय 'जैन सिद्धान्त प्रचार-प्रसार-सगोष्ठी' का शुभारम्भ हुआ, जिसमे ४० विद्वानो पत्रकारो आदि ने भाग लिया। विद्वत् सगोष्ठी मे आए सुझावो के क्रियान्वयन पर भी बल दिया गया कि विदेशी भाषाओ मे जैन आगमों

के अनुवाद हो तथा जैन ध्यान-केन्द्र व अन्तर्राष्ट्रीय जैन साहित्य अकादमी की स्थापना हो। १३ नवम्बर को सामायिक संघ के वार्षिक अधिवेशन में श्री राजेन्द्र जी पटवा ने संघ की प्रवृत्तियो का परिचय दिया। कोसाणा का यह चातुर्मास तप-त्याग व व्रताराधन के विभिन्न सोपानो से सानन्द सम्पन्न हुआ।

• पीपाड़ पदार्पण

स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों से पूज्य चरितनायक चातुर्मास सम्पन्न होने के पश्चात् भी कुछ समय तक कोसाणा ही विराजे। इस अवधि मे आचार्यकल्प श्री शुभचन्दजी म.सा. आदि ठाणा ५, नानकगच्छीय श्री वल्लभमुनि जी म.सा., श्री सुदर्शन मुनिजी म.सा. आदि ठाणा ३ ने पूज्यपाद के दर्शनार्थ पधार कर सुखसाता पृच्छा की। ब्यावर वर्षावास सम्पन्न कर आपके सुयोग्य शिष्य प रत्न श्री मानमुनि जी म सा. (वर्तमान उपाध्याय प्रवर) आदि ठाणा गुरुचरणो मे उपस्थित हुए। उनके पधारने के पश्चात् पूज्यप्रवर शिष्य मडल के साथ विहार कर ६ दिसम्बर १९८९ को पीपाड़ पधारे।

शारीरिक अस्वस्थता के कारण आचार्य भगवन्त का दीर्घावधि तक पीपाड़ विराजना हुआ। पूज्यपाद के विराजने से आचार्यदेव की जन्मभूमि पीपाड़ नगर तीर्थधाम बन गया। पूज्य सत वृन्द, पूज्या महासती मडल व श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ का आपश्री के दर्शनार्थ पधारना होता रहा। आपश्री के सान्निध्य मे पीपाड़वासियो को समवसरण का दृश्य लम्बे समय तक देखने को मिला, स्वधर्मी बन्धुओ के वात्सल्य व पूज्य सत-सतीवृन्द की सेवा का अनुपम लाभ मिला। पीपाड़ निवासी सहज ही प्राप्त देवदुर्लभ इस स्वर्णिम सुअवसर का लाभ उठाने मे बढ़चढ़ कर भाग ले अपनी पुण्य वृद्धि कर रहे थे। ज्ञानगच्छीय प रत्न श्री घेवरचन्दजी म.सा 'वीर पुत्र' आदि ठाणा पूज्यपाद के दर्शन व सान्निध्य लाभ हेतु पधारे। ८ दिसम्बर १९८९ को प रत्न वीरपुत्र जी म सा ने पूज्यप्रवर के सुदीर्घ सयम-जीवन, निरतिचार साध्वाचार एव जिनशासन सेवा के अभिनन्दन स्वरूप स्वरचित अधोनिर्दिष्ट सस्कृत पद्य समर्पित किया -

बाल्यऽपि सयमरुचि नतर सविज्ञम्,
कान्त च सौम्यवदन सदन गुणानाम्।
धनिन ध्यानसहितन जपन युक्तम्,
पूज्य नमामि गुणिन गणिहस्तिमल्लम्॥

९ दिसम्बर १९८९ को पूज्यपाद आचार्यदेव ने उत्कट सयम आराधिका, सेवा, सरलता व त्याग की प्रतिमूर्ति, दीर्घ सयमी महासती श्री लाडकवर जी म.सा. को 'उप प्रवर्तिनी' पद प्रदान किया। पूज्य प्रवर के स्वाध्याय सदेश को कर्नाटक मे प्रचारित करने मे महनीय योगदान देने वाले सुश्रावक श्री भवरलालजी गोटावत ने आजीवन शीलव्रत अँगीकार कर शीलसम्पदा-सम्पन्न आचार्य हस्ती के प्रति अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त की।

१ जनवरी १९९० को जिनशासन प्रभावक आचार्य भगवन्त ने अपनी विदुषी सुशिष्या बाल ब्रह्मचारिणी महासती श्री मैनासुन्दरी जी म सा को 'शासन प्रभाविका' के विरुद से अलकृत किया। १० जनवरी १९९० पौष शुक्ला चतुर्दशी को पीपाड़ की पुण्यधरा के लाल साधना-सुमेरु पूज्यपाद आचार्य हस्ती का पावन जन्म-दिवस त्याग-तप, व्रताराधन व शासन-सेवा के संकल्पो के साथ मनाया गया। इस अवसर पर बालोतरा, निमाज, भोपालगढ़, पाली, जोधपुर, अजमेर प्रभृति अनेक क्षेत्रों के सघों व शिष्टमडलो ने उपस्थित होकर पूज्यपाद के श्री चरणो मे अपनी भावभीनी विनतियाँ प्रस्तुत की।

सघशास्ता आचार्य का धर्म बडा कठोर है। शासन की अग्लान भाव से सेवा करने वाले सघनायक को भी संघहित व धर्म-शासन के अनुशासन को सुनिश्चित करने हेतु कई बार अप्रिय निर्णय भी लेने होते है। इनमे भी उनका एक मात्र लक्ष्य जिन-शासन की सुरक्षा व आचार-प्रधान धर्म प्रभावना का ही होता है। सघहित व शासन-सुरक्षा का प्रश्न खड़ा होने पर न तो वे किसी व्यक्ति, क्षेत्र या परिवार के राग से बंधे होते है, न ही किसी व्यक्ति के प्रति द्वेष ही उनके मन मे होता है। शिष्य-परिवार की कल्याण कामना व उनके जीवन-निर्माण की भावना से आचार्य निष्पक्ष होकर सारणा-वारणा करते हुये उन्हे आवश्यक दिशा बोध, निर्देश, शिक्षा व आज्ञा भी प्रदान करते हैं। आचार्य का धर्म होता है 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि' उनकी आज्ञा विनीत शिष्य के लिये औषधि के समान सदैव हितकारिणी व शिरोधार्य होती है, किन्तु हित-मित-पथ्य शिक्षा भी शिष्य द्वारा ग्राह्य न होने पर आचार्य को कठोर दृढ निर्णय लेकर उसे सघ से बहिष्कृत भी करना पड़ता है। ऐसा ही श्री शीतल मुनि जी व श्री धन्नामुनि जी के सदर्भ मे हुआ। महती कृपा कर सुधार का एक और अवसर प्रदान करते हुए करुणहृदय दयानिधान गुरुदेव ने उनके लिए बूँदी चातुर्मास नियत करते समय उन्हे साधना वर्ष के रूप मे समय देते हुए उनके आत्म-कल्याणार्थ, सयम-सुरक्षा व शासन हितार्थ कुछ नियमो के पालन का निर्देश दिया, पर 'गहना कर्मणो गति.' - कर्मों का विपाक देखिये कि उन्होने प्राणिमात्र के प्रति करुणा , वात्सल्य व स्नेह सरसाने वाले गुरु भगवत की आज्ञा, निर्देश व उनके द्वारा नियत किये गये नियमो का पालन न कर अपनी भावी दिशा स्वय ही नियत कर ली। उनके साथ श्री धन्ना मुनि जी ने भी गुरु आज्ञा व सघ-मर्यादा का पालन नही किया। षट्कायप्रतिपालक पूज्यपाद को ऐसा भी लगा कि उन दोनो को मेरी हित-मित-पथ्य आज्ञा निर्वहन मे भी कष्ट होता है। इन सब परिस्थितियो को देखते हुये गुरु आज्ञा व सघ-मर्यादा-उल्लघन के कारण पूज्यपाद सघशास्ता आचार्य भगवन्त ने उन दोनो को अपनी आज्ञा व रत्न-सत-मडल से बहिष्कृत घोषित कर दिया।

पूज्यपाद के इस पीपाड़ प्रवास मे धर्म-प्रभावना व व्रताराधन के अनेक कार्य सम्पन्न हुए। २१ जनवरी को युवारत्न बन्धुओं ने श्री जैन रत्न युवक मडल, पीपाड़ का गठन कर पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य मे सप्त व्यसन त्याग, साप्ताहिक सामूहिक सामायिक व दैनिक १५ मिनट स्वाध्याय का सकल्प लेकर सगठन व धर्मनिष्ठा का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत किया। २४ जनवरी से प्रबुद्ध चिन्तक एव ध्यान साधक श्री कन्हैयालालजी लोढा के सयोजन मे सप्त दिवसीय ध्यान-साधना-शिविर का आयोजन हुआ। २८ जनवरी माघ शुक्ला द्वितीया को युगमनीषी आचार्य भगवन्त का दीक्षा दिवस दया, उपवास, पौषध आदि विविध व्रतो के आराधन, तप-त्याग व प्रत्याख्यान के साथ मनाया गया।

यहाँ ९ फरवरी १९९० माघ शुक्ला षष्ठी सवत् २०४६ को विरक्ता बहिन बाल ब्रह्मचारिणी सुश्री शशिकला (सुपुत्री श्रीमती उमरावकवरजी व श्री पुखराजजी बाफना) तथा बाल ब्रह्मचारिणी सुश्री बबीता (सुपुत्री श्रीमती पुष्पा देवी एवं श्री मनोहर लालजी जैन) पूज्यपाद आचार्य भगवन्त के मुखारविन्द से श्रमणी दीक्षा अगीकार कर प्रव्रज्या पथ पर अग्रसर हुई। बड़ी दीक्षा भी पीपाड मे सम्पन्न हुई। बड़ी दीक्षा के अनन्तर नव दीक्षिता महासतीजी के नाम क्रमश महासती श्री शशिकला जी व महासती श्री विनीत प्रभा जी रखे गये।

सघ ने भावभीनी विनति श्रीचरणों मे रखी—"भगवन् ! जोधपुर रत्नवश के श्रावको का पट्ट नगर है, पूज्या प्रवर्तिनी महासती जी म.सा भी लम्बे समय से आपके दर्शन की उत्कठा मे हैं। स्वास्थ्य, चिकित्सा, शासन-प्रभावना आदि सभी दृष्टियों से जोधपुर का क्षेत्र अनुकूल है। रत्नवश के सभी आचार्य भगवंतों, प्रभावक महापुरुषों एवं आप श्री स्वय की कृपादृष्टि सदा हम पर रही है। भगवन् ! अब तो आपके पदार्पण, क्षेत्र-स्पर्शन व स्थिरवास का लाभ हमे ही मिलना चाहिये।" पीपाड़वासी भक्त अपनी बात पर अड़े थे कि भगवन् ! स्वास्थ्य अनुकूल नहीं है, इस

परिस्थिति में हम आपको विहार नही करने देंगे। भगवन् ! यदि स्थिरवास करने का अवसर है तो भी हमारे सघ को यह लाभ मिलना चाहिये।" वय स्थविर, दीक्षा स्थविर ज्ञान स्थविर व पद स्थविर पूज्यप्रवर का मन अभी स्थिरवास का नही था। उनका चिन्तन था कि जब तक जंघाबल क्षीण न हो, शारीरिक क्षमता हो व सतो के सहारे भी चलने का सामर्थ्य हो, तब तक स्थिरवास नही किया जाना चाहिये। इसी निश्चयानुसार आपने शारीरिक अनुकूलता न होने पर भी १७ मार्च १९९० को राता उपासरा, पीपाड़ से शिष्य मडल के साथ जोधपुर की ओर विहार कर दिया। रीया, बाकलिया बुचकला, बेनण, बिनावास, बनाड़ आदि मार्गस्थ क्षेत्रों को अपनी पावन चरण रज से पवित्र करते हुए पूज्यपाद का जोधपुर पदार्पण हुआ। पीपाड़वासी श्रद्धालु जनों एव मार्गस्थ ग्रामवासी भक्तो को कहाँ पता था कि अब भगवन्त के पावन चरण पुन इस धरा को पवित्र नही करेंगे, हमारे नगर मे ज्ञान सूर्य आचार्य हस्ती की प्रवचन-सुधा का पान नही होगा ?

- जोधपुर पदार्पण

जोधपुर नगर का कोना-कोना पूज्यपाद के आगमन की प्रतीक्षा मे था। हर भक्त के मन में यह अटल विश्वास था कि जिनशासन के सेनानायक अब जोधपुर पधार गये हैं, उनका सुदीर्घ अवधि तक हमे वरद हस्त प्राप्त होगा। उनकी मनमोहक छवि के दर्शन, अमिय दृष्टि, पावन मागलिक श्रवण व सुखद स्नेहिल सान्निध्य से हम सम्पन्न बनेगे। पूर्व मे महाप्रतापी क्रियोद्धारक आचार्य भगवन्त पूज्य श्री रत्नचन्द जी म.सा., जीवन-निर्माण के कुशल शिल्पी पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द जी म.सा., बाबाजी श्री सुजानमलजी म.सा. प्रभृति तप.पूत महापुरुषो के स्थिरवास से भी यह नगर उपकृत हुआ है, अब हमे परमाराध्य गुरुदेव के श्री चरणो में अपना आग्रह, अनुनय, विनति प्रस्तुत कर उनके स्थिरवास का लाभ प्राप्त करना है। इन महापुरुष ने बाल-वय से लेकर अद्यावधि निरन्तर साधना के उच्च सोपानो पर आरोहण कर लाखो किलोमीटर पाद विहार कर भारत भूमि के कोने-कोने मे श्रमण भगवान महावीर के पावन सन्देशो को जन-जन तक पहुँचा कर उन्हे धर्माभिमुख करते हुए अपूर्व धर्मोद्योत किया है। महावीर के धर्म रथ का यह अप्रमत्त सारथी अविराम गति से जिनवाणी का पावन घोष दिग्-दिगन्त मे गुजाता रहा है। भगवन् ! अब बहुत हो चुका। जरा अपने इस तप:पूत देह का भी ध्यान कीजिये, सघ पर अनुग्रह कीजिये व अब यही विराजकर आपकी छत्रछाया का लाभ दीजिये, यह पुरजोर विनति श्री चरणो मे करनी है। सभी अपने-अपने विश्वास के अनुसार कल्पना कर रहे थे, पर यह अद्‌भुत योगी सभवत· अपनी दिशा मन ही मन निर्धारित कर चुका था। न जाने उनके मन में क्या था, जोधपुर के कोने-कोने मे धर्म-ज्योति प्रज्वलित करने, स्वाध्याय का शखनाद करने यह योगी विभिन्न उपनगरो को फरस रहा था। इस क्रम मे महामन्दिर, पावटा, कन्या पाठशाला, घोड़ो का चौक, उपरला बास, मुथा जी का मन्दिर फरस कर पूज्य चरितनायक भांडावत हाउस पधारे। श्री चम्पक मुनि जी जिन्हे काफी लम्बे समय से संघ-मर्यादा व अनुशासन की प्रेरणा देकर स्थिर करने का प्रयास किया जा रहा था, किन्तु कर्म की गति कितनी विचित्र है, मोह का कैसा उदय है कि जिन महनीय गुरुवर्य ने असीम करुणा कर उन्हें संयम धन प्रदान किया, जिन्होंने ज्ञान-दर्शन-चारित्र के मार्ग पर चलना सिखाया, आज उन्हीं के आज्ञा पालन व रत्नवंश की मर्यादा के पालन में प्रमाद के कारण, उन्हें आज्ञा बाहर होना पड़ा।

रेनबो हाउस के प्रागण में भगवान आदिनाथ का पारणक दिवस सवत् २०४७ वैशाख शुक्ला तृतीया दिनांक २७ अप्रेल ९० के अवसर पर २९ तपस्वी भाई-बहिनों के पारणक सम्पन्न हुए। परम पूज्य आचार्य हस्ती के आचार्य पद-आरोहण के इस दिवस पर श्रद्धालुओं ने विविध तप-त्याग और व्रत-नियम ग्रहण कर श्रद्धाभिव्यक्ति की । इस

अवसर पर संघ की ओर से श्री गुलराज जी अब्बाणी, जोधपुर श्री बाबूलालजी नाहर, बरेली एवं श्री हीरालालजी चौपड़ा, पाली आदि सघ-सेवी व साधक श्रावको का बहुमान किया गया। साथ ही श्री जम्बूकुमारजी जैन, जयपुर, डॉ रामगोपाल जी, सुश्री आशा बिडला, श्री अमरसिह जी शेखावत, श्री उगमराजजी मेहता व श्री झूमरमलजी बाघमार आदि का उनकी महनीय सेवाओ के लिये सम्मान किया गया। २९ अप्रेल को बालशोभागृह के ३० छात्र, शोभागुरु के शिष्य जन-जन के नाथ आचार्य हस्ती के पावन दर्शन कर सौभाग्यशाली बने। माता-पिता के दुलार व सरक्षण से वचित इन बालकों को आपश्री ने आशीर्वाद प्रदान करते हुए हित शिक्षा दी व जीवन निर्माणकारी सकल्प कराए। 'सम्बल' सस्था की ३९ बहिनो ने पूज्यपाद के पावन दर्शन व उनकी प्रेरणा से धर्म का सम्बल स्वीकार कर कई नियम अगीकार किये।

भगवन्त के निमाज की हवेली (महावीर भवन) पधारने पर क्रियाभवन से ८१ वर्षीय मन्दिरमार्गी सत श्री नयरत्नविजय जी म दर्शनार्थ पधारे। तपसयम से दीप्त, ज्ञान ज्योति से आलोकित, स्नेह, सौहार्द व करुणा के सागर आचार्य हस्ती के दर्शन कर उन्होने भावाभिभूत हो अपने उद्गार व्यक्त किये - "आज मेरा जन्म सफल हो गया।" आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी मसा के पाट पर विराजित आप श्री भी उन महापुरुष के समान ही पूज्य है। मुझे ऐसा मगल पाठ सुनाओ कि मेरा अन्तिम समय ज्ञान-दर्शन-चारित्र की निर्मल आराधना मे बीते, यही प्रार्थना है । आचार्य भगवन्त से मागलिक श्रवण कर वे परितृप्त हो, अपने स्थान को पधार गये। कितना विराट् व्यक्तित्व था चरितनायक सयम-सुमेरु आचार्य हस्ती का। इन युग प्रभावक आचार्य-प्रवर का अन्य सम्प्रदायो के सन्तो के हृदय मे भी कितना उच्च आदर युक्त एव श्रद्धास्पद स्थान था, इसका सहज अनुमान वयोवृद्ध मुनि श्री के इन उद्गारो से लगाया जा सकता है। वस्तुत गुरुदेव ऐसे दिव्य दिवाकर थे जिसकी ज्ञान किरणो से समूचा जैन सघ प्रकाशित हुआ, वे जिनवाणी का सुधा रस बरसाने वाले ऐसे महामेघ थे जिसके प्रवचन-पीयूष की वर्षा व पावन प्रेरणा से जैन ही नही जैनेतर भी जीवन निर्माण की ओर अग्रसर हुए। वे सतप्त प्राणिमात्र के लिये शीतल समीर थे, जिसके सान्निध्य से हर कोई अपना दुख भुला कर अनिर्वचनीय शान्ति का अनुभव करता था।

ज्येष्ठ कृष्णा ६ को परम्परा के मूलपुरुष पूज्य श्री कुशलो जी मसा की पुण्य तिथि पर सिहपोल स्थानक मे करुणानाथ के सान्निध्य मे धर्माराधन का ठाट रहा, भक्तो ने अनेक व्रत-प्रत्याख्यान कर अपने जीवन को भावित किया। सुश्रावक श्री धीगड़मल जी गिड़िया की प्रार्थना स्वीकार कर आप सन्त-मण्डली के साथ १८ मई १९९० को रायपुर हवेली स्थानक मे विराजे। इसके अनन्तर घोड़ो का चौक, सरदारपुरा कोठारी भवन, कमला नेहरू नगर, प्रतापनगर, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, देवनगर, शास्त्रीनगर आदि उपनगरो मे जिनवाणी का शखनाद करते हुए पूज्यपाद २ जून को महावीर भवन, नेहरू पार्क पधारे।

यहाँ दिनाक ७ जून ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी को पूज्यपाद के सान्निध्य मे जिनशासन प्रभावक क्रियोद्धारक आचार्य पूज्य श्री रत्नचन्दजी मसा. का १४५ वाँ स्मृति दिवस व्रत-प्रत्याख्यान तप-त्याग के साथ मनाया गया। जनसमुदाय की विशाल उपस्थिति, सामूहिक सामायिक-साधना व दया-सवर की आराधना से समवसरण सुशोभित था। आबाल वृद्ध श्रावक-श्राविका सभी मे प्रबल उत्साह था। आस-पास के अनेक क्षेत्रों के प्रतिनिधि पूज्यपाद के सान्निध्य व दर्शनलाभ हेतु उपस्थित थे। जिनमे पाली सघ प्रमुख था।

यहाँ से ८ जून को विहार कर पूज्यप्रवर पी डब्ल्यू डी. कालोनी, न्यू पावर हाउस रोड़ फरसते हुए १० जून को मधुवन कॉलोनी पधारे। जोधपुर के विभिन्न छोटे बड़े उपनगरों को फरसते देख लोग आश्चर्याभिभूत थे कि

जिनशासन का नायक, जन-जन की अनन्त आस्था का स्वामी, सतो के लिये भी सेव्य, देवो द्वारा भी वदनीय यह महापुरुष छोटे-छोटे क्षेत्रो को भी अपनी चरण रज से पावन करने मे इस अवस्था में भी कितना प्रयास कर रहा है। किसी ने नही सोचा था कि यह महापुरुष अनागत की झाकी को दृष्टिगत रख सभी भक्तो, श्रद्धालुओ व जन-जन को, जोधपुर के चप्पे-चप्पे को, कोने-कोने को अपनी कृपा का प्रसाद लुटा रहा है।

पाली रोड़ से सन्निकट इस छोर पर बसे उपनगर मे विराजने पर पाली निवासियों की आशाएँ बलवती हो रही थी कि देव, गुरु व धर्म के प्रसाद से पूज्यपाद के पदार्पण व चातुर्मास का सौभाग्य हमे अवश्य मिलेगा, पर पूज्यपाद की शारीरिक अशक्तता व उनके वचन कि "यदि मै पैदल चलकर आ सका तो" उनके मन को आशकित भी कर रहे थे। वे मन ही मन मगल कामना कर रहे थे कि भगवन्त का स्वास्थ्य शीघ्र ठीक हो व उनके श्री चरण पाली की ओर आगे बढे। जोधपुर के भक्तों का प्रबल आग्रह था —"भगवन् आपका स्वास्थ्य समीचीन नही है, वृद्धावस्था है और यहाँ श्रमणोचित औषधोपचार की सुविधा है, यह क्षेत्र सभी दृष्टियो से अनुकूल भी है। भगवन् ! आप कृपा कर यही स्थिरवास विराजे व हमारे क्षेत्र व सघ को लाभान्वित करे।"

करुणासागर गुरुदेव ने जोधपुर सघ के पदाधिकारियो व श्रद्धालु भक्तो को आश्वस्त करते हुए फरमाया—"मै पाद विहार करके ही पाली जाऊँगा, डोली आदि के उपक्रम से जाने की भावना नही है।" जीवन के इस पड़ाव मे भी सयमधनी पूज्यप्रवर के मन मे कैसा प्रबल विश्वास, अजेय आत्मबल व स्वावलम्बन का भाव था, साथ ही इससे उनका यह चिन्तन भी परिलक्षित होता है कि वे बिना कारण, मात्र विचरण विहार व क्षेत्र स्पर्शन के लिये अन्य साधनो की तो बात ही क्या, डोली का उपयोग भी परिहार्य समझते थे। (बीच मे अटक जाने पर सयमानुकूल क्षेत्र तक पहुँचने के लिए ही अपवाद स्वरूप डोली का उपयोग किया जा सकता है।) पूज्य गुरुदेव का यह चिन्तन भावी पीढ़ी के साधकों के लिये दिग्दर्शन कराता रहेगा। श्रमण जीवन सदा स्वावलम्बी, स्वाश्रित ही होता है, पर का आलम्बन साधक को इष्ट ही नही होता है, उसे अवलम्बन होता है प्रभु महावीर की आगम-वाणी का, विश्वास होता है अपनी आत्मा के अनन्त बल का व सयम मे पुरुषार्थ का।

शरीर अशक्त था, पर मनोबल दृढ था। आप थोड़ा थोड़ा घूम कर चलने का प्रयास बढ़ाते रहे। 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत' दृढ मनोबल के धनी महापुरुष की गति को कौन रोक पाया है। मधुवन हाउसिग बोर्ड से आपश्री का १२ जून को विहार हुआ। जोधपुरवासी सोच रहे थे कि भगवन्त अभ्यास कर रहे है, पर उनका विहार सभव नही है। पर आत्म-सामर्थ्य के धनी पूज्य आचार्य देव थोड़ी-थोड़ी दूर पार करते हुए आगे बढ़ते रहे। प्रकृति भी नतमस्तक हो पाली के भाग्य का साथ दे रही थी। भीषण गर्मी से धरा व आकाश तप रहे थे, बादलो के आगमन का कोई चिह्न नही था। सहसा सब यह देखकर आश्चर्य अभिभूत थे कि घटाटोप मेघों ने आकर सूर्य को आच्छादित कर लिया है । सुर-नर, देव-देवेन्द्र द्वारा पूजित संयम धनी महापुरुष की सेवा का लाभ लेने मे प्रकृति भी पीछे नही रही। सुखे समाधे पाद विहार कर पूज्यपाद कुड़ी पधारे व पाठशाला भवन मे विराजे। प्रकृति प्रदत्त इस सहयोग से सब विस्मयमुग्ध थे व नतमस्तक थे इस महायोगी के श्री चरणो मे ।

दिनांक १३ जून को ७ किलोमीटर का विहार कर आचार्य भगवन्त मोगड़ा पधारे। आषाढ मास की भीषण गर्मी मे विहार के समय घटाटोप मेघमाला ने आकाश आच्छादित कर मानो काश्मीर का सा दृश्य उपस्थित कर दिया। पूरे विहार में बादलों ने छाया बनाये रखी। मोगड़ा से मोगड़ा प्याऊ, काकाणी, निम्बला, निम्बली आदि मार्गस्थ क्षेत्रों को पद रज से पावन करते हुये पूज्य चरितनायक १८ जून को रोहिट पधारे। यहाँ आप श्री पाँच दिन

विराज कर जैन-जैनेतर भक्त समुदाय को अपनी प्रवचन सुधा का पान कराते रहे। दिनाक २३ जून को यहां से विहार कर क्रमश ६, ६, ४, ८ व ५ किलोमीटर का पाद विहार कर पूज्य आचार्य भगवन्त अरटिया प्याऊ, चोटिला, केरला स्टेशन, घुमटी फरसते हुए दिनाक २७ जून को कमला नेहरू नगर हाउसिंग बोर्ड, पाली पधारे। विचरण-विहार मे जोधपुर एवं पाली के श्रावक-श्राविकाओ का आवागमन बराबर बना रहा। मार्गस्थ क्षेत्रो के भक्तो ने अपूर्व सेवा भक्ति का लाभ लिया। जन-जन की आस्था के केन्द्र सत-शिरोमणि पूज्य हस्ती की सेवा मे जैनेतर भाई भी पीछे नही रहे।

- अन्तिम चातुर्मास पाली मे (सवत् २०४७)

दिनाक २ जुलाई को वि.स. २०४७ के चातुर्मासार्थ शिष्यमडल के साथ आपका सुराणा मार्केट स्थानक में भव्य प्रवेश का दृश्य अत्यन्त मनमोहक व भक्ति से आप्लावित था। हजारो की सख्या मे उपस्थित भाई- बहिनो द्वारा श्रद्धाभक्ति से विभोर होकर समवेत स्वर मे उच्चरित शासनेश महावीर की जय, जैन धर्म की जय, पूज्य आचार्य हस्ती की जय, निर्ग्रन्थ मुनि भगवन्तो की जय के जय-निनादो से गगन मडल गुजित हो रहा था। पालीवासियो के हर्ष का पारावार नही था। पाली का बच्चा-बच्चा पूज्यपाद के पावन पदार्पण व अपने सौभाग्य से प्रफुल्लित व उत्साहित था। सरलहृदया पूज्या महासती सायरकवरजी म.सा. व शासन प्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. आदि ठाणा १२ के चातुर्मास से पालीवासियो का उत्साह द्विगुणित था।

पूज्य आचार्य देव के चातुर्मासार्थ मगल-प्रवेश के साथ ही ज्ञानाराधन व तपाराधन का क्रम प्रारम्भ हो गया। प्रतिदिन प्रार्थना, प्रवचन, प्रश्नोत्तर एव प्रतिक्रमण मे आबाल वृद्ध तरुण सभी भाई-बहिनो का उत्साह सराहनीय था। प्रवचनो मे विशाल उपस्थिति व उसमे भी अधिकाश भाई-बहिनो की सामायिक साधना, पालीवासियो की वीतरागवाणी के प्रति श्रद्धा व पूज्य आचार्य भगवन्त प्रभृति सत-सतियो के प्रति सहज स्वाभाविक अनुराग की परिचायक थी।

बड़े बुजुर्गो मे ही नही तरुणो व छोटे-छोटे बालक-बालिकाओ मे भी तपाराधन के प्रति अपूर्व उत्साह अन्य क्षेत्रो के लिये भी अनुकरणीय था। चातुर्मास काल मे ग्यारह मासक्षपण , तीन सौ अठाई तप व इससे भी अधिक अनेक तपस्याओ ने नया कीर्तिमान स्थापित किया। ५ अगस्त को बड़ी तपस्या करने वाले भाई बहिनो के अभिनन्दन के दिन पालीवासियो ने माल्यार्पण या वाचिक स्वागत कर ही सतोष नही किया, वरन् उस दिन एक हजार से अधिक उपवास कर तपस्वी भाई-बहिनो का सच्चा बहुमान किया। निरन्तर दया, संवर-साधना तथा पर्व-दिनो व अवकाश के दिनो मे सामूहिक दयाव्रताराधन ने धर्म-साधना का अपूर्व दृश्य उपस्थित कर धर्ममय वातावरण की सरचना की। सात दम्पतियो ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत अगीकार कर अपने जीवन को शील सौरभ से सुरभित किया।

प्रातःकाल श्री गौतम मुनि जी म.सा. द्वारा सुमधुर स्वर मे प्रार्थना, महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. प. रत्न श्री मानमुनि जी म.सा., प. रत्न श्री हीरामुनि जी म.सा., व परमविदुषी महासती श्री मैना सुन्दरी जी म.सा. प्रभृति साध्वी-मडल द्वारा प्रवचन सरिता का प्रवाह, मध्याह्न मे महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. द्वारा मदन श्रेष्ठी की चौपाई, प. रत्न श्री हीरामुनि जी म.सा. द्वारा जीवाभिगम सूत्र व प. रत्न श्री मानमुनि जी म. सा. द्वारा दशवैकालिक सूत्र की वाचना का नियमित क्रम श्रद्धालु श्रोताओ की ज्ञान-पिपासा को परितृप्त करता रहा। सायकाल प्रतिक्रमणोपरान्त ज्ञानवृद्धि हेतु प्रश्नोत्तर चर्चा से युवक-युवतियो , आबाल-वृद्ध सभी मे धार्मिक प्रेरणा, रुचि एवं जिज्ञासा की

आशातीत वृद्धि हुई। परमाराध्य पूज्य आचार्य गुरुदेव नित्यप्रति प्रवचन मे पधार कर भावुक भक्तों को मांगलिक व दर्शनलाभ से परितृप्त करते रहे।

बहिनों एवं युवा बंधुओं को संगठित व गतिशील करने हेतु 'जैन रत्न रूपा सती बालिका मडल' व 'श्री जैन रत्न युवक परिषद्' की शाखा का गठन हुआ। षट्काय प्रतिपाल करुणाकर गुरुदेव की पावन प्रेरणा एव स्थानीय नगर परिषद् के धर्मनिष्ठ अध्यक्ष श्री मागीलाल जी गांधी के प्रयासों से १८ से २५ अगस्त तक पर्वाधिराज पर्युषण के मंगलमय प्रसग पर नगर के सभी कसाईखाने व मास-विक्रय की दुकानें बन्द रही।

१६ से २० सितम्बर तक आयोजित साधना शिविर मे १५ साधकों ने भाग लिया। साधना के शिखर पुरुष पूज्य आचार्य हस्ती के मार्ग-दर्शन व दिशा-निर्देश से साधको ने अपने आध्यात्मिक जीवन-विकास को नई गति प्रदान की।

बालको में धार्मिक एव नैतिक सस्कारों के वपन हेतु जैन धार्मिक पाठशाला का सचालन हुआ, जिसका लक्ष्य था — बालको मे 'अतिजात' बनने की योग्यता का विकास। सचालको का प्रयास रहा कि ये बालक आगे चल कर माता-पिता एवं पूज्य धर्म गुरुओ से प्राप्त नैतिक-आध्यात्मिक सस्कारों को निरन्तर वृद्धिगत कर सदाचारमय जीवन शैली अपनाकर परिवार , सघ व समाज का यश वर्द्धन करने मे सक्षम बने। महासती मंडल के सान्निध्य में ७०-८० बालिकाओ व कई बहिनो ने नियमित शिविर-व्यवस्था के रूप मे नियमित समय पर ज्ञानाभ्यास का लाभ लिया।

२२ से २९ सितम्बर तक बालिकाओ व महिलाओ का धार्मिक-शिक्षण शिविर व २६ से ३० दिसम्बर तक पचदिवसीय स्वाध्याय-शिविर का आयोजन हुआ, जिसमे मारवाड़, मेवाड़, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश आदि विभिन्न प्रान्तो के स्वाध्यायी भाई-बहिनो ने भाग लिया। दिनाक १ से ३ अक्टूबर १९९० तक त्रिदिवसीय विद्वत् गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन प्रो. कल्याणमलजी लोढा, पूर्व कुलपति जोधपुर विश्वविद्यालय ने किया। 'युवा पीढी और अहिंसा' विषय पर आयोजित सगोष्ठी इस मन्थन के साथ सम्पन्न हुई कि युवक अपनी शक्ति का उपयोग रचनात्मक कार्यों मे करे। परम पूज्य आचार्य भगवन्त ने विद्वानो को प्रेरणा दी कि वे अहिंसा को आचरण में लाकर जीवन मे सादगी अपना कर समाज का मार्गदर्शन करे।

चातुर्मास में जोधपुर, जयपुर, अजमेर, ब्यावर, पीपाड़, उदयपुर, बालोतरा, टोक, भोपालगढ़, सवाई माधोपुर, मेड़ता सिटी, सादड़ी, किशनगढ, आसीन्द, अलीगढ-रामपुरा, मद्रास, बैगलोर, एदलाबाद, धार, रतलाम, कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई, रायचूर, कोयम्बटूर , इन्दौर, जलगांव, अहमदाबाद, कानपुर प्रभृति अनेक क्षेत्रो के संघो व श्रावक-श्राविकाओ का परमपूज्य आचार्य भगवन्त व पूज्य सत-सतीवृन्द के पावन दर्शन, वन्दन, प्रवचन-श्रवण एवं सान्निध्य लाभ हेतु आवागमन बराबर बना रहा। पाली श्री सघ ने स्वधर्मी भाइयो के वात्सल्य व सेवा का सराहनीय लाभ लिया।

इस प्रकार युग मनीषी आचार्य पूज्य हस्ती का यह पाली चातुर्मास सेवा, वात्सल्य, तप-त्याग व ज्ञानाराधन के साथ सम्पन्न हुआ।

• ८१ वॉ जन्म - दिवस

चातुर्मास के अनन्तर पूज्यपाद सुराणा मार्केट से ग्रीन पार्क पधारे। स्वास्थ्य के कारण से आपका यहाँ काफी समय तक विराजना हुआ। यहा निरन्तर धर्म-गगा के प्रवाह से पालीवासी भाई-बहिन लाभान्वित होते रहे। प्रार्थना,

प्रवचन मे उपस्थिति व पालीवासियों के उत्साह से ऐसा लगता ही नही था कि चातुर्मास पूर्ण हो गया है। पौष शुक्ला चतुर्दशी ३० दिसम्बर १९९० को यहाँ पूज्य चरितनायक आचार्य हस्ती का ८१ वा जन्म-दिवस त्याग-तप व उमग-उल्लास के साथ मनाया गया। जन्म-दिवस के इस आयोजन पर अखड शान्तिजाप, सामूहिक दया-सवर, उपवास, बेले-तेले, पॉच और अठाई तप करके तथा पचरगी की आराधना मे भाग लेकर श्रद्धालु भक्तो ने अपने आराध्य गुरुवर्य के श्री चरणो मे सच्ची श्रद्धाभिव्यक्ति की। जैन भाइयो ने ही नही जैनेतर भाइयों ने भी जन-जन की अनन्य आस्था के केन्द्र पूज्य हस्ती के प्रति अपनी श्रद्धा-निष्ठा व्यक्त करते हुए तप-त्याग का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। मालावास निवासी श्री जीवनसिंह जी राजपूत ने जब पूज्यपाद के श्रीमुख से अठाई तप का प्रत्याख्यान लिया तो समूचा पाण्डाल जैन धर्म की जय, शासनेश वीर वर्द्धमान की जय, पूज्य आचार्य श्री की जय व तपस्या करने वालो को धन्यवाद के नारो से गूज उठा। सामायिक स्वाध्याय के पर्याय गुरु हस्ती के जन्म-दिवस के इस प्रसग पर कई भाई बहिनो ने सामायिक स्वाध्याय के नियम लेकर गुरु हस्ती के सदेश को जीवन मे अपनाया। षट्काय प्रतिपाल करुणानाथ के ८१ वे जन्म दिवस पर पाली सघ द्वारा ८१ जीवो को अभयदान देने की घोषणा की गई।

दया धर्म के पालक, अहिसा, सयम व तप रूप धर्म के साकार स्वरूप परमाराध्य आचार्य भगवन्त ने इस अवसर पर अपने हृदय के उद्गार व्यक्त करते हुए फरमाया - **"अहिंसा के आचरण से झुलसती मानवता की रक्षा की जा सकती है।"** हिंसा को त्याज्य बताते हुए आपश्री ने क्रोध को शान्ति से, मान को मृदुता व नम्रता से, माया को ऋजुता व सरलता से तथा लोभ को सतोष से जीतने की प्रेरणा की। क्षमा, सन्तोष, सरलता व नम्रता को धर्म के चार द्वार बताते हुए आपने इन पर अमल करने की प्रेरणा की। इस अवसर पर पूज्यपाद का ८१ वॉ जन्म-दिवस महोत्सव दिल्ली के प्रीतमपुरा मे प्रधानमत्री चन्द्रशेखर के मुख्य आतिथ्य मे मनाया गया, जिसमे देश के विभिन्न क्षेत्रो से उपस्थित हजारों लोगो ने भाग लिया। समारोह मे उपस्थित विभिन्न सत सतीवृन्द, प्रधानमत्री समेत राजनेताओ व सघ प्रतिनिधियो ने अपने भावोद्गार व्यक्त करते हुए पूज्यपाद के महनीय गुणनिधान जीवन पर प्रकाश डाला।

माघ शुक्ला द्वितीया १८ जनवरी १९९१ को पूज्यपाद का ७१ वॉ दीक्षा दिवस नेहरु नगर, पाली मे सामूहिक दया-सवर-साधना, तप-त्याग व श्रद्धा समर्पण के साथ मनाया गया। सामायिक के साकार स्वरूप पूज्य हस्ती ने आज ही के दिन अपने पूज्यपाद गुरुदेव आचार्य शोभा के श्रीचरणो मे जीवन पर्यन्त के लिये सामायिक चारित्र स्वीकार किया था। इस उपलक्ष्य मे सामायिक सघ के अधिवेशन का आयोजन कर सामूहिक सामायिक की प्रेरणा की गई। पूज्यप्रवर ने इस अवसर पर अपने हृदयस्पर्शी उद्बोधन मे अपने आराध्य गुरु आचार्य पूज्य शोभाचन्दजी म सा. व सस्कार गुरु स्वामीजी हरखचन्दजी म सा की हित शिक्षाओ का स्मरण करते हुए फरमाया कि गुरुजनो का उपकार मैं कभी भी नही भूल सकता। पूज्यपाद के सुशिष्य प रत्न श्री मानमुनि जी म सा ने सक्षिप्त भावाभिव्यक्ति मे पूज्य चरितनायक की ओर इशारा करते हुए फरमाया - [illegible]

अध्यात्मयोगी : महाप्रयाण की ओर

पाली चातुर्मास के अनन्तर पूज्यपाद चरितनायक का स्वास्थ्य समीचीन नही रहा, अत चातुर्मास के पश्चात् आपको पाली के उपनगरो में फरसते हुए लगभग तीन माह विराजना पड़ा। आचार्यप्रवर शारीरिक असमाधि को भेद-विज्ञान से निस्तेज करते हुए सयम-साधना, ध्यान-मौन एव आत्मानुप्रेक्षा में लीन रहे और दर्शनार्थी उपासकों को सामायिक, स्वाध्याय आदि नियमित करने की प्रेरणा करते रहे। सामायिक, स्वाध्याय एव निर्व्यसनता का प्रचार आचार्य श्री के जीवन का मिशन था।

• जोधपुर सघ की स्थिरवास हेतु विनति

आचार्यदेव की शारीरिक शिथिल स्थिति को देखकर जोधपुर का सघ कई बार गुरुचरणो मे पहुँचा एवं पुरजोर विनति — "भगवन्! आप श्री की शारीरिक स्थिति अब विहार करने योग्य नही है। आपने ७० वर्ष पर्यन्त सतत विचरण कर जिनशासन की महती प्रभावना की है एव प्रभु महावीर की भव भयहारिणी मगलवाणी द्वारा डगर-डगर, गॉव गॉव एव नगर-नगर मे अध्यात्म का अलख जगाते हुए सामायिक-स्वाध्याय के अमृतोपम आघोषों से जन-जन को उपकृत किया है। कृपानाथ! शारीरिक स्थिति को देखते हुए आपसे हमारी विनति है कि आप जोधपुर मे स्थिरवास हेतु विराज कर सघ को लाभान्वित करे।" जोधपुर सघ की आग्रहभरी विनतियाँ चलती रही। किन्तु आत्मानुप्रेक्षी अध्यात्मनीषी ने भावी को जान लिया था। उन्होने सन्तो को अपनें मनोगत भाव प्रकट करते हुए कहा—"मैंने अब तक सयम जीवन में सुखे समाधे जो-जो भी क्षेत्र फरसने का आश्वासन (जैसी फरसना होगी) दिया था, उन सबको गुरुकृपा एव सन्तमण्डल के सहयोग से पूरा कर सका हूँ। एक आश्वासन निमाज श्री सघ को, विशेषत भण्डारी परिवार को दिया हुआ है, अत मेरी भावना निमाज फरसने की है। गुरुदेव के मनोगत भाव श्रवण कर प रत्न श्री मानमुनिजी म.सा. एव प. रत्न श्री हीरामुनिजी म.सा. आदि सन्तो ने निवेदन किया—"भगवन्! आप जैसा चाहे, आज्ञा प्रदान करावे। हम सब मिलकर आपके आदेश की पालना सहर्ष करने को तत्पर है।"

जोधपुर सघ की आग्रहभरी विनति चलती रही, किन्तु आचार्य श्री ने अपने निश्चय से अवगत करा दिया कि वे निमाज सघ को दिए गए आश्वासन को पूर्ण करना चाहते हैं। जोधपुर सघ ने रत्नवंश के प्रमुख पदाधिकारियों एव अग्रगण्य सुश्रावकों को भी अपने पक्ष मे करते हुए विनति रखी - "दीनदयाल! आप संघ के सर्वेसर्वा एव लाखो भक्तो के भगवान है। यह शरीर जिसे आपने कभी अपना नही समझा, भगवन्! इस पर चतुर्विध सघ का भी अधिकार है। शरीर का स्वास्थ्य पहले है, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के आगार से साधुभाषा मे दिया गया आश्वासन बाद मे। अत आप कृपा कर स्वास्थ्य की दृष्टि से नजदीक मे सर्वाधिक उपयुक्त क्षेत्र जोधपुर में स्थिरवास हेतु पधारे।" इस पर दृढमनोबली महापुरुष ने निर्लिप्त भावों के साथ सघ के प्रमुख श्रावको के समक्ष वही बात दोहराई - "मुझे अभी निमाज की बात पूरी करनी है।" इस बात को सुनकर भक्तगण चिन्तित एवं मौन थे।

• पाली से पदार्पण

श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि सन्तों के सिंघाड़े के सवाईमाधोपुर चातुर्मास के अनन्तर पाली पदार्पण के

पश्चात् १० फरवरी १९९१ रविवार, फाल्गुन कृष्णा ११ को आपका विहार निमाज की ओर हो गया। विहार के समय पाली निवासियों के नयन नम थे, मन भारी हो उठा था, हृदय-कमल कुम्हला रहा था। चातुर्मास काल मे एवं उसके पश्चात् भी आचार्य भगवन्त के विराजने से अनूठा ठाट रहा। किसी को क्या पता था कि पाली का यह चातुर्मास चरितनायक गुरुदेव का अन्तिम चातुर्मास होगा और जिस प्रकार शासनपति श्रमण भगवान महावीर का अन्तिम चातुर्मास पावापुरी मे हस्तीपाल राजा की रज्जुशाला मे हुआ, उसी भाति उनके ८१ वे पट्टधर पूज्य हस्तीमलजी महाराज का पाली के श्रेष्ठिवर्य हस्तीमलजी सुराना की उपासनाशाला मे सम्पन्न यह चातुर्मास इतिहास का अविस्मरणीय अध्याय बन जायेगा।

रुधे कण्ठ से 'जय गुरु हस्ती' के नारो की ध्वनि गूँज रही थी। उसका अपना प्रभाव था। पूज्य गुरुदेव हस्ती को अपनी जयकार अप्रिय लग रही थी, अत· पीछे मुड़कर जनता से कहा- "मेरी नही, तीर्थंकर भगवान की जय बोलो।"

आचार्यप्रवर मे पदयात्रा की शक्ति नही थी। अत सन्तो के सहारे से कुछ दूर पैदल चले। सन्तों ने उन्हे ले चलने के लिए डोली तैयार कर रखी थी। डोली के निकट पहुँचते ही सन्तो ने निवेदन किया—"भगवन् अब डोली मे विराजमान हो हमें सेवा का दुर्लभ अवसर प्रदान करे।" सरलता की प्रतिमूर्ति एव असीम आत्मशक्ति के धारक महापुरुष ने मधुर मुस्कान के साथ कहा— "अभी और पैदल चलने दो।" चलने की शक्ति नही थी, किन्तु भावो मे अदम्य उत्साह था। अन्तत· सन्तो की प्रबल प्रार्थना एव सेवा की उत्कट भावना को देखकर आचार्य श्री डोली मे विराजे।

सन्त उत्साह एव उमंग के साथ गुरुदेव को डोली मे लेकर चल दिए। किसी भावुक भक्त ने जयकार लगाई- "पालकी मे विराजित आचार्य श्री हस्तीमलजी म सा की जय।" यह सुनकर डोली मे विराजे हुए चरितनायक ने कहा "पालकी उठाने वाले सन्तों की जय।" यह सुनकर जनसमूह श्रद्धाभिभूत हो गया, सभी सन्त गद्‌गद् हो गए। बेजोड़ थी उनकी सरलता और निरभिमानता। शक्रेन्द्र द्वारा नमिराजर्षि की स्तुति मे जो कहा गया है, वह आचार्यप्रवर के सम्बन्ध मे चरितार्थ हो रहा था—

अहो ते अज्जवं साहु, अहो ते साहु मद्दवं।
अहो ते उत्तमा खंती, अहो ते मुत्ती उत्तमा॥

(अहो ! उत्तम है आपका आर्जव, अहो ! उत्तम है आपका मार्दव, अहा ! उत्तम है आपकी क्षमा, अहो ! सर्वश्रेष्ठ है आपकी निर्लोभता।)

आचार्य श्री की लघु देह मे विशेष भार नही, तथापि डोली उठाने वाले सन्तो से कहते - "भाई मेरे कारण से आप सन्तजनो को कष्ट उठाना पड़ रहा है।" सन्त निवेदन करते- "पूज्य गुरुवर्य, कृपया ऐसा न फरमावें। आपने जीवन मे कभी ऐसा अवसर ही नही आने दिया। आपका स्वावलम्बी जीवन हमारे लिए व सत समुदाय के लिये युगों-युगों तक प्रेरणादायी है। प्रभो ! भक्ति मे कैसा भार व कैसा कष्ट ? यह तो हमारा प्रथम कर्त्तव्य ही नही वरन् सौभाग्य है, सेवा का स्वर्णिम अवसर है।"

• सोजतसिटी में फाल्गुनी पूर्णिमा

सन्त इस बात से प्रसन्न थे कि उन्हे गुरुदेव की सेवा का अवसर मिला। सभी क्रमश· इस सेवा से लाभान्वित होने के लिए लालायित थे। सभी सन्त पूज्य गुरुदेव के सहज सात्त्विक वात्सल्य से अनुप्राणित थे।

२३ फरवरी १९९१ बुधवार को सन्त-मण्डली ने सोजत सिटी मे प्रवेश किया। सोजत सघ के हर्ष का पारावार नही रहा। धर्माराधन की नवीन उमंग एव उत्साह देखने को मिला। सोजत सघ एव अनन्य भक्त श्री भोपालचन्दजी पगारिया व भंवरलाल जी गोटावत बैंगलोर, जो सोजत के ही मूलनिवासी हैं, की भावना का आदर करते हुए गुरुदेव ने फाल्गुनी चौमासी सोजत शहर में ही की। दर्शनार्थी भक्तजन दर्शन को उमड़ पड़े। आचार्य श्री जब तक सोजत विराजे, पूर्ववत् अप्रमत्त भाव से आध्यात्मिक ऊर्जा का उपयोग करते हुए आत्म-साधना में लीन रहे। आपने यहाँ पर वाणी से प्रवचन नही फरमाया, किन्तु स्वय आपका साधनामय जीवन प्रवचन से बढ़कर बहुत कुछ कह रहा था। बिना उपदेश के भी आपके दिव्य आभामण्डित तेजस्वी मुखमण्डल और आचारप्रधान अप्रमत्त जीवन से, कोई भी प्रभावित एव प्रेरित हुए बिना नही रहा।

आचार्य श्री सहज साधना मे सलग्न थे। फाल्गुनी चातुर्मास के प्रसग पर जोधपुर , निमाज ,मेड़ता, बिलाड़ा आदि अनेक ग्राम-नगरों के श्री सघ शेखेकाल व चातुर्मास की भावभीनी विनतियाँ लेकर उपस्थित हुए। लोग अपनी-अपनी अटकलें लगा रहे थे। विगत कुछ वर्षों से गुरुदेव होली चातुर्मासी के प्रसग पर वर्षावास खोल दिया करते थे, पर इस वर्ष दीर्घद्रष्टा आत्मज्ञानी आचार्यवर्य वर्षावास घोषणा का मानस नही बना रहे थे। उनके गुरु-गाम्भीर्ययुक्त मन एव भावी के गर्भ की थाह पाना सबके सामर्थ्य के बाहर की बात थी। इसी मध्य अचानक जयपुर के प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. एस.आर. मेहता भी दर्शनार्थ आ गये। वे गुरुदेव के विश्वास पात्र चिकित्सक ही नही वरन् पीढ़ियो के श्रावक एवं अनन्य गुरु भक्त भी है। डॉ मेहता ने गुरुदेव के स्वास्थ्य का परीक्षण कर बताया "पूज्य गुरुवर्य पर किसी भी बड़े रोग का तो उपद्रव नही है, वृद्धावस्था के कारण कफ, खासी, अशक्तता और श्वास का उठाव हो जाता है, जिसके लिये नियमित उपचार की आवश्यकता है ।" डॉ मेहता सा ने आगे गुरुदेव से निवेदन करते हुए कहा "भगवन्! अवस्था एव स्वास्थ्य की दृष्टि से अब आपको एक स्थान पर विराजना आवश्यक है एव चिकित्सा सुविधाओ की दृष्टि से जोधपुर व जयपुर उपयुक्त क्षेत्र है। आप स्वय दीर्घद्रष्टा, गहन अनुभवी एव प्रबल आत्म-विश्वासी महापुरुष हैं, निर्णय के अधिकारी आप स्वय है, आप श्री का निर्णय हम सबको मान्य एव शिरोधार्य है।

डॉक्टर साहब की सूझबूझपूर्ण बात श्रवण करने के पश्चात् पूज्य गुरुवर्य ने चातुर्मासिक विनति करने वाले जन-समुदाय को अपना निर्णय सुनाते हुए फरमाया कि अभी अक्षय तृतीया से पूर्व कही पर भी चातुर्मास खोलने की भावना नही है। सभी आश्चर्यचकित थे, किन्तु अनागत व गुरुदेव के मन की थाह ले पाना किसी के सामर्थ्य मे नही था। सब अपने-अपने हिसाब से कयास लगा रहे थे।

• अब मुझे जीवन का ज्यादा समय नही लगता

दूसरे दिन चैत्र कृष्णा प्रतिपदा को सब सन्त गुरु चरणो मे बैठे हुए थे। आचार्य भगवन्त ने गभीरता के साथ सतो को रात्रिकालीन घटना का संक्षिप्त कथन करते हुए फरमाया—"भाई, मुझे रात्रि मे किसी अदृश्य शक्ति ने प्रेरित करते हुए कहा—"आप तो बहुत जानकार हो। मैं आपने कई केऊँ—अब आप सावधान हो जाओ।" गुरुदेव श्री ने सतों के समक्ष अपने आपको संबोधित करते हुए कहा "अब मुझे अधिकाधिक ध्यान, मौन,चिन्तन, साधना व स्वाध्याय में लग जाना चाहिये।" सन्तो ने निवेदन किया—"भगवन्! आप तो साधना की पावन पवित्र धारा मे सतत निमज्जित हुए ही रहते हैं।" इस बात को जैसे गुरुदेव ने सुना ही नही हो, उन महापुरुष के मुख मण्डल पर गाभीर्य की रेखायें स्पष्टतः परिलक्षित हो रही थी।

दूसरे दिन कोट का मोहल्ला से विहार कर ज्ञानशाला स्थानक पैदल ही पधारे। दूसरे दिन भी पहले दिन वाली बात दोहराई तो सन्त विचारमग्न हो गये। विविध आशकाये मस्तिष्क पटल से टकराने लगी। सतो को गम्भीर व विचारमग्न देखकर आचार्यप्रवर ने रहस्य का पर्दा हटाते हुए फरमाया— "अब मुझे मेरे जीवन का ज्यादा समय नही लगता, अत अन्तिम समय की प्रक्रिया में सावधान हो जाऊँ।"

गुरुदेव के ये शब्द कर्णगोचर होते ही, अनागत की कल्पना मात्र से ही हृदय व्यथित हो गए, सब मौन-स्तब्ध थे, पर गुरुदेव के मुख-मडल पर वही पूर्व निश्चिन्तता के भाव परिलक्षित हो रहे थे। उस प्रशात भय रहित मुख-मुद्रा पर कोई शिकन मात्र भी नही थी। उन मृत्युजयी महापुरुष ने अपना मौन तोड़ते हुए गमगीन बने सतो को उद्बोधित करते हुए फरमाया— "भाई, इसमें व्यथा की क्या बात? मृत्यु अवश्यम्भावी है, अत आप लोग मुझे अन्तिम समय मे पूरा साथ देना, सघ मे अनुशासन व प्रेम बनाये रखना तथा दृढ़ता के साथ समाचारी का पालन करना।" पूज्यवर्य ने प्रत्येक शिष्य के मस्तक पर अपना वरद हस्त रखते हुए अमित वात्सल्य की वर्षा करते हुए सभी को योग्यतानुसार भोलावण (शिक्षा) दी। वरिष्ठ संतों को भोलावण देते हुए श्रद्धेय श्री मानमुनिजी महाराज साहब (वर्तमान उपाध्याय प्रवर) को फरमाया—"जैसे मेरे गुरुदेव पूज्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज साहब के समय स्वामीजी श्री चन्दनमलजी महाराज साहब का और मुझे स्वामी श्री सुजानमलजी महाराज साहब का सहकार-सहयोग मिलता रहा, वैसे ही मेरे बाद सघ का ध्यान रखना।"

सन्तो के कठ अवरुद्ध थे, वाणी मौन थी, खामोशी के साथ श्रद्धा एव विनम्रतापूर्वक गुरुदेव की भोलावण स्वीकार कर रहे थे। नि शब्द वातावरण को देखकर मधुर स्वर मे भजन गुनगुनाते हुए गुरुदेव ने सभी सतो को साथ मे गाने का निर्देश दिया- "मेरे अन्तर भया प्रकाश, नही अब मुझे किसी की आश...।" गुरुदेव के द्वारा स्वरचित भजन के ये बोल हृदय के तारो को झंकृत कर रहे थे। एक-एक पद मे विनश्वर ससार की क्षण भगुरता एवं जड़-चेतन के भेदज्ञान का सारगर्भित चित्रण प्रस्तुत करते हुए मानो गुरुदेव सन्तो को अपनी अन्तिम देशना दे रहे थे।

भजन के अनन्तर सभी सन्त अपनी अपनी दैनिक चर्या मे लग गये, पर सभी के दिलोदिमाग मे गुरुदेव के ही शब्द गुजित हो रहे थे।

सायकाल आहार के बाद आचार्य देव को वमन हो गया तो सभी का मन घबरा गया। सन्तो को लगा-आज ही तो गुरुदेव ने अन्तिम समय की बात कही और आज ही स्वास्थ्य मे गड़बड़। प्राथमिक उपचार के पश्चात् डॉक्टर को दिखाया तो डॉक्टर बोले-"हृदय, रक्तचाप एव नाड़ी सभी सामान्य है। गैस के कारण भी वमन हो सकता है।" सन्तो का दिल भावी की आशका से भारी हो रहा था, पर वह मस्ताना अध्यात्मयोगी हस्ती तो अपनी संयम साधना की मस्ती मे ही मस्त था।

"मेरे जीवन का समय अब कम है।" आचार्य देव के ऐसा फरमाने पर श्रद्धेय श्री हीराचन्द्रजी महाराज साहब (वर्तमान आचार्यप्रवर) ने पूज्य गुरुदेव श्री से पूछा—"भगवन्! सती-मण्डल को दर्शन देने एव जोधपुर संघ की भावना को रखने के लिए पहले सीधे जोधपुर चले तो कैसा रहेगा?" पर उन वचनधनी महापुरुष को जहाँ एक ओर अपने शेष समय का ध्यान था तो आश्वासन पूर्ति का लक्ष्य भी दृष्टि मे था। उन्होने यही फरमाया —"जोधपुर से वापिस आना हाथ मे नही, मुझे तो निमाज श्री संघ को दिया गया आश्वासन पूरा करना है, अत सत सती निमाज आकर दर्शन-सेवा का लाभ ले सकते हैं।"

• मुझे निमाज पहुँचना है

इसी बीच गुरुदेव ने संतों को बिना कही ज्यादा रुके शीघ्र निमाज पहुँचने के भाव व्यक्त कर दिये। संतो ने आचार्य भगवन्त की भावना के अनुसार शीघ्र निमाज पहुँचने का लक्ष्य बना लिया और सुदूर विराजित रत्नवशीय सभी सत-सतीगण को गुरुदेव के दर्शनार्थ सेवा मे निमाज पहुँचने के संकेत करवा दिये गये। ३ मार्च ९१ रविवार चैत्र कृष्णा तृतीया को गोटावत भवन ठहरते हुए रात्रिवास गुरुदेव ने समिति भवन में किया। इसके अनन्तर दो दिन सोजत रोड विराजे। दो दिन पश्चात् जब विहार की चचलता के भाव दर्शाये तो स्थानीय श्रावकों ने अत्याग्रहपूर्वक कुछ दिन विराजने की प्रार्थना की, परन्तु गुरुदेव श्री का एक ही प्रत्युत्तर था– "मुझे निमाज पहुँचना है।" उन भावुक भक्तों को क्या मालूम था कि गुरुदेव क्या सोच कर इतनी शीघ्रता कर रहे हैं? यहां तो उस अध्यात्मयोगी ने पहले ही अपनी दिशा निर्धारित कर ली थी।

सोजत से बगड़ी, चडावल होते हुए ८ मार्च ९१ को पीपल्या पधारे। सन्तों के द्वारा आहार के लिये निवेदन करने पर आचार्य श्री ने मना कर दिया। बार बार आग्रह करने पर फरमाया –"भाई, मुझे आहार करने की रुचि नही है, तुम आग्रह मत करो।" सन्तो के अत्याग्रह पर सन्तों के हाथ से उनके सन्तोष हेतु अल्प आहार लिया, किन्तु प्रतिपल जागृत उन महापुरुष को अब मात्र अपनी आत्म-साधना का ही तो ध्यान था– फरमाने लगे–"**मैं खाली नही जाऊँ, इसका सेवारत मुनिजन पूरा खयाल रखें। शरीर का नही, मेरी समाधि बनी रहे, इसका ध्यान रखे।**" कितनी उच्च भावना, कितनी सजगता, कैसा देहोत्सर्ग, कैसी समाधि भावना। अन्तर्ज्योति के आलोकपुञ्ज उन महापुरुष ने आगे फरमाया- "**मेरी चिन्ता मत करना, शरीर तो नाशवान है।" फिर भोलावण रूप में बोले-"आहार, स्थानक की गवेषणा का पूरा ख्याल रखना, पूज्य श्री रत्नचंदजी महाराज साहब की २१ नियम की समाचारी का पूरा पालन करना,** प्रवर्तिनी महासती श्री बदनकंवरजी, उप प्रवर्तिनी महासती श्री लाडकंवरजी प्रभृति सती-मडल बराबर सयम आराधना करती रहे।"

• मुझे मेरा समय सामने दिख रहा है

पूज्य गुरुदेव अपने दृढ़ निश्चय के अनुसार निरन्तर अपने कदम अपने अन्तिम मनोरथ की ओर बढ़ा रहे थे। इसी क्रम मे उन्होने दो-दो,तीन-तीन घटे के सागारी प्रत्याख्यान करने प्रारम्भ कर दिये। साथ ही अपनी उत्कृष्ट भावना प्रदर्शित करते हुए फरमाया–"मेरी सथारा करने की भावना है। मानमुनिजी म.सा. से पूछ ले एव चतुर्विध सघ की अनुमति ले लें। उस समय श्रद्धेय श्री मानमुनिजी म.सा. विहार क्रम मे पीछे-पीछे चल रहे थे, अत उन्हे भी सेवा मे पधारने का सकेत कर दिया गया। सथारे की बात के ही क्रम में सभी सन्तों ने समवेत स्वर मे निवेदन किया–"भगवन्! अभी इतनी क्या जल्दी है? आपका स्वास्थ्य भी ठीक है, डॉक्टर एवं ज्योतिषी की राय मे भी ऐसे लक्षण दृष्टिगोचर नही होते, फिर आप ऐसा कैसे सोच रहे हैं?" इस पर आचार्य भगवन्त ने दृढ़ आत्म-विश्वास के साथ फरमाया "**भाई, ज्योतिषी की गणित एवं डॉक्टर की बात मुझे फैल लग रही है। मुझे मेरा समय सामने दिख रहा है।**" जहाँ सन्त चिन्तित थे, वही गुरुदेव अपनी अजस्र आत्मिक ऊर्जा के ऊर्ध्वीकरण के चिन्तन मे तल्लीन थे। वे तो कहाँ क्या हो रहा था, इससे सर्वथा बेखबर अपनी ही धुन में मस्त, अनवरत आत्महित मे सन्नद्ध तथा जीवन के सन्ध्याकाल के बारे मे संजोये सार्थक स्वप्न को साकार करने की ओर उन्मुख थे। इसी सन्दर्भ में आपश्री ने अपनी सरलता, लघुता एवं निरभिमानता का परिचय देते हुए संकेत दिया कि अमुक-अमुक सन्तों को

खमतखामणा के समाचार दिला दो। गुरुवर्य की आज्ञा का पालन हुआ और उनका जिन-जिन से पुराना और गहरा सम्बन्ध रहा, उनकी सेवा मे खमतखामणा अर्ज कराने हेतु श्रावको द्वारा पत्र प्रेषित कर दिये गये।

९ मार्च ९१ को कुशालपुरा पहुँचे। बाहर से दर्शनार्थी उमड़ पड़े। इन सबके बीच भी गुरुदेव अपनी आत्म-साधना मे निरन्तर निरत थे। इसी दिन डॉ. एस. आर. मेहता भी दर्शनार्थ पहुँचे। उन्होने स्वास्थ्य के निरीक्षण-परीक्षण के पश्चात् स्वास्थ्य की दृष्टि से खुराक एव दवा की आवश्यकता बतलाई, पर गुरुदेव ने उन्हे भी यह कहा कि इन सबकी अब मुझे रुचि नही है। डॉक्टर सा एव मुनिजन के अत्याग्रह से आपने अनिच्छित भाव से ही पथ्य ग्रहण करना स्वीकार किया।

• निमाज में पदार्पण : निमाजवासी पुलकित

दिनाक १० मार्च ९१ को कुशालपुरा से निमाज मे पदार्पण हुआ। निमाज ग्रामवासी गुरुदेव के आगमन पर हर्षित एव प्रफुल्लित थे, नर-नारियो के समूह जयनिनादो के साथ अगवानी हेतु उपस्थित थे। देखते-देखते ही स्थानीय व अभ्यागत बन्धु आते गये और कारवा बनता गया। गुरुदेव के पदार्पण से जैसे निमाज गॉव का कोना-कोना खिल उठा, समूचा वातावरण ही उन महापुरुष के शुभ परमाणुओ के ससर्ग मे आकर पवित्र हो गया। गॉव का चप्पा-चप्पा गुरुदेव के आगमन से महक रहा था, वहाँ के कण-कण मे हर्ष व्याप्त था। भडारी परिवार का तो कहना ही क्या ? बच्चा-बच्चा खुशी से झूम रहा था, ऑखो मे आये हर्षाश्रु रोम-रोम से गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता व्यक्त कर रहे थे। गुरुदेव के पीछे-पीछे विशाल जनसमुदाय का यह काफिला निमाज की गलियो, बाजारो से होता हुआ, मुख्य मार्ग पर स्थित गगवाल भवन (सुशीला-भवन) मे आकर धर्म-सभा मे परिणत हो गया।

धर्म-सभा मे आचार्य गुरुदेव अपनी शिष्य-मण्डली के बीच नक्षत्र-मण्डल के मध्य दिव्य आभायुक्त सुधाकर के सदृश सुशोभित हो रहे थे। मुखमण्डल पर दिव्य तेज था। इस अन्तिम प्रवचन सभा को सम्बोधित करते हुए उन युगमनीषी महापुरुष ने अपनी धीर, वीर, गभीर शैली मे फरमाया—**"मैने अपना आश्वासन संतों के सहयोग से पूरा कर दिया है, आज मै उससे मुक्त हो गया हूँ।"** आश्वासन-पूर्ति के आत्म-सन्तोष से 'सागरवरगम्भीरा' उस महापुरुष की आखे भर आईं। सभी लोग भावविह्वल हो गये, सन्तो का हृदय गद्गद् हो गया। कैसा करुणासिक्त दृश्य था। इसी दिन मधुर व्याख्याता श्री ज्ञानमुनिजी म.सा व श्री दयामुनिजी म.सा. भी जिनका चातुर्मास रीया था, गुरुचरण-सेवा मे पधार गये। आज सभी शिष्यगण अपने परमाराध्य गुरुवर्य की सान्ध्यवेला मे सेवा हेतु समुपस्थित थे।

मध्याह्न मे जयपुर श्री सघ ने जयपुर स्थिरवास हेतु पधारने की भावपूर्ण विनति प्रस्तुत की और निवेदन किया—"भगवन्! स्वास्थ्य आदि सुविधाओ की दृष्टि से जयपुर सर्वोत्तम स्थान है।" इस पर पूज्य आचार्य भगवन्त ने यही फरमाया—**"मै अब ठिकाने आ गया हूँ, कही जाने के भाव नही, यदि स्थिरवास का अवसर रहा तो जोधपुर को प्राथमिकता दे रखी है।"**

दिनाक ११ मार्च ९१ को प्रात लगभग १० बजे सभी सन्तों एव प्रमुख श्रावकों को सघ-सम्बन्धी भोलावण दी। बार-बार भोलावण देने पर अन्तेवासी गौतममुनिजी म.सा. ने सहज ही गुरुदेव से निवेदन किया—"भगवन् आप अभी से ही बार-बार भोलावण क्यो दे रहे है ? अभी तो आप शतायु-चिरायु हो हमे अपनी वात्सल्यपूर्ण शीतल छाया प्रदान करते रहेगे। आपके सान्निध्य मे हमे क्या चिन्ता?" इस पर आत्मसाधक गुरुदेव ने अपना वरदहस्त मस्तक पर रखते हुए अत्यन्त दुलार के साथ अपने स्नेह सुधासिक्त वचनो से फरमाया—"भाई गौतम! अभी तो मै

बोल रहा हूँ, फिर कदाचित् नही बोल पाऊँ?" मुनिश्री श्रद्धाभिभूत हो विचारमग्न हो गए। १२ मार्च ९१ को लगभग १२ बजे संतों ने गुरु-चरणो में सविनय साञ्जलि शीष झुकाकर निवेदन किया—"भगवन्! शरीर के लिये आहार आवश्यक है, अत आप थोड़ा आहार ग्रहण करने का ध्यान देने की कृपा करे।" पर उन महामनीषी की दृष्टि तो अब इस तन के लिए आवश्यक आहार की ओर नही वरन् परलोक के भाते की ओर ही थी।

• साधना के शिखर की ओर

अपने हृदयगत भावो को प्रकट करते हुए गुरु भगवन्त बोले- "क्या मुझे खाली हाथ भेजोगे? मुझे खाली हाथ मत भेजना, यह मेरी एक मात्र अतिम इच्छा है।" उनके पवित्र हृदय के उस दृढ़ सकल्प से सभी हतप्रभ थे। देह के प्रति कैसी निस्पृहता! न तन का मोह, न आहार का मानस, न दवा की मशा, एकमात्र अभिलाषा थी साधक के अतिम मनोरथ की सिद्धि कर कृतकृत्य होने की। अपने जीवन के इस सन्ध्याकाल में भी चरितनायक सतत जागरूकतापूर्वक अपनी सयम-चर्या में निरत रहते। यदि सघ-सबधी कोई आवश्यक बात ध्यान में आती तो वे ज्येष्ठ सतो एव प्रमुख श्रावको को सकेतात्मक भाषा मे ध्यान दिला देते, शेष समय ध्यान, जप एव स्वाध्याय-साधना द्वारा अपनी अन्तर्ज्योति ज्योतित रखते।

१३ मार्च ९१ को सायंकाल प्रतिक्रमण से पूर्व ६.२५ बजे उस प्रतिपल सजग साधक, संयम की साकार प्रतिमूर्ति आचार्य भगवन्त ने अपनी सरलता, विनम्रता, समर्पण एवं महानता का आदर्श उपस्थित करते हुए अपने द्वारा दीक्षित संतों के समक्ष कहा-"मैं अपने गुरु आचार्य भगवन्त की साक्षी से पूर्व के दोषों की निन्दा करता हूँ, और नये महाव्रतों में आरोहण करता हूँ।" गुरुदेव के हृदय से निकले इन पावन निर्मल शब्दो ने सभी शिष्यो को आश्चर्य में डाल दिया-कि जिन महापुरुष ने सयम-पर्याय के प्रतिज्ञा पाठ के साथ ही अद्यावधि निरतिचार सयम का पालन किया, जिनका सयम युगो-युगो तक साधकों के लिये आदर्श रूप मे पथ आलोकित करता रहेगा, उन महापुरुष को महाव्रतों मे नवीन आरोहण जैसी क्रिया की क्या आवश्यकता? पर यही तो युगमनीषी, युगप्रर्वतक महापुरुषों की महानता होती है, जिनकी मेरु समान ऊँचाई व सागर सम गहराई की थाह पाना सामान्य जनों के सामर्थ्य के बाहर की बात है। उन्होंने आत्मिक-विकास की उस उच्च भूमि पर आरोहण कर लिया था, जो वीतरागता की ओर अग्रसर होती है।

यही नही आचार्य प्रवर ने सभी प्राणियो से क्षमायाचना करते हुये सभी प्रमुख सन्त सतियो की सेवा मे क्षमायाचना के पत्र प्रेषित कराये। जिसका प्रारूप कुछ इस प्रकार था—

"मै जीवन के सध्याकाल मे चल रहा हूँ। मेरा स्वास्थ्य उतना स्वस्थ एव समीचीन नही चल रहा है। सयम-जीवन के पिछले कई वर्षो से मेरा आपसे प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से निकट सम्पर्क व प्रेम सौहार्द सम्बन्ध रहा है। कई बार मिलने एव विचार-विमर्श के प्रसग आए है। इस बीच न चाहते हुये भी मेरे किसी व्यवहार से आपको व आपके अन्तेवासी सत-सतीवृन्द को कोई भी कष्ट हुआ हो तो मैं आत्म-शुद्धि हेतु हार्दिक क्षमायाचना करता हूँ। सघ की व्यवस्था श्री मानमुनि जी एव श्री हीरामुनि जी सभालेगे। उनके साथ भी आपका वैसा ही सौहार्द सम्बन्ध बना रहे, इसी भावना के साथ एक बार पुनः क्षमायाचना।"

१४ मार्च ९१ को आचार्य प्रभु अनायास ही प्रात ब्रह्म मुहूर्त मे तीन चार बजे के लगभग गगवाल भवन के पिछवाड़े के बरामदे में पधारे और **संतों के साथ छज्जीवनी का स्वाध्याय किया। जप, ध्यान, भक्तामर**

पाठ एवं प्रतिक्रमण के पश्चात् वन्दना के समय आचार्यदेव ने हर शिष्य सन्त से हाथ जोड़कर क्षमायाचना की। गुरुदेव की इस महानता, सरलता एवं सजगता से हर सन्त का हृदय श्रद्धाभिभूत एवं गद्गद् हो उठा। निवेदन करते हुए कहा - "गुरुदेव! आपका तो हमारे ऊपर अनन्त उपकार है। अविनय आशातना तो हम बालकों से होती रही है, क्षमायाचना तो हम शिष्यो को करनी चाहिए।" इसी दिन लगभग ९ बजे सभी सत गुरुचरण-छाया मे बैठे थे। वार्ता प्रसग मे पूछा-"भगवन्! कुछ इच्छा हो तो फरमायें।" उस अनासक्त योगी ने यही फरमाया-**"समाधि लग रही है, आनन्द है, अब कांइ इच्छा है?'(अर्थात् कुछ नहीं) मेरे पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्दजी म.सा.का जन्म जोधपुर में हुआ और स्वर्गवास भी जोधपुर में ही हुआ। मेरे इस शरीर का जन्म पीपाड़ में हुआ।"** यह कह कर अपनी बात समाप्त की।

जब देखा, आगे नही फरमा रहे हैं तो सन्तों ने सहज जिज्ञासा एव उत्सुकता से अति विनीत स्वरो में पूछा-"भगवन्! आपकी अभिलाषा पीपाड़ पधारने की हो तो वैसा ही करेगे।" प्रत्युत्तर में उस प्रज्ञापुरुष महामनीषी ने स्नेहसुधासिक्त सस्मित मुस्कान के साथ सहज, सरल, शान्त, गम्भीर एव दृढ़ स्वर मे छोटा सा उत्तर दिया-**"भाई! पीपाड़ गाँव निमाज ठिकाने में ही आता है।"** गुरुदेव का यह सकेत तात्पर्यबोध के लिये पर्याप्त था।

गत तीन दिनों से औषधि-सेवन बिल्कुल बन्द था। आहार भी सन्तों के अत्याग्रह पर अत्यन्त अल्प। इसी बीच लगभग ४ बजे डॉ. एस. आर. मेहता दर्शनार्थ एवं स्वास्थ्य की पृच्छा हेतु पहुँचे। डॉ मेहता सा ने सानुरोध निवेदन किया-"गुरुदेव! स्वास्थ्य के लिए दवा और खुराक की महती आवश्यकता है।"गुरुदेव ने फरमाया-"अब खाने की रुचि नही है और दवा लेने की इच्छा नही है। शरीर कुछ मागता नही।" डॉक्टर सा. के परामर्श एव सतों के अत्यन्त भावप्रवण निवेदन पर उस अकारण करुणाकर महर्षि ने दो दिन के लिए दवा लेना स्वीकार किया। दूसरे दिन १५ मार्च ९१ को गुरुदेव के सुस्ती रही, पर जप का वही क्रम चलता रहा। प्रातःकाल पहले दिन की बात के सन्दर्भ में सन्तो ने निवेदन किया-"भगवन्! आपने दो दिन ही दवा सेवन का निर्णय क्यो लिया ?" प्रत्युत्तर में उन अप्रमत्त योगी ने फरमाया-**"मैं कहीं खाली हाथ न चला जाऊँ, इसीलिये सावधानी रखने का परीक्षण कर रहा हूँ।"** सुनने वाले अवाक् थे, क्या गजब की सजगता और जागरूकता! इसके बाद उस दिन गुरुदेव किसी से भी कुछ नही बोले। पूज्य गुरुदेव ने अन्नाहार बद सा कर दिया। प्रायः पेय पदार्थ ही लेते। किसे पता था कि पूज्य गुरुदेव अब अन्नाहार कभी नही करेगे। सन्त-जन तो यही सोच रहे थे कि अन्नाहार स्वास्थ्य की दृष्टि से बद किया है और स्वस्थ होने पर पूज्यवर अन्नाहार अवश्य ही करेंगे।

दिनाक १६ मार्च ९१ को दिन भर पूज्य गुरुदेव के सुस्ती रही, वे किसी से भी कुछ नही बोले। हल्का सा बुखार भी था, जो तेज होते -होते १०४ डिग्री तक जा पहुँचा। पूज्य आचार्य गुरुदेव की इस शारीरिक स्थिति से सभी अत्यन्त व्यग्र एव चिन्तित थे। सभी के मन मे एक ही खयाल था-आचार्य भगवन्त! कैसे भी स्वस्थ हों व आरोग्य लाभ प्राप्त करें। आवश्यक उपचार के पश्चात् अपराह्न तीन बजे लगभग ज्वर कम हुआ। सभी ने संतोष की सास ली। इसी बीच अचानक लगभग ५ बजे पूज्य गुरुवर के शरीर में भयकर कम्पन्न हुआ। स्थानीय सेवाभावी चिकित्सक डॉ राकेश शर्मा ने निरीक्षण कर बताया कि मस्तिष्क मे रक्त संचार अवरुद्ध होने से शारीरिक स्थिति ऐसी हो गई है। थोड़ी देर बाद तीन बार वमन होने से शरीर में कमजोरी आ गई।

सतजन चिन्तित थे। योगीराज हस्ती तो कर-कमल में माला लिये निरन्तर जप में लीन थे। **कैसी विलक्षण सहिष्णुता,कैसी अदृष्टपूर्व समता, जैसे कुछ हुआ ही न हो। पूज्य गुरुदेव की इस सहनशीलता से सब सन्त**

भावाभिभूत थे। संध्याकाल प्रतिक्रमण के पश्चात् संतगण के विनम्र अनुरोध के उपरान्त भी विश्राम न कर भगवन्त ध्यान एव जप-साधना में ही निरन्तर लीन रहे। रात्रि में लगभग १२ बजे जब ससार के अधिकाश प्राणी प्रमाद-निद्रा में लीन होते है, आत्म-चिन्तन में रत वे साधक शिरोमणि समीपवर्ती बैठे संतों को अत्यन्त आत्मिक भाव से स्नेहसिक्त वात्सल्यपूर्ण मधुर वचनों के साथ सयम-साधना में सतत जागरूक रहने की प्रेरणा देते हुए भोलावण देने लगे- "**आचार्य श्री रत्नचंद्र जी म. सा. की मर्यादा निभाना, समाचारी का पालन करना, आपस में मतभेद मत रखना, मेरी आत्मा को शांति मिले, ऐसा कार्य करना, संघ में प्रेम-शांति बनाये रखना, संघ का मान रखना।**" इतना कह कर बड़ी संलेखना का पाठ श्रवण कर पूज्य प्रभु पुन इसी अलमस्त साधना में तन्मय हो गये। **सन्तों को गुरुदेव की ओर से ये शब्द अंतिम आदेश, उपदेश एवं भोलावण के थे।**

अगले दिन १८ मार्च ९१ को मध्याह्न तक पूज्य भगवन्त कुछ भी नही बोले । पेय पदार्थ ग्रहण करने के लिए सन्तों द्वारा पुन पुनः आग्रह किए जाने पर उन युग मनीषी के द्वारा प्रकट किए गए विचार , सवाद के रूप में (जिनवाणी-श्रद्धाञ्जलि अंक) से प्रस्तुत है-

गुरुदेव—मेरी आत्मा को सम्भालो, शरीर का मोह छोड़ दो। शरीर के पीछे क्यों पड़े हो। अरे भाई, म्हारा शरीर ने छोड़ो-शरीर अनन्त बार धार्यो है और छोड्यो है। म्हारो जनम खराब मत करो।

जम्म दुक्खं जरा दुक्खं रोगाणि मरणाणि य ,
अहो दुक्खो हु ससारो, जत्थ कीसन्ति जन्तवो ॥

म्हारी आत्मा री साधना मे कमजोरी मत लावो।

संतगण—शरीर मे कमजोरी आ रही है भगवन्!

गुरुदेव— शरीर तो अनन्त बार धार्यो है और छोड्यो है।

संतगण—भगवन्! देवलोक मे जाने की इतनी आतुरता क्यो? शरीर रहेगा तो संयम रहेगा, सयम श्रेष्ठ है या नन्दनवन (देवलोक) ?

गुरुदेव—सर्वश्रेष्ठ तो आत्मा है।

संतगण—दोनो की तुलना में भगवन्! संयम या नन्दनवन ?

गुरुदेव—नन्दवन तो क्या है, पौद्गलिक है। आत्म-भाव ही अनत सुख देने वाला है।

संतगण – भगवन् ! जल सेवन कर लें।

गुरुदेव—आचार्य श्री की मर्यादा का पालन करने का ध्यान रखना।

संतगण—आपने प्यास नही लागे ?

गुरुदेव—प्यास को काई करनो है, अनन्त बार भूख और प्यास लगी है।

संतगण—भगवन्! बिना अन्न-जल के यह शरीर कैसे चलेगा ?

गुरुदेव—शरीर तो स्वतः छूट जाई।

सन्तगण—भगवन्! आप तो इसे छोड़ने की कोशिश कर रहे हैं।

गुरुदेव—आनन्द है।

संतगण–भगवन् ! हम इतना निवेदन कर रहे हैं। थोडा सा जल ले ले।

गुरुदेव–साधना जितनी निर्विघ्न बनाओगे, जितना धर्म मे दृढ़ बनाओगे, उतना ही आत्मिक संतोष का विषय है।

संतगण–एक बार जल ले लो भगवन् !

गुरुदेव–इरी मनवार मत करो, ज्ञान, दर्शन, चारित्र री मनवार करो।

संतगण–भगवन् ! ज्ञान, दर्शन, चारित्र के पालन मे शरीर की आवश्यकता है और शरीर के लिये खुराक की।

गुरुदेव–अरे भाई, जवाब सवाल की बात नही, म्हारी आत्मा ने आत्मभाव मे स्थिर करो।

अपराह्न चार बजे रस पीने का बार-बार आग्रह करने पर भी पूज्य गुरुदेव मना करते रहे। तब सतो ने पूछा-"**भगवन् ! आपकी भावना क्या है ?**" तो पूज्य चरितनायक ने यही फरमाया-**आहार, शरीर छोड़ने की।**

पुनः लगभग ४.२० बजे संतो ने भगवन्त को करबद्ध निवेदन करते हुए आग्रह किया-"भगवन् ! आप दवाई व आहार लिरावें। भगवन् ! आपकी जो भी रुचि हो, फरमावें। हम आपकी रुचि के माफिक ही खयाल रखेगे। हलका आहार अथवा पेय जो भी रुचिकर हो, फरमावे।"

प्रत्युत्तर मे **गुरुदेव बोले-"रुचि भी नही और आयु भी नही है।"** पुन सतो ने लगभग ४४५ बजे गुरुदेव को पूछा -"**भगवन् ! आपको जैसे साता हो, वैसा फरमावें।**" गुरुदेव एक शब्द ही बोले - "**समाधि में**"।

प्रश्नोत्तर काल मे पूज्य गुरुदेव भगवन्त का मुखमडल आत्म-ज्योति से दीप्त हो रहा था। सब सन्त उन तपोपूत महाश्रमण के उच्च आत्मिक भावो से परिपूर्ण उत्तर से निरुत्तर थे। युवावस्था मे स्वय द्वारा रचित रचना के भाव उनके जीवन के इस सध्याकाल मे स्पष्ट नजर आ रहे थे-

"[illegible] शोक नहीं मुझको [illegible] अंग मात्र भी [illegible] ।
सदा [illegible] मैं हूँ, मेरा अनन्त [illegible] है [illegible] ॥"

उस सवाद के बाद एक दिन बीता, दो दिन बीते, गुरुदेव लगभग मौन ही रहे, किसी से भी कुछ नही बोले । सब चिन्तित थे, पर गुरुदेव सब चिन्ताओ से परे अपनी उसी चिरपरिचित मद मुस्कान के साथ समाधिभाव मे लीन रहते। उनके प्रशस्त शुभ्र दिव्य भाल पर वेदना की हल्की रेखा भी दृष्टिगत नही हुई। किन्तु ब्रह्म तेज से दीप्त मुखाकृति आकर्षित कर रही थी। भास्वर ऑखो मे वही सौम्य, स्नेह एव करुणा का पारावार उमड़ता हुआ हर किसी को आप्लावित कर रहा था।

इसी बीच दिनाक २३ मार्च ९१ को श्री देवेन्द्रराजजी मेहता सपरिवार दर्शनार्थ आये। श्रद्धालु भक्त आत्म-भाव मे लीन अपने आराध्य गुरुदेव को मन,वचन, काया से सम्पूर्ण श्रद्धा से अभिभूत हो नमन कर रहा था तो आराध्य भगवन्त अपने इस सघसेवी श्रावक को पूर्वजों का स्मरण दिलाते भोलावण के रूप मे बोल रहे थे। पूज्य गुरुदेव ने मेहता जी से कुछ देर तक बातचीत की। सन्त आश्वस्त बने कि गुरु भगवन्त के न बोलने का कारण उनकी मौन साधना है न कि स्वास्थ्य की कोई गड़बड़ है।

पूज्य गुरुदेव को इस तरह आत्म-भाव में लीन देखकर प्रतीत होता था कि "जिन नहीं पण जिन

सरीखा, वीतराग नही पण वीतराग सरीखा" का वे साक्षात् स्वरूप हैं। गुरुदेव की आन्तरिक जागरूकता सतत बढ़ती गई। समाधिभाव में लीन उन महामनीषी को अब न तो इस जीवन के प्रति आसक्ति थी और न ही अवश्यम्भावी मृत्यु का कोई भय। पूज्य भगवन्त तो निर्लिप्त भाव से आत्म-साधना मे निरत थे।

पूज्य आचार्य भगवन्त के स्वास्थ्य के समाचार सर्वत्र फैल चुके थे। बाहर से निरन्तर सैकड़ो-हजारो दर्शनार्थी उन महायोगी के दर्शनार्थ आ रहे थे। आराध्य भगवन्त की आत्म-शान्ति मे विघ्न न हो, इसी लक्ष्य से दर्शनार्थ उपस्थित भक्तजन भी अनुशासनपूर्वक पक्तिबद्ध हो, दूर से ही दर्शन कर आत्मतोष का अनुभव कर रहे थे।

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी दिनाक २८ मार्च ९१ को शासनपति श्रमण भगवान् महावीर की जन्म जयंती के पावन प्रसग पर जन सैलाब आराध्य आचार्य भगवन्त के दर्शनार्थ उमड़ पड़ा। अखण्ड ब्रह्मचर्य के अत्युद्भुत तेज से दैदीप्यमान गुरुदेव के तेजस्वी मुखमडल को निर्निमिष नयनो से निहार कर समूचा जन समुदाय धन्य-धन्य कह उठा। आशीर्वाद की मुद्रा मे उठे प्रज्ञापुरुष के कर-कमल सभी को मौन सदेश दे रहे थे। उन प्रज्ञापुगव गुरुवर्य के मंगल दर्शन कर सभी भक्तजनो के नयन हर्षाश्रुओ से आप्लावित हो गये। हर हृदय मे एक ही भावना थी कि इस युग में भगवततुल्य हमारे ये पूज्य गुरुराज शीघ्र स्वस्थ हो, शतायु हो, चतुर्विध सघ को अपने सान्निध्य की छाया प्रदान करते रहे।

दिन प्रतिदिन दर्शनार्थियो का आवागमन बढ़ता ही गया। सुदूर क्षेत्रों के भक्तजन भी पहुँचने लगे। पूज्य भगवन्त का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा था। हर किसी को एक ही चिन्ता थी कि शरीर मे किसी रोग विशेष के लक्षण नही, फिर भी स्वास्थ्य मे सतत गिरावट क्यों? महापुरुष की सेवा मे डॉक्टर, वैद्य एव भक्त सदैव तत्पर, पर जिन्हे आहार एव दवा से अरुचि ही हो गई हो, जिन्हे अपना जीवन लक्ष्य ही दृष्टिगत हो रहा हो, जिन्होंने देहोत्सर्ग के लिए सभी तैयारियॉ कर ली हों, वे भला दवा क्या ग्रहण करते ? निमाज पधारने के बाद से ही आहार (तरल के अलावा) लगभग बद सा था । जो कुछ भी लिया वह सतो के अत्याग्रह पर और मात्र उनका मन रखने हेतु। देह का मन ही मन ममत्व त्याग कर चुके गुरुदेव तो, मात्र आत्म-भाव मे लवलीन थे। **कभी-कभी वे फरमाते भी-"यह जो कुछ आहार, दवा ले रहा हूँ, तुम्हारा मन रखने के लिये ले रहा हूँ वरना मुझे इसकी भी जरूरत नही है।"**

जोधपुर एव पाल के चिकित्सक और वैद्य पूज्य गुरुदेव के दर्शनार्थ एव स्वास्थ्य लाभ हेतु अपनी सेवा देने के लिए प्रयत्नशील थे, किन्तु यह सब व्यर्थ था। चिकित्सको की राय थी कि पूज्य श्री को इजेक्शन, ग्लूकोज (ड्रिप) एव आहार नलिका आदि बाह्य साधनों द्वारा दवा व आहार दिया जाना आवश्यक है।

एक ओर गुरुदेव के स्वास्थ्य की चिन्ता एव उनके प्रति भक्तो का राग, दूसरी ओर गुरुदेव की स्वय की भावना एव उनका दृढ़ सकल्प। अन्तत सन्तो की कर्तव्य भावना जागृत हुई और सब इस निष्कर्ष पर पहुँचे –गुरुदेव की भावना उनके लिये आदेश है। जिस महापुरुष ने जीवन पर्यन्त कई बार आवश्यक होने पर भी कभी भी, इजेक्शन आदि का उपयोग नही किया ऐसे निरतिचार संयम के आराधक एव जिन्होंने अन्तिम समय का सकेत देकर हमें स्वयं चेता दिया है तथा सतत साथ देने की ही भावना को व्यक्त किया है। ऐसे पूज्यवर्य की इच्छा के विपरीत हमे कोई कार्य नही करना है।" यद्यपि गुरुदेव के शरीर मे अत्यन्त दुर्बलता थी, स्वय उठ-बैठ नही पाते, चलना-फिरना बन्द सा था, पर उनके अनुपम धैर्य व आत्म बल पर शारीरिक दुर्बलता किंचित् मात्र भी आवरण नही डाल पाई। मुखमण्डल पर वही सहज, निश्छल, आत्मीय मुस्कान, नयन कमलो मे वही महर्घ्य मुक्ताफल की सी स्वच्छ अद्भुत

आभा दृष्टिगत हो रही थी। बार-बार पूछने पर निरतिचार सयम-साधना के धनी उन पूज्यवर्य ने इतना मात्र कहा-"भाई , मैं बहुत बोल चुका। अब तो करने का है। मेरी साधना मे विघ्न मत डालो।" गुरुदेव के इस वाक्य ने सब लोगों के विचारों को और दृढ़ बना दिया।

सन्तगण ने सारी स्थिति उपस्थित प्रमुख श्रावको के समक्ष रखते हुए कहा कि ७० वर्ष की सुदीर्घ निरतिचार विमल सयम साधना मे जिस तन ने पूज्य गुरुदेव का साथ दिया है, जो शरीर इस साधक महापुरुष की आदर्श साधना एवं तप तेज से दीप्त तथा तेजोमान हुआ है, उस शरीर को पूज्यवर्य की अन्तिम साधना का साथी बना रहने दें। यही भावना स्वय पूज्यवर्य की है एव हम लोगो की भी यही भावना है। परन्तु सघनायक के इस तन पर समूचे चतुर्विध सघ का अधिकार है। अत आप सामूहिक रूप से जो निर्णय करना चाहे कर हमे अवगत कराये, किसी भी अन्तिम निर्णय के पूर्व आप लोगों की सहमति अपेक्षित है। श्रावकगण ने भी समग्र स्थिति पर गहन विचार-विमर्श कर यही सम्मति प्रकट की कि हमे पूज्य भगवन्त की भावना को सर्वोपरि स्थान देते हुए, चिकित्सको की राय से इजेक्शन, ग्लूकोज अथवा आहार नलिका नही लगवानी है।

चिकित्सक दल को निर्णय से अवगत कराया गया। सभी डॉक्टर सुनकर चकित रह गये। शरीर की व्याधियों का उपचार करने वाले चिकित्सकों को भला क्या पता कि सतों मे अद्‌भुत सत वे परमयोगी तो अब तन के ममत्व से परे हो चुके हैं तथा भवरोग का उपचार करने मे सन्नद्ध हैं। धन्य, धन्य है इन महापुरुष का धैर्यबल, अनुपम है इनकी त्यागवृत्ति और दृढ़ है इनका आत्मबल । सभी चिकित्सकगण सहज नत मस्तक हो, गुरु गुणगान करते हुए अपने-अपने गन्तव्य स्थान लौट गये। कुछ भावुक भक्तो को यद्यपि अत्यन्त निराशा थी, पर आराध्य गुरुदेव के अटल वज्र सकल्प के आगे वे मौन एव नत मस्तक थे। भक्तो का आवागमन निरन्तर बढ़ता जा रहा था। आने वाला हर दर्शनार्थी जब गुरुदेव के स्वास्थ्य को देखता एव उनकी भावना को सुनता तो चिन्तित मुद्रा मे दीर्घनिश्वास ले यही कह उठता-

'पूज्यराज को यह क्या जँच गई? अन्नाहार क्यो बद कर दिया ? दवा क्यों नही लेते ? उपचार मे इतनी निस्पृहता क्यो ? जीवन भर जिस महापुरुष ने तप, त्याग व सयम साधना मे लेशमात्र कमी नही रखी, इस रुग्ण अवस्था मे वे किस कमी को पूरा करना चाहते हैं? अति भावुक होने पर वे सतो से उलाहना भरे शब्दों में पृच्छा भी करते, पर जब उन्हे गुरुदेव के पवित्र सकल्प से कि 'जीवन के सध्याकाल मे मैं कही खाली हाथ न चला जाऊँ' से अवगत कराया जाता तो वे सहज नत मस्तक हो उस महापुरुष के प्रति श्रद्धानत हो जाते। पूज्यपाद की वह अत्युत्कृष्ट निर्मल भावना श्रद्धासिक्त भक्तो के सभी प्रश्नो का एकमात्र समाधान थी। गुरुदेव की भावना के आगे तो कोई प्रश्न हो भी कैसे सकता है।

सभी शिष्यगण अहर्निश सेवा-परिचर्या मे लगे थे। भक्ति-भावना से ओत-प्रोत गुरुभक्त श्रावकगण अपना-अपना व्यवसाय, सुख-सुविधाएँ छोड़, गुरुदेव की सेवा मे ही उपस्थित रहने लगे। किसी का भी मन घर लौटने को नही होता। डॉक्टर एस. आर. मेहता, डॉक्टर राकेश मेहता एव वैद्य सम्पतराज जी मेहता पूर्ण श्रद्धा-भक्ति व विवेक के साथ मर्यादानुसार उपचार मे सन्नद्ध थे। परन्तु गुरुदेव अपनी मस्ती में मस्त थे। ८ अप्रेल ९१ को गर्मी के बावजूद सायकाल चौविहार-त्याग के समय जल भी अत्यन्त अल्पमात्रा मे ही लिया।

• तेले की तपस्या

९ अप्रेल ९१ मगलवार प्रथम वैशाख कृष्णा दशमी को सन्तों के द्वारा आग्रहपूर्ण निवेदन किए जाने पर भी

आपने पेय स्वीकार नहीं किया और आपने उपवास का संकल्प कर लिया। कृष्णा दशमी को आपके वर्षों से मौन रहता था। इस दिन पूज्यवर वर्षों से चिन्तामणि भगवान पार्श्वनाथ का जप-स्मरण एवं एकान्त ध्यान साधना के साथ आत्मरमण करते थे। दूसरे दिन १० अप्रेल को भी आपने पारणा नहीं कर बेला तप कर लिया। ११ अप्रेल को सन्तो को पारणक की आशा थी, किन्तु वह भी पूर्ण नही हुई। आचार्य श्री मन ही मन अन्तिम मनोरथ की उत्कृष्ट साधना के लिए दृढ़ सकल्प कर चुके थे। ७० वर्ष की सुदीर्घ संयम-साधना मे आपने एक से अधिक बार तेले की तपस्या नही की थी, किन्तु यह द्वितीय तेले का तप अद्वितीय लक्ष्य की पूर्ति का मजबूत सोपान सिद्ध हो रहा था। शरीर की अशक्तता का कोई अर्थ नही था। आत्मशक्ति एव मनोबल की विजय यात्रा अपना लक्ष्य पूर्ण करने की ओर अग्रसर थी। आपका मुख-मण्डल अद्‌भुत दिव्य आत्म-तेज से ज्योतिर्मान था।

तेले का तप पूर्ण होने पर सन्तो को आशा थी, कि अब गुरुदेव अवश्य ही पारणक कर लेगे, परन्तु १२ अप्रेल ९१ को सूर्य की किरणे तो उदित हुई, किन्तु पारणक कराने की सन्तो की अभिलाषा पूर्ण नही हो सकी। सुशीला भवन के बाहर दर्शनार्थियों की अपार भीड़ थी। हर कोई एक दूसरे से पूछ रहे थे-गुरुदेव ने पारणा किया या नही? सभी सतमुनिवृन्द, महासती-मण्डल एव सघ के कार्यकर्ताओं का मन अधीर हो रहा था। सभी ने पुन: गुरुचरणो मे निवेदन किया कि भगवन् ! आज तो अब पारणक करावें। पारणक के लिये पुन: पुनः निवेदन करने पर शारीरिक चेष्टाओ से स्पष्ट इनकार कर दिया। आचार्यप्रवर से पृच्छा करने पर उन्होंने अपने स्मित मुख-मण्डल से सहज ही सथारा ग्रहण करने की भावना व्यक्त की। किन्तु सबको यह आसानी से स्वीकार्य कहाँ था? **काल-चक्र अबाध गति से अपने कदम बढ़ाता जा रहा था तो वे मृत्युंजयी महापुरुष उस पर विजय श्री का वरण कर मरण को अपने साधक जीवन का आदर्श बना, एक नया कीर्तिमान रच रहे थे। सैंकड़ों साधक अपने जीवन का निर्णय लेने जिन श्री चरणों में उपस्थित हुए, आज उसी नियामक के जीवन की निर्णायक घड़ी सबके सामने थी। निर्णय तो वह महासाधक कभी का ले चुका था, संघ को तो मात्र उस पर अपनी स्वीकृति (चतुर्विध संघ की स्वीकृति) की मुहर लगानी थी। अन्ततः श्रद्धेय श्री मान मुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री हीरा मुनिजी म.सा.प्रभृति सभी संतगण, वहाँ उपस्थित रत्नवंशीय साध्वी-मण्डल व संघ के अग्रगण्य श्रावक परस्पर विचार-विमर्श के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पूज्य भगवन्त ने जीवनपर्यन्त हमारे जीवन को आगे बढ़ाने में, संघ एवं जिनशासन की सेवा करने में हमारा मार्गदर्शन किया है, उन महापुरुष ने जीवन मे सदैव दिया ही दिया है, कभी कुछ माँगा नही, आज जीवन की इस सांध्य वेला में मांगा भी है तो पंडित मरण में सहयोग। अतः इस ऊहापोह की घड़ी में अपने हृदय को मजबूत कर गुरुदेव की भावना के अनुरूप उनके अभीष्ट पाथेय की प्राप्ति में सहयोग देना ही हमारा एक मात्र कर्त्तव्य है।**

- सथारा-समारोहण

गुरुदेव सथारा करने के लिए तत्पर थे। सभी अवाक् थे - अपने अन्तिम मनोरथ 'सथारा' की कितनी प्रबल अदम्य आकांक्षा, कैसा दृढ़ अभिनिश्चय, जीवन से कितनी निस्पृहता! त्याग के प्रबल आग्रह के समक्ष राग को झुकना ही पड़ा। एक ओर गुरुदेव के अब अधिक सान्निध्य से वंचित हो जाने का द्वन्द्व, तो दूसरी ओर गुरुवर्य की साधना के दिव्य शिखर पर आरोहण की प्रसन्नता थी। अन्ततः हर्षमिश्रित भारी मन से चतुर्विध सघ ने गुरुवर्य की प्रकृष्ट भावना का समादर करते हुए सथारा ग्रहण करने की सहमति प्रदान कर दी।

जब श्रद्धेय श्री मानमुनिजी म.सा. एव श्रद्धेय श्री हीरामुनिजी म.सा. सथारे की विधि पूर्ण करा रहे थे तब उपस्थित चतुर्विध सघ के सदस्य स्तब्ध होकर इस भव्य प्रकृष्ट आरोहण को अपलक निहार रहे थे। उन महापुरुष के दिव्य आभामय मुखमण्डल पर अलौकिक आत्म-ज्योति प्रकट हो रही थी तो अपने अभीष्ट मनोरथ की पूर्ति का परमतोष भी झलक रहा था। उनके रोम-रोम मे अपार उत्साह था। वस्तुत दृढ़ सकल्पव्रती, श्रमण श्रेष्ठ की चिर संचित अन्तर्भावना आज साकार होने जा रही थी।

"जग मरण से डरत है, मो मन परमानन्द।
कब मरस्या कब भेटस्या, सहज परमानन्द॥"

श्रद्धेय मान मुनिजी म.सा द्वारा विधि पूर्ण कराये जाने के बाद जब आजीवन (तिविहार) आहार-त्याग के प्रत्याख्यान का पाठ श्रवण कराया जा रहा था, **भगवन्त ने पूर्ण सचेतन सजग अवस्था में स्वयं अपने श्रीमुख से 'वोसिरामि' शब्द का उच्चारण कर संथारा ग्रहण कर लिया।** साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका सभी भारी मन से आत्मसमाधिस्थ अपने आराध्य उन युग-निर्माता, युग-मनीषी, युग-प्रभावक गुरुवर्य को नत मस्तक हो, भाव-विह्वल हो, नमन कर रहे थे। **जीवन के उषा काल में ही साधना करते जिस महापुरुष ने भेद-ज्ञान का साक्षात्कार कर यह अनुभव कर लिया था कि यह शरीर 'मैं' नही, 'मैं' उसमें विराजित आनन्दघन आत्मा हूँ, तभी से उनकी समग्र साधना निरन्तर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती गई। आज लगता है, उनकी समूची संयम-जीवन की वह सुदीर्घ साधना इस समाधिमरण के लिए की गई तैयारी थी।** योजनाबद्ध रीति से सथारा ग्रहण करने का यह शताब्दी का अप्रतिम उदाहरण था। पहले दवा बन्द, फिर अन्नाहार बन्द, फिर पेय बन्द एव सम्बन्धित सम्प्रदायो के प्रमुख श्रमण वरेण्यो को क्षमा-याचना के पत्रो के साथ चतुर्विध सघ एव प्राणिमात्र से क्षमायाचना पूर्वक तेले की तपस्या - यह था सलेखना का सच्चा स्वरूप और सथारे की भूमिका।

सबका आग्रह उन्हे रोक न सका, शिष्यों के स्नेह व भक्तो की भक्ति भी उन्हे बाध नही सकी, क्योंकि वे निकट भवी महासाधक तो सभी बन्धनो से मुक्त होने की ओर सतत अग्रसर थे। इस कठोर साधना पर आगे बढ़ना उनके अनन्त मनोबल का ही तो परिचायक है। पूज्य भगवन्त तो अन्तर्ज्योति जगा यही सोच रहे थे-

मै हूँ उस नगर का भूप, जहा नहि होती छाया-धूप।
रूप, जगत पुद्गल की माया, मेरा चेतन रूप।
पूरण गलन स्वभाव धरे तन, मेरा अव्यय रूप॥
मै न किसी से दबने वाला, रोग न मेरा रूप।
गजेन्द्र निज पद का पहचान, सो भूपो का भूप॥

यह तन मेरा नही, यह दुर्बलता, यह अशक्तता, ये रोग मेरा कुछ बिगाड़ नही सकते, मै तो अविनाशी, अजर, अमर, शुद्ध, शाश्वत आत्मा हूँ, मुझे तो मेरा स्वरूप प्रकट करना है, सभी बन्धनो को तोड़ कर मुक्त होना है।

आत्मसमाधिस्थ पूज्य चरितनायक के सूर्य सम दैदीप्यमान चेहरे से ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानो गुरुदेव अपने अप्रतिम आत्म-बल से कराल काल पर विजय-वैजयन्ती फहराने को इस अध्यात्म-संग्राम मे सन्नद्ध होकर कर्म-शत्रुओ को परास्त करने को कटिबद्ध हैं। वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति से निरन्तर अपनी आत्मा को ऊँचा उठा कर मुक्तिश्री की ओर बढ़ रहे थे। वीतरागता की उच्च स्थिति पाने को समुत्सुक इन महाश्रमण को सहयोग देने के लिए सन्तवृन्द एवं सतीवृन्द भवभयहारिणी जिनवाणी के आगम पाठ एव अध्यात्म-स्वरूपबोधक भजन पूज्य गुरु-चरणो में सुनाने को उद्यत थे।

आचार्य श्री के स्वास्थ्य एव सथारा विषयक समाचार देशभर के जैन एव जैनेतर समाज मे कर्णाकर्णि तीव्रता से प्रसारित हो चुके थे। एक आचार्य को सथारा ! सदियों मे होने वाली दुष्कर घटना ! देश के प्रमुख सत-सतियो के यहा से भी स्वास्थ्य एव संथारा विषयक-पत्र आने लगे।

आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी म.सा. का अहमदनगर से जो पत्र प्राप्त हुआ, उसका कुछ अश इस प्रकार था–

"साधना का चरम लक्ष्य पण्डित मरण है। आचार्य श्री जी ने अपने शरीर पर से ममत्व उतार दिया है, यह उनकी उच्च साधना का द्योतक है।"

"सयम-जीवन मे आचार्य श्री जी के साथ कई बार मिले है, साथ रहे हैं, शरीर दो थे, किन्तु विचार एक थे, दूध पानी की तरह रहे है। आचार्य श्री जी ने भी यही फरमाया है कि मेरी भी वृद्धावस्था है । शरीर के पुद्गल ढीले पड़ रहे है, मेरी ओर से या मेरे साथ रहने वाले अन्तेवासी सन्तो की ओर से या मेरे आज्ञानुवर्ती सन्तो की ओर से आपको कोई कष्ट पहुँचा हो, मन दु खाया गया हो तो मै क्षमायाचना करता हूॅ।"

[illegible] श्री चम्पालालजी म.सा ने शास्त्री नगर, जोधपुर से २०.३.१९९१ को लिखवाये पत्र मे पारस्परिक क्षमायाचना के अनन्तर स्पष्ट किया - "आप श्री ने दोनो सम्प्रदायो के पारस्परिक प्रेम सबध एव मैत्री-सम्बन्ध के विषय मे जो शुभ भावना व्यक्त की है, उसका हम हृदय से सत्कार, सम्मान एव आदर करते हैं। हमारी भी यही भावना है कि इन दोनो सम्प्रदायो मे वर्तमान मे जो मैत्री-सम्बन्ध एव प्रेम-सम्बन्ध बना हुआ है वह वैसा ही बना रहे, बल्कि उसमे उत्तरोत्तर और वृद्धि होती रहे, ऐसी हमारी भावना है। "

श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री नानालालजी म.सा ने १३ अप्रेल १९९१को मांडल-चौराहा से जो सदेश प्रेषित कराया, उसका अश प्रस्तुत है–

"आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. ने वीतराग शासन मे जो सेवाए अर्पित की वे सदा प्रेरक रहेगी। आचार्य श्री विशुद्ध ज्ञान एव निर्मल आचरण के पक्षधर रहे है। आचार्य श्री के प्रभावक जीवन की अमिट रेखाएँ सदैव भव्य मुमुक्षु आत्माओ को प्रेरणाएं प्रदान करती रहे तथा वे अपने स्वीकृत 'सिव-मयल-मरुअ-मणत-मक्खय-मव्वाबाह मपुणरावित्ति सिद्धिगइ' के पथ को वरण करने मे सन्नद्ध रहे, यही मगल मनीषा है।"

विजयनगर से शासन प्रभाविका महासती श्री यशकुवरजी म.सा के यहाँ से १५ मार्च ९१ को प्रेषित पत्र के अंश बहुत ही भावपूर्ण है –

"जिनशासन की अमूल्य निधि, जिनशासन की गरिमा, संयम-साधना के महास्रोत, ज्ञान सूर्य, पावन पथ के राही, स्वाध्याय संघ के प्रणेता, सूर्य सम तेजस्वी, चन्द्र सम शीतल, सागर सम गभीर, महा मनीषी, महायशस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी, उपमातीत व्यक्तित्व, जिनशासन प्रभावक, आराध्य आचार्यप्रवर की अस्वस्थता के समाचार ज्ञात कर मन पीड़ा से अभिभूत हो उठा, और होना स्वाभाविक भी है, क्योकि आपश्री की कृपा दृष्टि जो सदैव रही है। आपश्री के पावन सान्निध्य मे पावन श्री चरणों मे बैठकर असीम आनंद की अनुभूति हुई थी, मन अपरिमित शान्ति से परिपूर्ण बना था। कल्मषहारिणी पतितपावनी, कल्याणी, जिनवाणी आप श्री के मुखारविन्द से श्रवण कर हृदय बड़ा प्रमुदित हुआ था। आप श्री के पावन दिव्य दर्शन लाभ से इन प्यासे नयनो की प्यास बुझायी थी। आपश्री के अगाध ज्ञानसागर की कुछ ज्ञान बूँदे पाकर मन प्रसन्नता से झूम उठा था, वे क्षण जो इतने पावन थे, आनन्द से परिपूर्ण थे, कैसे उन अमूल्य क्षणो को विस्मृत कर दे। आज भी अतीत के स्वर्णिम क्षणों का दृश्य नेत्रों के समक्ष साकार होता हुआ प्रतीत होता है। आप श्री की स्मृति

होती ही रहती है। **मन चाहता है कि पुण्यात्मा के पुनीत दर्शनों का लाभ मिल जाए, ये प्यासे नयन दर्शन लाभ पाकर धन्य बन जायें, दिव्य वचनामृत पान कर कर्णयुगल पावन बन जायें।**

श्रमण सघ के श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री पुष्करमुनि जी म.सा., उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी प्रभृति मुनिवृन्द ने क्षमा - याचना के पत्र का २० मार्च १९९१ को खण्डप के निकट मोरड़ा से जो पत्र प्रेषित कराया उसका कुछ अश यहाँ प्रस्तुत है-

"पत्र पढ़कर हृदय गद्‌गद् हो उठा। आचार्यप्रवर एक महान् जागरूक पवित्र आत्मा हैं जिनके अन्तर्हृदय से क्षमा-याचना जैसी शब्दावली प्रगट हुई है। आप कितने महान् है इस शब्दावली से स्पष्ट घोषित है । अपराध छोटो से हो सकता है, बडो से नही। वर्षों से आपकी असीम कृपा हमारे पर रही है। आपश्री श्रमण सघ मे थे, तब चिरकाल तक साथ मे रहने के प्रसग भी आए। साथ में कार्य करने का अवसर भी प्राप्त हुआ। पर किन्ही विशेष कारणो से आपश्री ने श्रमण-सघ से त्याग-पत्र दे दिया। तो भी आपका हार्दिक स्नेह पूर्ववत् ही चलता रहा। "

पूज्य श्री पन्नालालजी म.सा. की परम्परा के प्रवर्तक श्री सोहनलाल जी म.सा. द्वारा १४ मार्च १९९१ को देवलिया कला (जिला अजमेर) से लिखवाए गये पत्र का अश -

"आचार्य श्री स्वय अप्रमत्त एव जागरूक सयम शील महान् आत्मा है, उनका सान्निध्य ही समाज की धरोहर है। वे अपनी आत्म-साधना मे निरन्तर सयत्न रहे हैं एव अनेको भव्यात्माओ को भी जागरूक कर अनन्त उपकार किया है। प्रवर्तक श्री जी पुन आचार्य श्री जी म.सा के चरणो मे वन्दन अर्ज कर सुख शान्ति पुछवाते हैं।"

गोहाना रोड़, जीन्द से शासन प्रभावक श्री सुदर्शनलाल जी म.सा. **के** द्वारा प्रेषित १४ मार्च ९१ का सदेश—.

"आपश्री जी वीरप्रभु के जिनशासन के देदीप्यमान रत्न एव उज्ज्वल शृगार हैं। त्याग-तप-स्वाध्याय-प्रवचन -प्रभावना एवं अनाग्रहवृत्ति के मूर्तिमन्त स्वरूप है। ज्योतिर्धर आचार्यों की आठ गणि सम्पदाओ एवं विद्वद्वरेण्य वाचको की सारणा, वारणा एवं धारणा रूप लोकोत्तर शक्तियाँ आपश्री मे साक्षात् परिलक्षित होती है।"

डेह (नागौर) से आचार्यकल्प श्री शुभचन्द्र जी म.सा. द्वारा १४ अप्रेल ९१ को प्रेषित सन्देश —

"परम पूज्य आचार्य प्रवर ने महान् कल्याणकारी वीतराग भगवान् के सिद्धान्तों के अनुसार यावज्जीवन अनशन स्वीकार करके सुदीर्घ सयमी जीवन के साथ महत्त्वपूर्ण अध्याय जोड़ा है। धन्य हैं आचार्य श्री जो सेनापति की भाँति जीवन-क्षेत्र मे वीरता से कदम बढ़ाते हुए विजयश्री के वरण हेतु प्रस्तुत हुए हैं। देह की नश्वरता को समझ कर अपना ममत्त्व त्याग कर आत्मस्थ होने के लिए आत्म-यज्ञ प्रारम्भ किया है, जो वस्तुतः स्तुत्य एव स्पृहणीय है।"

जयपुर से तेरापथ सघ के **आचार्य श्री तुलसी जी** से भी सदेश प्राप्त हुआ — "आप श्री ने अत्यन्त श्रेष्ठ कार्य किया है। जिस उत्कृष्ट समाधियोग में आप बढ़े हैं, मेरी यही मंगल कामना है कि अन्त समय तक वैसे ही उत्कृष्ट परिणाम बने रहे।"

त्रिस्तुतिक सम्प्रदायवर्ती जयन्तशिशु मुनि श्री धर्मरत्नविजयजी महाराज द्वारा १७ अप्रेल ९१ को औरंगाबाद से प्रेषित सन्देश का अश—

"सचमुच आपकी यह पहल सराहनीय है और रहेगी। भविष्य मे लिखे जाने वाले इतिहास के मुख्य पृष्ठो पर यह विवरण उत्साहवर्धकता पूर्वक स्वर्णाक्षरो मे अकित होगा तथा वर्तमान मे आस्तिक एव नास्तिक दोनो प्रकार के

मानवो के हृदय पटल पर स्थायीरूपेण टकित होगा। मुझ जैसे पामर अज्ञानी के लिये निश्चित ही आपका यह कदम सदैव प्रेरणास्रोत बन प्रवहमान रहेगा। आपश्री की जागृत हुई शुभ भावना को निर्विघ्नतया निर्बाध रूप से सच्चे साधक के स्वरूप मे सफलता प्राप्त होवे, ऐसी परमाराध्य परम इष्ट पूज्य गुरुदेव श्री से निरन्तर प्रार्थना करता हूँ एव आशा रखता हूँ कि **त्यागवीर , तपवीर, ज्ञानवीर, ध्यानवीर, महावीर, धीर, वीर, गम्भीर, सन्त महन्त ऋषिमुनि भगवन्त के परम आशीर्वाद से मुझे भी पण्डितमरण की प्राप्ति हो, इसी सद्कामना के साथ ।"**

पूज्य श्री प्रकाशचन्द जी म सा आगम रत्नाकर, श्री रामप्रसादजी म आदि का सागरिया (राज) से प्रेषित पत्र का अश "**आपने जो जिनवचन अथवा जिन धर्मामृत से विभूषित देह पाया, उस भवन से आज धर्मरत्नों की स्वर्ण वृष्टि हो रही है** । मेरा (हमारा) हृदय आपका अभिनन्दन कर रहा है। आपने जो मोक्ष साधनोपायभूत सथारा लिया है, वह मोक्षार्थ की गई परमार्थ-साधना की पराकाष्ठा है, तीर प्राप्ति है।

> दवावि देव लोए भजता अहविहाइ भोगाइ।
> सथार चिन्तता आसणसयणाइ मुचति॥ [illegible] ॥

देव भी देवलोक मे विविध भोगो मे रत होने पर भी (आप जैसो के) सथारे का खयाल आते ही आसन, शयन छोड़कर (आपकी वदना करते होगे) आपने जो जीवन सग्राम अब तक किया, आज उसके शीर्ष पर पहुँच गये है, विजय श्री आपके निकट ही है। आराधना पताका उच्च भावो की पावन पवन से प्रेरित होकर उच्चाकाश मे फहरा रही है। **तप-सयम के शस्त्रो से सभी मुनिवर सुसज्जित होते है, पर सलेखना रूप सुदर्शन चक्र तो किसी-किसी सयमी चक्रवर्ती के हाथ आता है, क्योकि धारण करने की तथा प्रयोग करने की क्षमता हर एक मे नही होती है।**

- स्तब्ध रहा श्रावक-समुदाय

पूज्यपाद आचार्य भगवन्त के सथारा-ग्रहण करने के समाचार देश-देशान्तर मे विद्युत वेग से फैल गये। जिसने भी सुना अवाक् रह गया, अनायास विश्वास ही नही कर पाया। सभी अपने-अपने मन मे विविध कल्पनाएँ करने लगे—क्या हम श्रमण भगवान् महावीर के शासन के इस दिव्य देदीप्यमान नक्षत्र के प्रभामण्डल से अब वचित हो जायेगे? रत्नवश के इस विराट् कल्पवृक्ष जिसने अपनी शीतल छाया से अपने-पराये का भेद न रख कर सभी को अपना सुखद सान्निध्य प्रदान किया, जिन-शासन सेवा मे जिन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया, सामायिक एव स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार एव इनके सन्देश को घर-घर तक पहुँचाने के लिए दीर्घ विहार करने मे कभी परीषहो की परवाह न की, विमल सयम-साधना एव आचार प्रधान सगठन जिन्हे सदैव अभीष्ट रहे, साम्प्रदायिक वैमनस्य जिन्हे कभी छू भी न पाया, युवा पीढ़ी को व्यसन-मुक्त बन्धुभाव मे सगठित करने मे जो अपने जीवन के सन्ध्याकाल मे भी पीछे नही रहे, अलभ्य गुण सयोग के धनी इन युग प्रधान आचार्य भगवन्त के सरक्षण से क्या हम वचित हो जायेगे?

पर जब सबने निमाज से विश्वस्त समाचार सुने, सभी स्तब्ध रह गये, सर्वत्र एक मौन सन्नाटा सा छा गया। सम्पूर्ण जैन समाज में एक ही चर्चा थी-आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब ने यावज्जीवन सथारा ग्रहण कर लिया है-धन्य-धन्य भगवन्। आपका समग्र अप्रमत्त सयमी जीवन जिनशासन की कीर्तिपताका को दिग्-दिगन्त मे फहराने मे सन्नद्ध रहा, तो आज आप सथारा समाधिपूर्वक मरण-विजय की ओर अग्रसर हो,आने वाली पीढ़ियो के लिये एक आदर्श उपस्थित कर रहे है। सभी मन ही मन इस महापुरुष के चरणो मे नत मस्तक थे।

जिसने भी सुना, उसे जो भी साधन मिला, उससे शीघ्रातिशीघ्र पूज्य चरणो मे पहुँचने हेतु चल पड़ा। दूर-दूर से दर्शनार्थी उमड़ उमड कर आने लगे, कही मैं दर्शन-लाभ से वचित न रह जाऊँ, इस भावना से मानो जो जहाँ खड़ा था, वही से दौड़ पड़ा। निमाज ग्राम महानगर बन गया,गगवाल भवन तपोधाम बन गया। आसपास के क्षेत्रो से जैनेतर बन्धु भी विशाल सख्या मे इस योगिवर्य की जीवित आत्म-समाधि को देखने व पूज्यराज के पावन दर्शन से अपने आपको धन्य करने उमड़ पड़े। दर्शनार्थियो की भारी भीड़ गुरुदेव के दर्शन को आतुर थी, हर कोई शीघ्रातिशीघ्र दर्शन पाने को तत्पर था। अत उन भावुक भक्तो को नियन्त्रित करना अत्यन्त कठिन था, परन्तु सघ के कार्यकर्ताओ एव निमाज श्री सघ के सेवाभावी स्वयसेवको ने अचूक सूझबूझ एव समन्वित कार्यशैली से कुशल व्यवस्था की। यह ध्यान रखा गया कि सभी दर्शनार्थी योगिराज के दर्शन कर सन्तुष्ट हो सके, अनुशासन बना रहे व आत्मभाव मे लीन पूज्यवर्य की आत्म-साधना मे भी कोई व्यवधान न हो। सघ के अधिकारीगण, कार्यकर्तागण अपनी अपनी व्यस्त दिनचर्या को छोड़ अपने आराध्य गुरुदेव की इस अन्तिम सेवा के लाभ हेतु उपस्थित हो गये, एव वहाँ रुक कर व्यवस्था सम्पादन का, सेवा का लाभ लेने लगे। सभी आगत दर्शनार्थी बन्धु गुरु-दर्शन का लाभ व्यवस्थित व अनुशासित रूप से ले रहे थे तथा इस अपार जनसमूह की सेवा मे निमाजवासी पूर्ण समर्पण भाव से संलग्न थे। किसी का भी मन वहाँ से लौटने को ही नही होता था। सभी भक्तगण व वातावरण मानो गुरु-चरणो मे दत्तचित्त हो गये।

जब सभी भक्तजन अपने आराध्य की सेवा मे समर्पित थे तो गुरुभक्त नागराज (सर्प) भी कैसे पीछे रहते। जिस दिन पूज्य गुरुदेव ने सथारा ग्रहण किया, उसी दिन मध्याह्न के समय सुशीला भवन मे नागराज दृष्टिगत हुए, पर बिना किसी को कोई नुकसान पहुँचाये, विलुप्त हो गये। षटकाया-प्रतिपालक संतजनों एवं रोम-रोम से प्राणिमात्र के प्रति करुणा सरसाने वाले, मैत्री, प्रेम, दया एव स्नेह-सुधा के सागर पूज्य भगवन्त के दर्शनार्थ नागराज का आना सहज ही था, कोई आश्चर्य की बात नही। जिसे भी इस घटना की जानकारी मिली, हर व्यक्ति अपनी-अपनी सोच के मुताबिक अटकले लगाने लगा। कुछ व्यक्ति इसे धरणेन्द्र का दर्शन हेतु पदार्पण, कुछ इस घटना को सतारा मे पूज्य भगवन्त द्वारा बचाये गये नाग का आगमन एव अपने आराध्य प्रभु के इस अन्तिम साधना-काल मे दर्शन करना स्वीकार कर रहे थे।

गुरु भगवन्त के सथारा-ग्रहण करने के महासकल्प के इस अवसर पर अपना अनुमोदन व्यक्त करने मे प्रकृति भी पीछे नही रही। जब प्रत्याख्यान स्वीकार किये गये उस समय आकाश बिलकुल साफ था, वर्षा का मौसम भी नही था। अपराह्न अनायास ही गगन मेघाच्छादित हो गया एव ठडी हवाओ के साथ मूसलाधार वर्षा हुई। आगन्तुक दर्शनार्थियो ने बताया कि यह वर्षा भी मुख्यत निमाज के इलाके मे ही हुई है। अनायास वर्षा से ऐसा लग रहा था मानो देवराज इन्द्र भी गड़गडाहट के साथ आत्मसमाधिस्थ श्रमणरत्न पूज्य हस्ती के गुणगान व्यक्त कर रहे हो। प्रकृति भी इन योगिवर्य के चरणो मे अपने श्रद्धा सुमन समर्पित कर शीतलता का सुखद सयोग प्रस्तुत कर रही थी। वस्तुत. महापुरुष जहाँ-जहाँ विराजते है, वहाँ-वहाँ सभी प्रतिकूलताये भी अनुकूलताओं मे परिणत हो जाती है तो फिर भला **यहाँ तो साधना के साक्षात् साकार स्वरूप आचार्य हस्ती श्रमण-साधना के शिखर पर आरुढ़ हो समाधि में लीन थे। उनके प्रबल पुण्यप्रताप व साधना के आगे नागराज (सर्प) , देवेन्द्र (वर्षा) अथवा प्रकृति भी गुणानुवाद कर रहे हों तो क्रोई आश्चर्य नही।**

• अखण्ड जाप

अपने आराध्य गुरुवर्य की इस अप्रतिम साधना का अनुमोदन करने, वहाँ आगत दर्शनार्थी सुश्रावको ने भी

भवन के पीछे बरामदे मे महामंत्र नमोकार का अखण्ड जाप प्रारम्भ कर दिया। दर्शनार्थी बन्धु बिना प्रेरणा के जाप मे बैठकर अपने आपको कृतकृत्य समझते। पूज्य गुरुदेव के तप यज्ञ के अवसर पर सामूहिक रूप से समवेत-स्वर मे जाप करते हुए श्रावकगण पुरातन युगीन ऋषि-आश्रम का बोध कराते। **पूज्य गुरुवर्य इस मुत्युञ्जय यज्ञ मे अपने शरीर को होम रहे थे। सत-सतीगण भी आगम पाठो का उच्चारण कर रहे थे तो भक्तगण भी जप व तप द्वारा अपनी-अपनी आहुति दे रहे थे।**

जहाँ पूज्य गुरुदेव का समग्र जीवन, उनका प्रभापुञ्ज व्यक्तित्व व महनीय कृतित्व सदैव आगत व्यक्तियो को प्रेरित करता रहा, वहाँ आज समाधिमरण की ओर बढ़ाये गये उनके कदम अपना अद्भुत प्रभाव डाल रहे थे। इन तपोपूत महासाधक के आत्म-तेज को दृष्टिगत कर बिना प्रेरणा के ही प्रत्येक आगत दर्शनार्थी की यही भावना हो उठती कि पूज्य गुरुदेव के इस मृत्युञ्जय-यज्ञ मे उसे भी तप एव नियम का सकल्प कर अपनी ओर से आहुति अवश्य देनी है। धन्य गुरुदेव ! आज आप भले ही मौनस्थ है, पर आज आपका यह तपोमय मौन प्रवचन से भी अधिक प्रेरणा प्रदायी बन हजारो पतितो को पवित्र कर रहा है।

• मुसलमान भाइयों की अनूठी श्रद्धा-भक्ति

सथारा काल मे ही मुसलमानो की ईद का प्रसग उपस्थित हुआ। अहिसा के पुजारी आचार्य देव जिन्होने सदैव छह काया के जीवो को अभयदान दिया, करुणा व दया से जिनका रोम-रोम आप्लावित था, प्राणिमात्र के प्रति जिनके हृदय मे सहज मैत्री व स्नेह की भावना थी, ऐसे पूज्य भगवन्त के इस महात्याग से प्रेरित हो, मुस्लिम भाई-बहिनो के हृदय भी परिवर्तित हो गये। रोजो की समाप्ति के अवसर पर वे सभी **मुस्लिम भाई- बहिन, जिनका सिर खुदा के सिवाय किसी के आगे झुकता नही, इस अनूठे फकीर के दर्शन करने व उनके आगे सिजदा करने स्वतः उपस्थित हुए** और लगभग पौन घण्टे तक दर्शन होने तक बिना धैर्य खोये अनुशासित पक्ति मे खड़े रहे। आत्म-समाधिस्थ उन योगिराज के मगल दर्शन कर उन मास-विक्रेता भाइयो के मन मे सहज ही अहिसा व करुणा के सस्कार जागृत हुए और **उन्होंने पूज्य गुरुराज के सथारा चलने तक मांस-विक्रय व पशुवध करने का त्याग कर दिया। यह था अहिंसा भगवती एवं महासाधक के अतुल आत्मतेज व विमल संयम-साधना का साक्षात् स्वरूप।** वस्तुत जहाँ भी महापुरुष विराजते है वहाँ का स्थान ही नही समूचा वातावरण ही निर्मल बन जाता है, सभी प्राणी परस्पर वैर-विरोध व हिसा को भूल कर अलौकिक शाति का अनुभव करते है। हिसक भी अहिसक बन जाते है। यही कारण था कि मास-विक्रय जिनकी आजीविका है उन भाइयो ने भी अपनी आजीविका का त्याग करके अबोध प्राणियो को अभयदान देकर इन महापुरुष के प्रति एक अनूठी श्रद्धा व्यक्त की। जहाँ बड़े से बड़े भक्त भी अपना व्यवसाय सहज बन्द नही कर सकते, वहाँ सथारे की अवधि तक अपनी आजीविका का भी त्याग कर उन मुस्लिम भाइयो ने अत्युत्कृष्ट अश्रुतपूर्व आदर्श उपस्थित किया। जिसने भी सुना, उन भाइयो के त्याग के अनुमोदन एव पूज्य गुरुदेव के पुण्य प्रताप की प्रशस्ति किये बिना नही रह सका।

धन्य गुरुदेव ! आपने अपनी साधना के प्रताप से अनहोनी (दुष्कर) को होनी कर दिखाया। भगवन् ! आप जैसे महापुरुष के लिये कोई भी कार्य अशक्य नही है। हिसा से ही अपना जीवन व्यापार चलाने वाले भाई-बहिन नवीन तप-त्याग अगीकार कर अपने जीवन को आगे बढ़ाएँ तो इसमे क्या आश्चर्य ? अभयदान के इस महान् कार्य मे भाई श्री अल्ताफजी व निमाज निवासी अनन्य गुरु भक्त श्री तेजराजजी, गणेशमलजी भण्डारी की प्रबल प्रेरणा

रही। सुशीला भवन के शय्यातर श्री सोहनलालजी गगवाल ने भी अध्यात्मयोगी के चरणो मे सेवा का अपूर्व लाभ लेकर स्वय को कृतकृत्य समझा।

• निमाज बना तीर्थधाम

सथारे का समय व्यतीत हो रहा था। अनन्त उपकारी, परमाराध्य, तपोधन, श्रमणश्रेष्ठ आचार्य गुरुवर्य की अन्तिम सेवा के स्वर्णिम सुयोग को अपना अहोभाग्य समझ कर सभी मुनिवृन्द सर्वत समर्पित भाव से गुरुचरण सेवा एव सान्निध्य का अनुपम लाभ उठा रहे थे। किसी भी शिष्य का मन गुरुचरणो को क्षण भर के लिये भी छोड़ने का नही होता, आवश्यक कार्यवशात् इधर-उधर जाना पड़ता, परन्तु मन वही लगा रहता था। यही सकल्प रहता कि कार्य सम्पन्न होते ही पूज्य भगवन्त की सेवा मे जाकर बैठे। उस अलौकिक तेज.पुञ्ज की प्रशान्त मुख-मुद्रा से दृष्टि हटती ही नही थी, मन अघाता ही नही, नयन परितृप्त ही नही होते थे।

ज्यो-ज्यो सथारे का समय आगे बढ़ रहा था, दर्शनार्थियो की सख्या बढ़ती ही जा रही थी। समीपवर्ती नगरो व आसपास के क्षेत्रो से भक्तगण ही नही वरन् जाति,धर्म व सम्प्रदाय की दीवारो से परे सभी वर्गों के लोग एक बार दर्शन कर जैसे परितृप्त ही नही हो पाते, घर लौटने पर भावना पुन पुन दर्शन की होती और वे भावुक भक्तजन सहज ही योगिवर्य के दर्शन को लौट पड़ते तो दूरस्थ क्षेत्रो के भक्तजन व दर्शनार्थी बन्धु भी अपने व्यवसाय व काम-काज को छोड़, दर्शन-लाभ लेने हेतु उमड़ पड़े। सैकड़ो हजारो भक्तगण तो परम पूज्य गुरुदेव के अतिम सान्निध्य, मगल दर्शन व सघ-सेवा की पावन समर्पित भावना से अपनी गृह-सुविधाओ व कारोबार का मोह छोड़ सपरिवार निमाज मे ही बस गए। हर व्यक्ति की भावना यही रहती कि पुन पुन परम पावन गुरुदेव के मगल दर्शन करते रहे, अधिकाधिक समय जप, तप व स्वाध्याय मे लीन रहे, यथाशक्ति अधिकाधिक नियम-व्रत अगीकार कर अपने जीवन को आगे बढ़ाएँ। दर्शनार्थियो के सतत आवागमन से वह गगवाल भवन का विशाल परिसर भी छोटा पड़ गया, बाहर राजमार्ग से ही दर्शनार्थियो की कतारे लग जाती। इन अनुपम योगी की एक झलक देखने को हजारो दर्शनार्थी बन्धु, अनुशासित ढग से घण्टो पक्ति मे खडे रहकर भी थकते नही, सभी का यही एकमात्र लक्ष्य कि कब नम्बर आवे, कब पतित-पावन गुरुराज के पावन मगलमय दर्शन का लाभ मिले। गुरु के इस दरबार मे सभी समान थे, न कोई विशिष्ट न कोई सामान्य।

युवा कार्यकर्तागण स्वयसेवक के रूप मे उत्साह, अभिरुचि व कुशलता से सघ के कार्यकर्ताओ के निर्देशानुसार, अपने कर्तव्य के पालन व सघ-सेवा मे सन्नद्ध थे। कोई परिसर के बाहर दर्शनार्थी बन्धुओ को कतारबद्ध खड़े रहने का विनम्र अनुरोध करते, कोई परिसर के भीतर अनुशासित व्यवस्था बनाये रखने, शाति बनाये रखने मे सलग्न रहते तो कुछ कार्यकर्ता गुरुदेव जहाॅ विराज रहे थे, वहाॅ दर्शनार्थियो को दर्शन हो और नये दर्शनार्थियो को प्रतीक्षा न करनी पड़े, यह व्यवस्था सम्भाल रहे थे। सभी साथीगण परस्पर स्नेह, सौहार्द एव प्रेमभाव से बारी-बारी से अदल-बदल कर व्यवस्था सम्पादन मे अपना सहयोग दे रहे थे। अनन्य गुरुभक्त श्री तेजराजजी भण्डारी, श्री गणेशमलजी भण्डारी दोनो भ्रातागण अपने पूरे परिवार व निमाज सकल सघ के सभी साथियो के साथ एक ओर गुरुसेवा व वहाॅ विराजित सभी सन्त-सतीगण की सेवा मे सन्नद्ध थे, दूसरी ओर आगत हजारों स्वधर्मी भाइयो व दर्शनार्थियो की सेवा का लाभ ले रहे थे। निमाजवासी कार्यकर्तागण प्रात. सूर्योदय के पूर्व ही सेवा मे जुट जाते व देर रात तक सघ सेवा का लाभ लेते रहते। प्रात सूर्योदय के पश्चात् प्रतिलेखन होते-होते गुरुदर्शन को लालयित भक्तो की लम्बी कतार लग जाती जो मध्याह्न १२ बजे तक अनवरत चलती रहती। पुन:१-१ ३० बजे

दर्शनार्थियो की पक्ति प्रारम्भ होती जो अपराह्न आधे घण्टे के लिए विराम के अतिरिक्त सूर्यास्त के पूर्व तक चलती ही रहती। प्रतिक्रमण के लिये सूर्यास्त के १०-१५ मिनट पूर्व दर्शनार्थियो के आवागमन को बन्द करने को कहा जाता, तब ही यह क्रम रुकता। भक्तजन इस ताक में रहते, कब मगल दर्शन की अनुमति हो, कब हम अपने प्यासे नयनों को तृप्त करे ? कई भक्तों की इच्छा रहती कि परमाराध्य गुरुवर्य के चरण-स्पर्श का सौभाग्य प्राप्त हो व कुछ देर गुरु-सेवा का देव दुर्लभ अवसर प्राप्त हो, पर जब दर्शनार्थियो की अपार भीड़ दृष्टिगोचर होती व समाधिस्थ गुरुदेव का वह पावन चेहरा नयनो के सामने आता तो वे भावुक भक्त अपने कर्तव्य की ओर सजग हो जाते। उन हजारों भक्तो की इच्छा पूरी करना सम्भव नही था व चरण-स्पर्श से समाधिस्थ गुरुदेव की समाधि मे व्यवधान हो सकता था, उसी भावना से सबके लिये एक ही नियम था-बिना रुके, बिना चरण-स्पर्श किये पक्तिबद्ध दर्शन करते जाये व चलते रहे। सभी दर्शनार्थी भाई-बहिनों ने भी स्थिति को समझते हुए पूर्ण विवेक व श्रद्धा के साथ व्यवस्था व शान्ति बनाये रखने मे अपना पूर्ण सहयोग दिया।

- सन्त-सान्निधि

जैन जगत् की इस दिव्य विभूति के सथारे के समाचार विभिन्न जैनाचार्यो, सन्तो एव महासतीगण के समक्ष पहुँचते रहे, सभी का मन इन महाप्राण आचार्यप्रवर के सथारे के समाचारो से श्रद्धाभिभूत था, दूरस्थ विराजित पूज्य सन्त-सतीगण अपनी-अपनी भावनाएँ पत्रो के माध्यम से प्रेषित कर रहे थे, तो निकटस्थ सन्त मुनिराज व महासतीगण निमाज पधार कर इन योगिवर्य के दर्शन-लाभ करने को उत्कण्ठित थे। श्रद्धेय तपस्वीराज ज्ञान गच्छनायक श्री चम्पालालजी म सा की प्रबल भावना स्वय पधारने की होते हुए भी अस्वस्थतावश पधारना नही हो सका, अत श्रद्धेय पण्डित रत्न श्री घेवरचन्दजी म.सा 'वीरपुत्र' ने पूज्य श्री की सेवा मे पहुँचने हेतु विहार कर दिया, पर शारीरिक कारणवशात् वे पधार नही पाये। समताविभूति श्रद्धेय आचार्य नानालालजी म सा ने अपने शिष्यगण श्री ज्ञानमुनिजी म.सा.ठाणा २ को पूज्य भगवन्त की सेवा मे भेजा, इधर उग्र विहार कर जयमल जैन सघ के आचार्य कल्प श्री शुभचन्द्रजी म सा ठाणा ३ पूज्य सेवा का लाभ लेने पधारे एवं श्री शीतलमुनिजी आदि ठाणा ३ भी गुरु-दर्शन हेतु पधारे। महासती श्री उमराव कंवरजी म सा 'अर्चना' आदि ठाणा, महासती श्री चेतनाजी म सा ठाणा ३, महासती श्री आशाकवरजी आदि ठाणा, महासती श्री मञ्जुकवरजी ठाणा ६ आदि महासतीगण भी पूज्य आचार्य भगवन्त के दर्शनार्थ पधारी। पूज्य भगवन्त के इस अद्भुत सथारे के अवसर पर मुनि-मण्डल, महासती-मण्डल ,चतुर्विध सघ के विराजने से निमाज ग्राम एक नई चहल-पहल, नई शोभा लिये तीर्थ बन गया। सभी ग्रामवासी इस अदृष्टपूर्व दृश्य को देखकर विस्मयविमुग्ध रह जाते। गाँव की चहल-पहल व शोभा को देखकर ऐसा प्रतीत होता मानो साक्षात भगवान का ही वहाँ समवसरण हो।

- आत्मरमण मे लीन योगी

श्रद्धा के केन्द्र परम पूज्य गुरुदेव तो इन सबसे सर्वथा परे आत्मरमण मे लीन थे, कौन आया, कौन गया, इसकी उन्हे न कोई चाह थी, न ही इस ओर कोई ध्यान था। वे आत्मसमाधिस्थ योगिराज तो अतुल आत्मबल,अदम्य उत्साह, अटल धैर्य, अथाह गाम्भीर्य व विरल शान्ति भाव के साथ सब 'पर' भावो से परे, मात्र अपनी आत्मा मे ही रमण करते मग्न थे। वस्तुत **उनकी साधना उस उत्कृष्ट अवस्था को पा चुकी थी जहाँ न तो यश व अतिशय के वशीभूत हो जीवन की कामना अवशिष्ट रहती है और न ही अशक्तता, दुर्बलता व रुग्णता**

के कारण मृत्यु की कामना। न तो उन्हें मृत्यु का कोई भय था, न ही नन्दनवन की आकांक्षा। तप साधना से दिन-प्रतिदिन शरीर कृश होता जा रहा था, पर तप, सयम व साधना का तेज मुखमण्डल पर केन्द्रित होकर एक दिव्य दैदीप्यमान आत्मज्योति को आलोकित कर रहा था। हाथो मे माला लिये अनवरत जप-स्मरण का क्रम चल रहा था। कभी कभार सहज ही नयन खुलते तो उनमे मैत्री, करुणा क्षमा व अमित वात्सल्य की पीयूष धारा दृष्टिगत होती। आँखे खुली देखकर कई दर्शनार्थी भक्तों व सन्तो को भी कई बार लगता कि पूज्यवर्य अपनी स्नेहिल दृष्टि से दृष्टिनिपात कर रहे है, पर **वे महापुरुष तो सबके स्नेह बन्धनों से कभी के परे हो चुके थे। शिष्यों, भक्तों व आने-जाने वालो से उन्हे कोई सरोकार ही शेष न था। किं बहुना उन्हें तो अपने शरीर का भी मोह नही रह गया था। उनकी प्रशान्त सौम्य मुख-मुद्रा पर निस्पृह निर्लिप्त भाव सहज ही टपक रहा था। आपश्री देह से परे विदेह भाव को धारण कर अमूर्त, अविनश्वर देही की साधना में निरत थे।** "सुलभा आकृती रम्या, दुर्लभ हि गुणार्जनम्" अर्थात् आकृति से सुन्दर अनेक मिलेगे पर रम्य आकृति के साथ गुणो का समन्वय दुर्लभ है। पूज्य गुरु भगवन्त का बाह्य व्यक्तित्व जितना सुन्दर, सम्मोहक व आकर्षक था,उससे भी शतश गुना उनका अतरग व्यक्तित्व था। आचार्य श्री क्षमा, दया, आर्जव, मार्दव एव समता के आगर तथा त्याग, तप एव साधना की साकार प्रतिमूर्ति थे।

सहिष्णुता,क्षमा व भेदविज्ञान का जो पाठ अब तक आगम ग्रथो व इतिहास की कथाओ मे पढ़ा जाता था, वह आप श्री के सथारे मे प्रत्यक्षत देखकर प्रत्येक भक्त सहज ही श्रद्धाभिभूत था। कई शताब्दियो मे ऐसे महापुरुष का सुयोग सान्निध्य सघ को मिलता है। वे सब अत्यन्त सौभाग्यशाली है जिन्हे ऐसे अलौकिक विरल विभूति महापुरुष का साक्षात् सान्निध्य सुदीर्घ अवधि तक मिला। आपका समग्र सयमी जीवन व समाधिसाधना द्वारा मरण के वरण का यह अनूठा अभियान, दोनो ही युग-युग तक आत्मार्थी साधको का मार्ग -प्रदर्शन करते रहेगे। गुरुदेव की सन्निधि मे बैठकर सन्तो द्वारा तो कभी महासती-मण्डल आगम-पाठ का सस्वर स्वाध्याय जारी था। कभी आत्म स्वरूप प्रकाशक भजनो की सुमधुर स्वव-लहरी वातावरण को अध्यात्म-रस से सराबोर कर देती। वह समूचा परिसर ही उस समय भवभयहारिणी पावन आगम वाणी एव आत्म-स्वरूप प्रतिबोधक काव्यगीतिकाओ से पवित्र बन आगन्तुक सभी दर्शनार्थियो के मनो को निर्मल बना रहा था। पक्तिबद्ध दर्शनार्थी नयनो से अध्यात्म योगी पूज्य आचार्यदेव के मगल दर्शन करते, तो कानो से पवित्र आगमवाणी का श्रमण कर अपने आपको प्रतिबोधित करते और मन मे तप, त्याग, नियम, व्रत का नवीन सकल्प कर अपने जीवन को आवित कर रहे थे।

हजारो दर्शनार्थी जहॉ पूज्य गुरुदेव के पावन दर्शन कर धन्य-धन्य कह उठते तो कभी कभार भाव विह्वल हो मन ही मन कहने लगते कि **भगवन् ! आप जिन शासन की अनमोल मुकुटमणि हो, जैन जगत् के दिव्य रत्न हो, आप अपने अद्भुत व्यक्तित्व एव अलौकिक कृतित्व द्वारा एक नूतन इतिहास के रचयिता हो, आप श्रुत के आधार एव जिन शासन के सचालक हो। भगवन् ! आपने कही जाने की जल्दी तो नहीं कर दी?** आपका और अधिक सान्निध्य चतुर्विध सघ को मिलता तो यह हमारा सौभाग्य होता। भावुक भक्तो की मुख-मुद्रा के भावो से प्रतीत होता-

देखो कितने नेत्र सजल हो, अपलक तुमको देख रहे,
देखो कितने हृदय व्यथित हो आशंका को झेल रहे।

भक्तो की यह अपार उपस्थिति पूज्य चरितनायक के साधना-सम्पूरित व्यक्तित्व व अनन्त पुण्यवानी का

प्रत्यक्ष प्रमाण था। वे योगिवर्य तो जहाँ कही विराजे, वही क्षेत्र तीर्थधाम बन गया, जहाँ उनके कदम पड़े, वह भूमि पावन बन गई।

अन्तर्लीन उन योगिवर्य के दर्शनार्थ जाति, वय, धर्म व पथ की सभी दीवारे ढह गई थी। जीवन पर्यन्त जो श्रमण-श्रेष्ठ अपनी अमोघ वाणी से लाखो श्रद्धालुओं को प्रेरित करते रहे, आज उनका सथारा हजारो दर्शनार्थी बन्धुओ की सुषुप्त अन्तर्चेतना को जागृत कर रहा था। आगत व्यक्तियो की जुबान पर रह-रह कर यह बात व्यक्त हो उठती कि इतने बड़े आचार्य प्रवर का सथारा हमने अपने जीवन मे न देखा, न सुना। हाँ, आज से १९६ वर्ष पूर्व हुए महाप्रतापी आचार्य श्री जयमलजी म.सा. के सथारे की गाथाएँ अवश्य सुनी हैं।

आज पूज्य गुरुदेव के तप सथारे के १३वें दिन रविवार होने से सहज अवकाश का प्रसग था। अथाह जनसमूह उत्ताल तरगो की भाति समाधिलीन गजेन्द्र गुरुराज के पावन दर्शन करने को उपस्थित था। सूर्योदय की किरणों के साथ ही विविध दिशाओ से आ रहे दर्शनाभिलाषी जनसमूह लम्बी कतारो मे दर्शन हेतु खड़े थे। दिन चढ़ते-चढ़ते जनसमूह ने अत्यन्त विशाल रूप ले लिया था। बाहर राजमार्ग से ही प्रारम्भ कतारे अनवरत आगे बढ़ते रहने पर भी समाप्त नही हो पा रही थी।

* [illegible]

आज पूज्य गुरुदेव के श्वास मे कुछ तेजी नजर आ रही थी। सभी सतगण व सतीवृन्द गुरु-चरणो मे बैठे सस्वर आगमवाणी व भजन का उच्चारण कर रहे थे। नाड़ी-गति व शरीर-चेष्टाओं मे कुछ परिवर्तन प्रतीत हो रहा था। स्थिति को समझते हुए श्रद्धेय श्री मानमुनिजी म.सा. (वर्तमान उपाध्याय प्रवर) एव श्रद्धेय श्री हीरामुनीजी म.सा (वर्तमान आचार्यप्रवर) ने परस्पर आवश्यक विचार-विमर्श के पश्चात् उन महापुरुष की पावन-पवित्र विमल भावना के अनुसार,सायकाल ४ बजे तिविहार के स्थान पर यावज्जीवन चौविहार सथारे के प्रत्याख्यान करवा दिये। अब आशाएँ क्षीण-क्षीणतर हो रही थी। डॉ एस. आर.मेहता भी अपने आराध्य गुरुदेव के दर्शन हेतु उपस्थित हुए। उन्होने शारीरिक लक्षणो को देखकर अवगत करवाया कि अब मुझे गुरुदेव का अतिम समय प्रतीत होता है।

* विनश्वर देह का त्याग

सूर्यास्त के पश्चात् सब सन्त गुरुदेव के पट्ट के चारो ओर खड़े प्रतिक्रमण कर रहे थे। श्रद्धेय श्री हीरा मुनिजी म.सा (वर्तमान आचार्य श्री) ने आज पूज्य गुरुदेव को प्रतिक्रमण कराया। प्रतिक्रमण के समय सघ के अग्रगण्य श्रावक प्रतिनिधि निरन्तर गुरु-चरणों मे महामत्र नवकार जप रहे थे। प्रतिक्रमण परिपूर्ण हुआ। सभी सतो ने आज अत्यत भाव विह्वल बन असीम श्रद्धा-भक्ति व समर्पण के साथ अपने महामहिम गुरुवर्य, सयम-साधना के साकार स्वरूप उन पूज्यप्रवर के चरण सरोजो मे अनुक्रम से अपनी वन्दना समर्पित की। श्वास अब रुक-रुक कर आ रहा था, गुरुदेव के हाथ-पैर ठण्डे हो रहे थे, पर उनका सीना व मस्तिष्क गर्म था। ऑखो की पुतलियॉ स्थिर थी, अन्तत. लम्बी सास के साथ एक हिचकी आई और उस मृत्युंजयी महापुरुष ने नश्वर देह का त्याग कर दिया।

इस प्रकार चतुर्थ तीर्थंकर देवाधिदेव अभिनन्दन प्रभु के मोक्ष-कल्याणक दिवस प्रथम वैशाख शुक्ला अष्टमी (वि.स.२०४८) रविवार,दिनाक २१ अप्रेल, १९९१ को रात्रि ८ बज कर २१ मिनट पर १३ दिवसीय तप संथारे के साथ रवि पुष्य नक्षत्र व उच्च सूर्य आदि उत्तमोत्तम ग्रह स्थिति मे अध्यात्म आलोक का वह दिव्य प्रभा-पुज बुझ गया। अनन्त आस्था का केन्द्र, लाखों भक्तों का भगवान्, सघ का सरताज, सबको भाव विह्वल छोड़ चला गया। जिनकी

वाणी का ओज सहस्त्रों कार्यकर्त्ताओ की प्रेरणा का स्त्रोत था, अब उस महापुरुष की पावन स्मृतियाँ ही शेष थी। सम्भवत वे ही युगो-युगो तक प्रेरणा का कार्य करेगी।

'पुरिसवरगधहत्थीण' उन महामनीषी आचार्य भगवन्त के देवलोक होने के समाचार वायुवेग से चारो ओर फैल गये। सघ ने दूरभाष, टेलीग्राम आदि सभी सभव उपायो से सर्वत्र यह दु खद समाचार प्रेषित किया। आकाशवाणी, दूरदर्शन एव प्रान्तीय व राष्ट्रीय समाचार पत्रो द्वारा भी समाचार देश-देशान्तर में प्ररारित हो गये। जिसने भी सुना,स्तब्ध रह गया। उन परम पूज्य योगिवर्य के प्रयाण के समाचारो पर मानो विश्वास ही नही हो रहा था। परन्तु जब पुन पुन जानकारी मिली कि परम पावन गुरुदेव हमे छोड़कर चले गए, तो बरबस भक्तो के हृदय कह उठे – भगवन् ! आप धन्य है, आपने अपने जीवन को सफल किया। आपकी साधना सदियो तक स्मरण रहेगी।" कहा भी है –

[illegible]
[illegible]

आचार्य भगवन्त के शरीर को वैकुण्ठी (माडी में) मे बरन्डे मे रखा तब भक्त समुदाय ने जो गीत गाते हुए अपनी श्रद्धा व्यक्त की उसकी प्रारम्भिक पक्तियॉ इस प्रकार है –

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]

- महाप्रयाण की अनिम यात्रा

व्यथित हृदय भक्तजन अपने परम पावन गुरुवर्य की महाप्रयाण-यात्रा मे भाग लेने निमाज की ओर दौड़ पड़े। जो जहॉ था, वही से चल पड़ा। विविध ग्राम-नगरो से जैन-जैनेतर भक्तगण कार, बस, स्कूटर, ट्रक, ट्रैक्टर सभी उपलब्ध साधनो से निमाज की ओर चल दिए।

परम पूज्य युग मनीषी अध्यात्मयोगी के पार्थिव शरीर को वोसिराने के पश्चात् सन्तवृन्द अलग बैठे थे। सघ व निमाज के कार्यकर्ताओ ने विचार-विमर्श कर अन्तिम सस्कार के लिये मध्याह्न एक बजे का समय नियत किया। श्रावकगण व्यवस्था व प्रबन्ध हेतु इधर-उधर दौड़ रहे थे। अश्रुपूरित श्रद्धाजलि अर्पण करने हेतु निकटस्थ क्षेत्रो से हजारो जैन-जैनेतर भक्तजन रात्रि मे ही आने लगे। भीड़ प्रति पल बढ़ती जा रही थी। सकल श्री सघ निमाज क्षेत्र के सभी जैन-जैनेतर बन्धु व सघ के कार्यकर्तागण,युवक सघ के स्वयसेवक,सभी व्यवस्था में जुट गये कि बाहर से पधारने वाले आबालवृद्ध युवक किसी भी भाई-बहिन को कोई असुविधा न हो। निमाज गाव का हर व्यक्ति,इस महापुरुष की महाप्रयाण-यात्रा को अविस्मरणीय बनाने मे जुट गया।

सुबह होते-होते हजारो लोग गगवाल भवन के परिसर के भीतर -बाहर एकत्र हो चुके थे। गुरुदेव का पार्थिव

शरीर बरामदे से व्याख्यान-स्थल पर स्थित चबूतरे पर रखा जा चुका था। 'जय गुरु हस्ती', 'गुरु हस्ती अमर रहे', 'जब तक सूरज चाँद रहेगा, हस्ती गुरु का नाम रहेगा' आदि गुरु की प्रशस्ति मे जय जयकार के नारे लगाते भक्तजन रात भर आते रहे, अश्रुसिक्त नयनों से पक्तिबद्ध भक्त अपने आराध्य गुरु भगवन्त की स्मृति को नमन करते हुए दर्शन करते रहे। सूर्योदय होने पर महासतीगण भी गगवाल भवन मे सतो के दर्शनार्थ पधारी। असख्य लोगो की वह भीड़ जब सत-सतीगण के दर्शन करती एवं गुरुदेव के स्थान को खाली देखती तो वातावरण गम्भीर और बोझिल बन जाता। वह दृश्य अत्यन्त करुणार्द्र था। भक्तो के नयनों से इसकी अभिव्यक्ति हो रही थी।

चारो दिशाओं से आने वालों का यह अटूट ताता बढ़ता गया। निमाज क्षेत्र के इतिहास मे यह प्रथम अवसर था, जब इतनी भारी भीड़ एकत्र हुई हो। बसे, मेटाडोर, जीप, ट्रक, ट्रेक्टर व कारो के लिये गॉव के बाहर खेतो में अलग पार्किंग व्यवस्था करनी पड़ी। तन-मन-धन सर्वस्व समर्पण किये सभी निमाज ग्रामवासी व्यवस्था व आगत बन्धुओ की सेवा मे दौड़ रहे थे।

उत्साही ग्रामवासियो का विचार था कि महाप्रयाण-यात्रा गाव के मुख्य-मुख्य मार्गो व बाजार से होकर निकाली जाय, पर जनसमूह की अपार सख्या को देखकर यह विचार स्थगित करना पड़ा। कही तिल भर भी जगह नही थी। जहॉ भी नजर जा पाती, आदमी ही आदमी नजर आते, मानो अपार जनसागर उमड़ पड़ा। नियन्त्रण हेतु वहॉ उपस्थित पुलिस जन भी उस जनसमूह के प्रबल वेग को नियंत्रित करने मे अपने आपको अक्षम पा रहे थे। व्यवस्थापको द्वारा ध्वनियत्र पर दिये जा रहे निर्देश उस अपार जनसमूह के कोलाहल मे डूबे जा रहे थे। सासद, विधायक, मत्री, मुख्यमत्री (भैरोसिह शेखावत), राजनेता, न्यायविद्, समाजसेवी, कार्यकर्तागण भी भक्तजनो की इस अपार भीड़ मे सम्मिलित हो अपने आपको गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे।

राज्य सरकार ने उन षट्काय प्रतिपालक, अंहिसा व अभय के दूत श्रमण रत्न को श्रद्धाजलि स्वरूप पूरे राज्य में बूचड़खाने व मांस-विक्रय बंद रखने का आदेश प्रसारित किया, जिसका पूरा पालन किया गया। अनेक ग्राम-नगरों में बाजार भी पूर्णतः बन्द रहे।

निश्चित समयानुसार ठीक एक बजे, जब महाप्रयाण यात्रा प्रारम्भ हुई, लक्षाधिक भक्तो का सैलाब अपनी भावभीनी श्रद्धाजलि देने को उद्यत था। सब अपने अन्तर मे रिक्तता का अनुभव कर रहे थे। परन्तु जिनशासन के इस महामनीषी ने उत्तुग नभ मे जो आरोहण किया, उसका प्रमोद सबको भरा-भरा महसूस कराने के लिये प्रयत्नशील था। गुरु हस्ती की जय, भगवान महावीर की जय, जब तक सूरज चाद रहेगा, गुरु हस्ती का नाम रहेगा' आदि अनेक जयनादो से नभ गूज उठा।

जैन-जैनेतर, आबालवृद्ध युवक, पुरुष व महिला, सभी महनीय महासाधक की इस महाप्रयाण की वेला में उपस्थित थे। यहॉ जाति, धर्म, लिंग, वय, सम्प्रदाय व स्तर का न कोई बधन था, न कोई दीवार थी। जो भी था वह उन श्रमणश्रेष्ठ का पुजारी था, सभी उन महापुरुष की इस महाप्रयाण-यात्रा को व्यथित हृदय, बोझिल मन, सजल नयनो से देख रहे थे-

'इमा की शान जिसका अजीज थी, अपनी जान से।
वो खिन्न जा रहा है, देखो कितनी शान से॥'

जिस हस्ती के विराजने से वह गगवाल भवन तीर्थ बना हुआ था, वहॉ के कोने-कोने से जिस महापुरुष की संयम-साधना की महक आ रही थी, आज वही महापुरुष भक्तों के कधो पर आसीन हो, इस भवन को वीरान कर

जा रहा था। श्रद्धालु भक्तो ने हाथोहाथ माडी (अर्थी) को कधा दिया और धीरे-धीरे वह (अर्थी) गंगवाल भवन के बाहर पहुँची। हर कोई कधा देने को उतावला उसे छू भर लेने को आतुर, पर मांडी (अर्थी) तक पहुँच पाना क्या सरल था ? चलने को वहाँ जगह ही कहाँ थी, फिर भी हर एक चाह थी कि मै भी कधा दे सकूँ। जो भी कधा देने मे सफल रहा, उसे लगा मानो जीवन सफल हो गया हो, मानो जन्म-जन्म की साध पूरी हो गई हो, मानो उसने त्रैलोक्य का साम्राज्य प्राप्त कर लिया हो। यह सब भक्तो की श्रद्धा का रूप था। पार्थिव देह मे अब अध्यात्म योगी का निवास नही था, किन्तु अभी भी वे शुभ पुद्गल लोगो की श्रद्धा को बाँधे हुए थे। इस अपार जन सैलाब मे भी कोई धक्का-मुक्की नही, किसी को कोई चोट नही, गुरु-कृपा से सभी सकुशल । लोगों की जुबा पर एक ही बात-ऐसी भीड़ न कभी देखने मे आई न सुनने मे आई।

यह यात्रा भण्डारी परिवार द्वारा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक को अर्पित भण्डारी उपवन की ओर अग्रसर थी। भडारी उपवन तक रास्ते मे सभी मकानों की छतो पर अनगिनत बहिने व वृद्ध भक्तगण अन्तिम दर्शन हेतु खड़े थे। सभी हाथ जोड़ नत मस्तक थे, उस कर्मयोगी आत्मा को अपनी श्रद्धाजलि समर्पित करने को। महाप्रयाण-यात्रा मे कई स्थानो से आई हुई भजन-मडलिया यशोगान करती हुई आगे बढ़ रही थी। उनके आगे बैड बाजे मरण पर विजय का जयगान कर रहे थे। शोक-सतप्त निमाज ग्राम का कण-कण, चप्पा-चप्पा धन्य-धन्य हो गया, पूज्य गुरुवर्य के नाम के साथ सर्वदा के लिये जुड़ गया। उपस्थित सभी दर्शनार्थी अतीत की स्मृतियो मे खोये, गुरु-सेवा मे बिताये अपने जीवन-क्षणो को अपने जीवन की अमोल थाती माने, उन क्षणो को पुन-पुन. स्मरण करते आगे बढ़ते जा रहे थे। सभी का अपना, सभी का सर्वस्व, सभी का जीवनधन आज चिर यात्रा की ओर चल पड़ा। हर दिल से एक ही ध्वनि प्रतिध्वनित हो रही थी—क्या इस युग मे ऐसा युग पुरुष जन्म ले पायेगा ? ऐसा महापुरुष तो सदियो मे एक होता है-

मौत उसकी है जिसका जमाना करे अफसोस।
यूं तो दुनिया में आते हैं मरने के लिये।

अतत महाप्रयाण-यात्रा भडारी उपवन पहुँची। उपवन के बीचोबीच अन्तिम सस्कार की पूर्ण तैयारी की जा चुकी थी। उस अपार जनसमूह को नियन्त्रित करने पुलिस-दल व कार्यकर्ता सचेष्ट थे, पर भला सागर की उत्ताल तरगो को भी कोई बाध पाया है ? रोक पाया है ? तो इन भावाभिभूत आतुर भक्तो के सैलाब को कौन रोक पायेगा ? जिसको भी जहा स्थान मिला, सभी बन्धन तोड़कर बैठ गए। सैकड़ो लोग वृक्षो पर बैठे यह दृश्य देख रहे थे तो कई लोग अन्तिम दर्शन कर अपने नयनो को परितृप्त कर पाने हेतु ऊँटो पर बैठकर यह नजारा देख रहे थे।

अपराह्न २ बजकर ४० मिनट पर उस महासाधक की तपोदीप्त देह को चदन चिता पर रख दिया गया। चारो ओर से 'हस्ती गुरु अमर रहे,' "जब तक सूरज चाँद रहेगा, हस्ती गुरु का नाम रहेगा।" हस्ती गुरुवर्य के निकट सासारिक परिजन सर्वश्री सहजमलजी सा बोहरा, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ के अध्यक्ष श्री मोफतराजजी सा. मुणोत, श्री गणेशमल जी भण्डारी व श्री सागरमलजी भंडारी ने उन महनीय योगिवर्य की उस पार्थिव देह को धधकती अग्नि को समर्पित किया तो सभी भक्तगण स्तब्ध एव पस्त थे। **एक युग का अंत हो गया, दिनकर अस्त हो गया। अब उनके परम पूज्य गुरुवर्य अनन्त में विलीन हो चुके थे। वह विहँसता मुख-मण्डल, वे विहँसती आँखें, आशीर्वाद देते वे वरद हस्त, सदैव आगे बढ़ते वे कदम, सभी कुछ तो इस सर्वहारा अग्नि को समर्पित हो चुके थे, अब कुछ शेष थी तो मात्र स्मृतियाँ !** उन स्मृतियो को अपने दिल मे सजोये, उनके गुण स्मरण करते वे असख्य भक्तजन अपने खाली हृदय लिये अपने-अपने स्थानो के लिये

लौट पड़े। सभी भक्तजनो के हृदयो से यही प्रतिध्वनि व्यक्त हो रही थी-

'धीर वीर निर्भीक सत्य के अनुपम अटल पुजारी ।
तुम मर कर भी अमर हो गये, जय हो सदा तुम्हारा ॥'

अनन्त मे लीन हो चुके अपने महनीय गुरुवर्य के गुण-स्मरण करते वे असख्य दर्शनार्थी भक्तजन अपने-अपने गतव्य स्थानो के लिये रवाना होने से पूर्व गगवाल भवन मे विराजित सन्त-मण्डल के दर्शनार्थ पहुँचे।

उन महामनीषी को अपने अन्तिम समय का पहले से बोध था। इस दिन से लगभग साढे छह वर्ष पूर्व पूज्य चरितनायक द्वारा किया गया भविष्य-दर्शन चर्चा मे सजीव हो उठा। रेनबो हाउस, जोधपुर मे सन् १९८४ के चातुर्मास काल मे रोगाक्रान्त होने पर जब स्वास्थ्य की स्थिति काफी नाजुक थी, तब श्रद्धेय श्री हीरामुनिजी म.सा. द्वारा सहज रूप से निवेदन किया गया था "भगवन् ! अन्तिम समय की जानकारी अवश्य कराएँ।" अध्यात्म मनीषी ने उत्तर दिया था —"भाई अभी समय नही आया है।" आगे अपने जीवन के अन्तिम पड़ाव के स्थान का निर्देश करते हुए आप श्री के मुख से निकल पड़ा "वहाँ बगीचा होगा, कुँआ होगा, पास मे पाठशाला होगी, मन्दिर होगा, वह मकान राजमार्ग पर स्थित होगा, विशाल परिसर होगा।" श्री हीरामुनिजी म.सा. (वर्तमान आचार्यप्रवर) ने ये बाते अपनी दैनन्दिनी मे नोट कर ली। ये सारी बाते निमाज के गगवाल भवन के प्रसग मे वैसी की वैसी सत्य सिद्ध हुई।

उस मनीषी के जीवन-दर्शन एव साधना के उच्च मूल्यो के प्रति सभी नतमस्तक थे । ससार एव सघ से किस प्रकार मोह रहित हुआ जा सकता है, इसका प्रयोगात्मक पाठ इस अध्यात्मयोगी से सीखा जा सकता है। जब सघ के नायक रहे तब कर्त्तव्य का निर्वाह बखूबी किया तथा जब ससार से महाप्रयाण किया तब पूरी तैयारी के साथ, आत्मरमणतापूर्वक ममत्व एव अहत्व का त्याग करते हुए । धन्य है ऐसे महापुरुष और उनकी चरम साधना।

गगवाल भवन मे सायकाल ५ बजे श्रद्धाञ्जलि सभा का आयोजन किया गया, जिसमे विभिन्न क्षेत्रो के वहाँ उपस्थित प्रमुख प्रतिनिधि श्रावको ने उन दिवगत गुरु भगवन्त को अपने अवरुद्ध कण्ठो से भावाभिभूत श्रद्धा सुमन समर्पित किये। सभा के अन्त मे न्यायाधिपति श्री जसराजजी चौपड़ा ने परम पूज्य गुरुदेव द्वारा भावी सघ-व्यवस्था सम्बन्धी पूज्य गुरुदेव द्वारा स्वहस्त लिखित पत्र जो भगवन्त द्वारा सघ के वयोवृद्ध श्रावक, अनन्य सघसेवी श्रीमान् उमरावमलजी सा. ढड्ढा एव श्री नथमलजी हीरावत को सुपुर्द किया गया था, चतुर्विध सघ की उपस्थिति मे पढ़ कर सुनाया। जिसमें पूज्य गुरुवर्य ने भावी सघ-व्यवस्था सम्बन्धी निर्देश देते हुए लिखा था कि श्री हीराचन्द्रजी म.सा भावी आचार्य व श्रद्धेय श्री मानचन्द्रजी म.सा सघ के उपाध्याय होगे। पत्र के नीचे हस्ताक्षर करते हुए आपने अपना परिचय 'सघ-सेवक शोभाशिष्य हस्ती' के नाम से दिया था, जिसे सुनकर आपकी विनम्रता एव लघुता (लघुता से प्रभुता मिले) के समक्ष उपस्थित जन समुदाय नतमस्तक था। समवेत स्वरो मे आपकी-जय जयकार के साथ जनसमूह ने आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा की जय, उपाध्याय श्री मानचन्द्रजी म.सा. की जय से आपके आदेश को अपनी श्रद्धाभिभूत वाणी से दिग्-दिगन्त मे व्याप्त कर दिया। इसके साथ ही माननीय सदस्यों ने सभा-विसर्जन के पूर्व अपनी एकरूपता का परिचय दे दिया।

शरीर विनश्वर है, आत्मा अमर है। फूल बिखर जाता है पर उसकी सौरभ वातावरण को सुरभित कर जाती है। व्यक्ति चला जाता है, व्यक्तित्व अमर रहता है, कृतित्व युग-युग तक प्रेरणापुज बना रहता है। वह पावन देह भले ही अनन्त मे विलीन हो गई, पर उनकी गुण-सौरभ श्रद्धालुओ के जीवन को सदैव सुरभित करती रहेगी, उनके

सन्देश सदैव आने वाली पीढ़ियो को साधना की राह दिखाते रहेगे। पावन स्मृतियाँ सदैव सम्बल देती रहेगी। वह युग-पुरुष मिट नही सकता, वह महापुरुष तो चतुर्विध सघ के पावन मनो मे, साधक जीवन मे सदा प्रकट होता रहेगा। वह महायोगी तो अपने जीवनादर्शो व अपनी प्रेरणाओ मे सदा अजर है, अमर है, अमर रहेगा एव समग्र मानव जाति को अपना पवित्र पावन मगलमय शुभ सन्देश देता रहेगा।

महान् अध्यात्म योगी, युगमनीषी, महासाधक के दिव्य लोक को महाप्रयाण के वृत्त जहाँ भी पहुँचे, उन्हे श्रमण-श्रमणियों एव सहस्रो श्रद्धालु भक्तो ने नत मस्तक हो भावपूर्ण श्रद्धाञ्जलि समर्पित की। देश-विदेश मे गुण-स्मरण करने हेतु अनेक स्थानो पर सामूहिक सभाए आयोजित हुईं। सैकडो श्रद्धालुओ के श्रद्धाञ्जलि पत्र जोधपुर स्थित अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक सघ एव जयपुर स्थित सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के कार्यालयो मे निरन्तर प्राप्त हो रहे थे। पूज्य श्रमण-श्रमणियो से भी निरन्तर श्रद्धाञ्जलि सन्देश मिल रहे थे।

यहाँ पर श्रमण-श्रमणियो से प्राप्त कतिपय पत्रो के अश प्रकाशित किये जा रहे है-

हे क्रूर काल। तूने यह निकृष्ट कार्य क्यो किया ? आज दिन तक तू कितने प्रभावक ज्योतिर्धर सन्त रत्नो को ले गया? अभी तक तुझे सन्तोष नही हुआ ? मेरे परम स्नेही साथी आचार्य हस्तीमलजी म को ले जाते हुए तेरे हाथ नही कापे ? आज उनकी यहाँ पर कितनी आवश्यकता है ? आज चारो ओर भौतिकता की आँधी आ रही है, ऐसी विकट वेला मे एक अध्यात्मयोगी को हमारे से छीनकर ले गया।

हे महासन्त ! तुमने सथारा कर सच्चे वीर की तरह मृत्यु का वरण किया है। धन्य है तुम्हारा जीवन और धन्य है तुम्हारी मृत्यु।"

-उपाध्याय श्री [illegible]

"विगत दो दिन पूर्व प्रात ६ बजे एक दु खद सवाद न चाहते हुये भी इन कर्ण कुहरो मे पड़ा कि जन-जन के आराध्य, वदनीय श्रद्धा के केन्द्र बिन्दु, समाधिभाव मे लीन, तपोमूर्ति, सयतात्मा, दिव्यात्मा, ज्ञान सिन्धु, जन-जन के बन्धु, रत्न सप्रदाय के जाज्वल्यमान रत्न, अध्यात्म गगन के दिव्य दिवाकर आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म सा महाप्रयाण कर गए है। यह दु खद घटना श्रवण कर श्रद्धापूरित इस मानस सागर मे अनेक प्रकार की तरगे तरगित होने लगी। पुण्यात्मा हँसते-हँसते सुरधाम सिधार गए शिष्य-शिष्यावृद, भक्तगण, श्रद्धालुवृद को पीड़ित कर। अब **पावन संयमनिधि देह दृष्ट्या हमारे समक्ष नही है, किन्तु उनका निर्मल यशकाय युगो-युगो तक श्रद्धालुओ को मार्गदर्शन देता रहेगा।**

श्रद्धेय आचार्यप्रवर इस युग के महान् सत रत्न थे। उनकी गरिमा महिमा का वर्णन लेखनी द्वारा अभिव्यक्त नही किया जा सकता है। **उपमातीत व्यक्तित्व को किस उपमा से उपमित किया जाये।** मेरे अन्तर मानस मे रह-रहकर कवि की निम्न पंक्तियाँ उभर रही है-

मैंने अपनी इन आँखों से [illegible] इन्सान को देखा है।
[illegible] धरती पर भगवान को देखा है।

सचमुच आचार्यप्रवर एकान्त ध्यानयोगी एव मौन साधक थे। छल, छद्म एव पद-लिप्सा से दूर रहकर हर क्षण अप्रमत्तभाव से आत्म-जागरण के साथ आपने सच्चा श्रमण-जीवन व्यतीत किया है। आप सामायिक, स्वाध्याय के प्रबल पक्षधर थे।

इस युग की महान हस्ती आचार्यप्रवर का जीवन एक गुलदस्ता ही था जिनके अणु-अणु मे सयम साधना की भीनी-भीनी गन्ध परिव्याप्त थी। लघु उम्र में ही भोग से योग की ओर, राग से विराग की ओर, भुक्ति से मुक्ति की ओर जिनके पावन चरण बढ़े थे, श्रद्धाधार पूज्य स्व. श्री शोभाचद्र जी म.सा. की पवित्र निश्रा मे सयम-सुधा का पान करने के लिये कृत-सकल्प हुए थे। गरिमा महिमामण्डित तेजस्वी, वर्चस्वी, यशस्वी, सतरत्न की विद्वत्ता, योग्यता का आकलन कर आपको २० वर्ष की अल्पायु मे ही आचार्य जैसे महान पद पर प्रतिष्ठित किया गया, जिसका आप श्री ने सम्यक् प्रकार से निर्वहन किया था।

सद्गुणो की महान् सुरभि लुटाकर वह दिव्य ज्योति न जाने कहाँ विलीन हो गयी? १३ दिवस की महान् तप-साधना एव आत्म-साधना में लीन रहकर वह युग पुरुष हम सभी को छोड़कर देवताओ के प्रिय बन गए। **रह रहकर आचार्यप्रवर की दिव्य भव्य मंजुल छवि नयनो के सामने साकार सी होने लगी। प्यासे नयन दर्शन पाने के लिये समुत्सुक बने हुए है। अतृप्त कर्ण सुमधुर वाणी-पीयूष का पान करने के लिये लालायित बने हुए है। कहाँ खोजें उस मंजुल मूर्ति को ?"**

२४ अप्रेल १९९१

-जिनशासन प्रभाविका श्री यशकंवर जी म.सा., इगडा

"हमारी उनकी चरणो मे अगाध आस्था थी और उनकी भी हम पर, हमारे मुनिसघ पर में निर्व्याज , अहैतुकी कृपा रही थी। हम उनकी कृपा के चिरऋणी रहेगे तथा उनकी स्मृतियो को अपने हृदय मे सदा जीवित रखेगे। वे पण्डितमरण स्वीकार करके अपना भव-भ्रमण घटा गए और सबके लिए एक आदर्श छोड़ गए।"

२२ अप्रेल १९९१

-शासन प्रभावक श्री सुदर्शनलालजी म.सा., गोहाना मण्डी

"इस महान दिव्य पुरुष की सर्व विशेषताओ को शब्दश. प्रकट नही किया जा सकता। उन्होने अपने समस्त साधना-काल को गन्ध हस्ती की तरह सर्वथा अप्रमत्त एव जागरूक भावेन जीया है । यद्यपि उनके पावन चरणो मे हमे यत्किचित् ही रहने का लाभ मिला, तो भी **हम मुनिराज इस बात को गौरवपूर्ण ढंग से कह सकते है कि वे हमारे हृदय के अन्तरतम प्रदेश मे विराजित कुछ ही इष्टतम साधको मे से एक थे। उनसे हमे जो आत्मीय स्नेह, हार्दिक भाव एवं अत्यन्त उदारपूर्ण मृदु व्यवहारमय कृपाप्रसाद मिला है वह हमारे जीवन का सुरक्षित अक्षय कोष ही रहेगा।'**

'२८ अप्रेल १९९१

- आजन्म वक्ता श्री प्रकाश मुनि जी म.सा., मुम्बई -

"आचार्यप्रवर ने सथारा करके अपने जीवन-भवन के उच्चशिखर पर देदीप्यमान स्वर्णकलश जड़ दिया है और देव दुर्लभ आत्म-कल्याण के लक्ष्य को अधिगत कर लिया है। दिल्ली से आए सुश्रावक श्री सुकुमाल चन्दजी तथा सुश्राविका सुदर्शना जी जब भावविभोर होकर आचार्य प्रवर के सथारे का प्रत्यक्ष हाल बता रहे थे तब एकाएक गुरु महाराज ने उन्हें फरमाया, "सुदर्शना जी ! अब यदि आप पुन. निमाज जाएँ तो आचार्यप्रवर के श्रीचरणो मे हमारी तरफ से भी अर्ज करना कि जीवन की अन्तिम वेला मे हमको भी संथारा आए। उनके सुखद वरद चरणो से और

किसी भौतिक लाभ की नही, बस इसी अन्तिम आदर्श और उत्तम समाधिमरण की मन: कामना करनी है।"

२२ अप्रेल १९९१

-अयमानजी म.सा, गोहाना मण्डी (हरियाणा)

"पूज्य हस्तीमलजी म.सा स्थानकवासी समाज ही नही, जिनशासन के एक ऐसे ज्यतिर्मान नक्षत्र थे, जिनसे जीवन भर सम्यक् ज्ञान और चारित्र का प्रकाश प्रस्फुटित होता रहा।

पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा ने अपने रत्नत्रयात्मक व्यक्तित्व का सुदीर्घ साधना के साथ विकास किया जो प्रत्येक श्रमण-श्रमणी के लिए सभव नही हो पाता।

ऐसे परिपक्व, स्थिर और कर्मठ व्यक्तित्व का अभाव हो जाना समाज के लिए दु.खद ही कहा जा सकता है। श्रमण चेतना का सुव्यवस्थित नवनिर्माण तो कठिन है, किन्तु सुनिर्माणित सुप्रसिद्ध व्यक्तित्व उठ जाना जिनशासन के अनुयायियो के लिए अपूरणीय क्षति ही बन जाया करती है। स्वर्गीय पूज्य आचार्य श्री के अभाव को हम ऐसी ही क्षति के रूप मे अनुभव कर रहे है। स्वर्गीय पूज्य श्री न केवल स्वय त्याग-तप, साधना और ज्ञान की जीवन्त प्रतिमा थे, अपितु उन्होने समाज में सम्यक् ज्ञान-साधना के सामयिक विस्तार हेतु अपनी सीमा मे अथक प्रयत्न किए। "

२३ अप्रेल १९९१

[illegible]

*

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

द्वितीय खण्ड

दर्शन खण्ड

प्रस्तुत खण्ड दो अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय 'अमृत वाक्' में संकलित विचार अज्ञान रूपी अंधकार में भटके जिज्ञासु के लिए ज्योतिस्तम्भ की भांति प्रकाशक हैं। एक–एक वचन अमृत तुल्य होने के कारण इस अध्ययन का नाम 'अमृत वाक्' रखा गया है। आचार्यप्रवर श्री हस्ती के प्रवचन–साहित्य एवं दैनन्दिनियों से चयनित ये विचार जन–जन के लिए मार्गदर्शक हैं तथा किंकर्तव्यविमूढ और उलझे हुए मस्तिष्क को सम्यक् समाधान प्रदान करते हैं।

द्वितीय अध्याय 'हस्ती उवाच' में 129 विषयों पर पूज्यपाद आचार्यप्रवर के मार्गदर्शक एवं प्रेरक विचारों का संकलन है, जो श्रावकों एवं श्रमणों दोनों को अपनी [illegible]

अमृत-वाक्

(आचार्यप्रवर के प्रवचनों एवं दैनन्दिनी से संकलित वचन)

- श्रुत-धर्म जीवन में ज्ञान और श्रद्धा उत्पन्न करता है और चारित्र-धर्म जीवन-सुधार का कार्य करता है।
- यदि मानव मे सच्चरित्रता का बल नहीं हो तो शास्त्रो का ज्ञान, वक्तृत्व-कला, निपुणता और प्रगाढ़ पाण्डित्य व्यर्थ है।
- आचार का मूल विवेक है। चाहे कोई श्रमण हो अथवा श्रमणोपासक, उसकी प्रत्येक क्रिया विवेकयुक्त होनी चाहिए।
- समभाव वह लोकोत्तर रसायन है जिसके सेवन से समस्त आन्तरिक व्याधियाँ वैभाविक परिणतियाँ नष्ट हो जाती है।
- धर्म उसी के मन मे रहता है जो निर्मल हो । माया और दम्भ से परिपूर्ण हृदय मे धर्म का प्रवेश हो ही नही सकता।
- चित्त मे आराध्य, आराधक और आराधना का कोई विकल्प न रह जाना—तीनो का एक रूप हो जाना अर्थात् भेद प्रतीति का विलीन हो जाना ही सच्ची आराधना है।
- जिसका वियोग होता है, वह सब पर-पदार्थ है, जिसे आत्मा राग-भाव के कारण अपना समझ लेता है।
- निज गुणो को प्रकट करने मे परमात्मस्वरूप का चिन्तन एव गुणगान निमित्त होता है।
- सामायिक की अवस्था मे मन, वचन और काया का व्यापार अप्रशस्त नही होना चाहिए।
- योगसाधना का सबसे बड़ा विघ्न लोकैषणा है।
- नाना प्रकार की लब्धियाँ योग का प्रधान फल नही है। अध्यात्मनिष्ठ योगी इन्हे प्राप्त करने के लिये योग की साधना नही करता। ये तो आनुषगिक फल हैं।
- जब तक अन्तःकरण मे पूर्णरूपेण मैत्री और करुणा की भावना उदित नही होती तब तक आत्मा मे कुविचारो की कालिमा बनी रहती है और शुद्ध आत्मस्वरूप प्रकट नही होता।
- राग-द्वेष की परिणति निमित्त पाकर उभर आती है। अतएव जब तक मन पूर्ण रूप से सयत न बन जाए, मन पर पूरा काबू न पा लिया जाय, तब तक साधक के लिये यह आवश्यक है कि वह राग-द्वेष आदि विकारो को उत्पन्न करने वाले निमित्तो से भी बचे।
- मानव स्वभाव की यह दुर्बलता सर्व-विदित है कि जब छूट मिलती है तो शिथिलता बढ़ती ही जाती है।
- ससार को सुधारना कठिन है, परन्तु साधक स्वय अपने को सुधार कर, अपने ऊपर प्रयोग करके दूसरो को प्रेरणा दे सकता है।

- घोर से घोर सकट आने पर भी सच्चे साधक-सन्त अपने पथ से चलायमान नही होते, बल्कि उस सकट की आग मे तप कर वे और अधिक उज्ज्वल होते है।
- श्रावक का कर्त्तव्य है कि वह साधु की सयम -साधना मे सहायक बने। राग के वशीभूत होकर ऐसा कोई कार्य न करे या ऐसी कोई वस्तु देने का प्रयत्न न करे, जिससे साधु का संयम खतरे मे पड़ता हो।
- पैर मे चुभे काटे और फोड़े मे पैदा हुए मवाद के बाहर निकलने पर जैसे शान्ति प्राप्त होती है उसी प्रकार सच्चा साधक अपने दोष का आलोचन और प्रतिक्रमण करके ही शान्ति का अनुभव करता है। इसके विपरीत जो प्रायश्चित्त के भय से अथवा लोकापवाद के भय से अपने दुष्कृत को दबाने का प्रयत्न करता है, वह जिनागम का साधक नही, विराधक है।
- मनुष्य अर्थनीति मे जितना समय लगाता है, उसका आधा समय भी धर्मनीति मे लगावे, तो उसका उद्धार हो सकता है।
- हम जिस वस्तु के लिए सघर्षरत होते है, न तो उसका स्थायित्व है और न वह अपनी ही है।
- धन, जन पर यदि तीव्र आसक्ति नही रहेगी, तो आर्त्त नही होगा।
- जहाँ अपध्यान रहेगा, वहाँ शुभध्यान नही होगा और जब शुभ भाव नही आयेगे तो बुरे भाव बढ़ेगे।
- स्वाध्याय को नित्य का आवश्यक कर्म मान लिया जाए, तो सहज ही प्रमाद घट सकेगा। आवश्यकता है स्वाध्याय को दैनिक आवश्यक सूचि मे नियमित स्थान देने की।
- ससार मे दुख के दो कारण है — मोह और अज्ञान। सामायिक मोह को घटाने और स्वाध्याय अज्ञान को दूर करने का अमोघ उपाय है।
- भोग सब रोगो का कारण है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गध ये सुख के साधन नही है, वरन् दुःख की सामग्रियाँ हैं। इन्ही के द्वारा इन्द्रियाँ मनुष्य को दुख पहुँचाती है तथा मन को अशान्त बनाती हैं।
- यदि चारित्र की आराधना करेगे तो पाप का भार, कर्म का भार घटेगा, क्षीण होगा। पाप का भार घटने से आत्मा हल्की होगी।
- सद्गुरु मन, वाणी और कर्म से एक समान होते है।
- ससार मे साधनसम्पन्न एव धनी-मानी युवक धर्म-मार्ग की ओर अग्रसर होकर दूसरो को इस ओर लाने का प्रयत्न करें तो उसका विशेष प्रभाव होता है।
- जिस समाज को अपने इतिहास का ज्ञान नही, वह कभी भी सही दिशा मे आगे नही बढ़ सकता। वर्तमान को समुन्नत और भविष्य को उज्ज्वल एव कल्याणकारी बनाने के लिए अतीत का ज्ञान और उसकी सतत प्रेरणा आवश्यक है।
- जो लोग अज्ञानता या वासना की दासता से अपना लक्ष्य स्थिर नही कर पाते, साधना करके भी वे शान्ति प्राप्त नही करते। जिनका लक्ष्य स्थिर हो गया है वे धीरे-धीरे चलकर भी मजिल तक पहुँच जाते है।
- अनुभूति प्राप्त ज्ञानियो ने कहा है कि मानव! तेरा अमूल्य जीवन भोग के लिए नही है। तुझे करणी करना है, ऐसी करणी कि तेरे अनतकाल के बधन कट जाए। तेरा चरम और परम लक्ष्य मुक्ति है, इसको मत भूल।

- मनुष्य-जीवन पूर्ण अभ्युदय का आधार है, उसे व्यर्थ में गवाना बुद्धिमानी का कार्य नही ।
- अतीत भोग-विलास मे बीत गया और उसमें किसी प्रकार की साधना नही हो सकी, इसकी चिन्ता मत कीजिए। चिन्ता करिए वर्तमान की, जो शेष है। उसका निश्चय सदुपयोग होना चाहिए। मनुष्य वर्तमान अवस्था मे जगकर, चेतकर आत्म-कल्याण कर सकता है।
- ससार मे तीन प्रकार के प्राणी होते है— १. निकृष्ट (जघन्य) २ मध्यम और ३. उत्तम। जिन व्यक्तियो मे सदाचार तथा सद्गुणो की सौरभ नही होती, वे ससार मे आकर यो ही समय नष्ट कर चले जाते हैं। मनुष्य-जीवन की प्राप्ति परम दुर्लभ है और ऐसे दुर्लभ नर-जीवन को व्यर्थ मे गवाना, अज्ञानता की परम निशानी है। ऐसे व्यक्तियो को निष्कृष्ट प्राणी समझना चाहिए। मध्यम श्रेणी के प्राणी अपने जीवन-निर्वाह के साधन मे लगे रहते है तथा स्व-पर का उत्थान नही कर सकते तो अधिक बिगाड़ भी नही करते। तीसरी कोटि के प्राणी अपने जीवन की सुरभि तथा विशेषता द्वारा अमरत्व प्राप्त करते है और सासारिक लोगो के जीवन-सुधार मे सहयोग दिया करते है। ऐसे प्राणी उत्तम या प्रथम श्रेणी के माने जाते है।
- जीवन के अनमोल समय को व्यर्थ ही नष्ट कर डालना, मानव की जड़ता है। जहाँ साधारण मनुष्य धन, जन, सत्ता, कोठी, बगला और वैभव की सामग्रियॉ प्राप्त करने मे प्रयलशील रहते है, वहाँ विचारवान और विवेकी पुरुष उन्हे नश्वर और क्षणिक मानकर, आध्यात्मिक जीवन बनाने मे तत्पर रहते है। ससार की समस्त नश्वर वस्तुए बनाने पर भी विनष्ट हो जाती है, किन्तु उत्तम जीवन एक बार बना लिया जाए तो वह फिर नष्ट नही होता।
- अनजान को समझाना आसान है, जानकार ज्ञानी भी आसानी से समझ सकते है,परन्तु जो जानते हुए मोह वश अनजान है, उनको समझाना महामुश्किल है।
- जो सघ मे भक्ति रखता है और शासन की उन्नति करता है, वह प्रभावक श्रावक है।
- प्राणी पाप का सम्पूर्ण त्याग किये बिना सताप मुक्त नही हो सकता।
- त्याग और वैराग्य के उदित होने पर सद्गुण अपने आप आते हैं। जैसे उषा के पीछे रवि-रश्मियॉ स्वत ही जगत को उजाला देती है वैसे ही अभ्यास के बल पर सद्गुण अनायास चमक पड़ते है।
- आरम्भ और परिग्रह साधना के राजमार्ग मे सबसे बड़े रोड़े है। जिस मनुष्य का मन आरम्भ और परिग्रह के दलदल में फसा हो, वह सहसा उससे निकल कर साधना के पथ पर आगे नही बढ़ सकता।
- आत्म-ज्ञानविहीन व्यक्ति उस चम्मच के समान है जो मिष्ठान्न से लिप्त होकर भी उसके माधुर्य के आनद से वचित ही रहता है।
- लड़ाई, हिसा या कलह से प्राप्त सम्पदा, स्वय और परिवार किसी के लिए भी कल्याणप्रद नही हो सकती।
- योग्यता होते हुए भी पुरुषार्थ की आग को ढक कर रखने मे ज्ञान रूपी प्रकाश नही मिलता।
- ज्ञान सुनने को यदि खाना कहे तो मनन करना उसको पचाना है। मनुष्य कितना ही मूल्यवान एव उत्तम भोजन करे, पर यदि उसका पाचन नही करे तो वह बिना पचा अन्न, अनेक प्रकार की व्याधियों का कारण बन जाता है।
- मानव-मन में ज्ञान की ज्योति अखड रहे, इसके लिए निरन्तर सत्सग, स्वाध्याय और साधना की स्नेह-धारा चलती

रहनी चाहिए ताकि मोह के झोको मे उसका ज्ञान-प्रदीप बुझ न जाए।

- बिना मर्यादित जीवन के मानव को शान्ति प्राप्त नही हो सकती। तृष्णा की प्यास अतृप्त ही रहती है, यह बड़वानल की तरह कभी शान्त नही हो पाती।
- जो मोह के कारण पाप मे फँसे होते हैं उनमे त्याग की बुद्धि ही उत्पन्न नही होती।
- ससार की समस्त सम्पदा और भोग के साधन भी मनुष्य की इच्छा पूरी नही कर सकते है।
- जैसे घृत की आहुति से आग नही बुझती, वैसे ही धन की भूख धन से नही मिटती है। तन की भूख तो पाव भर अन्न से मिट जाती है, किन्तु मन की भूख असीम है। उसकी दवा त्याग और सतोष है, धन प्राप्ति या तृष्णा पूर्ति नहीं।
- यदि मनुष्य इच्छा को सीमित करले तो सघर्ष के सब कारण स्वत समाप्त हो जाएगे, विषमता टल जायेगी, वर्गभेद मिट कर सब ओर शान्ति और आनद की लहर फैल कर यह पृथ्वी स्वर्ग के समान बन जाएगी।
- कुसग मे पड़ा तरुण तन बल, ज्ञान और आत्मगुण सभी का नाश करता है।
- उत्तेजक वस्तुओ के भोजन और शृगार प्रधान वातावरण मे रहने के कारण बच्चो मे काम-वासना शीघ्र जागृत होती है।
- समाज यदि समय रहते बच्चो के सुसस्कार के लिए तन, मन, धन नही लगाएगा तो इसके कटु फल उसे अवश्य भोगने पड़ेंगे।
- चिकित्सक रोग का दुश्मन, पर रोगी का मित्र होता है। यही दृष्टिकोण आत्म-सुधार की दिशा मे भी रखा जाए तो शासन तेजस्वी रह सकता है।
- वस्तुत मर्यादित जीवन मे शान्ति है तथा अमर्यादित जीवन मे अशान्ति।
- आज दूसरो को झगड़ते देख मनुष्य उपदेश देता है, किन्तु स्वय सहनशीलता को जीवन मे नही अपनाता, सयम और विवेक से काम नही लेता।
- साधना के मार्ग मे प्रगतिशील वही बन सकता है, जिसमे सकल्प की दृढ़ता हो।
- जिस साधक मे श्रद्धा और धैर्य हो, वह अपने सुपथ से विचलित नही होता। संसार की भौतिक सामग्रियॉं उसे आकर्षित नही करती, बल्कि वे उसकी गुलाम होकर रहती है।
- यद्यपि शरीर चलाने के लिए साधक को भी कुछ भौतिक सामग्रियो की आवश्यकता होती है, किन्तु जहॉं साधारण मनुष्य का जीवन उनके हाथ बिका होता है, वही साधक की वे दास होती है।
- आम के पत्तो का बन्दनवार लगाकर जो आनद मानते है, वे लोग वृक्षो के अग-भग का दु.ख भूल जाते है।
- समाज के अधिकाश लोग अनुकरणशील होते हैं। वे अपने से बड़े लोगो की नकल करने मे ही गौरव अनुभव करते हैं। इस प्रकार देखा-देखी से समाज मे गलतिया फैलती रहती है।
- आज धर्म और कानून की उपेक्षा कर मनुष्य व्यर्थ की हिंसा बढ़ा रहा है। फलत देश का पशुधन और शुद्ध भोजन नष्ट होता जा रहा है।

- मनुष्य को मधुमक्खी की तरह बनना चाहिए न कि मल ग्रहण करने वाली मक्खी के समान।
- पुत्र की अपेक्षा पुत्रियो मे सुशिक्षा और सुसस्कार इसलिए आवश्यक है कि उन्हे अपरिचित घरो मे जाना तथा जीवनपर्यन्त वही रहना है।
- लड़की यदि सुशीला और सस्कारवती होगी तो परिवार को प्रेम के बल पर अविभक्त और अखड रख सकेगी।
- जो विरोधाग्नि का मुकाबला शान्ति के शीतल जल से करते है, वे विरोधी को भी जीत लेते है।
- जो ज्ञानी होकर स्वय जागृत है, जड़ पदार्थ उसे अपनी धारा मे नही बहा सकते है।
- ये भौतिक तुच्छ वस्तुएँ, साधारण मनुष्य के मन को हिलाकर अशान्त कर देती है किन्तु ज्ञानी पर इनका कुछ भी प्रभाव नही पड़ता, उल्टे वह इन्ही पर अपना प्रभाव जमा लेता है।
- वस्त्राभूषणो की तरह सादगी का भी असर कुछ कम महत्त्व वाला नही होता।
- राजमहल का विराट् वैभव-प्रदर्शन यदि दर्शको को अपनी ओर आकृष्ट करता है तो एक सादी पावन कुटिया भी चित्त को चकित किये बिना नही रहती।
- व्यक्ति-जागरण के बिना समाज-धर्म पुष्ट नही होता, कारण कि व्यक्तियो का समूह हो तो समाज है।
- स्वेच्छा से उपवास करना शमन है, किन्तु व्यक्ति के आगे से परोसी हुई थाली खीच लेना दमन है।
- पर्व के द्वारा सामूहिक साधना का पथ प्रशस्त होता है एव इससे समुदाय को साधना करने कीं प्रेरणा मिलती है, जिससे राष्ट्रीय- जीवन का सतुलन बना रहता है।
- मनुष्य यदि अपनी वृत्ति, विवेकपूर्ण नही रखे तो वह दूसरो के लिए घातक भी बन सकता है।
- असयत मानवता पशुता और दानवता से भी बढ़कर बर्बर मानी जाती है तथा 'स्व-पर' के लिए कषाय का कारण हो जाती है।
- साधना के मार्ग में लगकर यदि साधक प्रमाद मे पड़ जाए, तो कुछ भी हाथ नही लगेगा।
- उपासना मे तन्मयता अपेक्षित है, अन्यथा "माया मिली न राम" की स्थिति होगी।
- श्रद्धा की दृढ़ता न होने से मनुष्य अनेक देव-देवी, जादू-टोना और अधविश्वास के फेर मे भटकते रहते है।
- ज्ञानवान मनुष्य अशान्ति के कारणो को नियत्रित कर लेता है।
- आवश्यकता तो प्राणिमात्र को रहती है। अन्तर इतना ही है कि एक आवश्यकता को बाध लेता है और दूसरा आवश्यकताओ से बंधा रहता है। परिणामत पहला उतना दु खी नही होता और दूसरा अशान्त तथा दु खी हो जाता है।
- समाज मे कोई दु खी है, तो समाज के धनी व्यक्तियो पर यह दायित्व है कि वे उसकी योग्य सहायता करे।
- पाप-कर्म करने के बाद धर्मादा देने की अपेक्षा पहले ही पापो से दूर रहना अच्छा है।
- विरोध का विरोध से और गाली का गाली से प्रतिकार करने पर सघर्ष बढ़ता है।
- सद्‌भाव मधुर पानी का तथा दुर्भाव खारे पानी का स्रोत है।
- संताप घटाने के लिए मनुष्य को अपनी आवश्यकताएँ घटानी चाहिए।

- पापो मे डूबा हुआ मानव भी यदि धर्म-जागरण करे, आत्म-स्वरूप का चिन्तन करे, तो अपने आपको ऊपर उठा सकेगा और जीवन धन्य बना सकेगा।
- मरण-सुधार के लिए जीवन-सुधार और जीवन-सुधार के लिए वृत्तियो पर सयम करना आवश्यक है।
- साधक, साधु-सन्तो के पास कुछ अर्थ (धन) लेने नही, वरन् अपना जीवन सुधारने जाता है, ताकि उसकी ज्ञान, दर्शन और चारित्रिक योग्यता बढ़े तथा जीवन-निर्माण की ओर उसकी प्रवृत्ति हो।
- धार्मिक, राजकीय व सामाजिक कार्यो मे उग्रता के समय यदि कुछ समय टालकर जवाब दिया जाए और बीच मे भगवान का भजन कर लिया जाए तो श्रेयस्कर है।
- उत्तेजना के समय किये जाने वाले काम मे विलम्ब करना अच्छा है, किन्तु जीवन को उन्नत बनाने वाले कामो मे प्रमाद से दूर रहना अत्यत आवश्यक है।
- आवेश मे किया हुआ कोई भी काम स्व-पर हितकारक नही होता।
- पागल की बातो को जैसे हम बुरी नही मानते, वैसे ही क्रोधादि से पराधीन व्यक्ति की बातो को भी बुरी नही मानना चाहिए, क्योकि वह परवश एव दया का पात्र है।
- शारीरिक और वाचिक सयम कर लेने से मन आसानी से ध्यान मे लग सकता है।
- भगवान के भजन मे मन को लगाने के लिए शारीरिक और वाचिक सयम चाहिए। पवित्र साधना एव पुरुषार्थ के बिना यह सभव नही है।
- भला! इससे बढ़कर आश्चर्य की बात और क्या होगी कि हम भौतिक वस्तुओ को अपना समझ कर उनके लिए तो चिन्ता करते हैं, पर आत्म-धन की चिन्ता नही करते।
- जैसे निर्मल जल से वस्त्र की शुद्धि होती है, उसी प्रकार सत्सग से जीवन पवित्र होता है।
- निर्मलता, शीतलता और तृषा-निवारण जल का काम है। सत्पुरुषो का सत्सग भी ऐसा ही त्रितापहारी है। वह ज्ञान के द्वारा मन के मल को दूर करता है, सतोष से तृष्णा की प्यास मिटाता है और समता व शान्ति से क्रोध का ताप दूर करता है।
- आत्मोन्नति के लिए सत्सग की खुराक आवश्यक है।
- श्रुताराधन, वायु-सेवन की तरह है।
- हर एक संघ को दीपक बनकर ज्ञान की ज्योति जगाने का काम करना चाहिए।
- यदि दीपक मे तेल और बत्ती है, किन्तु लौ बुझ गई है तो जलता हुआ दूसरा दीपक उसे जला सकता है।
- इतिहास साक्षी है कि श्रुतबल, स्वाध्याय तथा ज्ञान ने लाखो मनुष्यो के जीवन को सुधार दिया है।
- वस्तुत जो शिक्षा को जीवन मे उतार ले, वही दूसरो को शिक्षा देने का पूर्ण अधिकारी होता है।
- धार्मिक-जन का जीवन सफेद चादर के समान है। उजली चादर पर छोटी-सी स्याही की बूद भी खटकती है।
- साधु-सन्त और भक्त-गृहस्थ सफेद चादर की तरह है, उनमे छोटा-मोटा दोष भी खटकता है।
- केवल व्यापार मे ही आदमी आत्म-विश्वास के बिना पिछड़ा रह जाता हो, यह बात नही है, आध्यात्मिक क्षेत्र मे

विश्वास नही होता है, तो भी पिछड़ जाता है।

- जीवनी शक्ति को बनाये रखने के लिये जितना खाना आवश्यक है, उतने का परिमाण कर लें, उससे अधिक न खाए। साधारणत देखा जाता है कि प्राय: सभी व्यक्तियो की अधिकाधिक खाने की इच्छा रहती है और जब पेट मना कर देता है, तभी वे खाना बन्द करते हैं।
- कम बोलना और ज्यादा करना है, जिससे आपका बोलना और करना समाज के लिए वरदान सिद्ध हो सके।
- स्तुति करने वाले शका करते है कि प्रभु तारने वाले नही, फिर स्तुति क्यो? उनको समझना चाहिए कि प्रभु-भक्ति तुम्ब की तरह तारक है। मन की मशक मे प्रभु-भक्ति एवं सद्-विचार की वायु भरने से आत्मा हल्की होकर तिर जाती है।
- यदि मोह का बधन ढीला करने के लिए भक्ति का मार्ग अपना लिया जाए तो मोह दब जायेगा। यदि मोह की जड़ भक्ति की अपेक्षा अधिक सबल होगी तो निश्चय ही भक्ति दब जाएगी।
- प्रभु शक्ति मे विश्वास रखने वाला आदमी भौतिक चीजो को सहज ही मे ठोकर मार देता है।
- शान्ति और समता के लिए न्याय-नीतिपूर्वक धर्म आचरण ही श्रेयस्कर है।
- अज्ञान और मोह के दूर होने पर भीतर मे आत्मबल का तेज जगमगाने लगता है।
- स्वाध्याय चित्त की स्थिरता व पवित्रता के लिए सर्वोत्तम उपाय है।
- शास्त्र ही मनुष्य का वास्तविक नयन है।
- 'भाव' क्रिया का प्राण है। भावहीन क्रिया फलदायी नही होती ।
- मिथ्या विचार, मिथ्या आचार और मिथ्या उच्चार असमाधि के मूल कारण हैं।
- जिनका चित्त स्वच्छ नही है, वे परमात्म सूर्य के तेज को ग्रहण नही कर सकते।
- आत्मा के लिए परमात्मा सजातीय है और जड़ पदार्थ विजातीय। सजातीय द्रव्य के साथ रगड़ होने पर ज्योति प्रकट होती है और विजातीय के साथ रगड़ होने से ज्योति घटती है।
- जिससे जड़ चेतन, आत्मा-परमात्मा व बध-मोक्ष का ज्ञान हो, उसको सम्यग्ज्ञान कहते हैं।
- बन्धन ससार है और चारित्र इसे काटने की क्रिया है।
- जैसे घर से निकल कर धर्मस्थान मे आते है और कपड़े बदलकर सामायिक-साधना मे बैठते है, उसी तरह कपड़ो के साथ-साथ आदत भी बदलनी चाहिए और बाहरी वातावरण तथा इधर-उधर की बातो को भूल कर बैठना चाहिए।
- आध्यात्मिक साधना मे दृढ़सकल्पी होना, मत्सर भावना का त्याग करना और सम्यग्दृष्टि रखना परम आवश्यक है।
- इच्छा की बेल को काटे बिना और समभाव लाये बिना सुख की प्राप्ति नही हो सकती।
- धन रोग और शोक दोनो का घर है, जबकि धर्म रोग और शोक दोनो को काटने वाला है।
- जो खुशी के प्रसग पर उन्माद का शिकार हो जाता है और दुःख मे आपा भूलकर विलाप करता है वह इहलोक

और परलोक दोनो बिगाड़ लेता है।

- अगर हमारे चित्त मे किसी प्रकार का दम्भ नही है, वासनाओ की गदगी नही है और तुच्छ स्वार्थ-लिप्सा का कालुष्य नही है तो हम वीतराग के साथ अपना सान्निध्य स्थापित कर सकते है।
- जिनशासन मे तप का महत्त्व है, पर ज्ञानशून्य तप का नही।
- ज्ञान न मिलने का अन्तरग कारण तो है ज्ञानावरण कर्म और ज्ञान न मिलने का बाहरी कारण है ज्ञानी जनो की सगति का अभाव।
- ज्ञानावरण का जोर रहा और बाहरी साधनो—सगति, पुस्तक आदि का सयोग नही मिला तो ज्ञान प्राप्त नही होगा। ज्ञानावरण का जोर घटा, क्षयोपशम हुआ और ज्ञानी की सगति मिली तो ज्ञान प्राप्त होगा।
- जिस तत्त्व के द्वारा धर्म, अधर्म, सत्य, असत्य जाना जाय, उसको ज्ञान कहते है। ज्ञान आत्मा का गुण है।
- जिन व्यक्तियो मे सदाचार तथा सद्गुणो की सौरभ नही होती, वे ससार मे आकर यो ही समय नष्ट कर चले जाते है।
- दुर्लभ नर-जीवन को व्यर्थ मे गवाना, अज्ञानता की परम निशानी है।
- मोह के कारण ही त्याग की बुद्धि उत्पन्न नही होती है।
- गुणो का महत्त्व भूलकर गुणी का तिरस्कार करना उचित नही।
- आत्मा की कीमत सोने के आभूषणो से नही वरन् सदाचार, प्रामाणिकता और सद्गुणो से है।
- यदि जीवन का निर्माण करना है तो प्रत्येक को स्वाध्याय करना पड़ेगा। स्वाध्याय के बिना ज्ञान की ज्योति नही जलेगी।
- हमारे शिक्षणालयो का उद्देश्य होना चाहिए कि उनमे अध्ययन करने वाले छात्र सदाचारी एव ईमानदार बने।
- आज के अध्यापक का जितना ध्यान शरीर, कपड़े, नाखून, दात, आदि बाह्य स्वच्छता की ओर जाता है, उतना छात्रो की चारित्रिक उन्नति की ओर नही जाता।
- बाह्य स्वास्थ्य जितना आवश्यक समझा जा रहा है, अन्तरग स्वास्थ्य उससे कही अधिक आवश्यक है।
- सन्त लोगो का काम तो उचितानुचित का ध्यान दिलाकर सर्चलाइट दिखाना है।
- ध्यान और मौन की साधना के साथ यदि ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की आराधना करेगे तो आत्मा का कल्याण होगा।
- आज विश्व को शस्त्रधारी सैनिको की नही, शास्त्रधारी सैनिको की आवश्यकता है।
- समाज मे तप-सयम का बल जितना बढ़ेगा उतनी ही सुख शान्ति कायम होगी।
- वीतराग पथ पर कोई भी व्यक्ति अग्रसर हो सकता है, चाहिए दृढ़ इच्छाशक्ति, वैराग्य और सत्साहस।
- तप राग घटाने की क्रिया है।
- तप के समय ऐसा कार्य करना चाहिए, जिससे राग की भावना घटे और वैराग्य की भावना बढ़े।
- श्रद्धालु श्रावक दुख आने पर भी श्रद्धा से दोलायमान नही होता।

- व्यवहार जगत मे दूसरे का माथा मूड लेने वाला भले ही चालाक कहलावे, परन्तु यह कला, कला नही, वरन् भीतर-बाहर दोनो ओर से कालापन ही है।
- पुण्य-पाप को समझने वाला व्यक्ति जालसाज लोगो को सुखी देखकर भी दोलायमान या चचल चित्त नही होगा, क्योकि मनुष्य कई जन्मो के कर्म के कारण सुख-दुःख पाता है।
- साधना के मार्ग मे चलने से मनुष्य मे निर्भयता आती है।
- जीवन-परिवर्तन मे प्रमुख कारण काल, स्वभाव, कर्म-सयोग, परिस्थिति और अध्यवसाय है।
- ज्ञान, विवेक, सद्भाव एव शुभ रुचि के अभाव मे मानव बाह्य पुण्य का फल पाकर भी नीचे गिर जाता है।
- पापो से बचने की दृष्टि वाला साधक किसी भी व्यक्ति मे गुणो को देखकर आदर करता है, यह सम्यक् दृष्टि है।
- गृहस्थ भी यदि ज्ञान का धनी है, तो वह साधु-सन्तो के लिए आकर्षण का केन्द्र बन जाता है।
- धर्म-स्थान मे साज—शृगार करके आना दूषण है।
- परमार्थ का परिचय करने के लिए सत्शास्त्र एव सत्सग दो साधन हैं।
- जिसकी सगति से सुबुद्धि उत्पन्न हो, दुर्व्यसनो का परित्याग हो और अहिंसा, सत्य तथा प्रभु मे मानव की प्रवृत्ति हो, वह सुसगति है।
- ज्ञान-प्राप्ति के लिए ज्ञानवान की सगति आवश्यक है। इसी प्रकार अज्ञानी और मिथ्यादर्शनी का सग जो दूषण रूप है, त्याज्य है।
- विचार की भूमिका पर ही आचार के सुन्दर महल का निर्माण होता है। विचार की नीव कच्ची होने पर आचार के भव्य प्रासाद को धराशायी होते देर नही लगती।
- अपशब्द के प्रत्युत्तर मे निरुत्तर रहना, अपशब्द बोलने वाले को हराने की सर्वोत्तम कला है। कॉटे का जवाब फूल से देना सज्जनाचार है।
- जिस धन और साधन से जीवन सुधरे, वास्तव मे वही धन और साधन उत्तम है।
- चाहे साधु-धर्म हो या गृहस्थ-धर्म, सम्यग्दर्शन की दृढ़ भूमिका, दोनो के लिए अत्यावश्यक है।
- पाप और दुःख इन दोनों में कारण-कार्य भाव है।
- स्वार्थ की भावना से व्रत करना, व्रत के महत्त्व को कम करना है।
- सम्यग्दर्शनी दिखावे से आकर्षित नही होता, क्योंकि दिखावे की ओर झुकने वाला कभी -कभी ठगा जाता है।
- भीतर का मूल्य जहॉ ज्यादा होगा, वहॉ बाह्य दिखावा कम होगा। कासे की थाली के गिरने पर अधिक आवाज होती है वैसी सोने की थाली के गिरने पर नही होती। मूल्य सोने की थाली का अधिक है, अतः उसमे झनझनाहट कम है।
- परिग्रह आत्मा को पकड़ने वाला है, जकड़ने वाला है, यह दुःख और बन्ध का पहला कारण है।
- जिन-शासन त्यागियों का शासन है, रागियों का नही।

- यदि मूर्च्छाभाव है तो शरीर भी परिग्रह है और वस्त्रादि भी।
- परिग्रह दु.ख व बन्धन का कारण है।
- अपनी सपदा का उपयोग करना सीखेगे तो आपका परिग्रह अधिकरण बनने के बजाय उपकरण बन जायेगा।
- परिग्रह का सम्बन्ध जितना चीजो से, वस्तुओ से नही, उतना मन से है।
- परिग्रह व बन्धन की गाठ को ढीली करोगे तो बाहर की सामग्रियाँ तुम्हारे पास रहकर भी दुःखदायी नही बनेगी।
- धन के लिये नीति-अनीति को भुलाना, यह जैन का लक्षण नही है। सच्चा जैन लक्ष्मी-दास नही, अपितु लक्ष्मी-पति होता है।
- धन कदापि तारने वाला नही, केवल धर्म ही तारने वाला है।
- जो व्यक्ति जितना अधिक सयम से रहेगा वह उतना ही अधिक सुखी और सब तरह से स्वस्थ रहेगा।
- संयम सब प्रकार के दु खो के मूल कारण पाप से बचाने वाला और अन्ततोगत्वा अक्षय सुख का दाता है।
- जीवन मे प्रतिदिन, प्रतिक्षण, प्रत्येक कार्य मे सयम रखना चाहिए।
- चारित्र-धर्म का पहला चरण है—तन और वाणी पर सयम।
- तन, मन, वाणी भोगोपभोगादि और विषय-कषायो का सयम धर्म का प्रमुख अग है।
- जीवन मे यदि धर्म व चारित्र नही है, तो जीवन फीका है।
- मुनियो के सौम्य जीवन और त्यागमय चर्या का चिन्तन करके भी व्यक्ति ज्ञान की प्राप्ति कर लेता है।
- भूमि, जायदाद आदि से ज्यादा सोच आपको ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का होना चाहिये, क्योकि ये आपके निज-गुण हैं।
- जब तक हमारा सम्यग्ज्ञान मजबूत रहेगा, तब तक हम कभी नही डिगेगे।
- सामायिक वह महती साधना है, जिसके द्वारा जन्म-जन्मान्तरो के सचित कर्म-मल को नष्ट किया जा सकता है।
- आसन-विजय, दृष्टि-विजय और मन-विजय - ये तीनो प्रकार की साधनाएँ सामायिक मे परमावश्यक है।
- सही रूप मे प्रायश्चित्त तभी होगा जबकि गलती करने वाला व्यक्ति मन मे यह विचार करे कि वास्तव मे उसने गलती करके बुरा काम किया, उसे इस प्रकार की गलती नही करनी चाहिये थी।
- गुरुजनो के समक्ष यदि कोई व्यक्ति अपनी गलती के किसी भी अश को छुपा कर रखता है, तो वह प्रायश्चित्त न होकर एक और नई गलती करना हो जायेगा।
- व्यर्थ ही द्रव्य लुटाकर थोथा आडम्बर दिखाना, कोई बुद्धिमत्ता नही है। सच्चे अर्थ मे शासन की प्रभावना के अनेक रास्ते है।
- तप राग घटाने की क्रिया है। तप के समय ऐसे काम होने चाहिए जिनसे राग की भावना घटे, वैराग्य की भावना बढ़े।
- जो नैतिक दृष्टि से पतित हो वह धार्मिक दृष्टि से उन्नत कैसे हो सकता है ? नैतिकता की भूमिका पर ही धार्मिकता की इमारत खड़ी होती है।

- वास्तव मे जैन-शास्त्रों मे प्रदर्शित श्रावक-धर्म मे किसी भी काल के आदर्श की असीम सभावनाएँ निहित हैं ।
- जो अत्यल्प साधनो से ही अपना जीवन शान्तिपूर्वक यापन करता है उसे प्रभु और प्रभुता दोनो मिलते हैं।
- राजा की आज्ञा मे बल होता है दण्ड का और महात्मा के आदेश मे बल होता है ज्ञान और करुणाभाव का।
- ज्ञानी पुरुष के हृदय रूपी हिमालय से करुणा, वात्सल्य और प्रेम की सहस्र-सहस्र धाराएँ प्रवाहित होती रहती हैं और वे प्रत्येक जीवधारी को शीतलता और शान्ति से आप्लावित करती रहती है।
- प्रत्येक मनुष्य सबके प्रति प्रीति और अहिंसा की भावना रखकर अपनी जीवनयात्रा सरलता व सुगमता से चला सकता है। आघात-प्रत्याघात से ही जीवन चलेगा, ऐसा समझना भ्रम है।
- किसी प्राणी को कष्ट न पहुँचाना, छेदन-भेदन न करना, यह द्रव्य-दया है। राग-द्वेष उत्पन्न न होना भावदया है।
- जीवन को परममगल की ओर अग्रसर करने के लिए केवल द्रव्य-दया पर्याप्त नही है, भाव-दया भी चाहिए। भाव-दया के बिना जो द्रव्य-दया होती है, वह प्राणवान् नही होती।
- राग-द्वेष भावहिंसा है। भावहिंसा करने वाला किसी अन्य का घात करे या न करे , आत्मघात तो करता ही है- उसके आत्मिक गुणो का घात होता ही है ।
- श्रावक को तोलने और मापने मे अनुचित-अनैतिक लाभ लेने की प्रवृत्ति नही रखनी चाहिए।
- छल-कपट का सेवन करके, नीति की मर्यादा का अतिक्रमण करके और राजकीय विधान का भी उल्लघन करके धनपति बनने का विचार करना अत्यन्त गर्हित और घृणित विचार है। ऐसा करने वाला कदाचित् थोड़ा बहुत जड़-धन अधिक सचित कर ले, मगर आत्मा का धन लुटा देता है और आत्मिक दृष्टि से वह दरिद्र बन जाता है।
- श्रावक-धर्म का अनुसरण करते हुए जो व्यापारी व्यापार करता है, वह समुचित द्रव्योपार्जन करते हुए भी देश और समाज की बहुत बड़ी सेवा कर सकता है।
- श्रावक अपने अन्तरग और बहिरग को समान स्थितियो मे रखता है। वचन से कुछ कहना और मन मे कुछ और रखना एव क्रिया किसी अन्य प्रकार की करना श्रावक-जीवन से सगत नही है। श्रावक भीतर-बाहर मे समान होता है।
- जिन्हे उत्तम धर्म-श्रवण करने का सुअवसर मिला है, उन्हे दूसरो की देखादेखी पाप के पथ पर नही चलना चाहिए। उनके हृदय मे दुर्बलता, कुशका और कल्पित भीति (भय) नही होनी चाहिए। ऐसा सच्चा धर्मात्मा अपने उदाहरण से सैंकड़ो अप्रामाणिको को प्रामाणिक बना सकता है और धर्म की प्रतिष्ठा मे भी चार-चॉद लगा सकता है।
- धर्म-शिक्षा को जीवन मे रमाने के लिए काम-वासना को उपशान्त एव नियन्त्रित करना, मोह की प्रबलता को दबाना और अमर्यादित लोभ का निग्रह करना आवश्यक है।
- जब आत्मा में सम्यग्ज्ञान की सहस्र-सहस्र किरणे फैलती है और उस आलोक से जीवन परिपूर्ण हो जाता है, तब काम, क्रोध और लोभ का सघन अन्धकार टिक ही नही सकता।
- मनुष्य के अन्तःकरण मे व्याप्त सघन अन्धकार को जो विनष्ट कर विवेक का आलोक फैला देता है, वह 'गुरु' कहलाता है।

- जीवन-रथ को कुमार्ग से बचाकर सन्मार्ग पर चलाने के लिए और अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए योग्य गुरु की अनिवार्य आवश्यकता है।
- अनुकूल निमित्त मिलने पर जीवन बड़ी तेजी के साथ आध्यात्मिकता मे बदल जाता है।
- जिस प्रकार खाने से ही भूख मिटती है, भोजन देखने या भोज्य-पदार्थो का नाम सुनने से नही, इसी प्रकार धर्म को जीवन मे उतारने से, जीवन के समग्र व्यवहारो को धर्ममय बनाने से ही वास्तविक शान्ति प्राप्त हो सकती है।
- ज्ञानी पुरुष का पौद्गलिक पदार्थों के प्रति मोह नही होता।
- जो लोग आहार के सम्बन्ध मे असयमी होते है, उत्तेजक भोजन करते है, उनके चित्त मे काम-भोग की अभिलाषा तीव्र रहती है। वास्तव मे आहार-विहार के साथ ब्रह्मचर्य का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है।
- मनुष्य के मन की निर्बलता जब उसे नीचे गिराने लगती है तब व्रत की शक्ति ही उसे बचाने मे समर्थ होती है।
- व्रत अगीकार नही करने वाला किसी भी समय गिर सकता है। उसका जीवन बिना पाल की तलाई जैसा है, किन्तु व्रती का जीवन उज्ज्वल होता है।
- एक मनुष्य अगर अपने जीवन को सुधार लेता है तो दूसरो पर उसका प्रभाव पड़े बिना नही रह सकता।
- पुद्गल एव पौद्गलिक पदार्थों की ओर जितनी अधिक आसक्ति एव रति होगी, उतना ही आन्तरिक शक्ति का भान कम होगा।
- सम्यग्दृष्टि जीव मे दर्शनमोहनीय का उदय न होने से तथा चारित्रमोहनीय की भी तीव्रतम शक्ति (अनन्तानुबन्धी कषाय) का उदय न रहने से मूर्च्छा-ममता मे उतनी सघनता नही होती जितनी मिथ्यादृष्टि मे होती है।
- जब तक परिग्रह पर नियन्त्रण नही किया जाता और उसकी कोई सीमा निर्धारित नही की जाती तब तक हिसा आदि पापो का घटना प्राय असभव है।
- जब तक मनुष्य इच्छाओ को सीमित नही कर लेता तब तक वह शान्ति नही पा सकता और जब तक चित्त मे शान्ति नही, तब तक सुख की सभावना ही कैसे की जा सकती है?
- परिमाण कर लेने से तृष्णा कम हो जाती है और व्याकुलता मिट जाती है। जीवन मे हल्कापन आ जाता है और एक प्रकार की तृप्ति का अनुभव होने लगता है।
- मन मे सन्तोष नही आया तो सारे विश्व की भूमि, सम्पत्ति और अन्य सुख-सामग्री के मिल जाने पर भी मनुष्य शान्ति प्राप्त कर नही सकता।
- पेट की भूख तो पाव दो पाव आटे से मिट जाती है, मगर मन की भूख तीन लोक के राज्य से भी नही मिटती।
- एक अकिंचन निस्पृह योगी को जो अद्भुत आनन्द प्राप्त होता है वह कुबेर की सम्पदा पा लेने वाले धनाढ्य को नसीब नही हो सकता।
- अमर्यादित धन-सचय की वृत्ति के पीछे गृहस्थी की आवश्यकता नही, किन्तु लोलुपता और धनवान् कहलाने की अहकार-वृत्ति ही प्रधान होती है।
- किसी महापण्डित का मस्तिष्क यदि समाज और देश की उन्नति मे नही लगता तो उसका पाण्डित्य किस काम

का ?

- जो पूंजी पाकर स्वय उसका सदुपयोग नही करता, और दूसरो की सहायता नही करता प्रत्युत दुर्व्यसनो का पोषण करता है, वह इस लोक मे निन्दित बनता है और अपरलोक को पापमय बना कर दु.खी होता है।
- जीवन, धन और वैभव जाने वाली वस्तुएँ हैं, किन्तु इन जाने वाली वस्तुओं से कुछ लाभ उठा लिया जाय, अपने भविष्य को कल्याणमय बना लिया जाय, इसी मे मनुष्य की बुद्धिमत्ता है, विवेकशीलता है।
- स्वेच्छापूर्वक अंगीकार किया हुआ व्रत का बन्धन साहस और शक्ति प्रदान करता है। प्रतिकूल परिस्थिति मे इसके द्वारा अपनी मर्यादा से विचलित न होने की प्रेरणा प्राप्त होती है।
- परिग्रह को घटाने से हिंसा, असत्य, स्तेय, कुशील इन चारो पर रोक लगती है। अहिंसा आदि चार व्रत अपने आप पुष्ट होते रहते हैं।
- प्रमाद और कषाय दोनो सम्यग्दर्शन और विरतिभाव की निर्मलता मे बाधक हैं।
- विचार-बल यदि पुष्ट हो तो साधक अहिंसा, सत्य आदि व्रतो का ठीक तरह से निर्वाह कर सकेगा।
- भोगोपभोग की लालसा जितनी तीव्र होगी, पाप भी उतने ही तीव्र होगे।
- सामान्य लोग भौतिक पदार्थों की प्राप्ति के लिए साधना करते है, जब कि साधु उनके त्याग की और उनकी अभिलाषा न करने की साधना करता है। शुद्ध आत्मोपलब्धि ही उसकी साधना का उद्देश्य होता है।
- राग की स्थिति मे मनुष्य का विवेक सुषुप्त हो जाता है। जिस पर राग भाव उत्पन्न होता है, उसके अवगुण उसे दृष्टिगोचर नही होते। गुणवान के गुणो का आकलन करना भी उस समय कठिन हो जाता है।
- यह सत्य है कि मन अत्यन्त चपल है, हठीला है और शीघ्र काबू मे नही आता। किन्तु उस पर काबू पाना असभव नही है। बार-बार प्रयत्न करने से अन्तत. उस पर काबू पाया जा सकता है।
- किसी उच्च स्थान पर पहुँचने के लिए एक-एक कदम ही आगे बढ़ाना पड़ता है।
- धर्म-शिक्षा या अभ्यास एव वैराग्य के द्वारा मन को वशीभूत किया जा सकता है।
- जो शरीर के प्रति ममतावान् है, उसे शरीर के प्रतिकूल आचरण करने पर रोष उत्पन्न होता है, किन्तु जिसने शरीर को पर-पदार्थ समझ लिया है और जिसे उसके प्रति किंचित् भी ममता नही रह गई है, वह शरीर पर घोर से घोर आघात लगने पर भी रुष्ट नही होता।
- ज्ञान अपने आप मे अत्यन्त उपयोगी सद्गुण है, किन्तु उसकी उपयोगिता विरतिभाव प्राप्त करने मे है।
- जो विवेकशील साधक विरतिभाव के बाधक कारणो से बचता है, वही साधना मे अग्रसर हो सकता है।
- सम्यग्दर्शन आदि भाव-रत्न आत्मा की निज सम्पत्ति हैं। इनसे आत्मा को हित और सुख की प्राप्ति होती है।
- जो मनुष्य भोगोपभोग मे सयम नही रखता, वह प्रलोभनो का सामना नहीं कर सकता।
- जिस बुराई को मिटाना चाहते हो उसी का आश्रय लेते हो, यह तो उस बुराई को मिटाना नही, बल्कि उसकी परम्परा को चालू रखना है।
- समभाव की साधना की विशेषता यह है कि इससे व्यक्तिगत जीवन अत्यन्त उच्च, उदार, शान्त और सात्त्विक

बनता है।

- धर्म एकान्त मगलमय है। वह आत्मा, समाज, देश तथा अखिल विश्व का कल्याणकर्त्ता और त्राता है। आवश्यकता इस बात की है कि जनता के मानस मे धर्म और नीति के प्रति आस्था उत्पन्न की जाए।
- जो शासन धर्मनिरपेक्ष नही, धर्मसापेक्ष होगा वही प्रजा के जीवन मे निर्मल, उदात्त और पवित्र भावनाएँ जागृत कर सकेगा।
- प्रत्येक साधनापरायण व्यक्ति को चार बाते ध्यान मे रखनी चाहिये - (१) स्थिर आसन (२) स्थिर दृष्टि (३) मित भाषण और (४) सद्विचार मे निरन्तर रमणता। इन चार बातो पर ध्यान रखने वाला लोक-परलोक मे लाभ का भागी होता है।
- जिसके मन मे सयमी होने का प्रदर्शन करने की भावना नही है, वरन् जो आत्मा के उत्थान के लिये सयम का पालन करता है, वह सयम मे आयी हुई मलिनता को क्षण भर भी सहन नही करेगा।
- व्रती पुरुष कुटुम्ब, समाज तथा देश मे भी शान्ति का आदर्श उपस्थित कर सकता है और स्वय भी अपूर्व शान्ति का उपभोक्ता बन जाता है।
- परस्पर सापेक्ष सभी गुणो की यथावत् आयोजना करने वाला ही अपने जीवन को ऊँचा उठाने मे समर्थ हो सकता है।
- ज्ञानावरण का क्षयोपशम कितना ही हो जाय, यदि मिथ्यात्व मोह का उदय हुआ तो वह ज्ञान मोक्ष की दृष्टि से कुज्ञान ही रहेगा।
- अनुभव जगाकर अपने ज्ञान-बल से भी बहुत से व्यक्ति वस्तुतत्त्व का बोध प्राप्त कर सकते है। पर इस प्रकार बोध प्राप्त करने के अधिकारी कोई विशिष्ट व्यक्ति ही होते है । निसर्ग से ज्ञान उत्पन्न होने की स्थिति मे इधर उपादान ने सिद्धि की और जोर लगाया तो निमित्त गौण रहा, उपादान प्रधान रहा । दूसरी ओर अधिगमादि निमित्त के माध्यम से ज्ञान उत्पन्न होने की दशा मे निमित्त प्रधान रहता है और उपादान गौण। प्रत्येक कार्य की निष्पत्ति मे उपादान और निमित्त ये दोनो ही कारण चलते है।
- पाँचो व्रतो का यथाशक्ति आगार के साथ पालन, भोगोपभोग का परिमाण, अनर्थ दण्ड से बचना आदि पाप को घटाने के साधन है।
- विनय तप के अहर्निश आराधन से, साधारण से साधारण साधक भी गुरुजनो का अनन्य प्रीतिपात्र या कृपापात्र बन कर अन्ततोगत्वा सर्वगुण सम्पन्न हो, ज्ञान का भण्डार और महान् साधक बन जाता है।
- जैसे बिना पाल के तालाब मे पानी नही ठहरता वैसे ही बिना व्रत के जीवन मे सद्गुणो का पानी समाविष्ट नही हो सकता, अत· श्रावक अपने मे व्रत की पाल अवश्य बाधे।
- जीव दो प्रकार के होते है- एक भवमार्गी और दूसरे शिवमार्गी। विश्वभर मे अनन्तानत प्राणी भव मार्ग का अनुगमन कर रहे है। उनकी कोई गुण-गाथा नही गायी जाती। उनका उल्लेख कही नही होता। उनका कोई पता नही होता कि किधर से आये और किधर गये। दूसरी ओर शिवमार्गी वे जीव है, जो सख्या मे असख्य नजर नही आते, किन्तु शास्त्रो मे, सत् -साहित्य मे उन्ही की गुण-गाथा गायी हुई है।

- गुणियो के गुणो का कीर्तन प्रभावना का कारण है, पर साधक को प्रशसा सुनकर खुश नही होना चाहिए। यही समझना चाहिये कि इसने प्रेमवश मेरे गुण देखे हैं, इसको मेरे दोषों का क्या पता ? मुझे अपने दोषो को निकाल कर इसके विश्वास पर खरा उतरना है, ताकि उसे धोखा न हो।
- हर मनुष्य के पास मन, वचन और काया के सुप्रणिधान की तीन निधियॉ है, जो नवविधियो की दाता हैं। गरीब से गरीब भी इनसे वचित नही है। स्थानाङ्ग सूत्र के तृतीय स्थान मे प्रभु ने स्पष्ट कहा है—मणसुप्पणिहाणे, वयसुप्पणिहाणे, कायसुप्पणिहाणे।
- धर्म-साधना के लिये धन की आवश्यकता नही है, अमीर-गरीब सब इसका लाभ उठा सकते है। कम से कम तीन साधन हर मनुष्य के पास है। मन से किसी के लिये बुरा न सोचे, किसी की उन्नति देखकर जलन नही करे। क्रोध, कलह, वैर-विरोध का त्याग करे। वचन से सत्य एवं हितकर बोले, खाली समय हो तो गप्पो मे बैठने की अपेक्षा भगवद् भजन करे। काय से किसी को कष्ट न दे। सेवा और सत्सग करे।
- बुद्धिवादी लोग कहते है कि जब तक मन शान्त न रहे, सामायिक करना बेकार है। ऐसा तर्क करने वालो को ध्यान देना चाहिये कि दवा रोग की स्थिति मे ही ली जाती है, नीरोग होने पर दवा की आवश्यकता नही, वैसे ही राग आदि विकारो की दशा मे ही सामायिक-साधना की जाती है। पूर्ण शान्ति मिलने पर तो सामायिक सिद्ध हो चुकी।
- भारत का विधान तो हर भारतीय को राष्ट्रपति बनने तक का ही अधिकार प्रदान करता है, परन्तु शास्त्र का विधान नर को नारायण और जन को जगपति बनने का अधिकार प्रदान करता है। आवश्यकता है साधना मे आगे बढ़ने की।
- माताए सुशिक्षित होगी तो बालक को सस्कारवान बनने मे देरी नही लगेगी।
- जब परिवार तथा समाज के क्षेत्र मे आप धर्म का प्रयोग करोगे, वैर-विरोध एव कलह के प्रसगो को अदालत मे न पहुँचा कर भीतर मे सुलझाने का, हिंसा को सबल अहिंसा से जीतने का अभ्यास करोगे तो धर्म चतुर्गुण दीप्त हो उठेगा।
- शीशी मे सूर्य किरण से पानी गर्म करने मे अग्नि, वायु आदि का आरम्भ बच सकता है। तीन चार घण्टे मे बुद्बुदे ऊपर आ जाते है। किरण-चिकित्सा के प्रयोग में यह अनुभव हुआ। चूल्हे पर गर्म किये जाने वाले पानी की अपेक्षा इसमे आरम्भ की बचत होती है।
- धन, अन्न, भूमि, वस्त्र आदि बचाने से घर समृद्ध होगा, देश व समाज की सेवा हो सकेगी।
- सद्गृहस्थ भोगसामग्री को मिलाते हुये भी असद्मार्ग से बचकर चलता है। असद्मार्ग से मिलायी गई सम्पदा की अपेक्षा वह धन की गरीबी को अच्छी मानता है। शरीर की सहज कृशता, शोथ (सूजन) के मोटापे से अच्छी है।
- जीवन मे धर्म का स्थान वृक्ष में मूल के समान है।
- 'समता' मोक्ष का साधन है तो उसका उलटा 'तामस' नरक का द्वार है।
- बांस भी लड़कर भस्म हो जाते है। मनुष्य को इससे शिक्षा लेनी चाहिए।

- जिन धर्म अमृत सागर है। अमृत सागर के पास जाकर प्यासा आवे तो लोग मूर्ख कहेगे। यह अमृत अनन्तकाल की तृषा मिटाता है।
- समाज पक्ष मे कारीगर बनना है, मजदूर नही। सुई बनना है, कैची नही।
- श्रावक और साधु मे स्पर्शनाव्रत का अन्तर है। श्रद्धा तो दोनों की एक है।
- दुरुपयोग से दानवो ने प्राप्त वर को खो दिया और नाश के भागी बने। इस प्रकार अनन्त ज्ञानादि, निधि को पाकर जो हिंसा, झूठ, मान, बड़ाई और भोगो मे खो देगा, उसे पछताना पड़ेगा। ऐसा न करो।
- सत्कर्म के बिना मनुष्य इस भूमि पर ही नरक बना लेता है।
- व्यसन छोड़िए, शीलधर्म की आराधना कीजिए और रात्रि-भोजन का त्याग कीजिए।
- मनुष्य का भाग्य और कुछ नही, अपने ही किये हुए पुरुषार्थ का परिणाम है।
- ज्ञान एव वैराग्य की शिक्षा से पापी भी सुधर सकते है।
- दरिया मे सोने की शिला पकड कर चलने वाला डूबता और काष्ठ पट्ट लेने वाला तिरता है। यही हाल जग में धन और धर्म का है। धन डुबाता और धर्म तिराता है।
- शस्त्रधारी सेना देश का धन बचा सकती है, पर शास्त्रधारी सेना जीवन बचाती है। क्योकि हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार-भ्रष्टाचार शस्त्रबल से नही, शास्त्रबल से छूटते हैं।
- आचरणवान् या क्रियाशील ही देश-धर्म का उत्थान कर सकते है।
- महावीर के मार्ग और उनकी सभा मे बुझदिलो का काम नही है। वहॉ सब कुछ प्रसन्नता से अर्पण करने वाला चाहिए।
- व्यर्थ श्रम, वाणी, क्रोधादिविकल्प, अमर्यादित भ्रमण और व्यसन में बचत करना जीवन की निधि है।
- भौतिकता के प्रभाव मे जो लोग जीवन को उन्नत बनाना भूल जाते है, वे ससार मे कष्टानुभव करते है और जीवन को अशान्त बना लेते है।
- मनुष्य सोचता है कि झूठ बोलना नही छोड़ा जाता, किन्तु जब एक दिन अभ्यास कर लोगे तो मन मे हिम्मत आ जायेगी। फिर आगे बढ़ सकोगे।
- धर्म नीति प्राणिमात्र मे बन्धुभाव उत्पन्न करती है। क्रोध की आग मे वह प्रेम के अमृतजल का सिंचन करती है।
- बालक रत्न भी बन सकते हैं और टोल भी। माता-पिताओ को चाहिए कि अपना दायित्व समझकर बालको के सुन्दर जीवन-निर्माण की ओर लक्ष्य दे। अन्यथा हाथ से तीर छूट जाने पर लाइलाज है।
- दुनिया के बड़े लोग सत्सग मे इसलिए भी सकोच करते है कि वहॉ साधारण लोगो के साथ बैठना होता है। सिनेमा मे उनकी पोजीशन डाउन नही होती, पर सत्सग मे हो जाती है, कितनी विचित्र बात है।
- आप गुणज्ञ बने, तभी सच्चा लाभ ले सकेगे।
- सद्गृहस्थ धर्मप्रधान दृष्टि रखते हुए अर्थसाधना करता है। सद्गृहस्थ को चाहिए कि वह प्रतिदिन इसका निरीक्षण करे कि मेरा 'अर्थ साधन' धर्म के विपरीत तो नही जाता। उसका दृष्टिकोण उस किसान की तरह होता है जो

बीज को खाता हुआ भी उसे बोना नही भूलता। बीज के लिये अच्छे दाने सुरक्षित रखता है।

- यदि परीक्षा मे बच्चो को नैतिक व्यवहार के भी अङ्क दिए जाएं तो बच्चे देश के लिए वरदान हो सकते हैं।
- 'स्वाध्याय' संस्कार का बड़ा साधन है।
- परिग्रह छूटेगा तो आरम्भ स्वतः कम हो जायेगा।
- परिग्रह से मनुष्य की मति आकुल और अशान्त रहती है। अशान्त मन मे धर्म-साधना नही होती।
- धर्म पहले इहलोक सुधारता है, फिर परलोक। धर्म से पहले इस जीवन मे शान्ति मिलती है, फिर आगे।
- धर्म मानव-जीवन के लिए उतना ही आवश्यक है, जितना वायुसेवन।
- कामना के जाल को वही काट सकता है, जिसके पास ज्ञान का बल है।
- मनुष्य जीवन का महत्त्व व्रत-नियम से है।
- राजनीति दण्ड से जीवन-सुधार चाहती है और धर्मनीति प्रेम से मन बदल कर।
- आत्मसुधार का एक निश्चित क्रम है - १ जीवन सुधार २. मरण सुधार और ३ आत्मसुधार।
- अनर्थदण्ड के प्रमुख कारण है— १ मोह २ प्रमाद और ३ अज्ञान ।
- किसी की उन्नति देखकर ईर्ष्या करना या उसकी हानि की सोचना अनर्थदण्ड है।
- अपध्यान मे बाहरी हिंसा नही दिखती, परन्तु वहा अन्तरग हिंसा है।
- अपध्यान वहाँ होता है, जहाँ तीव्र आसक्ति है।
- मनुष्य को ज्ञान का तीर लगे तो एक ही काफी है और नही लगे तो जन्मभर सुनते रहने पर भी कोई लाभ नही होता।
- मनुष्य के मन पर माया की झिल्ली आने से वह सत्तत्त्व को नही देख पाता और सत्कर्म मे चल भी नही सकता।
- पारिवारिक प्रार्थना, साप्ताहिक स्वाध्याय सुसस्कार के साधन है। इनके साथ निर्व्यसनी, प्रामाणिक और शुद्ध व्यवहार वाला होना आवश्यक है।
- जिसके द्वारा हित-अहित, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य और धर्माधर्म का बोध हो, वही सच्चा ज्ञान है। ज्ञान के बिना विज्ञान जीवन मे हितकारी नही हो सकता।
- तप के साथ क्रोध आदि विकारो का त्याग करना उसका भूषण है। कहा है—सोहा भवे उग्गतवस्स खती।" अर्थात् क्षमाभाव से उग्र तपस्या की शोभा है।
- बाहरी विषमता दूर करने से शान्ति नही होगी। उससे कुछ समस्याएं हल हो सकती हैं, पर शान्ति के लिए समता आवश्यक है।
- गृहस्थ-जीवन दान-शील प्रधान है और मुनि-जीवन तप-सयम प्रधान है।
- बालक के सस्कार-निर्माण में पिता से अधिक मातृजीवन कारण होता है।
- अरिहन्त कहते हैं—यदि ज्ञानी बनना है तो मोह-माया का पर्दा दूर करो। ज्ञान का प्रकाश बाहर नही, तुम्हारे ही भीतर है।

- मानव तन , धन, परिवार, पदादि के मोह मे भूला हुआ है, अत प्राप्त सामग्री का उचित उपयोग नही कर पाता है।
- बिना ज्ञान के क्रिया करते हुए प्राणी अन्धकार मे घूमता है, सत्य प्राप्त नही कर पाता।
- विद्या से विनय के बदले अविनय बढ़ता हो तो समझना चाहिए कि यह सद्विद्या नही है।
- ज्ञानी अपनी करणी को भौतिक पदार्थो के बदले नही गवाता।
- जो निमित्त पाकर पुरुषार्थ करता है, वह अवश्य ही आत्मा का उत्थान कर लेता है। सद्गुरु का निमित्त पाकर भी जो पुरुषार्थ नही करता वह ज्ञान-लाभ नही कर सकता।
- धर्म-साधना के लिए धन की आवश्यकता नही है। इसकी साधना इतनी सस्ती , सरल व सुलभ है कि अमीर-गरीब सब कोई इसका लाभ उठा सकते है।
- धन की भूख धन से नही मिटती, वह सन्तोष से मिटती है।
- देश के नागरिको को सामूहिक बल से हिंसा का विरोध करना होगा।
- अहिंसा, सत्य एव सदाचार का त्रिगुण मन्त्र धारण कर देश को सकट से बचा लेना चाहिए।
- जीवन की गाड़ी मे धन का पेट्रोल ही भरते जाओगे और व्रत का जल नही होगा तो यात्रा खतरे से खाली नही होगी।
- मन बदल जाता है तो जीवन बदलते देर नही लगती।
- धर्म के प्रचार में भी आचार का बल चाहिए।
- पाप घटाने के लिए आवश्यकता पर नियन्त्रण आवश्यक है।
- जल जीवन है, गृहस्थ को उसका दुरुपयोग नही करना चाहिए।
- रागी जिन भौतिक वस्तुओ को भूषण मानकर अधिकाधिक बढ़ाना चाहता है, ज्ञानी उनको घटाना चाहता है। ज्ञानी अज्ञानी का यही खास अन्तर है।
- परिग्रह की पूजा से लोग गुणो का सम्मान भूल जाते है।
- श्रावक का कर्तव्य है कि वह धन-सम्पदा का साधन के रूप मे उपयोग करे। उसको साध्य समझकर चलेगा तो वह बाधक बनकर उसे मूल साध्य से वञ्चित कर देगी।
- स्त्री एव शूद्र को धर्म का अधिकारी नही मानना भ्रान्तिपूर्ण है।
- आठ का हो या साठ का, धर्म का मापदण्ड विवेक है।
- चार बातों मे लक्ष्य आवश्यक है—तप, संयम, क्षमा और ब्रह्मचर्य ।
- आचार वह है जो जीवन को पवित्र बनावे।
- जिससे अपना अहित हो वह काम छोड़ने योग्य है।
- आज अध्यात्म-शिक्षा की महती आवश्यकता है।
- सम्यग्ज्ञान ही जीवन को पवित्र बना सकता है।

- जो आत्मा को शुद्ध-बुद्ध बनाने में सहायक हो, वह साधना चाहे विचार-सम्बन्धी हो या आचार सबधी, 'धर्म' है। इसके विपरीत जो क्रिया जीवन की अशुद्धि बढ़ावे, आत्मा को स्वभाव से दूर करे वह सब अधर्म है।
- श्रमण और श्रावक शुद्ध मन से ज्ञान-क्रिया की साधना करे तो आत्म-कल्याण हो सकता है।
- माँ ने मनुष्य को मानव रूप से उत्पन्न किया। उसको देवत्व छोड़ दानव-भाव मे नही जाना चाहिए।
- श्रद्धा, विवेक और करणी का मेल हो वही श्रावक है।
- ज्ञानी की देव, गुरु एव धर्म पर श्रद्धा होती है और अज्ञानी की जड़-सम्पदा पर।
- मनुष्य को भगवान की अपेक्षा माया से अधिक प्रेम होता है। इसका प्रमुख कारण अज्ञान है।
- आत्मार्थी को पाप से बचने के लिये प्रमाद और कषाय घटाने चाहिए।
- गृहस्थ ससार मे रहते हुये सम्पूर्ण हिंसा आदि का त्याग नही कर सकता, फिर भी उसका विचार शुद्ध हो सकता है। वह पाप को पाप और षट्कायिक जीवो को अपने समान समझता है।
- ज्ञान के बिना कषाय का जोर नही हटता।
- आप स्वाध्यायशील रहे तो आचार की त्रुटियाँ सहज ही दूर हो सकती है।
- दु खमय ससार मे प्राणियो की रति देख शास्त्रकार भी आश्चर्य करते है।
- श्रावकपन किसी जाति या देश मे सीमित नही होता।
- विवेकशील कोई भी मनुष्य श्रावक हो सकता है।
- सुज्ञ पुरुष चढ़ते परिणामो मे साधना एव व्रतादि कर लेते है।
- साधक श्रद्धा-प्रतीति होने पर भी रुचि के अभाव मे चारित्र ग्रहण नही करता।
- जिसके सग से कुमति दूर हो, भजन की रुचि बढ़े, राग-द्वेष घटे, सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति हो वही सत्सग है।
- दिल के साफ आइने मे ही परमात्मा के दर्शन होते हैं।
- धर्म सत्य की भूमि पर पैदा होता है और दया-दान से बढ़ता है।
- चाहे माला जपे, सामायिक करे या अन्य कुछ करे, सत्य-सदाचार और प्राणिदया को जीवन मे उतारना न भूले। व्यवहार मे प्रामाणिक होना मूलगुण होना चाहिए।
- विनीत शिष्य और जातिमान् वृषभ एक बार रास्ते लगने के पश्चात् बिना प्रेरित किए ही चलते रहते है।
- सद्विचारो से कुविचार की गदगी मन से निकल जाती है।
- मनुष्य का जीवन मिट्टी के पिंड के समान है। उसको जैसा सग और शिक्षा मिले वह वैसे रूप मे ढल सकता है।
- ब्रह्मचर्य मानव-जीवन का पानी है। जिसका पानी उतर गया वह हीरा मूल्यहीन हो जाता है।
- यदि आज का मानव महावीर के शासन को ध्यान मे लेकर चले तो वर्ग-सघर्ष का नाम ही न हो।
- समदृष्टि का जीवन धर्मप्रधान होता है, अर्थप्रधान नही।

- चतुर कृषक जल को नाली मे न डालकर बाडी मे बहाता है। इसी प्रकार १८ पापो से सचित द्रव्य को आरम्भ-परिग्रह की नाली मे न बहाकर ज्ञान-दान, अभय-दान, शासनसेवा , स्वधर्मिसहाय, उपकरण-दान आदि मे लगाने से उसका सदुपयोग हो सकता है।
- द्रव्य, क्षेत्र , काल एव भाव की अनुकूलता मे पुरुषार्थ किया जाय तो कार्य सिद्धि हो सकती है।
- आज के श्रावक व्यावहारिक जगत् मे पैतृक सम्पदा की तरह गुरु से दी गई धर्म-सम्पदा को बढ़ाकर सच्चे सपूत बने तो विश्व का कल्याण हो सकता है।
- भला व्यक्ति भी नीच की सगति से कलकित होता है।
- गुणशून्य बाह्य रमणीकता निस्सार है।
- श्रावक धर्म की साधना के लिए निर्व्यसनी होना प्रथम आवश्यकता है।
- ममता के चक्कर मे पड़ने वाला स्वय अशान्त हो दूसरो को भी अशान्त करता है।
- व्यसन का अर्थ ही विपत्ति है। जिससे धनहानि हो एव जीवन दु खमय हो वैसी कोई कुटेव नही रखनी चाहिए।
- एक का दिल-दिमाग बिगड़े, उस समय दूसरा सन्तुलित मन को सम्भाल ले, तब भी बिगड़ा हाल सुधर जाता है।
- मनुष्य को पर-दु खदर्शन के समय नवनीत सा कोमल और कर्तव्य-पालन मे वज्रवत् कठोर रहना चाहिए।
- गुणी ही गुण की कद्र करता है। गुणो से ही मनुष्य की पूजा होती है।
- भोग पर नियन्त्रण रखने वाला ही देश-धर्म की सेवा कर सकता है।
- ज्ञानपूर्वक मार्ग ग्रहण करने वाला कठोर परीक्षा मे, उलझन के समय भी सम्भल जाता है।
- जो लोग भाई-भाई के बीच एव सम्प्रदायो के बीच दीवाल खड़ी करते है, वे सपूत नही हैं।
- स्वतन्त्रता अमृत एव स्वच्छन्दता विष है।
- जाति शरीर के अन्त तक है, परन्तु विचारो व सस्कारो मे बदलाव होता रहता है।
- भीतरी ग्रहो का शमन करने पर बाहर के ग्रहो का कोई भय नही रहता।
- यदि एक बार भी क्षायिक भाव का उत्थान हो जाय तो फिर गिरने का धोखा नही रहता।
- विषमवृत्तियो को सम करने और कषाय की दाह का शमन करने वाली क्रिया का नाम ही सामायिक है।
- अज्ञान, मिथ्यादर्शन और कदाचार बन्ध के कारण है। इनको त्यागने से ही मुक्ति होती है।
- द्रव्य दया शरीर की रक्षा और भावदया आत्मगुणो की रक्षा है।
- विभूषा, स्त्री-ससर्ग और प्रणीत भोजन ब्रह्मचारी के लिए विष है।
- राग-द्वेष की मुक्ति व एकात सुख के लिए ३ बाते आवश्यक है - (१) ज्ञान का पूर्ण प्रकाश (२) अज्ञान-मोह का विवर्जन (३) राग-रोष का क्षय।
- विषय-कषाय से मन को खाली करने पर भगवत् –निवास होता है।
- अहकार से सत्कर्म वैसे ही क्षीण हो जाता है, जैसे मणो दूध पावरत्ती सखिया से जहरीला हो जाता है।

- महापुरुष अपनी जगहितकारी प्रवृत्तियो और कल्याण कामना से स्वयं याद आते हैं, वे याद कराये नही जाते।
- त्यागी होने पर भी जब तक साधु छद्मस्थ है- आहार, विहार और सग का प्रभाव होता ही है।
- गुरु और गुणीजनो की सेवा, बाल जन का सग-त्याग, स्वाध्याय और एकान्त चिन्तन भाव-निर्माण के साधन है।
- सद्‌भावो की लहरे कई बार आती है, परन्तु अनुकूल सग और वातावरण के बिना टिकती नही।
- जिसने सदाचार का पालन नही किया वह साहसी व निर्भय नही रह सकता।
- शासन एव धर्म-रक्षण का कार्य केवल साधुओ का ही समझना भूल है, साधु की तरह श्रावक सघ का भी उतना ही दायित्व है।
- श्रावक-श्राविकाओ के द्वारा स्वाध्याय अध्यात्मबल से पुष्ट होना चाहिए।
- जरा सा भी कोई सामाजिक कार्य मे चूका कि लोग उसकी अच्छाइया भूलकर निन्दा करने लग जाते हैं। सामाजिक-जीवन का यह दूषण है।
- सद्‌दृष्टि के अभाव मे शास्त्र शस्त्र बन जाता है।
- लोभ-मोह पर जिसका अकुश है वह स्व-पर का हित कर सकता है।
- सैकड़ो आदमी आपके सम्पर्क मे आते है। यदि व्यवहार के साथ अहिसा, निर्व्यसनता आदि का प्रचार करे तो अच्छा काम हो सकता है।
- साधक महिमा-पूजा और सत्कार को भी परीषह मानता है। उसमे प्रसन्न होना, फूलना एव अहकार करना अपनी कमाई को गवाना है।
- सघ का कर्तव्य गुणी जन का आदर करना है।
- गुणप्रेमी अपना कर्तव्य समझकर सत्कार-सम्मान करे या गुणानुवाद करे, परन्तु साधक को उसमे निर्लेप रहना चाहिए।
- गृहस्थ चाहे पूर्ण पाप या आरम्भ परिग्रह का त्यागी नही है, फिर भी उसका लक्ष्य पाप घटाने का होना चाहिए।
- वीतरागवाणी का यह महत्त्व है कि वह सुख-दुःख के कारणो को समझाकर प्राणी को कुमार्ग से बचाती एव सुमार्ग मे जोड़ती है।
- जो मन मे कुछ और रखता है तथा बोलता कुछ और है , वह धर्म का अधिकारी नही होता।
- मनमाना या इच्छानुकूल नही चलकर स्व-आत्मा के नियन्त्रण मे चलना ही स्वतन्त्रता है।
- गुरु से कपट करने वाला शिष्य शिक्षा के अयोग्य होता है।
- कामी सौन्दर्य मे कृत्रिमता करता है।
- यदि एक विद्वान् सही अर्थ मे धर्माराधन से जुड़ जाता है तो वह अनेक भाई-बहनो के लिए प्रेरणा का स्तम्भ बन जाता है।
- असंयम दु:ख और सयम सुख का कारण है।
- प्रतिदिन सामायिक का अभ्यास विषमभाव को घटाकर मन में समभाव की सरिता बहाने वाला है।

- महर्षियो ने धर्म का सार तीन बातो मे कहा है —१ आत्मा को वश मे करो, २. पर-आत्मा को अपने समान समझो ३ परमात्मा का भजन करो।
- शरीर मे ऑख की चूक से कभी पैर मे कॉटा लग जाय, तो क्या फिर पैर आख का भरोसा नही करेगा? समाज मे ऐसा ही सम्प हो तो अशान्ति नही होगी।
- जो इच्छा से बेईमानी नही करे, स्वेच्छा से घूसखोरी, नफाखोरी एव चोरी नही करे, मन से नशा नही करे वह स्वतत्र है।
- सयमी की शुद्ध साधना श्रावक के विवेक पर ही चल सकती है।
- साधक को हर कार्य करते समय सजग रहना चाहिए। त्रुटि हो भी जाय तो उसके लिये पश्चात्ताप करना चाहिए। गलती करके न मानना या खुशी मनाना चोरी और सीनाजोरी करने जैसा है।
- महाविदेह की विशेषता साधना से है, भौतिक सम्पदा से नही।
- जैन समाज का धन प्रदर्शन के बदले ज्ञान मे लगे तो समाज का हित हो सकता है।
- अर्थनीति जबसे धर्म पर प्रभुता करने लगी, ससार सघर्ष का क्षेत्र बन गया।
- मनुष्य-जन्म मे करणी नही की तो थली के उस जाट की तरह पछताना पड़ेगा, जिसने चिड़ी उड़ाने के लिए हीरे फेक दिए।
- परिग्रह को अफीम समझकर गृहस्थ इसकी मर्यादा करे।
- सामग्री की अल्पता मे भी सतोषी सुखी होता है और विशाल सामग्री मे भी कामनाशील दु खी होता है।
- भय, लज्जा और स्वार्थ से किया गया विनय कल्याणकर नही होता।
- तन का सयम रोग से और वाणी का सयम कलह से बचाता है।
- वेशपूजा एव नामपूजा के बदले गुणपूजा ही समाज को श्रेय की ओर ले जा सकती है।
- बिना साधन साध्य की प्राप्ति समझना भूल है।
- सम्प्रदाय का आवेश भी मानव से कई पाप करा डालता है।
- सम्यग्ज्ञाता ही सम्यक् कर्ता हो सकता है।
- करोड़ो की सम्पदा मानव-मन मे काम-क्रोध-लोभ के ताप को नही मिटा सकती।
- हम वीतरागमार्गी तभी हो सकते है, जब राग-द्वेष को भुलाकर उपशम भाव की साधना करे।
- अज्ञान मिटाने के लिए मोह का मन्द होना आवश्यक है, जो सामायिक-साधना से ही सम्भव है।
- ज्ञानपूर्वक पुरुषार्थ करो, दु.खमुक्ति दुष्कर नही है।
- दृष्टि भोगप्रधान के बदले हितप्रधान बनायी जावे।
- ममता से नरक और समता से मोक्ष—यही शास्त्रो का सार है।
- वेशपूजा एव नाम पूजा के बदले गुणपूजा ही समाज को श्रेय की ओर ले जा सकती है।
- ज्ञानादि चतुष्टय आत्म हित और समाज रक्षण के प्रमुख उपाय है।

- आत्मिक जीवन की सुरक्षा के लिए व्रत की बाड़ आवश्यक है।
- घर मे लड़ना क्षीणता का कारण है और अपनो के सामने प्रेम से झुकना गौरव का कारण है।
- धन-सम्पदा का गर्व न कर सत्कर्म से जीवन को ऊचा उठाना ही मानव-जीवन का साफल्य है।
- जड़ को छोड़ चेतन से प्यार करना ही सुख का साधन है।
- परिग्रह पर नियन्त्रण ही शान्ति का मार्ग है।
- समाजहित के लिए कथनी के अनुसार करणी मे सहिष्णुता चाहिए।
- दया की आराधना निष्पाप जीवन जीने का अभ्यास है।
- सयम, तप व ज्ञान रूप सामायिक से राग-द्वेष की निवृत्ति होती है।
- राग को गलाने से क्लेशमुक्ति होती है।
- सम्यग्दर्शी परिग्रह को बन्धन मानता है और मिथ्यात्वी बन्दीखाने को घर मानता है। एक राग को गलाता है तो दूसरा फलाता है।
- हिसा और परिग्रह का गाढ सम्बन्ध है। परिग्रह बढ़ेगा तो हिंसा भी बढ़ेगी।
- अज्ञान-मोह-वासना से मुक्ति ही स्वतन्त्रता है।
- मानव को सुखी रहने के लिये तन, मन और इन्द्रिय पर काबू रखना चाहिए।
- राज्य, परिवार आदि मे स्थायी विजय नही, स्थायी विजय के लिए अविकारी होना आवश्यक है।
- समाज-व्यवस्था सुन्दर होनी चाहिए, जिससे सारे कार्य सुन्दर एव व्यवस्थित हो सकते है।
- ज्ञान, दर्शन आदि विशिष्ट गुणो से धर्म की प्रभावना होती है।
- आलोचना और प्रतिक्रमण एक तरह से आत्मा का स्नान है।
- मकड़ी अपना जाल फैलाती है सुरक्षा के लिए, लेकिन वह जाल हो जाता है मकड़ी को उलझाने के लिए।
- जाल बनाने वाली मकड़ी मे जाल बनाने की ताकत है, लेकिन जाल को तोड़ने की क्षमता नही है। वह अज्ञानी है। लेकिन मानव मे दोनो योग्यताएँ है।
- बीज यदि जल जाय तो उसकी उत्पादन शक्ति नष्ट हो जाती है। फिर उसको भूमि मे डालने पर और पानी की सिंचाई करने पर भी अकुर पैदा नही होता।
- कर्मबध का मूल कारण राग-द्वेष सूख गया, ढीला पड़ गया, खत्म हो गया तो कर्मवृक्ष भी सूख जायेगा। झाड़ का मूल (जड़) यदि सूख जाय तो ऊपर के पत्ते, डालियाँ, फूल, फल कितने दिन हरे भरे रहेगे ?
- राग-द्वेष कर्म का मूल है। राग-द्वेष खत्म हो गया तो बाद मे शरीर, वाणी आदि कर्मो के फल थोड़े दिन के लिए दिखाई देते है बाद मे तो सारा कर्मवंश ही खत्म हो जाता है।
- सोना-चादी, हीरे-जवाहारात के ऊपर तुम सवार रहो, लेकिन तुम्हारे ऊपर धन सवार नही हो। यदि धन तुम पर सवार हो गया तो वह तुमको नीचे डुबो देगा।
- जिस तरह सूर्य की किरणे सब जगह पहुँचती है उसी तरह ईश्वर, परमात्मा या सिद्ध का ज्ञान सब जगह पहुँचता

है। इसलिये हम कहते है कि वे अन्तर्यामी है। वे त्रिभुवन के स्वामी है।

- मूल मे धर्म का स्वरूप अहिसा, सयम और तप है।
- जिसमे दूसरे जीवो को सताया जाता है अथवा हैरान किया जाता है, कष्ट दिया जाता है वह हिसा है। उनको नही सताना, हैरान नही करना, उनका रक्षण करना, उनके जीवन को बचाना, अहिसा है।
- इन्द्रियो का निग्रह और मन की वृत्तियो पर काबू करना सयम है।
- कष्ट पड़े तो कष्ट को सहन करना, इसका नाम तप है ।
- धर्म आत्मा को दुःख से बचाने वाला है।
- कामना की पूर्ति का साधन अर्थ है और मोक्ष की पूर्ति का साधन धर्म है।
- अहिसा, सयम और तप जहॉ है, वही धर्म है।
- जो गिरती हुई आत्मा को धारण करे, बचावे, उसका नाम धर्म है।
- जो विचार और आचार आत्मा को पतन से रोके, वह धर्म है।
- क्रोध पर विजय प्राप्त करनी हो तो क्षमा से प्रतिकार करे।
- धर्म का स्वरूप है सद् आचार और सद् विचार।
- भगवान महावीर के अहिसा धर्म, सयम धर्म का पालन करने वाले गृहस्थ ऐसे होते है, जिन्हे अपने धन का त्याग करना पड़े तो सकोच नही करते।
- श्रीमतो को समाज मे काजल बन कर रहना चाहिये जो खटके नही।
- देव स्तुति कर सकते है, गुणगान कर सकते है, शासन की शोभा करनी हो तो तीर्थकरो के उत्सव मे देव आकर साढ़े बारह करोड़ सोनैया की वर्षा कर सकते है, लेकिन एक घड़ी सामायिक करने का सामर्थ्य देवो मे नही है।
- भगवान रास्ता बताते है। हमारे दिल-दिमाग मे सर्च लाइट की तरह प्रकाश करते है। उस प्रकाश को हमे खुद बढ़ाना है।
- जीवन को सुन्दर बनाने के लिये आवश्यक है कि हमारे जीवन मे सम्यग् ज्ञान की ज्योति जगे।
- जो लोग धर्म को मात्र परलोक के लिये समझ रहे है, वे इसका सही स्वरूप नही समझते।
- बिना श्रम के, बिना न्याय के, बिना नीति के जो पैसा मिलाया जाता है, उससे कोई करोड़पति व लखपति हो सकता है, लेकिन वह पैसा उस परिवार को शान्ति और समता देने वाला नही हो सकता।
- श्रावक धर्म की शिक्षा से, मानव जीवन शान्ति की ओर बढ़ सकता है।
- आज व्यापारी के भी एजेन्ट होते है, उसी तरह कच्चे त्यागियो को पुजाने के लिए भी एजेन्ट होते है।
- मानव! यदि तू अपने जीवन को अहिसक बनाये रखना चाहता है तो यह ध्यान रख कि जिससे जीवन चलाने के लिए सहयोग ले, लाभ ले, या काम ले उसको कोई पीड़ा न हो।
- भक्ष्य-अभक्ष्य एव खाद्य-अखाद्य का विचार करके अन्न ग्रहण करे। आहार शुद्ध होगा तभी विचार सुधरेगे और विचार सुधरेगे तो आचार सुधरेगा।

- अन्याय और अत्याचार का बहिष्कार आचार-शुद्धि के बल पर ही हो सकता है।
- धर्माराधक के तीन विभाग हैं—एक सम्यक् दृष्टि, दूसरा देशव्रती और तीसरा सर्वव्रती।
- सत्य की बात कहना और सत्य को मान लेना उतना कठिन नही है, जितना आचरण में कदम रखना ।
- यदि आत्मा को बलवान बनाना है तो त्याग और अच्छाई को आचरण मे लाना होगा। गलती को कबूल करना पहला धर्म है, गलती को सर्वथा नही करना दूसरा धर्म है और गलती को पूरी तरह से न करने की क्षमता न होने पर एक सीमा तक स्थूल रूप मे गलती न होने देना, यह तीसरा रूप है।
- भवसागर जिससे तरा जाये, जन्म-मरण का बन्धन काट करके आत्मा संसार से पार हो जाये, उस साधना को तीर्थ कहते है।
- कामना को वश मे नही करने वाला कदम-कदम पर चुनौती के संक्लेश मे, आकुलता-व्याकुलता के घेराव मे पड़ता है, उसका मन चचल एव असतुष्ट रहता है।
- अस्थिर मन से धर्म की, व्रतो की साधना नही होती।
- आहार पर कन्ट्रोल नही करेगे तो जीवन मे पवित्रता व दृढ़ता नही रहेगी।
- आत्मा मे बहुत बड़ी शक्ति है वह सब कुछ कर सकती है।
- जिसकी इच्छा किसी वस्तु को त्यागने की नही है, लेकिन बाध्य होकर त्याग करना पड़ रहा है, वह व्यवहार मे तो त्यागी कहा जा सकता है, लेकिन असलियत मे नही ।
- धर्म तीन तरह से हो सकता है, स्वय करना, कराना और करने वालो का अनुमोदन करना। अनुमोदन करने वाला भी लाभ उठाता है।
- कोई भी आदमी कमजोर नही है। तन से कमजोर होते हुए भी मन से बलवान हो तो वह सब कुछ कर सकता है।
- कामनाशील व्यक्ति अर्थ की साधना करता है, लेकिन मुमुक्षु धर्म की ।
- यदि समिति के रूप मे प्रवृत्ति की जाय तो वह बंध को रोकने का कारण है।
- जिनशासन कहता है कि मानव ! कोई भी प्रवृत्ति करो उससे पहले देखो-भालो और खयाल करो कि तुम्हारे चलने से, खाने से, उठने-बैठने से, सम्भाषण करने से किसी को तकलीफ तो नही।
- परिग्रह की ममता कब दूर होगी ? जब 'स्व' का अध्ययन करोगे। अपने आप को समझ लोगे और जान लोगे कि स्वर्ण, धन आदि से आत्मा की कीमत नही है।
- आत्मा की कीमत है सदाचार से, प्रामाणिकता से, सदगुणों से।
- मनुष्य का शरीर यदि सोने से लदा हुआ है, लेकिन वह सद्गुणी नही है तो निन्दनीय है।
- ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप मे ज्ञान करने के लिये, दर्शन को सुरक्षित रखने के लिये जिस विधि की जरूरत है उस विधि या उन नियमो से चलने का नाम है 'आचार'।
- धर्म-साधना के लिए किसी के पास एक पैसा भी नही है तो भी उसके पास तीन साधन है—तन, मन और पवित्र

वचन।

- एक श्रावक दूसरे श्रावक का ज्ञान और श्रद्धा से भी साधर्मी है और व्रत से भी ।
- सम्यक् दृष्टि श्रावक का फर्ज है कि यदि अपने सम्यक् दृष्टि श्रावको मे से कोई कमजोर है तो उसकी सहायता करे।
- समाज जितना जिन्दा होगा उतना ही वह कमजोर भाइयो की सहायता करेगा।
- चिन्तनशील समाज जगा हुआ कहलायेगा। ज्ञानवान चाहे अमीर हो या गरीब, अपने धर्म पर टिका रहेगा।
- परवश होकर बड़ी से बड़ी वस्तु को छोड़ना त्याग नही है और इच्छा से छोटी से छोटी वस्तु भी छोड़ना त्याग है।
- जब तक मानव के मन मे राग, रोष स्वार्थ है और ज्ञानावरणीय का पर्दा मौजूद है तब तक वह सत्य को पूरी तरह समझ नही पाता, कह नही पाता और आचरण मे नही ला पाता।
- जहाँ राग है, वहाँ रोग है, अत राग के कारणो को घटाना चाहिए। भोग-उपभोग से कभी मन तृप्त नही होता, मन को तृप्त करने का साधन है तप-त्याग।
- त्यागी वह है जो उस चीज को छोड़ता है जो उसको प्यारी होती है। मन के सच्चे भाव से रमणीक वस्तु को स्वय बिना परवशता के छोड़ना त्याग है।
- चीज पसन्द नही, शरीर के पीछे खाने की स्थिति नही, वह त्याग त्याग नही है जितना ज्यादा त्याग करोगे उतनी ज्यादा ताकत आयेगी।
- जो चीज अपने को पसद है, स्वाधीन है, उपलब्ध है उसका इच्छापूर्वक त्याग करो, इसका नाम त्याग है। ऐसा त्याग करने वाले ससार मे पूजनीय, आदरणीय बनते हैं, उनका वन्दन होता है।
- अन्न छोड़ना ही तप नही है। अन्न छोड़ने की तरह वस्त्र कम करना, इच्छा कम करना, सग्रहवृत्ति कम करना, कषायो को कम करना, यह भी तप है।
- जब तक आदमी इच्छा की बेल को काट नही देता है तब तक सुखी होने वाला नही है।
- मन का स्वभाव नीचे गिरने का है, इसलिये इसको ऊपर उठाने के लिये ज्ञान का बल लगाना पड़ेगा।
- ससार के पदार्थ तभी खीचते है जब उनके प्रति तुम्हारा राग होता है, ममता होती है।
- दुख मिटाना चाहते हो तो जिन चीजो से दु.ख होता है, उनके प्रति आसक्ति को ढीली कर दो। यह समझो कि यह चीज मेरी नही है। जो चीज आपकी होगी वह आपसे कभी अलग नही होगी । जो चीज आपसे अलग होने वाली है, वह आपकी नही है।
- दु ख और सताप का कारण यदि कोई है तो ममता है। यह कार, यह कोठी, यह बगीचा, यह कुँआ मेरे नही हैं, मेरी नेश्राय मे है। अपने विचारो मे इतना सा सशोधन भी कर ले, परिवर्तन कर ले तो कभी दु.ख का जहाज अपने पर नही गिरेगा।
- जिस वस्तु पर हमारा ममत्व है वहाँ दु ख होता है, जिस पर ममत्व नही है वहाँ पर दु:ख नही होता।

- जब कभी तुम्हारा मन साधना से चला जाय, भोग की वस्तुओ मे लग जाय, परिवार-जनो, पुत्र आदि मे चला जाय, अर्थ पर मन चला जाय तो सबसे पहले यह सोचो कि जिनको मैं अपना समझ रहा हूँ , वे मेरे नही हैं और मै भी उनका नही हूँ।
- गृहपति भाई-बहिन यह समझ ले कि परिवार की रखवाली करना हमारा काम है। यह धन-दौलत तो किसी दूसरे की है। मेरे साथ चलने वाली नही है। मन की चचलता को मिटाने का यह पहला उपाय है।
- राग को कम करना है तो आरामतलबीपना छोड़ो और आतापना लो।
- शास्त्रकार कहते है कि बाहर जाने वाले मन को यदि रोकना है तो बाहरी बातो से उसको हटाओ, ममता को समाप्त करो, विषय-कषायो से बचते रहो।
- जो आध्यात्मिक मार्ग की ओर आगे बढ़ाने के बजाय उससे पीछे मोड़ती है, उस कथा का नाम विकथा है।
- बाहरी वस्तु से जितनी-जितनी ममता होगी, राग होगा, स्नेह होगा उतना-उतना मन चचल बनता जायेगा।
- राग बन्ध का कारण है और विराग बन्ध-मोचन का साधन। इनके बीच मे एक कड़ी और होती है राग से खीचने वाली और विराग से जोड़ने वाली, जिसका नाम है 'अनुराग'। देव, गुरु और धर्म तथा शास्त्र की ओर अनुराग होता है तो राग से खिच जायेगा और विराग की ओर बढ़ेगा।
- यदि सहिष्णुता पैदा हो गई तो शारीरिक कष्ट सामने आने पर भी मन मे चचलता नही आयेगी।
- जिसने अपने शरीर को साध रखा है, मन को मनाने की क्षमता है, उसको किसी भी परिस्थिति का सामना करने मे कठिनाई नही होती।
- मन यदि सधा हुआ है तो आप जैसा मिला उसमे सन्तोष करोगे, राग-द्वेष नही होगा, मन चचल नही होगा।
- एक-एक व्यक्ति अपने एक-एक साथी को प्रेरणा देकर स्वाध्याय के लिये तैयार करे, समाज का एक-एक श्रोता ऐसा सोच कर चले तो कितना काम हो जाय?
- भय, लोभ, महिमा की चाह और राग का लुभावना आकर्षण—इन चार बातो से साधक साधना-मार्ग मे कमजोरी से पैर इधर-उधर रखने लगता है। इन समस्याओ को हल करने के लिये उसको गुरु के मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है।
- दुख दूर करने की कुजी है-कामना को दूर करना। तन की भूख मिटाना आसान है, लेकिन मन की भूख मिटाना मुश्किल है। तन की भूख कोई दूसरा भी मिटा सकता है, लेकिन मन की भूख स्वय ही मिटा सकता है।
- यदि द्वेष को जड़ से काट दिया और राग की जड़ को हटा दिया तो ससार मे रहता हुआ भी जीव सुखी हो जायेगा।
- यदि कामनाओ को वश मे कर लोगे तो दुख सदा के लिये नष्ट हुआ समझो।
- त्यागी को चाहिये कि जिस वस्तु को छोड़ दिया उसे वापस लेने की इच्छा भी नही करे।
- धर्म का मूल सिद्धान्त है अपनी कमजोरियो पर विजय प्राप्त करना।
- आत्मा के भीतर अनन्त शक्ति और सामर्थ्य है, अनन्त ज्योति है। पहचानिये। इसको पहचानने का माध्यम है

स्वाध्याय। इसलिये कहा गया है कि बिना स्वाध्याय के ज्ञान नही होता। ज्ञान की ज्योति जगाने के लिये, आत्मा की ज्योति जगाने के लिये, स्वाध्याय एक अच्छा माध्यम है।

- जैन धर्म किसी जाति-विशेष के बन्धन मे बधा हुआ नही है। उसमे ब्राह्मण है. क्षत्रिय है, वैश्य है, शूद्र है और किसान भी है तो व्यवसायी भी है।
- हमारा आहार बिगड़ गया तो स्वास्थ्य भी बिगड़ गया।
- यदि जीवन मे धर्म को व्याप्त करना चाहते हो तो आहार शुद्धि पहली चीज है।
- यदि आदमी को अपने विकारो पर काबू पाना है तो पहली शर्त है कि वह आहार प्रमाण से युक्त करे दूसरी यह कि आहार दोषरहित हो।
- समाज के बहुत से भाई अर्थ की कमजोरी से और कुछ ज्ञान की कमजोरी से दोलायमान होते है, कुछ समाज के सहयोग की कमजोरी के कारण दोलायमान होते है। इधर उधर होने के ये तीन मुख्य कारण है।
- सच्चा सन्त प्यार की नजर से देखता है और सामने वाले को पानी पानी कर देता है।
- मन के बाहर जाने का सबसे बडा कारण राग है, इसलिये इसे कम करो। राग कम करने का उपाय है - बाहरी पदार्थो को अपना समझना छोड़ दो।
- अर्थ की गुलामी से छुटकारा पाने के लिये कामना को कम करना पड़ेगा।
- आज जैन समाज मे दिखावा इतना बढ़ गया है कि देखकर विचार आता है। इससे जैन धर्म अपना नाम ऊँचा नही कर सकता।
- बच्चे का सुख, घर वालो का सुख, शरीर का सुख अथवा धन का सुख—ये सब सुख किससे मिलते है? पुण्य से। और दुःख किससे मिलता है? पाप से। फिर इस प्रकार की स्थिति मे दुःख मिलने पर किसी अन्य पर रोष करना, किसी दूसरे को दुश्मन समझना, विरोधी अथवा अपना अनिष्ट करने वाला मानना उचित नही।
- ससार मे जो दृश्यमान पदार्थ है, वे टिकने वाले नही है। यह सुनिश्चित है, जो उत्पन्न हुआ, उसका विनाश सुनिश्चित है,जो बनता है वह एक दिन अवश्य बिगड़ता है। ये इमारते बनी है, कोठियॉ बनी है, बगले बने है,किले बने है,वे सब कभी न कभी नष्ट होगे, यह अवश्यभावी है। यह वस्तु का स्वभाव है।
- अगर किसी की वाणी मे ऊपर से कटुता है, तो वह इतनी बुरी नही है, जितनी कि भीतर मे भरी कटुता। ऊपर वाला बोल देगा और समाधान पाकर शान्त भी हो जाएगा, पर भीतर की कटुता बड़ी खतरनाक होती है।
- जिसमे श्रद्धा नही है, वह ज्ञान का अधिकारी नही बन सकेगा।
- ज्ञान के साथ जो तपस्या है वह ऐसी बड़ी-बड़ी शक्तियो को प्रकट कर देती है, जिससे मानव का मन हिल जाता है।
- आग की चिनगारी मनो भर भूसे को जलाने के लिए काफी है, वैसे ही तपस्या की चिनगारी कर्मो को काटने के लिए काफी है।
- मन-शुद्धि और चित्त-शुद्धि करेगे तो आत्मा मे बल एव ताकत आयेगी और कल्याण के भागी बन सकेगे।
- जीवन चलाना महत्त्वपूर्ण बात नही है लेकिन महत्त्वपूर्ण बात है – जीवन बनाना।

- बन्धन ससार है और बन्धन को काटने की प्रक्रिया चारित्र है।
- ज्ञान अपने भीतर भी उजाला करता है और दूसरो के भीतर भी उजाला करता है।
- यदि विषय-कषाय नही घटते है तो कहना चाहिए कि अब तक हमारे जीवन में चारित्र नही है।
- चारित्र उस क्रिया का नाम है जो सचित कर्मों को काटने का काम करती है।
- चारित्रवान कभी भी सामने वाले की गलती नही निकालता।
- चरित्र नही है तो चारित्र नही। चरित्र आने के बाद एक लाइन और बढ़ाते है, 'आ' की मात्रा लगाते हैं, तब चारित्र आता है।
- नियम या प्रतिज्ञा करने मे गरीब-अमीर का भेद नही है।
- चारित्रवान मानव नमक है, जो सारे ससार रूपी सब्जी का जायका बदल देते है।
- जब कभी भी सोते, जागते, उठते, बैठते हम वीतराग का स्मरण करेगे, ध्यान करेगे, चिन्तन करेगे, वह एक-एक क्षण परम कल्याणकारी होगा, जन-जन के ताप त्रय को दूर करने वाला होगा।
- आस्रव-त्याग के साथ जो तप की आराधना होगी वह दोगुनी ताकत वाली होगी।
- चारित्र के साथ, आस्रव-त्याग के साथ तपस्या की महिमा है।
- सद्‌गृहस्थो का कर्त्तव्य प्रतिदिन तप करना है।
- महावीर का जो मुक्ति-मार्ग है, वह त्याग या वीतरागता-प्रधान है।
- यदि महावीर के बताये माफिक ऊनोदरी आदि तप करने लगे तो समझ लीजिए कि लोगो की आधी बीमारी कम हो जाए।
- यदि ८ दिन मे या १५ दिन मे एक बार व्रत होता रहे तो आदमी को बीमारी जल्दी नही होती और डाक्टर की शरण मे जाने की जरूरत नही पड़ती। कही मेहमानदारी मे जाओ तो भूख से ज्यादा न खाओ।
- छोटे-बड़े गुरुजनों का, साधु-साध्वियो का, साधर्मी-बन्धुओ का, श्रावक-श्राविकाओ का, तपस्वी भाई-बहनो का विनय करना तपस्या है।
- पर्युषण और व्रत के दिनो मे जितनी सादगी रखोगे, परिग्रह का बोझ जितना कम रखोगे, उतना ही अच्छा रहेगा। इससे मन मे शान्ति रहेगी, परिवार मे शान्ति रहेगी।
- वेदनीय कर्म को मिटाना है, निराबाध सुख पाना है तो इसका साधन है 'तप'।
- तप की साधना करेगे तो आपकी वेदना का जोर कम हो जाएगा।
- बिना सयम के जो तप है वह वास्तविक तप नही है।
- संयम के साथ तप ज्ञान-तप है और असयम के साथ तप अज्ञान-तप है।
- तप की पूरी ताकत मिलानी है तो वाणी का सयम करके जो तप की साधना की जाएगी उसकी ताकत चार गुणा, दस गुणा ही नही शत गुणा होगी।
- संयम जितना कम होगा और असयम जितना ज्यादा होगा उतने कर्म के बन्धन भी ज्यादा होगे।

- असंयम को ज्यादा बढ़ाना ही सयम को बन्द रखने का बड़ा कारण है।
- जहाँ सयम है, वहाँ सवर है और असयम है, वहाँ आस्रव है।
- जहाँ कही भी इन्द्रियो व मन की राग वृत्ति का पोषण है, वहाँ धर्म नही है।
- मेरा अनुभवी मन कहता है कि बाहरी प्रदर्शनो से जैन धर्म दुनिया के सामने अपना गौरव नही बढा सकता, जैन धर्म तो आडम्बरविहीन रहने की बात कहता है।
- माताएँ तपस्या के साथ सयम करे, वेश-भूषा और लेन-देन मे सयम करे तो हजारो लाखो जीवो की हिसा बच सकती है।
- एक तरफ जानवरो को छुड़ाना और दूसरी तरफ हिसा से जो चीजे बनती है, उनको इस्तेमाल करना, कितनी विसगति है ?
- गुणवानो ने जीवन बनाने का जो मार्ग-दर्शन दिया है उसको पकड़ ले, यह उनका बहुत बड़ा गुणगान है।
- महावीर ने मार्ग बताया कि अपना खयाल रखकर, अपनी चोटी पहले पकड़कर, खुद सुधरते हुए ससार का सुधार करो।
- यदि दूसरो को देखकर तालियाँ बजाते रहेगे और घर मे करने-कराने को कुछ भी नही है तो वास्तव मे समाज का कोई गौरव नही होगा।
- सद्‌गृहस्थ वह है जो सत्पात्र को रोज दान देवे।
- देव-भक्ति, गुरु-सेवा, स्वाध्याय, सयम, तप और दान - ये गृहस्थ के षट् कर्म बताये गये है।
- आपका दान जनता की नजर मे जल्दी आ सकता है, लेकिन साधु का दान देखने मे नही आता।
- नाम के भूखे महानुभाव ज्यादा है और काम करने के कम।
- यदि दान का उचित उपयोग करे तो समाज मे देने वालो की कमी नही है।
- आप द्रव्य का त्याग करेगे तो ममता घटेगी। दूसरी बात समाज मे त्याग की परिपाटी कायम रहेगी। तीसरी बात त्याग करने से समाज दुर्बल और पराश्रित नही रहेगा, अपने पैरो पर खड़ा रह सकेगा।
- जैन धर्म जैसा ऊँचा धर्म पाकर आप पिछड़े रह गये, तो इससे ज्यादा कोई आश्चर्य की बात नही होगी।
- द्रव्य-दया से ही जैन धर्म ऊँचा नही उठेगा, द्रव्य-दया के साथ-साथ भाव-दया भी करे।
- जैसे नमक के बिना भोजन अच्छा नही लगता है, उसी तरह द्रव्य-दया के साथ भाव-दया भी आवश्यक है।
- आप चाहे तप कीजिये, दया कीजिये, शीलव्रत धारण कीजिये, दान दीजिये, जो कुछ भी कीजिये निष्कपट भाव से, सरल मन से कीजिये। ऐसा नही हो कि मन मे कुछ और है और बाहर कुछ और।
- सही आराधना करनी है तो तन से, मन से, जीवन से कपट को हटाकर साधना के मार्ग मे आगे आना चाहिए।
- मन मे गाँठ बाँधकर रखोगे तो साथ मे काम करने वालो की गाड़ी आगे नही चलेगी, गाड़ी अटक जाएगी।
- जिस प्रकार स्वादु फल वाले वृक्ष पर पक्षी मँडराते है, इसी प्रकार प्रकाम रस-भोजी को विषय घेरे रहते हैं।
- कर्णप्रिय गीत सुनना, सुन्दर रूप और चलचित्र देखना, तेल-फुलेल लगाना आदि कामनाएँ, लहरे उसी मे उत्पन्न

होगी जो सरस और उत्तेजक पदार्थों का सेवन करता है।

- हमारे भीतर जो चेतना का नाग है वह सोया पड़ा है, उसको जगाने के लिए भगवान की वाणी का मधुर स्वर सुनाना पड़ेगा।
- जब तक विषय-कषाय नही हटेगे, तब तक जीवन का मैलापन नही हटेगा।
- जिस तरह मनुष्य को अपनी ही जूती काट खाती है, उसी तरह अपना ही मन जीव को दण्ड देता है।
- यदि अपने को, अपनी वाणी को, अपनी काया को आत्मा के अभिमुख कर दिया, आत्म-भाव मे लगा दिया तो वह मन अदड का कारण बनेगा।
- सामायिक की साधना करोगे तो तुम्हारा मन अदड बन जाएगा, वचन भी अदड बन जाएगा और काया भी अदड बन जाएगी।
- दण्ड से अदण्ड मे लाने वाली क्रिया का नाम सामायिक है।
- धर्म-स्थान मे बैठेगे, महापुरुषो से सम्पर्क करेगे तो दिल-दिमाग आर्त्त और रौद्र की ओर नही जाएगा।
- मोक्ष की ओर आगे बढ़ना है तो अहकार, मान अथवा घमड को चकनाचूर कीजिए।
- विकार से रहित होकर तपस्या करे तो कर्मों की बहुत बड़ी निर्जरा होती है।
- यदि समय थोड़ा है तो थोड़े समय मे कर्म काटने का साधन है, 'तपस्या'।
- आत्म-शुद्धि के लिए गुरु के सामने जाकर अपनी आलोचना और प्रायश्चित्त करना चाहिए।
- हर सामाजिक और धार्मिक कार्यकर्त्ता को समझना चाहिए कि सामाजिक और धार्मिक रीति-रिवाजो पर नियन्त्रण रखना जरूरी है।
- सच्चे साधक अपनी गलती को मानने मे और उसको गुरुजनो के सामने प्रकट करने मे और प्रायश्चित लेने मे सकोच नही करते।
- आत्मा की शुद्धि के सूत्र हैं - निरीक्षण, परीक्षण और शिक्षण।
- हर एक को अपना जीवन शुद्ध करने के लिए अपनी आलोचना खुद करनी है, बारीकी से देखना है।
- काल की गति विचित्र है। वह न बच्चा देखता है न जवान, न बूढ़ा और न तरुणी, एकदम आकर धर दबोचता है।
- दुःख-मुक्ति का रास्ता यह है कि हित-मार्ग को जानो, पहचानो, पकड़ो और तदनुकूल आचरण करो।
- धन के बीच अनासक्त रहने वाला चिन्तित नही होगा, किन्तु जो माया का नशा कर लेता है, उसको सदा चिन्ताएँ घेरे रहेंगी।
- यदि इन्कम के पीछे पाँच या दस टका भार हल्का करने की मन मे आवे और आसक्ति तथा राग कम हो तो मै कहता हूँ कि आसक्ति कम होते ही आपका रोग और शोक भी कम हो जाएगा।
- धन बढ़ने के साथ-साथ चिन्ता बढ़ने से रोग भी अधिक बढ़ता है, इसलिए आप लोग यह समझे कि जो धन मेरे पास है वह मेरा नही है, मैं तो एक ट्रस्टी हूँ, संरक्षक हूँ।

- सामायिक, पौषध, सवर आदि निज के कर्म काटने के साधन है।
- दान के माध्यम से समाज के योग्य क्षेत्र में संवितरण किया जाता है।
- दान करने वाले का पैसे पर ममत्व कम रहेगा, तो शोक-सताप कम होगा, बीमारी कम होगी।
- वचन की महिमा वक्ता की योग्यता पर आधारित होती है।
- मन से जिनके विकार निकल गये वे श्रमण है, सुमन है।
- शिष्य गुरु के सामने दिल खोलकर बात कर सकता है। वह शिष्य नही जो गुरु से खुले मन बात नही करे।
- उत्तम पुरुष प्रणिपात के बाद क्रोध नही रखते।
- जघन्य आदमी दीर्घद्वेषी होता है, जब तक वह एक-एक गाली के बदले मे दस गाली नही दे दे, तब तक शान्त नही होता।
- निश्छल भाव से प्रभु के साथ सम्बन्ध जोड़कर आगे बढ़ने का प्रयास करोगे तो अवश्य कल्याण के भागी बनोगे।
- सर्वार्थसिद्ध विमान के देवता सम्पदा और वैभव के कारण सुखी नही है, वरन् वे सुखी है पौद्गलिक कामना कम होने के कारण। वे उपशान्तभाव मे रहने वाले है। उनमे क्रोध, मान, माया, लोभ अति मन्द दशा मे है।
- तन और वाणी से तो क्रिया होती रहे और मन कही अन्यत्र भटकता रहे, उसे द्रव्य-क्रिया समझिए।
- उजाला भय मिटाता है और अधेरा भय फैलाता है। इसी प्रकार ज्ञान से भय मिटता है और अज्ञान से भय बढ़ता है।
- व्रत रखते हुए भी प्रमाद नही छोड़ा तो पाप का मूल छूटेगा नही।
- बधन वाला जब तक बधनमुक्त को लक्ष्य मे नही लेगा, बन्धनमुक्त नही हो सकेगा।
- जो मूक भावदाता होते है, वे चुपचाप शान्त एव त्यागमय जीवन से, शान्त मुखमुद्रा से, अपनी चर्या से, बिना बोले आगन्तुक व्यक्ति को शान्ति का रस देते है।
- पहले-पहल विचार-शुद्धि होनी चाहिए और उसके बाद दूसरे नम्बर पर आचार-शुद्धि होनी चाहिए।
- कर्म को काटना है तो उसका रास्ता है - श्रुतधर्म और चारित्रधर्म को अपनाना।
- श्रुतधर्म से विचारशुद्धि होती है और आचारधर्म से चारित्रशुद्धि ।
- वाणी का सयम, तन का सयम, मन का सयम ही हमारी आत्मशुद्धि मे सहायक होता है।
- जहॉ भौतिक लाभ होता है, वहॉ सगठन आसानी से हो जाता है। लेकिन धार्मिक सगठन मुश्किल से होता है। वैसा सगठन करने मे देर लगती है।
- मिथ्या विचार और मिथ्या आचार बन्ध के हेतु हैं।
- हमारी मनस्थिति मे, राग और द्वेष के रूप मे जो चिन्तन चलता है, परिणमन होता है, वह विकार है और वही बन्ध का कारण है।
- तनयोग से, मनोयोग से और वाणीयोग से सामायिक की साधना की जाए तो अनंत-अनत कर्म समाप्त हो सकते

है।

- आर्त्त-रौद्रध्यान को छोड़कर जो धर्मध्यान मे लीन होता है और एक मुहूर्त का समय सामायिक या धर्मध्यान के चिन्तन मे लगाता है, वह कल्याण को प्राप्त होता है।
- सामायिक-व्रत एक दर्पण है। यदि धर्म-ध्यान की ओर अग्रसर होना है तो यह जरूरी आलम्बन है।
- मन को मजबूत करने के लिये सकल्प आवश्यक है। बिना सकल्प के करणी नही होगी और बिना करणी के कर्म नही कटेगे।
- उचित एव हितकर मानकर भी मन उस पर स्थिर नही रहता, यह साधना का बड़ा विघ्न है।
- धर्म प्रेमी श्रावक अपने गॉव मे बालक-बालिकाओ को धर्म तथा निर्व्यसनता की ओर प्रेरित करे तो बडे लाभ का कारण है।
- मानव जब तक मिथ्या विचार और मिथ्या आचार मे रहता है तब तक अपनी आदत मे , विश्वास मे गलत धारणाएँ रखता है। धर्म के बारे मे गलत मानता है, गलत सोचता है और गलत बोलता है।
- सम्यक् विचार और आचार बन्धन काटने के साधन है।
- चाय एक तरह का व्यसन है। यह खून को सुखाने वाली, नीद को घटाने वाली और भूख को कम करने वाली है।
- प्रभु की प्रार्थना साधना का ऐसा अग है जो किसी भी साधक के लिए कष्ट सेव्य नही है । प्रत्येक साधक, जिसके हृदय मे परमात्मा के प्रति गहरा अनुराग हो, प्रार्थना कर सकता है।
- वीतरागता प्राप्त कर लेने पर सम्पूर्ण आकुलताजनित सन्ताप आत्मानन्द के सागर में विलीन हो जाता है। वीतरागता एक ऐसा अद्भुत यन्त्र है कि उसमे समस्त दु ख, सुख के रूप मे ढल जाते है।
- वीतरागता का साधक अपने शरीर के प्रति भी ममत्ववान् नही रह जाता। उस स्थिति मे अपने शरीर का दाह उसे ऐसा ही प्रतीत होता है, मानो कोई झोपड़ी जल रही है।
- देहातीत दशा प्राप्त हो जाने पर शरीर का दाह भी आत्मा को सन्ताप नही पहुँचा सकता।
- भगवद्-भक्ति अथवा प्रार्थना की पृष्ठभूमि मे आन्तरिक आध्यात्मिक विकास ही परिलक्षित होना चाहिए , न कि भौतिक साधनो का विकास। भगवद्-भक्ति का मुख्य उद्देश्य आत्मशुद्धि है।
- विवेक-दीप प्रज्वलित होने से मन का अन्धकार दूर होगा, भावालोक प्रस्फुटित होगा और तब दु खो का स्वत प्रक्षय हो जायेगा।
- मन मे ज्ञानालोक का उदय होने पर सारी विचारधारा पलट जायेगी और जिसे मै आज दु ख मान रहा हूँ उसी को सुख समझने लगूँगा।
- यदि अज्ञान दूर हो जाय और विवेक का प्रदीप प्रज्वलित हो उठे तो दु.ख नदारद हो जायेगा।
- जो साधक प्रार्थना के रहस्य को समझकर आत्मिक-शान्ति के लिए प्रार्थना करता है, उसकी समस्त आधि-व्याधियाँ दूर हो जाती हैं, चित्त की आकुलता और व्याकुलता नष्ट हो जाती है और वह परमपद का अधिकारी बन जाता है।

- प्रभात के समय अवश्य वीतराग का ध्यान करो, चिन्तन करो, स्मरण करो और वीतराग की प्रार्थना करके बल प्राप्त करो।
- धर्म को बाधा पहुँचा कर अर्थ और काम का सेवन करना जीवन की पगुता है और पगु जीवन अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर नही हो सकता।
- आत्मिक-शान्ति प्राप्त करने के लिए, मन को शान्त और स्वस्थ रखने के लिए, प्रार्थना के लिए, स्वाध्याय और सत्सग के लिए एकान्ततामय धर्मस्थान ही उपयुक्त हो सकता है।
- आत्मोत्थान के लिए ज्ञान और चारित्र की अनिवार्य आवश्यकता होती है।
- यह मन बहुत बार इधर-उधर विषय-भोगो की तरफ भटकता रहता है, मगर प्रार्थना मन को स्थिर करके आत्मा को ताकत देती है।
- ज्यो-ज्यो राग और द्वेष की आकुलता कम होती जाती है और ज्ञान का आलोक फैलता जाता है, त्यो-त्यो अन्तकरण मे शान्ति का विकास होता जाता है।
- यदि हम परमात्मा के सत्स्वरुप को लक्ष्य करके प्रार्थना करेगे तो हमारा निशाना खाली नही जाएगा, हमारा प्रयत्न विफल नही होगा। हमारी आत्मा के विकार सदा के लिए दूर हो जाएँगे।
- जिसके पास आत्मबल है, उसके पास परमात्मबल है। जिसके आत्मबल का दिवाला निकल चुका है, उसे परमात्मबल भी प्राप्त नही होता।
- जिसे आत्मबल प्राप्त है, वह सदा शान्त, अडोल और अकम्प रहता हैं, ससार की कोई पौद्गलिक वस्तु या कोई घटना उसके चित्त की समाधि को भग नही कर सकती।
- भक्ति की भावना से और ज्ञान-गगा के निर्मल नीर से प्रार्थना आत्मा की मलिनता को दूर करने के लिए है। किन्तु यदि शल्य रह गया है, पर्दा रह गया है, कही किसी प्रकार का कपटभाव बना रह गया है, तो वह आत्मा पूर्ण रूप से शुद्ध होने मे समर्थ नही होगी।
- जैसे समुद्र मे डाला हुआ ककर दूसरे ही क्षण अदृश्य हो जाता है, उसी प्रकार जब परमात्मा की स्तुति, चिन्तन और ध्यान मे मन विलीन हो जाता है और जब ससार के समस्त जजालो से पृथक् होकर तन्मय बन जाता है तो समस्त शोक, सन्ताप एव आधिव्याधियॉ गायब हो जाती हैं।
- जब आत्मा की ज्योति चमक उठती है और आन्तरिक तिमिर दूर हो जाता है, तब बाहर की जितनी भी आधि-व्याधि और उपाधिया प्रतीत होती हैं और जीवन मे उनके अनुभव की जो कटुता होती है, वह सब नष्ट हो जाती है।
- आत्मा का सजातीय द्रव्य परमात्मा है। अतएव जब विचारशील मानव ससार के सुरम्य से सुरम्य पदार्थो मे और सुन्दर एव मूल्यवान वैभव मे शान्ति खोजते-खोजते निराश हो जाता है, तब उनसे विमुख होकर निथरते-निथरते पानी की तरह परमात्म-स्वभाव मे लीन होता है। वही उसे शान्ति और विश्रान्ति मिलती है।
- जिनका चित्त स्वच्छ नही है वे परमात्म सूर्य के तेज को ग्रहण नही कर सकते।
- दिल का दर्पण जब तक स्वच्छ नहीं होता, स्थिर नही होता या निरावरण नही होता तब तक शाब्दिक गुनगुनाहट

होने पर भी आत्मा मे पारमात्मिक तेज प्रस्फुटित नही होता।

- भौतिकज्ञान की प्रगति के प्रतीक बमो और राकेटो के चमत्कार को देखकर दुनिया स्तब्ध हो जाती है परन्तु दिल रूपी दर्पण मे अगर ताकत पैदा हो जाय तो वह इससे भी बड़ा चमत्कार दिखा सकती है।
- वीतरागस्वरूप के साथ एकाकार होने के साधन हैं—प्रार्थना, चिन्तन, ध्यान, स्वाध्याय, सत्सग, सयम आदि।
- आत्मा के समस्त गुण आत्मा मे उसी प्रकार एकाकार हैं, जिस प्रकार मिश्री की मधुरता, शुक्लता और कठोरता आदि गुण उसमे एक रूप हैं। कितना ही शक्तिशाली यत्र क्यो न हो, वह मिश्री की मधुरता, शुक्लता आदि का पृथक्करण नही कर सकता। इसी प्रकार आत्मा के गुण आत्मा से भिन्न नही हो सकते और परस्पर मे भी भिन्न नही हो सकते।
- पारिवारिक शान्ति वही कायम रहती है, जहाँ परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने सुख को गौण और दूसरे सदस्यो के सुख को मुख्य मानकर व्यवहार करता है।
- दया देवी की एक बड़ी विशेषता है। वह ज्ञान सिह पर आसीन है और तप का त्रिशूल ग्रहण किये हुए है, फिर भी उसके मस्तक पर विनय का मुकुट सुशोभित रहता है।
- अहिसा देवी ही मरते को बचाने वाली और पालन करने वाली है। उसी की बदौलत दुखियो के दुख दूर होते हैं।
- मनुष्य कुछ परिमित प्राणधारियो को ही शरण दे सकता है। मगर अहिसा भगवती की शीतल छाया तो सभी को प्राप्त होती है। राजा को, रक को, कीट - पतग को, मनुष्य को, देव को, इन्द्र को और महेन्द्र को, सभी के लिए वह शरणदायिनी है।
- सुख और दुख का उद्भव अपने ही पुण्य और पाप से होता है। अपने पुण्य-पाप के अभाव मे कोई किसी को सुखी या दुखी नही बना सकता।
- अपने जीवन मे तुम जितना-जितना अहिसा का पालन करोगे, आराधन करोगे, उतना ही उतना तुम्हारे दुख का, शोक का, रोग का, आधि, व्याधि और उपाधि का नाश होता जायेगा।
- साधक जब तक इन्द्रियो को वशीभूत नही कर लेता, तब तक उसका हृदय शात नही हो सकता। इन्द्रियो की चचलता मानसिक शाति मे अन्तराय रूप है। अतएव चित्त की शाति एव स्वच्छता के लिए जितेन्द्रियता अनिवार्य रूप से अपेक्षित है।
- सच्चा साधक सकट के समय भी गड़बड़ाता नही है, पथविचलित नही होता है। हर समय उसका विवेक जागृत रहता है।
- सुखी बनने का एक ही उपाय है—कामनाओ को जीतना। अगर कामनाओ को जीत लिया है तो समझ ले कि तूने समस्त दुःखो पर विजय प्राप्त कर ली है।
- जब तक मन मे दुर्बलता रहती है तभी तक मनुष्य सांसारिक पदार्थों की ओर खिचता है। दुर्बलता दूर होते ही खिंचाव भी दूर हो जाता है और चंचलता भी दूर हो जाती है।
- मानसिक चचलता के प्रधान कारण दो हैं—लोभ और अज्ञान। बाह्य पदार्थों के प्रति अनुराग की जो व्यक्त तथा

अव्यक्त वृत्ति है, वही लोभ कहलाती है। वह वृत्ति चित्त को निश्चल नही होने देती। दूसरा कारण अज्ञान है। आज देवी-देवताओ की जो उपासना चल रही है, उसका मूल कारण अज्ञान है, नासमझी है।

- मिथ्यात्व का पोषण समस्त पापो मे बड़ा पाप है और समस्त पापो का जनक है।
- अगर बच्चे-बच्चियो को सिखाना है कि वे अपनी माता की सेवा करे तो पहले स्वय अपने घर मे जो बड़ी बूढी माताए हैं, उनका सन्मान, आज्ञा-पालन और विनय करना चाहिए। उनके प्रति ऐसा नम्रतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए कि उन्हे सतोष उपजे। इस सद्-व्यवहार को देख-देख कर ही आगामी पीढ़ी इसी प्रकार के सस्कार प्राप्त कर लेगी और गृहस्थी नरक के बदले स्वर्ग के समान बनी रहेगी।
- जहॉ मोह का आधिक्य होगा वहॉ शोक का भी अतिरेक होगा और जहा भोग की प्रबलता होगी, वहा रोग का साम्राज्य होगा।
- लोभवृत्ति मनुष्य की विचारशक्ति को कुठित कर देती है, नष्ट कर देती है।
- जिस प्रकार दर्शनशक्ति से शून्य ऑखे बड़ी होकर भी व्यर्थ है , ठीक उसी प्रकार धर्म के बिना कुबेर का भण्डार, भीम का बल, विज्ञानियो का विज्ञान, काम का सौन्दर्य, वसुन्धरा का धन व रत्नाकर का रत्न सब व्यर्थ है।
- ससारी जीव ने अपनी तूली (चित्तवृत्ति) को कभी धन से, कभी तन से और कभी अन्य सासारिक साधनो से रगड़ते-रगड़ते अल्प सत्त्व बना लिया है। अब उसे होश आया है और वह चाहता है कि तूली की शेष शक्ति भी कही इसी प्रकार बेकार न चली जाए। अगर वह शेष शक्ति का सावधानी के साथ सदुपयोग करे तो उसे पश्चात्ताप करके बैठे रहने का कोई कारण नही है, उसी बची-खुची शक्ति से वह तेज को प्रस्फुटित कर सकता है, क्रमश उसे बढा सकता है और पूर्ण तेजोमय भी बन सकता है। वह पिछली तमाम हानि को भी पूरी कर सकता है।
- परिवार मे शिक्षा देने के प्रसग से समूह के बीच किसी की व्यक्तिगत न्यूनता नही कहना चाहिए। मुखिया को निद्राजित् और भयजित् होना आवश्यक है, प्रात एव सन्ध्या असमय मे निद्रा लेने से वह परिवार को सम्भाल नही सकेगा और ज्ञान-श्रवण व स्वाध्याय नही होगा।
- गगन मे सूर्योदय अन्तर मे ज्ञानोदय की प्रेरणा करता है।
- मोह और अज्ञान के धूम्र एव मेघावरण को दूर करने से अन्तर मे ज्योति प्रकट हो सकती है।
- राग को गलाने से क्लेश-मुक्ति होती है।
- सम्यग्दर्शी परिग्रह को बन्धन मानता और मिथ्यात्वी बन्दी खाने को घर मानता है। एक राग को गलाता है तो दूसरा फलाता है।
- सूक्ष्म शरीर के त्याग के बाद चेतन द्रष्टा मात्र है।
- हिसा और परिग्रह छोड़ने से ही विश्वशान्ति हो सकती है।
- भूमि पर रहने वाला मानव पदार्थो पर अधिकार जमाये बिना रहना सीखे तो वैर एवं संघर्ष का नाम न रहे।
- साधना का क्रम विनय से ज्ञान, दर्शन, चारित्र और मोक्ष की प्राप्ति है।
- धर्म को साधना का रूप दिया जाय, न कि रिवाज के रूप मे रहे।

- पाप की कालिमा से कलुषित जीव को जो पवित्र करे उसे पुण्य कहते है।
- मन, वचन एवं काय योग की शुभ प्रवृत्ति से शुभ कर्म का बन्ध होता है। अत शुभयोग को पुण्यास्त्रव और उससे होने वाले शुभ कर्म के सचय को पुण्य बन्ध कहा है।
- सम्यक् ज्ञान के बिना व्यावहारिक शिक्षण का कोई मूल्य नही।
- सम्यक् ज्ञान ऑख मे तारा-सा है।
- अहिंसा से अमीर-गरीब मानव मात्र सुखी हो सकता है।
- देव, गुरु, धर्म और सत्शास्त्र लोकोत्तर आवश्यक है।
- सयम उभय लोक हितकारी है।
- सब जीवो को आत्मवत् देखना, सम्यग्ज्ञान का लक्षण है।
- पूर्ण कला प्रगट करने के लिए ज्ञान-क्रिया की साधना आवश्यक है।
- सम्यग्दर्शन सम्पन्न त्याग-तप ही भव-बधनहर्ता है।
- हिसा और परिग्रह का गाढ़ सम्बन्ध है, परिग्रह बढ़ेगा तो हिसा भी बढ़ेगी।
- सच्चा धर्म वह है जो रागादि दोष को उत्पन्न ही न होने दे।
- गुरु द्वारा सारणा, वारणा, धारणा और शिष्य द्वारा ग्रहणा, धारणा एव आसेवना चलती रहे तो साधना प्रगति कर सकती है।
- परिग्रह और आरम्भ को घटाना ही जैन का लक्षण है।
- ज्ञान जघन्य होकर भी दर्शन व चारित्र की उत्कृष्ट साधना से सिद्धिदाता हो सकता है।
- बालक और रोगी की तरह दुर्बल आत्मा को सबल करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता है।
- जग-जन के दु ख और सताप का कारण पापाचरण (पच पाप) है।
- अहिसादि पाच व्रत पाप-त्याग और सुख-शाति के हेतु है।
- अज्ञान एव मोहवासना से मुक्ति ही स्वतत्रता है।
- नेता को भी चाहिये कि वह अपने को सर्वेसर्वा मानकर सामान्य जनो की उपेक्षा नही करे। बल्कि सफल नेतागिरी तो वह है जिसमे सभी के विचारो का यथायोग्य सम्मान हो।
- ससार मे जीवो के तीन वर्ग है—मित्र, शत्रु और उदासीन। दयाधर्म के सिद्धान्त मे पापिओ को भी प्रेम से तथा अपकारियो को भी उपकार से जीतने की आज्ञा है।
- सत्यवादियों की देव भी सहायता किया करते है। इसलिए सत्य दूसरा भगवान है। मनुष्य के लिए सत्य वदनीय और देव तथा असुरो के लिए पूजनीय है।
- जिस प्रकार तूली को माचिस की पेटी पर रगड़ने से ज्योति प्रकट होती है उसी तरह सद्गुरु या ज्ञानी की सगति से और प्रयास करने पर आत्मा के अन्दर छुपी हुई ज्ञान की ज्योति प्रकट होती है।
- ज्ञान मे और ज्ञान की साधना मे यह शक्ति है कि उससे असभव काम भी सभव हो सकता है।

- शब्द मे, अक्षर मे ऐसी शक्ति है कि यदि उसके साथ इच्छा-शक्ति को जोड़ दिया जाए तो शब्द वह काम कर सकता है जो बड़े-बड़े वैज्ञानिक यत्र भी नही कर सकते।
- साधक जब ज्ञान का प्रकाश पा लेता है तब वह भौतिकता के सारे लुभावने आकर्षणो से दूर हट जाता है।
- ज्ञान का बल न होने से मानव इच्छा पर नियत्रण नही कर पाता और रात-दिन आकुलता का अनुभव करता है। ज्ञान की बागडोर यदि हाथ लग जाए तो चचल मन तुरग को वश मे रखा जा सकता है। इसके लिए सत्सगति और सुशिक्षा उपयोगी साधन है।
- व्यवसायियो का यदि दिलदिमाग शुद्ध होगा तो वे करोड़ो लोगो को अच्छे मार्ग मे लगाने के भी निमित्त बन सकते है। यदि व्यवसायियो का दिल-दिमाग अशुद्ध है तो करोड़ो लोगो का दिल-दिमाग बिगड़ सकता है।
- आप परिग्रह के प्रति ममत्व के भीतरी बन्धन को ढीला करेगे, तभी परिग्रह को घटा सकेगे, अपरिग्रही बन सकेगे, अन्यथा नही।
- आपको शासन-प्रभावना के कार्य करने है तो अनेक रास्ते है, जिनसे आप सच्चे - अर्थ मे शासन की प्रभावना कर सकते है। व्यर्थ ही द्रव्य लुटाकर थोथा आडम्बर दिखाना, कोई बुद्धिमत्ता नही है।
- अर्थ की गुलामी से छुटकारा पाने के लिये कामना को कम करना पडेगा।
- समाज मे यदि स्वाध्याय को बढ़ावा दिया जाए तो इससे ज्ञान-वृद्धि होगी और ज्ञान से वैर, ईर्ष्या, द्वेष आदि का शमन होगा, झगड़े टटे नही रहेगे।
- उपदेश देने वाले तो बहुत मिल जायेगे, पर जीवन मे उतारने से ही सच्चे मायने मे जीवन-निर्माण हो सकेगा और इसके लिए स्वाध्याय परमावश्यक है। धर्म वही अच्छा है जिसमे आत्मोत्थान के साथ समाज-सेवा की भावना हो। मानव-सेवा से ही धर्म को आगे बढ़ाया जा सकता है ।
- स्वाध्याय से ज्ञान की उपासना बढ़ेगी और ज्ञान की उपासना बढ़ेगी तो समाज मे शान्ति होगी, राष्ट्र मे शान्ति होगी, विश्व मे शान्ति होगी।
- यदि जीवन बनाना है, जीवन का निर्माण करना है तो प्रत्येक को स्वाध्याय करना पड़ेगा। स्वाध्याय के बिना ज्ञान की ज्योति नही जगेगी।
- स्वाध्याय शुद्धि का मार्ग भी बताता है, और स्वय शोधक तत्त्व (निर्जरा) भी है।
- सत्य शब्दो मे नही कहा जाता, वह अनुभव जन्य है।
- दुख का मूल कर्म और कर्म के बीज राग-द्वेष हैं। दुख मिटाने के लिए राग-द्वेष मिटाना आवश्यक है, जो ज्ञानपूर्वक अभ्यास से ही हो सकता है।
- प्रत्येक श्रावक को यह सोचना चाहिए कि वह दिन धन्य होगा, जिस दिन अपने परिग्रह मे से थोड़ा दान शुभ कार्यो के लिए निकालूँगा।
- मानव जितना-जितना ममता मे उलझकर कार्य करेगा, वह उसके लिए भवरजाल मे फसाने वाला होगा।
- आप समझते है कि देवता रक्षा करेगे और देव यह समझते हैं कि धर्म रक्षा करेगा। देव, देवेन्द्र भी काम पड़ने पर धर्म की शरण ग्रहण करते है।

- धर्म की शरण ग्रहण करना है तो अन्तर्मन से दृढ सकल्प के साथ यह समझना होगा कि कषायोदय का प्रसग उपस्थित होने पर यदि मैं किञ्चित् भी दोलायमान हो गया तो क्रोध, मान, माया एव लोभ मेरे आत्म गुणो की हानि कर मुझे घोर रसातल में धकेल देगे।
- जब तक अज्ञान का जोर है, पाप की वशवृद्धि होती रहेगी। पाप घटाने के लिए अज्ञान घटाना आवश्यक है।
- आज का पापी कल तपश्चर्या से पुण्यात्मा व धर्मात्मा बन सकता है।

हस्ती उवाच

(आचार्यप्रवर के प्रवचनों एवं दैनन्दिनी से संकलित विचार)

अनेकान्तवाद/स्याद्वाद

- जिस प्रकार सत्य के साक्षात्कार मे हमारी अहिंसा स्वार्थ-सघर्षो को सुलझाती हुई आगे बढ़ती है, उसी प्रकार स्याद्वाद जगत् के वैचारिक सघर्षों की अनोखी सुलझन प्रस्तुत करता है। आचार मे अहिसा और विचार मे स्याद्वाद जैन दर्शन की सर्वोपरि मौलिकता है। स्याद्वाद को दूसरे शब्दो मे वाणी और विचार की अहिसा भी कहा जा सकता है।
- किसी भी वस्तु या तत्त्व के सत्य स्वरूप को समझने के लिए हमे अनेकान्त सिद्धान्त का आश्रय लेना होगा। एक ही वस्तु या तत्त्व को विभिन्न दृष्टिकोणो से देखा जा सकता है और इसलिए उसमे विभिन्न पक्ष भी उपलब्ध होते है। इन सारे पक्षो या दृष्टिकोणो को विभेद की दृष्टि से नही, अपितु समन्वय की दृष्टि से समझकर वस्तु की यथार्थ सत्यता का दर्शन करना ही इस सिद्धान्त की गहराई मे जाना है।
- किसी वस्तु विशेष के एक ही पक्ष या दृष्टिकोण को उसका सर्वांग स्वरूप समझकर उसे सत्य के नाम से पुकारना मिथ्यावाद या दुराग्रह का कारण बन जाता है। विभिन्न पक्षो या दृष्टिकोणो के प्रकाश मे जब तक एक वस्तु का स्पष्ट विश्लेषण न कर लिया जाए तब तक यह नही कहा जा सकता कि हमने उस वस्तु का सर्वाङ्ग स्वरूप समझ लिया है। अत किसी वस्तु को विभिन्न दृष्टिकोणो के आधार पर देखने, समझने व वर्णित करने वाले विज्ञान का नाम ही स्याद्वाद है। सिद्धान्त रूप मे इसे अनेकान्तवाद या अपेक्षावाद भी कहा गया है।
- एक ही व्यक्ति अपने अलग-अलग रिश्तो के कारण पिता, पुत्र, काका, भतीजा, मामा और भानजा आदि हो सकता है, किन्तु वह अपने पुत्र की दृष्टि से पिता है तो पिता की दृष्टि से पुत्र। ऐसे ही अन्य सबधो के व्यावहारिक उदाहरण आप अपने चारो ओर देखते है। इन रिश्तो की तरह ही एक व्यक्ति मे विभिन्न गुणो का विकास भी होता है। अत यही दृष्टि वस्तु के स्वरूप मे लागू होती है कि वह भी एक साथ सत्, असत्, नश्वर या अनश्वर, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष, क्रियाशील-अक्रियाशील, नित्य-अनित्य गुणो वाली हो सकती है।
- आज ससारी मानव ताज्जुब करेगे कि जहाँ उत्पाद है, वहाँ नाश कैसा और जहाँ नाश है वहाँ उत्पाद कैसा, ध्रौव्य कैसा? लेकिन जैन तत्त्व-ज्ञान की यह बड़ी खूबी है कि जैन तत्त्वज्ञाता हर पदार्थ को दो दृष्टियो से देखते हैं—द्रव्यदृष्टि से और पर्यायदृष्टि से। द्रव्यदृष्टि से प्रत्येक द्रव्य ध्रुव नित्य है। पर्याय की दृष्टि से उसमे उत्पाद और व्यय भी है।
- उत्पाद और व्यय दोनो एक साथ कैसे ? यह भी अतिशय ज्ञानियो के ज्ञान का चमत्कार है। उन्होने कहा कि पहली पर्याय के क्षय के साथ ही साथ नई पर्याय की उत्पत्ति का प्रारम्भ होता है। इस स्थिति मे पूर्व पर्याय का विनाश और उसके विनाश के बाद होने वाला उत्पाद दोनो एक रूप मे चलने वाले है।

अनर्थ-दण्ड

- बिना प्रयोजन के हिसादि पाप का सेवन अनर्थ-दण्ड है। अनर्थ-दण्ड से अणुव्रतो की मर्यादा सुरक्षित नही रहती। अनर्थ-दण्ड छोड़ने वाला, अर्थ-दण्ड की भी कुछ सीमा करता है। द्रव्य, क्षेत्र और काल से वह अर्थदण्ड का त्याग कर सकता है।
- अनर्थ-दण्ड के प्रमुख कारण है १ मोह २. अज्ञान तथा ३ प्रमाद ।
- प्रमाद से आचरित सभी कर्म अनर्थ-दण्ड है। अपध्यान से भी अनर्थ-दण्ड होता है। आवश्यक निद्रा अर्थ-दण्ड है और अनावश्यक अनर्थ-दण्ड। यह प्रमादकृत अनर्थ है।
- आज अनर्थ-दण्ड का प्रसार जोरो पर है। जीव-हिसा के साधन नित नए-नए बनते जा रहे है। खटमल और मच्छरो को मारने की दवा, मछली पकड़ने के काटे, चूहे-बिल्ली को मारने की गोली और न जाने क्या-क्या हिसावर्द्धिनी वस्तुओ को बनाने में मानव मस्तिष्क उलझा हुआ है। ये सारे अनर्थ-दण्ड है, जिनसे बचने मे ही जीव का कल्याण है।
- विवेक से काम लिया जाय तो कौतूहल, शृगार, सजावट और दिलबहलाव के लिए की जाने वाली निरर्थक हिंसा से मनुष्य सहज ही बच सकता है। ऐसा करके वह अनेक अनर्थो से बचेगा और राष्ट्र का हित करने मे भी अपना योगदान कर सकेगा।

अशुभ, शुभ और शुद्ध

- हमको अशुभ से शुभ मे आना है और शुभ मे आकर भी विराम नही करना है, टिकना नही है, शुभ से सतुष्ट नही होना है। शुभ क्रिया से शुद्ध की ओर आगे बढ़ना है। शुद्ध क्रिया से आगे बढकर अक्रिय हो जाना है।
- ससार के सामान्य प्राणी अशुभ क्रिया मे सदा रचे पचे होते है। अशुभ मे रहने के लिये, अशुभ क्रिया मे पड़ने के लिये उनको कहने की आवश्यकता नही पड़ती।
- आप सामायिक करने बैठते है, स्वाध्याय और ध्यान करने बैठते है उस समय यदि शुभ विचारो से चितन करेगे तो बहुत अच्छा रहेगा। अशुभ से शुभ की ओर बढ़ेगे। मनुष्य जन्म मिला है तो शुभ और शुद्ध क्रिया करने के लिये मिला है। अशुभ क्रिया के अधिकारी अनन्त जीव है। शुभ क्रिया के अधिकारी अनन्त जीव नही होते, असख्यात जीव होते है, लेकिन शुद्ध क्रिया के करने वाले सख्यात जीव ही होते है।

अहंकार

- साधना मे सबसे खतरनाक अहंकार है। विद्या पढ़ते-पढ़ते यदि अहकार आ गया कि मै पण्डित हूँ, औरो से अधिक विद्वान् हूँ या तपस्या करते-करते अहकार आ गया कि इतनी मडली मे तपस्या करने वाला मै ही एक हूँ और सब कम तपस्वी है। इस प्रकार यदि विद्वान् को विद्या का, साधना करने वाले को साधना का और दानी को दान का अहंकार हो गया तो यह सभव नही है कि उसकी उन्नति होगी या वह आगे बढ़ सकेगा।

अहिंसा/हिंसा

- भगवान् महावीर का अहिसा का उपदेश ऐसा है कि उसमे उन्होने मनुष्य, पशु-पक्षी आदि का कोई भेद नही रखा। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे फरमा दिया-"सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता न हतव्वा.."

"सव्वे पाणा पियाउया, सुहसाया दुक्ख पडिकूला।"
सव्वे जीवा वि इच्छति, जीविउं न मरिज्जिउं।
तम्हा पाणिवह घोर, निग्गथा वज्जयति ण॥

जावति लोए पाणा, तसा अदुव थावरा।
ते जाणमजाण वा, न हणे णो वि घाइए॥

सय तिवायए पाणे, अदुवन्नेहिं घायए।
हणत वाणुजाणाइ, वेर वड्डइ अप्पणो॥

अर्थात्- किसी प्राणी की हिसा नही करनी चाहिये। यही धर्म शुद्ध, शाश्वत और नित्य है। सभी प्राणी दु ख से दूर रहना और जीना चाहते है। कोई प्राणी मरना नही चाहता, अत किसी प्राणी की हिसा करना घोरातिघोर महापाप है। इसीलिये ससार मे जितने भी त्रस अथवा स्थावर प्राणी है, उनमे से किसी भी प्राणी की जानकर अथवा अनजान मे न स्वय हिसा करे और न दूसरे से उनकी हिसा करवाए। जो व्यक्ति स्वय किसी प्राणी की हिसा करता है अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किसी प्राणी की हिसा करवाता है या किसी भी प्राणी की हिसा करने वाले व्यक्ति का अनुमोदन करता है, वह प्राणि-वध के साथ अपने अनन्तानुबन्धी वैर का बन्ध करता है।

- माताओ मे जीवदया का ज्यादा प्रेम होता है। अगर उनके सामने जीवदया के नाम पर कोई पानडी जाएगी तो वे जरूर उसमे कुछ न कुछ लिखायेगी। वे पढ़ाई-लिखाई का उतना महत्त्व नही जानती,जीवदया को जानती है। पर उनको इसके साथ इस पर विचार करना होगा कि रेशमी, मखमल के कपड़े,महाआरम्भ समारम्भ से निर्मित वस्तुओ से तैयार किये गये वस्त्र,हिसामूलक साज-सज्जा एव शृगार वगैरह के प्रसाधन जो है, वे त्याज्य है। उनको त्याज्य समझ कर वे इन पदार्थो को और ऐसे वस्त्रो को घर मे नही बसायेगी,न इनको आने देगी और न बढ़ावा देगी। इस तरह से अगर वे करेगी, तो यह सक्रिय रूप से अहिसा का पालन कहलायेगा।
- केवल किसी को जान से मारना ही हिसा नही है। किसी पर बल प्रयोग करना भी हिसा का एक रूप है। किसी को परितापना देना,दु:ख देना,धोखाधड़ी करना आदि भी हिसा के रूप है। व्यवहार मे किसी के साथ लेन-देन कर लिया,सौदा तय हो गया,जमीन-जायदाद अथवा किसी भी वस्तु का, कालान्तर मे उनके भाव बढ़े और सौदे से इन्कार कर दिया। अथवा सामने वाले ने आप पर विश्वास किया, हजारो के माल का आर्डर दिया। लालच मे आकर जैसा बताया वैसा माल नही भेजा, उसमे भेल-सभेल कर दिया, हल्का माल मिला दिया। नये माल के साथ कुछ पुराना माल भी निकालना है, यह सोचकर खराब माल भी उसमे मिलाकर भेज दिया। ऊन में, कपास मे, खाद्यान्नो मे या किसी भी वस्तु मे इस तरह की धोखाधड़ी करना आदि हिसा के नानाविध रूप हैं।
- द्रव्य-हिसा की अपेक्षा भाव-हिसा अधिक भयानक, दारुण दु खदायक और आतकपूर्ण होती है।
- एक व्यक्ति अपने शत्रु को, अपने विरोधी को मारने के लिए, जलाने के लिए ज्वालाए उगलता हुआ आग मे प्रतप्त लोहे का लाल-लाल गोला उठाता है, तो पहले स्वय उसके ही हाथ जलेगे। अपने हाथ जलाने के पश्चात्

ही वह अपने शत्रु पर उस आग के गोले का प्रहार कर सकेगा। शत्रु सावधान हुआ तो पैतरा पलट कर उस आग के गोले से बच भी सकता है। क्रोध, आदि कषाय आग के गोले के समान है। जिस प्रकार आग का गोला सर्वप्रथम उस उठाने वाले को ही जलाएगा, उसी प्रकार क्रोध, आदि कषाय सर्वप्रथम क्रोध, मान, माया, लोभ करने वाले व्यक्ति की ही हिसा करेगे। क्रोध करने वाला व्यक्ति अपनी हिंसा करने के पश्चात् ही अन्य की हिंसा कर सकेगा।

- ससार की चौरासी लाख जीव-योनियो मे से मनुष्य योनि की, मानव-जीवन की यही तो एक सबसे बड़ी विशेषता है कि अन्य सब जीवो की अपेक्षा मानव ने जो विशिष्ट ज्ञान प्राप्त किया है, उसके उपयोग द्वारा वह अपनी, अपने आत्म-गुणो की और पर की अर्थात् अन्य प्राणियो की हिंसा करने वाले क्रोध, मान, माया, लोभ आदि सर्वस्वापहारी शत्रुओ से अपनी रक्षा कर सकता है। मानवजन्म प्राप्त करने की सार्थकता इसी मे है कि हम चिन्तन द्वारा अपने ज्ञानगुण का उपयोग कर अपनी और पर की हिसा से अपने आप को बचा ले।
- अहिसा का सकारात्मक पक्ष सेवा, दया और करुणा मे है। इस क्षेत्र मे साधु अपनी मर्यादा मे रहते हुए समाज को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहे है। विकलागो का जीवन भी स्वावलम्बी एव सुखी बने, इस दिशा मे भी समाज के कर्णधारो को कोई ठोस कदम उठाने चाहिए।

अहिंसा व्रत

- अहिसा को निर्मल रखने के लिए साधक को पूर्ण सावधान होना आवश्यक है। गृहस्थ को पशुओ की रक्षा एव बाल-बच्चो की शिक्षा हेतु कभी बाँधने एव ताड़ना-तर्जना करने की भी जरूरत होती है। पर सद्भावना और हितबुद्धि के कारण वह हिसा का कारण नही होता।
- जहाँ-जहाँ कषाय का वेग हो वहाँ आत्मा परवश हो जाता है। वैसी स्थिति मे स्व-पर के हित का ध्यान नही रहता। अत उसका वध-बधन हिसा का कारण होने से अहिसा को मलिन करने वाला है। कई लोग क्रोध मे इतने बेसुध हो जाते है कि बच्चो के हाथ-पैर तोड़ देते है, गुस्से मे बच्चे डूब मरते या भाग छूटते है। अत अहिसक को इस ओर बड़ा ध्यान रखना है। सर्वप्रथम तो उसे बिना मारे ही काम चला लेना चाहिए। मारपीट से बच्चो की आदत भी बिगड़ जाती है, फिर वे बात की धाक नही मानते, रोज के पीटने से उनमे भय भी नही रहता। अत सद्गृहस्थ को अहिसा-व्रत की रक्षा के लिए इन दोषो से बचना लाभकारी है।
- अहिंसा की निर्मलता के लिए वध एव बध की तरह तीन दोष अन्य है- छविच्छेए, अइभारे, भत्तपाणवुच्छेए। पुत्र-पुत्री के कर्णवेध आदि किए जाते है। रोग निवारण के लिए भी अग काटे जाते है और शल्य क्रिया की जाती है। इनमे दुर्भाव नही है।
- पशुओ को जल्दी चलाने या क्रोध के वश कील गड़ा देना, चमड़ा काट देना, जलती सलाई से निशान कर देना अहिंसा भाव के विपरीत है। यह हिंसा का कारण है। पहले के तीन दोष क्रोध एव मोहवश लगते है, जबकि पीछे के दो दोष लोभवश होते हैं। स्टेशन से घर आते समय सामान के लिए मजदूर की आवश्यकता होती है। आप पैसा बचाने के लिए किसी बच्चे को मजदूरी देते है, उस समय बालक की शक्ति का बिना विचार किये उसके सिर पर पेटी और गाठ रख देना, तागे मे चार सवारी से ज्यादा बैठना, लोभ से गाड़ी मे ४ बोरी अधिक भरना व्रत का अतिभार दोष है। मुनीम से अधिक टाइम तक काम लेना, उसके स्वास्थ्य और बल का खयाल न

रखना दोष है। पशु और आश्रित दास-दासियो को खाना खाने के समय भी लोभवश नही छोड़ना और उनको खाना खाते हुए उठा देना, अहिंसा व्रत का दोष है। अहिसाव्रती के मन मे अपने आश्रित पशु और दास-दासी के लिए भी आत्मवत् दृष्टि होनी चाहिए। इन दोषो से बचने वाला अहिसा की शुद्ध साधना कर सकता है।

■ आचरण/चारित्र

- 'चर-गतिभक्षणयो' धातु से आ उपसर्ग एव घञ् प्रत्यय लगाने पर 'आचार' शब्द बनता है। 'आ' का अर्थ मर्यादा है तथा 'चर' से तात्पर्य चलना है। " आचर्यते इति आचार" यानी मर्यादापूर्वक चलना ही आचार है। दूसरे शब्दो मे व्यवहार और विचार की दृष्टि से मन, वचन और काया द्वारा मर्यादापूर्वक चलने को आचार कहते हैं।
- चारित्र का अर्थ करते हुए शास्त्रकार ने कहा– 'चयस्य रिक्तीकरण चारित्रम्' सचित हुए कर्मो के मूल को जो क्रिया मन, वाणी और काया के योग से खत्म करती है, काटती है, खाली करती है, उसका नाम है चारित्र । सीधी भाषा मे यो कहा जाय कि जीव को जड़ से अलग करना चारित्र है।
- जैसे भौतिक मार्ग पर चलने के लिए दो पैर बराबर चाहिए, उसी तरह मोक्षमार्ग मे, साधना-मार्ग मे गति करने के लिए भी दो पैर चाहिए। वे दो पैर है—ज्ञान और क्रिया।
- पहला नम्बर ज्ञान का है और दूसरा नम्बर क्रिया का है।
- भगवान महावीर ने कहा कि देखो मानव ! यदि तुमको रास्ता तय करना है तो ज्ञान के साथ क्रिया भी करो। क्रिया किये बिना मुक्ति नही होगी, लेकिन क्रिया करो ज्ञान के साथ, अर्थात् समझकर करो।
- स्वाध्याय आपको अधेरे मे से लाकर प्रकाश मे खड़ा कर देगा, लेकिन प्रकाश मे मार्ग तय किया जाएगा स्वय आपके द्वारा। आगे बढ़ने का वह काम केवल स्वाध्याय से नही होगा। उस काम के लिए चारित्र का पालन करना होगा। इसीलिए श्रुतधर्म के पश्चात् चारित्रधर्म बताया गया है।
- भूलना नही चाहिये कि जीवन एक अभिन्न-अविच्छेद्य इकाई है, जिसे धार्मिक और लौकिक अथवा पारमार्थिक और व्यावहारिक खण्डो मे सर्वथा विभक्त नही किया जा सकता। ज्ञानी का व्यवहार परमार्थ के प्रतिकूल नही होता और परमार्थ भी व्यवहार का उच्छेदक नही होता। अतएव साधक को, चाहे वह गृहत्यागी हो या गृहस्थ हो, अपने जीवन को अखण्ड तत्त्व मानकर ही जीवन के पहलुओ के उत्कर्ष मे तत्पर रहना चाहिये। जैन आचार-विधान का यही निचोड़ है।
- आचारविहीन ज्ञान भारभूत है। उससे कोई लाभ नही होता। सर्प को सामने आता जान कर भी जो उससे बचने का प्रयत्न नही करता है, उसका जानना किस काम का ? ज्ञानी पुरुषो का कथन तो यह है कि जिस ज्ञान के फलस्वरूप आचरण न बन सके, वह ज्ञान वास्तव मे ज्ञान नही है। सच्चा ज्ञान वही है जो आचरण को उत्पन्न कर सके। निष्फल ज्ञान वस्तुत. अज्ञान की कोटि मे ही गिनने योग्य है।
- जब तक जीवन मे चारित्र नही है, जब तक जीवन मे सयम नही है, जब तक जीवन मे आचरण नही है, तब तक यह कहना चाहिए कि हमारा वह ज्ञान, हमारी समझ और हमारे भीतर की विशेष प्रकार की जो कला है, वह कला हमारे लिए भारभूत है, बोझ रूप है।
- ऐसा देखने मे आया है कि कुछ श्रावक भगवती के भाँगे बड़ी तत्परता के साथ गिना देते है। गांगेय अणगार के

भागे और भगवती सूत्र के भागे पढ़ते समय इस प्रकार तल्लीन हो जाते है, उसमे इस प्रकार रमण कर जाते है कि पता ही नही चलता कि उनकी एक सामायिक आई है या दो आई है। लेकिन भागे पढ़ने वाले, उपयोग लगाने वालों के सामने जब चाँदी आती है, पैसा सामने आता है तब एक नम्बर के बजाय दो नम्बर भी कर जाते है। शास्त्र का ज्ञान नही करना चाहिए, भगवती नही पढ़ना चाहिए, यह कहने का मेरा उद्देश्य नही है। मेरा मतलब यह है कि ज्ञान के साथ जीवन मे चारित्र नही, आचरण नही, व्यवहार-शुद्धि नही है तो वह ज्ञान ऊँचा उठाने के बजाय नीचे गिराने वाला बन जाता है। वह ज्ञान जीवन ज्योति जगाने के बजाय उसको खुद को भी और धर्म को भी बदनामी की ओर ले जाने वाला हो जाता है।

- यदि विषय-कषाय नही घटते है तो कहना चाहिए कि अब तक हमारे जीवन मे चारित्र नही आया है।
- हमेशा याद रखिए कि आदमी की पूजा ज्ञान से नही हुई है, आदमी की पूजा अधिकार और स्थिति से नही हुई है, उसकी पूजा उसके रूप और वैभव से नही हुई है । उसकी पूजा यदि हुई है तो उसके चारित्र से हुई है।
- रावण के पास ज्ञान था, ऋद्धि थी, सम्पदा थी, लेकिन उसमे चारित्र नही था, इसलिए आज कोई उसका नाम रखने को तैयार नही है।
- प्राणी सदा कुछ न कुछ करता रहता है, कभी निष्क्रिय नही रहता। किन्तु उसको यह ज्ञान नही होता कि कौन सा कर्म करणीय है और कौन सा अकरणीय। बहुत बार वह ऐसे कर्म करता है कि अपने आपको उलझा लेता, फसा लेता है। अत ज्ञानियो ने कहा—विवेक करो, कुकर्म से अपना सुकर्म की ओर मोड़ बदलो।
- चीटी रात-दिन चक्कर काटती है फिर भी कोई मूल्य नही। उसके लिए कोई लक्ष्य नही है। चोर भी कर्म करता है, रात को गली मे वह भी घूमता और सरक्षक दल भी घूमता है, पर एक का भ्रमण कुकर्म रूप है जबकि दूसरे का सुकर्म रूप। एक भयभीत रहता है तो दूसरा निर्भय आवाज मारता है। इसीलिए ज्ञानी कहते है कुकर्म से सुकर्म मे आओ तो साधना करते अकर्म हो जाओगे।

आजीविका

- ससार मे दो तरह से पेट भरा जाता है, एक तो आर्य कर्म से, जिसमे हिसा कम हो, कूड़-कपट, छल-छिद्र, धोखा आदि के बिना ही काम करके अपना गुजारा चला ले। दूसरा वह जिसमे धोखा देकर, झूठ बोलकर, गुमराह करके, सरकारी टैक्स की चोरी करके पैसा मिलाया जावे। इन दोनो मे फर्क है। गृहस्थी के लिए धधा करना मना नही है, लेकिन छल कर्म करके महा आरम्भ का धधा करना मना है। अच्छा गृहस्थ अपने खाने-पीने मे और अन्य खर्च मे भी कमी करके गुजर करना मंजूर करेगा, लेकिन महापाप का धधा नही करेगा।
- मच्छियों का धंधा करने वाले व्यक्ति किन्ही सेठजी के पास आकर कहे कि पचास हजार रुपये दे दो, कोई धधा करना है। पांच रुपया सैकड़ा ब्याज दूँगा, ऊँचे से ऊँचा ब्याज दूँगा तो सेठजी उसको रुपया ब्याज पर देगे या नहीं ? सेठजी प्रत्यक्ष में पाप नही करेगे, मच्छियो का व्यापार नही करेगे, बन्दरगाह पर बकरो को नही पहुचायेगे, किन्तु ऋण लेने वाला यदि उस रकम से हिसा का कार्य करता है तो ऋण देने वाला भी पाप का भागी बनता है, यह जानने की जरूरत है।

आत्म-गुणों की उपेक्षा

- भूमि, कोठी, जायदाद और धन-सम्पत्ति, ये सब आपके निज के नही है। आपका निज तो वस्तुत ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूपी आत्मगुण है। आप निज को भूलकर, निज के आत्म-गुण को भूलकर, जो आपका अनिष्ट करने वाला है, उसको अपना (निज) समझ रहे हो। इस भूमि, जायदाद आदि से ज्यादा सोच आपको ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का होना चाहिए, क्योकि ये आपके निज-गुण है। एक अल्प बुद्धि वाला व्यक्ति भी जिसे अपने कुटुम्ब का ध्यान हो, खतरे की स्थिति पैदा हो जाए तो जिस जगह वह वर्षो से रह रहा है, उस स्थान को छोड़ने मे देर नही करेगा। पर बड़े आश्चर्य और दु ख की बात है कि आप निज घर को छोड़कर सर्वस्व नाशक शत्रु के घर मे बैठे कराल काल की चक्की मे पिसे जा रहे हो। फिर भी महाविनाश से बचने के लिए आपको कोई चिन्ता नही है।

आत्म-शक्ति

- अपने भीतर रहने वाला जो चेतना का बीज है उसमे तो अनन्त शक्ति है। उससे अमित दिव्य शक्तियॉ प्रकट हो सकती है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि सुयोग्य वातावरण मे उस बीज को अकुरित करें, उसे प्रस्फुटित करे।
- कारण छोटा होता है, परन्तु उससे निर्मित होने वाला कार्य विशाल होता है, भव्य होता है। आपने देखा होगा कि वटवृक्ष का बीज कितना छोटा-सा होता है, किन्तु उसका विस्तार बहुत बड़ा हो जाता है, बीज के आकार से कोटि गुणा अधिक। इसके निर्माण का कारण वह छोटा सा बीज होता है। यदि बीज न हो तो मूल वृक्ष किससे पैदा हो ? उसकी पत्तियॉ, शाखाऍ, प्रशाखाऍ, फूल, फल इत्यादि किससे उत्पन्न हो ? यदि बीज ठीक स्थिति मे है और उसे अनुकूल सयोग प्राप्त होता रहता है, तो समय पाकर वह इतना विस्तार करता है कि दर्शक उसके विस्तार को देखकर चकित हो जाते है।
- मकान के मलबे के नीचे दबे हुए बीज को समय-समय पर यदि वर्षा का पानी मिलता रहे, तब भी वह दबा हुआ बीज अपना विकास नही कर पाएगा। क्या उस बीज मे विकास करने की योग्यता नही है ? योग्यता अवश्य है। जब तक उस बीज पर से पत्थर व मलबा न हटा लिया जाए तब तक वह अकुरित नही होगा। हमारे चेतन रूपी बीज पर भी गणनातीत गिरीन्द्रो से भी अधिक मलबे और कीचड़ का भार पड़ा हुआ है, जिसमे दबे हुए हमारे आत्म-देव मे चेतना की योग्यता होते हुए भी उसका आगे विकास नही हो पाता।
- आत्मा का प्रकाश बड़ा है या बिजली का ? बिजली के प्रकाश को खोजकर किसने निकाला ? अमुक-अमुक चीज़ो को जुटाने से विद्युत पैदा हो सकती है, इसे खोजकर निकाला है मनुष्य ने। बिजली का कनेक्शन नही होने पर भी बैटरी का खटका दबाते ही प्रकाश हो गया। बैटरी है, तो गाड़ी मे बैठे हुए भी रेडियो के गीत सुन लोगे। मानव के मस्तिष्क ने ये सब चीज़े खोज निकाली। आत्मा इतनी तेजस्वी है कि उसने छोटे-छोटे जड़ पदार्थो मे छिपी हुई शक्ति को प्रकट किया। तो शक्ति प्रकट करने वाला बड़ा या जिसने शक्ति दिखाई वह बड़ा ? बिजली से अनन्तगुणी शक्ति हमारी आत्मा मे है।
- यदि आत्मा को बलवान बनाना है तो कुछ त्याग को और अच्छाई को आचरण मे लाना होगा।

आत्म-स्वरूप

- क्या वेश्या और क्या कसाई, सभी मूलत अन्तर मे निर्मल ज्योति स्वरूप होते है। सबमे समान चैतन्य धन विद्यमान है। परन्तु आत्मा की वह अन्तर-ज्योति और चेतना दबी हुई और बुझी हुई रहती है। पर जब एक प्रकार की रगड़ उसमे उत्पन्न होती है तो वह आत्मा जागृत हो जाती है। मूल स्वभाव को देखा जाए तो कोई भी आत्मा कसाई, वेश्या या लम्पट नही होती। वह शुद्ध, बुद्ध और अनन्त आत्मिक गुणो से समृद्ध है, निष्कलक है। हीरक कण मूल मे उज्ज्वल ही होता है फिर भी उस पर धूल जम जाती है, उसमे गन्दगी आ जाती है। इसी प्रकार शुद्ध चिन्मय आत्मा मे जो अशुद्धि आ गई है, वह भी बाहरी है, पर-सयोग से है, पुद्गल के निमित्त से आई हुई है।

आदर्श एव यथार्थ

- विश्व की एकता का नारा लगाने वाले व्यक्ति कभी मिलेगे तो कहेगे—जातीयता मे कुछ नही पड़ा है, प्रान्तीयता मे कुछ नही है, अब राष्ट्रीयता भी कुछ नही है। अब तो अन्तर्राष्ट्रीय की कल्पना करके उसका खाका खीचेगे। उनकी बात सुनकर जनता विस्मित रह जाती है। लेकिन उनके घर पर जाकर आप दृश्य देखिये, भाई-भतीजो और बच्चो से इस प्रकार लड़ते है कि आप देख कर दग रह जायेगे। यह दीवार तुमने इधर क्यो बना ली? खेत की रेखा टेढ़ी-मेढ़ी क्यो खीच ली? इसके लिए आपस मे जूती पैजार तक हो जाता है, मारपीट हो जाती है और न्यायालयो के द्वार खटखटाये जाते है। आदर्शवाद का यह कितना क्रूर मजाक है? जरा सोचे।
- आदर्शवाद और यथार्थवाद दो मुख्यवाद है। आदर्शवाद सुनने मे, देखने मे अच्छा लगता है। जिस समय आदर्शवादी लोग बात करते है, उस समय कहते है—"हम तो सबकी मानते है, सबकी सुनते है, हमारे लिए सब मत-मतान्तर बराबर है। हमे न तो किसी से द्वेष है, और न किसी से प्यार।" ऐसी बाते करते है, तब वे बाते सुन्दर लगती है। लेकिन उनका असली जीवन टटोले तो पता चलेगा कि अपने ही कुटुम्ब के लोगो तथा समाज व साधर्मियो के साथ उनका व्यवहार कैसा है? जो व्यक्ति अपने समीप के लोगो से ही समान व्यवहार नही कर सकते, वे व्यक्ति देश, देशान्तर और जातियो के भेद मिटाने की कामना करे, तो यह प्रवचना ही है।

आरम्भ-परिग्रह

- अर्थनीति मनुष्य को लोभी, कपटी व अशान्त बनाती है। मानव मानव को लड़ाती है, जबकि धर्मनीति प्राणिमात्र मे बंधुत्व भाव उत्पन्न करती है। क्रोध की आग मे प्रेम का सिंचन करती है।
- दो कारणो से जीव केवली के प्रवचन को भी नही सुन सकता। गौतम ने जिज्ञासा भरा प्रश्न किया-"हे भगवन्! कौनसे दो कारण है, जो उत्तम धर्म श्रवण मे बाधक है?" प्रभु ने कहा-"आरम्भ और परिग्रह—इन दोनो मे जो जीव उलझा है, वह इन्हे अच्छी तरह समझकर जब तक इन उलझनो की बेड़ी को काटकर बाहर नही निकल जाता, तब तक केवली प्ररूपित धर्म को नही सुन सकता।"
- परिग्रह, आरम्भ को छोड़कर नही रहता। आरम्भ से ही परिग्रह बढ़ता है। परिग्रह अपने दोस्त को बढ़ाने का भी बड़ा ध्यान रखता है। वह जितनी चिन्ता आरम्भ को बढ़ाने की करता है, उसकी शताश भी सवर-निर्जरा को बढ़ाने की नही करता।

- आरम्भ और परिग्रह की मित्रता है, दोनो का आर्थिक गठजोड़ है, दोनो ऐसे भयकर रोग है, जो हमारी चेतना-शक्ति को विकास का मौका नही देते।
- धन की भूख आसानी से जाती नही, वृद्ध हो जाने पर भी तृष्णा मानव का पिण्ड नही छोड़ती और वह दिन-रात उसके पीछे भागता रहता है। ससार का प्राणी आरम्भ-परिग्रह मे फसा रहता हे और यही चाहता है कि दिन और बड़ा होने लगे तो वह चार घटे और काम कर ले। तृष्णावश सदा उसकी यही मंशा रहती है। यदि वह आरम्भ, परिग्रह के परिमाण को हल्का करने के लिए तैयार नही होगा तो आत्म-कल्याण कैसे होगा? इसलिए बुद्धिमान आदमी वस्तुस्थिति को सोचे, समझे, विचारे और आत्मा को हल्का करने के लिए साधना करे।
- पापाचरण के मुख्य दो कारण है। कुछ पाप, परिग्रह के लिए और कुछ आरम्भ के लिए किये जाते है। कुछ पापो मे परिग्रह प्रेरक बनता है। परिग्रह आरम्भ का वर्द्धक है। अगर परिग्रह अल्प है और उसके प्रति आसक्ति अल्प है तो उसके लिये आरम्भ भी अल्प होगा। इसके विपरीत यदि परिग्रह बढ़ा और अमर्याद हो गया तो आरम्भ को भी बढ़ा देगा—वह आरम्भ महारम्भ हो जाएगा।

आसक्ति-अनासक्ति

- विशिष्ट बुद्धि का धनी मानव रात-दिन यह देखता है कि विषय-कषायो के कारण उसकी बड़ी हानि हो रही है, अपूरणीय क्षति हो रही है, तदुपरात भी क्रोध, मान, माया, लोभ आदि विषय-कषायो मे उत्तरोत्तर फसता जा रहा है। अपने आप को फासने वाले स्थानो से बचे रहने का प्रयास करने के बजाय उल्टे उनमे फसते जाने से बढ़कर मनुष्य के लिए शोचनीय, दु खद एव दयनीय स्थिति और क्या हो सकती है?
- एक-सी प्रवृत्ति मे भी वृत्ति की जो भिन्नता होती है उससे परिणाम मे भी महान अन्तर पड़ जाता है। जितेन्द्रिय पुरुष के भोजन का प्रयोजन सयम-धर्म-साधक शरीर का निर्वाह करना मात्र होने से वह कर्म-बध नही करता, जबकि रसनालोलुप अपनी गृद्धि के कारण उसे कर्म-बध का कारण बना लेता है। यही नही, साधना-विहीन व्यक्ति रूखा-सूखा भोजन करता हुआ भी हृदय मे विद्यमान लोलुपता के कारण तीव्र कर्म बाध लेता है, जबकि साधना-सम्पन्न पुरुष सरस भोजन करता हुआ भी अपनी अनासक्ति के कारण उससे बचा रहता है।

आहार शुद्धि

- जो सात्त्विक हो, मन को उत्तेजित करने वाला नही हो, वह आहार लेने योग्य है।
- आचार-शुद्धि के लिए आहार-शुद्धि आवश्यक है। जब आहार शुद्ध होगा तभी विचार सुधरेगे। और विचार सुधरेगे तो आत्म-कल्याण का पथ प्रशस्त होगा। मानव-जीवन का लक्ष्य आचार-शुद्धि से आत्मा को ऊपर उठाना है।
- माताओ के हाथ से बने भोजन मे उन्हे जीवन का खयाल रहता है। बनाने वाली माँ है तो उसको कितना ध्यान रहता है। भैयाजी सुख पावे, उनका मनोबल बढ़े, धर्म की लगन बढ़े, इस भावना से उसने रोटी बनाई है। घर के भोजन मे सद्भावना का बल है। शुद्धता और भावना बाहर होटलो मे कहाँ? मा, बहन या पत्नी द्वारा बनाये भोजन मे उनके जो सस्कार हैं, उसके अनुसार वे पूरा खयाल रखेगी कि हमारे परिवार मे अखाद्य या अग्राह्य चीज न आवे। किसी जीव की हिसा न हो, खाने वाले स्वस्थ एव प्रसन्न रहे। इस तरह की भावना के साथ

उनके हाथ से अन्न का जो निर्माण हुआ, उसमे जीवन-निर्माण का भी सम्बध रहेगा। आदमी बाहर खाता है, लेकिन भूल जाता है कि इसके पीछे जीवन की पवित्रता गिरती है।

- यदि आदमी को अपने विकारो पर काबू करना है तो पहली शर्त है कि आहार प्रमाण से युक्त हो। अर्थात् जितनी खुराक हो उस प्रमाण से अधिक आहार न हो। दूसरी बात यह कि भोजन दोषरहित हो, सात्त्विक हो, हमारे मन को उत्तेजित करने वाला नही हो।
- यदि आप यह चाहते है कि देश के नागरिक सात्त्विक हो, शुद्ध विचार वाले हो और धर्ममार्ग का अनुसरण करे तो सबसे पहले आप अपने लिए एव परिवार के लिए सोचिए , भावी पीढ़ी के लिए , देश के लिए सोचिए। इसको सोचने मे सुविधा की तरफ न जाइये, सुन्दरता की तरफ न जाइये, भोजन के स्वाद की तरफ न जाइये, न पोशाक की तरफ जाइये। जो बुद्धि मे पवित्रता लाने वाला हो, वात्सल्य भावना भरने वाला हो वही भोजन आपके लिए हितकर व सुखकारी है और आपकी आत्मा को शान्ति देने वाला है।
- समुद्र पार के देश भी आज एक मुहल्ले के समान बन गये है। वहॉ जाने पर खान-पान की शुद्धता की ओर खास तौर से ध्यान देने की आवश्यकता है।
- शुद्ध और सात्त्विक खान-पान के सस्कार बच्चो मे डालना आज के समय मे परम आवश्यक है। आजकल के बच्चो ने समझ रखा है कि जो भी चीज़ मीठी लगे, स्वादिष्ट लगे, उसे खा लेना। घर मे रोटी दो बार खायेगे, वह भी भरपेट नही। होटल मे गये चाय, कचौड़ी, चाट ले ली। खोमचे वाले के यहाँ जायेगे, पानी के पताशे, खटाई, नमकीन ले लेगे, कही कोकाकोला, गोल्डस्पाट, गोलियाँ, आइसक्रीम ले लेगे। फिर नगर के वातावरण मे मन को मचलाने वाली वस्तुएँ जगह-जगह दिखती हैं। इससे उनका फालतू खर्च बढ़ता है। स्वास्थ्य पर कितना बुरा असर पड़ता है, यह बच्चो को खयाल नही होता। इसलिए बच्चो के खान-पान को शुद्ध बनाये रखने के लिए परमावश्यक है कि प्रारम्भ से ही उनके मानस मे इस प्रकार के सस्कार डाले जाये कि वे आहार-शुद्धि का विवेक रखे, क्योकि आहारशुद्धि साधना का मूल है।

■ ईश्वर / सृष्टि

- ईश्वर की विशिष्टता सृष्टि कर्तृत्व आदि की दृष्टि से नही, किन्तु उसके गुण विशेषो से है। ईश्वर शुद्ध, बुद्ध, पूर्ण और मुक्त है, जीव को उसके ध्यान, चिन्तन एव स्मरण से प्रेरणा और बल मिलता है। आत्मशुद्धि मे ईश्वर का ध्यान खास निमित्त है। उसको जीव के कर्मभोग मे सहायक मानना अनावश्यक है।
- गीता मे स्वय कृष्ण कहते है -

> न कर्तृत्व न कर्माणि, लोकस्य मृजति प्रभु
> न कर्मफलसयोग स्वभावस्तु प्रवर्तते। (अध्याय ५)

- प्रभु न ससार का कर्त्तृत्व करते है और न कर्म का ही सर्जन करते है। कर्मफल का संयोग भी नही करते, स्वभाव ही वस्तु का ऐसा है कि वह प्रवृत्त होती है। सोच लीजिये आपके दो बालक है—एक अधिक प्रेमपात्र है और दूसरा कम। जो प्रेमपात्र है वह भांग की पत्तियॉ घोट कर पीता है और जिस पर कम प्रेम है वह ब्राह्मी की पत्तियाँ घोट कर पीता है। प्रेम पात्र नही होने पर भी जो ब्राह्मी का सेवन करता है, उसकी बुद्धि बढ़ेगी और जो प्रेमपात्र होकर भी लापरवाही से भग पीता है, उसकी बुद्धि निर्मल और पुष्ट नही हो सकेगी। जैसे ब्राह्मी से बुद्धि

बढ़ना और भग से ज्ञान घटना, इसमे किसी गुरु की कृपा अकृपा कारण नही है, वैसे भले बुरे कर्म भी बिना किसी न्यायाधीश के अपने शुभाशुभ फल देने मे समर्थ होते है।

- बाल जीवो को ईश्वर की ओर आकृष्ट करने के लिए हो सकता है कि विद्वानो ने उसे एक राजा की तरह बतलाया हो, पर वास्तव मे ज्ञान दृष्टि से सोचने पर मालूम होगा कि ईश्वर तो शुद्ध एव द्रष्टा है। वह हमारी तरह कर्म या कर्मफल भोग का कर्त्ता धर्त्ता नही है।
- भक्त ने पूछा - सृष्टि की आदि कब से है? और कैसे हुई? इसके उत्तर मे सबसे पहले आपको एक अनादि सिद्धान्त ध्यान मे लेना चाहिये कि "नाऽसतो विद्यते भावो, नाऽभावो विद्यते सत" सर्वथा असत् वस्तु की उत्पत्ति नही होती और सत् पदार्थो का सर्वथा नाश नही होता। आप जानते है कि सुवर्ण की डली को भस्म बनाकर उडा दिया जाए तब भी परमाणु रूप मे सोना कायम ही रहता है। इसी प्रकार ससार के जड़ चेतन पदार्थ भी सदा विद्यमान रहते है। कभी उनका सर्वप्रथम निर्माण हुआ हो, ऐसा नही, जड चेतन का विभिन्न रूप मे सयोग ही सृष्टि की विचित्रता का कारण है।

उपवास

- अठारह पापो को खुला रखे और उपवास करे, केवल न खाने का नियम लेकर रह जाएँ, यह काफी नही है। त्याग या उपवास व्रत मे विषय-कषायो का भी त्याग होना चाहिए। आचार्यो ने उपवास के लिए तीन बाते बताई है, जैसे-

विषयकषायाहाराणा, त्यागो यत्र विधीयते।
उपवास स विज्ञेय शेष लघनकं विदु॥

- जिसमे शब्द, रूपादि विषय का त्याग हो, कषाय का त्याग हो और फिर अन्न का त्याग हो, वह उपवास है। आज हमने विषय और कषाय को तो नही छोड़ा, केवल अन्न का त्याग करके सतोष मान लिया। लेकिन अन्न के त्याग के साथ विषय-कषाय के त्याग की बात को भूलना नही चाहिए। यदि विषय-कषाय का त्याग साथ मे रखते हुए उपवास करेगे तो हमारा जीवन हल्का होगा। इसलिए हमको विषय-कषाय को छोड़ना है और ज्ञान, दर्शन, चारित्र की साधना मे आगे बढ़ना है।
- उपवास तो किया, पर केवल एक घटा धर्मस्थान मे बैठे और रात भर का तथा दिन भर का आपका समय आस्रव मे खुला रहा तो उपवास करके भी क्या किया ? केवल आहार छोडा।
- आयुर्वेद की दृष्टि से भी बीमारी के निदान मे उपवास का विधान अति हितकारी माना गया है। अनेक रोगो मे उपवास का बड़ा ही चमत्कारी लाभ होता है और अनेक रोग उपवास द्वारा घर बैठे ही अपने आप दूर हो जाते है। यदि मनुष्य नियमित रूप से उपवास करके अपने पेट को विश्राम देता रहे तो उसे व्याधियॉ परेशान नही करेगी। लेकिन जो व्यक्ति असमय, अनियत्रित भोजन करते रहते है और अपने पेट की मशीनरी को जरा भी आराम नही देते उन्हे अक्सर अनेक रोग घेर लेते है। मल शोधन की क्रिया बराबर नही होने से आते एव उनके आस-पास का भाग भी प्रभावित हो जाता है। इसके कारण पेट भारी हो जाता है तथा उसमे वायु भर जाती है जिसके फलस्वरूप उबकाई आना, पेट मे दर्द, भारीपन, सिरदर्द, बुखार, मदाग्नि, घबराहट, बेचैनी आदि रोग उत्पन्न हो जाते है। मानसिक रोगो मे भी उपवास बड़ा प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। उपवास से सात्त्विक भाव का जागरण और तामस-राजस भाव का विनाश होता है। उपवास के बाद गरिष्ठ भोजन नही लेना चाहिए। बाल,

वृद्ध और अतिकृश व्यक्ति के अतिरिक्त सबके लिए उपवास लाभकारी है।

एकता

- मानव जितना ही गुण-ग्राहक और सत्य का आदर करने वाला होगा, उतना ही ऐक्य-निर्माण सरल एव स्थायी हो सकेगा। 'कारणाभावे कार्याभाव.' , इस उक्ति के अनुसार भेद के कारण मिटने पर भेद स्वय ही समाप्त हो जाते है।
- जैन सघ मे एकता का नारे लगाने वाले एव बोलने वाले है, फिर भी एकता क्यो नही ? लौकिक एकता भय, लोभ और स्वार्थ पर आश्रित होती है, परन्तु धर्म की एकता गुणानुराग या शासन प्रेम पर आधारित होती है। जब तक राग-द्वेष के कारण समाप्त नही किये जाते, बाहरी दिखावे से स्थिरता नही आती। हमारी एकता विचार-आचार के धरातल पर होती है। जैन समाज का इतिहास बताता है कि श्रावको ने सघ की अखण्डता का कैसा रक्षण किया और इनके सहयोग से कैसे पलभर मे झगड़े मिट गये। आज समाज मातृहृदय तो है, पितृ हृदय भक्तो की आवश्यकता है।
- आज का युग मिलजुल कर काम करने का है। सामाजिक हो या धार्मिक, हर कार्य मिली-जुली शक्ति से ही अधिक प्रभावशाली और सफल होता है। राष्ट्र भी एक-दूसरे की नीति, रीति और मतभेद की उपेक्षा कर पारस्परिक सहयोग मे अपना और विश्व का हित मान रहे है, फिर भला धार्मिक सम्प्रदाये साधारण रीति, नीति और समाचारी के भेद से एक दूसरे से बिल्कुल दूर रहे, समानताओ का उपयोग नही कर पावे तो धर्म शासन की शोभा एव तेजस्विता कैसे बढेगी।
- राष्ट्र के अधिकारी राग द्वेष युक्त होते है और धर्माधिकारी वीतरागता एव समता के पथिक होते है, अत उनके मन मे छोटी - छोटी बातो से मनभेद होना शोभनीय नही होता। राष्ट्रो मे व्यापार, सचार, औद्योगिक क्षेत्रादि मे सधि होती है, वैसी धर्म-सम्प्रदायो मे भी आंशिक सन्धि हो सकती है।
- कार्य की सफलता मे ध्यान रखने योग्य एक आवश्यक बात यह है कि व्यर्थ नुकताचीनी नही की जाय। कोई भी उचित बात कहता है तो उसकी कद्र करो। सवाद भले कर लो, किन्तु विवाद नही करो। अपने और दूसरों के समय का मूल्य समझो और समाज-सेवा के लिये एक शक्ति से कुछ कार्य करके दिखाओ। चुप रहने वालो को यह नहीं समझना चाहिए कि हमारी कोई कीमत नही; किन्तु उन्हे यह समझ कर सन्तोष करना चाहिये कि बोलने वाले हमारे ही प्रतिनिधि हैं।
- कार्य प्रणाली में भेद होते हुए भी निर्मल भाव से एक दूसरे के सम्मान को सुरक्षित रखते हुए बधुभाव से काम करना चाहिए।

कर्मवाद

- यदि अपनी आत्म-शक्ति को विकसित करना है तो उस पर पड़ा हुआ जो कर्म का मलबा है, उसे साफ करना होगा। उस मलबे को कोई अलग से हमाल आकर हटाएगा नही। इस मलबे को हटाने का कार्य हमे स्वय को ही करना होगा। हाँ, किसी बाहरी मित्र का सहयोग उसी तरह से ले सकते हैं जिस तरह कोई कारीगर अथवा मकान-निर्माता किसी ठेकेदार या इन्जीनियर से उचित मार्ग-दर्शन प्राप्त करता है क्योकि मार्ग-दर्शक अनुपम

परामर्श देने वाला होता है। उसी तरह आत्म-शक्ति पर पड़े हुए कर्म रूपी मलबे को दूर करने के लिए प्रयत्न तो हमको स्वय करना है। सहारे के रूप मे, मार्ग-दर्शक के रूप मे शास्त्रो और सद्गुरुओ का सहयोग लिया जाता है। सद्गुरु और शास्त्र, हमे मलबा कैसे दूर किया जाए, इसका उपाय बता सकते है।

- जीव मे जिस प्रकार कर्म को करने की योग्यता है, उसी तरह कर्मो से मुक्त होने की भी योग्यता है। जैन दर्शन की यह मान्यता है कि प्राणी स्वय द्वारा उपार्जित शुभ कर्मो की प्रेरणा अथवा प्रभाव से जिस प्रकार स्वर्ग मे जाता है, उसी प्रकार अशुभ कर्मो के प्रभाव अथवा उनकी प्रेरणा से नरक मे भी जाता है।
- जैन दर्शन की यह मान्यता है कि आत्मा कर्म करने मे स्वाधीन है, किन्तु कर्मो के फल को भोगने मे पराधीन अर्थात् कर्मो के अधीन है। जैन दर्शन की यह भी मान्यता है कि आत्मा जिस प्रकार कर्म करने मे स्वाधीन है, उसी प्रकार कर्मो को निरस्त करने अथवा नष्ट करने मे भी स्वाधीन है, स्वतत्र है।
- ससार मे प्राणिमात्र के साथ मोह लगा हुआ है। वही जीव को नचाता है। साधक ज्ञान से मोह को नियन्त्रित करता है। वह कर्मफल को भोगते हुये और शुभाशुभ प्रवृत्ति के बीच रहकर भी हल्का रहता है। कहा भी है—

  [illegible]
  [illegible]

- आप शका करेगे कि मनुष्य सचित कर्म के उदय से ही कर्म करता है, फिर उसे पाप क्यो लगता है ? शास्त्रकार ने कहा है कि वर्तमान क्रिया मे होने वाला मानसिक रस ही पाप का प्रधान कारण है।
- कर्मबध का मूल कारण राग-द्वेष यदि सूख गया, ढीला पड गया, खत्म हो गया तो कर्मवृक्ष भी सूख जायेगा। जिस किसी झाड़ का मूल (जड़) यदि सूख जाय तो ऊपर के पत्ते, डालियाँ, फूल, फल, हरे भरे कितने दिन रहेगे ? तत्काल तो खत्म नही होगे, लेकिन कुछ दिनो के बाद नष्ट हो जायेगे।
- कर्मो को घटाने का मतलब है-कर्मो की परिणति क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, रोष, मोह, मिथ्यात्व आदि-आदि रूपो मे जो हमारे मन मे, अथवा आचरण मे, हम रात-दिन अनुभव कर रहे है, देख रहे है, उसे कम करना, उसके असर को घटाना।

■ कषाय

- एक घर नही, एक ग्राम नही, एक नगर नही, घर-घर मे क्रोध, मान, माया, लोभ और विषय-कषायो के दुष्परिणामो के दृश्य प्रतिदिन देखने को मिलते है। आप मे से प्राय प्रत्येक को इसका कटु अनुभव अवश्य होगा। जिस दिन आप क्रोध के अधीन रहे, उस दिन आपका चिन्तन ठीक तरह से नही चला, सामायिक समभाव से नही हुई, स्वाध्याय मे मन लगा नही, किसी भी कार्य मे ठीक तरह से चित्त लगा नही और बिना बीमारी के बीमार हो गये। इस प्रकार क्रोध, मान, माया, लोभ मे आसक्ति का कटु फल न केवल एक-दो बार ही, अपितु अनेक बार भोग चुकने के उपरान्त भी पुन पुन उन्ही विषय-कषायो से प्यार करते रहे तो निश्चित रूप से यही कहा जाएगा कि हमारा ज्ञान भ्रान्त है, मिथ्या है।
- आपने किसी पर क्रोध किया तो क्रोध करते ही आपने सर्वप्रथम अपने आत्मगुणो की हिंसा कर डाली। क्रोध करने पर क्या किसी के मन मे, मस्तिष्क अथवा हृदय मे शान्ति रहेगी, आत्मा का सत् स्वरूप रहेगा ? नही, क्रोध करते ही ये सब गुण नष्ट हो जाएगे। क्रोध करने से हो सकता है कि दूसरे की हिंसा न भी हो, पर स्वय की

हिसा तो तत्क्षण असदिग्ध रूप से हो ही जाती है।

- क्रोध, मान, माया, लोभ आदि मे फस कर प्राणी सर्वप्रथम स्वय की, आत्मा की हिंसा करता है। क्रोध, मान, माया, लोभ, आदि से हमारी स्वय की हिसा हो रही है, यह हमने सम्यग् रूप मे जाना नही है, इसीलिए बार-बार इस रास्ते पर लग रहे है। यदि हम यह भली-भाति जान ले, विषय-कषायो के आत्मघाती भयावह परिणामो को समीचीनतया समझ ले, तो फिर इस रास्ते पर कभी लगेगे ही नही।
- पुलिस का आदमी ३०३ बोर राइफल से किसी के शरीर पर ही फायर करता है, किन्तु क्रोध, मान, माया, लोभ के सिपाही तो आत्मगुणो की अमूल्य निधि पर फायर कर उसे विनष्ट कर देते हैं। पुलिस के सन्तरी द्वारा किये गये फायर से किसी व्यक्ति के शरीर के किसी भाग मे चोट लग सकती है। उसका हाथ टूट सकता है। पैर टूट सकता है और कदाचित् किसी भाई का इस जन्म का शरीर भी छूट सकता है (किन्तु विषय-कषायो, क्रोध, मान, माया, लोभ के सतरियो द्वारा किये गये फायरिग से भले ही किसी का इस जन्म मे हाथ, पैर अथवा गला न भी कटे, पर उसके अनेक जन्म-जन्मातरो तक के लिए, असख्य काल और यहाँ तक कि अनन्तानत काल तक के लिए भी हाथ, पैर, नाक, कान, मुख, कट सकते है अर्थात् उसका निगोद मे पतन हो सकता है, तिर्यच, नारकादि गतियो मे अधोगमन हो सकता है।)
- क्रोध, मान, माया, लोभ पर विजय से, सयम से, साधना से, धर्म की आराधना और धर्म के आचरण से स्व-पर के आत्मदेव की रक्षा हो सकेगी। जिन महापुरुषो ने क्रोध, मान, माया, लोभ पर विजय प्राप्त कर अपने आत्मगुणो की तथा अन्य आत्माओ की रक्षा की है, इतिहास के पृष्ठो पर स्वर्णाक्षरो मे अकित उनके जीवन-चरित्र प्रकाश-स्तम्भ के समान हमे मार्गदर्शन करते रहते है।
- जैसे गर्म भट्टी पर चढ़ा हुआ जल बिना हिलाए ही अशान्त रहता है उसी प्रकार मनुष्य भी जब तक कषाय (विकार) की भट्टी पर चढ़ा रहेगा, तब तक अशान्त और उद्विग्न बना रहेगा। जल की दाहकता को मिटाने के लिए उसे गरम भट्टी से अलग रखना आवश्यक है, वैसे ही मनुष्य को भी अपने मन की अशान्त स्थिति से निपटने के लिए क्रोध, लोभादि विकार से दूर रहना होगा। जल का स्वभाव ठडा होता है। अत वह भट्टी से अलग होते ही अपने पूर्व स्वभाव पर आ जाता है, ऐसे ही शान्त-स्वभावी आत्मा भी कषाय से अलग होते ही शान्त बन जाता है।
- अनियत्रित लोभ या क्रोध व्यावहारिक जीवन को कटु बना देता है और वैसी परिस्थिति मे साधक का लोक-जीवन भी ठीक नही बन पाता। वह माता-पिता, परिजन एव बन्धु-बान्धव आदि के प्रति भी ठीक व्यवहार नही रख पाता। वस्तुत लोभ व लालसा आदि पर अकुश लगाने वाला ही जीवन मे सुखी बनता है।

कार्यकर्त्ता

- आज के समाज को धन या जन की कमी नही, कमी है तो सेवाभावी कार्यकर्त्ता की।
- यो तो समाज में हजारो कार्यकर्ता है और भविष्य मे भी होते रहेगे, पर सस्था या समाज को अपना समझकर घरेलू हानि-लाभ का बिना विचार किये अदम्य साहस व पूर्ण प्रामाणिकता से लगन पूर्वक कार्य करने वाले कार्यकर्ता दुर्लभ हैं।

- कार्यकर्ता की कुशलता के सामने अर्थाभाव का कोई प्रश्न नही रहता।
- सेवाभाव से समय देने वाला अर्थदाता से भी अधिक सम्मान योग्य होता है, यह समझकर समाज कार्यकर्ताओं का सम्मान करे, उन्हे प्रोत्साहित करे , और कार्यकर्ता भी मातृ-पितृ सेवा की तरह समाज सेवा को अपना कर्तव्य समझकर काम करे तो सफल कार्यकर्ता तैयार हो सकते है। आज धन-जन एव बुद्धि सम्पन्न होकर भी जैन समाज योग्य कार्यकर्ताओ के अभाव मे सम्यक् ज्ञान और क्रिया का प्रचार-प्रसार नही कर पा रहा है।
- विदेशी प्रचारको और राष्ट्रीय कार्यकर्ताओ को देखते है तब विचार होता है कि अनार्य कहे जाने वाले लोग देश, धर्म व समाज के लिये घरबार का मोह छोड़कर जीवन अर्पण कर देते है, फिर क्या कारण है कि वीतराग सस्कृति मे वैसे कार्यकर्ता आगे नही आते। तरुण पीढ़ी इस पर गहराई से विचार करे, और इस कार्य मे आगे बढे, समाज मे ऐसे कार्यकर्ता सुलभ हो, यही शुभेच्छा है।

कार्य-कारण (उपादान-निमित्त)

- प्रत्येक कार्य की निष्पत्ति मे उपादान और निमित्त, ये दोनो ही कारण होते है। यह नही समझिये कि कभी किसी कार्य मे एक कारण से ही कार्य सिद्धि हुई है। ऐसा न कभी हुआ है और न कभी होता है। जिस तरह मथन करने वाला मथेरणा दधि से मक्खन निकालता है, तब मथन क्रिया करते समय क्रमश एक हाथ पीछे रहता है तो दूसरा हाथ आगे। दोनो हाथो से क्रिया चलती है लेकिन एक हाथ आगे और दूसरा हाथ पीछे चलता है। इसी तरह ज्ञान-प्राप्ति मे कभी निमित्त आगे और उपादान पीछे रहता है तो कभी उपादान आगे और निमित्त पीछे रहता है। हमारे यहॉ जिनशासन मे अनेकान्त दृष्टिकोण है। इसमे व्यवहार और निश्चय ही मुख्य है। कभी व्यवहार आगे रहता है तो निश्चय पीछे और कभी निश्चय आगे तो व्यवहार पीछे रहता है। गौण एव प्रधानता से दोनो को लेकर चलना है।
- कारण दो प्रकार के होते है एक प्रेरक और दूसरा उदासीन। घर मे घड़ी लगी हुई है और उसमे ८.३० बज गये तो व्याख्यान मे जाने का समय हो गया। घड़ी व्याख्यान के समय की याद दिलाने मे कारण हुई। एक घर मे माताजी, पिताजी या पुत्र ने कहा-'अभी तक तैयार नही हुए हो, मालूम भी है कि साढ़े आठ बज गये है। जल्दी करो। व्याख्यान मे जाना नही है क्या?' घड़ी एव घर वालो मे अन्तर यह है कि घड़ी टाइम बताती है लेकिन प्रेरणा नही करती। अत यह उदासीन कारण बनी, और घर के सदस्य प्रेरक कारण बन गये।
- जो उदासीन कारण होता है, उसको वस्तुत न तो पाप ही होता है और न पुण्य ही। जैसे पढ़ने के लिए पोथी उदासीन कारण है। पोथी क्या जाने कि वह ज्ञान मे सहायक निमित्त कारण बन गई है।
- मान लीजिए कि दो भाइयो के बीच मे झगडा हो गया। दो मकान थे, एक तो गली में था और दूसरा बाजार मे। बाजार वाले मकान पर दोनो भाइयो की नजर थी। लेकिन बड़ा भाई बाजार वाले मकान को अपने कब्जे मे रखना चाहता था। गली वाला दूसरा मकान उसने छोटे भाई को दे दिया। मकान के निमित्त से झगड़ा पड़ गया। वह मकान झगड़े मे उदासीन कारण बना। यदि मकान बीच मे नही होता तो शायद भाइयो के बीच झगड़ा नही होता। वह मकान अच्छी जगह था, इसलिए उसकी अच्छी कीमत आ सकती थी। अच्छा किराया आ सकता था। इसलिए दोनो भाइयो की नजर उस पर थी। एक का ममत्व बढ़ गया, इसलिए दूसरे को भी झगड़ा करने का मौका मिल गया, कोर्ट तक जाने की नौबत आ गई। मकान के निमित्त झगड़ा हुआ, लेकिन

सजीव नही होने के कारण मकान को कर्म-बध नही हुआ। यदि कोई सजीव चीज़ जैसे घोड़ा, हाथी, गाय है, उसके लिए झगड़ा हो जाए तो क्या गाय को भी कर्म-बंधन होगा? नही। क्योकि वह उदासीन है। किसी को हानि-लाभ पहुँचाने मे वह सक्रिय भाग नहीं ले रही है। उसमे समझ नही है। दूसरी तरफ एक पड़ौसी है, वह कहता है कि क्यों ठडे पड़ गये हो? क्यों मकान हाथ से गंवा रहे हो? मालूम होता है खर्च से डर गये। इस तरह अन्याय के समक्ष दब जाओगे तो कमजोरी दिखेगी, इसलिए कोर्ट मे दावा दायर करना चाहिए। एक तरफ तो झगड़े का कारण पड़ौसी बना, दूसरा कारण मकान बना। इन दोनो मे क्या फर्क है? एक कारण तो मकान है, वह उदासीन है। वह सहायक कारण अवश्य है, पर किसी को भी प्रेरणा नही देता। दूसरा कारण पड़ौसी है, जो प्रेरणा देता है। इसलिए कर्मबधन प्रेरक को हुआ। यद्यपि वह लड़ा नही है, कोर्ट मे फरियाद वह नही कर रहा है। लड़ने की क्रिया कौन करता है? गृहस्वामी। लेकिन पड़ौसी प्रेरक है, इसलिए उसको कर्मबधन होगा।

- नमिराज को ज्ञान किससे हुआ? चूड़ी से। चूड़ी जड़ होने के कारण उदासीन कारण बनी। अत किसी प्रकार के कर्मबध की भागीदार नही बनी। यदि आप किसी के धर्म-ध्यान के निमित्त बन जाएँ, जीवन भर धर्म-प्रेरणा देने का सकल्प करे तो आपको धर्म-दलाली मिलेगी और प्रेरक हेतु होने के कारण आप निश्चित रूप से पुण्य लाभ के भागी बनेगे।

- आपका जीवन उदासीन कारण की तरफ, शुभ-अशुभ निमित्त की तरफ प्रतिपल बढ़ता जा रहा है। किसी बहिन के तन पर अच्छा गहना, कपड़ा देखकर मन मे दुर्भावना पैदा हो जाए, मन मे क्लेश पैदा हो जाए, आपके कपड़ो के पहनावे वेश-भूषा, खर्च आदि को देखकर दूसरो के मन मे राग-द्वेष उत्पन्न हो जाये तो आपने तो उससे कुछ नही कहा तथापि आप उसकी पापवृत्ति मे निमित्त बने, आपका खान-पान, आपका पहनना-ओढ़ना, मकान बनाना आदि सारे दुनिया के व्यवहार प्रेरक बने, अशुभ निमित्त के लिए। इसलिए आप पाप के भागीदार बने। यदि आप आत्म-सुख के प्रेरक निमित्त बनेगे तो लाभ के भागीदार बनेगे।

- एक बार कृष्ण ने सोचा-"मैं धर्म कर्त्ता तो नही बन सकता, लेकिन मै धर्म-मार्ग का प्रेरक क्यो नही बनूँ? जो करता है उसका अनुमोदक क्यो नही बनूँ?" जो लोग तन से, मन से, वाणी से धर्म की दलाली करते है, खुद नही कर सके तो भी दूसरो को करने की प्रेरणा देते है, साधना-मार्ग पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते है, उनको उसकी दलाली अवश्य मिलती है। कृष्ण ने सहायक, प्रेरक, अनुमोदक बनकर एकान्त पुण्य का खजाना इकट्ठा किया और वे तीर्थंकर पद के अधिकारी बन गये। श्री कृष्ण का उदाहरण प्रेरक निमित्त का उदाहरण है।

- सिद्ध भगवान कर्म काटने के निमित्त है और साधुजी भी कर्म काटने के निमित्त हैं। दोनो मे क्या अन्तर है? सिद्ध निमित्त बने अक्रिय होकर और सन्त निमित्त बने सक्रिय होकर। साधु मे भी हमारी आत्मा को तारने की शक्ति है तथा सिद्ध परमात्मा पूर्ण ज्ञानी, अक्रिय एव वीतराग हैं, वे अक्रिय होकर भी हमारी आत्मा को तारते है और संत सक्रिय होकर तारते है।

- अकर्त्ता सिद्ध परमात्मा से अपनी अन्तरात्मा का तार जोड़कर अपने अन्तर्मन को उस प्रभु में लगाकर साधक तिर सकता है। दोनो मे अन्तर यह है कि अकर्त्ता को निमित्त बनाया जाता है और कर्त्ता निमित्त बनता है, कर्त्ता प्रेरक है।

- उपादान को जागृत करने का काम प्रेरक निमित्त अच्छे ढंग से कर पाता है। प्रेरक निमित्त के द्वारा मानव मन को एक प्रेरणा मिलती है, हलचल होती है, चेतना जागृत होती है। चेतना जागृत होती है तो कुछ कर्मों का आवरण

दूर होता है और आवरण दूर होने से क्षय अथवा उपशम या क्षयोपशम होकर मानव अपने आत्म-गुणो का विकास साध लेता है।

काल का सदुपयोग

- अविकल रूप से चलने वाला काल यदि हाथ से निकल गया और बाद मे सावधान बने तो फिर तुम्हारे वश की कोई बात नही रहेगी। क्योकि काल तुम से बधा नही है, बल्कि तुम काल से बंधे हो। आपको स्वय काल के साथ चलना है। काल आपके साथ की अपेक्षा कभी नही करेगा। बिना किसी के साथ की अपेक्षा किये वह तो अपनी गति से अविकल रूपेण चलता ही रहेगा। यदि आप सजग एव अप्रमत्त नही रहे और निरन्तर प्रवाही काल आपके हाथ से निकल गया तो अवसर चूक जाने के कारण आपको अन्त मे हाथ मल-मलकर पछताना पड़ेगा।
- समय चाहे थोड़ा ही क्यो न हो, पर यदि उसका उपयोग करना आ जाये तो थोड़े समय मे भी साधक उसे अपने लिए लाभदायक बना अपने लक्ष्य की प्राप्ति मे सफल हो सकता है। धर्म की साधना मे पल-पल, क्षण-क्षण तक के समय का सदुपयोग करने वाले जागरूक साधक के सम्बध मे सूत्रकार ने कहा है—

  [illegible]
  [illegible]

  अर्थात् बीती हुई रात्रियॉ फिर नही लौटती। अहर्निश धर्म की साधना मे निरत रहने वाले व्यक्ति की रात्रियॉ ही वस्तुत सफल होती है।
- काल प्रतिपल प्रवाही है। प्रतिपल, प्रतिक्षण, प्रतिदिन काल आगे सरकता जा रहा है और आप पीछे सरकते जा रहे है। कल आपकी जिन्दगी के जितने दिन थे, उनमे से आज आपकी जिन्दगी का एक दिन कट गया।
- जीवन का समय सीमित एव स्वल्पातिस्वल्प है और जो स्वल्पतम सीमित समय है, उसका भी भावी प्रत्येक क्षण अनिश्चित है। किसी को कोई पता नही है कि कराल काल कब आकर उसे अपना कवल बना लेगा। ससार की चौरासी लाख जीव-योनियो मे केवल एक मानव-योनि ही ऐसी योनि है, जिसमे काल का अधिकाधिक सदुपयोग कर साधक साधना द्वारा यथेप्सित आत्मकल्याण कर सकता है। जो उद्बुद्ध साधक मानव-जीवन एवं काल के इस महत्त्व को जानता है, वह अपने जीवन के एक-एक श्वासोच्छ्वास एव काल के एक-एक क्षण को अनमोल समझ कर आत्म-कल्याण की साधना मे सलग्न रहता है। वह अपने चरम लक्ष्य के सन्निकट शीघ्र ही पहुँच सकता है।

क्रोधनिग्रह

- मेरे सामने राजस्थान का रहने वाला दर्जी-समाज का एक आदमी आया और कहने लगा कि मुझे गुस्सा बहुत चढ़ता है, मै क्या करूँ ? मैने कहा-जब गुस्सा चढ़े तब उस स्थान से थोड़ी देर के लिये अलग हट जाओ। इसके बाद भी गुस्सा शान्त नही होता है तो १० मिनट तक किसी से बोलो मत। इससे भी शान्त नही होता है तो गुस्सा आने पर प्रायश्चित्त मे नमक, मिर्ची खाना छोड़ दो। इसको वश में करने के लिये कड़ा अनुशासन रखना चाहिये।

गर्भपात

- सन्ततिनिग्रह और परिवार नियोजन के नाम से सरकार प्रबल आन्दोलन कर रही है और कैम्पो आदि का आयोजन कर रही है। यह सब बढ़ती हुई जनसख्या को रोकने के लिये किया जा रहा है। गाधीजी के सामने जब यह समस्या उपस्थित हुई तो उन्होने कृत्रिम उपायो को अपनाने का विरोध किया था और सयम के पालन पर जोर दिया था। उनकी दूरगामी दृष्टि ने समझ लिया था कि कृत्रिम उपायो से भले ही कुछ तात्कालिक लाभ हो जाय, परन्तु भविष्य मे इसके परिणाम अत्यन्त विनाशकारी होगे। इससे दुराचार एव असयम को बढ़ावा मिलेगा। सदाचार की भावना एव सयम रखने की वृत्ति समाप्त हो जायेगी।
- कितने दुख की बात है कि जिस देश मे भ्रूणहत्या या गर्भपात को घोरतम पाप माना जाता था, उसी देश मे आज गर्भपात को वैध रूप देने के प्रयत्न हो रहे है। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि अहिंसा की हिमायत करता हुआ भी यह देश किस प्रकार घोर हिसा की ओर बढ़ता जा रहा है। देश की, सस्कृति और सभ्यता का निर्दयता के साथ हनन करना वस्तुत जघन्य अपराध है। (यह प्रवचनाश उस समय का है जब गर्भपात को वैध रूप नही दिया गया था।)

गुण दृष्टि

- ससार मे अन्तर्दृष्टि जनो की अपेक्षा बहिर्दृष्टि लोगो की बहुलता है। बहिर्दृष्टि लोग आत्मिक वैभव की अपेक्षा पौद्गलिक वैभव को अधिक मूल्यवान मानते हैं और उसी की ओर उनका आकर्षण होता है। यही कारण है कि विद्वानो और गुणीजनो की अपेक्षा धनियो को और अधिक आदर मिलता है और उन्ही की तारीफ होती है। वही समाज के नेता समझे जाते है और जाति तथा समाज की नकेल उन्ही के हाथ मे रहती है। विद्वान और गुणी पुरुष का वैभव यद्यपि धन की अपेक्षा अधिक मूल्यवान है और उसका जीवनस्तर भी प्राय उच्चतर होता है, तथापि उसकी प्रशसा कम होती है। इस कारण उनकी ओर आकर्षण भी कम ही होता है। अगर धनी की तारीफ की तरह गुणियो और विद्वानो की तारीफ या महिमा बराबर होती रहे और सुनने मे आती रहे तो आपका मन किस तरफ आकर्षित होगा ? निस्सदेह आपके मन मे गुणियो के प्रति और विद्वानो के प्रति आकर्षण उत्पन्न होगा।

गुरु

- निर्ग्रन्थ गुरु के पास भक्त पहुँच जाए तो न तो गुरु उससे कुछ लेता है और न उसे कुछ देता ही है। वह तो एक काम करता है-अज्ञान के अधकार को हटाकर शरणागत के ज्ञान चक्षु खोलता है। 'ज्ञानाजन-शलाका' के माध्यम से प्रकाश करता है और अज्ञान का जो चक्र घूमता है, उसको दूर करता है।
- देव का अवलम्बन परोक्ष रहता है और गुरु का अवलम्बन प्रत्यक्ष। कदाचित् ही कोई भाग्यशाली ऐसे नररत्न ससार मे होगे, जिन्हें देव के रूप मे और गुरु के रूप में अर्थात् दोनो ही रूपो मे एक ही आराध्य मिला हो। देव और गुरु एक ही मिलें, यह चतुर्थ आरक में ही सभव है। तीर्थंकर भगवान् महावीर मे दोनो रूप विद्यमान थे वे देव भी थे और गुरु भी थे। लेकिन हमारे देव अलग हैं और गुरु अलग। हमारे लिए देव प्रत्यक्ष नही है, परन्तु गुरु प्रत्यक्ष हैं। इसलिए यदि कोई मानव अपना हित चाहता है, तो उस मानव को सद्गुरु की आराधना करनी

चाहिए।

- गुरु के अनेक स्तर हैं, अनेक दर्जे है, जिनको गुरु कहा जाता है, लेकिन वे सभी तारने मे, मुक्त करने मे सक्षम नही होते। आचार्य केशी ने बतलाया है कि आचार्य तीन प्रकार के होते है-कलाचार्य, शिल्पाचार्य और धर्माचार्य। यदि कोई व्यक्ति कृतज्ञ स्वभाव का है और उपकार को मानने वाला है, तो उसको जिसने दो अक्षर सिखाए है, उसके प्रति भी आदर भाव रखेगा। जिसने थोड़ा सा खाने-कमाने लायक व्यवसाय प्रारम्भ मे सिखाया है, उसको भी ईमानदार कृतज्ञ व्यक्ति बड़े सम्मान से देखेगा। इसी प्रकार जो शिल्पाचार्य है और उन्होने अपने शिष्यो को शिल्प की शिक्षा दी है, उनके प्रति भी शिष्यो को आदर भाव रखना चाहिए। किन्तु कलाचार्य और शिल्पाचार्य को प्रिय है धन। जो भक्त जितनी ज्यादा भेट-पूजा अपने गुरु के चरणो मे चढ़ायेगा उसको कलाचार्य और शिल्पाचार्य समझेगा कि यही शिष्य मेरा अधिक सम्मान करता है, लेकिन धर्माचार्य की नजर मे उसी शिष्य का सम्मान है, जिसने अपने जीवन को ऊँचा उठाने के लिए साधना की है।
- सद्‌गुरु होने की प्रथम शर्त यह है कि वह स्वय निर्दोष मार्ग पर चले और अन्य प्राणियो को भी उस निर्दोष मार्ग पर चलावे। सद्‌गुरु की इसलिए महिमा है।
- मनुष्य जैसा पुरुषार्थ करता है , वैसा भाग्य निर्माण कर लेता है। इतना जानते हुए भी साधारण आदमी शुभ मार्ग मे पुरुषार्थ नही कर पाता। कारण कि जीवन-निर्माण की कुजी सद्‌गुरु के बिना नही मिलती। जिन पर सद्गुरु की कृपा होती है, उनका जीवन ही बदल जाता है। आर्य जम्बू को भर तरुणाई मे सद्गुरु का योग मिला तो उन्होने ९९ करोड़ की सम्पदा, ८ सुन्दर रमणियो एव माता-पिता के दुलार को छोड़कर त्यागी बनने का सकल्प किया। राग से त्याग की ओर बढ़कर उन्होने गुरुपूजा कर सही रूप उपस्थित किया।
- शिष्य के जीवन मे गुरु ही सबसे बड़े चिकित्सक हैं। जीवन की कोई भी अन्तर समस्या आती है तो उस समस्या को हल करने का काम और मन के रोग का निवारण करने का काम गुरु करता है। कभी क्षोभ आ गया, कभी उत्तेजना आ गई, कभी मोह ने घेर लिया, कभी अहकार ने, कभी लोभ ने, कभी मान ने और कभी मत्सर ने आकर घेर लिया तो इनसे बचने का उपाय गुरु ही बता सकता है।
- निर्ग्रन्थ, जिनके पास वस्तुओ की गॉठ नही होती- आवश्यक धर्मोपकरण के अतिरिक्त जो किसी तरह का सग्रह नही रखते है, वे ही धर्मगुरु है। साधुओ के पास गॉठ हो तो समझ लेना चाहिए कि ये गुरुता के योग्य नही हैं।

■ चोरी

- गृहस्थ-जीवन मे जो भी व्यक्ति चोरी से विलग रहता है, वह सम्मानीय माना जाता है। सड़क पर नाजायज कब्जा, सरकारी या दूसरे व्यक्ति की भूमि पर अवैधानिक अधिकार आदि भी चोरी का ही रूप है।
- वास्तव मे मानव समाज के लिए चोरी एक कलक है। गृहस्थ को ससार मे प्रतिष्ठा का जीवन बिताना है और परलोक बनाना है तो वह चोरी से अवश्य बचे।
- भारतीय नीति मे चोरी चाहे पकड़ी जाए या नही पकड़ी जाए, दोनो हालत मे निन्दनीय, अशोभनीय और दंडनीय कृत्य है। चोरी या अनीति का पैसा सुख-शान्ति नही देता। वह किसी न किसी रूप में हाथ से निकल जाता है। कहावत भी है कि चोरी का धन मोरी मे।

जल-रक्षण

- आजकल घर-घर और गली-गली मे नल हो जाने से पानी का वास्तविक मूल्य नही समझा जाता। किन्तु जब कभी कारणवश जल केन्द्र से पानी का निस्सरण कम हो जाता है अथवा बिल्कुल ही नही होता तब देखिए पैसे देने पर भी घड़ा भर पानी नही मिल पाता और जान मुसीबत मे फसी जान पड़ती है। भले ही प्रचुर जल वाले प्रदेश मे कठिनाई प्रतीत नही होती हो, तब भी प्यास की स्थिति मे जल का महत्त्व आसानी से समझा जा सकता है। सोना-चाँदी और वस्त्राभूषण के बिना आदमी रह सकता है, पर जल के बिना एक दिन भी नही रह सकता। अत सद्‌गृहस्थ को यह ध्यान रखना चाहिये कि पानी की एक बूँद भी व्यर्थ नही जाए।
- पानी के अमर्यादित उपयोग से कीचड़ फैलता है और उसमे मच्छर आदि अनेक जन्तु उत्पन्न होते है। मनुष्य यदि विवेक से काम ले तो व्यर्थ की हिंसा और मलेरिया आदि रोगो से अनायास ही बच सकता है। मरुभूमि के लोगो को मालूम है कि पानी का क्या मूल्य है।
- अनछाना पानी नही पीने से कितने ही जीवों की हिंसा टल जाती है। तृणभक्षी पशु भी जब ओठ से फूँक कर पानी पीते हैं, कुत्ते, बिल्ली या शेर की तरह वे जीभ से लपलप कर नही पीते, तब मनुष्य को तो सावधानी रखनी ही चाहिये। ऐसा करने से आरोग्य और धर्म दोनो प्रकार का लाभ है।

जिनवाणी

- जिस तरह मेघ की वर्षा जमीन पर अच्छे ढग से पड़ जाती है तो भूमि नरम हो जाती है, कड़ी नही रहती और पड़ने वाला बीज अच्छी फसल पैदा कर सकता है। जगह-जगह छोटे-मोटे गड्ढे भर जाते है, तलाई का रूप ले लेते हैं और जगल के प्राणियो को भी पानी सुलभ हो जाता है। छोटा-सा मेघ इतना काम कर जाता है तो भगवान् की वाणी की वर्षा पाकर आप भी कोमलता, स्वच्छता, निर्मलता और आत्मगुणो को धारण करके आगे बढ़ने का प्रयत्न करेगे तो आपको इस लोक एवं परलोक मे कल्याण व आनन्द की प्राप्ति हो सकेगी।

जीवन की दौड़

- ससार के प्राणी-बच्चे, बूढ़े, जवान सभी विजय की दौड़ मे अपनी शक्ति, अपनी ताकत पूरे जोश के साथ लगाते है। ससार के मैदान मे हमको विजय मिले, हम जीते, हमारा नम्बर आगे रहे, इसी चिन्ता में दिन-रात दौड़ते रहते है. । इनमें से कोई अर्थ यानी धन के लिए दौड़ता है, कोई परिवार के लिए दौड़ता है, कोई वैभव के लिए दौड़ता है, कोई कुर्सी के लिए दौड़ता है तो कोई सत्ता के लिए दौड़ता है। इस तरह इस घुड दौड़ मे दौड़ने वाले हजारो-लाखो मानव है। कोई कामयाब होता है या बीच मे ही रवाना होकर चला जाता है, इसका कोई ठिकाना नही, क्योकि यह देह अनित्य है।
- आप माने या न माने, अर्थ-लालसा के पीछे हमारे जो भाई-बहिन दौड़ लगा रहे है, इस वास्तविक तथ्य को वे मजूर नही करेगे। उनकी दौड़ जारी रहेगी। अर्थ चाहने वालो की अर्थ के लिए, भोग चाहने वालो की भोग के लिए, पद चाहने वालों की पद के लिए भूख लगी रहेगी, लेकिन उनको पता नही है कि ससार मे दुख ही दुख है।

- कुछ लोग यह आशा करते है कि हमको देवता बचा लेगे, भैरोजी बचा लेगे, चण्डी या अम्बाजी बचा लेगी। जाप करके आशा की जाती है कि देव शक्ति-बचा लेगी। बात यह है कि समय आने पर देवो को और इन्द्र को भी अपना सिंहासन छोड़कर जाना पड़ता है, तो क्या वे आप का सिहासन बराबर बरकरार रख सकेगे?

- जीवन-निर्माण

- भव-मार्ग के लिए, संसार के जीवो को जन्म-मरण के चक्र मे गोता लगाने के लिए, छोटे-बड़े किसी भी प्राणी को शिक्षा देने की, समझाने की, और जीवन को आगे बढ़ाने हेतु प्रेरणा देने की आवश्यकता नही है। एक छोटा सा कीड़ा जो गटर मे पैदा होता है, खाने-पीने की व्यवस्था वह भी कर लेता है। छोटी सी दरार मे पैदा होने वाली चीटी कहाँ से लाना, कैसे लाना, पदार्थ कहाँ है, मेरे अनुकूल क्या है, प्रतिकूल क्या है, अच्छी तरह जानती है, इन सारी बातो की जानकारी उसको भी है। पक्षी मे कहिए, पशु मे कहिए, देव मे कहिए, दानव मे कहिए, आहार सज्ञा, भय सज्ञा, मैथुन सज्ञा, परिग्रह सज्ञा - ये चारो प्रकार की सज्ञाएँ सब मे है। अपने जीवन को चलाना, बाधक तत्त्वों से अलग रहना, साधक तत्त्वो की ओर जुट जाना - इसके लिये किसी को प्रेरणा देने की जरूरत नही है। एकेन्द्रिय कहलाने वाला पेड़ भी पत्थर की चट्टान की ओर जड़ फैलाने के बजाय उधर जड़ फैलायेगा जिधर जमीन मे कोमलता है, स्निग्धता है, आर्द्रता है, गीलापन है। इसलिए एकेन्द्रिय जीव को अपनी जड़ किधर फैलानी चाहिए, कैसे फैलानी चाहिए वह स्वय जानता है कोई शिक्षा देने नही आता। इस प्रकार जीवन चलाने के लिए आहार कहाँ से प्राप्त होगा, जल कहाँ से प्राप्त होगा, हमको कैसे जीवन चलाना चाहिये, ये बाते एकेन्द्रिय से लेकर पचेन्द्रिय तक सारे जीव जानते है।
- जैसे आप विविध कलाएँ करते है, उसी तरह जानवर भी करते है। वे भी अपना जीवन चलाने मे दक्ष होते है, निपुण होते हैं। सामने वाले को तेजस्वी देखकर दुम दबाकर भाग जाते है और यदि सामने वाला कमजोर है तो एक कुत्ता भी बच्चे को देखकर, गुर्राकर, उसके सामने मुँह कर दो कदम आगे बढ़कर उसके हाथ से रोटी छीन सकता है। यदि लाठी वाला बड़ा आदमी सामने खड़ा है, उसके हाथ मे लाठी है तो कुत्ता भी जानता है कि उसके हाथ से रोटी कैसे लेना। वह नीचे लेटेगा, पेट दिखायेगा, जीभ लपलपायेगा और रोटी ले लेगा। आप भी यही करते है । इन्सपेक्टर को देखकर हाथ जोड़ते है और भोले भाले आदमी को देखकर आप भी गुर्राते है। यदि जीवन चलाने के लिये, ग्राहक पटाने के लिए, दुकानदारी जमाने के लिए, किसी को शीशी मे उतारने के लिए आपने यह किया है तो कहना चाहिए कि जानवरो से आप मे कोई नवीनता नही है।
- जैसे जल को ऊपर चढ़ाने के लिए नल की अपेक्षा होती है वैसे ही जीवन की धारा को ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए सत्सग, शास्त्र-श्रवण और शिक्षा का सहारा अपेक्षित है। भौतिकता के प्रभाव मे जो लोग जीवन को उन्नत बनाना भूल जाते है वे ससार मे कष्टानुभव पाते है और जीवन को अशान्त बना लेते है।

- जनधर्म

- लोग आरोप लगाते है कि जैन धर्म व्यक्ति का स्वार्थ साधता है, समाज-हित की बात नही कहता। वह व्यक्ति में स्वार्थीपन की भावना जगाता है। वह हर आदमी को, अपनी आत्मा का कल्याण करो, अपना जीवन बनाओ, यह शिक्षा देता है। जैन धर्म समाज-हित की बात नही कहता है। लेकिन वस्तुत ऐसा कहने वाले भाइयो मे इस सम्बन्ध का सही ज्ञान नही है। वे वास्तविक मूल रूप को नही समझ रहे है। भगवान् महावीर केवल व्यक्ति के

व्यक्तिगत जीवन को ऊँचा उठाने की बात ही नही कह रहे हैं, अपितु साथ मे व्यक्ति का अपना जीवन सुधारने के साथ विश्व-कल्याण का संदेश भी दे रहे हैं। यहाँ थोड़ा सा फर्क है (व्यक्ति अपना व्यक्तिगत जीवन निर्मल करता हुआ दूसरो के जीवन को निर्मल बनाता है। दुनिया के कई दूसरे मत, सप्रदाय, पार्टियॉ या राजनीतिक टुकड़ियॉ, जहाँ लोक हित, जन उपकार करने के मार्ग मे व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन को निर्मल करना भुला देते हैं, वहाँ हमारी जैन परम्परा कहती है कि पहले खुद का खयाल रखो, ऐसा नही होगा तो पददलित हो जाओगे। विश्वकल्याण की बात करते जाओ, कही ऐसा नही हो कि दूसरो के हित की बात करते हुए घर मे अन्धेरा ही रहे।)

- महावीर का कल्याण मार्ग केवल उपदेश के लिए ही नही है, लेकिन स्वय महावीर इस पर चले हैं। पहले स्वय उन्होंने अपने जीवन को बनाया और फिर ससार को उपदेश दिया।
- संसार को सुधारने के लिये उन्होने कोई जाति नही पकड़ी, कोई प्रान्त नही पकड़ा, कोई देश नही पकड़ा। उन्होने किसी पथ या सम्प्रदाय के दायरे को नही पकड़ा। लेकिन उन्होने अपनी आत्म-शुद्धि के साथ-साथ सारे विश्व के प्राणियो को उपदेश दिया। आर्यो मे जो जैन कुल मे जन्मे थे, पार्श्वनाथ की परम्परा मे चल रहे थे उनको तो कल्याण के मार्ग पर चलाया ही, लेकिन जो अनार्य थे उनको भी धर्म के मार्ग पर लाकर आर्य बनाया, धर्मी बनाया, बाल को पडित बनाया , जिससे उनका इहलोक और परलोक सुधर गया। महावीर ने स्वय ऐसा किया है और हमको भी इस तरह चलने का सदेश दिया है। उसी रास्ते पर चलते हुए हमे पवित्र मगल कार्य की आराधना करते हुए अपने जीवन को शुद्ध करके व्यक्ति-धर्म और समाज-धर्म दोनो का पालन करना है।
- जैन परम्परा नियतिवादी नही है, कर्मवादी नही है, भाग्यवादी नही है। जैन परम्परा भगवतवादी भी नही है। वह आत्मवादी है, पुरुषार्थवादी है। इसलिए भगवान् कहते हैं कि मानव ! यदि तेरे को कर्मो के बंधन काटने हैं तो अपने आप पुरुषार्थ करता जा। यदि तू अपने आप जगकर चला तो आवरण दूर हो जाएगा। लेकिन जगकर नही चला तो आवरण दूर होने वाला नही है।
- भूल जाइये आप इस बात को कि जैन धर्म का ठेका अग्रवालो, खण्डेलवालो, ओसवालो, पोरवालो अथवा अन्य जैन कही जाने वाली जातियो ने ही ले रखा है। धर्म की साधना मे वस्तुत कुल का सम्बन्ध नही, मन का सम्बन्ध है। हाँ, इस दृष्टि से आप भाग्यशाली है कि जैन कुल मे उत्पन्न हुए है। परम्परागत कुलाचार के फलस्वरूप आप सहज ही अनेक प्रकार के दुर्व्यसनो से, अनेक प्रकार की बुरी प्रवृत्तियो से बच गये है। इतने से ही यदि आप लोग निश्चिन्त हो गये और चारित्र मे आगे कदम नही बढ़ाया तो आत्मकल्याण नही कर सकेगे।

ज्ञान/अज्ञान

- अज्ञान दशा मे सुमार्ग या सन्मार्ग की ओर रुचि नही होती। तब आरम्भ, परिग्रह, विषय, कषाय आदि की ओर मन, वाणी एव काया की जो प्रवृत्ति होती है अथवा जो पुरुषार्थ होता है, सारा का सारा कर्मबध का कारण होता है।
- ये जो भौतिक पदार्थ धन, धान्य इत्यादि हैं, इनके कितने ही स्वामी बदल गये। फिर आप कैसे कहते है कि ये मेरे हैं। यह नगीना मेरा है, यह हवेली मेरी है, यह बंगला मेरा है इत्यादि। यह जो मेरेपन की बात है या जो बोध है, उसके बारे में शास्त्रों मे कहा गया है कि अज्ञान के कारण प्राणी ऐसा समझ रहा है।

- अज्ञानी और ज्ञानी के जीवन मे बड़ा अन्तर होता है। बहुत बार दोनो की बाह्य क्रिया एक-सी दिखाई देती है, फिर भी उसके परिणाम मे बहुत अधिक भिन्नता होती है। ज्ञानी का जीवन प्रकाश लेकर चलता है जबकि अज्ञानी अन्धकार मे ही भटकता है। ज्ञानी का लक्ष्य स्थिर होता है, अज्ञानी के जीवन मे कोई लक्ष्य प्रथम तो होता ही नही, अगर हुआ भी तो विचारपूर्ण नही होता। उसका ध्येय ऐहिक सुख प्राप्त करने तक ही सीमित होता है। फल यह होता है कि अज्ञानी जीव जो भी साधना करता है वह ऊपरी होती है, अन्तरग को स्पर्श नही करती। उससे भवभ्रमण और बन्धन की वृद्धि होती है, आत्मा के बन्धन नही कटते।
- 'ज्ञा' धातु से जानने अर्थ मे 'ज्ञान' शब्द की सिद्धि होती है। उसका अर्थ होता है-'ज्ञायते हिताहित धर्माधर्म येन तद् ज्ञान' अर्थात् जिसके द्वारा हिताहित या धर्माधर्म का बोध होता है, जो कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का और सत्य-असत्य का बोध कराता है, मोक्ष मार्ग का बोध कराता है, उसको ज्ञान कहते है। इसका मतलब यह हुआ कि ज्ञान एक वह साधन है, जिसके द्वारा आत्मा अपनी शक्ति का, सत्यासत्य के बोध मे उपयोग कर सके। सत्यासत्य का बोध करने वाले गुण का नाम ज्ञान है। ज्ञान सम्यक् भी होता है और मिथ्या भी होता है। सक्षेप मे कहा जाये तो पदार्थों के स्वरूप की यथार्थ अभिव्यक्ति का नाम सम्यक् ज्ञान है।
- मोक्ष मार्ग मे जिस प्राणी को लगना है, उसके लिए सम्यक् ज्ञान का होना परमावश्यक है। अज्ञान और कुज्ञान से हटकर सम्यक् ज्ञान मे जब प्राणी का प्रवेश होगा, तब समझना चाहिए कि वह मोक्ष-मार्ग का पहला पाया या पहला चरण प्राप्त कर सका है।
- वर्ण-ज्ञान, भाषा-ज्ञान, कला-ज्ञान, लेखन-ज्ञान, पदार्थ-ज्ञान, रसायन-ज्ञान इत्यादि भिन्न-भिन्न ज्ञान है। ये मानव को पदार्थ का बोध कराने मे सहायक सिद्ध होते है, लेकिन जब तक सम्यक् ज्ञान नही हो जाता, तब तक ये सभी लौकिक ज्ञान भव-बधन को काटने मे सहायक नही होते।
- ऐसा ज्ञान जिससे भव-बधन की बेड़ी काटना सम्भव हो, किसी पुस्तक से, किसी कॉलेज से, किसी विश्वविद्यालय से प्राप्त होने वाला नही है।
- जीव का स्वभाव ज्ञानस्वरूप होने पर भी ज्ञान तब तक प्रकट नही होता, जब तक उस पर से आवरण दूर नही होता। रोशनी देना सूर्य का स्वभाव होता है। प्रकाश देना सूर्य का स्वभाव है, फिर भी यदि बादल छाए हुए है, धुध छाई हुई है या धूल जमी हुई है तब तक सूर्य की रोशनी नही मिलती है। इसी तरह आत्मा मे जो ज्ञान का गुण है, उसको रोकने वाला कर्मावरण है। पहला आवरण है मिथ्यात्व, दूसरा आवरण है कषाय तथा तीसरा आवरण है ज्ञानावरणीय कर्म। अज्ञान के हटते ही ज्ञान प्रकट हो जाता है। सम्यक् ज्ञान को प्राप्त करने के लिए मोह कर्म, ज्ञानावरणीय कर्म और अन्तराय कर्म का क्षयोपशम जरूरी होगा। केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हो जाए और मोह आदि क्षय नही हो तो ज्ञान का सम्यक् होना सम्भव नही है।
- ज्ञान कैसे प्राप्त होता है? मिथ्यात्व और अज्ञान के हटने से। मिथ्यात्व और अज्ञान की गांठ कैसे कटेगी? ज्ञान होगा तब। इसलिए इनका परस्पर सम्बध है। एक को दूसरे की अपेक्षा है। शास्त्रकार ने कहा है—

"नादंसणिस्स नाणं।"

- जब तक मानव के मन में सच्ची श्रद्धा नही होगी, तब तक ज्ञान पैदा नही होगा और दूसरी तरफ जब तक ज्ञान प्राप्त न हो जाए, तब तक सच्ची श्रद्धा नही होगी। इस तरह इन दोनो का परस्पर सम्बध है।
- मोक्ष का पहला सोपान, पहली सीढ़ी ज्ञान है। ज्ञान की प्राप्ति हो जाने पर ससार से ममता हट जायेगी। धन की

और कुटुम्ब की ममता की बेड़ियों का बधन ढीला हो जाएगा। इससे व्यावहारिक जीवन मे भी फर्क पड़ेगा।

- चाहे छोटी क्रिया हो अथवा बड़ी क्रिया, वस्तुत ज्ञान और विवेक से उस क्रिया की चमक बढ़ती है। जिस क्रिया मे ज्ञान और विवेक का पुट नही है, वह क्रिया चमकहीन हो जाती है।

नाणं सज्झाणं चरणस्स सोहा।

- उत्तम ध्यान वाला 'ज्ञान' चारित्र एव तप की शोभा है।
- जिसके भीतर की ज्ञान-चेतना जागृत हो गई, वह आत्मा बिना सुने, बिना पढ़े भी ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करती है, जैसे नमिराज की ज्ञान-चेतना चूड़ियों की झकार को सुनकर जागृत हो गई। मृगापुत्र ने मुनियो को देखकर ज्ञान प्राप्त कर लिया। ऐसे अनेक उदाहरण शास्त्र व साहित्य मे उपलब्ध होते हैं। ऐसा भी उदाहरण उपलब्ध होता है कि चोर को वध-स्थल पर ले जाते देखा और समुद्रपाल को ज्ञान उत्पन्न हो गया। यद्यपि चोर ज्ञान-प्राप्ति का निमित्त नही है, लेकिन सोचने वालो ने उसे अपनी ज्ञान-चेतना को जागृत करने का साधन बनाया। इसका तात्पर्य यह हुआ कि ज्ञान अपने अनुभव से भी प्राप्त किया जा सकता है और सन्त-समागम एव उपदेश से भी मिलाया जाता है। आज सर्वसाधारण के लिए सत-समागम का साधन सुलभ है। अधिकाश लोगो को अधिकाश ज्ञान सत्सग के साधन से ही उपलब्ध होता है। लेकिन अनुभव जगाकर अपने ज्ञान-बल से भी बहुत से व्यक्ति वस्तुतत्त्व का बोध प्राप्त कर सकते हैं।
- जिसने जीव और पुद्गल का सच्चा ज्ञान प्राप्त कर आत्मतत्त्व को पहचान लिया हो, जिसकी बुद्धि परिपक्व हो और उसमे ज्ञान के साथ वैराग्य हो तो उसको कोई खतरा नहीं रहता। जैसे दीपक मे तेल है और बत्ती ठीक स्थिति मे है तो हवा के साधारण छोटे-मोटे झोको से वह दीपक बुझ नही सकता। लेकिन यदि तेल ही समाप्त हो गया तो वह दीपक साधारण-सा झोका पाकर भी बुझ जाएगा। इसलिए क्या गृहस्थ जीवन मे और क्या त्यागी जीवन मे, यदि हम चाहते है कि जीवन कुमार्ग और कुसगति मे पडकर गलत रास्ते पर नही लगे, तो श्रुत-ज्ञान का जल अधिक मात्रा मे डालना चाहिए, तभी खतरे से बचे रहेगे।
- ज्ञान का धर्म यह है कि वह मानव जीवन मे एक विशेष प्रकार का प्रकाश प्रदान करता है। ज्ञान केवल वस्तुओ को जानना मात्र ही नही है।
- ज्ञान, वस्तुत मूल मे एक है। उसके पॉच भेद अपेक्षा से, व्यवहार से, किये गये है। केवल-ज्ञान का प्रकाश आप मे, हम मे मौजूद होते हुए भी जब तक पुरुषार्थ का जोर नही लगे और कर्मो का पर्दा नही हटे, तब तक प्रगट नही होता। जैसे चकमक पत्थर मे आग की चिनगारी है लेकिन उसे रगड़ा न जाए तो वह नही निकलती। धूम्रपान करने वाले किसान लोग छोटी-सी डिबिया रखा करते है, एक नली रखा करते है, जिसमे वे कपड़े की बत्ती रखते हैं। ज्यो ही बटन दबाया पाषाण मे घर्षण होता है और आग लग जाती है। बीड़ी जल जाती है और बीड़ी, सिगरेट पीने वालो का काम बन जाता है। किन्तु जब तक वह डिबिया पाकेट मे बंद है, वह महीना, दो महीना या चार महीना वही पड़ी रही तो उसमे चिनगारी नही निकलेगी। जैसे एक चकमक की पेटी और उस पाषाण मे ज्योति मौजूद है, पर घर्षण के बिना प्रकट नही होती, ठीक उसी तरह आप मे, हम मे ज्ञान की ज्योति है, लेकिन उस ज्योति को प्रकट करने के लिए घर्षण आवश्यक है। घर्षण किससे? ज्ञान प्रकट करने के लिए ज्ञानी से घर्षण हो तो ज्ञान प्रकट होता है। अज्ञानी से बातचीत कर रहे होगे तो लड़ाई होगी, झगड़ा होगा और यदि समाज में कोई व्यक्ति प्रिय या अप्रिय बात निकालेगा तो भी झगड़ा हो जाएगा। किसी अज्ञानी या बुरे

आदमी के पास बैठेगे तो या तो क्रोध जगेगा या मोह जगेगा या काम जगेगा। किसी कामी के पास बैठे या कामिनी के पास बैठे तो वहाँ क्रोध जगा, मोह जगा, कामना जगी, लेकिन ज्ञान नही जगा। यदि आप अपने भीतर ज्ञान की ज्योति जगाना चाहते है तो पुरुषार्थ कीजिए।

- तत्त्वो के वास्तविक स्वरूप को समीचीनतया समझ लेने का नाम ही सम्यग्ज्ञान है। कमाने, खाने, पीने, पहनने, राज करने, ग्राहक पटाने के ज्ञान का नाम सम्यग्ज्ञान नही है। अधिकार प्राप्त करना, बिगाड़ना, अनुकूल करना, यह सब सम्यग्ज्ञान नही, यह तो व्यावहारिक ज्ञान है। सासारिक व्यवहार मे व्यवहार-ज्ञान का उपयोग होता है। पर सम्यग्ज्ञान का उपयोग मोक्ष-मार्ग के साधन के रूप मे है। स्व-पर कल्याण के लिए जिस ज्ञान की उपयोगिता है, वह सम्यक् ज्ञान है।
- राख के विपुल-विशाल ढेर के नीचे दबे हुए ऊपले के मध्य भाग मे छिपी चिनगारी के समान निगोद के जीवो मे भी ज्ञान सदा विद्यमान रहता है। जिस प्रकार राख के ढेर के हट जाने पर कडे के अन्तरग भाग मे छिपी आग की चिनगारी वायु का सयोग पाकर सजग हो जाती है। इसी प्रकार ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से आत्मा का दबा हुआ ज्ञान प्रकट होकर प्रकाश में आता है।
- ज्ञान के सम्यग्-बल के बिना दर्शन की शुद्धि नही होती। दर्शन से मतलब श्रद्धा-विश्वास से है। ज्ञान के बिना श्रद्धा की पवित्रता, निर्मलता मे व्यवस्थित रूप नही आता।
- कोई भी जीव, कोई भी प्राणी चेतनाशून्य और ज्ञानशून्य नही है। उसमे बोध है, चेतना है, लेकिन उसमे हिताहित का खयाल नही है, इसलिए हम उसे सामान्य ज्ञान कहेगे। वह जरा घट गया तो अज्ञान की स्थिति मे चला जायेगा।
- ज्ञान वह है, जो हमारे बधन को काटे। बधन को बनाने वाला मकड़ी का ज्ञान है। मकड़ी के बारे मे कहा जाता है कि दूसरे जन्तु आकर उसके अण्डो को उठा न ले जाएँ इसलिए उनसे बचने के लिए वह अपने इर्द-गिर्द जाल बुनकर दूसरे प्राणियो को आने से रोकने की व्यवस्था करती है। इस तरह मकड़ी अपना जाल फैलाती है, सुरक्षा के लिए, लेकिन वह जाल हो जाता है मकडी को उलझाने के लिए। मकड़ी ने अपने मुँह से ताँता निकाला और उसमे उलझकर बध गई और अपने को खत्म कर गई। ज्ञानियो ने कहा उसका ज्ञान मिथ्या है। वह अज्ञानी है, क्योकि उसके ज्ञान ने उसी को फसा दिया, उलझा दिया, बाहर निकलने का रास्ता नही रहा, इसलिए उलझकर वह मर गई।
- इसी तरह आपने अपने ज्ञान के बारे मे कभी सोचा कि आपकी दशा क्या है? नौजवान लड़के ने सोचा कि एक हूँ, अनेक हो जाऊँ। कल्पना उठी और उसने विवाह कर लिया। एक से दो हुआ। दो से तीन, चार, पाँच और छह हुआ। वह जब एक था तब आगे का लक्ष्य तय करने मे आजाद था, यानी मुक्त था। जब चाहा तब कही जा सकता था, जब चाहा तब महीने भर के लिए बाहर रह सकता था। शिक्षण के लिए विलायत जा सकता था। जब चाहा तब घूमने निकल सकता था। इस तरह वह आजाद था। उसने सोचा कि एक से अनेक हो जाऊँ। उसके मुँह से ताँत या लार की तरह स्नेह की ताँत निकली और उसने बधन स्वीकार किया। अब वह बाहर आने-जाने मे स्वाधीन नही।
- जाल बनाने वाली मकडी मे जाल बनाने की ताकत है, लेकिन जाल को तोड़ने की क्षमता नही है, क्योंकि वह अज्ञानी है। लेकिन मानव मे दोनो योग्यताएँ है। अज्ञान के वशीभूत होकर मानव जाल फैलाता है। लेकिन

जाल को काटकर बाहर निकलने के लिए उसे ज्ञान का बल बढ़ाना होगा। जब ज्ञान होगा तभी मानव समझेगा कि "मैं कौन हूँ और जाल को कैसे काटा जाता है?"

- ज्ञान हो जायेगा तब वह समझेगा कि आत्मा ज्ञान और दर्शन वाली है, वह सर्वथा अपनी है और जो धन, कुटुम्ब, परिवार और मित्र आदि बाह्य जगत की जितनी चीजे दिखती हैं, वे सब सयोग मात्र हैं। आप अपने तन पर रहने वाले कुर्ते को भी अपना कब तक कहते हो? आपने उसको फेक दिया, निकाल दिया तब क्या कहोगे? आपके सिर पर जब तक बाल हैं, तब तक कोई आपके बाल या चोटी को पकड़कर खीचे तो क्या करोगे? आप उससे लड़ोगे और कहोगे कि अरे भाई मेरे बालो को क्यो खीचता है? तेरे बाल खीचे जाए तो तुझे कैसा लगेगा? लेकिन आपने जब उन्ही बालों को किसी हज्जाम से कटवा दिया और जब हज्जाम उन बालो को नाले मे डालता है तब आपने उससे कभी नही कहा कि मेरे बालो को कहाँ डाल रहा है? बीसों बार आपने अपनी जिन्दगी मे इन बालो को कटवाया होगा, लेकिन ये बाल जब तक आपके सिर पर हैं तभी तक आपने समझा कि ये मेरे हैं। आपके कपाल से जब तक इनका सयोग रहा तब तक आपने समझा कि ये मेरे हैं सयोग हट गया तो आपके नही रहे।
- समझ लोगे उस दिन भौतिक पदार्थो मे उलझने के बजाय देव-गुरु की भक्ति मे लगते देर नही लगेगी। आपको लगेगा कि विवेक मेरा बधु है, ज्ञान मेरा पुत्र है और सुमति मेरी सखी है, सद्बुद्धि मेरी सच्ची अर्धांगिनी है। मेरी सदा पालन-रक्षण करने वाली प्रिया कोई है तो वह है 'सुमति'। मेरा बच्चा कौन है? ज्ञान। और बधु है, विवेक। यदि यह समझ मे आ जाए, तो ससार के बधन मे मकड़ी के जाल की तरह उलझने की स्थिति नही आएगी।
- आज के युग की यह विशेषता और विचित्र प्रवृत्ति है कि मनुष्य भूल करने पर भी अपनी गलती को मानने के लिए तैयार नही होता, दूसरो के सामने तो हरगिज नही। यहाँ तक कि बहुत से लोग तो दोष स्वीकार करना मानसिक दुर्बलता मानते हैं। भूल को स्वीकार न करना ही आज के मानव का सबसे बड़ा दुर्गुण है, दोष है। इस दोष को, दुर्गुण को निकालने का, दूर करने का अमोघ साधन है—आध्यात्मिक ज्ञान। जब मनुष्य अपनी आत्मा का ज्ञान करने की ओर उन्मुख होता है तो वह स्वय ही, बिना किसी दबाव के, अपने दोषो को स्वीकार करता है और उन्हे निकाल फेकता है।
- यो तो आत्मा का गुण होने के कारण ज्ञान एक है तथापि क्षयोपशम के भेद से ज्ञान के भी पॉच भेद माने गए हैं—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यव ज्ञान और केवलज्ञान। कहने को केवलज्ञान पॉचवॉ ज्ञान है, पर जब केवलज्ञान प्रकट हो जाता है, तब पहले के मति-श्रुत आदि चारों ज्ञानो की आवश्यकता नही रहती। उनका अस्तित्व ठीक उसी प्रकार समाप्त हो जाता है जिस प्रकार कि समुद्र मे मिल जाने पर नदियो का।

ज्ञानी को दुःख नही होता है, ज्ञानी धीरज नही खोता है।
अज्ञान हटाकर ज्ञान धरो, स्वाध्याय करो, स्वाध्याय करो॥

- ज्ञान जब मन मे, अपने सही रूप मे प्रगट हो जाता है तब आदमी पैसे को साधारण चीज़ समझकर चलता है। वह सोचता है कि पैसा अलग चीज़ है और हमारा ज्ञान गुण अलग है। पैसा नाशवान है और ज्ञान शाश्वत है।
- चाहे कोई कितना ही बड़े से बड़ा सम्पत्ति वाला क्यो न हो, शरीर छूटने के साथ ही उसका अरबो-खरबो का धन यही धरा रह जाता है, पर-भव मे वह किंचित्मात्र भी साथ नही चलता। एक पैसा भी साथ नही जाता, सब यही

रह जाता है। इसी तरह एक आदमी सामायिक करता है, रात्रि-भोजन नही करने का नियम ले रखा है, शीलव्रत का खध लिया है—ये नियम कब तक रहेगे ? ये नियम भी शरीर छूटने के साथ ही छूट जाते है। देह छूटने के साथ धन भी छूट गया और व्रत-नियम भी छूट गये। किन्तु एक फर्क है, वह यह कि धन छूटने के साथ ही धन का जो सुख था, आनद था, वह सुख भी यही छूट गया, पर व्रत-नियम के पालन से जो पुण्य-लाभ सचित किया है, वह परलोक मे भी साथ चलेगा। व्रत तो इसी जन्म तक रहे, लेकिन व्रत-पालन का लाभ, उससे उपार्जित किया हुआ पुण्य परलोक मे भी उसके साथ चलेगा। व्रत-नियमो से उसकी आत्मा की जो शक्ति बढ़ी है, वह परलोक मे भी साथ रहेगी।

- ज्ञान और दर्शन, ये इस जन्म की दो चीजे ऐसी है जो अगले जन्म मे भी साथ चलती हैं। इस जन्म मे ज्ञान की अच्छी आराधना की, उसमे मन को अच्छी तरह से रमाया, शास्त्रो के पठन-पाठन मे मन रमा रहा और आयु पूर्ण कर देवगति मे गया तो देवगति मे भी उसके जीवन मे वह ज्ञान प्रकाश करेगा। उसकी आत्मा की ज्योति अन्य देवो की अपेक्षा अधिक प्रदीप्त होगी। इसीलिए कहा है कि ज्ञान और दर्शन इस जन्म मे भी रहते हैं और अगले जन्म मे भी साथ रहते है।
- भगवान ने फरमाया कि ज्ञान-प्राप्ति के दो उपाय है। एक तो यह है कि शास्त्रो के जानकार ज्ञानी का सत्सग मिले, और दूसरा शास्त्रो के पढ़ने-पढ़ाने का अवसर मिले और साथ ही साथ शास्त्रो की सुलभता हो, तभी ज्ञान प्राप्त होगा।
- एक आदमी व्याख्यान सुनने के बाद घर जाकर उस पर चिन्तन करता है तो धीरे-धीरे उस ज्ञान का अभ्यास होता है। दूसरे आदमी ने व्याख्यान से उठते ही पल्ला झटक दिया। सोचा, अपन ने तो महाराज का व्याख्यान सुन लिया, अब काम-धधे पर लगना है, महाराज के ज्ञान से करना क्या है। ज्ञान को समझने की योग्यता होते हुए भी उसे ज्ञान मे रुचि नही, इसलिए वह ज्ञान को न तो समझ सकता है और न ही सीख सकता है।
- ऐसा क्या जादू था, क्या कारण था, भगवान् नेमिनाथ और भगवान् महावीर ने ऐसी कौन-सी वाणी कही कि उसे एक बार सुन कर ही बड़े-बडे राजघरानो के युवक, युवतियॉ, वृद्ध, वृद्धाऍ, बालक तथा बड़े-बड़े गाथापति, कोटिपति अनुपम ऐश्वर्य, अतुल धन-सम्पत्ति और विपुल भोग-सामग्री को ठुकरा कर कटकाकीर्ण अति कठोर साधना-पथ पर अग्रसर हो गये ? जहॉ तक मै समझ पाया हूँ, उनको (श्रोताओ को) सही ज्ञान हो गया। भगवान् की वाणी को सुन कर उन्हे विष और अमृत का सच्चा ज्ञान हो गया और इसी सही ज्ञान के फलस्वरूप उन्होने भौतिक-सम्पदा, ऐश्वर्य एव भोगोपभोग की सामग्री को विष समझ कर ठुकरा दिया और सयम को अमृत समझ कर अंगीकार कर लिया, आत्मसात् कर लिया।
- ज्ञान की भक्ति, विनय एव आराधना करने से हमारी आत्मा पर अनन्त-अनन्त काल से जमा अज्ञान का अधेरा दूर हो सकता है।
- ज्ञान का विरोध करना, ज्ञान को छिपाना या ज्ञानी के उपकार को नही मानना, ज्ञान मे बाधा देना, ज्ञान और ज्ञानी की आसातना करना, ज्ञान के प्रति अनादर प्रकट करना, ज्ञान की मखौल उड़ाना—ये ज्ञान पर आवरण के प्रमुख कारण हैं। इन कारणो को जब कोई जान-बूझकर अथवा अनजान मे काम लेगा तो अज्ञान का जोर बढ़ेगा और ज्ञान पर आवरण आ जायेगा।
- व्यावहारिक ज्ञान की दलाली के परिणाम कभी अच्छे और कभी बुरे भी हो सकते है। यह देखा गया है कि

व्यावहारिक शिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्ति कभी-कभी अपने सहयोगियो की सत्ता को हिला देते और उखाड़ फेंकते है। उनमे व्यावहारिक ज्ञान के साथ-साथ महत्त्वाकाक्षा भी जागृत हो जाती है। वे किसी के अनुशासन मे, किसी की अधीनता मे, किसी के हाथ के नीचे रहना बहुत कम पसन्द करते हैं। इसलिए यदि कोई बात उनके मन में अनुकूल नही हो तो चाहे उनकी सहायता करने वाला हो, चाहे प्रिन्सिपल हो, शिक्षा मत्री, वाइस-चान्सलर हो अथवा कोई भी उनका बड़ा उपकारी सहायक हो, जिसने उन्हे शिक्षण मे पूरा सहयोग दिया हो, छात्रवृत्ति दी हो, उन सबको वे उखाड़ कर अलग कर देते हैं। इस प्रकार व्यावहारिक ज्ञान मे दी हुई सहायता कभी-कभी सहायक के लिए अहितकर भी हो सकती है। परन्तु सम्यग्ज्ञान मे कभी स्वय के लिए अथवा दूसरे के लिए अहितकर मार्ग मे बढ़ने जैसी स्थिति नही होती। इसीलिए उसे सम्यग्ज्ञान कहा है।

- यदि वीतराग की वाणी को सुनकर उसे कोई ग्रहण न करे तो उसकी आत्मा मे बल नही आएगा, उसमे बुराइयो से जूझने की शक्ति नही होगी। ऐसी स्थिति मे समझ लेना चाहिए कि श्रोता मे कुछ मानसिक रोग अवशिष्ट है। सुनी हुई बात का मनन करने से आत्मिक बल बढ़ता है। मनन के बिना सुना हुआ ज्ञान स्थिर नही होता।
- जैसे अज्ञानावस्था मे शिशु मल के मर्म को समझे बिना उसमे रमते हुए भी ग्लानि और दुःख का अनुभव नही करता और वही फिर होश होने पर मल से दूर भागता और नाक-भौं सिकोड़ता है, वैसे ही सद्ज्ञान प्राप्त नही होने तक आत्मा अबोध बालक की तरह कर्म-मल लिप्त बना रहता है, किन्तु ज्योही सद्गुरु की कृपा से सद्ज्ञान की प्राप्ति हो गयी, फिर क्षण भर भी वह कर्म-मल को अपने पास नही रहने देता।
- ससार के सभी पदार्थ मनुष्य के लिए अनुकूल या प्रतिकूल निमित्त बनकर कार्य करते है। जो मनुष्य अज्ञान मे सोये हो उनके लिए ये वस्तुएँ अध पतन का कारण बन जाती हैं। पर जिनके हृदय मे ज्ञान-दीप का प्रकाश फैला हुआ है, उन्हे ये पदार्थ प्रभावित नही कर सकते। जागृत मनुष्य पतन के कारणो को प्रभावहीन कर देते है। द्रव्य, क्षेत्र और काल की तरह भाव भी मानव के भावो को जागृत करने मे कारण बनते है, किन्तु 'पर' सम्बन्धी भाव मे जैसा अपना अनुकूल प्रतिकूल भाव मिलेगा, उसी के अनुसार परिणति होगी।
- ज्ञानवृद्धि के लिए प्रवचन सुनने वाले श्रोताओ को लिखने की आदत रखनी चाहिए। इससे मनन का अवसर मिलेगा और कई बाते आसानी से याद रखी जा सकेगी। आपको अनेक सत्पुरुषो के उपदेश श्रवण का अवसर मिलता है और उसमे कई बाते तो इतनी असरकारक होती है कि जिनके स्मरण से जीवन की दिशा बदली जा सकती है और आत्मा को ऊँचा उठाया जा सकता है, किन्तु लिपिबद्ध नही होने से वह थोड़े समय मे ही मस्तिष्क से निकल जाता है।
- ज्ञान आत्मा का स्वभाव है। आत्मा कितनी ही मलिन और निकृष्ट दशा को क्यो न प्राप्त हो जाए, उसका स्वभाव मूलत कभी नष्ट नही होता। ज्ञानालोक की कतिपय किरणे, चाहे वे धूमिल ही हो, मगर सदैव आत्मा मे विद्यमान रहती है। निगोद जैसी निकृष्ट स्थिति मे भी जीव मे चेतना का अश जागृत रहता है। इस दृष्टि से प्रत्येक आत्मा ज्ञानवान ही कही जा सकती है, मगर जैसे अत्यल्प धनवान को धनी नही कहा जाता, विपुल धन का स्वामी ही धनी कहलाता है, इसी प्रकार प्रत्येक जीव को ज्ञानी नही कह सकते। जिस आत्मा मे ज्ञान की विशिष्ट मात्रा जागृत एव स्फूर्त रहती है, वही वास्तव मे ज्ञानी कहलाता है।
- ज्ञान की विशिष्ट मात्रा का अर्थ है—विवेकयुक्त ज्ञान होना, स्व-पर का भेद समझने की योग्यता होना और निर्मल ज्ञान होना। जिस ज्ञान मे कषायजनित मलिनता न हो वही वास्तव मे विशिष्ट ज्ञान या विज्ञान कहलाता है।

साधारण जीव जब किसी वस्तु को देखता है तो अपने राग या द्वेष की भावना का रग उस पर चढ़ा देता है और इस कारण उसे वस्तु का शुद्ध ज्ञान नही होता। इसी प्रकार जिस ज्ञान पर राग-द्वेष का रग चढ़ा रहता है, जो ज्ञान कषाय की मलिनता के कारण मलिन बन जाता है, उसे समीचीन ज्ञान नही कहा जा सकता।

- सम्यग्ज्ञान जिन्हे प्राप्त है , उनका दृष्टिकोण सामान्य जनो के दृष्टिकोण से कुछ विलक्षण होता है। साधारण जन जहाँ बाह्य दृष्टिकोण रखते है, ज्ञानियो की दृष्टि आतरिक होती है। हानि-लाभ को आकने और मापने के मापदंड भी उनके अलग होते है। साधारण लोग वस्तु का मूल्य स्वार्थ की कसौटी पर परखते हैं, ज्ञानी उसे अन्तरंग दृष्टि से अलिप्त भाव से देखते है, इसी कारण वे अपने आपको कर्म-बध के स्थान पर भी कर्म-निर्जरा का अधिकारी बना लेते है। अज्ञानी के लिए जो आस्रव का निमित्त है, ज्ञानी के लिए वही निर्जरा का निमित्त बन जाता है। आचाराग मे कहा है—

  'जे आसवा ते परिस्सवा,
  जे परिसवा ते आसवा।

- ससारी प्राणी जहाँ हानि देखता है ज्ञानी वहाँ लाभ अनुभव करता है। इस प्रकार ज्ञान दृष्टि वाले और बाह्य दृष्टि वाले मे बहुत अन्तर है। बाह्य दृष्टि वाला भौतिक वस्तुओ मे आसक्ति धारण करके मलिनता प्राप्त करता है, जबकि ज्ञानी निखालिस भाव से वस्तुस्वरूप को जानता है, अतएव मलिनता उसे स्पर्श नही कर पाती। बहुत बार ज्ञानी और अज्ञानी की बाह्य चेष्टा एक-सी प्रतीत होती है, मगर उनके आतरिक परिणामो मे आकाश-पाताल जितना अतर होता है। ज्ञानी जिस लोकोत्तर कला का अधिकारी है, वह अज्ञानी के भाग्य मे कहाँ ?

- ज्ञान के जलाशय मे डुबकी लगाई जाये तो हमारा ताप मन्द पड़ेगा। क्रोध, मान, माया, लोभ की ज्वालाएँ उठ रही है, दिल-दिमाग को परेशान कर रही है उन्हे हम शान्त कर सकते हैं, यदि ज्ञान के जलाशय मे गोता लगाया जाये। दूसरा लाभ इससे यह है कि हमारे मन का मैल दूर होगा, अज्ञान दूर होगा, ज्ञान की कुछ उपलब्धि होगी, जानकारी होगी। तीसरा लाभ है वीतराग वाणी ज्ञान का अग है तो प्राणी का जो तृष्णा का तूफान है, वह तूफान भी जरा हलका होगा जिससे मन मे जो अशान्ति है, बेचैनी है, आकुलता है वह दूर होगी। इसलिये हमारा प्राथमिक और जरूरी कर्तव्य है कि हम प्रात काल शारीरिक कर्मो से निवृत्त होकर जो लोकोत्तर कर्म है—वीतराग की भक्ति का, धर्म-चिन्तन का, गुरु सेवा का, उसकी भी आराधना करने मे तत्पर रहे।

- विद्या का सार है वास्तव मे सही निश्चय का हो जाना। दुनिया भर के पोथे पढ़ लेना,यह विद्या का सार नही है। अच्छा बोल लेना, अच्छा लिख लेना, यह विद्या का सार नही है। बोलना, लिखना, पढ़ना, समझना और समझाना यह तो एक प्रकार की कला है, अक्षर ज्ञान है। लेकिन वास्तविक ज्ञान वास्तविक विद्या और ही चीज है। वास्तविक विद्या तो वही है, जिसके द्वारा मानव अपने स्वरूप को समझता है,आत्मोन्मुख होता है और उसको निश्चय हो जाता है कि ससार मे सार क्या है।

- जिसका ज्ञान ही ढक गया, जिसके ज्ञान पर पर्दा आ गया, जिसकी समझ समाप्त हो गई तो वह आदमी अपने किसी काम को सुन्दर ढग से नही कर सकता है।

- अक्षर-ज्ञान मे पण्डित बन जाने पर भी और पी-एचडी की डिग्री हासिल कर लेने पर भी कोई ज्ञान पा गया है, यह नियम नही है। यदि वह अपनी आत्मा की शुद्धि करेगा, विषय-कषायों को हटाएगा, वीतराग-वाणी का चिन्तन करेगा तो ज्ञान पाएगा।

- जिस मनन से अपनी आत्मा, अपनी बुद्धि मोक्ष की ओर जावे, बन्धन काटने की ओर जावे, उसे बोलते है ज्ञान। ज्ञान क्या है और विज्ञान क्या है ? यह शिल्पकला, इंजीनियरिंग, डॉक्टरी, वकालात आदि जितने प्रकार के शिक्षण है यह सब विज्ञान है, ज्ञान नही। मोक्ष में धी का होना ज्ञान है। अपनी बुद्धि बन्धन काटने मे लगे, मोक्ष की ओर लगे, वह ज्ञान है। ससार मे ऐसे मानव बहुत कम होगे जिनको क्रोध आवे ही नही। कषाय आयेगा, लेकिन जो ज्ञान वाले है उनमे और बिना ज्ञान वालों मे फर्क इतना ही है कि ज्ञान वाले कषाय को रहने नही देगे।

ज्ञान एव वैराग्य

- ज्ञान एव वैराग्य की शिक्षा से पापी भी सुधर सकते है। सुधर्मा के द्वितीय पट्टधर जम्बू एव उनके शिष्य प्रभव का जीवन इसमे साक्षी है। तरुणाई मे ईंन्द्रिय निग्रह अतिदुष्कर कहा गया है। जम्बू के वैराग्य एवं ज्ञान का असर चोरनायक प्रभव पर पड़ा। ५०० चोरो के साथ उसने भी व्रत लेना चाहा। जम्बू ने बड़ी प्रसन्नता से उसको साथ लिया और गुरु चरणो मे पहुँच कर दीक्षित हो गये। ४४ वर्षो तक जम्बूस्वामी ने शासन दिपाया, फिर निर्वाण पधारे। इनके पद पर प्रभव विराजे, कहाँ चोरो का नेता और कहाँ श्रमणसघ का नायक! जीवन बदल गया। इसीलिए कहा है - 'घृणा पाप से हो, पापी से कभी नही लवलेश।'
- गगन से बरस कर मेघ जैसे भूमि की गर्मी शान्त करता और गलियो की गदगी को धो देता है, वैसे ही हमे ज्ञानवर्षा से कषायो की जलन को शान्त करना और विकारो के मैल को धो डालना है।

ज्ञान-पिपासा

- प्रतीत होता है कि उस युग के मानव, चाहे वे अमीर हो अथवा गरीब, सभी अपना जीवन मात्र खाने-कमाने मे ही व्यर्थ नही गवाते थे, बल्कि वे धर्म का मूल्य भी समझते थे। अपने जीवन को कैसे सार्थक किया जाए, इस बात की जिज्ञासा भी उनके मन मे रहती थी। यही कारण है कि सुबाहु कुमार प्राप्त भोग -सामग्री से उन्मुख होकर प्रभु सेवा मे पहुँचा। यदि कोई अन्य व्यक्ति वहाँ जाता तो, सभव है आप सोचते कि भगवान् महावीर से कुछ पाने की आशा से जा रहा है। कोई व्यवसायी जिसे व्यवसाय मे अभी कुछ मिला नही है, वह सतो के पास इसलिए भी जा सकता है कि सत यदि ठडी नजर से उसकी ओर देख ले तो उसे लाभ हो सकता है। कोई व्यक्ति विदेश जा रहा है तो वह सतो के पास इस निमित्त भी आएगा कि महाराज का आशीर्वाद मिलने से उसकी यात्रा सफल हो सकती है। आप ऐसी कल्पना न करे कि सुबाहु भी ऐसा ही था। सुबाहु राजघराने मे उत्पन्न एक राजकुमार था, उसे किसी भी वस्तु का अभाव नही था। वह मात्र ज्ञान की पिपासा लेकर प्रभु की शरण मे पहुँचा था।
- दुनिया मे बड़े से बड़े लोग, चाहे धनी हों अथवा अधिकारी वर्ग या शासक वर्ग के, सभी विषय-वासना के पीछे दौड़ रहे है। लेकिन इसके विपरीत प्रभु महावीर इन्द्रिय भोग को छोड़ आये है, हजारो श्रमण अपने विषय-कषायो को छोड़कर इनके पीछे चल रहे है। देखे उनको इसमे क्या आनद आ रहा है? उनकी जीवन चर्या क्या है? इस जिज्ञासा को लेकर सुबाहु पहुँचा भगवान् की चरण-सेवा मे। यह जिज्ञासा मात्र सुबाहु की नही, सबकी हो सकती है।

- ज्ञान कहाँ से शुरु होना चाहिए? घर से रवाना हुए, यह सोच कर कि मदिर जाना है, उपासरे जाना है या सत्सग मे जाना है। तभी से आपके मन मे, धर्म की, ज्ञान की बात पैदा होती है। वही से शान्त होकर चलना चाहिए। यदि रास्ते मे व्यसन की चीज़ का इस्तेमाल किया तो मन और मस्तिष्क पर पवित्र वातावरण का असर नहीं पड़ेगा। लेकिन आज आपका ज्ञान इतना मद हो चला है कि उससे वातावरण को पवित्र रखने की प्रेरणा ही नही मिलती। आज आवश्यकता इस बात की है कि सुनी हुई बात को विचार और चितन से दिमाग मे रखने के लिए वातावरण पैदा किया जाए।

ज्ञान पंचमी

- ज्ञानपचमी अपने पर्व श्रुतज्ञान के अभ्युदय और विकास की प्रेरणा देने के लिये है। आज के दिन श्रुत के अभ्यास, प्रचार और प्रसार का सकल्प करना चाहिए। द्रव्य और भाव दोनो प्रकार से श्रुत की रक्षा करने का प्रयत्न करना चाहिए। आज ज्ञान के प्रति जो आदर वृत्ति मन्द पड़ी हुई है, उसे जागृत करना चाहिए और द्रव्य से ज्ञान-दान करना चाहिए। ऐसा करने से इहलोक-परलोक मे आत्मा को अपूर्व ज्योति प्राप्त होगी और शासन एव समाज का अभ्युदय होगा।
- किसी ग्रन्थ, शास्त्र या पोथी की सवारी निकाल देना सामाजिक प्रदर्शन है, इससे केवल मानसिक सतोष प्राप्त किया जा सकता है। असली लाभ तो ज्ञान-प्रचार से होगा। ज्ञानपचमी के दिन श्रुत की पूजा कर लेना, ज्ञान-मदिरो के पट खोल कर पुस्तको का प्रदर्शन कर देना और फिर वर्ष भर के लिए उन्हे ताले मे बद कर देना श्रुतभक्ति नही है। ज्ञानी महापुरुषो ने जिस महान् उद्देश्य को सामने रखकर श्रुत का निर्माण किया, उस उद्देश्य को स्मरण करके उसकी पूर्ति करना हमारा कर्तव्य और उत्तरदायित्व है।

तप

- जिसके द्वारा सचित कर्म, अन्तर के विकार तपकर-जलकर आत्म-प्रदेशो से पृथक् हो, उस क्रिया का नाम तप है।
- तप की परीक्षा क्या? तन तो मुर्झाया-सा लगे, पर मन हर्षित हो उठे। शरीर से ऐसा लगे कि शरीर तप रहा है, पर मन हर्ष से प्रफुल्लित हो उठे।
- आत्मा को पूर्णत विशुद्ध बनाने के लिये बाह्य तप के साथ-साथ अतरग तप भी आवश्यक है। बाहर का तप इसलिये किया जाता है कि जो हमारा अन्तर विषय-कषायो की उत्तेजनाओ से आन्दोलित है, उद्वेलित है, हमारे अन्दर मोह, ममता और मिथ्यात्व का प्राचुर्य है, प्राबल्य है, वह कम हो, उसकी उत्तेजना शान्त हो, उसका प्राबल्य, उसका प्राचुर्य घटे एव इस तरह उसे घटाते हुए अन्ततोगत्वा आन्तरिक तप से उन विकारो को पूर्णत समाप्त करना है, उन्हे पूर्णत नष्ट कर आत्मा के विशुद्ध स्वरूप को प्रकट करना है।
- मान लीजिये कि एक भाई ने तीन दिन के लिए खाना बन्द करके तेले की तपस्या कर ली, लेकिन उसने आस्रव को नही रोका। एक घड़ी के लिए सत्सग मे आया, उसके बाद घर चला गया, बाजार या दुकान घूमता रहा। बाजार मे झूठ बोलने का मौका आया, ऊँचा-नीचा देने का कारण बन गया, किसी के साथ झगड़ा हुआ। तेले के तप मे भी उसका पाप कितना रुका यह विचार करना चाहिए।
- यदि किसी ने उपवास किया, बेला, तेला किया है, लेकिन उसका हिंसा का काम बन्द नही हुआ, झूठ बोलना

बन्द नही हुआ, अदत्तादान बन्द नही हुआ, किसी से मजाक कर ली तो कुशील का त्याग दूषित हो गया। इस प्रकार तप मे भी दोष का त्याग न करना उचित नही।

- एक आदमी उपवास, पौषध नही कर रहा है, लेकिन उसने उपवास पौषध करने वालो की सेवा की। सबके आसन बिछाता है, स्थान पूँजता है, दया करने वालो की थाली साफ करता है, तो यह भी एक तरह का तप है।
- आठ मदो में तपस्या का मद भी एक मद माना गया है। जाति-मद, कुल-मद, बल-मद, रूप-मद, धन-मद, ज्ञान-मद, ऐश्वर्य-मद आदि मदो के साथ यह भी एक मद गिना गया है। कभी अगर ज्ञान का और तप का भी मद यानी अहकार आ जावे तो वह भी कर्मों के बन्ध को तोड़ने के स्थान पर उनके बन्ध को और प्रगाढ़ बनाने का कारण बन जाता है।
- तप और ताप मे भेद समझे। अज्ञान भाव मे विकारी वृत्तियो के वश मे होकर तन को और मन को तपाया जाता है, वह ताप है। इसमे व्यक्ति अपने शरीर से भी कष्ट सहता है एव दूसरे लोगो को भी कष्ट देता है। उसके अन्तर मे काम, क्रोध की वृत्तियाँ सुलग रही हैं। अपने किसी बाह्य दुश्मन को मारना है,अमुक व्यक्ति का काम बिगाड़ना है, अमुक से बदला लेना है, उसको नुकसान पहुँचाना है, इस प्रकार की भावना से प्रेरित होकर अगर किसी व्यक्ति ने तप किया, जप किया, उपवास, बेला या तेला आदि किया तो वह तप नही ताप है, क्योंकि उसके भीतर मे भी ताप है, मन मे भी ताप है और बाहर तन मे भी ताप है।
- क्रोध के वश, लोभ के वश, मोह के वश और अपने स्वार्थ के वश जो शारीरिक कष्ट सहा जाता है, जो मन की वृत्तियो पर एक प्रकार का "मानापमाने सम" जैसा अवसर आता है, वह सारा शारीरिक कष्ट है। बिना ज्ञान के खुद कष्ट मे पहुँचना और दूसरो को कष्ट देना, धर्म के नाम पर, तप के नाम पर ताप है। इसके विपरीत स्वार्थ को दूर कर, ज्ञानभाव को जगाकर, अपनी वृत्तियो को वश मे करना एव शारीरिक कष्ट सहते हुए भी मन मे उल्लास के भाव रखना और क्रोध, मान, माया, विषय, कषाय की वृत्तियो को ढीली पटकना, इस प्रकार का जो काया-कष्ट (कायक्लेश) होता है, वह तप है। कष्ट सहने वाले तो अनन्त जीव है और ताप सहने वाले असख्यात। परन्तु तप करने वाले केवल सख्यात है।
- कोई यह कहते हैं कि जैनियों की तपस्या मे बेला-तेला-अठाई आदि तप से शरीर की हिंसा होती है, क्योकि इनसे शरीर क्षीण होता है। किन्तु ऐसा सत्य नही है। यह हिंसा इसलिये नही हुई कि शरीर का जो स्वामी है, वह तपस्या से प्रसन्न है।
- तपस्या करने वाली माताएँ-बहने सूत्र-श्रवण, स्वाध्याय और प्रभु-स्मरण मे अपने को लगाती हुई तप के दिनो मे बाह्य शृगारो का वर्जन करे। विविध प्रकार के भड़कीले वस्त्रालकार, मेहदी, पार्टियो के आडम्बर तप के साथ जो लगा लिये है, उन्हे छोड़े। ये सारी बातें तपस्या की शक्ति और इसकी शोभा को कम करने वाली है। ये बहने तप करके अपनी तपस्या के समय को और उसकी शक्ति को मेहदियॉ लगवाने मे, बदन को सजाने मे, अलकारों से सज्जित करने मे व्यर्थ ही गवाती हैं। मेहदी क्या रग लाएगी तप के रग के सामने? रग तो ये तपस्याएँ ज्यादा लायेंगी। तपस्या के साथ अगर भजन किया, प्रभु-स्मरण किया, स्वाध्याय किया, चितन-मनन किया, तो यही रग सबसे ऊँचा रग है।
- हमारी तपस्या का रूप तो यह है कि तप मे अगर किसी दूसरे के काम मे बाधा पहुँचती दिखे तो जोर-जोर से बोलकर शास्त्रों एवं धर्म-ग्रन्थों का स्वाध्याय करना भी निषिद्ध है। कहाँ तो यह विधि-विधान है और कहाँ तप

करके रात-रात भर जोर-जोर से गाने और सगीत किये जाते है। अड़ोस-पड़ोस के लोगो की इससे निद्रा भग होती है। तो यह तपस्या का भूषण नही, दूषण हुआ।

- हमारे भजन, प्रभु-स्मरण आदि आत्मा की शाति के लिये किये जाते है, दूसरे की शाति अथवा विश्व की कल्याण-कामना के लिये किये जाते है। इसमे भी उच्च स्वर मना है-जाप मे भी मना है। तपस्या के नाम पर तीन बजे उठ कर गीत गाया जावे तो यह गलत है। फिर इसमे भी आप प्रभु स्मरण या सीमन्धर प्रभु को याद नही करेगी। बल्कि सारे कुटुम्ब के नामो की फहरिस्त पढ़ेगी। दादा, परदादा, बेटे, पोते, भाई, भतीजो के नाम की माला जपेगी। यह जप, यह नाम-उच्चारण कर्म-निर्जरा का साधन नही। यह तप मे विकृति है, तप का विकार है।
- विकृतियो और विकारो से बचकर, शृगार का वर्जन करके माताएँ-बहिने तीन बाते —स्मरण, स्वाध्याय और स्मृति—को लेकर तप मे आगे बढ़ेगी तो यह तप उनकी आत्म-समाधि का कारण बनेगा, शान्ति और कल्याण का हेतु बनेगा, दूसरो की और विश्व की शान्ति एव कल्याण का कारण बनेगा। इसे पर्व दिनो का ही नही, प्रतिदिन का अग बनाएँ, क्योकि सामायिक के कर्त्तव्य मे यह भी एक कर्त्तव्य है।
- प्रत्येक जैन बन्धु अपने जीवन मे यदि प्रारम्भ से ही रस-परित्याग अथवा द्रव्य-त्याग की तपस्या को अपना ले, तो वह स्वस्थ भी रहेगा और उसे इस तपश्चर्या का भी लाभ प्राप्त होगा। इस तरह रस-परित्याग तप सभी दृष्टियो से लाभप्रद है, अत प्रत्येक भाई को चाहिये कि वह प्रतिदिन छह रसो मे से कम से कम एक रस का भी त्याग करे तो यह भी एक तपस्या होगी।
- भगवान महावीर ने कहा कि तप करो, लेकिन इस लोक की कामना के वश होकर नही। परलोक मे स्वर्ग का सिहासन मिले इसलिए भी तपस्या नही करना। दुनिया मे तारीफ हो इसलिए भी नही करना। हजारो लोग मुझे धन्यवाद देगे और तपस्या की छवि अच्छी होगी, जलसा अच्छा होगा, इस भावना से कोई तपस्या करता है तो वह साधक अपनी तपस्या की कीमत घटा देता है।
- तपस्या और ध्यान मे पहली बात यह है कि मन और मस्तिष्क हल्का होना चाहिए। कल मस्तिष्क भारी था और आज हल्का है तो समझना चाहिए कि आपको तप का लाभ मिला है। यह इस बात की परीक्षा है कि धर्म का आचरण हुआ या नही। यह थर्मामीटर की तरह एक मापक यत्र के समान है। हमारे मस्तिष्क मे हल्कापन आया, प्रसन्नता हुई है, प्रमोद आया है तो समझना चाहिए कि धर्म का स्वरूप आया है।

■ तप के भेद

- तप के दो प्रकार है। एक का असर शरीर पर पड़ता है और दूसरे का असर मन पर पड़ता है। जिसका असर शरीर पर पड़े उसको कहते हैं बाह्य तप और जिसका असर मन पर पड़े वह है आन्तरिक तप ।
- शारीरिक और आभ्यन्तर—ये दोनो प्रकार के तप साथ-साथ होने चाहिये। केवल एक की साधना से वाछित फल नही मिलने वाला है। उदाहरण के रूप मे लीजिये - एक भाई ने उपवास किया, तो यह उस भाई का शारीरिक तप हो गया। इस शारीरिक तप के साथ-साथ उसे स्वाध्याय, ध्यान, प्रभुस्मरण और बारह भावनाओ के चिन्तन-मनन के रूप मे आभ्यन्तर तप भी अनिवार्यरूपेण करना चाहिये। पर व्याख्यान समाप्त होने पर यह देख कर कि महाराज चले गये, वह भाई बिस्तर फैला कर सो जाय, तो उसे इस प्रकार के एकागी शारीरिक तप से

वास्तविक लाभ नही होगा।

- शारीरिक तप से जिस प्रकार तन का रोग नष्ट होता है, उसी प्रकार आभ्यन्तर तप से आत्मा का कर्म-मैल या मन के विकार नष्ट होते हैं।

तप में प्रदर्शन

- तप की क्रिया आत्म-गुण को जगाने के लिए है। पर आत्म-गुण को जगाने के प्रसग पर भी बढ़िया से बढ़िया वेश निकाले जा रहे है। आज बाईजी पचक्खाण करने जा रही है, तो नये-नये आभूषण, हीरे की चूड़ियाँ निकाली जा रही हैं।
- आज के समय मे इसको धर्म-प्रभावना समझा जा रहा है। वस्तुतः इसे धर्म-प्रभावना समझना बिल्कुल गलत है। आज तो यदि मै यह कहूँ कि यह प्रभावना नही, बल्कि अप्रभावना है तो भी अनुचित नही होगा।
- आज जिस समय हजारो-लाखो लोगो को भर पेट रोटी मुश्किल से मिले और इतनी कमरतोड़ महगाई मे लोगों का जीवन निर्वाह मुश्किल से हो, उस समय हमारी माताएँ, बहिनें धर्म-प्रभावना के लिए हजारो लोगो मे प्रदर्शन करती हुई बाजार से निकले तो लोगो की नजरों मे शीतलता पैदा करेगी या आग? लोगो के मन मे प्यार पैदा करेगी या खार? तपस्या की साधना के प्रसग में इस तरह का प्रदर्शन करना, भेद-भाव को बढ़ाने वाला होगा या आत्म-भाव को जगाने वाला?
- नया बढिया बेस निकाला, गोखरु, दस्तबद, भुजबद, हथफूल, कर्णफूल, जड़ाऊ भारी हार और अन्यान्य प्रकार के अलकार धारण कर पच्चक्खाण के लिये आडम्बर के साथ व्याख्यान मे जावे, तो यह तपस्या मे एक प्रकार का विकार है।
- आप जो प्रदर्शन मे, दिखावें मे खर्चा करते हैं, वही यदि कमजोर भाई-बहिनो की सहायतार्थ खर्च करे तो अधिक अच्छा रहेगा। जिनके खाने की व्यवस्था नही है, ऐसे लोगो की व्यथा दूर की जाए तो लाभ का कारण है। आपने तपस्या की है, इसलिए आपको भूख की व्यथा का कष्ट मालूम है। तपस्या वाले को अनुभव है कि दो दिन का भूखा किस तरह कष्ट मे समय गुजारता है। यदि कोई भाई-बहिन उनके कष्ट निवारणार्थ इस तरह द्रव्य का वितरण कर दान करे तो विशेष प्रभावना का कारण हो सकता है।
- एक जमाना था जब वरघोड़ा या जुलूस आवश्यक समझे जाते थे, इससे प्रभावना होती थी, लेकिन आज उसका और रूप होना चाहिए। बाजे-गाजे के बदले संगीत मंडली या समाज के भाई-बहनों के साथ मगल गीत गाते भी निकल सकते हैं। साधर्मियो की सेवा में थोड़ी भी शक्ति लग सके तो समझा जायेगा कि तपस्या करने वाली बाइयों ने सच्ची प्रभावना कर अपनी तपस्या सफल बना ली है।
- हजारों रुपये बैंड वगैरह में, जीमनवार मे खर्च होते हैं। वे उधर से बचाकर समाज-सेवा मे लगाये जाएं तो उस धन का अति सुन्दर सदुपयोग हो सकता है।
- हमारी तपस्या अमीर गरीब सब के लिए समान हो।

तृष्णा

- आज खाने को है कल न रहा तो..। आज स्वस्थ हैं कल बीमार पड़ गये तो...। इसी प्रकार हर बात के लिए 'तो'

का शकास्पद प्रश्न मन मे उठता रहता है और मनुष्य इसी शका के चक्कर मे पड़कर हर क्षण अशान्त एव दुःखी बना रहता है।

- बड़े-बड़े महाजन लोभ के वशीभूत होकर सब कुछ बर्बाद कर लेते है और पीढ़ियो की कमाई हुई अतुल धनराशि लोभ की वेदी पर भेट चढ़ा कर फकीर हो जाते है।

■ त्याग

- मन से किया गया त्याग ही सच्चा त्याग है। मन तो चाहता है कि त्याग नही करूँ, लेकिन वस्तु उपलब्ध नही है, इसलिए त्याग कर रहा है तो सच्चा त्याग नही है – 'न से चाइ त्ति वुच्चई।' जो परतन्त्रता के कारण त्याग करता है तो उसको त्याग का पूरा लाभ नही मिलता। इच्छापूर्वक एक नवकारसी भी करे तो वह अपनी कर्म-स्थिति मे लाख वर्ष की कमी करके दुःखो को टाल देता है।
- त्याग के साथ ज्ञान का बल ही साधक को ऊँचा उठा सकता है। जैसे सुक्षेत्र मे पड़ा हुआ बीज, जल सयोग से अकुरित होकर फलित होता है और बिना जल के सूख जाता है, वैसे ही त्याग और ज्ञान भी बिना मिले सफल नही होते। जिस साधक मे पेय, अपेय, भक्ष्य, अभक्ष्य और जीव-अजीव का ज्ञान न हो वह साधक उत्तम साधक नही होता।
- सब कुछ भौतिक सुख वही छोड़ सकता है जिसने दृश्यमान भौतिक जगत् की नश्वरता को, क्षणभगुरता को समझ कर एक न एक दिन, देर-सबेर मे छूट जाने वाली वस्तुओ को स्वत चलाकर छोड़ने के महत्त्व को, आनन्द को अच्छी तरह समझ लिया है।
- यह सदा याद रखिये कि ससार की जितनी भौतिक साधन-सामग्री है, वह सब विनश्वर है। इस वीतराग-वाणी को आप कभी न भूले- "सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे सजोगलक्खणा।"
- आत्म गुण के अतिरिक्त शेष सब भौतिक भोग-सामग्री, सब वस्तुएँ, सब पदार्थ आप से अलग हो जाने वाले है, क्योकि वे आपके नही है। उनका आपसे अलग होना सुनिश्चित ही है,ऐसा समझकर आप उनके प्रति ममत्व भाव का त्याग करे।

■ त्याग-तप

- जिसको आप नफा मानते है, वह कभी नुकसान का कारण भी बन सकता है। एक भाई मद्रास मे अथवा दक्षिण मे कही दुकान कर रहा है। उधर लोग बहुत ऊँची दर पर ब्याज लेते देते है। उस भाई ने इसके विपरीत अपनी ब्याज सीमा सीमित कर बहुत थोड़ी ब्याज की दर पर रकम देने का कुछ वर्षों पूर्व नियम ले लिया। इस प्रकार का नियम लेने से प्रारभ मे तो उसे बड़ी कठिनाई हुई। पाँच रुपया और छः रुपया तक का ब्याज उधर चलता है। (अब ऐसा नही है।) अब यदि कोई पॉच-छ रुपया प्रति सैकड़ा की दर के स्थान पर डेढ-दो रुपया प्रति सैकड़ा की दर से ब्याज लेना आरम्भ करे तो प्रारम्भ मे तो उसे आर्थिक हानि दिखाई देगी ही।
- अभी कुछ दिनो पहले वह भाई आया और कहने लगा-"महाराज! आपसे जो नियम मैंने लिया,वह मेरे लिये बड़ा ही लाभकारी रहा। आज वह नियम नही होता तो ब्याज के पैसे तो चौगुने हो जाते पर परेशानी इतनी होती कि आराम से खाना हराम हो जाता। वास्तव मे त्याग का नियम मेरे लिये व्यवहार में भी लाभदायक

रहा।"

- गुरु महाराज ! ऐसा कोई तप बताओ, जिससे लड़का हो जाय। अगर लड़का हो जावे तो मै एक अठाई कर लूगी। यह तो हुई बाई की बात। भाई साहब किसी मामले मे किसी मुकदमे मे फसे है। मुकदमे मे वर्ष गुजर गये। अब चाहते है, यह जल्दी निपट जावे उनके पक्ष मे। इसके लिये वे तेला कर लेते है। अभी कुछ वर्ष पहले की बात है। एक ऐसा ही भक्त-भाई था। उसका कोर्ट में कई बरसो से कोई मामला चल रहा था। उसने तेला किया। अब मन मे उसके क्या था, वही जान सकता है। हमे तो पता नही। पर बाद मे तेले का पारणा करके मेरे पास आया। बोलने लगा-"महाराज ! यह तो इस तेले का प्रभाव है कि मेरे मुकदमा जो बरसो से चल रहा था,आज मेरे हक में हो गया और तुरत-फुरत हो गया। मुझे तो पॉच मिनिट भी खड़ा नही रहना पड़ा वहॉ। जाते ही काम पूर्ण हो गया महाराज ! महाराज, आपको भी धन्यवाद है। तपस्या से मेरी तो सिद्धि हो गई। मेरा बरसो का अटका हुआ काम सिद्ध हो गया।" लेकिन प्रभु महावीर ने कहा कि यह तप नही है। इस तरह का तप करना निषिद्ध है। यह तो ठीक है कि उस एक भाई का सयोग से अतराय का टूटना था, कर्म अवशेष नही थे। इसलिये उसका काम हो गया। पर अगर तेला करने पर भी उसका काम नही बनता तो ? तेले की तपस्या पर से उसकी श्रद्धा घटती कि बढ़ जाती ? तेले की तपस्या की कद्र घटती कि बढ़ती ? वैसे तपस्या के सामने ऐसे-वैसे लाभ मिलने असम्भव तो कतई नही है। प्रतिष्ठा के अर्थी को लौकिक प्रतिष्ठा मिल सकती है, अर्थ के अर्थी को अर्थ लाभ भी हो सकता है, स्वास्थ्य के अर्थी को स्वास्थ्य लाभ भी हो सकता है, इसमे कोई शका नही। ये सब कुछ निश्चय ही मिलेगे। पर अगर तुम इस तप को, इन सासारिक पौद्गलिक जड़ पदार्थो की प्राप्ति हेतु दॉव पर लगा दोगे और कल को जरा कही आपके तप मे कमी रही या अन्य कोई कारण हो गया और आपको उसमे सफलता नही मिली तो ? फिर उस तप पर से आपकी आस्था हट जाएगी। कह दोगे,महाराज मैंने तो समझा था कि ऐसा करने से ऐसा हो जाएगा, पर कुछ भी नही हुआ। अत प्रभु ने स्पष्टत इस तरह की कामना को लेकर सकल्पपूर्वक तप करने के लिये निषेध कर दिया।
- प्रभु ने कहा है कि ए मानव ! तप का महान् लाभ है। यह अनन्त सुख देने वाला है। ये भौतिक सासारिक जड़ सुख इसके सामने कुछ भी नही है। इसलिये अपने उस तप के इतने महान् लाभ को बाजी पर मत लगाओ। दाव पर मत लगाओ। नीलामी पर मत चढ़ाओ। आप जानते है कि जिस वस्तु को नीलामी पर लगाया जाता है उस वस्तु के भाव, उसकी कीमत कम हो जाती है। कभी आपको पैसे की आवश्यकता पडे, तब आप दुकान या किसी मकान को नीलामी पर चढ़ाओ तो क्या उसकी वास्तविक कीमत मिलेगी ? नही मिलेगी। यह बात आप भी जानते है। इसलिये भगवान् ने पहली बात कही—इस लोक के लिये, यानी इस लोक के पौद्गलिक सुखो की चाह के लिये, जो अशाश्वत हैं, तप मत करो। और अगर करते हो तो उसे धर्म-तप मत समझो। इससे कम से कम तुम्हारी आस्था तो शुद्ध रहेगी।
- चक्रवर्ती अपनी राज्य सत्ता की साधना के लिये समय-समय पर तेरह तेले करते है। लेकिन तेरह तेले करते हुए भी वे तपस्वियो में, व्रतधारी श्रावको मे, सकाम निर्जरा करने वालो मे स्थान नही पाते है। तेले के १३-१३ बार तप करने के उपरान्त भी चक्रवर्ती को अविरत-सम्यग्दृष्टि ही माना गया है, विरत नही माना गया है।
- कुछ समय पहले की बात है। हम एक जगह ठहरे हुए थे। वहॉ किसी बाई ने मासखमण किया। पारणे के दिन

बाई के मकान की छत पर पीले-पीले रग की बूँदे पड़ी। फिर तो क्या पूछिये आप। परिवार वालो ने और गाँव वालो तक ने मिलकर कहना शुरु किया कि अजी साहब ! इसकी तो तपस्या के पारणे मे केसर की बरसात हो गई। लोग-बाग भागे-भागे हमारे पास भी आए। कहने लगे-"अजी महाराज ! उण रे तो घर मे गरम पानी के थाल मे पगलिया मडियोड़ा है। आप पधारो, देखो।"

- इसे देखने को सारा गाँव उमड़ पड़ा। मैंने कहा-"भाई! जरा समझ से काम लो। अगर सचमुच देवता को चमत्कार बताना ही था तो चमत्कार बताने की और बहुत-सी बड़ी-बड़ी बाते थी। देवता तपस्वी की तपस्या पर प्रसन्न हुआ है और उसे चमत्कार ही बताना चाहता है तो क्या उसे ये छोटे-छोटे केसर के छींटे ही मिले? कीट,भवरे या पतगे बीट करे,ऐसी छोटी-छोटी टपकियाँ ही मिली,जो उसने वहाँ डाल दी। इसके बजाय उसने मुट्ठी भर-भर कर केसर की भरपूर बरसात ही क्यो नही कर दी। केसर की ही बरसात करनी थी तो सूखी केसर की मुट्ठी भर-भर कर करता। अगर उसको सूखी न मिली,तो गीली की ही कर देता।
- तपस्वी को, आप को और हमको इतना सोचना है कि चमत्कारो के चक्कर मे पड़कर तपस्या के फल को हमे लुटाना नही है, तपस्या की हसी नही करानी है।
- तपस्या की अतुल शक्ति है, अचिन्त्य शक्ति है। वह मानव के मन को बदल सकती है। पर तपस्या के पीछे मन मे शान्ति हो, यह आवश्यक है।

■ दहेज-प्रथा

- दयालु जैन कुल मे जन्म ग्रहण करने वाले भाई-बहन डोरे और बीटी के लिये, टीके और दहेज के लिये बोलते और आग्रह करते हुए शर्माते नही। इस दहेज प्रथा के कारण ही अनेक घरो मे पच्चीस-पच्चीस वर्ष की कुआरी कन्याएँ मिलेगी। आप स्वय ही सोचिए कि यह आपकी कैसी दया है ? हम कीड़े-मकौड़ो की तो दया पालने की बात करे और दूसरी ओर मनुष्य जैसे पचेन्द्रिय प्राणी के प्राणो के साथ इस तरह की खिलवाड़ करें। यह कैसा अचम्भा है ? एक-एक शादी मे लाखो लगाने वाले लोग, जिनके पास इस प्रकार की विपुल धन-राशि है, अपने बच्चो की कीमत लगाकर कहे कि मेरे बच्चे का उसी घर मे सम्बन्ध हो सकेगा, जो मेरे बच्चे की धन-राशि से कद्र करेगा अथवा उसे धन-राशि से तोलेगा, तो यह मानवीय दृष्टिकोण से कहाँ तक उचित है?
- हमारे नवयुवक भाई सुधार की बड़ी बाते करते है। इस तरह की बाते करने वाले तो क्या नवयुवक और क्या अन्य बहुत मिलेगे, पर इन बातो पर अमल करने वाले कितने है ? अधिकाश नवयुवक इन दहेज, टीके आदि की कुप्रथाओ को नष्ट करने का दृढ़ सकल्प कर ले तो सफलता असभव नही।
- बाहर की हिंसा को रोकने के लिये भी आवाज उठाना नितान्त आवश्यक है। इसके लिये भी कार्य करना और आवाज उठाना चाहिये। अधिकारी लोग जिन्होने समाज के नेतृत्व को सभाल रखा है, वे लोग अपने घर से उसका शुभारभ करे। वे प्रतिज्ञा कर ले कि वे अपने बच्चे-बच्चियो के लिये बीटी, डोरा या दहेज आदि कुछ भी न तो लेगे और न देगे ही। इसके लिये बड़ो को कमर कसकर आगे आना होगा।
- दहेज समाज के लिए कलक है। सुयोग्य एव सस्कारित कन्याओ को धनाभाव मे सुयोग्य वर नही मिल रहे हैं। धन यदि कम मिलता है तो वधुओं को कोसा जाता है। अत्यधिक पीड़ाएँ पहुँचाने पर कई पुत्र-वधुओं की जीवनलीलाएँ समाप्त होने की घटनाएँ सुनने मे आती हैं, जिससे दिल दहल जाता है। अहिंसक समाज में ऐसे

घृणित परिणाम क्षोभजनक हैं। समाज को इस ओर ध्यान देने की जरूरत है।

- यदि समाज कुछ प्रतिज्ञाओ में आबद्ध होकर चले तो बहुत कुछ सुधार हो सकता है , जैसे—

  १. दहेज की न कोई मांग करनी और न ही किसी से करवानी।

  २ दहेज का किसी भी प्रकार का कोई प्रदर्शन नही करना।

  ३. दहेज कम मिलने पर कोई आलोचना अथवा चर्चा नही करनी।

■ दया

- हम जैसे द्रव्य दया करते हैं वैसे ही भाव-दया करके किसी के जीवन को पवित्र बना सकते हैं।
- आप किसी पर दया करे तो ऐसी करे कि जिससे उसका राग-रोष मिट जावे और कर्मबधन का कारण नही बने, यह भावना आवे तो उसके लिए मिशनरियो की तरह काम हाथ मे लेना पड़ेगा।
- ज्ञानियो का कथन है कि दयादेवी के प्रसाद से ही शान्ति की प्राप्ति हो सकती है। उसी की आराधना करो । उसकी आराधना किस प्रकार होती है ? किसी को त्रास न दो, किसी को सताओ मत, अपने नौकर के प्रति भी कठोर व्यवहार मत करो। पड़ौसियों से झगड़ा न करो और उनकी सुख-सुविधा का खयाल रखो। भूखे और असहाय जीवो को अभय दो। पर कल्याण की भावना रखो। हृदय मे कुत्सित विचारो का प्रवेश न होने दो। इस विधि से दयादेवी की आराधना करोगे तो उससे तुम्हारी आत्मा का रक्षण होगा। तुम्हे इसी भव मे शान्ति प्राप्त होगी और आगे सद्गति का लाभ होगा।

■ दान

- यह परिग्रह जाने वाला है, आज नही तो कल स्वत· सुनिश्चितरूपेण जाएगा। स्वय जाय इससे पहले ही इसको छोड़ दे तो इसमे बलिहारी है। लेकिन आप कहोगे कि स्वय जाय उसकी परवाह नही है, हम आगे होकर इसको कैसे छोड़े ? पर यह तो समझो कि आप जो अन्न खाते हो, क्या उसका विसर्जन नही करते ? क्या इसके लिए आपसे किसी को कहने की जरूरत पड़ती है ? यह सुनिश्चित है कि जिस प्रकार अन्न ग्रहण किया जाता है उसी प्रकार समय पर शरीर के मल का विसर्जन भी होना चाहिए। यदि मल विसर्जन नही होगा तो हमारी तन्दुरुस्ती को खतरा है। यदि जमा रह गया तो डाक्टर को दवा देकर या एनिमा लगाकर निकालना होगा। इसी प्रकार जिस दिन ज्ञान हो जाए कि परिग्रह-पुद्गल छोड़ने योग्य हैं, जिस तरह से हम उनका सग्रह करते है, उसी प्रकार उनका निष्कासन या विसर्जन भी होना चाहिए। विसर्जन की नाड़ी भी साफ रहनी चाहिए। यदि विसर्जन की नाड़ी बिगड़ गयी तो स्वास्थ्य बिगड़ जाएगा। यह ज्ञान हो गया तो आप स्वय विसर्जन के लिए तैयार हो जाओगे।
- धन पर ममता की पकड़, ममता की गांठ ढीली होगी, तभी दान की भावना जगेगी, दान दिया जा सकेगा।
- कई लोग "असतीजनपोषण" में थोड़ा-सा फेरफार करके "असंजतीजनपोषण" कर देते हैं और कहते हैं कि सयमी जनों अर्थात् साधुओं के अतिरिक्त किसी भी भूखे को रोटी देना पाप है। मगर यह व्याख्या प्रमाद या पक्षपात से प्रेरित है। यह साम्प्रदायिक आग्रह का परिणाम है। इस प्रकार की व्याख्या करने से दया, अनुकम्पा और

करुणा भी पाप हो जाएगी। यह अर्थ दया-दान प्रधान जैन-परम्परा से विपरीत है।

- भूखे कुत्ते को या अन्य पीड़ित जीवो को अन्न आदि देना अनुकम्पा की प्रेरणा है। क्षुधा, पिपासा, अशान्ति और आर्त्ति मिटाने मे जो अनुकम्पा की भावना होती है, वह पुण्य है। उसे कर्मादान मे सम्मिलित नही समझना चाहिए। कर्मादानो का सम्बन्ध विशिष्ट पापकर्मों के साथ है।
- आप हजारों रुपयो का दान करते हैं। गरीबो के पास कुछ ज्यादा चला गया तो क्या बुरा है, लेकिन आपको यह बात बर्दाश्त नही होती। आप चाहेगे कि उसको आठ आने कम दिये जाये। यह भी एक तरह का पाप है और इसलिए लगता है कि आपमे परिग्रह बुद्धि है, पैसे पर ममता है।
- कई बार अवसर आता है कि एक भाई ५० हजार रुपयो तक का दान देने को तैयार है। उसका आग्रह होता है कि चाहे लाख रुपये का दान ले लो, लेकिन उस पर नाम उसका होना चाहिए। लेने वालो ने कहा कि ऐसा तो नही हो सकेगा। 'यदि ऐसा नही होगा तो फिर मेरे ५ हजार रुपये टीप मे लिख लो।' यह है देने वालो की मानसिकता।
- यदि तुझे किसी को दान देना है तो जो दरिद्र है, तेरे से कमजोर है, गरीब है, साधनहीन है, उसको दे। जो पहले से ही साधन-सम्पन्न है, जिसके पैसे का हिसाब तैयार करने के लिये चार आदमी बैठते है उसको देने से क्या लाभ ?
- दान की यह विशेषता है कि वह स्व और पर दोनो का कल्याण करता है। दान देने की प्रवृत्ति तभी जागृत होगी जब मानव के मन मे अपने स्वत्व की, अपने अधिकार की वस्तु पर से ममता हटेगी। ममत्व हटने पर जब उसके अन्तर मे सामने वाले के प्रति प्रमोद बढ़ेगा, प्रीति बढ़ेगी और उसे विश्वास होगा कि इस कार्य मे मेरी सम्पदा का उपयोग करना लाभकारी है, कल्याणकारी है, तभी वह अपनी सम्पदा का दान कर सकेगा।
- दान की प्रवृत्ति मे जो अपने द्रव्य का दान करता है, वह केवल इस भावना से ही दान नही करता कि उससे उसको अधिक लाभ होगा, बल्कि उसके साथ यह भावना भी है कि यह परिग्रह दु खदायी है, इससे जितना अधिक स्नेह रखूँगा, मोह रखूँगा, यह उतना ही अधिक क्लेशवर्धक तथा आर्त्त एव रौद्र-ध्यान का कारण बनेगा।
- गृहस्थ यदि शीलवान् नही है तो उसके जीवन की शोभा नही। जिस प्रकार शीलवान होना गृहस्थ जीवन का एक आवश्यक अग है, उसी तरह अपनी सचित सपदा मे से उचित क्षेत्र मे दान देना, अपनी सपदा का विनिमय करना और परिग्रह का सत्पात्र मे व्यय करना, यह भी गृहस्थ-जीवन का एक प्रमुख अग, सुन्दर भूषण और मुख्य कर्त्तव्य है।
- अगर हर व्यक्ति तप-त्याग के साथ शुभ कार्यो मे अपने द्रव्य का सही वितरण करता रहे तो " एक-एक कण करते-करते मण " इस उक्ति के अनुसार पर्याप्त धन-राशि बन जाती है।
- आपका अन्न दान, जल दान, वस्त्र दान, द्रव्य दान आदि सारे के सारे दान खूटने वाले हैं, लेकिन मुनियो का दान अखूट (अक्षय) होता है। मुनियो के लिए कहा है कि ससार से थोड़ा द्रव्य दान लो और भावदान दो।
- साधु ज्ञान दान देता है, चारित्र दान देता है। जो भाई व्यसन करने के आदी हैं, उनको उपदेश देकर व्यसनो का निवारण कराता है। शिक्षा देकर सदा-सदा के लिए दुर्व्यसन छुड़ाकर दुःख से मुक्त कराता है, क्लेश से मुक्त कराता है। घर मे जहाँ विग्रह या कषाय होता है, भाइयो मे, परिवार के बीच मे झगड़ा होता है तो साधु उनको

उपदेश देकर भाई-भाई का खार मिटाकर प्यार कराता है। उसका यह दान कभी नही खूटेगा। ऐसा दान देना आप सीख जाओगे तो इस दान के आगे आपका द्रव्यदान हजारवाँ या करोड़वाँ भाग भी नही है।

- कही पैसा नही होने पर काम अटका हुआ है, कही पर प्रेरणा नही होने से काम अटका है, तो कही मतभेद होने से काम अटका है। लोगो मे भावना हो और सोचे कि धर्म-रक्षा भी हमारा कर्तव्य है, तो समाज का रक्षण हो सकता है। क्षेत्रो को सभालने और उनमे प्रचार करने के लिये समय-दान और द्रव्य-दान दोनो आवश्यक है। विचार-दान से भी बहुत सा काम हल हो सकता है।
- एक आदमी धन कमाता तो है लेकिन विसर्जन नही करता, त्यागता नही है तो उसका आत्मिक जीवन स्वस्थ नही रहेगा। अत गृहस्थ के लिये दान देना जरूरी है । जैसे हड्डी का भाग नख द्वारा बाहर निकलता है, केश आने बन्द हो जाये, आँखो में गीड़ आना बन्द हो जाय, नाक से मलवा निकलना बन्द हो जाय, कान मे ठेठी नही आवे, मल और मूत्र आना बन्द हो जाय तो आप सुखी नही रह सकेगे। इसी तरह यदि प्राप्त द्रव्य का त्याग नही करेगे, किसी को पानी या रोटी नही देगे, दान नही करेगे और जो आवे सो तिजोरी मे भरते जायेगे तो इस रास्ते पर चलने वाले आदमी सुखी नही रहेगे।
- हजार मिलाने वाला आदमी हजार के अनुपात से त्यागे, लाख मिलाने वाला आदमी लाख के अनुपात से त्यागे और करोड़ मिलाने वाला करोड़ के अनुपात से त्यागे। यदि इस तरह से द्रव्य का उचित मार्ग से त्याग होगा तो समाज मे अहिंसा तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र के प्रचार-प्रसार के जो क्षेत्र है, साधु-साध्वियो के उपकार के क्षेत्र हैं, और भी कई नये क्षेत्र है, सब व्यवस्थित चलेगे।
- पैसे वाले भाई सोचते है कि पैसे की जरूरत है तो हमारे पास माँगने के लिये आयेगे, तब देगे। हमारे पास आकर अर्ज करो, चार आदमियो के बीच मे मागो तो थोड़ा एहसान करते हुए देगे। अरे भाई ! देने का यह तरीका नही है।
- हर आदमी को मुक्त हाथ से, खुले दिल से शुभ खाते मे, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, जीव-दया, साधर्मी-बन्धु आदि जो उत्तम क्षेत्र है, जहाँ दिया हुआ द्रव्य बहुत ही लाभ का कारण हो सकता है, दान देना चाहिए।
- समाज में किसी के पास कपड़ा पहनने के लिए नही है तो कपड़े की व्यवस्था कर दी, किसी के पास रहने के लिये मकान नही है तो उसके लिये मकान की व्यवस्था कर दी, किसी के लिए दवा की व्यवस्था कर दी, किसी के लिए पोथी की व्यवस्था कर दी, यह सारा का सारा द्रव्य दान है।

दीक्षा

- दीक्षा आत्मा को परमात्मा बनाने का साधन है। आत्मा ही परमात्मा है, यह जैनदर्शन की मान्यता है। आत्मा पर राग, द्वेष एव मोह का आवरण आया हुआ है। इसी आवरण के कारण आत्मा का असली स्वरूप दिखाई नही देता, दीक्षा इस आवरण को हटाने का साधन है। ज्यों-ज्यों आत्मा को त्याग और तपस्या द्वारा तपाया जाता है, त्यो-त्यो राग, द्वेष, मोह आदि नष्ट होते जाते हैं। जिस प्रकार स्वर्ण पर लगा हुआ मैल स्वर्ण के असली रूप को ढक देता है और अग्नि पर तपाने से मैल नष्ट होकर शुद्ध सोना दिखने लगता है, उसी प्रकार कषाय रूपी मैल नष्ट होने पर परमात्मा का स्वरूप प्रकट होता है।

- दीक्षा के पूर्व शिक्षा होना जरूरी है। प्रथम शिक्षा, फिर परीक्षा, फिर दीक्षा और उसके बाद भिक्षा सफल होती है। अत अपने सन्त-सतीवर्ग को सुशिक्षित बनाने मे सदैव प्रयत्नशील रहे। व्यावहारिक शिक्षा से जीवन अच्छे ढग से चलाया तो जा सकता है, किन्तु बनाया नही जा सकता। साहित्य एव कला भी जीवन निखार मे वरदान माने गए है।
- दीक्षा, शासन-भक्ति के लिए किये जाने वाले कार्य की इति श्री नही है, वह तो वस्तुतः साधक के लिए चरम लक्ष्य की प्राप्ति का साधन है। उसके द्वारा साधक आगे बढ़ने का परीक्षण करता है।

■ दुःख-मुक्ति

- दु खमुक्ति की कुजी के होते हुए भी उसको सही तरीके से घुमा नही पाते। यही कारण है कि ससार के लाखो, करोड़ो, अरबो मनुष्य दुःखी के दु.खी रह जाते है और दु खमुक्त होना तो दूर रहा, अपने दु ख को और बढ़ा लेते हैं। अपने ही हाथ से अपना दु.ख बढ़ाते हैं।
- हम सब बाहरी सामग्री का अबार पाकर भी दुखी है तो इसका मतलब यह हो गया कि बाहर की साधन-सामग्री को प्राप्त करना सुख पाना नही, उसमे आसक्त होना आनन्द नही, उससे स्नेह करना शान्ति का कारण नही, अपितु दु ख एव अशान्ति का ही कारण है। कदाचित् रहना पड़े तो इनके बीच मे रहकर भी हम आसक्ति से, राग से, द्वेष से और स्नेह से किनारा करे, अपने जीवन को शान्ति के साधन मे लगावे और शास्त्रो की आज्ञा का पालन करे। यह हमारे जीवन को आनन्द का मार्ग बताने वाला साधन है।

■ दृढ संकल्प

- जब बच्चे, बच्चियाँ, पत्नी या परिवार के अन्य सदस्य अपनी इच्छानुसार कार्य नही होने पर अपना मूड बदल लेते है, तब उनके बीच मे सघर्ष पैदा होता है। पर जिसने पहले से ही दृढ़ सकल्प लेकर जीवन चलाया है कि उसे अपनी इच्छा के अधीन नही चलना है, उसको कोई तकलीफ नही होती।
- जहाँ तक समझने की बात है, युवको के मन मे शकाएँ होती है, एतराज होते है, लेकिन वे समय की उलझन का समाधान नही करेगे तो बाद मे कहेगे कि इच्छा तो थी महाराज! पर समय नही मिला। इसलिए धर्म की आराधना नही कर सके। यदि इस तरह से ज्ञान के क्षेत्र मे आपने सकल्प नही किया और खुले रह गये तो कुछ नही कर पायेगे।

■ द्रव्य और पर्याय का अध्यात्म

- कोई मानव शोक तब करता है, जब द्रव्य को भुलाकर पर्याय में उलझता है। पर्याय की पहचान द्रव्य का बदलता हुआ स्वभाव है। हम चाहते है कि सदा एक तरह की सुखद स्थिति रहे। जैसी अवस्था आज है, वैसी ही सदा बनी रहे। जैसा शरीर आज है वैसा सदा रहे। लेकिन पर्याय कहता है कि जैसा इस क्षण मे हूँ वैसा दूसरे क्षण मे रहने वाला नही। पर्याय बदलने वाली दशा है, लेकिन आप टिकने वाली दशा चाहते है।
- यदि आपने रहवास का पुराना मकान बदल कर सुन्दर कोठी बना ली तो पुराने मकान को छोड़ने पर आपको दु.ख नही होता। आप यह अच्छी तरह जानते है कि जिस प्रकार पुराने जेवर को तुड़वाने और उससे नया जेवर घड़वाने मे सोना अपने वास्तविक स्वरूप मे विद्यमान रहता है उसी प्रकार एक प्राणी की मृत्यु के पश्चात् भी

अविनाशी आत्मा अपने वास्तविक रूप में विद्यमान रहता है। ऐसी स्थिति मे यदि अपने सामने एक बच्चा, मित्र, साथी अथवा परिवार का कोई व्यक्ति शरीर छोड़कर दूसरे नये शरीर मे, नयी कोठी में चला गया तो इसमे रज किस बात का, दुःख किस बात का? परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि अपने प्रियजन के मरने पर लोग रज करते है, दुःख करते है। सुबह-शाम, रात-दिन, हाय-हाय करते है रोते है बिलखते हैं, क्योंकि उन्होने पर्याय को पकड़ रखा है। यह भूल गये कि द्रव्य मात्र नित्य है। आत्म द्रव्य भी नित्य है, लेकिन वह शरीर की दृष्टि से प्रतिपल बदल रहा है ।

- मद गति से होने वाला निरन्तर का परिवर्तन दुःखद नही होता। धीरे-धीरे अवस्था चढ़ती है, फिर ढलती है, बूढ़े होते है और बुढ़ापे के बाद धीरे-धीरे एक दिन चले जाते है। पर एक ३० वर्ष के नौजवान के दॉत गिर जाएँ, ऑखो से दिखना बद हो जाए, बाल पक जाएँ तो दुःख होता है। किन्तु बदलती हुई पर्यायो को इन्द्र-महेन्द्र भी नही रोक सकता।
- अनेक प्रकार के दागीनो का रूप बदलने पर भी सोना, वर्तमान, भूत और भविष्यत् इन तीनो काल मे सोना ही कहलाता है। पहले दागीनो के रूप में था। आज उसको तोड़कर पासा बना लिया। फिर उसको गलाकर नया दागीना हार, कड़ा, कठी, अगूठी बना ली। किसी भी रूप मे ढाल दिया, तब भी सोना जैसा पहले था वैसा ही अब भी है। जैसे सोने के बदलते हुए रूप को देखकर मनुष्य अफसोस नही करता, उसी तरह ज्ञानी ससार मे जीवन की नित्य परिवर्तित होती हुई दशा को देखकर रज-शोक नही करता।
- द्रव्यो की बदलती दशा को देखकर मानव जैसे शोक नही करता वैसे ही वह अभिमान भी नहीं करता। ज्ञान के अभाव मे वह अच्छी दशा मे घमण्ड करने लगता है और उसके चेहरे का रूप बदल जाता है। बगला, सोना, चादी, हीरे, जवाहरात बढ़ने पर उसे खुशी होती है। पुद्गलो का पर्याय बदलने वाला है, फिर भी चेतन खुशी मनाता है, अकड़ता है। मन मे इन सबका आदर करता है, लेकिन आत्मा के निज रूप को नही पहचानता, यह दुःखजनक है।
- जब द्रव्य, गुण एव पर्याय का सही ज्ञान होगा तो बदलते हुए पर्यायो मे से कौनसा पर्याय शुभ है, कौनसा अशुभ है, कौनसा आत्मगुणो को अभिवृद्ध करने वाला है, कौनसा आत्मगुणो की हानि करने वाला है, किस तरह का जीवन मूल मे कायम रहना चाहिए, इन सब बातों को परखने का विवेक उत्पन्न होगा। इस प्रकार के विवेक के उत्पन्न होने पर जिन पर्यायो से आत्मा के मूल गुण सुरक्षित रहते हैं, अभिवृद्ध होते हैं, उन पर्यायो को अपने दैनिक आचरण मे ढालने का और जिन पर्यायो से आत्म गुणो की हानि होती है, उन पर्यायो से पूर्णत बचने का प्रयास किया जाएगा तो परम सुन्दर भविष्य का, सुन्दर आध्यात्मिक जीवन का निर्माण होगा। इस प्रकार अन्ततोगत्वा चरम लक्ष्य की प्राप्ति हो सकेगी।
- उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्। ससार का हर द्रव्य उत्पाद, व्यय और ध्रुवता युक्त है। मेरा तन, धन, अवस्था और व्यवस्था प्रतिक्षण बदलने वाली है। मातृकुक्षि से प्रगट होने के समय मेरा पिंड निर्बल और छोटा था। तरुण वय में वह निर्बल से सबल और तथा लघु से दीर्घ हो गया, कुमार से विवाहित हो गया, बाल से युवा हो गया। फिर स्थिति बदली, तरुणाई का अन्त और वार्धक्य का आरंभ हो गया। आंख, कान और बातो की शक्ति मे फर्क पड़ गया, निश्चिंत दौड़ने और कूदने वाला तन अब संभल कर पैर रखने लगा। थोड़े ही दिनो में उसकी स्थिति मे भी अंतर पड़ गया, तन में निर्बलता आ गई। दांत गिर गये, नेत्र की ज्योति कम हो गई। शरीर मे

स्फूर्ति घटी, तप साधन और क्षुधा-पिपासा सहने की शक्ति घटी। फिर भी मै वही हूँ जो पहले था, व आगे भी रहूँगा। मेरा कभी नाश होने वाला नही है, स्वभाव एव गुण की अपेक्षा मैं ध्रुव हूँ, मेरे मे ध्रुवता है। पर्याय क्षणिक है, बदलती रहती है । पर्याय मे स्थायित्व नही, प्रतिपल परिवर्तन होता है। फिर राग और रोष किस बात का, निश्चित बिगड़ने वाली वस्तु के लिये खेद क्या ? यह तो उसका स्वभाव है।

■ धन और धर्म

- लोग गरीबी, बीमारी या सकटकाल मे धर्म और भगवान का जितना आदर करते है, सुख-शान्ति के दिनो मे वैसा नही करते।
- लोग कहते है—धन होगा तो धर्म आराम से (सोरा) करेगे, किन्तु ऐसा नियत नही है। एक भक्त के हाथ मे बाबाजी ने १ अक लिख दिया। भक्त अनायास रुपया कमाने लगा। बाबाजी ने एक के बाद बिन्दी लगा दी तो १० और २ बिन्दी लगाने पर प्रतिदिन १०० रुपये की आय होने लगी। भक्त की त्रिकाल साधना ढीली हो गई। बाबाजी ने तीन बिन्दी और लगाकर एक पर पॉच बिन्दी कर दी। दैनिक आय एक लाख की हो गई। भक्तजी का आना बन्द हो गया। खाना एव सोना भी मुश्किल हो गया। एक दिन बाबाजी पहुचे और बोले "भक्त! मेरे पास आओ तो मै तुम्हारी सारी परेशानी दूर कर दूँगा।" उन्होने पीछे का अक मिटा दिया। भक्त जहाँ थे वही आ गए।
- आप लोग धन की पूजा करते है, परन्तु धन सदा मानव के मन मे एक प्रकार की चचलता पैदा करता है। प्राय धन से प्रभावित मानव त्याग, तप और वैराग्य की ओर नही बढ़ता। इसके विपरीत इनकी ओर से मन को खीचता है। जब तक आपके पास अल्प परिमाण मे द्रव्य है, तब तक आप समझते होगे कि अभी और धन का सग्रह करना चाहिए क्योकि धन के बिना धर्म नही होता, पर आप अन्ततोगत्वा अनुभव करके देखेगे कि परिग्रह मे वस्तुत दूसरी ही दशा होती है। मुश्किल से ही कोई ऐसा परिवार मिलेगा, जिसमे धन के प्रति आसक्ति नही हो। क्या भरत चक्रवर्ती जैसा अनासक्त परिवार आज कही एक भी मिल सकता है? भरत महाराज के परिवार मे लगातार आठ पीढ़ी तक मोक्ष गये। छह खडो का एकछत्र साम्राज्य पाकर भी भरत चक्रवर्ती के मन मे आसक्ति नही आयी। उनकी सन्तान के मन मे भी आसक्ति अथवा विपुल ऐश्वर्य-सम्पत्ति का घमण्ड नही आया, निरन्तर आठ पीढ़ी तक। क्या इस प्रकार का उदाहरण अन्य कुटुम्बो मे मिल सकता है?
- लक्ष्मी के लिए लोग लालायित रहते है। उसे प्राप्त करने के लिए उसकी पूजा करते है, किन्तु सन्तो ने कहा कि लक्ष्मी की, धन की पूजा करते हुए भी लक्ष्मी आपको छोड़ सकती है। ऐसे सेठ और जमीदार बहुत से हैं, जिन्होने प्रतिवर्ष ब्राह्मणो को बुलाकर घटो तक लक्ष्मी की पूजा करवाई, फिर भी उन सेठो की सेठाई (सम्पत्ति) और जमीदारो की जमीदारी चली गई। दूसरी ओर अमेरिका, रूस और पश्चिमी देशो के निवासी तथा हिन्दुस्तान के भी हजारो-लाखो लोग ऐसे है, जो लक्ष्मी को पूजते नही, फिर भी उन लोगो के पास पैसा है। और लक्ष्मी पूजन करने वाले लक्ष्मी की पूजा करते-करते भी लक्ष्मी से वंचित हैं। ये दोनो प्रकार के प्रत्यक्ष दृष्टान्त बताते है कि वास्तव मे आदमी की समझ की यह भ्रान्ति है कि इस प्रकार लक्ष्मी की पूजा करेगे, तभी लक्ष्मी रहेगी।
- धन से भोग-उपभोग की आवश्यक वस्तुएँ मिलाई जाती हैं और उनसे वस्तुओं के अभाव के कारण जो

छटपटाहट थी, वह शान्त होती है; परन्तु नित नयी बढ़ती लालसा को धन नही मिटाता।

- धर्म भोग मे प्रीति घटाता और नवीन आकाक्षाएँ बन्द करता है। जब आकांक्षा का रोग ही नही होगा तो पूर्ति के लिये धन की आवश्यकता भी कम हो जायेगी।
- धन रोग को नही मिटाता, वह रोग के लिए दवा दिला सकता है। धर्म रोग के मूल को नष्ट करता और उदित रोग को सहने की क्षमता प्रदान करता है, जिससे मानव अभाव मे भी मानसिक शान्ति बनाये रख सकता है।
- धन वर्गभेद कर मनुष्य को मनुष्य से टकराता है, वहा धर्म प्राणिमात्र मे बधुभाव जगाकर परस्पर मैत्री और निर्वैरभाव का सचार करता है।
- धन मन मे चंचलता, भय, शोक के भाव उत्पन्न कर नई उपलब्धि के लिए प्रेरित करता और प्राप्त की रक्षा के लिये चिन्तित रखता है।
- परिग्रह अधिकारवाद है। पशु वनो मे मुक्त मन से परस्पर मिलकर खाते-पीते हैं, अधिकार नही रखते, वैसे ही मानव बिना अधिकार-ममता के रहे तो कोई दु ख नही। महावीर ने मानव ही नही, प्राणिमात्र के साथ मैत्रीभाव की घोषणा की।
- महावीर का उपदेश सब जीवो को आत्मवत् देखना है। इसी को सम्यग् ज्ञान कहा है। आज महावीर के भक्तो को ससार की स्थिति देखते हुए सादा जीवन और आवश्यकता पर नियमन को अपनाना चाहिये। सयम उभयलोक हितकारी है।

धर्म

- धर्म हृदय की बाड़ी मे उत्पन्न होता है। वह किसी खेत मे पैदा नही होता, न किसी हाट दुकान पर ही मिलता है। राजा हो या रक, जिसके मन मे विवेक है, सरलता है, जड़ चेतन का भेद ज्ञान है, वही वास्तव मे धर्म का अस्तित्व है।
- सत्य से धर्म की उत्पत्ति होती है। चोर, लम्पट और हत्यारा भी सत्यवादी हो तो सुधर सकता है। यदि सत्य नही तो अच्छे से अच्छा सदाचारी और साहूकार भी गिर जाता है, बिगड़ जाता है।
- धर्मरूप कल्पवृक्ष की वृद्धि दयादान से होती है। इसीलिये कहा है- "दयादानेन वर्धते।" बढ़ा हुआ धर्मवृक्ष क्षमा के बिना स्थिर नही रह सकता, इसलिये कहा है "क्षमया च स्थाप्यते धर्म ।" सहिष्णुता-क्षमा से धर्म की रक्षा होती है, कामादि विकार सहिष्णु-साधक को पराभूत नही कर सकते।
- धर्म का नाश किससे होता है, इसके उत्तर मे आचार्य ने कहा - "क्रोधलोभाद् विनश्यति" क्रोध और लोभ से धर्म का नाश होता है जहाँ प्रशान्त भाव के बदले क्रोध का प्रभुत्व है वहाँ ज्ञानादि सद्गुण सुरक्षित नही रहते, आत्मगुण नष्ट हो जाते है। लोभ भी सब सद्गुणो का घातक है। इसलिये इन दोनो को धर्म नाशक कहा गया है।
- आत्मिक गुणों को प्रकट करने की एवं राग, द्वेष और मोहादि घटाने की भावना जागृत करने की कसौटी पर जो सर्वथा सही उतरे, उसे ही सर्वश्रेष्ठ धर्म मानना चाहिए।
- जो मत विश्वमैत्री , अहिंसा, सयम, तप आदि उत्कृष्ट भावों को जागृत कराने वाला हो, जिसके सिद्धान्त मे किसी का पीड़न और तिरस्कार न हो, जो मनुष्य जातिं में भेद की दीवारें न खीचता हो, जो विश्व के जीवो मे आत्मवत्

भाव रखता हो, जो धर्म या कर्म कही भी की जाने वाली हिंसा को हिसा मानकर उसका बहिष्कार करता हो, वस्तुत. वही कल्याणकारी सर्वश्रेष्ठ धर्म है। उपर्युक्त लक्षणो से परीक्षण के पश्चात् जैन धर्म सर्वश्रेष्ठ प्रतीत हुए बिना नही रहेगा।

- हर धान्य मे न्यूनाधिक भूख मिटाने की शक्ति होती है। वैसे ही सभी धर्मों का कुछ न कुछ अश आत्म-कल्याण के लिए उपयुक्त और उपादेय है। परन्तु जो आत्मा को अधिकतम बल प्रदान करता है, वही मुक्तिकामी जनो के लिए सन्तोषपूर्वक ग्रहण करने योग्य है।

धर्म-नायक

- भगवान महावीर ने कहा कि उपदेश देना एक बात है और किसी को रास्ते पर लगाना दूसरी बात है और रास्ते पर चलाना अलग बात है। तीर्थकर, आचार्य और धर्म-सघ के नायक किसी को धर्म मे लगाकर ही अलग नही हो जाते हैं, बल्कि धर्म पर चलाने का काम भी करते है। धर्म पर चलाने वाले को धर्मनायक कहते है।
- आज यदि किसी को सघ का नायक बना दे या धर्म का नायक बना दे तो साधर्मियो को सम्भालना उसका काम है। धर्म-प्रवृत्ति मे किसी को कोई भ्रान्ति हुई है तो उसको दूर करने मे उसको रस आना चाहिए। धर्मनायक बनने वाले मे सघ की सहज वत्सलता होती है और सहज ही साधर्मी वत्सलता होती है। वह सोचता है कि तन क्या काम आयेगा? मेरी वाणी क्या काम आयेगी ? मुझे समय मिलता है, उसमे साधर्मी भाइयो का लाभ मिले तो लेऊँ, यश की आकाक्षा नही रखूँ।

धर्म-प्रचारक

- किसी भी समाज की उन्नति प्रचारको पर निर्भर है। हमारे समाज मे ऐसे प्रचारको की अत्यत आवश्यकता है जो सर्वत्र घूमकर समाज की सार-सम्भाल कर सके। समाज मे जहाँ जिस बात की आवश्यकता हो उसकी पूर्ति करना, धर्म विमुख लोगो को धर्म की ओर आकर्षित करना, जहाँ शिक्षा की समुचित व्यवस्था न हो वहाँ व्यवस्था करना, बालको के अभिभावको को समझा-बुझा कर धार्मिक सस्थाओ मे भिजवाना या अनुकूलता हो तो शिक्षा-सस्था की स्थापना करना, ऐसे ज्ञान और सदाचार के प्रसार करने के अनेक कार्य है, जो योग्य और सेवाभावी प्रचारको के अभाव मे नही हो पा रहे है।
- यदि जिन शासन को उन्नत करना है, साधु समाज को ऊँचा रखना है तो साधुओ और श्रावको के बीच एक मध्यमवर्ग की स्थापना करना परमावश्यक है।

धर्म-प्रेरणा

- दूसरे को उपदेश देकर पाप करने की प्रेरणा मत दो और जो पाप का काम करता है, आरम्भ करता है उसका अनुमोदन मत करो, लेकिन जो धर्म का काम करता है, उसके मन को बढ़ावा दो और धर्म करने वाले का दिल से अनुमोदन करके मन को प्रसन्न करो। इससे भी आपको पुण्य होगा। आपसे सामायिक की साधना एक टाइम से ज्यादा नही होती, लेकिन दूसरे करने वालो को आपने प्रेरित किया और उनके मन को इस सत्कार्य मे लगाया, २४ घण्टो मे १ घण्टे के लिये भी उसको आरम्भ-परिग्रह से छुड़ाया तो उसके मन, मस्तिष्क में शान्ति मिलेगी, पाप से बचेगा। इस प्रकार आपकी प्रेरणा से १० आदमी तैयार हो गए तो पुण्य का कैसा अनूठा कार्य होगा।

- आज हमारे वीतराग मार्ग को मानने वाले लाखो की सख्या में भक्त होते हुए भी एक-दूसरे को उपेक्षा भाव से देखते हैं। धर्ममार्ग की कोई साधना नही करता है, तो इसकी किसी को चिन्ता नही है। हल्की बात कर देंगे, लेकिन उसको प्रेम से रास्ते लगाने की बात नही कहेंगे।
- अड़ोस-पड़ोस मे चोरी करने वाले, हिसा करने वाले, शराब पीने वाले, धर्म की निंदा करने वाले है। तो उनसे घृणा करने के बजाय प्रेम करो और उनको पास मे बैठाकर धर्म की प्रेरणा देना सीखो। यह उपदेश तुम्हारे लिए लाभकारी बनेगा। यदि ससार के प्राणी घृणा करने के बजाय धर्ममार्ग पर लगाने का कर्तव्य करना सीख जाये तो खुद के जीवन को भी पाप से हल्का रख सकते हैं और ससार का भी भला कर सकते है, लेकिन यह बात तब आयेगी जब भगवान महावीर के सदेश का सही स्वरूप समझेगे।

धर्म में बाधकता

- आज मानव को पथ-भ्रष्ट करने वाले कई साधन उपलब्ध है। यदि आप एक दिन के लिए भी किसी वस्तु का त्याग कर दे तो आपके पारिवारिक जीवन मे साथ रहने वाले लोग आपको डिगाने का प्रयत्न करेगे। यदि दो-चार युवक सप्ताह या दस दिन के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करने का विचार करे तो उनको विचलित करने के अधिक निमित्त मिलेगे। ससार के रिश्ते, नातेदार और मित्रजन आगे बढ़ने के निमित्त नही होगे वरन् चढ़े हुए लोगो को नीचे गिराने के निमित्त होंगे। इसमे उनका विशेष दोष नही है। वे स्वय राग से घिरे हुए है इसलिए वे अपने साथी को अलग से ऊँचा चढ़ने नही देगे। यदि वह अलग से ऊँचा चढ़ जाता है तो उसके साथ निकटता मिट जाती है। उनका अपनापन मिट नही जाए, यही उनका दृष्टिकोण रहता है। वे यह भी सोचते है कि यदि कोई धर्म-साधना मे लग गया तो उसके दूसरो से सम्बध ढीले होते जाएगे और वह उनसे दूर होता जाएगा। इसके विपरीत यदि आप अधर्म का काम करते है और उससे उनके स्वार्थ का पोषण होता है, तो वे आपका साथ देते रहेगे।
- क्या किसी के घर मे ऐसी धर्मपत्नी है, जो अपने पति से पूछे— "आपने दस हजार रुपये इस महीने मे मिलाये है, वे कैसे मिलाये या कहाँ से आये? आप कृपा करके बता दे। दस हजार रुपयो का आपको मुनाफा हुआ है तो कही आपने अन्याय से, पाप के गलत मार्ग से तो नही लिया?" ऐसा पूछने वाली कोई देवी है क्या? एक ही महीने मे दस हजार रुपये का मुनाफा भाई साहब ने व्यापार मे किया है, यह बात देवी जी ने सुनी और कोई महगा आभूषण उन्हे दे दिया तो वे प्रसन्न हो गयी और उस कमाई मे उनका भी सहयोग हो गया। अधिकाश लोग तो यही समझते है कि कमाना, खाना और परिवार के लोगो की आवश्यकता को पूरी करना ही हमारा कर्तव्य है। इन परिस्थितियो मे मनुष्य के जीवन को उत्थान की ओर ले जाने के लिए यदि कोई अवलम्बन है तो वह धर्म-गुरु है, जो स्वय मुक्ति मार्ग का पथिक है और दूसरो को भी उस पथ पर ले जाता है। जब खुद तिरेगा तभी तो वह दूसरो के लिए अवलम्बन होगा।

धर्म-रुचि

- जिस जीव का तन स्वस्थ नही है, उसको भोजन की रुचि नही होती। ठीक उसी प्रकार जिसका मन स्वस्थ नही है, उसको धर्म पर रुचि नही रहती। जैसे बुखार टूटते ही भोजन मे रुचि होने लगती है, वैसे ही मन से विकार

हटने पर ज्ञान मे रुचि हो जाती है, साधना मे रुचि हो जाती है, धर्म मे रुचि हो जाती है।

धर्म-साधना

- संसार मे प्राय दो प्रकार की साधना पायी जाती है—एक लोक-साधना और दूसरी धर्म-साधना। अधिकाश मनुष्य अर्थ और कामरूप लोक-साधना के उपार्जन मे ही अपने बहुमूल्य जीवन का समस्त समय खो देते है और उन्हे धर्म-साधना के लिए अवकाश ही नही रह जाता। ऐसे मनुष्य भौतिकता के भयकर फेर में पड़कर न केवल अपना अहित करते है, वरन् समाज, देश और विश्व का भी अहित करते है।
- धर्म-साधना का लक्ष्य बिल्कुल विपरीत है। यह मनुष्य को मानवता से भी ऊँचा उठाकर देवत्व या अमरत्व की ओर अग्रसर करती है। वास्तव मे धर्म-साधना के बिना मानव-जीवन निष्फल, अपूर्ण और निरर्थक प्रतीत होता है। आर्थिक दृष्टि से कोई व्यक्ति चाहे कितना ही सम्पन्न, इन्द्र या कुबेर के समान क्यो न हो, किन्तु उसका आतरिक परिष्कार नही हुआ तो निश्चय ही जीवन अधूरा ही रहेगा और उसे वास्तविक लौकिक एव पारलौकिक सुख प्राप्त नही होगा।
- साधनाहीन विलासी व्यक्ति जीवन मे कुछ भी प्राप्त नही करता, वह अपनी शक्ति को यो ही गवा बैठता है। जीवन चाहे लौकिक हो या आध्यात्मिक, सफलता के लिए पूर्ण अभ्यास की आवश्यकता रहती है। जीवन को उन्नत बनाने और उसमे रही हुई ज्ञान-क्रिया की ज्योति को जगाने के लिए साधना की आवश्यकता है। साधना के बल पर चचल मन पर भी काबू पाया जा सकता है। जैसे गीताकार श्रीकृष्ण ने भी कहा है—"अभ्यासेन तु कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते"
- धर्माराधना के बिना जीवन मे सच्ची शान्ति नही मिलती। ससार की समस्त कलाएँ, निपुणताएँ और विशेषताएँ जीवन को तब तक समुन्नत और सफल नही बना सकती, जब तक कि उनमे धर्म कला की प्रधानता नही होती।
- जो साधक मार्ग के काटो, रोड़ो और आपत्तियो की परवाह नही करता, मजिल उसके स्वागत के लिए पलक-पावड़े बिछाये तैयार खड़ी रहती है। जो सासारिक क्षण भगुर प्रलोभनो के चक्कर मे नही पड़ता और साहस से साधना के मार्ग मे चलने के लिए जुट जाता है, उसका इहलोक और परलोक दोनो सुधर जाते है।
- साधना के मार्ग मे पैर बढ़ाना आसान नही है। बड़ी-बड़ी विघ्न-बाधाएँ साधक को विचलित करने के लिए पथ पर रोड़े डालती रहती है, जिनमे मुख्य मोह और कामना है। इनमे इतनी फिसलन है कि साधक अगर सजग न रहा तो वह फिसले बिना नही रहता।
- स्वाध्यायी ज्ञान की साधना करता है, परन्तु ज्ञान के साथ क्रिया की साधना भी जरूरी है। स्वाध्यायी अच्छे वक्ता, लेखक एव प्रवचन व भाषण कला मे निपुण हो सकते है, पर उनमे आचरण भी उसी अनुरूप होना आवश्यक है।
- सभी साधको को साधना के क्षेत्र मे आगे बढ़ना है। ध्यान एव मौन की साधना के साथ यदि ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की आराधना करेगे तो आत्मा का अवश्य कल्याण होगा।
- हिंसा छोड़ अहिसा का पालन करना इतना कठिन नही है, जितना कि क्रोध, मोह, माया, ममता की ओर आकर्षित होने की जो एक प्रकार की वृत्ति है, आकर्षण है, उससे बचे रहना। अन्तरग साधना से ही ऐसा संभव हो सकता

है।

- जो साधन आज जिस स्थिति मे हैं, कल उस स्थिति मे रहेगे या नही, कह नही सकते। बुद्धिमानी इसी मे है कि समय रहते प्राप्त साधनो का अच्छे निमित्त रूप मे उपयोग कर कुछ लाभ प्राप्त कर ले तो स्थायी शान्ति मिल सकेगी।
- जो मुमुक्षु साधक अपने जीवन को क्षणभगुर मान कर जीवन के स्वल्प काल मे अपना अधिकाधिक आत्मकल्याण करने के लिए जीवट स्पर्धावाले घोड़े की तरह प्रतिक्षण जागरूक रहते हुए साधनापथ पर अविराम गति से अग्रसर होता रहता है जीवन को सुधार लेता है।
- जब तक बुढ़ापा नही आवे, रोग अथवा व्याधि नही बढे, और इन्द्रियॉ कमजोर नही हो, प्रभु कहते है कि हे मानव! तभी तक धर्म-साधना करना चाहो, कर लो। यदि समय चला गया, व्यवधानो ने घेर लिया तो फिर आराधना नही कर सकोगे।
- कुछ भाई सोचते है कि महाराज! पोते का विवाह कर लूँ, कारोबार बेटो-पोतो को सभला दूँ, फिर धर्म की आराधना करूँगा। लेकिन जब तक पोता समय पर खड़ा होगा, आप गोता खा गये तो आपकी धर्म-साधना की कामना धरी ही रह जाएगी। इसलिए प्रभु ने कहा कि समय की प्रतीक्षा मत करो। किन्तु समय का महत्त्व समझो। जब तक तुम्हारा शरीर स्वस्थ है, जब तक इन्द्रियॉ बराबर काम कर रही हैं, जब तक शरीर नीरोग है तब तक यदि साधना करने का अवसर मिलता है तो उसको हाथ से मत निकलने दो और उचित लाभ देकर आत्म-कल्याण की साधना मे जीवन की समस्त शक्ति को लगा दो।
- साधक का मूल लक्ष्य अपने गुणो को विकसित करना है। भौतिक इच्छाओ की पूर्ति का लक्ष्य साधना-क्षेत्र मे नही होता। कामनाशील व्यक्ति अर्थ की साधना करता है, लेकिन मुमुक्षु व्यक्ति धर्म की साधना करता है।
- साधना की मस्ती आते ही साधक मस्त होकर सासारिक बधनो को बलपूर्वक तोड़ फैंकता है। समुद्र मे जिस प्रकार अनत नदियॉ समा जाती हैं और उनका कुछ पता नही चलता वैसे साधक मे ज्ञान की अनन्त धाराएँ समाहित हो जाती है। साधक अपने पुरुषार्थ एव साधना के बल से ऊपर उठकर अमर पद प्राप्त कर जीवन को धन्य बना लेता है।
- ससार की स्थिति को सुधारने के लिये धर्म-भावना व नैतिक-सुधार अत्यन्त आवश्यक है।
- जिस प्रकार जीवनार्थी को कभी अमृत-पान के लिये प्रेरणा करने की आवश्यकता नही पड़ती, उसी प्रकार जिसने आत्मतत्त्व को भलीभाति समझ लिया है, जिसे आत्मविश्वास हो गया है, उस आत्मार्थी को भी वस्तुत धर्मसाधन के लिये कभी किञ्चित्मात्र भी कहने की अथवा प्रेरणा करने की आवश्यकता नही पड़ती।
- जड़ से हम इतने परिचित है, उसके गुणग्राम के हम इतने रसिक हैं कि चेतन को उसके सामने भूल ही जाते है। इसीलिये धर्म-करणी, साधना, त्याग, वैराग्य और जीवन की पवित्रता की मञ्जिल तक पहुँचने मे हमारा जड़ के साथ इतना अधिक घनिष्ठ परिचय वस्तुतः हमारे पथ मे पग-पग पर बड़ी ही विकट रुकावटे डालता है।
- सासारिक व्यवहार का आचरण उदयभाव है। आत्मा के पॉच भाव बताये गये है। उदयभाव, उपशम भाव, क्षयोपशम भाव, क्षायिक भाव और पारिणामिक भाव—ये पाँच भाव हैं। खाना, पीना, पहनना, ओढ़ना, अपने बाल-बच्चो को प्यार करना, इज्जत-आबरू बढ़ाने के लिये दौड़-धूप करना-ये सभी उदयभाव हैं। कर्म के उदय से

जिस मार्ग मे गति की जावे उसका नाम उदयभाव है। लेकिन धर्माचरण क्षयोपशम-भाव का काम है। जब कर्मों का बोझा हल्का होता है, उदय भाव मन्द होता है, तब धर्म-मार्ग मे प्रवृत्ति होती है। उदयभाव सासारिक कार्यों की ओर, भौतिक कार्यों की ओर, पुद्गलो की ओर प्रवृत्ति कराता है, बढ़ाता है और उपशमभाव, क्षायिक भाव—ये निजभाव, आत्मा के अपने स्वरूप की ओर, परमात्म स्वरूप की ओर बढ़ाते है।

- भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित धर्म परलोक के लिये तो कल्याणकारी है ही, पर उससे पहले वह इहलोक के लिये भी कल्याणकारी है। वह इस लोक मे भी उस व्यक्ति के जीवन को सुखी, समृद्ध, सुमधुर और रमणीक बनाता है। जो धर्म इहलोक को सुखमय बनाने मे सक्षम है, वह परलोक को भी रमणीक बनाने की क्षमता रखता है। इहलोक और परलोक दोनो को सुखपूर्ण बनाने के लिये आवश्यकता इस बात की है कि भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित इस धर्म के स्वरूप को अपने जीवन मे ढाल कर अहिसा की प्रतिष्ठा की जाय, विश्व मे अहिसा का साम्राज्य स्थापित किया जाय। ससार के सब प्राणियो मे परस्पर भ्रातृभाव, बन्धुभाव, मैत्रीभाव और सौहार्द हो, कोई किसी की हिंसा न करे, कोई किसी को किंचित्मात्र भी सताप न पहुँचाए।
- छोटा-सा धब्बा कपड़े पर लग जाये तो उसे धोने का विचार करते है, लेकिन हमारे आचार-विचार पर धब्बा लग रहा है उसको धोने का विचार नही करते।
- ससार मे दूसरे की अच्छाई, कीर्ति और भौतिक उन्नति देखकर ईर्ष्या करने वालो की कमी नही है। यह एक मानसिक दोष है और यदि इसका निराकरण करने के लिए मन पर नियत्रण करे तो आत्मिक बल बढ़ सकता है। असद् विचारो को रोक कर कुशल मन की प्रवृत्ति करना यह मन का धर्म है। असत्य, कटु और अहितकारी वाणी न बोलना वाणी की साधना है। वाणी का दुरुपयोग रोक कर भगवद् भक्ति की जाए तो इससे भी आत्मिक लाभ होगा। मन और वाणी की साधना के समान तन की साधना भी महत्त्वपूर्ण है। तन को हिसा, कुशील आदि दुर्व्यवहारो से हटाकर, सेवा, सत्सग और व्रत आदि मे लगाना, कायिक साधना है। ये सभी साधनाएँ साधक को ऊपर उठाने मे सहायक होती है। गरीब मनुष्य भी इस प्रकार मन, वचन और काया के तीन साधनो से धर्म कर सकता है।
- साधना की सामान्यत तीन कोटियॉ है-

१. समझ को सुधारना—साधक का यह प्रथम कर्तव्य है कि वह धर्म को अधर्म तथा सत्य को असत्य न माने, भगवान की भक्ति करे। देव-अदेव और सत-असत को पहचानना भी साधको के लिए आवश्यक है।

२. देशविरति या अपूर्ण त्याग—जो श्रमण-धर्म को ग्रहण कर पूर्ण त्याग का जीवन नही बिता सकते, वे देशविरति साधना को ग्रहण करते है। इसमे पापो की मर्यादा बाधी जाती है। सम्पूर्ण त्याग की असमर्थता मे आशिक त्याग कर जीवन को साधना के अभिमुख करना, देश विरति का लक्ष्य है।

३. सम्पूर्ण त्याग—पूर्ण त्याग का मार्ग महा कठिन साधना का मार्ग है। इस पर चलना असि पर चलने के समान दुष्कर है। इस साधना मे पूर्ण पौरुष की अपेक्षा रहती है।

- कर्म-बध से बचने का उपाय साधना है, जो दो प्रकार की है, एक साधु मार्ग की साधना और दूसरी गृहस्थ धर्म-साधना। दोनो में अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह रूप पाँच व्रतो के पालने की व्यवस्था की गई है। साधु-मार्ग की साधना महा कठोर और पूर्ण त्याग की है, किन्तु गृहस्थ की धर्म-साधना सरल है।

- जिस व्यक्ति में विवेक का प्रकाश फैल जाता है, चाहे वह राजा हो या रक अथवा किसी भी स्थिति का हो, श्रावक-धर्म का पालन कर सकता है। यदि किसी व्यक्ति ने प्रपच नही त्यागा, जीवन सयत नही बनाया, जीने की दिशा मे कोई सीमा निर्धारित नही की, तो वह सर्व-विरति या देश-विरति श्रावक-धर्म का साधक नही बन सकता।
- बहुत से लोग सोचा करते हैं कि धर्म-स्थान में साधना करना वृद्धों का काम है, किन्तु ऐसा सोचना गलत है और इसी भ्रम के कारण, सर्वसाधारण का मन, इस ओर नही बढ़ पाता। इतिहास साक्षी है कि राजघराने के लोगो ने भरी जवानी मे राजवैभव, सुख-विलास, आमोद-प्रमोद आदि को छोड़कर साधनाएँ प्रारम्भ की।
- ससार मे वही आदमी प्रशसा के योग्य है, जो किसी काम को पकड़ कर उसे उत्साह के साथ आगे बढ़ाता है। रोते-झीकते हुए काम करने वाले की तारीफ नही होती। आज आप धर्म का कार्य जिस उमग से करना चाहिए। उस उमग से नही करते और यह देखते है कि नही करूँगा तो महाराज नाराज होंगे। व्याख्यान मे देरी से गया, सामायिक नही की, तो महाराज देखेगे। यह सोचकर धर्म-क्रिया करना सही तरीका नही है। कोई भी काम करना है तो उसे हर्षित मन से करना चाहिए रोते-झीकते नही। जबरदस्ती, लोगो के दबाव से, महाराज के दबाव से व्रत किया है, तो उसकी कीमत या चमक कम हो जाती है। इसलिए बधुओ! जीवन मे उल्लास और उमग से धर्म की साधना करो। ऐसा करने से आत्मा का कल्याण निश्चित है।

■ धर्म-सेना

- जैसे वीर सैनिक देश की रक्षा के लिए तोप और टैंक के गोलो के सामने छाती खोलकर खड़े रहते है तभी वे सच्चे सैनिक कहलाते हैं। इसी तरह से धर्म की सेना मे भर्ती होने वाले सैनिक अपने द्वारा लिए गए व्रतो की रक्षा के लिये छाती खोल कर खड़े रहते है और मोर्चे से एक इच भी पीछे नही हटते। हम सत लोगो ने जिन व्रतो को जीवन भर के लिये लिया है, उनका पालन करने के लिये हम यदि इस मार्ग पर चले तो इसमे ताज्जुब की बात नही है। यह तो कर्तव्य और नियम निभाने की बात है।

■ धर्मस्थान में अनुशासन

- दिमाग मे प्रवचन की बात घुसे कैसे? घटा, आधा घंटा सुनने के लिए आते है, तब भी ध्यान दूसरी तरफ रहता है तो सतो की वाणी का क्या असर हो सकता है? माताएँ व्याख्यान सुनते-सुनते जब देखती है कि पास बैठी औरत के लड़का है और अपनी लड़की है। सयोग बैठे जैसा है, तो वही पर बातचीत शुरु कर देती है। अपना सम्बंध बिठाने के लिए वे दूर की रिश्तेदारी निकाल लेगी, कुशल पूछेगी और व्याख्यान उठने से पहले ही बातचीत शुरु कर देगी। अब भला बताइए आपके विषय-कषाय घटे तो कैसे और ज्ञान की ज्योति जलती रहे तो कैसे ? यदि आप चाहते है कि ज्ञान की ज्योति कुछ देर तक टिकी रहे तो वैसा वातावरण रखना पड़ेगा।
- आपने देखा होगा ईसाई लोगो को, वे जब-जब भी गिरजाघर मे जायेगे तो नजदीक पहुँचते ही गाड़ी से उतर जायेगे और दूसरी सारी बाते छोड़ देगे। उन्होंने नियम बना लिया है कि गाड़ी का हार्न चर्च की अमुक सीमा मे ही बजायेगे। प्रार्थना के बीच या प्रवचन के बीच कोई बात नही करेगे। जब आप नही बोलेगे तो दूसरे, पास वाले भी नहीं बोलेंगे। व्याख्यान हो रहा है, शास्त्र का वाचन चल रहा है तो बैठकर बाते करना उचित नही।

ध्यान/योग-साधना

- भिन्न-भिन्न कोटि के व्यक्तियो के धर्म-ध्यान और साधना के स्तर मे बड़ा गहरा अन्तर रहता है। कषाय के तीव्र भाव क्रमश जितने कम होते जायेगे और ज्यों-ज्यो धर्म-ध्यान बढ़ता जाएगा, उतना ही वह उच्च से उच्चतर बनता जाएगा और अन्ततोगत्वा वही धर्म-ध्यान शुद्धतम बनकर शुक्ल-ध्यान के रूप मे परिणत हो जायेगा। वस्तुत इसी प्रकार का ध्यान आत्मा का अन्तर्लक्ष्यी ध्यान होता है।
- एकान्तवाद को मानने वाला मिथ्यात्वी भी ध्यान की साधना करता हुआ दिखाई देता है और दीर्घकाल तक बाहरी सतोष प्राप्त कर वह अपना समाधिस्थ रूप भी ससार के समक्ष प्रस्तुत करता है। धर्म-ध्यान के सम्बन्ध मे जैन-दर्शन की मान्यता यह है कि जब तक किसी प्राणी के अन्तर के अज्ञान की, तीव्र मिथ्यात्व की उपशान्ति नही होती एव सम्यक् ज्ञान की ज्योति नही जग पाती, तब तक उस प्राणी को धर्म-ध्यान का अधिकारी नही कहा जा सकता।
- आर्त्तध्यान आपके मोह कर्म के उदय भाव से होने वाला ध्यान है। जब तक हम आर्त्त-ध्यान के आश्रित होगे तब तक रौद्र-कषायो के भाव आते रहेगे, क्योकि कषायो के प्राबल्य मे किसी भी समय रौद्र-ध्यान उत्पन्न हो सकता है। मन मे राग-द्वेष-क्रोधादि भावो का प्राबल्य होने पर धन, धरा, धामादि के प्रश्न को लेकर बात-बात पर मित्रो, सगे-सम्बन्धियो एव अन्यान्य लोगो के साथ लड़ाई-झगड़ा करना, दूसरो के लिए बुरा सोचना, दूसरे लोगो के धन, जन एव प्राणो को हानि पहुँचाने का विचार करना रौद्र-ध्यान है। आर्त्त-ध्यान रागाश्रित है और रौद्र-ध्यान द्वेष-प्रधान है।
- ध्यान का विशद विवेचन आगम और आगमेतर ग्रथो मे है। आज श्रमण समाज मे ध्यान का अभ्यास प्राय नही के समान है। इसके लिए विशेष रूप से शिक्षा देनी आवश्यक है। जैन व जैनेतर परम्पराओ से प्रस्तुत विषय पर अनुसधान कर मौलिक तथ्य प्रकट करना चाहिए और सुनियोजित मार्ग-निर्माण करना चाहिए।
- हमारे तीर्थंकरो की मूर्तियॉ वीतराग मुद्रा मे होती है। श्वेताम्बर दिगम्बर परम्परा मे मुद्रा का जरा अन्तर है। दिगम्बर परम्परा वाले अर्ध निमीलित मुद्रा में ध्यानासन की प्रतिकृति प्रस्तुत करते है, तो श्वेताम्बर पूरे खुले नयन की मुद्रा मे। जैन तीर्थकरो का छद्मकाल अधिकाश ध्यान-साधना मे ही बीतता है। उसमे प्राणायाम जैसी क्लेश क्रिया नही होती। उनकी साधना मे मन, वाणी और काय योग की स्थिरता अखण्ड रहती है। जैन दीक्षा में इसी प्रकार के योग की शिक्षा और दीक्षा दी जाती है। जैन दीक्षा का सावद्ययोग प्रत्याख्यान इसी बात का द्योतक है।
- आज की चालू योग की साधना से इसमें यही अन्तर है कि जैन योग मे वृत्तियो के मोड़ बदलने का लक्ष्य मुख्य है। अभ्यास के बल पर जैन साधक अशुभ योग पर विजय पा लेता है। वह शुभ से अशुभ को जीतता है। हमारी समझ मे यही जैन योग की दीक्षा है। इस प्रकार की साधना के निरन्तर अभ्यास से अनुभव आने के पश्चात् - सविकल्प और निर्विकल्प समाधि रूप सुख की अनुभूति होती है। इसी को सिद्ध योग की दीक्षा कह सकते है। इसमें यम-नियम और आसन आदि स्वत आ जाते हैं।
- आज भी दीक्षा तो वही दी जाती है, पर शिक्षा दान और उसका यथावत् ग्रहण, धारण एव आराधन नही होने से आज उसका प्रभाव जैसा चाहिये वैसा दृष्टिगोचर नही होता। यह हम साधको के प्रमाद का परिणाम है। हमें इस

ओर जागृत होने की आवश्यकता है।

■ नारी

- बहने घर की एक तरह से दीपिका हैं, वह भी देहली-दीपिका। कमरे के दरवाजे को देहली कहते है। कमरे के अन्दर लाइट या बत्ती है तो वह कमरे मे ही प्रकाश करती है और कमरे के दरवाजे पर बत्ती है तो कमरे के अन्दर और बाहर दोनो तरफ प्रकाश करती है।
- यह एक मानी हुई बात है कि पारिवारिक जीवन की सफलता बहुत अशो मे गृहिणी की क्षमता पर निर्भर है। दुर्दैव से यदि गृहिणी कर्कशा, कटुभाषिणी, कुशीला तथा अनुदार मिल जाती है तो व्यक्ति का न सिर्फ आत्म-सम्मान और गौरव घटता है, बल्कि घर की सारी इज्जत मिट्टी मे मिल जाती है। ऐसी नारी को, गृहिणी के बजाय ग्रहणी कहना अधिक सगत लगता है।
- पुरुष और स्त्री गृहरूपी शकट के दो चक्र हैं। उनमे से एक की भी खराबी पारिवारिक जीवन रूपी यात्रा मे बाधक सिद्ध होती है। योग्य स्त्री सारे घर को सुधार सकती है, नास्तिक पुरुष के मन मे भी आस्तिकता का सचार कर देती है। स्त्री को गृहिणी इसीलिए कहा है कि घर की आन्तरिक व्यवस्था, बच्चो की शिक्षा-दीक्षा तथा सुसस्कार एव समुचित लालन- पालन और आतिथ्य सत्कार आदि सभी का भार उस पर रहता है और अपनी जिम्मेदारी का ज्ञान न रखने वाली गृहिणी राह भूल कर गलत व्यवहारो में भटक जाती है। अत उसका विवेकशील होना अत्यन्त आवश्यक है।
- यह बड़ी विडम्बना है कि आज की गृहिणियाँ अपने नहाने, धोने और शरीर सजाने मे इतनी व्यस्त रहती है कि उनको घर सभालने और बच्चो की शिक्षा-दीक्षा व सस्कार-दान के लिए कोई समय नही मिलता। वे चाहती है कि बच्चो को कोई दूसरा सभाल ले। आजकल बालमंदिरो पर जिस कार्य का भार डाला जा रहा है प्राचीन काल मे वह कार्य गृह-महिलाओ द्वारा किया जाता था। बच्चो मे जो सस्कार माताएँ डाल सकती है, भला वह बाल-मदिरो में कैसे सम्भव हो सकता है?
- यो तो नर की अपेक्षा नारियाँ स्वभावत विशाल हृदया, कोमल, दयामयी और प्रेम- परायणा होती है, किन्तु शिक्षा, सुविचार एवं सत्सगति के अभाव मे वे भी सकुचित हृदयवाली बन कर आत्म-कल्याण से विमुख बन जाती हैं। जब तक उनमे समुचित ज्ञान का प्रकाश प्रवेश नही पाएगा, तब तक उनका जीवन जगमगा नही सकता। नारियों की सकीर्णता का प्रभाव पुरुषो पर भी अत्यधिक पड़ता है और इसी चक्कर मे पड़कर वे साधना-विमुख बन जाते है।
- यदि पुत्र को सुसंस्कृत न बनाया जाए तो सिर्फ एक घर की हानि होगी, किन्तु यदि बालिका मे सुसस्कार नही दिए जाएँ तो पितृघर और श्वसुर गृह दोनों को धक्का लगेगा तथा भावी सन्तानो पर भी कुप्रभाव पड़ेगा। जो बालिका कुसस्कार लेकर ससुराल जायेगी, वह वहाँ भी कुसस्कार का रोग फैलायेगी। अत लड़के की अपेक्षा लड़की की शिक्षा पर माता-पिता को अधिक ध्यान देना आवश्यक है।
- आज की माताएँ बालिका से काम तो बहुत लेती हैं किन्तु उसे सुसंस्कार सम्पन्न बनाने का यत्न नही करती। वे दहेज में पुत्री को बहुत सारा धन देंगी, मगर ऐसी वस्तु गाठ बांध कर नही देती जो जीवन भर काम आवे। जिस लड़की के साथ श्रद्धा, प्रेम, सुशीलता, सदाचार, प्रभु-भक्ति और मृदु-व्यवहार की गाठ बाधी जाती है, वह असली

सम्पत्ति लेकर पराये घर जाती है।

- अनेक नारियो के शरीर पर जो वस्त्र होते है, वे अगो के आच्छादन के लिए नही प्रत्युत कुत्सित प्रदर्शन के लिए होते है। आज जनता की सरकार भी इस ओर कुछ ध्यान नही देती। पर अपने अधिकारो को जानने वाली आज की नारियाँ भी इस अपमान को सहन कर लेती है, यह विस्मय की बात है। अगर महिलाएँ इस ओर ध्यान दे और सगठित होकर प्रयास करे तो मातृ-जाति का इस प्रकार अपमान करने वालों को सही राह पर लाया जा सकता है।

■ नारी-शिक्षा

- युवको की अपेक्षा हमारी बच्चियाँ अधिक शिक्षण ले रही है तो आपकी यह भी जिम्मेदारी है कि उनका जीवन सदाचारी रहे और व्यावहारिक शिक्षा के साथ उनको नैतिक और धार्मिक शिक्षा भी मिले। यदि ऐसा नही होगा तो आपका जीवन सतान की तरफ से यशस्वी नही रहेगा और आपको खतरा बना रहेगा। कभी कुछ हो गया तो कभी कुछ। रहन-सहन मे खतरा रहेगा। ऐसे नमूने सासारिक जीवन मे आपको देखने को मिलते है।

■ परमात्मा

- राग, द्वेष और अज्ञान आदि दोषो से मुक्त, पूर्ण ज्ञानी, स्थित स्वरूप वीतराग आत्मा ही परमात्मा है। शब्द की दृष्टि से 'परमात्मा शब्द' मे दो पद है—परम और आत्मा। आत्मा ही परमात्मा है। विशिष्ट शक्ति वाला सरागी जीव परमात्मा नही हो सकता। वह कोई देव हो सकता है। देव को जन्म-मरण होता है, किन्तु परमात्मा को जन्म-मरण नही करना पड़ता। वह वीतराग, सर्वज्ञ और अनन्त शक्तिमान् होता है। तीव्र क्रोध-मान-माया और लोभ मे उन्मत्त रहने वाला प्राणी भी सर्वथा दोष-विजय की साधना से कर्म क्षय कर दोष रहित परमात्मा हो सकता है। क्योकि अनन्त ज्ञान, निराबाध सुख और अनन्त शक्ति ये आत्मा के निज गुण है। कर्म क्षय कर निजगुण को प्राप्त करने का अधिकार सबको है। इसीलिये कहा गया है कि-

> सिद्धा जैसो जीव है, जीव सोही सिद्ध होय।
> कर्म मैल का आतरा, बूझे विरला कोय।

■ परिग्रह

- 'परिग्रह' से तात्पर्य केवल सग्रहवृत्ति नही, वरन् आतरिक आसक्ति भी है। ग्रह का शाब्दिक अर्थ है पकड़ने वाला। आकाश के ग्रह दो प्रकार के होते है— एक सौम्य और दूसरा क्रूर। ये मानव जगत से दूर के ग्रह है। फिर भी इनमे से एक मन को आनदित करता है और दूसरा आतकित। हम इन दूरवासी ग्रहो की शान्ति के लिए विविध उपाय करते है, किन्तु हृदय रूपी गगन-मंडल मे विराजमान परिग्रह रूपी बड़े ग्रह की शान्ति का कुछ भी उपाय नही करते। परिग्रह चारो ओर से पकड़ने वाला है। इसके द्वारा पकड़ा गया व्यक्ति न केवल तन से बल्कि मन और इन्द्रियो से भी बधा रहता है। यह दिल-दिमाग और इन्द्रिय किसी को हिलने तक नही देता। यह 'परि समन्तात् गृह्यते इति परिग्रहः' रूप व्युत्पत्ति को सार्थक करता है।

- आज के मानव ने धन को साधन न मान कर साध्य बना लिया है। धन-सचय को धर्म-सचय से भी बढ़कर समझ लिया है। हर जगह उसे धन की याद सताती है और हर तरफ उसे धन का ही मनोरम चित्र दिखाई देता

है। अधिक क्या, आज संत-दर्शन और संत-समागम मे भी धन-लाभ की कामना की जाती है।

- साधारण मानव यदि परिग्रह का पूर्ण रूप से त्याग नही कर सके, तो भी वह उसका सयमन कर सकता है। परिग्रह के मोह मे फसा हुआ व्यक्ति अफीमची के सदृश है और मोही प्राणियो के लिए धन अफीम के समान है। अफीम के सेवन से जैसे अफीमची में गर्मी, स्फूर्ति बनी रहती है, किन्तु अफीम शरीर की पुष्ट धातुओ को सोखकर उसे खोखला बना देती है, परिग्रह रूपी अफीम भी मनुष्य के आत्मिक विकास को न सिर्फ रोक देती है, बल्कि उसे भीतर से सत्त्वहीन कर देती है। अत हर हालत में इसकी मर्यादा कर लेने मे बुद्धिमानी है।

- परिग्रह का विस्तार ही आज ससार मे विषमता और अशान्ति का कारण बना हुआ है। यदि मनुष्य आवश्यकता को सीमित कर अर्थ का परिमाण कर ले, तो सघर्ष या अशान्ति भी बहुत सीमा तक कम हो जाए। आज जो अति श्रीमत्ता को रोकने के लिए शासन को जनहित के नाम पर जन-जीवन में हस्तक्षेप करना पड़ रहा है, धार्मिक सिद्धान्तो को ध्यान मे रखकर यदि मानव अपने आप ही परिग्रह की सीमा बाध ले, तो बाह्य हस्तक्षेप की आवश्यकता ही नही रहेगी और मन की अशान्ति, हलचल और उद्विग्नता भी मिट जाएगी।

- परिग्रह का दूसरा नाम 'दौलत' है, जिसका अर्थ है—दो-लत अर्थात् दो बुरी आदते। इन दो लतो मे पहली लत है हित की बात न सुनना। दूसरी लत है— गुणी, माननीय, नेक सलाहकार और वन्दनीय व्यक्तियो को न देखना, न मानना।

- सारी दुनिया भुक्ति या भोग के पीछे छटपटा रही है क्योकि परिग्रह की साधना मे किये गए समस्त कार्य भुक्ति के अन्तर्गत आते है। मनुष्य यदि भुक्ति को ही जीवन का लक्ष्य बना ले, तो पशु और मनुष्य मे कोई अन्तर नही रहता।

- सम्राट् सिकन्दर ने प्रबल शौर्य प्रदर्शित कर खूब धन सग्रह किया, किन्तु जब यहाँ से चला तो उसके दोनो हाथ खाली थे। बड़े-बड़े वैद्य और डाक्टर वैभव के बल से उसको बचा नही सके और न उसके सगे-सम्बधी ही उसे चलते समय कुछ दे सके।

- आत्मा की मलिनता को दूर करने का सबसे बड़ा उपाय भोगो से मुक्त होना है और इसके लिए अनुकूल साधना अपेक्षित है। मनुष्य जब तक सासारिक प्रपञ्च रूप परिग्रह से पिण्ड नही छुड़ाता तब तक उसके मन मे चचलता बनी रहती है, भौतिकता के आकर्षण से उसका मन हिलोरें खाते जल मे प्रतिबिम्ब की तरह हिलता रहता है। लालसा के पाश मे बधा मानव सग्रह की उधेड़बुन में सब कुछ भूलकर आत्मिक शान्ति खो बैठता है। अतएव सच्ची शान्ति पाने के लिए उसे अपरिग्रही होना अत्यंत आवश्यक है।

- जिसके पास कुछ नही, पर इच्छा बढ़ी हुई है, तृष्णा असीम है, तो वह महापरिग्रही है और करोड़ो की सम्पदा पाकर भी जिसका इच्छा पर नियंत्रण है, चाह की दौड़ घटी हुई है, वह अल्पपरिग्रही है।

- अगर लोभ से सर्वथा पिण्ड छुड़ाना कठिन है तो उसकी दिशा बदली जा सकती है और उसे गुरुसेवा या जप-तप तथा सद्गुणों की ओर मोड़ा जा सकता है। ऐसा करने पर परिग्रह का बंधन भी सहज ढीला हो सकेगा।

- साधारणतः मानव मोह का पूर्णरूप से त्याग नही कर पाता, पूर्ण अपरिग्रही नही बन पाता तो क्या वह उस पर सयम भी नहीं कर सकता? ऊँची डालियो के फूल हम नही पा सकते तो क्या नीचे के काटो से दामन भी नही छुड़ा सकते? अवश्य छुड़ा सकते हैं। जब शरीर के किसी अंग मे अनावश्यक मास वृद्धि हो जाती है तो उससे

शारीरिक कार्यों मे बाधा पड़ती है। उस बाह्य वृद्धि को पट्टी बांधकर या अन्य उपचार के द्वारा रोकना पड़ता है, सीमित करना पड़ता है वैसे ही बढ़ा हुआ परिग्रह भी अच्छे कार्यों मे, साधना मे बाधक होता है। अत उस पर नियमन की पट्टी लगानी आवश्यक होती है।

- आज कुछ लोग नौकर रखकर यह तर्क उपस्थित करते हैं कि हम मजदूर लोगो का पालन करते है। ऐसी दुहाई देने वाले कहाँ तक सच कहते हैं, यह उनका हृदय जानता है। आज के कारखाने स्वार्थ के लिए चलते है या लोकपालन के लिए? इसका जवाब तो स्वय से पूछना चाहिए।
- वर्षाकाल में बच्चे मिट्टी का घर बनाने मे इतने तल्लीन हो जाते है कि खाना-पीना भी भूल जाते है और माँ-बाप के पुकारने पर भी ध्यान नही देते। यदि कोई राहगीर उनके घर को तोड़ दे, तो वे झगड़ बैठते है। वे मिट्टी के घरौंदे मे राजमहल जैसे आनद का अनुभव करते है। यद्यपि मिट्टी वाला घर कोई उपादेय नही है और सयाने लोग बच्चे के इस प्रयास पर हसते है, फिर भी वह किसी की परवाह किये बिना कीचड़ मे शरीर और वस्त्र खराब करते नही झिझकता। ठीक यही स्थिति मदमति ससारी जीव की है। वह बच्चे के घरौंदे की तरह नाशवान कोठी, बगला और भवन बनाने मे जीवन को मलिन करता रहता है। घरौंदे के समान ये बड़े-बड़े बगले भी तो बिखर जाने वाले है। क्या आज के ये खडहर, कल के महलो के साक्षी नही है, जिनके निर्माण मे मनुष्य ने अथक श्रम और अर्थ का विनियोग किया था।
- पक्षी के घोसले के समान, सरलता से नष्ट होने वाले घर के पीछे मनुष्य रीति, प्रीति और नीति को भूलकर, काम-क्रोध, लोभ के वशीभूत होकर पाप करता है, बहुतो की हानि करता है और परिग्रह की लपेट मे फस जाता है।
- सर्वथा परिग्रह विरमण (त्याग) और परिग्रह परिमाण, ये इस व्रत के दो रूप है। परिग्रह परिमाण व्रत का दूसरा नाम इच्छा परिमाण है। कामना अधिक होगी तो प्राणातिपात और असत्य भी बढ़ेगा। सब अनर्थो का मूल कामना-लालसा है। कामना ही समस्त दुखो को उत्पन्न करती है। भगवान ने कहा है कि 'कामे कमहि कमियं खु दुक्खं।' यह छोटा सा सूत्रवाक्य हमारे समक्ष दुख के विनाश का अमोघ उपाय प्रस्तुत करता है। जो कामनाओ को त्याग देता है वह समस्त दुखो से छुटकारा पा लेता है।
- साधारण मनुष्य कामनापूर्ति मे ही सलग्न रहता है और उसी मे अपने जीवन को खपा देता है। विविध प्रकार की कामनाएँ मानव के मस्तिष्क मे उत्पन्न होती है और वे उसे नाना प्रकार से नचाती है। इस सम्बध मे सबसे बड़ी कठिनाई तो यह है कि कामना का कही ओर छोर नही दिखाई देता। प्रारम्भ मे एक कामना उत्पन्न होती है। उसकी पूर्ति के लिए मनुष्य प्रयत्न करता है। वह पूरी भी नही होने पाती कि अन्य अनेक कामनाएँ उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार ज्यो-ज्यो कामनाओ को पूर्ण करने का प्रयास किया जाता है त्यो-त्यो उनकी वृद्धि होती जाती है और तृप्ति कही हो ही नही पाती, आगम मे कहा है—

'इच्छा हु आगाससमा अणन्तिया।'

जैसे आकाश का कही अन्त नही वैसे ही इच्छाओ का भी कही अन्त नही। जहाँ एक इच्छा की पूर्ति मे से ही सहस्रो नवीन इच्छाओ का जन्म हो जाता हो वहाँ उनका अन्त किस प्रकार आ सकता है? अपनी परछाई को पकड़ने का प्रयास जैसे सफल नही हो सकता, उसी प्रकार कामनाओ की पूर्ति करना भी सम्भव नही हो सकता। उससे बढ़ कर अभागा और कौन है जो प्राप्त सुख-सामग्री का सन्तोष के साथ उपभोग न करके तृष्णा के

वशीभूत होकर हाय-हाय करता रहता है, आकुल-व्याकुल रहता है, धन के पीछे रात-दिन भटकता रहता है । जिसने धन के लिए अपना मूल्यवान मानव जीवन अर्पित कर दिया वह मनुष्य होकर भी मनुष्य जीवन का अधिकारी नही है।

- जो पदार्थ यथार्थ मे आत्मा का नही है, आत्मा से भिन्न है उसे अपना स्वीकार करना परिग्रह है। परिग्रह के मुख्य दो भेद हैं—आभ्यन्तर और बाह्य। रुपया-पैसा, महल-मकान आदि बाह्य परिग्रह हैं और क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह आदि विकार भाव आभ्यन्तर परिग्रह कहलाते है।
- जिस धन के लिए मनुष्य इस लोक मे सुखों का परित्याग करता है और परलोक को बिगाड़ता है वह धन उसके क्या काम आता है? इष्टजन का वियोग क्या धन से टल जाता है ? जब विकराल मृत्यु अपना मुख फाड़ कर सामने आती है तो क्या धन दे कर उसे लौटाया जा सकता है ? सोने-चॉदी और हीरो से भरी तिजोरियॉ क्या मौत को टाल सकती है? आखिर सचित किया हुआ धन का अक्षय कोष किस बीमारी की दवा है ? चाहे गरीब हो या अमीर खाएगा तो खाद्य-पदार्थ ही, हीरा मोती तो खा नही सकता। फिर अनावश्यक धन-राशि एकत्र करने से क्या लाभ है? मानव-जीवन जैसी अनमोल निधि को धन के लिए विनष्ट कर देने वाले क्यो नही सोचते कि धन उपार्जन करते समय कष्ट होता है, उपार्जित हो जाने के पश्चात् उसके सरक्षण की प्रतिक्षण चिन्ता करनी पड़ती है और सरक्षण का प्रयत्न असफल होने पर जब वह चला जाता है, तब दुख और शोक का पार नही रहता।
- मनुष्य की वास्तविक आवश्यकताएँ बहुत कम होती है, किन्तु वह उन्हे स्वेच्छा से बढ़ा लेता है। आज तो मानव ही नही, देश भी आवश्यकताओ के शिकार हो गए हैं। विदेशो मे क्या भेजे और कैसे विदेशी मुद्रा प्राप्त करे, यह देश के नेताओ की चिन्ता है। जब उन्हे अन्य पदार्थ भेजने योग्य नही दिखते, तो उनकी नजर पशु-धन की ओर जाती है। बढ़िया किस्म के वस्त्रो, खिलौनो और मशीनो की पूर्ति के लिए धन कहॉ से दिया जाए? इसका एक रास्ता पशु-धन है। एक समय भारतवासी सादा जीवन व्यतीत करते थे, पर विदेशो का ऋण नही था, मगर आज विचित्र स्थिति बन गई है। नन्हे-नन्हे बच्चो को दूध न मिले और गोमास विदेशों मे भेजा जाए, यह सब आवश्यकताओ को सीमित न रखने का फल है।
- परिग्रह आरम्भ को छोड़कर नही रहता। वह जन्मा भी आरम्भ से है और उसका समर्थन भी आरम्भ ही करता है। आरम्भ से ही परिग्रह बढ़ता है। परिग्रह अपने दोस्त आरम्भ को बढाने का ध्यान रखता है। आरम्भ और परिग्रह के प्रति मनुष्य का अतिप्रबल आकर्षण रहा है।
- परिग्रह का मतलब केवल पैसा बढ़ाना और तिजोरी भरना ही नही है, बल्कि कुटुम्ब, व्यापार, व्यवसाय आदि मे उलझे रहना भी परिग्रह है। जैसे सोना, चादी, हीरा, जवाहरात, भूमि, मकान ये सब परिग्रह मे हैं, वैसे ही कुटुम्ब, परिवार और दास-दासी भी परिग्रह मे सम्मिलित हैं। बाहरी परिग्रह तो ये दिखने वाली चीजे हो गई और आन्तरिक परिग्रह मन मे रहने वाली आसक्ति, मोह, ममता आदि हैं, जो बाह्य परिग्रह के मूलाधार है। इनमे उलझा हुआ प्राणी सत्सग का लाभ नही ले सकता।
- जिनके पास जरूरत से अधिक मकान हैं, वे उनकी ममता छोड़े। बेचने मे खतरा है इसलिए ममता छोड़कर दान दे दें। दान देने पर प्रतिबन्ध नही है। नाम का नाम रहे और काम का काम हो जाये। सरकार भी कहेगी कि सार्वजनिक क्षेत्र में ये कितना काम कर रहे हैं। कहा जाएगा जो काम सरकार नही कर सकी, वह सेठ जी ने कर

दिया। 'जनसेवी हैं' यह कह कर उनकी बुद्धिमत्ता को सभी सराहेगे।

जीवन मे पहला नम्बर देव-भक्ति का, दूसरा नम्बर सत-सेवा का, तीसरा नम्बर परिवार के सदस्यो को सभालने का, चौथा नम्बर अपने स्वास्थ्य को सभालने का और पॉचवा नम्बर काम धधे का। इस तरह से जीवन को चलाओगे तो गाड़ी अटकेगी नही, भटकेगी नही और समाज मे नीचा देखने की जरूरत नही पड़ेगी।

- परिग्रह का बधन तब तक नही कटेगा, जब तक मनुष्य यह न मान ले कि यह आत्मा के लिए दुखदायी है और जीवन-निर्माण मे बाधक है।
- आज मानव परिग्रह को उच्चता और सुख-सुविधा की निशानी समझता है। वह भूल गया है कि परिग्रह उच्चता की निशानी नही है। लोगो मे सम्मान की निगाह कब होगी—परिग्रह-त्यागने पर, या रखने पर? इतनी सीधी-सादी चीज़ को भी मानव भूल जाता है, इससे बढ़कर अज्ञान क्या हो सकता है। इसलिए मुक्ति का रास्ता बनाना है तो अज्ञान को नष्ट करके ज्ञान का प्रकाश किया जायेगा तो मोक्ष और मोक्ष का मार्ग नजदीक हो जाएगा।
- २५ हजार देव जिसकी सेवा करते है, ऐसा चक्रवर्ती भी अरिहन्त तीर्थकर की वाणी सुनकर अपने राज्य को छोड़ देता है और कहता है 'राजेश्वरी सो नरकेश्वरी' मुझे राज्य नही चाहिए, मुझे राज्यपद पर रहकर नरक मे नही जाना है। इसमे लिप्त रहा, फसा या उलझा रहा तो यह नरक मे ले जाने वाला है।
- ये रजत, स्वर्ण, हीरे और जवाहरात के परिग्रह भार है। कुटुम्ब की आवश्यकता के लिए परिग्रह रखना जरूरी समझते है तो ऐसा करो कि उस पर तुम सवारी करो, लेकिन तुम्हारे पर वह सवार नही हो। यदि धन तुम पर सवार हो गया तो वह तुमको नीचे डुबा देगा।
- जितना जल्दी बिना श्रम के, बिना न्याय के, बिना नीति के पैसा मिलाया जाता है, उस पैसे से लखपति करोड़पति हो सकते है, लेकिन वह पैसा उस परिवार को शान्ति और समता देने वाला नही होता। पैसा पाया और घर मे शान्ति नही तो पैसे का फायदा क्या?
- आप हजारो का व्यापार करते हो। हजारो लोग आपकी दुकान पर माल खरीदने के लिए आते होगे। आप उनसे थोड़ा-थोड़ा मुनाफा लेकर जीवन चला सकते हो, बाल-बच्चो और परिवार का पोषण कर सकते हो और इससे आपकी अहिसा भी बची रह सकती है। अधिक मुनाफा लेने के लिए किसी के सुख-दुख की परवाह किये बिना चलोगे तो वहाँ हिसा होगी, आपका जीवन परेशान रहेगा, आपको सुख-शान्ति नही रहेगी, परिवार मे प्रसन्नता नही रहेगी।
- जो पैसा किसी नीति से नही मिलाया जाता है, दूसरे को तकलीफ दिये बिना नही मिलाया जाता है वह पैसा आपको शान्ति नही दे सकता। एक सद्‌गृहस्थ वही है जो राजी मन से, देने वाले से राजी मन से ले, उसको कष्ट नही दे। ऐसा पैसा आपके लिए दुखकारी, अहितकारी और उसके लिए भी पीड़ाकारी नही होगा।

परिग्रह-परिमाण

- आवश्यक द्रव्य रखते हुए भी आप परिग्रह पर ममता की गॉठ को ढीली कर के अपरिग्रही बन सकते हैं।
- परिग्रह का बन्धन यदि प्रगाढ़ होगा तो उत्तरोत्तर ईर्ष्या, द्वेष, कलह, लड़ाई-झगड़े, मिलावट, चोरबाजारी और मुकद्दमाबाजी होगी। इसके विपरीत आप परिग्रह पर ममता घटाकर अपने स्वय के जीवन-निर्वाह के लिये, अपने

परिवार और बच्चो के लिये, समाज के हित के लिये, आवश्यकता पूर्ति योग्य अर्थोपार्जन न्याय-नीति से करेगे तो सभी लोग आपके मित्र होंगे, आपको न राज्य का डर रहेगा और न समाज का ही।

- परिग्रह को सीमित करना, कम करना और परिग्रह के बन्धनो को ढीला करना चाहते हैं तो भोगोपभोग की सामग्री को सीमित करना होगा, अपनी भोगोपभोग की भावना पर अकुश लगाना होगा, भोगोपभोग की भावना को घटाना होगा।
- इच्छा-परिमाण श्रावक के मूलव्रतो मे परिगणित किया गया है। इच्छा का परिमाण नही किया जाएगा और कामना बढ़ती रहेगी तो प्राणातिपात और झूठ बढ़ेगा। अदत्त ग्रहण मे भी प्रवृत्ति होगी। कुशील को बढ़ाने मे भी परिग्रह कारणभूत होगा। इस प्रकार असीमित इच्छा सभी पापों और अनेक अनर्थों का कारण है।
- परिग्रह की एक सीमा कर, परिग्रह का परिमाण कर अपरिग्रही बनने के साथ-साथ भोगोपभोग की सामग्री को यथाशक्ति सीमित करते रहना, भोगोपभोग की इच्छा पर नियन्त्रण करना परमावश्यक है। भोगोपभोग की इच्छा जब तक शान्त नही होती, तब तक अपरिग्रहपन की आराधना करना गृहस्थ के लिये सभव नही है।
- परिग्रह का परिमाण कर यदि आप परिग्रह को कम करना चाहते है, तो अपरिग्रह की भावना के साथ उपभोग-परिभोग को, भोगोपभोग की सामग्री को घटाने की आवश्यकता है। उपभोग-परिभोग को घटाने के साथ ही परिग्रह की आवश्यकता स्वत. कम हो जायेगी और परिग्रह-सचय के लिये होने वाला पाप भी कम हो जायेगा।
- जिस प्रकार भोगोपभोग परिग्रह को बढ़ाने के साधन है, उसी प्रकार दिखावा या आडम्बर भी परिग्रह को बढ़ाने का साधन है ।
- प्रदेशी राजा का जिस दिन अज्ञान घटा उसी दिन उसने राजपाट का प्रबध किये बिना केशी मुनि के चरणो मे बैठकर बारह व्रत धारण कर लिये। बारह व्रत धारण करने के साथ ही साथ उसने परिग्रह परिमाण किया। उसका परिग्रह ज्यादा लम्बा-चौड़ा था या आपका ज्यादा लम्बा-चौड़ा है? आप मे से यदि किसी को कहा जाये कि सेठजी परिग्रह की सीमा तो बाधो, तो कहोगे-'महाराज! अभी तो पता नही है कितना देना है, कितना लेना है, कितना माल है, दिवाली पर जब हिसाब करेगे तब पता चलेगा।' वस्तुतः आपका इस प्रकार कहना परिग्रह परिमाण से बचने का बहाना मात्र ही माना जा सकता है। यदि वास्तव मे आप परिग्रह का परिमाण करना चाहते है तो जितना आज आपके पास है, उतना खुला रखकर बाकी का तो त्याग कर दो। यह तो बिना आकड़ो के भी आप कर सकते हैं। हिसाब पीछे करते रहना। जितने बंगले, मकान, दुकान इत्यादि है, उनसे अधिक नही बढ़ाओगे, यह तो प्रण कर लो। इस तरह का सकल्प यदि करना चाहो तो बिना विलम्ब के कर सकते हो।
- केवल बाहरी वस्तु का परिमाण करने से काम नही चलता। यह तो इच्छाओ को सीमित करने की एक साधना मात्र है। साधना क्षेत्र मे बाह्य और आन्तरिक परिसीमन की नितान्त आवश्यकता है तथा दोनो का अन्योन्याश्रय सम्बंध है।
- श्रावक के लिए पूर्ण अपरिग्रही होकर रहना शक्य नही है, अतएव वह मर्यादित परिग्रह रखने की छूट लेता है। किन्तु व्रतधारी श्रावक परिग्रह को गृह-व्यवहार चलाने का साधन मात्र मानता है। कमजोर आदमी लकड़ी का सहारा लेकर चलता है और उसे सहारा ही समझता है। कमजोरी दूर होने पर वह लकड़ी का प्रयोग नही करता। अगर वह लकड़ी को ही साध्य मान ले और अनावश्यक होने पर भी हाथ में थामे रहे तो अज्ञानी समझा

जाएगा।

- व्रती श्रावक धन-वैभव आदि परिग्रह को जीवन-यात्रा का सहारा समझता है, साध्य नही। धन अर्थात् परिग्रह को ही सर्वस्व समझ लेने से सम्यक्दृष्टि नही रहती। वह जो परिग्रह रखता है, अपनी आवश्यकताओ का विचार करके ही रखता है और जीवन इतना सादा होता है कि उसकी आवश्यकताएँ भी अत्यल्प होती है। इस कारण वह आवश्यक परिग्रह की छूट रखकर शेष का परित्याग कर देता है।
- परिग्रह का परिमाण करने वाला श्रावक यदि धन, सम्पत्ति, भूमि आदि परिमाण से अधिक रख लेता है तो अनाचार समझना चाहिए। वैसी स्थिति मे उसका व्रत पूरी तरह खडित हो जाता है। पचास एकड़ भूमि का परिमाण करने वाला यदि साठ एकड़ रख लेता है तो यह जानबूझ कर व्रत की मर्यादा को भग करना है और यह अनाचार है।
- किसी ने व्रत ग्रहण करते समय एक या दो मकानो की मर्यादा की। बाद मे ऋण के रुपयों के बदले उसे एक और मकान प्राप्त हो गया। अगर वह उसे रख लेता है तो यह अतिचार कहलाएगा। इसी प्रकार एक खेत बेच कर या मकान बेचकर दूसरा खेत या मकान खरीदना भी अतिचार है, यदि उसके पीछे अतिरिक्त अर्थलाभ का दृष्टिकोण हो। तात्पर्य यह है कि इस व्रत के परिमाण मे दृष्टिकोण मुख्य रहता है और व्रतधारी को सदैव इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसने तृष्णा, लोभ एव असतोष पर अकुश लगाने के लिए व्रत ग्रहण किया है। अतएव ये दोष किसी बहाने से मन मे प्रवेश न कर जाए और ममत्व बढ़ने नही पाए।
- कई साधक इसके प्रभाव से अपने व्रत को दूषित कर लेते है। उदाहरणार्थ— किसी साधक ने चार खेत रखने की मर्यादा की। तत्पश्चात् उसके चित्त मे लोभ जगा। उसने बगल का खेत खरीद लिया और पहले वाले खेत मे मिला लिया। अब वह सोचता है कि मैंने चार खेत रखने की जो मर्यादा की थी, वह अखडित है। मेरे पास पॉचवा खेत नही है। इस प्रकार आत्म-वचना की प्रेरणा लोभ से होती है। इससे व्रत दूषित होता है और उसका असली उद्देश्य पूर्ण नही होता।
- भोगोपभोग की सामग्री परिग्रह है और उसकी वृद्धि परिग्रह की ही वृद्धि है। परिग्रह की वृद्धि से हिंसा की वृद्धि होती है और हिंसा की वृद्धि से पाप की वृद्धि होती है। साधारण स्थिति का आदमी भी दूसरो की देखा-देखी उत्तम वस्तुएँ रखना चाहता है। उसे सुन्दर और मूल्यवान फर्नीचर चाहिए, चाँदी के बर्तन चाहिए, कार-मोटर चाहिए और पड़ौसी के यहॉ जो कुछ अच्छा है सब चाहिए। जब सामान्य न्याय सगत प्रयास से वे नही प्राप्त होते तो उनके लिए अनीति और अधर्म का आश्रय लिया जाता है। अतएव मनुष्य के लिए यही उचित है कि वह अल्प-सतोषी हो अर्थात् सहजभाव से जो साधन उपलब्ध हो जाएँ, उनसे ही अपना निर्वाह कर ले और शान्ति के साथ जीवनयापन करे। ऐसा करने से वह अनेक पापो से बच जाएगा और उसका भविष्य उज्ज्वल बनेगा।

परिवार

- जिस घर का न्याय दूसरो को करने का मौका आ जाए तो समझना चाहिए कि घर की तेजस्विता समाप्त हो गई है। अपना विवाद खुद ही सुलझा ले तो किसी को कहने का अवसर नही आता। जब कभी पति-पत्नी के बीच तकरार होती है या पिता-पुत्र के बीच, भाई-भाई के बीच विचार-भेद या मन्तव्य-भेद जैसी उलझन हो जाए, ऐसे

प्रसग जीवन में आते रहते है, तो इस प्रकार के प्रसगो पर इसी मे चतुराई है कि चाहे त्रुटि किसी की हो, अपनी समस्या को घर मे ही, आपस मे बैठकर निपटा लिया जाए और बाहर के लोगो को पता भी नही चले कि आपस मे मनमुटाव था।

- जो मनुष्य घर के झगड़ो को, घर की उलझनो को घर में ही निपटाना जानता है, वही कुशल कहलाता है, उसके लिए दूसरो के निर्देश की आवश्यकता नही रहती।

पर्युषण

- पर्युषण का एक अर्थ है- अपने चारो ओर फैले बाहर के विषय-कषायो से मन को हटाकर निज घर मे, आध्यात्मिक भावो मे, आत्मा के स्वभाव मे बस जाना।
- पर्युषण को 'पर्युपशमन' भी कहा जाता है। सस्कृत मे 'पर्युपशमन' शब्द के दो विभाग किये जा सकते है-'परि' और 'उपशमन'। 'परि' का अर्थ है चहुँ ओर से, बाहर और भीतर से कषायो का उपशमन, विकारो का उपशमन हो। जिसमे बाहर से विकारो का उपशमन कर लिया जाय और भीतर से भी उपशमन कर लिया जाय, ऐसे पर्व का नाम है 'पर्युपशमन'। यह तो उपशमन की दृष्टि से पर्युषण शब्द का अर्थ है। इस शब्द का अन्य अर्थ है 'परिवसनम्'। आत्मा के निकट शुभ दशा मे अन्तरग और बहिरग भाव से बसना, आत्मा के समीप बसना। जिन मनुष्यो की आदत इधर-उधर जाने-आने की है, घूमने-फिरने की है उनको पर्युषण के दिनो एक जगह स्थिर बसने का सकल्प कराने के लिए भी यह पर्व है।
- इसका तीसरा अर्थ 'परि' उपसर्ग पूर्वक "उष दाहे" धातु से निकलता है। सस्कृत व्याकरण की 'उष दाहे' धातु का मतलब होता है जलाना। चाहे गुस्से को जलाया जावे, विषय को जलाया जावे, कषायो को जलाया जावे, कर्मबन्धन को जलाया जावे। 'पर्युषण' यह कर्मो के कचरे को जलाने वाला है और आत्मा को आत्म-गुण के नजदीक लाने के लिये हमारे यहाँ पर्युषण शब्द का व्यवहार चलता है।
- प्रमाद भी आठ। कर्म भी आठ । मद भी आठ। आत्मगुण भी आठ। पर्युषण पर्व के दिन भी आठ। सब आठ हैं। पूर्वाचार्यो ने हमारे सामने बड़ा ही गम्भीर और सुन्दर पथ रखा है। अगर साधक पर्युषण पर्व के आठ दिनो मे आत्मा पर लगे एक-एक दुर्गुण को, एक-एक कर्म-बन्धन को, एक-एक मद को और एक-एक प्रमाद को, एक-एक दिन मे कम करता जाए तथा आत्मा के एक-एक गुण को चमकाता जाए तो इन आठ दिनो मे अपनी आत्मा के सब गुणो को चमका सकता है।
- इन आठ दिनो मे क्या जानना, क्या छोड़ना और क्या ग्रहण करना है, इस सम्बन्ध मे शास्त्र कहता है कि मोह एव ज्ञानावरणीय कर्मों को छोड़ना है। मोह के साथ जुड़े आठ मद, जो मानवता को पशुता की ओर ले जाने वाले है उन्हे भी छोड़ना चाहिए। मद आठ है-

१. **जातिमद-** मैं अमुक जाति का हूँ अथवा मेरी जाति ऊँची है, ऐसा मद या घमण्ड करना जाति मद है।

२. **कुलमद-** मैं उच्च वंश का अर्थात् मंत्री,जागीरदार या राजघराने का हूँ, ऐसा गर्व करना कुलमद है।

३. **बलमद-** शरीर आदि के बल का घमण्ड कर दूसरो को दबाना बलमद है। यह भी त्यागने योग्य है।

४. **रूपमद-** शरीर की सुन्दरता को निहार कर उसका घमण्ड करना रूपमद है। सनत्कुमार चक्रवर्ती का रूपमद

से ही पतन हुआ। उसके सारे शरीर मे कीड़े पड़ गए।

५. लाभमद- थोड़ा सा धन मिलने पर अकड जाना।

६. सूत्रमद- शास्त्रज्ञान का घमण्ड करना। तन से सेवा, धन से दान और ज्ञान से सद्बोध नही देकर उनका मद करना त्याज्य है। जैसे तन-धन का मद बुरा है वैसे ही आध्यात्मिक मद भी बुरा है। योग्य होने पर भी दूसरो को अपने जैसा शास्त्रज्ञ, ज्ञानी और तपस्वी आदि नही समझना भी त्याज्य है।

७. तपमद- अपनी की हुई तपस्या का ढोल पीटना और नही करने वालो पर धौस जमाना तपमद है।

८. ऐश्वर्यमद- हुकूमत या सत्ता का घमण्ड करना ऐश्वर्य मद है।

- ये आठो मद छोड़ने योग्य हैं। इसी प्रकार आठ प्रमाद भी छोडने योग्य है। साराश यह है कि आठ कर्म, आठ मद और आठ प्रमाद छोड़ना इस पर्व के प्रमुख उद्देश्य है ।
- पर्वाधिराज पर्युषण का लक्ष्य आत्मशुद्धि करना है। आत्मशुद्धि के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए आचार्यो ने एक व्यवहार, एक आचार पद्धति और एक साधना-क्रम का रूप रखा।
- अगर हम हर घड़ी, हर समय अपनी आत्मा का शोधन नही कर सकते तो कम से कम आठ दिनो मे तो अवश्य ही करे। आठ कर्मो के निवारण के लिए साधना के ये आठ दिन जैन-परम्परा मे अनमोल और आदर्श बन गए है। आवश्यक-सूत्र की निर्युक्ति मे तथा दूसरे आगमो मे बताया गया है कि इन पवित्र दिनो को महत्त्व देने के लिए स्वर्ग के देव भी मनुष्य लोक मे आते है।
- पर्युषण पर्व के अन्तिम दिन का नाम 'सवत्सरी' है। यह पर्युषण पर्व का महान् शिखर है। सात दिन तो उसकी भूमिका रूप है। जिन दिनो साधना मे निरत साधक बाहरी वृत्तियो से मन को मोड़कर विषय-कषायो से मुक्त हो आत्मनिरत रहता है, उसी को पर्युषण पर्व कहते है ।
- जैसे बास मे पर्व-पोर या गाठ का होना उसकी मजबूती का लक्षण है, वैसे ही जीवन रूपी बास मे भी यदि पर्व न होगा, तो जीवन पुष्ट नही होगा। जीवन-यष्टि की सधि मे पर्व लाना, उसे गतिशील बनाना है। साधना का वर्ष भी पर्व से दृढ़ होता है। अन्य पर्वों से विशिष्ट होने के कारण इसे पर्वाधिराज माना गया है। यदि इसे सप्राण बनाना है या सही ढग से पर्वाराधन करना है और सामाजिक एव आध्यात्मिक बल बढ़ाना है, तो बच्चे और बूढ़े सभी मे साधना की जान डालना, विषय-कषाय को घटाकर मन के दूषित भावो को दूर भगाना, इस पुनीत पर्व का सदेश है।
- पैसे, कीमती वस्त्र और आभूषणादि पर लोगो को प्रेम रहता है, परन्तु ये सब सासारिक शोभा के उपकरण, उपासना के बाधक तत्त्व है। अत इस महापर्व मे जहॉ तक बन पड़े इनसे दूर रहना चाहिए।
- इस आध्यात्मिक दीपावली के पुनीत पर्व के अवसर पर हमने साधारणत अपने इस सम्पूर्ण जीवन मे और विशेषत वर्ष भर मे जो-जो त्रुटियॉ की है, जो अपराध किए है, दुष्कृत किए है, आध्यात्मिक एव नैतिक पतन के कार्य किए है, उनके लिये हमे आन्तरिक दु ख प्रकट करते हुए पश्चात्तापपूर्वक प्रायश्चित्त लेने के साथ-साथ अपने शेष जीवन मे उन दुष्कृतो को पुन कभी अपने आचरण मे न लाने का दृढ़ सकल्प करना है। आध्यात्मिक अभ्युत्थान के लिये, आत्मा पर लगी कर्म-कालिमा को धो डालने के लिये, आत्मा के सच्चिदानन्दमय निर्मल, निष्कलक स्वरूप को प्रकट करने के लिये जितने यम, नियम, जप, तप, शम, दम आदि सुकृत आवश्यक है, उन्हे

अपने जीवन मे अधिकाधिक ढालने का भी अटल निश्चय करना है।

- पर्युषण के प्रारम्भ सवत्सरी के दिन तक आठ दिन का कार्यक्रम हर भाई-बहिन को ध्यान मे रखना है। अन्य प्रकार का व्रत, नियम, त्याग नही कर सके, उपवास, पौषध नही कर सके तो इतना ध्यान रखे कि सुबह-शाम सामायिक-प्रतिक्रमण अवश्य करे, व्याख्यान श्रवण का लाभ ले। कुशील का त्याग करना है, रात्रिभोजन का त्याग रखना है। इन दिनो मे सिनेमा, चलचित्र, उपन्यास आदि मे समय बिताने के बजाय स्वाध्याय का कार्यक्रम रखें। ज्ञानगोष्ठी करके अपने तथा दूसरो के समय का सदुपयोग करे। आठ दिनो तक किसी की निन्दा नही करे, किसी को गालियॉ नही दे, किसी से लड़ाई नही करे, प्रमाद छोड़कर ज्ञान-ध्यान करे।
- जैन धर्म की यह मान्यता है, जैन सस्कृति का यह विधान है कि पर्युषण के दिनो मे एक स्थान पर बैठकर ही धर्म-ध्यान करना चाहिए। जहॉ भी पहुँचना है वहॉ पर्युषण से पहले ही पहुँच जाये। यह नही कि आज इस स्थान पर गये तो कल दूसरे स्थान पर गये। आठ दिनो मे इतने सन्तो या मुनिजनो के दर्शन कर लिये। यह रिवाज देखा-देखी मे चल पड़ा है। लेकिन यह स्थानकवासी परम्परा के विरुद्ध है।
- पर्व के दिन पहला काम यह है कि हमारे दिल-दिमाग और व्रत मे जो कचरा लगा है, उसको पहले बाहर निकाले। आज के जमाने मे हमारा सामाजिक जीवन है, लेकिन व्यक्तिगत शुद्धि की उपेक्षा नही करनी है। समाज मे रहते हुए सामाजिक जीवन मे जो मिलावट, कड़वाहट, विकार आए हैं, उनकी शुद्धि करना भी पर्व के दिन का काम है। पर्व के दिनो मे जो काम हो जाता है वह अन्य दिनो मे नही होता।
- पर्युषण के इन महामगलकारी पवित्र दिनो मे तड़क-भड़क वाली पोशाको और कीमती आभूषणो के स्थान पर सादी वेश-भूषा मे धर्म-स्थान मे आवे और अग पर शील का आभूषण एव मुख पर मौन का भूषण धारण किये रहे तो आपको पर्वाराधन का और भी अधिक आनन्द प्राप्त होगा।

■ पुरुषार्थ

- प्राणिमात्र के हृदय मे ज्ञान का भडार भरा है। कही बाहर से कुछ लाने की आवश्यकता नही है, परन्तु निमित्त के बिना उसको पाना कठिन है। सुयोग से किसी विशिष्ट निमित्त के मिलते ही उसका उपयोग लिया जाए तो अनायास प्रकाश प्राप्त हो जाता है। जैसे दियासलाई मे अग्नि सन्निहित है, केवल तूली के घर्षण की आवश्यकता है वैसे ही मानव की चेतना सद्गुरु से घर्षण पाते ही जल उठती है। आवश्यकता केवल शुभनिमित्त पाकर पुरुषार्थ करने की है।
- भगवान् महावीर ने कहा-'ओ मानव ! यह न समझ कि ईश्वर, दैवी-शक्ति या नियति तुझे दु ख से मुक्त करेगी। नियति कोई प्राणियो की शास्ता भिन्न शक्ति नही, जो तुम्हारे दु ख-सुख का निर्माण करे। तुम्हारे दु ख-सुख का कारण तुम्हारे भीतर है।' आपका प्रश्न होगा 'तो क्या करे ?' उत्तर स्पष्ट है-'पुरुषार्थ करे।' आप कहेगे 'पुरुषार्थ तो हम निरन्तर करते आ रहे हैं। ऐसा कौनसा क्षण बीतता है जबकि हम पुरुषार्थ नही करते। कीड़े-मकोड़े से लेकर इन्द्र, महेन्द्र तक कोई व्यक्ति ऐसा नही है जो पुरुषार्थ नही करता हो। लेकिन पुरुषार्थ से कर्म-बध भी होता है और मोक्ष भी होता है। शास्त्रकारो ने पुरुषार्थ के दो भेद किये हैं। एक भव-वर्धक अर्थात् बधन बढ़ाने वाला पुरुषार्थ और दूसरा भव-छेदक अर्थात् बंधन काटने वाला पुरुषार्थ।
- अ, ब, स, जैसे अक्षरों को भी नही पहचानने वाला एक बालक जब स्कूल मे जाकर पुरुषार्थ करता है तो चद

दिनो मे अपने आपको अच्छा लिखने लायक, पढ़ने लायक, बोलने लायक और समझने लायक बना लेता है। यदि वह परिश्रम नही करता तो उसके ज्ञान का विकास नही होता। अन्तर मे शक्ति के विद्यमान रहते हुए भी यदि उसे जगाया नही गया तो विकास नही होगा।

- कामना की पूर्ति का साधन अर्थ है और मोक्ष की पूर्ति का साधन धर्म है। आपको धर्म-पुरुषार्थ करना है। वही बन्धन काटने वाला है।

पौषध

- पौषध का अर्थ है – आत्मिक गुणो का पोषण करने वाली क्रिया। जिस-जिस क्रिया से आत्मा अपने स्वाभाविक गुणो का विकास करने मे समर्थ बने, विभाव परिणति से दूर हो और आत्म-स्वरूप के सन्निकट आए वही पौषध है।
- पौषधव्रत अगीकार करते समय निम्नोक्त चार बातो का त्याग आवश्यक है–

  १ आहार का त्याग।

  २ शरीर के सत्कार या सस्कार का त्याग–जैसे केशो का प्रसाधन, स्नान, चटकीले-भड़कीले वस्त्रो को पहिनना एव अन्य प्रकार से शरीर को सुशोभित करना।

  ३ अब्रह्म का त्याग।

  ४ पापमय व्यापार का त्याग।
- मन को सर्वथा निर्व्यापार बना लेना सभव नही है। उसका कुछ न कुछ व्यापार होता ही रहता है। तन का व्यापार भी चलेगा और वचन के व्यापार का विसर्जन कर देना भी पौषध व्रत के पालन के लिये अनिवार्य नही है। ध्यान यह रखना चाहिये कि ये सब व्यापार व्रत के उद्देश्य मे बाधक न बन जाएँ। विष भी शोधन कर लेने पर औषध बन जाता है। इसी प्रकार मन, वचन और काया के व्यापार मे आध्यात्मिक गुणो का घात करने की जो शक्ति है उसे नष्ट कर दिया जाय तो वह भी अमृत बन सकता है। तेरहवे गुणस्थान मे पहुँचे हुए सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहन्त भगवान् के भी तीनो योग विद्यमान रहते है, किन्तु वे उनकी परमात्म दशा मे बाधक नही होते। इसी प्रकार सामान्य साधक का यौगिक व्यापार यदि चालू रहे, किन्तु वह पापमय न हो तो व्रत की साधना मे बाधक नही होता।
- पौषधव्रत की आराधना एक प्रकार का अभ्यास है जिसे साधक अपने जीवन का अभिन्न अग बनाने का प्रयत्न करता है। अतएव पौषध को शारीरिक विश्रान्ति का साधन नही समझना चाहिए। निष्क्रिय होकर प्रमाद मे समय व्यतीत करना अथवा निरर्थक बाते करना, पौषध व्रत का सम्यक् पालन नही है। इस व्रत के समय तो प्रतिक्षण आत्मा के प्रति सजगता होनी चाहिए। दूसरा कोई देखने वाला हो अथवा न हो, फिर भी व्रत की आराधना आन्तरिक श्रद्धा और प्रीति के साथ करनी चाहिए। ऐसा किये बिना रसानुभूति नही होगी। साधना मे आनन्द की अनुभूति होनी चाहिए। जब आनन्द की अनुभूति होने लगती है तो मनुष्य साधना करने के लिए बार-बार उत्साहित और उत्कण्ठित होता है।

प्रचार-प्रसार

- जैन धर्म का प्रचार-प्रसार केवल जैन नाम धराने से नही होगा , इसके लिए दो बाते चाहिये—(१) शास्त्रानुसार वीतराग धर्म का प्रचार करना और (२) स्वय जिनाज्ञा का पालन करना।
- धर्म क्षेत्र मे प्रचार की अपेक्षा आचार की प्रधानता है। आचार पक्ष मजबूत होगा तो बिना प्रचार भी स्वत प्रचार हो जाएगा। प्रचार के पीछे ज्ञान दर्शन-चारित्र को ठेस नही पहुँचे इस सीमा तक ही प्रचार उपादेय हो सकता है, पर जो प्रचार सयम-साधना और आचार धर्म को ठेस पहुचाए वह कदापि उपादेय नही होता।
- आपको ज्ञान होना चाहिए कि उपाध्याय यशोविजय जी सारे ससार को जैन शासन मे लाना चाहते थे—प्रेम भावना से बधुत्व की भावना से। उन्होने कहा था— 'सर्व जीव करूं शासन रसी'। कहाँ तो यह भावना और कहाँ आज छोटी-छोटी बातो के कारण एक दूसरे से नाराज होने वाली हमारी मनोवृत्ति? बाप बेटे से नाराज हो जाएगा, भाई-भाई से नाराज हो जाएगा, गुरु शिष्य से नाराज हो जाएगा। यदि किसी धर्म-गुरु ने एक शिष्य को बढ़ावा दिया तो दूसरा सोचेगा कि वह ज्यादा मुँह लग गया तो ठीक नही रहेगा। इसलिए वह उस पर रोक लगाने का प्रयत्न करेगा। आज हमारी बधु भावना सकुचा गई है। एक दूसरे पर विश्वास नही करेगे। इन बातो से कैसे उद्धार होगा?
- कई माताएँ, बहने प्रचार करने मे तगड़ी हैं। पुरुषो को अपने विचारो का प्रचार करना ढग से नही आता। पुरुष जितनी धीमी गति से प्रचार करेगे, उतनी ही तेज गति से प्रचार करना ये बहने खूब जानती है। जो बहन कुछ भी नही करने वाली है, उसमे भी ये ऐसी फूक मारेगी कि उसका मन बदल जाएगा।
- एक मदिरा का ठेकेदार स्वय मदिरा नही पीते हुए भी उसका व्यापार कर सकता है। उसी प्रकार सिगरेट, बीड़ी, नायलोन के वस्त्र का व्यापारी इन वस्तुओ का व्यवहार किए बिना भी इनका व्यापार व प्रचार कर सकता है। किन्तु धर्म का प्रचार शुद्ध सदाचारी बने बिना सभव नही है।
- जो सत्य, अहिंसा और तप का स्वय तो आचरण नही करे और प्रचार मात्र करे, तो वह अधिक प्रभावशाली नही हो सकता। इसके विपरीत, आचरणशील व्यक्ति बिना बोले मौन-आत्म-बल से भी धर्म का बड़ा प्रचार कर सकता है।
- मूक साधकों का दूसरे के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आचार तथा त्याग बिना बोले भी हर व्यक्ति के जीवन पर प्रभाव डालता है।
- पहले जैनमुनि सार्वजनिक खुले स्थान वन, उपवन, श्मशान, तरुतल आदि मे निवास करते थे। उनकी भिक्षा भी खुली होती थी और जैन मुनियो के सत्सग, त्याग, तप से प्रभावित होकर लोग सेवा करते और उनको अपना गुरु समझ कर धर्म के प्रति निष्ठावान बने रहते थे। जैन श्रमणो की तपश्चर्या और त्याग देखकर उनका धार्मिक विश्वास अटूट बना रहता था, किन्तु आज श्रमणो का निवास, भिक्षा, धर्मोपदेश, वर्षावास आदि समस्त कार्य सामाजिक स्थानों में और एकमात्र जैन समाज की व्यवस्था के नीचे ही होते है। अत जैनेतर जनता व सामान्य लोगों को समान रूप से उनसे धर्मलाभ का अवसर नही मिल पाता। जैन मन्दिर आदि धर्म-स्थानो मे इतर लोगो का प्रवेश अनधिकृत माना जाता है। यह अधिकार व संकीर्णवृत्ति भी जैन धर्म के प्रसार मे बाधक बन रही है।
- पहले जब जैनधर्म को राज्याश्रय प्राप्त था तब धार्मिक व्यक्तियों को व्यावहारिक जीवन मे भी राज्य एव समाज

से सहयोग व सम्मान मिलता रहता था। धार्मिक वात्सल्य के कारण उस समय लोगों को अभाव, खिन्नता और दीनता का शिकार नही होना पड़ता था, क्योकि धर्म का सम्बन्ध सभी सम्बन्धो से श्रेष्ठ, उच्च व अधिक महत्त्व का माना जाता था। अत. लोगो मे सहज ही धर्म के प्रति आकर्षण व प्रेरणा जागृत होती रहती थी।

- आज का जैन समाज विभिन्न वर्गों एव जातियो मे बटकर पारस्परिक द्वेष और कलह का शिकार हो गया है। धर्म के नाम पर की जाने वाली आज की सेवा तथा वात्सल्य भाव सकीर्ण और सीमित बन गया है। लोगों को धार्मिक सम्बन्ध से जो वात्सल्य व सेवा पहले प्राप्त होती थी, वह आज नही मिल पाती है। वत्सलता व उदारता जो धर्म के प्रसार व विस्तार के मुख्य कारण मे से है, उसकी कमी से आज चाहिए जैसा धर्म का विस्तार नही हो पा रहा है।
- साधु या श्रावक आज अजैनो को समझाये कि जैनधर्म मानव मात्र के कल्याण का मार्ग है। इसमे साधना की तीन श्रेणिया निर्धारित है। जो व्यक्ति आत्मबल की मदता से व्रत-नियम को धारण नही कर सकते, वे भी सरल मन से तत्त्वातत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर पाप को पाप और धर्म को धर्म मानते हुए हृदय से सम्भलकर चले। ऐसे व्यक्ति सम्यग्दर्शन की प्रथम भूमिका के अधिकारी हो सकते है। दूसरे मे पाप को पाप समझ कर, उसकी मर्यादा करने वाला यथास्थिति पाप को घटाने वाला देशविरत हो सकता है। तीसरे मे हिसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह आदि का सम्पूर्ण त्याग करना है। इसके अधिकारी साधु-सन्त एव साध्वी वर्ग होते है।
- सम्यग्दर्शी पुरुष जो त्याग नही करते हुए भी दोष को दोष मानकर यह श्रद्धा रखता है कि पाप छोड़ने योग्य है, उसके त्याग से ही मेरा कल्याण है, आरम्भ-परिग्रह मे रहते हुए भी वह सम्यग्दर्शी जैन कहला सकता है। इस प्रकार अजैन जनो के हृदय मे जब हम जैनधर्म के मर्म को गहरे बैठायेगे तथा अपनी उदारता, सरलता, सदाशयता का प्रभाव उन पर डालेगे, तभी इस धर्म का अधिकाधिक प्रचार हो सकता है। श्रीमन्तो को चाहिए कि वे अपनी सम्पत्ति का अधिक से अधिक उपयोग धर्म के प्रचार व प्रसार मे करे।
- त्यागियो को, चाहे कैसी भी विषम स्थिति क्यो न आ जाय, अपने त्याग का तेज एव तप का ओज नही घटाना चाहिए। तत्त्व को सरल करके समझाना और जन साधारण में व्याप्त इस भ्राति को कि जैनधर्म व्यक्ति विशेष के ही पालने योग्य है, दूर करना आवश्यक है। जन-साधारण को यह बता देना चाहिये कि पाप को पाप मानकर त्यागने की इच्छा वाला कोई भी दयालु गृहस्थ जैन बन सकता है। छत्रपति राजा से लेकर एक मजदूर भी जैनधर्मी हो सकता है। इस प्रकार भ्राति दूर होने से सामान्य जन भी जैनधर्म की आराधना कर सकेगे। दूसरी बात, उन्हे त्यागियो के निकट लाने के लिये जैन गृहस्थ अपनी सेवानिवृत्ति बढ़ाये और मिशनरी (धर्म प्रचारक) की तरह जन-साधारण से प्रेम बढ़ावें तो जैनधर्म का प्रचार व विस्तार हो सकता है।

प्रतिक्रमण

- प्रतिक्रमण का मतलब है पीछे हटना अर्थात् दोषो से हटकर आत्मा को मूल स्थिति मे ले आना। 'प्रति' यानी 'पीछे' दोष की ओर जो कदम बढ़ा है, मर्यादा से बाहर आये हुए उन चरणो को पीछे हटाकर मूल स्थान पर स्थापित करना, इसका नाम 'प्रतिक्रमण' है।
- प्रतिक्रमण करने वाले भाई-बहन को चाहिए कि वे अपने जीवन मे लगे दोषो का सशोधन करके आत्मा को उज्ज्वल करे। इसीलिए आलोचना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान का विधान भगवान ने श्रावक और साधु सभी के लिए

किया है।

- मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और अशुभयोग से जो कचरा आया है, उसे चिन्तन द्वारा बाहर निकालना, पीछे हटाना इसका नाम है 'प्रतिक्रमण'।

- जो लोग कहते है कि सूत्रो का और प्रतिक्रमण का हिन्दी मे अनुवाद कर देना चाहिए , उनको समझना चाहिए कि हिन्दी का अनुवाद करके मूल को हटा देगे तो आपको उन सूत्रो की मूल प्राकृत भाषा का ज्ञान नही रहेगा, मूल सूत्र का वाचन बद हो जाएगा। इसके अतिरिक्त भाषा मे अनुवाद करते समय यह समस्या भी आयेगी कि किस भाषा मे अनुवाद किया जाए? भारत मे तो राजस्थानी, गुजराती, हिन्दी, बगला, मराठी, कन्नड़, तमिल, तेलुगू, पजाबी, सिन्धी, अग्रेजी आदि अनेक भाषाएँ है। यदि कोई कहे कि सभी भाषाओ मे अनुवाद कर दिया जाए तो भी दिक्कत आयेगी। कल्पना करिए, एक ही स्थानक मे बैठे विभिन्न भाषा-भाषी लोग अपनी-अपनी भाषा मे सामायिक के पाठ बोलेगे तो कैसी हास्यास्पद स्थिति हो जाएगी। एकरसता भी नही रहेगी। और सब से बड़ी बात तो यह है कि मूल पाठो मे जो उदात्त और गुरुगभीर भाव भरे हैं वे अनुवाद मे कभी नही आ सकते। इसलिए पाठो का मूल भाषा मे रहना सर्वथा उचित और लाभकारी है। इसी से हमारी प्राचीन धार्मिक परम्परा और धर्मशास्त्रो की भाषा अविच्छिन्न रह सकती है। साथ ही आज जो सामायिक करते समय या शास्त्र पढ़ते समय हम इस गौरव का अनुभव करते है कि हम वीतराग प्रभु के मुख से निसृत वाणी का पाठ कर रहे है, वह भी अक्षुण्ण रह सकता है।

- आज के युग की यह विशेषता और विचित्र प्रवृत्ति है कि आदमी भूल करने पर भी अपनी उस भूल अथवा गलती को मानने को तैयार नही होता। बहुत से लोग तो दोष स्वीकार करना मानसिक दुर्बलता मानते है। शास्त्र कहते है कि जो जातिमान, कुलमान, ज्ञानवान् और विनयवान् होगा वही अपना दोष स्वीकार करेगा। आध्यात्मिक क्षेत्र मे दोषी स्वय अपने दोष को प्रकट कर पश्चात्ताप करता है। जीवन-शुद्धि के लिए यह आवश्यक है कि साधक सूक्ष्म दृष्टि से प्रतिदिन अपना-स्वय का निरीक्षण करता रहे। नीतिकार ने कहा है कि-'प्रत्यह प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मन ।' कल्याणार्थी को प्रतिदिन अपने चरित्र का सूक्ष्म दृष्टि से निरीक्षण करना चाहिए।

- प्रतिक्रमण केवल पाटियाँ बोलने से ही पूरा नही होता है। यह तो एक साधना है जिससे दोष सरलता से याद आ जावे। इसलिए आचार्यो ने, शास्त्रकारो ने प्रतिक्रमण की पाटियाँ आपके सामने रखी है। पाठ तोते की तरह बोले गये, मिच्छामि दुक्कड़, जहाँ आया, वहाँ मुँह से कह दिया, लेकिन किस बात का 'मिच्छामि दुक्कड़' इसका पता नही। दैनिक व्यवहार करते यदि झूठ बोला गया, माप-तोल मे ऊँचा-नीचा हो गया, किसी से कोई बात मजूर की, लेकिन बाद मे वचन का पालन नही किया, कभी चोरी का माल ले लिया, चोरो की मदद दी या तस्करी करने मे हाथ रहा हो तो उसके लिए अपनी आत्मा से पश्चात्ताप करने का खयाल होना चाहिए। प्रतिक्रमण करने वाले भाई-बहिन जीवन मे दोष का सशोधन करके उसको उज्ज्वल करे।

प्रदर्शन

- एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर, एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय पर छीटा-कसी करते है, धब्बा या लाछन लगाने की कोशिश करते है, ऐसी स्थिति मे उनका धर्म-स्थान पर बैठना लाभकारी नही होता। माला फेरते-फेरते, भजन

करते-करते चार आदमी बाहर से दूसरे आ गये तो मदिर मे बैठा हुआ भक्त जो धीमे-धीमे भजन कर रहा था, वह इनको देख कर जोर से करने लगता है और वे चार आदमी चले गये तो फिर पहले जैसा हो जाता है—इधर-उधर देखने लगता है। यह सब क्यो होता है? जब, तक ज्ञान पर पर्दा पड़ा है तब तक ऐसा होता है। हमको और आपको क्रिया करके अज्ञान का पर्दा दूर हटाना है और ज्ञान की ज्योति बढ़ानी है।

- धर्म-स्थान मे आने वाले भाई-बहनो से कहना यह है कि सबसे पहले ध्यान यह रखा जाए कि अपरिग्रहियो के पास जाते है तो ज्यादा से ज्यादा अपरिग्रहियो का रूप धारण करके जाना चाहिए।
- आपके सन्त इतने अपरिग्रही और आप धर्मस्थान मे आते समय सोचे कि बढ़िया सूट पहनकर चले। बाई सोचती है कि सोने के गोखरू हाथो मे पहन ले, सोने की लड़ गले मे डाल ले, सोने की जजीर कमर मे बाध ले यहाँ तक कि माला के मनके भी लकड़ी चन्दन के क्यो हो, चाँदी के दानो की माला बनवा ले, तो यह सोच ठीक नही।
- एक बाई से यह पूछा कि आप व्याख्यान मे क्यो नही आती? वह कहने लगी-"बापजी! जीव तो घणो ही टूटे है कि व्याख्यान मे आऊँ, पण काई करू अकेली हूँ, पेरण ने जेवर नही है। दागीना बिना पहने जाऊँ तो घर की इज्जत जावे।" आपने इस तरह का वातावरण समाज मे बना रखा है। इस वातावरण के कारण व्याख्यान मे आने से वचित रहना पड़ता है। यह गलत रूप है। सोने के आभूषणो से आत्मा की कीमत नही, आत्मा की कीमत है सदाचार से, प्रामाणिकता से और सद्गुणो से।
- भगवान् महावीर ने अन्न-जल की तरह अल्प वस्त्र धारण करने को भी तप कहा है। मनुष्य यदि अधिक सग्रही बनेगा, तो उससे दूसरो की आवश्यकता-पूर्ति मे कमी आयेगी। फलस्वरूप आपस मे वैर-विरोध तथा सघर्ष की स्थिति उत्पन्न होगी। सग्रही पुरुष को रक्षण की उपधि और ममता का बन्धन रहेगा, जिससे वह शान्तिपूर्ण गमनागमन नही कर सकेगा। अत व्रती को सादे जीवन का अभ्यास रखना चाहिये। धार्मिक-स्थलो मे खासकर बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणो को दूर रखना चाहिये, क्योकि धर्म-स्थान मे धन-वैभव का मूल्य नही, किन्तु साधना का महत्त्व है।
- आभरण खासकर प्रदर्शन की वस्तु है। लोग सुन्दर आभूषणो से दर्शको को आकर्षित करते है। सर्वप्रथम तो आभूषण-धारण करने से दर्शको के मन मे ईर्ष्या और लालसा जागृत होती है; दूसरे मे सग्रह और लोभवृत्ति का विकास होता है। वासना जगाने का भी आभूषण एक महान कारण माना जाता है। वस्त्राभूषणो से लदकर चलने वाली नारियाँ अपने पीछे आँखो का जाल बिछा लेती है और स्थिर प्रशान्त मन को भी अस्थिर एव अशान्त कर देती है। विशेषज्ञो का कथन है कि नारी का तन जितना रागोत्पादक नही होता, ये वस्त्राभूषण उससे अधिक राग-रगवर्द्धक होते है।
- जहाँ देखो वही दिखावट है। शान-शौकत के लिए लोग आडम्बर करते है। प्रत्येक व्यक्ति अपने आपमें जो है, उससे अन्यथा ही अपने को प्रदर्शित करना चाहता है। अमीर अपनी अमीरी का ठसका दिखलाता है। गरीब उसकी नकल करते है और अपने सामर्थ्य से अधिक व्यय करके सिर पर ऋण का भार बढ़ाते है। इन अवास्तविक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अनेक प्रकार के अनैतिक उपायों का अवलम्बन लेना पड़ता है। इस कारण व्यक्ति, व्यक्ति का जीवन दूषित हो गया है और जब व्यक्तियों का जीवन दूषित होता है तो सामाजिक जीवन निर्दोष कैसे हो सकता है?

- समाज मे जो लोग ज्यादा पूँजी वाले हैं, वे सोचते हैं कि अपने घर मे लड़की की शादी है, शादी ऐसी करनी चाहिये कि लोग देखते ही रह जाये। पहले के श्रावको के तो परिग्रह का परिमाण होता था। इसके अतिरिक्त सामाजिक नियम भी होते थे। उन नियमो का समाज के सभी लोगो द्वारा पूरी तरह समान रूप से पालन किया जाता था। विवाह आदि के अवसर पर पचो के परामर्श के अनुसार सब कार्य किया जाता था। चाहे करोड़पति के घर विवाह हो, चाहे लखपति के घर, पचो की रजा लेनी पड़ती थी। पच लापसी बनाने की राय देते तो पचो की राय के मुताबिक लापसी ही बनाई जाती थी। आज तो कोई नया लखपति, करोड़पति बनता है और उसके यहाँ शादी-विवाह का प्रसग आता है, तो वह कहता है - मैं तो पॉच प्रकार की मिठाई करूँगा। फिर कहता है - बादाम की कतली करूँगा। ऐसा कहते और करते समय वह यह नही सोचता कि उसके पीछे मध्यम वर्ग के भाई पिस जायेगे। यह सब आडम्बर एवं दिखावे की वृत्ति का तथा परिग्रह के परिमाण के अभाव मे परिग्रह-परिवर्द्धन और परिग्रह-प्रदर्शन की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा का कुपरिणाम है।

■ प्रमाद

- जिससे जीव मस्त बने, भान भूले, वह प्रमाद है। प्रमाद का कारण होने से मद्य को भी प्रमाद कहा गया है। विषय और कषाय भाव प्रमाद है। क्रोध, लोभ या काम के वशीभूत मानव कितना बेसुध हो जाता है, किसी को बताने की आवश्यकता नही है। आचार्यों ने कहा है-

मज्ज विसय कसाया निद्दा विगहा पचमी भणिया।
ए ए पच पमाया जीव पाडुंति ससार॥

- राग मे मृग और नाग सुध-बुध भूल जाते और प्राण गँवाते है। जल मे मस्त नाचने वाली मछली जाल मे क्यो फसती है? रसना का प्रमाद ही तो उसे बेसुध बनाता है। शास्त्र मे पॉच कारण ज्ञान नही आने के बतलाए हैं - "थभा, कोहा, पमाएण रोगेणालस्सएण य"। उनमे प्रमाद प्रमुख है।
- प्रमाद साधक को पीछे हटाने वाला है। शास्त्रकार ने इसे आत्मधन हरण करने वाला लुटेरा कहा है। यह सर्वविरति को भी नीचे गिरा देता है। प्रमाद का जब उग्ररूप होता है तो दीर्घकाल का सयम-साधक भी विराधक बन जाता है। इसको बध मे तीसरा कारण बतलाया है। प्रमाद के मुख्य दो भेद है - १. द्रव्य प्रमाद और २ भाव प्रमाद। निद्रा, विकथा आदि बाह्य प्रमाद मे इन्द्रियॉ शिथिल हो जाती है। इसीलिए प्रमाद की व्याख्या करते हुए कहा है-'प्रकर्षेण माद्यति जीवं मोहयतीति प्रमाद ।'
- ससार के प्रमादी प्राणी वीतराग की ज्ञानज्योति मे भी अपने को भूले रहते है। मोह की प्रबलता और अज्ञान इसके प्रधान कारण हैं। आनन्द श्रावक ने प्रमाद पर नियत्रण किया था। अनावश्यक प्रमाद उसके जीवन को छू ही नही सकता था। यही कारण है कि वह भगवान के उपदेश पर विचार कर सका और आचार मे भी ला सका। आज का मानव इतना प्रमत्त बना हुआ है कि उसका अधिकाश समय विकथा, खेल, घूमना या शरीर मंडन में ही पूरा हो जाता है। कौटुम्बिक आवश्यकता के बढ़ने पर कदाचित् समय निकाल लेता है, मित्रो के साथ घूमने का भी समय मिल जाता है, पर स्वाध्याय के लिए समय नही, कारण क्या?
- केवल प्रमाद में खाली समय बिताने की अपेक्षा सद्ग्रन्थो का पठन-पाठन या धर्मचर्चा की जाये। मानसिक जप भी खाली समय मे किया जा सकता है।

- द्रव्य-निद्रा सहज उड़ाई जा सकती है, पर जो व्यक्ति मोह भावनिद्रा मे हो उसको जगाना सहज नही है। इसीलिए कहा है-

जो काल करे सो आज ही कर, जो आज करे वह अब कर लै।
जब चिड़िया खेती चुग डारी, फिर पछताये क्या होवत है॥

- शास्त्र और सत्सग, साधना के लिए प्रेरणा देते है, किन्तु प्रमाद साधक को पीछे धकेल देता है, जिसे शास्त्रो ने प्रमुख लुटेरा कहा है। सर्वविरति मार्ग के साधक को भी प्रमाद नीचे गिरा देता है और जब इसका रूप उग्र हो जाता है, तब मानव आराधक के बदले विराधक बन जाता है।
- जिसमे या जिसके कारण जीव भान भूले, वह प्रमाद है। शब्द-शास्त्र मे कहा है-"प्रकर्षेण माद्यति जीवो येन स प्रमाद।" प्रमाद मे मनुष्य करणीय या अकरणीय का विवेक भूल जाता है, उन्मत्त हो जाता है। विषयो मे भी प्राणी मत्त हो जाता है तब साधना नही कर पाता। क्रोध, मान, माया, लोभ ये कषाय रूप प्रमाद है। ये जीवन-निर्माण के बाधक तत्त्व है, जो विरति भाव को जागृत नही होने देते। सच्चरित्र का पालन नही करने देते। ये आत्मा के भान को भुला देते है और जीवन को लक्ष्यहीन बना देते है।
- आचाराग-सूत्र मे भगवान् महावीर ने सन्तो से कहा कि आज्ञा पालन मे प्रमाद न करो और आज्ञा के बाहर उद्यम न करो, क्योकि ये दोनो अवाछनीय है।
- मन के सूनेपन को हटाने के लिए इन्द्रियो को सत्कार्य मे, मन को प्रभु-स्मरण, धर्म-ध्यान और शुभ-चिन्तन मे तथा वाणी को स्वाध्याय मे लगाया जाय, तो प्रमाद को स्थान नही मिलेगा।

प्राणि-रक्षा

- काटे और फूल दोनो की अपने-अपने स्थान मे उपयोगिता है, वैसे ही साप, बिच्छु, कुत्ते और कौए आदि निरर्थक लगने वाले प्राणधारियो का भी उपयोग और महत्त्व है। जो लोग समझते है कि हिंसक जीवो को मारना धर्म है, वे भूल करते है। यदि इसी प्रकार पशु जगत् यह खयाल करे कि मानव बड़ा हत्यारा और खूखार है उसे मार भगाना चाहिए तो इसे आप सब कभी अच्छा नही कहेगे। इसी तरह अन्य जीवो की स्थिति पर भी विचार करना चाहिए। ससार मे रहने का अन्य जीवो को भी उतना ही अधिकार है जितना कि मनुष्य को। सबके साथ मैत्री बना कर रहना चाहिए। अपनी गलती के बदले दूसरो को बड़ा दड देना अच्छा नही। इस प्रकार की हिंसा से प्रतिहिंसा और प्रतिशोध की भावना बढ़ती है, जो ससार के लिए अनिष्टकारी है।

प्रामाणिकता

- जिस व्यापारी की प्रामाणिकता (साख) एक बार नष्ट हो जाती है उसे लोग अप्रामाणिक समझ लेते हैं। उसको व्यापारिक क्षेत्र मे भी हानि उठानी पड़ती है। आप भली-भाति जानते होगे कि पैठ अर्थात् प्रामाणिकता की प्रतिष्ठा व्यापारी की एक बड़ी पूजी मानी जाती है। जिसकी पैठ नही वह व्यापारी दिवालिया कहा जाता है। अतएव व्यापार के क्षेत्र मे भी वही सफलता प्राप्त करता है, जो नीति और धर्म के नियमों का ठीक तरह से निर्वाह करता है।
- श्रावक-धर्म मे अप्रामाणिकता और अनैतिकता को कोई स्थान नही है। व्यापार केवल धन-सचय का ही उपाय नही है। अगर विवेक को तिलाजलि न दी जाय और व्यापार के उच्च आदर्शों का अनुसरण किया जाय तो वह

समाज की सेवा का निमित्त भी हो सकता है। प्रजा की आवश्यकताओं की पूर्ति करना अर्थात् जहाँ जीवनोपयोगी वस्तुएँ सुलभ नही हैं, उन्हे सुलभ कर देना व्यापारी की समाज-सेवा है, किन्तु वह सेवा तभी सेवा कहलाती है जब व्यापारी अनैतिकता का आश्रय न ले, एकमात्र अपने स्वार्थ से प्रेरित होकर अनुचित लाभ न उठावे।

■ प्रायश्चित्त

- राज्य-शासन में तो दोषी के दोष दूसरे कहते हैं, पर धर्म-शासन मे दोषी स्वय अपने दोष गुरु चरणो मे निश्छल भाव से निवेदन कर प्रायश्चित्त से आत्म-शुद्धि करता है। धर्मशासन मे प्रायश्चित्त को भार नही माना जाता। आत्मार्थी शिष्य प्रायश्चित्त के द्वारा आत्मशुद्धि करने वाले गुरु को उपकारी मानता है और सहर्ष प्रायश्चित्त का अनुपालन करता है।

■ प्रार्थना/स्तुति

- वीतराग भगवान् के भजन से भक्त को उसी प्रकार लाभ मिलता है, जिस प्रकार सूर्य की किरणो के सेवन से और वायु के सेवन से रोगी को लाभ होता है। एक आदमी गन्दी गलियो की हवा का सेवन करता है, रात-दिन उसी मे पड़ा रहता है और दूसरा प्रभात के समय उद्यान की शुद्ध वायु का सेवन करता है। शुद्ध वायु के सेवन से दिल और दिमाग मे ताजगी का अनुभव होता है, शरीर मे हल्कापन महसूस होता है। यही बात वीतराग के भजन पर भी लागू होती है। वीतराग के भजन से चित्त शुद्ध होता है।
- शारीरिक रोगो के समान ससारी जीव आध्यात्मिक रोगो से भी ग्रसित है। जब वे किसी रागी द्वेषी का स्मरण करते है तो उनकी आत्मा राग और द्वेष से अधिक ग्रस्त होती है, परन्तु जब वीतराग परमात्मा का स्मरण किया जाता है तो राग की आकुलता की और शोक के सन्ताप की उपशान्ति हो जाती है।
- यदि प्रार्थना का सबल लेकर चलोगे तो मन मे ताकत आएगी। मगर वह ताकत उपाश्रय तक ही सीमित नही रहनी चाहिए। उसका उपयोग बाहरी जगत् मे होना चाहिए। धर्म-स्थान पावर हाउस के समान है। पावर हाउस मे उत्पन्न हुई पावर यदि अन्यत्र काम न आई तो उसकी सार्थकता ही क्या है?
- एक व्यक्ति बड़ा क्रोधी है, घमडी है, लालची है, तमोगुणी है, परन्तु वह उज्ज्वल भाव से प्रार्थना करेगा तो चन्द दिनों मे ही उसे आभास होने लगेगा कि मेरी क्रोध की प्रकृति मे कुछ मन्दता आ गई है।
- आत्मा अपूर्ण और परमात्मा पूर्ण है। जहाँ अपूर्णता है वहाँ प्यास है, ख्वाइश है, प्रार्थना है। अपूर्ण को जहाँ पूर्णता दिखती है, वही वह जाता है और अपनी अपूर्णता को दूर करने का प्रयास करता है।
- मनुष्य जड़भाव में भटक रहा है, मगर जब उसे सम्यग्ज्ञान का प्रकाश प्राप्त होता है, तब वह दुनिया के पदार्थो को अपने लिए अनुपयुक्त और निस्सार समझकर उनसे विलग होने लगता है और परमात्मा के गुणो का मकरन्द ग्रहण करने के लिए लालायित हो उठता है। वह सोचता है—परमात्मा के अनन्त ज्ञान-दर्शन की जो लोकोत्तर ज्योति जगमगाती रहती है, वही मुझमे भी स्वभावत· विद्यमान है, मगर वह मुरझाई हुई है, आवृत्त हो रही है। मै उस ज्योति का स्मरण करूँगा, ध्यान करूँगा, चिन्तन करूँगा, प्रार्थना करूँगा और उसकी महिमा का गान करूँगा तो मेरी अन्तरात्मा में भी वह प्रज्वलित हो उठेगी। तब मै भी परमज्योति परमात्मा का पद प्राप्त कर लूँगा।

- जिस प्रकार सूर्य की किरणो को आत्मसात् कर लेने वाला दर्पण तेजोमय बन जाता है, उसी प्रकार आत्मा जब स्मरण-ध्यान के माध्यम से परमात्मा की परमज्योति अपने मे प्रज्वलित करता है तब वह भी लोकोत्तर तेजोनिधान बन जाता है।
- प्रार्थना का अर्थ है परमात्मा के साथ रुख मिल जाना और दोनो के बीच कोई पर्दा नही रहना। तब परमात्मा के गुण आत्मा मे स्वत प्रकट होने लगते है।

  अन्तकरण से प्रार्थना करने वाले प्रार्थी को प्रार्थना के शब्दो का उच्चारण करते-करते इतना भावमय बन जाना चाहिए कि उसके रोंगटे खड़े हो जाएँ। अगर प्रभु की महिमा का गान करे तो पुलकित हो उठे और अपने दोषो का पिटारा खोले तो रुलाई आ जाए। समय और स्थान का ख्याल भूल जाए, सुधबुध न रहे। ऐसी तल्लीनता, तन्मयता और भावावेश की स्थिति जब होती है तभी सच्ची और सफल प्रार्थना होती है। ऐसी तन्मयता की स्थिति मे मुख से निकला शब्द और मन का विचार वृथा नही जाता। जब शान्त, स्वच्छ और जितेन्द्रिय होकर प्रार्थी प्रार्थना करता है, तभी ऐसी अपूर्व स्थिति उत्पन्न होती है।
- प्रार्थना का प्राण भक्ति है। जब साधक के अन्तकरण मे भक्ति का तीव्र उद्रेक होता है, तब अनायास ही जिह्वा प्रार्थना की भाषा का उच्चारण करने लगती है, इस प्रकार अन्तकरण से उद्‌भूत प्रार्थना ही सच्ची प्रार्थना है।
- वीतराग का स्मरण करेगे तो अन्तकरण मे जो राग का कचरा भरा हुआ है, वह कचरा दूर होगा और वीतरागता प्रकट होगी। यह प्रत्यक्ष अनुभव भी है कि पानी मे छोटी सी जड़ी-निर्मली डाल दी जाती है तो उसके सयोग से पानी निर्मल हो जाता है। निर्मली जड़ी रूपी जड़ पदार्थ की सगति जब पानी को साफ कर देती है तो अनन्त शक्तिशाली विशुद्ध चैतन्य वीतराग की सगति से आपके मन का पानी गन्दा नही रह सकता। अगर गदा रहता है, तो समझे कि आपने इस दवा का पूरी तरह से प्रयोग नही किया है।
- जिन्हे सच्चे सुख की झाकी नही मिली है और इस कारण जो विषय-जन्य सुखाभास को ही सुख समझे हुए है, उनकी बात छोड़िये, परन्तु जिन्हे सम्यग्दृष्टि प्राप्त है और जो विषय-सुख को विष के समान समझते है और आत्मिक सुख को ही उपादेय मानते है जो वीतराग और कृत-कृत्य बनना चाहते है, निश्चय ही उन्हे कृत-कृत्य और वीतराग देव की और उनके चरण चिह्नो पर चलने वाले एव उस पथ के कितने ही पड़ाव पार कर चुकने वाले साधको-गुरुओ की ही प्रार्थना करनी चाहिये। देव का पहला लक्षण वीतरागता बतलाया गया है-**'अरिहन्तो मह देवो।' 'दसट्ठ दोसा न जस्स सो देवो।'**
- राग-द्वेष अज्ञान आदि १८ दोष जिनमे नही है वे देव है। जिनकी प्रार्थना करने से हम सदा के लिये आकुलता से मुक्त हो सकते है और जिनकी प्रार्थना हमे तत्काल शान्ति प्रदान करती है, वे ही हमारे लिये प्रार्थ्य है और वे अरिहन्त तथा सिद्ध ही हो सकते है। वहाँ प्रार्थना के असफल होने का कोई खतरा नही है, क्योकि एक क्षण के लिये भी अगर हमारा चित्त वीतराग देव मे तल्लीन हो जाता है, तो निश्चय ही उस तल्लीनता के अनुरूप फल की प्राप्ति होगी, किन्तु सरागी देव की सासारिक पदार्थो के लिये की जाने वाली प्रार्थना में यह बात नही है।
- प्रार्थी को प्रार्थ्य के अनुरूप ही वेष और व्यवहार बनाना पड़ता है, उसके साथ अधिक से अधिक साम्य स्थापित करने का प्रयत्न करना होता है। किन्तु इस प्रकार के प्रयत्न मे यदि हार्दिकता न हुई और निखालिस दम्भ ही हुआ तो प्राय अनुकूल प्रभाव पड़ने की कम और प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की अधिक संभावना रहती है। हार्दिकता पूरी है तो सफलता की आशा भी पूरी की जा सकती है।

- हमारी प्रार्थना के केन्द्र यदि वीतराग होंगे तो निश्चित रूप से हमारी मनोवृत्तियो मे प्रशस्तता और उच्च स्थिति आएगी। उस समय सांसारिक मोह-माया का कितना भी सघन पर्दा आत्मा पर क्यो न पड़ा हो, किन्तु वीतराग-स्वरूप का चिन्तन करने वाले उसे धीरे-धीरे अवश्य हटा सकेगे।
- जिसने वीतराग की प्रार्थना कर ली हो, जो वीतराग की प्रार्थना के सुधा-सागर मे अवगाहन कर चुका हो, जिसका मन-मयूर वीतराग की प्रार्थना मे मस्त बन चुका हो, उसका मन कभी भैरू की प्रार्थना से सन्तुष्ट होगा ? भवानी की प्रार्थना मे आनन्दानुभव कर सकेगा? काली, महाकाली आदि सराग देवो की ओर आकर्षित होगा? कदापि नही।
- वीतराग की प्रार्थना मे क्षीर समुद्र के मधुर अमृत से भी अनन्तगुणा अधिक माधुर्य एव आत्मिक गुणो की मिठास है। उस मिठास में राग और द्वेष का खारापन नाम मात्र भी नही है।
- जब प्रार्थना आराध्य के प्रति हार्दिक प्रीति से उत्पन्न होती है, तब उसमें अनूठा ही मिठास होता है। जब प्रार्थना अन्तस्तल से उद्भूत होती है और जिह्वा उसका वाहन मात्र होती है तभी प्रार्थना हार्दिक कहलाती है और उसके माधुर्य की तुलना नही हो सकती।
- प्रार्थना के दो रूप हैं—भौतिक—लौकिक प्रार्थना और आध्यात्मिक—लोकोत्तर प्रार्थना । वीतराग देव को प्रार्थना का केन्द्र बनाने वाला यदि मन से जागृत है तो वह उनसे भौतिक प्रार्थना नही करेगा। कदाचित् कोई भूला भटका, दिग्भ्रान्त होकर भौतिक प्रार्थना करने लगे तो वीतरागता का स्मरण आते ही वह सन्मार्ग पर आ जायेगा। वीतरागता की प्रार्थना की यह एक बड़ी खूबी है।
- हमारे साहित्य मे प्रार्थना के विविध रूप दृष्टिगोचर होते हैं। वर्गीकरण किया जाय तो तीन विभागो मे उन सबका समावेश होता है - १ स्तुतिप्रधान प्रार्थना २. भावनाप्रधान प्रार्थना, ३ याचनाप्रधान प्रार्थना।
- स्तुतिप्रधान प्रार्थना मे प्रार्थ्य के गुणो का उत्कीर्तन किया जाता है । उन गुणो के प्रति प्रार्थी अपना हार्दिक अनुराग व्यक्त करता है और प्रार्थ्य की विशेषताओ के साथ अपनी अभिन्नता स्थापित करने की चेष्टा करता है। स्तुतिप्रधान प्रार्थना मे जब भावना की गहराई उत्पन्न हो जाती है तो प्रार्थी अपने प्रार्थ्य के विराट् स्वरूप मे अपने व्यक्तित्व को विलीन करके एकाकार बन जाता है।
- स्तुतिप्रधान प्रार्थना सभी प्रार्थनाओ मे उत्तम मानी गई है, क्योकि इसी के द्वारा प्रार्थ्य और प्रार्थी के बीच का पर्दा दूर किया जाता है। इसमे किसी भी प्रकार की कामना की अभिव्यक्ति नही होती।
- दूसरी श्रेणी की प्रार्थना होती है भावनाप्रधान। इस श्रेणी की प्रार्थना मे भी स्तुति का अश पाया जा सकता है, तथापि उसका प्रधान स्वर आन्तरिक भावनाओ की अभिव्यक्ति करना होता है। इस प्रार्थना मे साधक या प्रार्थी अपने मन को सबल बनाने के लिए शुभ सकल्प करता है।
- तीसरे प्रकार की प्रार्थना होती है - याचना प्रधान। इस प्रार्थना में स्तुति और भावना भी विद्यमान रह सकती है, तथापि मुख्यता याचना की ही होती है।
- याचना प्रधान स्तुति के भी दो विभाग किये जा सकते हैं। एक प्रकार की स्तुति वह है जिसमे अपने आराध्य से आध्यात्मिक वैभव की याचना की जाती है और दूसरे प्रकार की स्तुति वह है जिसमे भौतिक वस्तुओ की याचना की जाती है।

- विषय-विकार को दूर करके जो भक्तजन स्तुतिप्रधान एव भावना-प्रधान प्रार्थना करते हैं, उनके जीवन मे निर्मलता आ जाती है। हॉ, अगर याचनाप्रधान स्तुति करनी हो तो भौतिक एव सासारिक पदार्थों की याचना न करते हुए आत्मिक वैभव की ही याचना करनी चाहिए, जैसे—'सुमति दो सुमतिनाथ भगवन् !'
- भगवद् भक्ति द्वारा साधक पुण्यार्जन भी करता है और पुण्य के योग से उसे भौतिक साधन अनायास ही उपलब्ध हो जाते हैं। कृषक धान्यप्राप्ति के लिए कृषि करता है, मगर भूसा भी उसे प्राप्त होता है। भूसे के उद्देश्य से कृषि करने वाला कृषक विवेकशील नही कहा जा सकता। इसी प्रकार आत्मिक विकास के लिए ही भगवद्भक्ति अथवा प्रार्थना करना उचित है। इस प्रधान एव महत्त्वपूर्ण ध्येय से भ्रष्ट होकर केवल लौकिक लाभ के उद्देश्य से भगवान् की भक्ति करना बुद्धिमत्ता का लक्षण नही है। भौतिक साधन तनबल, धनबल, कुटुम्बबल, मानप्रतिष्ठाबल, आदि तो उसके आनुषगिक फल हैं। इन्हे प्रधान ध्येय बनाने वाला साधक अपने आपको महान् फल से वचित कर लेता है। अतएव आध्यात्मिक प्रार्थना मे आतरिक विकास की ओर ही दृष्टि रहनी चाहिए।
- आन्तरिक गुणो के विकास के प्रधान ध्येय को दृष्टि मे रख कर ही यह विधान किया गया है कि प्रार्थनीय अरिहन्त हो, सिद्ध हो या साधना के पथ पर अग्रसर हुए निर्ग्रन्थ महात्मा हो। जब स्तुति के द्वारा अरिहन्त की प्रार्थना की जाएगी तो उनकी विशेषताए—महिमाए प्रार्थी के समक्ष आयेगी, उनके प्रति अन्त करण मे आकर्षण उत्पन्न होगा, वे उपादेय प्रतीत होने लगेगी, उन विशेषताओ को अपने जीवन मे प्रस्फुटित करने की प्रेरणा जागृत होगी और फलत. अरिहन्त के समान ही बनने की भावना एव प्रवृत्ति का उदय होगा।
- ससार-व्यवहार मे जब कोई किसी के समक्ष प्रार्थी बनकर जाता है, तब प्रार्थनीय प्रार्थी को कुछ ऐसी साधारण सी वस्तु देता है जिससे वह प्रार्थी के समान दर्जे पर न पहुँचे। प्रार्थी व्यापारी के पास जाता है और व्यापारी यदि प्रसन्न हो जाता है तो प्रार्थी को कुछ कमाई करवा देता है और सन्तुष्ट कर देता है। वह अपनी बराबरी के दर्जे पर उसे नही पहुचाता। मगर वीतराग की प्रार्थना मे विशेषता यह है कि प्रार्थी प्रार्थ्य के समान ही बन जाता है। इस प्रकार की उदारता सिर्फ वीतराग मे ही है। आप पाच लाख के धनी हैं और आपके समक्ष कोई अभ्यर्थना लेकर आता है तो आप उसे पच्चीस-पचास या बहुत देगे तो हजार दो हजार रुपये दे देंगे। अपनी सारी सम्पत्ति हर्गिज नही देगे, बिल्कुल अपने समान नही बनायेगे। प्रार्थी किसी अफसर के पास जाता है तो वह भी उसे अपनी समानता का दर्जा नही देता। कोई छोटी-मोटी नौकरी देकर ही अहसान लाद देता है। मगर वीतराग देव की बात निराली है। वे छोटे-मोटे या अपने से कम दर्जे की बात नही सोचते। जो प्रार्थी उनके चरणकमलो का आश्रय लेता है, वे उसे अपने ही समान वीतराग बना लेते है। उसमे कुछ भी कमी नही रहने देते। इसीलिए तो वीतराग देव ही प्रार्थनीय है।
- समस्त पापो, तापो और सन्तापो से मुक्ति पाने का मार्ग है—अनुभव दशा को जागृत करना, स्वानुभूति के सुधासरोवर मे सराबोर हो जाना, निजानन्द मे विलीन हो जाना, आत्मा का आत्मा मे ही रमण करना । जीवन में जब यह स्थिति उत्पन्न हो जाती है तो आत्मा देह मे स्थित होकर भी देहाध्यास से मुक्त हो जाता है और फिर कोई भी सासारिक सताप उसका स्पर्श नही कर सकता । जगत् की कोई भी वेदना उसे व्याकुल नही बना सकती।
- जब तक प्रार्थयिता को ज्ञान का प्रकाश नही मिला है, तब तक अपने कर्तृत्व के विचार से अहं बुद्धि उत्पन्न न हो, विकारो से ग्रस्त न हो जाए और उसके सामने परमात्मा का जो महान् और उज्ज्वल आदर्श है, उसके प्रति

निरन्तर आकर्षण बना रहे, उससे प्रेरणा मिलती रहे और जब कभी जीवन में अशान्ति हो और सताप हो तो किसी के समक्ष वह पुकार कर सके, इसके लिये वह परमात्मा के समक्ष स्तुति करता है। परमात्मा की स्तुति करते-करते और निश्चयनय के आत्मकर्तृत्व को ध्यान मे रखते-रखते जब साधक उच्च भूमिका को स्पर्श करेगा तो स्वत समझ लेगा कि परमात्मा तो निमित्त मात्र है। असली कर्तृत्व तो मेरी ही आत्मा मे है।

- यह असदिग्ध है कि जो भक्त शान्त चित्त से वीतराग की प्रार्थना करते है, स्मरण करते है, उन्हे जीवन मे अपूर्व लाभ की प्राप्ति होती है। वीतराग के विशुद्ध आत्मस्वरूप का चिन्तन भक्त के अन्तकरण मे समाधि भाव उत्पन्न करता है और उस समाधि भाव से आत्मा को अलौकिक शान्ति की प्राप्ति होती है। भक्त के हृदय मे बहता हुआ विशुद्ध भक्ति का निर्झर उसके कलुष को धो देता है और आत्मा निष्कलुष बन जाती है। निष्कलुषता के इस लाभ मे भक्त का भक्तिभाव ही अन्तरग कारण है, वीतराग भगवान् तो निमित्त मात्र है।
- जैसे मथनी घुमाने का उद्देश्य नवनीत प्राप्त करना है, उसी प्रकार प्रार्थना का उद्देश्य परमात्मभाव रूप मक्खन को प्राप्त करना है।
- प्रार्थना के द्वारा दो उद्देश्य सिद्ध किये जाते हैं – परमात्मस्वरूप की झाकी देखना और आत्मस्वरूप की झाकी करना। साधक पहले-पहल परमात्मस्वरूप की झाकी देखता है और फिर आत्म स्वरूप की भी झाकी उसे मिल जाती है।
- वीतराग स्मरन् योगी, वीतरागत्वमाप्नुयात्। अर्थात् जो योगी-ध्यानी वीतराग का स्मरण करता है, चिन्तन करता है वह स्वय वीतराग बन जाता है।

■ फैशन

- अधिकाश नवयुवक अपने आपको विशिष्ट स्थिति का अथवा बड़े घर का सदस्य सिद्ध करने की भावना से भोगोपभोग, प्रसाधन, फैशन आदि की सामग्री पर फिजूल-खर्ची करते है। उनकी देखा-देखी अथवा इस भावना से कि कही कोई उन्हे साधारण घर का, गरीब घर का न समझ ले, साधारण घरो के युवक भी फैशन पर अपनी हैसियत से अधिक व्यय करने लगते है, जो किसी भी प्रकार ठीक नही है।

■ बदलाव

- जो चिन्तनशील एव क्रियाशील होगा, वह आगे बढ़ जायेगा। नितान्त नास्तिक प्रदेशी राजा किस प्रकार सुधर गया, खुद को क्षमावान क्यो और कैसे बना लिया ? अर्जुनमाली कितना भयानक हत्यारा ? और प्रभव चोर कितना बड़ा डाकू, कितना बड़ा लुटेरा ? इतने बड़े क्रूर हत्यारे और लुटेरे। इतने क्रूर हत्यारे लोगो ने अपनी आदते बदल डाली। फिर आपकी हमारी आदते क्यो नही बदलेगी ? आप कहने लगते है, महाराज ! उनका मनोबल दृढ़ था। हमसे तो बर्दाश्त नही होता, रहा नही जाता, सहा नही जाता। यो कह अपनी कमजोरी को जिन्दगी भर कायम रखकर चलना चाहते हैं। आप अपने विकारो को दूर क्यो नही करते ? अपने जीवन को क्यो नहीं मांजते ? सादगी और सद्विचारों को जीवन में क्रियात्मक रूप मे क्यो नही उतारते ? इस धरती पर अर्जुनमाली, प्रभव और प्रदेशी राजा सरीखे मानव आये और इस ससार की मोह-ममता के जाल से छूट कर चले गये। क्या हम कोरे के कोरे रह जाएगे ?

ब्रह्मचर्य

- जो सुवर्ण की कोटि दान देता है, उसको उतना पुण्य नही होता, जितना ब्रह्मचर्य धारण करने पर होता है।
- जनसख्या की वृद्धि से चिन्तित राष्ट्रीयजन वैज्ञानिक तरीको से सतति नियन्त्रण करना चाहते है। भले ही इन उपायो से सतति निरोध हो जाय और लोग अपना बोझा हल्का समझ ले, क्योकि इन उपायो से सयम की आवश्यकता नही रहती और ये सुगम और सरल भी जचते है, किन्तु इनसे उतने ही अधिक खतरे की सम्भावना भी प्रतीत होती है। भारतीय परम्परा के अनुसार यदि ब्रह्मचर्य के द्वारा सन्तति निरोध का मार्ग अपनाया जाए तो आपका शारीरिक व मानसिक बल बढ़ेगा और दीर्घायु के साथ आप अपने उज्ज्वल चरित्र का निर्माण कर सकेगे।
- व्यवहार मे स्त्री-पुरुष के समागम को कुशील माना गया है। यद्यपि ससार-वृक्ष का मूल होने से गृहस्थ इसका सम्पूर्ण त्याग नही कर सकता, फिर भी परस्त्री-विवर्जन और स्वस्त्री-समागम को सीमित रखना तो उसके लिए भी आवश्यक है।
- ब्रह्मचर्य व्रत उत्तेजना के समय मनुष्य को कुवासनाओ से विजय प्राप्त कराकर धर्म-विमुख होने से बचाता है। ब्रह्मचारी-सदाचारी गृहस्थ अपने जीवन मे बुद्धि पूर्वक सीमा बाध कर, अपनी विवेक शक्ति को निरन्तर जागृत रखता है। वह भोग-विलास मे कीड़े के सदृश तल्लीन नही रहता और न समाज मे कुप्रवृत्तियो को ही फैलाता है। कामना का सीमित ढग से शमन कर लेना ही उसका दृष्टिकोण रहता है।
- कुशील की मर्यादा के द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव रूप से अनेक रूप है। अपने स्त्री या पुरुष का परिमाण द्रव्य मर्यादा है, क्षेत्र से विदेश का त्याग करना, काल से दिन का त्याग और रात्रि की मर्यादा, भाव से एक करण एक योग आदि रूप से व्रत की मर्यादा होती है।
- यूनान के महा पण्डित एव अनुभवी शिक्षक सुकरात ने अपने एक जिज्ञासु भक्त से कहा था कि मनुष्य को जीवन मे एक बार ही स्त्री समागम करना चाहिए। यदि इतने से कोई काम नही चला सके तो वर्ष मे एक बार और यदि इससे भी काम न चले तो मास मे एक बार। जिज्ञासु ने पूछा - अगर इससे भी आदमी काबू नहीं पा सके तो क्या करे ? उत्तर मिला-कफन की सामग्री जुटाकर रख ले, फिर चाहे जितना भी समागम करे।
- अल्पायु मे मृत्यु का एक कारण अधिक मैथुन एव आहार-विहार का असयम भी है।
- कुशील सेवन करने वाले, वीर्य-हानि के साथ असख्य कीटाणुओ के नाश रूप हिंसा के भी भागी बनते हैं। ब्रह्मचर्य की पालना न करने वालो को प्रकृति के घर से सजा होती है और इसी के कारण आज रोगियो की सख्या अधिक हो रही है।
- दुराचारी व्यक्ति आत्म-गुणो को ही नष्ट नही करता, वरन् भावी पीढ़ी को बिगाड़ कर समाज के सामने भी गलत उदाहरण प्रस्तुत करता है। अतएव कहा है - "शील परं भूषणम्" अर्थात् सोने-चॉदी आदि के आभूषण एव वस्त्रादि बाह्य सजावट की वस्तुएँ वास्तविक आभूषण नही हैं, किन्तु शील ही मानव का परम आभूषण है।
- जिस मनुष्य के मस्तिष्क मे काम-सम्बन्धी विचार ही चक्कर काटते रहते है, वह पवित्र और उत्कृष्ट विचारो से शून्य हो जाता है। उसका जीवन वासना की आग मे ही झुलसता रहता है। व्रत, नियम, जप, तप, ध्यान, स्वाध्याय और सयम आदि शुभ क्रियाएँ उससे नही हो सकती। उसका दिमाग सदैव गन्दे विचारो में उलझा

रहता है। पतित भावनाओ के कारण दिव्य भावनाएँ पास भी नही फटकने पाती। अत जो पुरुष साधना के मार्ग पर चलने का अभिलाषी हो उसे अपनी कामवासना को जीतने का सर्वप्रथम प्रयास करना चाहिए।

- ब्रह्मचर्य के विषय मे अनेक प्रकार के भ्रम फैले हुए हैं और फैलाये जा रहे हैं। एक भ्रम यह है कि कामवासना अजेय है, लाख प्रयत्न करने पर भी उसे जीता नही जा सकता। ऐसा कहने वाले लोगो को सयम-साधना का अनुभव नही है। जो विषय-भोग के कीड़े बने हुए है, वे ही इस प्रकार की बाते कहकर जनता को अध पतन की ओर ले जाने का प्रयत्न करते है। 'स्वयं नष्ट परानाशयति'-जो स्वय नष्ट है वह दूसरो को भी नष्ट करने की कोशिश करता है। ऐसे लोग स्थूलिभद्र जैसे महापुरुषो के आदर्श को नही जानते है, न जानना ही चाहते है। वे अपनी दुर्बलता को छिपाने का जघन्य प्रयास करते है। वास्तविकता यह है कि ब्रह्मचर्य आत्मा का स्वभाव है और मैथुन विभाव या पर-भाव है। स्वभाव मे प्रवृत्ति करना न अस्वाभाविक है और न असभव ही। भारतीय सस्कृति के अग्रदूतो ने, चाहे वे किसी धर्म व सम्प्रदाय के अनुयायी रहे हो, ब्रह्मचर्य को साधना का अनिवार्य अग माना है।

- सम्पूर्ण त्यागी साधुओ के लिए पूर्ण ब्रह्मचर्य का अनिवार्य विधान है और गृहस्थ के लिए स्थूल मैथुन त्याग का विधान किया गया है। सद्‌गृहस्थ वही कहलाता है जो पर-स्त्रियो के प्रति माता और भगिनी की भावना रखता है। जो पूर्ण ब्रह्मचर्य के आदर्श तक नही पहुच सकते, उन्हें भी देशत ब्रह्मचर्य का तो पालन करना ही चाहिए। परस्त्रीगमन का त्याग करने के साथ-साथ जो स्वपत्नी के साथ भी मर्यादित रहता है, वह देशत ब्रह्मचर्य का पालन करके भी सयम का पालन करता है।

- जहाँ स्त्री, नपुसक और पशु निवास करते हो, वहाँ ब्रह्मचारी साधु को नही रहना चाहिए। ब्रह्मचारिणी स्त्री के लिए भी यही नियम जाति-परिवर्तन के साथ लागू होता है। इसी प्रकार मात्रा से अधिक भोजन करना, उत्तेजक भोजन करना, कामुकता वर्धक बाते करना, विभूषा-शृगार करना और इन्द्रियो के विषयो मे आसक्ति धारण करना, इत्यादि ऐसी बाते है जिनसे ब्रह्मचारी को सदैव बचते रहना चाहिए। जो इनसे बचता रहता है, उसके ब्रह्मचर्य व्रत को आच नही आती। जिस कारण से भी वासना भड़कती हो, उससे दूर रहना ब्रह्मचारी के लिए आवश्यक है।

- तारुण्य या प्रौढ़ावस्था मे यदि सहशिक्षा हो तो वह ब्रह्मचर्य पालन मे बाधक होती है। अच्छे सस्कारो वाले बालक-बालिकाएँ भले ही अपने को कायिक सम्बन्ध से बचा ले, किन्तु मानसिक अपवित्रता से बचना तो बहुत कठिन है। और जब मन मे अपवित्रता उत्पन्न हो जाती है तो कायिक अध पतन होते देर नही लगती। तरुण अवस्था मे अनगक्रीडा की स्थिति उत्पन्न होने का खतरा बना रहता है। अतएव माता-पिता आदि का यह परम कर्त्तव्य है कि वे अपनी सन्तति के जीवन-व्यवहार पर बारीक नजर रखे और कुसगति से बचाने का यत्न करे। उनके लिए ऐसे पवित्र वातावरण का निर्माण करें कि वे गन्दे विचारो से बचे रहे और खराब आदतो से परिचित न हो पाएँ।

- काम-वासना की उत्तेजना के यो तो अनेक कारण हो सकते हैं और बुद्धिमान व्यक्ति को उन सबसे बचना चाहिए, परन्तु दो कारण उनमें प्रधान माने जा सकते है—(१) दुराचारी लोगो की कुसगति (२) खानपान सबधी असयम। व्रती पुरुष भी कुसगति मे पड़कर गिर जाता है और अपने व्रत से भ्रष्ट हो जाता है। इसी प्रकार जो लोग आहार के सम्बन्ध मे असयमी होते हैं, उत्तेजक भोजन करते है, उनके चित्त मे भी काम-भोग की अभिलाषा तीव्र रहती

है। वास्तव मे आहार-विहार के साथ ब्रह्मचर्य का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतएव ब्रह्मचर्य की साधना करने वाले को इस विषय मे सदा जागरूक रहना चाहिए। मास, मदिरा, अडा आदि का उपयोग करना ब्रह्मचर्य को नष्ट करने का कारण है। कामोत्तेजक दवा और तेज मसालो के सेवन से भी उत्तेजना पैदा होती है।

■ भक्ति (द्रष्टव्य-प्रार्थना / स्तुति)

- जिस भक्त को भगवान् के प्रति प्रगाढ़ निष्ठा उत्पन्न हो जाएगी, उसे दुनिया के अन्य साधनो मे, धन - दौलत में, वैभवविलास मे सुखानुभूति नही होगी। भक्त का मन प्रभु के चरणो के सिवाय अन्यत्र कही शान्तिलाभ नही कर सकेगा। वह भले ही शब्दो का उच्चारण नही करेगा, जप नही करेगा, परन्तु उसका अन्तकरण तो इसी भाव मे डूबा रहेगा कि तू मेरे अन्तकरण का स्वामी है, अगर मेरे हृदय का सम्राट् कोई है तो वह तू ही है, अन्य नहीं। तेरे सिवाय कोई मेरा स्वामी नहीं, साथी नही, सहायक नही, सखा नही।

■ भगवान महावीर

- भगवान महावीर ससार के जीवो को अभयदान देने वाले है, ज्ञान की ऑखे देने वाले है, स्वय का मार्ग बताने के निमित्त बनने वाले है और शरण देने वाले है, रक्षक है, दुर्गति मे गिरते हुए का बचाव करने वाले जीवन के दाता है। इसलिए वे नाथ है।
- महावीर के जीवन की एक विशेषता है । वे स्वय जिन बने और इस ओर उन्होने दूसरो का ध्यान आकर्षित किया - "मानव । आ जाओ तुम भी मेरी तरह राग-द्वेष पर विजय प्राप्त करके जिन बन जाओ। तुम भी सन्मार्ग पर चलोगे, पुरुषार्थ करोगे तो कर्म का आवरण टूटेगा और तुम भी जिन बन जाओगे।"
- महावीर कौन थे? वे मानव तो जरूर थे , लेकिन मानव से वे अपने आपको अति मानव बना चुके थे। साधारण मानव जो कि काम-क्रोध मे उलझा रहता है, उन सब विकारो पर अरिहन्त महावीर ने पूर्ण विजय पा ली थी। जन्म काल से वे तीन ज्ञान लेकर आये, दीक्षित हुए तब एक ज्ञान और बढ़ गया। दीक्षित होने के बाद उन्होने साधना करनी चालू की। महावीर ने साढ़े बारह वर्षो तक तपस्या की। लोक सम्पर्क को समाप्त किया, उससे किनारा किया। किसी से बात नही की। सवालो का जवाब भी नही दिया। जगल मे, सूने घरो मे, देवलो मे, नगर या गाव के बाहर छोटे मोटे अवस्थानो मे खड़े रह गये और ध्यान किया। आने वालो मे से कइयो ने उनका आदर किया, सत्कार किया, भक्ति की, तो कुछ लोग ऐसे भी मिले जिन्होने उनकी ताड़ना की, तर्जना की, पत्थर फैंके, कानो मे कीले ठोक दी और उनके पॉवो पर खीर पकाने का कार्य किया। इतना होने पर भी महावीर ने अपने मन मे शान्ति बनाये रखी, अविचल भाव बनाये रखा।
- राजघराने मे पैदा होने वाले, भव्य भवनो मे देवतुल्य वस्तुओ का उपभोग करने वाले महावीर ने ३० वर्ष की भरपूर जवानी मे निकलकर जगल में दूर-दूर भटकना मजूर किया। इससे उनके मन मे कोई परेशानी नही हुई, चिन्ता नही हुई। सुबह-शाम शरीर पर चन्दन का लेप लगाने वाले, फूलो की शय्या पर सोने वाले, कभी रात्रि मे यक्ष के देवालय मे ध्यान मे खड़े रहे, तो कभी सूने मकान मे ध्यान करके खड़े रहे। आने जाने वाले उनको सता रहे है, कभी-कभी ककर-पत्थर उन पर फैक रहे है, कभी चोर समझकर पकड़ रहे है, किसी ने उन पर चाबुक का प्रहार भी किया, डण्डो का प्रहार भी किया, लेकिन महावीर के मन मे तिल-तुष मात्र भी व्यथा नही हुई, खेद नही

हुआ , रज नही आया ।

- महावीर स्वामी ने साढे बारह वर्ष पर्यन्त उग्र तपश्चर्या करके वीतराग दशा प्राप्त की और सामायिक का साक्षात्कार किया । उन्होंने ससार को यह संदेश दिया कि यदि शान्ति, स्थिरता और विमलता प्राप्त करनी है तो सामायिक की साधना करो ।

■ मनोनियन्त्रण

- कोई व्यक्ति यदि ऐसा सोचता है कि मन स्थिर नही रहता, अतएव माला फेरना छोड़ देना चाहिए, तो यह सही दिशा नही है । मन स्थिर नही रहता तो स्थिर रखने का प्रयत्न करना चाहिए न कि माला को खूटी पर टॉग देना चाहिए । साधना के समय मन इधर-उधर दौड़ता है तो उसे शनै शनै. रोकने का प्रयत्न करना चाहिए, किन्तु काया और वचन, जो वश मे हैं उन्हे भी क्यो चपलता युक्त बनाते हो ? उन्हे तो एकाग्र रखो, और मन को काबू मे करने का प्रयत्न करो । यदि काया और वाणी सम्बधी अकुश भी छोड दिया गया तो घाटे का सौदा होगा ।
- चचलता तब दूर होती है जब ससार के पदार्थो को निस्सार समझ लिया जाता है । जब तक सासारिक वैभव भी कुछ है और उसका भी कुछ महत्त्व है, यह वासना मन मे बनी रहेगी, तब तक चचलता भी मिटने वाली नही है, क्योकि हम जिसका महत्त्व स्वीकार करते हैं, उसकी ओर चित्त का आकर्षण हुए बिना नही रहता । एक करोड़पति हीरे के बहुमूल्य आभूषण पहन कर सज-धज के साथ बगल मे बैठा है और आप हीरे का महत्त्व मानते है, तो आपका ध्यान उसकी ओर आकर्षित हुए बिना नही रहेगा । परन्तु यदि आप सादा पोशाक पहन कर बैठे है तो उसका ध्यान आपकी ओर आकृष्ट नही होगा, क्योकि उसकी दृष्टि मे सादा पोशाक का कोई महत्त्व नही है ।
- एक बाई कीमती आभूषण पहन कर अगर बाइयो के सामने आती है तो उनका ध्यान उसकी ओर चला जाता है और कोई साधारण वेश-भूषा वाली बाई आती है तो ध्यान नही जाता । इसका कारण यही है कि बाइयो का चित्त आभूषणो के महत्त्व को स्वीकार करता है और आभूषणो के प्रति उनके मन मे व्यक्त या अव्यक्त अभिलाषा मौजूद है ।
- इसी प्रकार जब तक आप बाहर के वैभव को सारवान् और महत्त्व की चीज समझते रहेगे, आपका मन उसकी ओर आकर्षित होता रहेगा तो उसमे चचलता भी रहेगी । इसके विपरीत जब साधक सासारिक वैभव को निस्सार समझ लेता है और भगवान के चरणो मे ही महत्ता का अनुभव करता है , तब उसके मन की चचलता दूर हो जाती है और वह भगवत्स्वरूप मे ही अखण्ड आनन्द का अनुभव करता है । उसकी चित्तवृत्ति स्थिर हो जाती है और इधर उधर भटकना बद कर देती है ।
- मनोनिग्रह के उपाय सक्षिप्त मे दो प्रकार के हैं —एक हठ योग, जिसमे कि बलात् मन को रोका जाता है और दूसरा ज्ञान-मार्ग, जिसके द्वारा मन की गति बदली जाती है । हठयोग मे बहुत से लोग श्वास निरोध के द्वारा मन को रोकने का प्रयत्न करते है और कई दिनों तक समाधि लगाकर भी बैठते है , परन्तु उनके मन की दशा बधे हुए घोड़े की तरह खुले होते ही वेगवती बन जाती है । प्राणनिरोध से तत्काल मानसिक स्थिरता हो सकती है , किन्तु उसके मूल स्वभाव में परिवर्तन नही होता । अतएव मनोविजय मे उसके स्वभाव-परिवर्तन के लिए ज्ञानमार्ग ही श्रेष्ठ है । ज्ञान से होने वाला मनोजय स्थायी भी है ।

■ ममत्व-त्याग

- जब प्रदेशी को ज्ञान हो गया तो उसको खजाना भरे रहने की या खाली रहने की चिन्ता नही रही। यदि प्रजा भूखी है, उसके खाने-पीने, रहने की व्यवस्था नही है, शिक्षा और चिकित्सा की व्यवस्था नही है, तो मेरे खजाने का महत्त्व क्या है ? इसलिए उन्होने अपनी आमदनी का चौथाई हिस्सा दान कर दिया। चाहे खर्च मे पूरा हिस्सा लगता है या नही, उन्होने ममता घटा डाली। मोक्ष उतना ही उनके नजदीक आ गया, जितनी कि उन्होने ममता घटाई।
- एक वृद्ध मुसलमान सज्जन की बात है। उसका ४५० रुपये मासिक कमाने वाला पुत्र रोगग्रस्त होकर चल बसा, जो बूढे का एकमात्र सहारा था। मियांजी का गाव से भी अच्छा व्यवहार था। अतः उनको सान्त्वना देने को बहुत से लोग आए। एक जैन भाई भी आए। मियाजी ने कहा-" मैं आप लोगो का आभार मानता हूँ कि आप लोग मुझे पुत्र-वियोग मे सान्त्वना देने आए हैं, परन्तु वह तो वास्तव में भगवान की धरोहर थी। आपके पास किसी की धरोहर हो,तो उसे राजी-खुशी या दु.ख से भी लौटाना होता है। जमा रखने वाले ने अपनी वस्तु उठाली, तो उसमे बुरा क्यो मानना ?" यह कितनी सुन्दर समझ की बात है। प्रिय-वियोग मे लोग जमीन-आसमान एक कर देते है, पर उससे क्या फल मिलता है ? आखिर शान्त तो होना ही पड़ता है।
- ज्ञानी कहते हैं कि मानव दूसरो को देने के एक मिनट बाद ही उस वस्तु को पराई समझता है। तो देने से पहले ही क्यो नही समझता कि यह वस्तु मेरी नही है। पहले ही समझ ले कि जो कपड़ा मेरे तन पर है वह मेरा नही है, जिस कोठी मे मैं बैठा हूँ वह मेरी नही है। तन पर जो आभूषण लाद रखे हैं वे मेरे नही है, बाहरी चीजे मेरी नही है। यह अगर पहले ही समझले तो मन मे जो चचलता है, दौड़-धूप है, मन में जो सक्लेश है वह नही होगा।

■ माताएं

- सन्ततियो से मोह सम्बन्ध न रखकर कर्तव्य पालन का विवेक रखो। 'मेरा लाल जीवन का आधार' इस दृष्टि से देखने की अपेक्षा सोचो—इसकी आत्मा मेरे समान है। मेरे द्वारा इसका कुछ निर्माण हो सके तो अच्छा। मुझे इसके साथ कर्त्तव्य-पालन का ध्यान रखना है।
- संस्कार हेतु माताओ को छोटी-छोटी कथाओं के सहारे बालको को बोध देना चाहिए। सरलता के साथ वह हृदय ग्राही हो सकता है।
- हर माता-पिता अपने बालको मे दस-पन्द्रह मिनट नीति-अध्यात्म की प्रेरणा करे।
- बालक और विद्यार्थियो मे धर्म-जागरण के शुद्ध बीज डाले जाये।
- माता सुशिक्षित होगी तो बालक को संस्कारवान् बनने मे देर नही लगेगी।

■ मानव

- ससार मे चार प्रकार के मनुष्य होते हैं ? प्रथम प्रकार के नजर उठाकर देखने से समझ जाते हैं, दूसरे प्रकार के संकेत, हाथ आदि के इशारे से समझते हैं, तीसरी श्रेणी के कहने पर समझते हैं और चौथी श्रेणी के वे हैं , जो

कहने पर भी नही समझते। इनमे से नजर द्वारा समझने वाला देवपुरुष होता है। संकेत से समझने वाला पंडित और कहने से समझने वाला मनुष्य होता है। जो कहने से नही, डंडे से समझने की अपेक्षा रखे वह पशु होता है।

- मानव ! यदि तू अपने जीवन को अहिंसक बनाये रखना चाहता है तो यह ध्यान रख कि जिससे जीवन चलाने के लिये सहयोग ले, लाभ ले, या काम ले उसको कोई पीड़ा न हो।

मिथ्यात्व

- कुदेव, कुगुरु, कुधर्म पर श्रद्धा करना, नाशवान चीज़ को अनाशवान बताना, नित्य को अनित्य बताना, यह समझ मिथ्यात्व है। कुदेव को देव मानना, कुसाधु को साधु एव गुरु मानना मिथ्यात्व है। अजीव को जीव समझे, जीव को अजीव समझे, धर्म को अधर्म समझे और अधर्म को धर्म समझे तो मिथ्यात्व है।
- पौषध करना धर्म है लेकिन किसी के यहाँ बन्दोरी का जुलूस निकल रहा है और उसमे वह आमन्त्रित है इसलिए पौषध छोड़ना अच्छा समझे, यह ठीक नही। जुलूस निकालना धर्म का लाभ समझे तो यह मिथ्यात्व है।

मुमुक्षु

- आत्मा के अनादि-निधन अस्तित्व पर जिसका अविचल विश्वास है, जिसने आत्मा के विशुद्ध स्वरूप को, किसी भी उपाय से हृदयगम कर लिया है, जिसे यह प्रतीति हो चुकी है कि आत्मा अपने मूल रूप मे अनन्त चेतना रूप ज्ञान-दर्शन का और असीम वीर्य का धनी है, निर्विकार एव निरंजन है और साथ ही जो उसके वर्तमान विकारमय स्वरूप को भी देखता है, उस मुमुक्षु के अन्तःकरण मे अपने असली शुद्ध स्वरूप की उपलब्धि की अभिलाषा उत्पन्न होना स्वाभाविक है, आत्मोपलब्धि की तीव्र अभिलाषा आत्म-शोधन के लिये प्रेरणा जागृत करती है और तब मुमुक्षु यह सोचने के लिये विवश हो जाता है कि आत्म-शोधन का मार्ग क्या है ?
- आत्मशोधन के प्रधान रूप से दो साधन हैं—साधना की उच्चतर भूमि पर पहुचे हुए महापुरुषों की जीवनियो का आन्तरिक निरीक्षण और उनके उपदेशो का विचार। साधना की जिस पद्धति का अनुसरण करके उन्होने आत्मिक विशुद्धि प्राप्त की और फिर लोक-कल्याण हेतु अपने अनुभवो को भाषा के माध्यम से प्रकट किया, साधना के क्षेत्र मे प्रवेश करने वालों के लिए यही मार्ग उपयोगी हो सकता है।

मोक्ष-मार्ग

- मोक्ष, मात्र ज्ञान से नही होता, कोरे दर्शन से नही होता, कोरे चारित्र से नही होता और कोरे तप से भी नही होता है। किसी ने तप से शरीर को गला डाला, लेकिन उसमे ज्ञान, दर्शन व चारित्र नही, धर्म पर भरोसा नही, गुरु पर विश्वास नहीं, सद्‌गुरु और कुगुरु का भेद ज्ञान नही है, जो आ गया उसे ही गुरु मान लिया, यह कह दिया कि 'बाना पूज नफा ले भाई।' बहुतेरे लोग वेष के पुजारी होते हैं। बहुत से नाम या गादी या परम्परा के पुजारी होते हैं, लेकिन उन्हे वास्तव में सद्गुरु, गुरु और असद्गुरु का विचार नही है। यदि इस तरह से श्रद्धा रखी और तपस्या व मासखमण भी कर गये तो लाभ होने वाला नहीं है। आपने सुना है:—

मासे मासे उ जो बालो, कुसग्गेण तु भुंजए।
न सो सुअक्खायधम्मस्स, कलं अग्घई सोलसी।

कोई अज्ञानी मास-मास की घोर तपस्या करे और पारणे के समय कुश यानी डाभ की अणी पर ठहरे इतने अन्न से पारणा करे, तो भी उससे कुछ नही होता। अज्ञानपूर्वक किया गया इस प्रकार का घोर तप वस्तुत चारित्र और श्रुत-धर्म के सोलहवे अश की तुलना मे भी कही नही ठहरता।

- मुमुक्षु साधक की ओर से, चिरकाल से इस प्रकार की जिज्ञासा रहती आयी है कि हे भगवन्! इस आत्मा को अनादिकाल से कर्मो के बधनो मे भव-भ्रमण करते हुए अनन्त काल बीत गया। एक-एक गति मे, एक-एक योनि मे अनन्त-अनन्त बार जन्म- मरण कर चुकने के उपरान्त भी आज तक आत्मा बधनो से मुक्त नही हो पाया। तो आखिर इस बधन से मुक्त होने का, इस जन्म-मरण की अनादि-अनन्त दुख परम्परा से सदा के लिए मुक्त होने का रास्ता क्या है? मुमुक्षु आत्माओ की इस जिज्ञासा को जानकर सर्वज्ञ-सर्वदर्शी करुणासिन्धु प्रभु महावीर ने उन पर दया की और बधन से मुक्त होने का सही मार्ग बताया। उत्तराध्ययन सूत्र के अट्ठाइसवे अध्ययन की दूसरी गाथा मे मोक्ष का मार्ग बताया गया है। अनन्त करुणाकर प्रभु महावीर ने कहा-'हे मानव! वह बधन-मुक्ति का रास्ता तेरे स्वय के हाथ मे है, बधनमुक्ति का वह उपाय तेरे अन्दर ही है। केवल आवश्यकता है, उस उपाय के अनुसार पुरुषार्थ करने की।' देखो मुक्ति का मार्ग क्या है—

नाणं च दसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।

- महावीर ने बधन मुक्त होने की, मोक्ष प्राप्त करने की मार्ग-चतुष्टयी बताकर कहा-'ओ मुमुक्षु! अगर तुमने सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र और सम्यक् तप इन चार की सम्यक् आराधना कर ली तो निश्चित समझ कि तेरे हाथ मे मोक्ष का मार्ग आ गया। ये चारो कोई अलग-अलग रास्ते नही, एक ही है-एक ही रास्ता है, इन चारो मे परस्पर सम्बध है, एक की दूसरे से कड़ी मिली हुई है।
- ज्ञान की आराधना से जीव समस्त पदार्थो को, समस्त भावो को जानता है, दर्शन से तत्त्वज्ञान मे, सन्मार्ग मे श्रद्धा करता है, चारित्र से कर्मो के आस्रवो का, नये कर्मो के बध का अवरोध करता है और तप के द्वारा आत्मा पर जमे हुए पूर्व के कर्म-मैल को धोकर प्राणी विशुद्ध चैतन्य स्वरूप को प्राप्त करता है।
- मोक्षमार्ग के इन चार उपायो मे से ज्ञान और दर्शन की आराधना द्वारा विशुद्ध ज्ञान और दर्शन की प्राप्ति होती है। जिसने ज्ञान और दर्शन पा लिया, उसके अज्ञान और मिथ्यात्व के बधन कट जाते है। इन दोनो की आराधना से चारित्र-मोह के बधन भी ढीले हो जाते है। मोक्ष के तीसरे उपाय चारित्र से मोहनीय कर्म और तप से अन्तराय कर्म के बधन कटते है। जब मोहनीय और अन्तराय कर्म के बधन ढीले हो जाते है तो फिर नाम, गोत्र, आयु और वेदनीय इन चारो अघाती कर्मो के बधनो को काटना कोई मुश्किल नही रहता। बधन-मुक्ति के सम्मिलित रूप से ये चारो उपाय हुए—ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप। यदि इन चार मे से बध काटने वाले किसी एक उपाय की भी कमी रह जाएगी, तो बधनो से हमारी पूर्ण रूप से मुक्ति नही होगी।
- किसी ने ज्ञान के द्वारा आत्मशोधन की आवश्यकता प्रतिपादित की, किसी ने कर्मयोग की अनिवार्यता बतलाई, तो किसी ने भक्ति के सरल मार्ग के अवलम्बन की वकालत की। मगर जैनधर्म किसी भी क्षेत्र मे एकान्तवाद को प्रश्रय नही देता। वह अपनी भाषा मे ज्ञान और क्रिया के समन्वय द्वारा आत्मशुद्धि का होना प्रतिपादित करता है। जैनधर्म के अनुसार एक ही मार्ग है, पर उसके अनेक अग है, अत उसमे सकीर्णता नही, विशालता है और प्रत्येक साधक अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार उस पर चल सकता है।

युवक/ युवक-संघ

- समय के अनुसार समाज-निर्माण का काम करने मे ज्यादा सक्षम तरुण व किशोर हैं, और इस कार्य का अधिक उत्तरदायित्व भी इन पर ही है। वृद्धो को कहूँ इसके बजाय आज अधिक दायित्व नौजवानो का है, क्योकि वृद्धो की सख्या नौजवानो की अपेक्षा चौथाई भी नही है। आजकल के युग की माँग है कि बहुमत से कार्य करे और बहुमत है नौजवानो का। दूसरी बात यह है कि जब तक समान विचारवालो का सगठन नही बनता, तब तक काम नही होता। यह भी आवश्यक है कि काम करने के लिए चुनिंदा, सक्षम और कर्त्तव्यशील व्यक्ति होने चाहिए, जो यह सोचते हो कि हमे हमारे जीवन मे कुछ काम करके अच्छा उदाहरण छोड़ जाना है।
- युवक सघ की सामूहिक आवाज होनी चाहिए कि हम धर्म ध्वज को कभी भी नीचा नही होने देगे तथा नित स्वाध्याय करके ज्ञान की ज्योति जगाएगे। ऐसा सकल्प लेने वाले अनेक साधक हो गये हैं जिनके श्रुत ज्ञान के बल से शासन को बल मिला। धन को ताले मे बन्द करो या जमीन मे गाड़ दो, फिर भी वह नष्ट होगा, अनेक बड़े बड़े बैक फेल हो गए। जमीन मे भी कभी-कभी फसल नही आती। ब्याज मे लगा धन भी नष्ट हो जाता है। अतएव उसकी चिन्ता व्यर्थ है, क्योकि वह नाशवान है, और लक्ष्मी चपला है। अत श्रुत ज्ञान की चिन्ता करो, जो जीवन के लिए परम धन है।

रक्षाबंधन

- रक्षाबधन पर्व के पीछे यही पवित्र पृष्ठभूमि, यही पुनीत उद्देश्य और यही पावन भावना है कि मानव यतना का सूत्र बाध अपनी आत्मा की तथा प्राणिमात्र की रक्षा कर अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति मे सफल हो।
- जिन-शासन की मर्यादा मे रहते हुए प्रत्येक जीव की रक्षा करना, अपनी आत्मा की तथा अपने आत्म-गुणो की रक्षा करना, स्वधर्मी बधुओ की रक्षा करना और चतुर्विध सघ की रक्षा करना, यही पवित्र भावना, यही लोक कल्याणकारी, स्व-पर कल्याणकारी भावना इस रक्षाबधन पर्व के पीछे निहित है।
- जैन धर्म के अनन्य उपासक कलिंगाधिपति महाराज महामेघवाहन-भिक्खुराय खारवेल ने पाटलिपुत्र पर प्रबल आक्रमण कर पुष्यमित्र को समुचित दण्ड दे चतुर्विध जैन-सघ की रक्षा की। अति प्राचीन काल (बीसवे तीर्थकर मुनि सुव्रत स्वामी के तीर्थकाल) मे भी जैन श्रमण-सघ पर इस प्रकार का घोर सकट आया। उस समय लब्धिधारी महामुनि विष्णु कुमार ने अपने लब्धि-बल से श्रमण-संघ की रक्षा की। तभी से रक्षाबधन का पर्व प्रचलित हुआ, ऐसा माना जाता है।

राजनीति-अर्थनीति-धर्मनीति

- राजनीति और धर्मनीति दोनों में त्याग का महत्त्व है। एक मे यह त्याग केवल अपने स्वार्थ-साधन, मान-मर्यादा, पद और नामवरी आदि के लिए है , पार्टी या राजनीति को सबल बनाने के लिये भी त्याग किया जाता है, किन्तु धर्मनीति में त्याग परमार्थ के लिये किया जाता है।
- राजनीति में कहो कुछ और करो कुछ की नीति अपनायी जाती है। योजना कुछ बनायी जाती है एव क्रियान्विति कुछ की जाती है। इस प्रकार राजनीति का स्वरूप अस्थिर, दोलायमान और चंचलतामूलक है, किन्तु धर्मनीति

स्थिर और सुदृढ़ है।

- अर्थनीति और राजनीति मे अनेक दुर्गुण है। इनमे व्यक्ति अपने उत्कर्ष के लिये अन्य सबका सफाया करने पर उतारू हो जाता है। अतएव अर्थनीति और राजनीति कुटिल कही गयी है। राजनीति मे कोई नेता हो गया तो उसके दुर्गुण भी प्रशंसनीय बन जाते है। क्या पद पा लेने से उसका बुरापन दूर हो गया यह विचारणीय विषय है। धर्मनीति मे ऐसा नही होना चाहिये, परन्तु राजनीति का प्रभाव पड़ने से यहाँ पर भी दूषण आ जाता है। कल का ऊँचा आज का हीन बन जाता है। यह वाणी की चचलता, मनुष्य की प्रामाणिकता के लिये खतरा है। जिसकी प्रशसा की, ऊँचा माना, उसे शीघ्रता से बुरा न कहिये। हर एक का मूल्य आकने से पहले विचार कीजिये।
- शासक के पद पर बैठने वालो का दिल और दिमाग शुद्ध है और उनके दिल में नैतिकता भरी है तो देश सुधर सकेगा। यदि उनका माथा ही बिगड़ा हुआ हो, पैसो को मिलाने का लक्ष्य हो और इस खयाल के हो कि ससार का भला तो होगा तब होगा, लेकिन पहले अपना भला कर ले, घर का भला कर ले तो समाज एव देश का कल्याण नही हो सकेगा।

लेखा-जोखा

- आप मे से जो भाई हजारपति है, वे ज्यादा धर्म करते है, सत्सग करते है, स्वधर्मियो से प्रेम करते है। लखपति, करोड़पति जो है उनको उनसे भी ज्यादा करना चाहिए, सवाया धर्म-कार्य करना चाहिए। त्याग-तप मे, साधु-सेवा मे, साधर्मी भाइयो की सेवा मे आपका कदम आगे रहना चाहिए। यदि ज्यादा करते हैं तो समझना चाहिए वस्तुत प्रगति की है, लेकिन इससे विपरीत हो गये तो रुपये बढ़े, काम बढ़ा, लेकिन तप घटा। तप घटा तो धर्म मे रुचि और श्रद्धा घटी और अन्तरग साधना मे जो एकाग्रता पहले रहती थी, वह भी नही रही। पहले सामायिक मे बैठते थे तब घड़ी भर मन लगता था, किन्तु अब लगता नही। तीन-चार पीढ़ियाँ चल रही हैं, लाखो-करोड़ो की सम्पत्ति पायी है, लेकिन बहुत धोखे मे रहे। साधना मे एकाग्रता नही रही तो प्रगति की बात तो दूर, यह तो अध पतन हो गया। यदि हिसाब देखते रहेगे तो बराबर प्रगति करते रहेगे।

वाणी का बल

- मनुष्य की वाणी मे ऐसा बल है कि वह तलवार से भी अधिक गहरा प्रहार कर सकती है और चाहे तो पापी से पापी मनुष्य का हृदय भी बदल सकती है। सरलस्वभावी सहृदया कैकेयी रानी का मन-मस्तिष्क सहसा जिस मन्थरा दासी ने बदल दिया था, उसमे भी वाणी का ही प्रभाव था। युद्ध क्षेत्र मे शौर्यगीत सुनाकर चारण एव भाट योद्धाओ को इतना उत्तेजित कर देते थे कि उनकी भुजाएँ फड़कने लगती थी तब वे अपने प्राणो का मोह छोड़कर शस्त्र-अस्त्र लेकर शत्रु सेना पर टूट पड़ते थे। यह जादू वचन एव वाणी का ही तो था।
- भगवान की वाणी किसी एक के लिए नही है। ब्राह्मण के लिए या महाजन के लिए ही नही है। भगवान की वाणी सुनने का हक किसान, हरिजन आदि सबको प्राप्त है। यह अमृत भगवान ने सबके लिए वितरित किया है।
- आप चाहे अहिंसा और सत्य की बात चौराहे पर बैठकर कहने लगें, लेकिन यदि आपके व्यवहार मे, आचरण मे

एवं चिंतन मे सत्य और अहिंसा घुले हुए नहीं हैं, तो आपकी वाणी मे इतनी क्षमता और प्रभाव नही होगा कि सामने वाला उसे मान सके।

■ वात्सल्य

- धार्मिक वत्सलता मे जो अनुराग का अणु रहता है, वह शुभ होने से आत्मा को दुःख सागर मे डुबाने वाला नही होकर, धर्माभिमुख कराने वाला होता है। धार्मिक वात्सल्य की मनोभूमिका मे आत्म-सुधार की भावना रहती है।
- साधक मे साधना की ओर लगन हो और साथ ही समाज की उसके प्रति सद्भावना हो तो मानव सहज ही अपना उत्थान कर सकता है।
- ज्ञानी और माता के वात्सल्य मे यदि अन्तर है तो यही कि माता का वात्सल्य अपनी सन्तति तक ही सीमित रहता है और उसमे ज्ञान अथवा अज्ञान रूप मे स्वार्थ की भावना का सम्मिश्रण होता है, किन्तु ज्ञानी के हृदय मे ये दोनो चीजें नही होती। उसका वात्सल्य विश्वव्यापी होता है। वह जगत् के प्रत्येक छोटे-बड़े, परिचित-अपरिचित, उपकारक-अपकारक, विकसित-अविकसित या अर्द्धविकसित प्राणी पर समान वात्सल्य रखता है। उसमे किसी भी प्रकार का स्वार्थ नही होता।

■ विकथा

- आत्म-हित के विपरीत कथा को विकथा कहते हैं अथवा अध्यात्म से भौतिकता की ओर तथा त्याग से राग की ओर बढ़ाने वाली कथा विकथा कहलाती है। विकथा साधना के मार्ग मे रोड़े अटकाने वाली और पतन की ओर ले जाने वाली है, अत साधक को उससे सभल कर पाव रखना चाहिए।

■ विद्वान्

- आज देश मे हिंसा, झूठ-फरेब और भ्रष्टाचार का बोलबाला है। नैतिक मूल्यो का तेजी के साथ ह्रास हो रहा है। ऐसे समय मे विद्वानो का दायित्व है कि वे अहिंसा, सत्य और सदाचार का स्वय पालन करते हुए परिवार, समाज और राष्ट्र मे इस त्रिवेणी को प्रवाहित करे।
- विद्वान अपने को किताबो तक सीमित नही रखें। वे धर्मक्रिया मे भी अपना ओज दिखायें। "यस्तु क्रियावान् पुरुष स विद्वान्" अर्थात् जो क्रियावान है वही पुरुष विद्वान् है। यदि एक विद्वान् सही अर्थ मे धर्माराधन से जुड़ जाता है तो वह अनेक भाई- बहनो के लिए प्रेरणा स्तम्भ बन जाता है।
- जो विद्वान्, सस्कृत, प्राकृत आदि भाषाओ के ज्ञाता हैं उन्हे इन भाषाओ मे रचना करना चाहिए। अनुवाद के आधार पर शोध कार्य तो अन्य विद्वान भी कर लेगे, किन्तु सस्कृत, प्राकृत मे लिखने का कार्य इन भाषाओ के विशेषज्ञो द्वारा ही सभव है। इन भाषाओ की अप्रकाशित पाण्डुलिपियो के सम्पादन का कार्य प्राथमिकता के तौर पर किया जाना चाहिए।
- अभ्यास करने वालो मे प्राय अधीरता देखी जाती है। वे चाहते है कि थोड़े ही दिनो मे जैसे-तैसे ग्रन्थो को पढ़ लें और विद्वान् बन जाएँ। मगर उनकी अधीरता हानिजनक होती है। ज्ञान-प्राप्ति के लिए समुचित समय और श्रम देना आवश्यक है। गुरु से जो सीखा जाता है, उसे सुनते जाना ही पर्याप्त नही है। किसी शास्त्र को आदि

से अन्त तक एक बार पढ़ लेना अलग बात है और उसे पचा लेना दूसरी बात है। शिक्षार्थी के लिए आवश्यक है कि वह शिक्षक से जो सीखे, उसे हृदय मे बद्धमूल कर ले और इस प्रकार आत्मसात् करे कि उसकी धारणा बनी रहे। उस पर बार-बार विचार करे, चिन्तन करे। शब्दार्थ एवं भावार्थ को अच्छी तरह याद करे। ऐसी तैयारी करे कि समय आने पर दूसरो को सिखा भी सके। चिन्तन-मनन के साथ पढ़े गए अल्प ग्रन्थ भी बहुसंख्यक ग्रन्थो के पढ़ने का प्रयोजन पूरा कर देते है। इसके विपरीत, शिक्षक बोलता गया शिष्य सुनता गया और इस प्रकार बहुसख्यक ग्रन्थ पढ़ लिए गए तो भी उनसे अभ्यास का प्रयोजन पूर्ण नही होता।

विनय/विवेक

- जिसका विनय किया जाता है वह व्यक्ति धर्मशास्त्र के अनुसार पिड से पूजनीय नही होता, नाम से पूजनीय नही होता, लेकिन उसके पूजनीय होने का कारण यदि कोई है तो उसके सद्गुण हैं। इसलिये विनय का आधार बताते हुए कहा कि पहला ज्ञान विनय, दूसरा दर्शन विनय और तीसरा चारित्र विनय है। फिर मन विनय, वचन विनय, काया विनय और लोकोपचार विनय है।
- साधक मे विद्या के साथ विनय और विवेक भी होना आवश्यक है। विद्या से विनय के बदले अविनय बढ़ता हो तो समझना चाहिए कि सद्विद्या नही है। तभी तो कहा है – "साक्षरा विपरीताश्चेत् राक्षसा एव केवलम्" । आनन्द श्रावक मे विनय और विवेक दोनो थे। उन्होने गुरु गौतम के चरणो मे नमन करके विवेकपूर्वक प्रार्थना की–"भगवन् ! मै असमर्थ हूँ, अत आपकी इच्छा हो तो इधर पधारे, मै चरणो मे सिर नमा लूँ।" आज विद्या के साथ विनय और विवेक की कमी है। अहीर दम्पती की तरह घी के लिए लड़ने वाले माल भी गवाते है और उपहास के पात्र भी बनते है। ढक कुम्हार विवेकशील था। उसने करीब १५०० साधु- साध्वियो को सुधार दिया। विनय एव विवेकशील शिष्य गुरु को भी सुधार सकता है।

वीतरागता

- वीतराग की वाणी निराली है। उन्हे अपने भक्तो की टोली जमा नही करनी है, अपने उपासको को किसी प्रकार का प्रलोभन नही देना है। वे भव्य जीवो को आत्म-कल्याण की कुजी पकड़ा देना चाहते है, इसलिए कहते हैं–"गौतम ! मेरे प्रति तेरा जो राग है, उसे त्याग दे। उसे त्यागे बिना पूर्ण वीतरागता का भाव जागृत नही होगा।" इस प्रकार की निस्पृहता उसी मे हो सकती है जिसने पूर्ण वीतरागता प्राप्त करली हो और जिसमे पूर्ण ज्ञान की ज्योति प्रकट हो गई हो। अतएव भगवान् का कथन ही उनकी सर्वज्ञता और महत्ता को सूचित करता है।

व्यवहार और निश्चय

- व्यवहार और निश्चय का सम्बन्ध शरीर और प्राण जैसा है। जीवन के लिए इन दोनो धाराओ की जरूरत होती है, क्योंकि शरीर नही तो प्राण कहाँ रहेंगे और प्राण न रहे तो शरीर की कीमत क्या ? अगर जीवन ढग से जीना है तो उसमे शरीर भी स्वस्थ रहना चाहिए और प्राण भी अबाधित गति से, निरापद ढंग से सचालित होना चाहिये तभी जीवन को स्वस्थ समझा जायेगा और अगर दोनो मे से एक भी गड़बड़ा गया तो काम नही चल सकेगा।

- जहाँ व्यवहार में कृत्रिमता है वहाँ निश्चय में भी कुछ गड़बड़ है।
- चाहे लौकिक प्रवृत्ति हो अथवा आध्यात्मिक, उसके दो रूप स्पष्ट है एक व्यवहार और दूसरा निश्चय। निश्चय के लिए कोई समाज-व्यवस्था नही बनानी पड़ती, लेकिन व्यवहार के लिए समाज-व्यवस्था बनानी पड़ती है। निश्चय मे जब प्रकाश पैदा हो जाता है तब वह दूसरो के चलाए नही चलता है, स्वचालित यत्र की तरह चलता है।
- जब तक समाज और समाज के सदस्य जीवन-निर्माण के मार्ग मे आगे बढ़ने मे गति कर रहे है, मन की मलिनताएँ और विकार खत्म नही हुए है तब तक व्यवहार को भी पकड़ कर चलना होता है। जब उनका व्यवहार शुद्ध होता है, समाज का भी व्यवहार शुद्ध होता है।
- आत्म शुद्धि हमारा निश्चय है । यह हमारा लक्ष्य है । जप, तप, सत्सग आदि धार्मिक प्रवृत्तियाँ जो हम करते है, इनका लक्ष्य जीवन मे आत्मशुद्धि करना है। इन प्रवृत्तियो मे चमक लाना निश्चय की भूमिका है और जब भूमिका यानी व्यवहार हमारा सुन्दर होगा, सुधरा हुआ होगा तो उससे शनै शनै गति करते-करते एक दिन हम निश्चय की ठीक स्थिति पर पहुँच जायेगे। इसलिए साधको के सामने यह विचार आया कि धर्म केवल सुनने की चीज नही है, आचरण की चीज है, अमली रूप मे लाने की चीज है। व्यवहार करते समय यह जरूर देखना है कि व्यवहार निश्चय के अभिमुख हो, पराङ्मुख न हो।
- बाह्य क्रियाकाण्डो की अपेक्षा कषायो को जीतना अधिक महत्त्वपूर्ण है, इसमे दो मत नही। किन्तु इससे बाह्य क्रियाओ की निरुपयोगिता सिद्ध करना ठीक नही। कषाय-विजय की इच्छा वाले साधक को तामसी भोजन के दुष्टसग से और दिमाग को गलत विचारो से बचाने का अभ्यास करना आवश्यक होगा। सात्त्विक आहार, ज्ञानवान् सज्जनो की सगति और शुभ कार्यों मे जुड़ा रहना कषाय-विजय के अपेक्षित साधन हैं।
- अर्जुनमाली जैसा तीव्र कषायी भगवान् महावीर की देशना का निमित्त पाकर, तप-त्याग की भावना से कषायो को जीत कर, वीतराग हो गया। सत्सग और बेले-बेले की तपस्या का व्यवहार उसे भी करना पड़ा।
- जिनशासन एकान्त व्यवहार या निश्चय का कथन नही करता। वह अपेक्षावादी-अनेकान्तवादी है। जिन-शासन मे व्यवहार और निश्चय दोनो से कार्य की सिद्धि मानी गयी है। निश्चय से साध्य तक पहुँचने मे व्यवहार साधन है। ज्ञान मिलाने को शिक्षक के पास जाना पड़ता है। समुद्र पार करने मे नाव का आश्रय लेना होता है और रोग मिटाने की दवा खानी पड़ती है। दवा खाने से पूर्व रोग का परीक्षण भी किया जाता है, जो कि सब व्यवहार है। कार्य-सिद्धि मे आवश्यक साधन मानकर इसे किया जाता है। वैसे ही कषाय-विजय के लिये, बाह्य क्रियाओ की भी आवश्यकता है।
- चलने मे जैसे दोनो पैर हिलाये जाते और दही-मंथन मे दोनो हाथ आगे-पीछे रख कर डोरी खीची जाती है। मंथन के समय एक हाथ ढीला और दूसरा कड़ा रखने पर ही मक्खन प्राप्त होता है। दोनो हाथ छोड़ने या खीचने से काम नही होता। वैसे ही कल्याणकाक्षी जन को भी व्यवहार और निश्चय दोनो की आवश्यकता होती है। व्यवहार के पीछे निश्चय की और निश्चय की आड़ मे व्यवहार की उपेक्षा करना भयकर भूल होगी।
- निश्चय के आग्रह मे व्यवहार का तिरस्कार करना सत्य का अपलाप करना और अपने आप को धोखा देना है। कारण कि सामान्य साधक व्यवहार के द्वारा ही निश्चय की ओर बढ़ता है, जबकि केवली का व्यवहार निश्चयानुसार होता है। छद्मस्थ अपूर्ण ज्ञानी होने से निश्चय को बिना व्यवहार के नही समझ पाता और न

आचरण मे ही ला पाता है। अत साधन की स्थिति मे व्यवहार को त्याज्य नही, किन्तु उपादेय मानना चाहिये। यही शास्त्र का मर्म है।

व्यसन

- अधिक से अधिक १०-१२ रोटियो से मनुष्य का पेट भर जाता है, मगर बीड़ी और सिगरेट पीते-पीते सन्तोष नही होता।
- जिस मनुष्य का शरीर तमाखू के विष से विषैला हो जाता है उसका प्रभाव उसकी सन्तति के शरीर पर भी अवश्य पड़ता है। अतएव तमाखू का सेवन करना अपने ही शरीर को नष्ट करना नही है, बल्कि अपनी सन्तान के शरीर मे भी विष घोलना है। अतएव सन्तान का मगल चाहने वालो का कर्त्तव्य है कि वे इस बुराई से बचे और अपने तथा अपनी सन्तान के जीवन के लिये अभिशाप रूप न बने।
- व्यक्ति चोरी और व्यभिचार कब करता है और लड़के शराबी कबाबी कब बनते है? जब उनकी सगति खराब होती है। ब्राह्मणो और जैनो के घर मे जन्म लेने वाले शराब और अभक्ष्य को कभी हाथ से छूते नही है, लेकिन खराब सौबत पड़ने से अच्छे घर के लोग अखाद्य पदार्थ खाने लगे, तो इसमें कोई आश्चर्य नही।
- चाय एक तरह का व्यसन है, यह खून को सुखाने वाली है, नीद को घटाने वाली है और भूख को भी कम करने वाली है।

व्रत

- धर्म का उपदेश अन्त करण मे जमने पर व्रत स्वीकार करने मे देर नही लगती।
- जब आप अहिसा, सदाचार के मूलगुणो को अगीकार करेगे तो आपका जीवन भी निखरेगा और इन व्रतो के साथ तपस्या करेगे तो ज्यादा चमकेगे, ज्यादा तेजस्वी होगे, ज्यादा ताकत या बल आएगा। भगवान महावीर ने यही शिक्षा दी है।
- मुनिधर्म में सम्पूर्ण विरति का विधान है और गृहस्थ-धर्म मे देशविरति का। यहॉ इस बात को ध्यान मे रखना चाहिए कि साधु और गृहस्थ के धर्म मे कोई विरोध नही है, वस्तुत एक ही प्रकार के धर्मो के पूर्ण और अपूर्ण दो स्तर है। साधु भी अहिसा का पालन करता है और गृहस्थ भी। किन्तु गृह-व्यवहार से निवृत्त होने और भिक्षाजीवी होने के कारण साधु त्रस और स्थावर दोनो प्रकार के जीवो की हिसा से बच सकता है, किन्तु गृहस्थ के लिये यह सभव नही है। उसे युद्ध, कृषि, व्यापार आदि ऐसे कार्य करने पड़ते है जिनमे हिंसा अनिवार्य है। अतएव स्थावर जीवो की हिंसा का त्याग उसके लिये अनिवार्य नही रखा गया। त्रस जीवो की हिंसा में भी केवल निरपराध जीवो की सकल्पी हिंसा का ही त्याग आवश्यक बतलाया है। इससे अधिक त्याग करने वाला अधिक लाभ का भागी होता है, किन्तु देशविरति अगीकार करने के लिये इतना त्याग तो आवश्यक है। इसी प्रकार अन्याय व्रतो मे भी गृहस्थ को छूट दी गयी है।
- हमारे समाज मे प्राय कुछ व्रत और तप करने का रिवाज तो है, लेकिन ज्ञान, दर्शन और चारित्र की तरफ उतना लक्ष्य नही है जितना व्रत या तप की तरफ है। व्रत और तप भी उपयोगी हैं, लेकिन इनकी कीमत और ताकत पूरी तब प्राप्त होती है जब व्रत के पीछे सयम हो, चारित्र हो और ज्ञान-दर्शन हो।

- कुछ ऐसे बधु मिलते हैं, जो कहते हैं महाराज ! प्रतिज्ञा करना, सौगन्ध लेना तो कमजोरी की बात है। हम सौगन्ध नही लेगे, यो ही स्वत नियम पालेंगे। पर वे भूल जाते हैं कि राजतत्र मे शासन का पदभार सम्हालने वाले ईमानदार से ईमानदार व्यक्ति को भी शपथ ग्रहण करवाई जाती है। शपथ ग्रहण करना केवल औपचारिकता मात्र नही है। सद्‌गुरु के समक्ष शपथ लेने से लेने वाले मे आत्म-बल पैदा होता है, साथ ही यह विचार भी आता है कि गुरुदेव के समक्ष ली हुई प्रतिज्ञा का भग किसी भी दशा मे नही करना चाहिए।
- इच्छा पर जितना ही साधक का नियंत्रण होगा उतना ही उसका व्रत दीप्तिमान होगा। इच्छा की लम्बी-चौड़ी बाढ़ पर यदि नियत्रण नही किया गया तो उसके प्रसार मे ज्ञान, विवेक आदि सद्गुण प्रवाह-पतित तिनके की तरह बह जायेगे।
- व्रतो और नियमों को केवल दस्तूर के रूप मे न लेकर आत्मा को कसने का उनसे काम लिया जाए, तो वास्तविक लाभ हो सकता है। खाने-पीने की वस्तुओं, सम्पदा, भूमि, वस्त्र और अलकार आदि हर एक के परिमाण मे यह लक्ष्य रखना है कि नियम दिखावे के लिए, दूसरे के कहने पर या नाम के लिए नही, वरन् आत्मा को ऊपर उठाने एव जीवन को उज्ज्वल बनाने के लिए करना है।
- १ हिंसा घटाने के लिए २. अविरति रोकने के लिए ३ स्वाद जय तथा जितेन्द्रियता की साधना के लिए व्रत करना चाहिए।
- शारीरिक, कौटुम्बिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक आदि अनेकविध आवश्यकताएँ होती हैं जो मानव के द्वारा घटाई बढ़ाई भी जा सकती हैं। जैसे शारीरिक आवश्यकता मे तेल, साबुन, पान, सुपारी, बीड़ी आदि बाह्य आवश्यकता है। आवश्यकता पर नियत्रण करने वाला अपने मन की आकुलता मिटा लेता है। जैसे पृथ्वी की गोलाई पर कोई कितना ही घूमता रहे, पर उसका अन्त नही पाता। इसी तरह इच्छाओ का चक्र भी कभी युग-युगान्तर मे पूरा नही होता।
- पशु जीवनभर दो-चार वस्तुएँ ही ग्रहण कर लम्बी जिन्दगी काट लेते है। वन मे रहने वाले ऋषि-मुनि दो-चार वस्तुओ से भी गुजारा कर दीर्घायु रहते थे। नागरिक जीवन की परिस्थिति भिन्न है, फिर भी वहाँ सीमा की जा सकती है। गृहस्थ जीवन मे रहने वाले लोग भी सीमित वस्तुओ से अच्छा काम चला सकते है।
- व्रत ग्रहण करना यदि महत्त्वपूर्ण है तो उसका यथावत् पालन करना भी कम महत्त्वपूर्ण नही है। उचित है कि मनुष्य अपने सामर्थ्य को तोल कर और परिस्थितियो का विचार करके व्रत को स्वीकार करे और फिर दृढ़ संकल्प के साथ उस पर दृढ़ रहें। व्रत ग्रहण करके उसका निर्वाह नही करने के भयकर दुष्परिणाम या अनर्थ हो सकते हैं। किन्तु चूक के डर से व्रत ही नही करना बड़ी भूल है। जो कठिनाई आने पर भी व्रत का निर्वाह करता है और अपने सकल्प बल मे कमी नही आने देता वह सभी कठिनाइयो को जीत कर उच्च बन जाता है और अन्त मे पूर्ण निर्मल बन कर चरम सिद्धि का भागी होता है।
- साधु-जीवन का दर्जा बहुत ऊँचा है। इसका कारण यही है कि वे महाव्रतो का मनसा, वाचा, कर्मणा पालन करते हैं, और महाव्रतों के पालन के लिए उपयोगी जो नियम-उपनियम हैं, उनके पालन में भी जागरूक बने रहते हैं। यदि ऊँची मंजिल वाला फिसल गया तो वह चोट भी गहरी खाता है। अत उसे बहुत ही सावधान होकर चलना पड़ता है। भव-भव के बंधनों को काटने में वही सफल होता है जो व्रतों का पूर्ण रूप से निर्वाह करता है।

- कभी-कभी ऐसा अवसर भी आ जाता है कि भ्रम, विपर्यास या मानसिक दुर्बलता के कारण मनुष्य व्रत की सीमा से बाहर चला जाता है। आशिक व्रत भग अतिचार की कोटि मे गिना जाता है और जब व्रत से निरपेक्ष होकर जानबूझ कर व्रत को खडित किया जाता है तो अनाचार कहलाता है।
- व्रती पुरुष कुटुम्ब, समाज तथा देश मे भी शान्ति का आदर्श उपस्थित कर सकता है और स्वय भी अपूर्व शान्ति का उपभोक्ता बन सकता है।
- व्रती का जीवन दूसरो को पीडा प्रदायक नही होता, किसी को उत्ताप नही देता। वह धर्म, न्याय, शान्ति, सहानुभूति, करुणा और सवेदना जैसी दिव्य भावनाओ का प्रतीक बन जाता है। अतएव जीवन मे व्रत-विधान की अत्यत आवश्यकता है।
- अवस्था ढल गई है, सफेदी आ गई है, फिर भी १२ व्रत ग्रहण नही करते, यह कितने आश्चर्य की बात है? पाँच अणुव्रत अगीकार करना तो बड़ा ही आसान कार्य है। बड़ी हिंसा, बड़ा झूठ, बड़ी चोरी का त्याग करना, एक करण दो योग से कुशील का सेवन नही करना, अपनी पत्नी की मर्यादा रखना और परिमित परिग्रह रखना, इनमे से आपके लिये कौनसी बात कठिन है, जो आप व्रत ग्रहण करने मे इतने कतराते हो?
- एक सप्ताह के लिये हिसावृत्ति, परिग्रह, क्रोधादि को काबू मे करने के लिए अभ्यास करे। सप्ताह-सप्ताह बढाकर चार महीनो तक साधना मे कामयाबी हासिल करली तो फिर आप मे साल भर करने का हौसला आ जायेगा और साल भर इसको निभा ले तो आगे अड़चन आने वाली नही है।
- त्यागी दो तरह के होते है—एक मूल गुण पच्चक्खाणी और दूसरा उत्तरगुण पच्चक्खाणी। मूल गुण पच्चक्खाणी उसको कहते है जो हिसा, असत्य, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पॉचो पापो का त्याग करता है। नवकारसी पालना, पोरसी करना, उपवास करना, आयबिल करना, कुछ कपड़े रखकर कपड़ो की मर्यादा कर लेना, भोग और उपभोग की चीजो को छोडना, अमुक चीजो का सेवन छोडना—जैसे मिठाई, नमक, घी खाना छोड़ना, यह उत्तरगुण पच्चक्खाण है।
- मूल गुण की मदद करने के लिये और उसको सुरक्षित रखने के लिए उत्तर गुण को एक सहयोगी व्यवस्था के रूप मे रखा है, जब उत्तर गुण और मूल गुणो का अच्छी तरह से सरक्षण नही होता तो व्रतो के टूटने का खतरा रहता है।
- व्रत करते-करते गलती हो गई तो उसको छिपाकर नही रखे। यह नही सोचे कि महाराज से कहूँगा तो मेरी हॅसी करेंगे, और यह कहेगे कि स्वय ने नियम लिया और पालन नही कर सका। महाराज से छिपाकर रखना भी कायरता है। महाराज के पास जाकर गलती को मजूर कर लिया, और वे जो प्रायश्चित्त दे तो उसे स्वीकार कर लिया और शुद्धि करके फिर से आत्मा को उजला बना दिया तो कायर कहलायेगा या शूर?
- एक छोटा सा सूत्र है 'नि शल्यो व्रती' जिसके मन मे शल्य नही हो, वह व्रती है। चाहे उपवास हो, आयम्बिल हो, त्याग हो, तप हो, या समाज मे उच्च सेवा का काम हो, इन व्रतो को स्वीकार करते समय मन में शल्य नही होना चाहिए।
- व्रत लेने से आत्मा का नियमन होता है, कामना कसी जाती है और मन की दुर्बलता मिटती है।

शास्त्र-ज्ञान

- हर एक शास्त्र से परमार्थ प्राप्त नही होता, क्योंकि काम-शास्त्र, अर्थ-शास्त्र, रसायन-शास्त्र, नाट्य-शास्त्र और राजनीति-शास्त्र आदि अनेक शास्त्र है, परन्तु ये जीवन की दुर्वृत्तियो पर शासन करने के शास्त्र नही है। इनसे लोक-जीवन का काम चल सकता है, अध्यात्म-जीवन का नही।
- धर्म-शास्त्र किसी को भी चोट पहुँचाने का निषेध करता है। धर्मशास्त्र का अनुगामी स्वय हानि उठा लेगा, परन्तु दूसरे को धोखा नही देगा और आघात नही पहुँचायेगा। कुमार्ग मे जाते समय उसका पैर लड़खड़ायेगा, हाथ कम्पित होगा और मन घबरा उठेगा।
- एक अर्थवान मनुष्य दूसरे का धन छीनना चाहेगा, परन्तु धर्मशासन वाला व्यक्ति स्वप्न मे भी दूसरे के धन पर आँख नही उठायेगा।
- धर्मशास्त्र मे अज्ञान और मिथ्यात्व को मिटाने की शक्ति रहती है। यदि अपने आप मे परमार्थ मिलाना है, तो परमार्थ के ज्ञाता लोगो की सगति करनी चाहिए और व्यर्थ की बात करने वाले प्रमादियो से सदा दूर रहना चाहिए।
- यदि ज्ञान की अपेक्षा से श्रमणो की नीव कच्ची रह गई है, तो वे सयम की निर्मल आराधना नही कर पायेगे और अन्य सघ वालो के समक्ष उनकी ठीक वैसी ही दशा होगी, जैसी कि कीचड़ मे फसी एक दुर्बल गाय की दशा होती है।

शास्त्रधारी सेना

- देश की शस्त्रधारी सशक्त सेना भी देश की आतरिक स्थिति को नही सुधार सकती। बाहरी शक्ति से, बाहरी शत्रु से देशवासियो के जान-माल को खतरा हो तो शस्त्रधारी सेना रक्षा कर सकती है, बाहरी शत्रुओ को नष्ट कर सकती है। वह भीतरी शत्रुओ को, आन्तरिक बुराइयो को नष्ट नही कर सकती। नैतिकता एव आदर्श सस्कृति के विनाश की ओर बढ़ते चरण को रोककर सस्कृति को बचाना हमारी शास्त्रधारी सेना का काम है।
- शास्त्रधारी सेना तैयार करने के लक्ष्य से स्वाध्याय एव शिक्षण की व्यवस्था आपके सामने है। स्वाध्याय को अपने जीवन, समाज और देश का निर्माण करने वाला समझकर आपको आगे बढ़ना है। अन्त करण के सब विकारो को दूर करते हुए आगे बढ़ना है।

शास्त्र-रक्षा

- जैन समाज के ग्रन्थागारो मे, ज्ञान भण्डारो मे लाखो ग्रन्थ भरे पड़े है। हमारे बुजुर्गों ने, सन्तो ने शास्त्रो की रक्षा के लिए बहुत प्रयत्न किये। पूर्व मे जैनो का मुख्य मूल विचरण स्थल मगध था। पटना, राजगृह, चम्पा, वैशाली आदि क्षेत्रो मे विचरण करने वाले जैन सघ का स्थान परिवर्तन हुआ। चतुर्विध सघ के समक्ष उस समय यह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रश्न था कि इन शास्त्रो की, अनमोल जैन साहित्य की सुरक्षा कैसे की जाए? उन्होने शास्त्रो को जैसलमेर जैसे स्थान मे—देश के एक कोने में ले जाकर सुरक्षित रखा, जहाँ कि कोई विधर्मी, धर्मद्वेषी, क्रूरशासक सरलता से न पहुँच सके। अवन्ती-उज्जैन मे न रखकर शास्त्रो को जैसलमेर मे रखा। आज भी हजार-हजार वर्ष

पहले के लिखे हुए शास्त्र जैसलमेर और पाटन मे विद्यमान हैं। उनमे से अनेक भोज पत्रों पर, ताड़ पत्रो पर, वस्त्र के बने पत्रो पर लिखे हुए है। हमारे पूर्वाचार्यों ने, सतो ने, पूर्वजों ने, हमारे धर्मशास्त्रो के सरक्षण मे कितना परिश्रम किया। पर आज हमारे शिक्षित नवयुवको को, भाई-बहनो को उन धर्मशास्त्रों-धर्मग्रन्थो को उठाकर देखने की भी फुर्सत नही है, धर्मशास्त्रो को पढ़ने की रुचि नही है। तो क्या यह आपकी ज्ञान-भक्ति कही जायेगी, ज्ञान का विनय कहा जायेगा?

शिक्षा

- विद्या जीवन चलाने के लिए नही, किन्तु जीवन निर्माण के लिए है। इसका कारण बताते हुए शास्त्रकारो ने कहा कि साक्षरता रहित ज्ञान वाले पशु-पक्षी भी जीवन चलाते देखे जाते हैं। खाना, पीना, घर बनाना आदि कलाओं का ज्ञान उनमे भी पाया जाता है। फिर शिक्षण शालाओ मे शिक्षा ग्रहण कर अगर मानव भी इतना ही कर पाये तो अशिक्षित व शिक्षित मे कुछ भी अन्तर नही रह जायेगा। इससे यह धारणा पुष्ट होती है कि शिक्षा जीवन चलाने के लिए नही, अपितु जीवन बनाने के लिए है।
- अगर विद्या पढ़कर भी मानव मे अहिंसा, सत्य, बधुत्व, क्रोधादि शमन के गुण न आये तो विद्या दु खदायी हो जायेगी।
- असीमित आवश्यकता बढ़ाने वाले ज्ञान की शिक्षा तो शिक्षण शालाएँ भी दे रही है। उस ज्ञान से जीवन चलेगा, पर बनेगा नही।
- आज तथाकथित शिक्षणालयो मे जो डाक्टर, वकील आदि पैदा हो रहे है वे यात्रिक विद्या तो जानते है, पर आत्मविद्या नही। हमारे शिक्षणालयो का यह भी उद्देश्य होना चाहिए कि उनमे छात्र सदाचारी व ईमानदार बनें। यदि इस उद्देश्य की पूर्ति आप नही कर पाये तो लाखो का व्यय और जीवन का श्रम सफल नही हो सकेगा।
- आज हजारो शिक्षण सस्थाएँ चाहती हैं, फिर भी बच्चो में नैतिकता क्यो नही आ पाती? इसके लिए पहले शिक्षको का दिमाग साफ और शुद्ध होना चाहिए। उनमे राष्ट्रीयता की भावना होनी चाहिए। वे झूठे नही हो। शिक्षक स्वय व्यसनी नही हो। वे अर्थ का सग्रह करने वाले और इधर-उधर बच्चो पर हाथ साफ करने वाले नही हो। किसी को परीक्षा मे पास करने के लिए हेरा-फेरी करने वाले नही हो। ऐसे दोष यदि शिक्षको मे होगे तो वे नैतिकता की बात बच्चो को नही सिखा सकेगे।
- आज के अध्यापक का जितना ध्यान शरीर, कपड़े, नाखून, दात आदि बाह्य स्वच्छता की ओर जाता है, उतना उनकी चारित्रिक उन्नति की ओर नही जाता। बाह्य स्वास्थ्य जितना आवश्यक समझा जा रहा है अन्तरग भी उतना ही आवश्यक समझा जाना चाहिए। अन्तर मे यदि सत्य-सदाचार और सुनीति का तेज नही है तो बाहरी चमक-दमक सब बेकार साबित होगी। सही दृष्टि से तो स्वस्थ मन और स्वस्थ तन एक दूसरे के पूरक व सहायक हैं।
- वास्तव में जिस विद्या के द्वारा मनुष्य, हित, अहित, उत्थान और पतन के मार्ग को समझ सके वही सच्ची विद्या है। जैसे—"वेत्ति हिताहितमनया सा विद्या"। दूसरे व्याख्याकार का मत है कि जो आत्मा का बंधन काट दे, वही सही विद्या है—"सा विद्या या विमुक्तये"।
- आज का मनुष्य विद्या को जीविका-संचालन का साधन मानता है, निर्वाह का संबल मानता है, यह नितान्त भ्रम

है। जीवन-निर्वाह के लिए वस्तु जुटाना, खाद्य पदार्थ जुटाना, संतति का पालन-पोषण करना, गर्मी-सर्दी से बचाव करना आदि बाते तो पशु भी कर लेते है। पक्षी बड़ी चतुराई से अपना घोसला बना लेता है और वह भी ऐसे स्थानो मे जहाँ अन्य प्राणियो का सचार न हो। पेट पालने का तरीका, हुनर या शिल्प-विद्या विज्ञान है तथा आत्मतत्त्व को जानने की विद्या ज्ञान है—"मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयो ।"

शुक्लपक्षी

- मिथ्यात्वी जीव का जब देश ऊन अर्द्ध पुद्गल ससार-भ्रमण बाकी होता है, तब जीव शुक्लपक्षी होता है। शुक्लपक्षी होने पर कितने समय के पश्चात् सम्यक्त्व प्राप्त करे, इसका नियम नही है। प्राचीन सतो की धारणा है कि कोई लघुकर्मी जीव तत्काल भी प्राप्त कर सकता है और कोई दीर्घकाल के पश्चात् भी। शुक्लपक्षी यदि क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो फिर मिथ्यात्वी नही होता। किन्तु क्षयोपशम सम्यक्त्वी हो तो समय पाकर मिथ्यात्व मोह के उदय से मिथ्यात्वी बन सकता है, किन्तु शुक्लपक्षी फिर कृष्णपक्षी नही हो सकता।

शोषण नही पोषण

- यदि किसी को नौकर रखना है तो नौकर रखने वाले चालाकी किया करते हैं। वे सोचते है कि बड़े आदमी को नौकर रखेगे तो वह पैसा ज्यादा लेगा और काम थोड़ा करेगा और हुकूमत मानेगा नही, इसलिए छोटे बच्चे को नौकर रखा जाए जो कम पढ़ा-लिखा हो और छोटे कुल का हो। वह अपनी हुकूमत भी मानेगा और पगार भी थोड़ी लेगा। कभी ऐसा नौकर मिल जाता है जिसको यह कह दिया जाता है कि तुझे रोटी दूँगा, कपड़े दूँगा, रोटी-कपड़ा ले और काम हो सो कर। घर में दस आदमी आ गये तो उस नौकर से कहेगे कि आज तुझे थाल भी रगड़ने पड़ेगे। फिर कहेगे कि आज झाड़ू भी लगा दे। तीसरे दिन कहा कि आज पानी भरने वाली नही आई है तू नल पर से पानी ले आ। वह पानी भी लायेगा। अत्यधिक कम वेतन पर या रोटी कपड़े पर रखा है, उससे कपड़े भी धुला लेगे, बच्चे को रखने का काम भी उसे दे देगे। बच्चा मल-मूत्र कर गया तो उसे भी वह साफ करेगा। इतना काम उससे लिया जाता है। जितना काम लिया है उतना ही ईमानदारी से देना भी चाहिए। उससे अधिक काम लिया है तो वेतन के अलावा अनुदान भी मिलना चाहिए।
- आपका मुनीम है अथवा आप से काम सीखने वाला है। क्या आप उसमे ऐसी क्षमता पैदा कर दोगे कि वह मुनीम ही नही रहे, सेठ बन जाय। ऐसे दिल वाले आप मे से कितने है ? कदाचित् उसकी हैसियत और योग्यता बढ़ने पर नौकरी छोड़कर स्वतन्त्र धन्धा करने की बात कहे तो यह सुनकर आपके मन मे और चेहरे पर फर्क तो नही पड़ेगा ?

श्रमण-जीवन/ साधक-जीवन

- श्रमण के दो अर्थ मुख्य है। एक तो यह कि तप और सयम मे जो अपनी पूरी शक्ति लगा रहा है, तपस्वी है वह श्रमण है। दूसरा अर्थ है 'समण' अर्थात् त्रस, स्थावर सब प्रकार के प्राणियो की जिसके अन्त.करण मे हित-कामना है, वह श्रमण है।
- जो साधक त्रस-स्थावर जीवो पर समभाव रखने वाला होता है, उसके मन मे आकुलता-व्याकुलता और विषम भाव नही होते, वही श्रमण कहलाने का अधिकारी है, उसको 'समन' कहते हैं।

- जिस प्रकार गृहस्थ वर्ग की सम्पदा धन-धान्य और वैभव है उसी प्रकार श्रमण-श्रमणी समाज की सम्पदा सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र है।
- किसी के यहाँ जब कोई अतिथि आता है तो गृहपति अच्छे-अच्छे पदार्थो से उसका सत्कार करता है। सत भी अतिथि है, परन्तु भेंट, पूजा, पैसे लेने वाले नही है। उनका आतिथ्य व्रत-नियम से होता है। सत्सग से आप शिक्षा लेकर जीवन शुद्धि करे, इसी मे सन्तो की प्रसन्नता है।
- शास्त्र और श्रमण सघ की मर्यादा है कि साधु-साध्वी फोटो नही खिंचवाए और मूर्ति, पगल्ये आदि कोई स्थापन्न करे तो उपदेश देकर रोके। रुपये पैसे के लेन-देन मे नही पड़े और न कोई टिकिट आदि अपने पास रखे। साधु-साध्वी स्त्री-पुरुषो को पत्र नही लिखे और न मर्यादा विरुद्ध स्त्रियो का सम्बन्ध ही रखे। तपोत्सव पर दर्शनार्थियो को बुलाने की प्रेरणा नही करे। महिमा, पूजा एव उत्सव से बचे। धातु की वस्तु नही रखे, न अपने लिए क्रीत वस्तु का उपयोग करे।
- सत लोगो का काम तो उचितानुचित का ध्यान दिलाकर रोशनी पहुँचाना, सर्चलाइट दिखाना, मार्ग बताना है, लेकिन उस मार्ग पर चलना तो व्यक्ति के अधीन है।
- साधु सम्पूर्ण त्यागमय जीवन का सकल्प लेकर जन-मानस के सामने साधना का महान् आदर्श उपस्थित करता है। वह रोटी के लिए ही सन्त नही बनता। सत की साधना का लक्ष्य पेट नही ठेट है। वह मानता है कि रोटी शरीर पोषण का साधन है और शरीर उपासना एव सेवा का मूल आधार।
- तप और त्याग के वातावरण मे त्यागी पुरुषो के जीवन का मूक प्रभाव लोगो पर पड़ता ही रहता है और उनकी जीवनचर्या से भी प्रेरणा मिलती रहती है। जैसे पुष्पोद्यान का वातावरण मन को प्रफुल्लित करने मे परम सहायक होता है, वैसे सत-सगति भी आत्मोत्थान मे प्रेरणादात्री मानी गयी है।
- देश और समाज को घर मे व्याप्त अनैतिकता आदि के दश एव समाजघाती कीटाणुओ के दुष्प्रभाव से मुक्त कराने मे, दुष्प्रवृत्तियो की ओर से देशवासियो का मन मोड़ने मे त्यागी सन्त-सतियो का आचारनिष्ठ चरित्र ही समर्थ है। शस्त्रधारी सैनिक डण्डा मार सकता है, मन को नही मोड सकता। मन मोड़े बिना इन बुराइयो को जड़ से दूर नही किया जा सकता।
- जो परोपकारी सन्त-सतीवृन्द त्यागी-विरागी तपस्वी सन्त-समाज सारे देश मे, कोने-कोने मे फैला हुआ है, उसके सत्सग मे, उसके समागम मे आने वाले कितने ही युवक, बाल, वृद्ध और दुर्व्यसनो मे फँसे लोगो के जीवन मे सुधार होता है। बहुतो का हुआ है, हो रहा है और होता रहेगा। प्रत्येक नगर मे, ग्राम मे ऐसे अनेक बालक हैं, धूम्रपान का व्यसन उनको लग गया है और अनेक प्रकार के दुर्व्यसनो के भी शिकार हो गये है। क्या उनका सुधार शस्त्रधारी सैनिको से हो पायेगा ? नही, उनके लिये शस्त्रधारी सैनिक उपयोगी नही, अपितु सन्त-सती जन ही उनके मन को मोड़ सकते है। वे ही लोगो मे फैले दुर्व्यसनो को जड़ से मिटा सकते है और उनकी शक्ति की दिशा को देश के, समाज के अभ्युत्थान के कार्यों की तरफ मोड़ सकते है।
- साधना करने वाले साधको को तीन रूपो मे रखा जा सकता है- (१) चेतनाशील और स्वस्थ (२) चेतनाशील किंतु अस्वस्थ (३) चेतनाशून्य—मात्र वेष को धारण करने वाले । प्रथम चेतनाशील साधक वे हैं जो बिना किसी पर की प्रेरणा के कर्तव्य-साधन मे सदा जागृत रहते है। आचार या विचार मे जरा भी स्खलना आई कि वे तत्काल सभल कर इष्ट मार्ग मे प्रवृत्त होते हैं और अनिष्ट से निवृत्त होते है। विषय-कषाय पर विजय प्राप्त करने

मे प्रतिपल आगे बढ़ना ही जिनकी साधना का रूप होता है। क्रोध, लोभ और भय-मोह के द्वन्द्व से वे कभी साधना च्युत नही होते। जैसे नदी के प्रवाह मे गिर कर भी कुशल नाविक का जहाज गतव्य मार्ग नही भूलता, किंतु प्रवाह को चीर कर बाहर निकल आता है, वैसे ही चेतनाशील स्वस्थ साधक की जीवन-नैया भी विकारो से पार हो जाती है। दूसरे दर्जे के साधक चेतनाशील होकर भी अस्वस्थ होते हैं। आहार-विहार व आचार-विचार मे शुद्धि के कामी होते हुए भी वे प्रमादवश चक्कर खा जाते है और विविध प्रलोभनो मे सहज लुब्ध और क्षुब्ध हो जाते है। उन्हे उस समय किसी योग्य गुरु द्वारा प्रेरणा की आवश्यकता रहती है । जब वे शारीरिक, मानसिक कष्ट मे घबरा जाते है और दृश्य-श्रव्य-भव्य भोगो मे लुभा जाते है, तब कर्तव्य की साधना धुधली हो जाती है । यदि कोई प्रबुद्ध उस समय उन्हे नही सभाले तो वे साधना-मार्ग से च्युत हो जाते है। तीसरे चेतना शून्य साधक है जो व्रत-नियम की अपेक्षा छोड़ कर केवल वेष को वहन करते है। छिपे कुकर्माचरण करने पर भी जब कोई कहता है- "महाराज ! सयम नही पालने की दशा मे वेष क्यो रखते हो ?" तब कहते है-"यह तो गुरु का दिया हुआ बाना है भला इसे कैसे छोड़ सकता हूँ !" इस प्रकार पारमार्थिक साधना को छोड़ कर आरभ परिग्रह का सेवन करने वाले चेतना शून्य साधक है। फिर भी वे वेष व भिक्षावृत्ति को नही छोड़ते । वे बुझे हुए दीपक या पिचर हुई साइकिल की तरह स्वपर के लिये भारभूत है। उन्होने घर-द्वार का त्याग किया, निरारभी-अपरिग्रही मुनिव्रत लिया, किन्तु ससार के मोहक माया-जाल मे सब भूल गये । उनकी साधना मे गति नही रही, अत कल्याण-मार्ग मे सहायक नही हो सकते ।

- दूसरी श्रेणी के जो साधक चेतनाशील होकर भी अस्वस्थ है, सुयोग्य गीतार्थ-गुरु द्वारा यदि उनके मदाचरण के दीप मे साहस का स्नेह न डाला जाय और सारणा-वारणा से विवेक की बाती को ऊपर न उठाया जावे तो सभव है अल्प समय मे ही वह साधना की धीमी-धीमी जलती ज्योति बुझ जाय । मोह की आधी मे वह अविचल नही रह सकती। इसलिये उसे गुरु-गण और सघ-वास मे मर्यादित होकर रहना पड़ता है। आचार्य व सघ का भय तथा लोकलज्जा ही उनकी साधना के प्रमुख आधार है। वे उस विद्यार्थी के समान है जो शिक्षक के सामने और परीक्षा के डर से ही अभ्यास करते है।
- आज श्रमण का जीवन निराला हो गया है। वह साधना के मार्ग से हटता जा रहा है। प्रात व साय प्रतिक्रमण, प्रवचन आदि आवश्यक कार्यो के अतिरिक्त प्राय उसका सपूर्ण समय जनरजन, लोकचर्चा, सगीत व वार्तालाप आदि मे व्यतीत हो जाता है। क्या यही श्रामण्य जीवन का ध्येय है ? क्या इसी के लिए श्रमण बना जाता है।
- जो वदनीय हो गये है वे यदि न तो अध्ययन ही करते है और न सेवा, ध्यान आदि क्रियाएँ ही करते है, केवल उनके मन मस्तिष्क पर लोकैषणा की भावना ही यदि सवार रहती है तो शेर की तरह गर्जते हुए साधना के मार्ग पर कदम रखने वाले सन्तो मे भी आगे जाकर तेज नही रहता है, जिससे उनकी प्रगति रुक जाती है।
- कुछ साधक आगम रहस्यो को जानने की जिज्ञासा को छोड़कर प्राय साधना के उषाकाल से ही भाषा ज्ञान की तैयारी मे सलग्न हो जाते है, जिससे उन्हे आगमज्ञान का अवसर ही नही मिल पाता। जब उच्च परीक्षोत्तीर्ण श्रमण-श्रमणी भी शास्त्रो के ज्ञाता व अध्येता नही हो तो अन्य से आशा करना, आकाश कुसुमवत् ही है।
- जिन साधकों की जिस प्रकार की योग्यता हो उन्हे उसी प्रकार का शिक्षण देना चाहिये। १ वेयावच्ची, २ तपस्वी, ३ लेखक-पण्डित, ४ प्रवचनकार और ५ ध्यानी साधको को उनकी योग्यता के अनुसार आगे बढ़ाना चाहिए।
- जिन साधको मे प्रतिभा की तेजस्विता न हो और जिनके अतर्मानस मे सेवा की महती भावना उद्बुद्ध हो रही हो,

उन्हे सेवा के महत्त्व को समझाते हुए सेवा की कला का ज्ञाता बनाना चाहिये और जो साधक तप की ओर बढना चाहते हो, अपना तपपूत जीवन व्यतीत करना चाहते हो उन्हे तप मे मनोबल बढ़ाने एव बाह्य आडम्बर से अलग-थलग रहने को उत्प्रेरित करना चाहिये। उन्हे रत्नावली, कनकावली और वर्धमान तप की भाति, रस-त्याग आदि तपविधि का परिज्ञान कराया जाना चाहिए। लेखक और विज्ञो के लिए भाषा ज्ञान के साथ ही विविध आगम-शास्त्रो का तुलनात्मक ज्ञान कराना अपेक्षित है।

- प्रमुख प्रवर्ताओ को देश, विदेश की स्थिति का, स्वमत व अन्यमतो का तथा न्याय, दर्शन, साहित्य का अध्ययन कराया जाय और साथ ही उन्हे भाषण-कला प्रवीण भी बनाया जाय।
- सेवा, तपस्या, लेखन, भाषण और ध्यान की यह पचसूत्री योजना कार्यान्वित हो जाय तो मै समझता हूँ कि साधना मे एक नया मोड़ आ जायेगा। आर्यावर्त के महामानव भगवान महावीर ने जीवन की साध्य वेला मे उत्तराध्ययन सूत्र के छब्बीसवे अध्ययन मे समाचारी का जो रूप प्रस्तुत किया है वह निराला है। पच्चीस सौ वर्षो का दीर्घ काल व्यतीत हो जाने पर आज भी वह सर्चलाइट के रूप मे चमक रहा है उसी को आधार मानकर हमे समाचारी का रूप निश्चित करना चाहिए।
- प्रथम प्रहर मे प्रतिलेखन (मौन) स्थडिल और स्वाध्याय करनी चाहिए। द्वितीय प्रहर मे शिक्षा (प्रवचन और पठन) भिक्षा और पन्द्रह मिनिट ध्यान करना चाहिये। तृतीय प्रहर मे नवीन वाचन, लेखन और प्रश्नोत्तर होने चाहिये। चतुर्थ प्रहर मे प्रतिलेखन, समाज चर्चा, स्थडिल और आहार आदि होने चाहिए।
- रात्रि के प्रथम प्रहर मे प्रतिक्रमण के पश्चात् स्तुतिपाठ, आधे घटे तक प्रश्नोत्तर, स्वाध्याय और एक घटे तक ध्यान करना चाहिये। द्वितीय प्रहर मे ध्यान के पश्चात् निद्रा और चतुर्थ प्रहर मे ध्यान, स्वाध्याय और प्रतिक्रमण करना चाहिये। सहस्र रश्मि सूर्योदय के समय प्रभु-प्रार्थना करनी चाहिए।
- जीवन का मूल उद्देश्य साधना है। साधना-विहीन जीवन प्राण रहित कलेवर के समान है, जो चलता नही सड़ता है। साधना की सड़क पर मुस्तैदी से कदम बढावे, अपने जीवन को त्याग, वैराग्य और सयम के रग मे रगे, तभी जीवन उज्ज्वल है एव भविष्य प्रकाशमान है।
- साधु-साध्वियो के लिए सघट्टा जैसी चीज़ साधारण दिखने पर भी अपने मे बड़ा महत्त्व रखती है। जाजम के एक किनारे पर बैठे हुए स्त्री पुरुष का सघट्टा साधारण दृष्टि से हानिकर नही दिखता, परन्तु यह मर्यादा का अतिरेक भी हमे ससर्ग दोष से बचने की प्रबल प्रेरणा प्रदान करता है। ऐसे साधारण नियमो को समझकर अवहेलना नही करनी चाहिये। आत्म-शुद्धि के लिए जैसे कषायो के उपशम एवं क्षपण की आवश्यकता है, वैसे कषाय-विजय के साधन रूप से आहार शुद्धि आदि बाह्य मर्यादाओ की भी आवश्यकता है। उत्तराध्ययन सूत्र मे मोक्ष का स्वरूप बतलाते हुए शास्त्रकार ने कहा है कि ज्ञान का सम्पूर्ण प्रकाश करने, अज्ञान व मोह का निवारण करने और राग-द्वेष का क्षय करने से एकान्त सुख रूप मोक्ष की प्राप्ति होती है। वहॉ पर सम्पूर्ण राग-विजय का मार्ग बतलाते हुए गुरु-वृद्ध की सेवा और स्वाध्याय के साथ एकान्त सेवन एव धैर्य धारण रूप मार्ग कहा है। वीतराग भाव की प्राप्ति हेतु वहॉ उपाय रूप से कुछ बाह्याचारो की ओर भी लक्ष्य रखने का सकेत किया है। ज्ञान, ध्यान, सद्भावना आदि अन्तरग साधनो की तरह आहार-विहार, वेश-भूषा, साहित्य और सगति का भी मन पर बड़ा असर होता है।
- रसों का अत्यधिक सेवन करने से राग की वृद्धि होती है और रागी को कामनाएँ घेर लेती है। इसी प्रकार स्त्रियो

के रूप लावण्य, हास-विलास आदि को मन मे रख कर कभी उन्हे देखने का प्रयत्न न करे।

- राग-रहित साधक सजी हुई देवियों से भी विचलित नही होता, फिर भी एकान्त हितार्थ मुनिजनो को स्त्री आदि विकारी वातावरण से रहित स्थान पर ही ठहरना चाहिए। दशवैकालिक सूत्र मे कहा है कि त्यागीजनों को शरीर की शोभा का वर्जन करना चाहिए। तेल-साबुन आदि से शरीर को सजाना भोगीजनो का काम है । मोह उत्पन्न हो ऐसी हर प्रवृत्ति से बचना ही वीतराग भाव की प्राप्ति का उपाय है।

- (चारित्राचार मे पॉच समिति और तीन गुप्ति के सन्दर्भ मे कई उपादेय परम्पराएँ है। ईर्या समिति मे मार्ग चलते बोलना, कथा करना, हँसना और एषणा मे अन्न-पानादिक की बराबर गवेषणा नही करना, मगाये हुए पदार्थ लेना, एक ही घर मे अमर्यादित जाना, दिन मे तीन बार भिक्षा करना आदि उदयमान की शिथिल परम्पराएँ है। इनको ध्यान मे रखकर उपाश्रय मे ही आहार-आदि लेने या किसी एक घर मे ही खाने की परम्परा डालना उचित नही कहा जा सकता ।)

- उदय भाव के कारण साधक त्याग, तप और व्रत-नियम की साधना करते हुए परीषहो से उद्वेलित हो अस्थिर हो उठता है। यह अनादि काल से कायर जन की परम्परा रही है। अरणक जैसे कुलीन सन्त भी चर्या परीषह मे आतप सहन नही होने से खिन्न हो सयम से विचलित हो गये। माता साध्वी को पता चला तो बड़ा दु.ख हुआ। उसने पुत्र की मन शान्ति के लिए उपदेश दिया और प्रायश्चित्त द्वारा उसे शुद्धि करने की शिक्षा दी। वह चाहती तो पुत्र की सुकोमल स्थिति को देख अपवाद रूप मे जूते धारण करने या लाई हुई प्रासुक भिक्षा लेने की छूट दे देती, पर उसने वैसा नही किया, क्योकि उसे इसमे पुत्र का अहित दृष्टिगोचर हुआ। उसने पुत्र की कायरता दूर कर उसे तप्त शिला पर लेट कर प्रायश्चित्त करने की शिक्षा दी। विवेकशील को चाहिए कि कभी कष्ट से घबरा कर किसी साधक को असमाधि हो तो उपदेश द्वारा स्थिर करने का प्रयत्न करे, न कि "डूबते को दो बॉस" की तरह उसे गिराने की चेष्टा करे।

- विद्वान् यदि दुर्बल परम्पराओ को झकझोर कर सबल बनाने का प्रयास करे, त्याग तप की परम्परा को पुष्ट करे तो शासन सेवा के साथ स्व-पर कल्याण हो सकता है।

- श्रेणिक राजा के पुत्र मेघ कुमार रात्रि मे मुनियो के पैरो की ठेस और रजोहरण आदि के स्पर्श से निद्रा न आने के कारण चचल मन हो, सयम छोड़ने को तैयार हो गये। शैलक मुनि सुख शय्या मे साधना को भूलकर शिथिल विहारी हो गये, पर उनको क्रमश. भगवान महावीर और पथक मुनि ने युक्तिपूर्वक स्थिर किया। साधुओ ने शैलक का सहयोग छोड़ा और पथक मुनि ने भी अवसर देखकर उन्हे कमजोरी का ध्यान दिलाया, परिणाम स्वरूप शैलक उग्र विहारी हो गया। यदि साधु लोग उसके स्थिरवास और शिथिल विहार मे सहयोगी होते तो शैलक का साधक जीवन गिर जाता। वे सदा के लिये स्थिर-वासी हो जाते। सन्तो ने उनका असमाधि भाव ज्ञान से दूर किया। आर्यरक्षित ने अपने प्रिय पिता को छत्र, उपानह आदि की छूट देकर मार्ग मे लगाया और फिर युक्ति-पूर्वक पूर्ण त्याग-मार्ग पर स्थिर किया। यह है सत्य, प्रेम और स्वपर की कल्याण कामना। आज के त्यागियों को इससे शिक्षा लेकर सत् परम्परा से कोई खिन्न भी हो तो उसे स्थिर कर अपने बुद्धि-बल का परिचय देना चाहिए। इसी मे शासन की शोभा और स्वपर का कल्याण है।

श्रावक-कर्त्तव्य

- आचार-पालन का आशय यह नही कि प्रजाजनो को निर्वीर्य होकर, राजकीय शासन के प्रत्येक आदेश को नेत्र बन्द करके शिरोधार्य कर लेना चाहिए। राज्य शासन की ओर से टिड्डीमार, चूहेमार या मच्छरमार जैसे धर्म-विरुद्ध आन्दोलन या आदेश अगर प्रचलित किये जाए अथवा कोई अनुचित कर-भार लादा जाय तो उसके विरुद्ध सत्याग्रह या असहयोग करना व्रत भग का कारण नही है। इस प्रकार का राज्य विरुद्ध कृत्य अतिचार मे सम्मिलित नही होगा, क्योकि वह छुपा कर नही किया जाता। इसके अतिरिक्त उसमे चौर्य की भावना नही, वरन् प्रजा के उचित अधिकार के सरक्षण की भावना होगी। इसी प्रकार अगर कोई शासन हिंसा, शोषण, अत्याचार, अनीति या अधर्म को बढ़ावा देने वाला हो तो उसके विरुद्ध कार्यवाही करना एक नागरिक के नाते उसका कर्त्तव्य है। इसमे कोई धर्म बाधक नही हो सकता। यह कार्यवाही विरुद्ध राज्यातिक्रम मे सम्मिलित नही है।
- श्रावक-धर्म का अनुसरण करते हुए जो व्यापारी व्यापार करता है, वह समुचित द्रव्योपार्जन करते हुए भी देश और समाज की बहुत बड़ी सेवा कर सकता है।
- प्रत्येक जैन कुल मे अमुक नियम अनिवार्य होने चाहिए। एक बार दिन मे व्याख्यान नही सुन सके तो भी धर्म-स्थान पर आकर मौन भाव से १० मिनट के लिए ही सही, धर्म-ग्रन्थ का स्वाध्याय करना चाहिए। ऐसा समाज धर्म हो सकता है।
- प्रतिदिन के कार्य की प्राथमिकता श्रावक की इस प्रकार होती है — १ देव-भक्ति, २ गुरु-सेवा, ३ परिवार एव समाज-सेवा, ४ आरोग्य सरक्षण, ५ व्यवसाय। मेरे मत मे ये पॉच खाने जीवन के बना ले और दिनचर्या के उसी प्रकार पॉच भाग करे। कितना भी आवश्यक कार्य क्यो न हो, नियमित दिनचर्या अवश्य निभावे।
- जिस प्रकार व्यवसाय को आप आवश्यक समझते है, उसी प्रकार नियत समय पर स्वाध्याय और समाज-सेवा भी करे। डायरी मे व्यवसाय को पॉचवा स्थान मिला है, पर आज उलटा हो गया। पहला स्थान व्यवसाय को, दूसरा स्वास्थ्य को, तीसरा परिवार को, और उसके बाद गुरुसेवा और देवभक्ति को आप स्थान दे रहे है। जबकि पहला स्थान देवभक्ति, दूसरा गुरुसेवा, तीसरा समाज-सेवा और चौथा आरोग्य सरक्षण को दिया गया था। आरोग्य नही रहा और पैसा मिल गया तो वह किस काम का? गुरुजनो की सेवा नही कर सका, शास्त्रो का अध्ययन नही कर सका तो चौबीसो घटो कमाया गया पैसा किस काम आया? इसलिए मनुष्य को चाहिए कि पॉचो बातो को ध्यान मे रखते हुए अपने जीवन का उद्धार करे।
- श्रावक-श्राविकाओ को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनका अनुराग किसी भी दशा मे धर्मानुराग की सीमा का उल्लघन न करने पाये। उन्हे साधुओ को भिक्षा देते समय सही स्थिति जता कर भिक्षा देनी चाहिए। चाहे महाराज ज्यादा लेवे अथवा न लेवे तो कोई बात नही। परन्तु उनको कभी अधेरे मे नही रखना चाहिए। कोई वस्तु अपने लिए बनाई या मुनि के लिए बनाई है, या सूझती (निर्दोष) है या नही, यह सब भिक्षार्थ आये हुए मुनि को स्पष्ट रूप से बता देना श्रावक का फर्ज है। विवेकशील श्रावक-श्राविकाओ को साधु-साध्वियो का चारित्र निर्मल रखने मे पूर्ण सहयोग देना चाहिए। श्रावक-श्राविकाओ मे यदि विवेक नही होगा तो साधु-साध्वियो का सयम भी उच्च और निर्मल नही रह सकेगा। इसलिए श्रावक-श्राविकाओ में विवेक का होना तथा उनका अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक रहना परमावश्यक है।

- गन्दे वातावरण का निर्माण करने वाले भी आप हैं और प्रशस्त परम्पराओ की प्रतिष्ठा करने वाले भी आप ही हैं। आपके वातावरण का निर्माण कोई दूसरा नही करता। गंदा वातावरण बनाने मे आप अग्रगामी बनते हैं तो दूसरों को भी प्रोत्साहन मिलता है। इसके बदले अगर आप कोई अच्छी परम्परा शुरु करे तो आपका भी भला हो और दूसरो का भी भला हो सकता है।

षट्कर्म

- शरीर रक्षण मे षट्कर्म को आवश्यक माना गया है। इसी प्रकार ज्ञानियो ने आत्म-रक्षण के लिए भी देवभक्ति, गुरु-सेवा, स्वाध्याय, सयम, तप और दानरूप षट्कर्म का विधान किया है। कहा भी है-

देवर्चा गुरुशुश्रूषा, स्वाध्याय सयमस्तप।
दान चेति गृहस्थाना षट कर्माणि दिने-दिने॥

सघ

- सामान्य रूप से सघ का अर्थ है समूह । अनेक प्राणियो के मिले जुले समूह को सघ कहते है। सेवा, सुश्रूषा, सरक्षण, आदि की सुविधा के लिए मनुष्य अपना कोई समूह बनाकर रहता है। जिसको सघ, समाज आदि किसी विशेष नाम से कहा जाता है।
- हजार पॉच सौ ईंटो को व्यवस्थित जमा दिया जाय तो अच्छी सी दिवाल या चबूतरा हो सकता है, किन्तु उनमे स्थायित्व लाने के लिए चूना, सीमेन्ट या चिकनी मिट्टी जैसा श्लेष जोड़ना पड़ता है अन्यथा कभी भी धक्का खाकर ईट गिर सकती है । ऐसे ही मनुष्य मे भी, स्नेह, श्लेष और सरलता हो तो सगठन टिक सकता है। 'माया मित्ताणि नासेइ' जहॉ कपट है वहॉ प्रेम-मैत्री नही रह सकती।
- जैसे जड़ जगत मे अनत परमाणु मिलकर स्कंध कहलाता है और व्यवहार में उपयोगी होता है वैसे ही अनेक व्यक्ति मिलकर जब सगठित होते है तो उसे सघ कहते है। एक की शक्ति दूसरे से मिलकर वृद्धिगत हो और उसका व्यवहार मे विशेष उपयोग हो सके, यही सघ-निर्माण का मुख्य लक्ष्य है।
- शक्ति एव योग्यता हर व्यक्ति मे है। जब एक से अनेक मिलते है तो उनकी शक्ति भी उसी प्रकार बहुगुणी हो जाती है जिस प्रकार एक से एक मिलने पर ग्यारह गुणे हो जाते हैं। परन्तु इतना ध्यान रहे कि विजातीय या विषम स्वभाव के अणुओ का मेल शक्ति को बढ़ाता नही, घटाता है। इसीलिये सुवर्णखान का पार्थिव पिंड बडा होकर भी उतना मूल्य नही देता जबकि शुद्ध होने पर सुवर्ण का पिंड लघु होते हुए भी बहुमूल्य हो जाता है। ऐसे ही मानव समाज मे भी विषम शील और विरुद्ध आचार-विचार के लोगो का सगठन लाभकारी नही होता।
- गुणहीन सगठन घास की पूली या भारे के समान है और गुणवान सघ घास के रस्से के समान है। घास का भारा और पूली मोटी होकर भी निर्बल होती है और रस्सा पतला होकर भी शक्तिशाली ।
- मिथ्यात्वियों का करोड़ों का समूह ज्ञानादि गुणहीन होने से भवबधन नही काट सकता, परन्तु सम्यग्ज्ञानी छोटी संख्या मे भी ज्ञान आदि गुणो से सशक्त होकर स्व-पर का बधन काट सकते है। यही सुसगठन की महिमा है।
- भगवती सूत्र मे सघ को तीर्थ कहा है 'तित्थं खलु चाउवण्णे समणसंघे' श्रमण प्रधान चतुर्वर्ण सघ ही तीर्थ है, तारने वाला है।

- जैसे साधारण गृहस्थ को आत्म-रक्षण एव विकास के लिये नगर के सुप्रबध की आवश्यकता है वैसे ही मोक्षमार्ग के साधक को प्रमाद और कषायादि के वश साधना से स्खलना या उपेक्षा करने पर योग्य प्रेरणा की आवश्यकता रहती है, जो सघ मे मिल सकती है। सघ मे आचार्य आदि के द्वारा सारणा, वारणा और धारणा का लाभ मिलता रहता है। सघ के आश्रित साधुओं की रोगादि की स्थिति मे सभाल की जाती है, ज्ञानार्थियो के ज्ञान मे सहयोग दिया जाता है, अशुद्धि का वारण किया जाता है और शास्त्र-विरुद्ध प्ररूपणा को टालकर सम्यग् मार्ग की धारणा करायी जाती है। शिथिल श्रद्धा वालो को बोध देना और शिथिल विहारी को समय-समय पर प्रेरणा करना, सघ का मुख्य कार्य है।
- सघ की यह अपेक्षा रहती है कि साधक में घोर तपोबल हो या न हो, विशिष्ट श्रुत के बदले भले ही सामान्य श्रुतधर ही हो, विशाल शिष्य समुदाय की अपेक्षा कदाचित् परिवार हीन हो, पर अखड सयम व सुश्रद्धा की सपदा तो होनी ही चाहिये।
- सघ मे सत्य, सदाचार एव अपरिग्रह के मूलव्रत अखड हो, यह अत्यावश्यक है।
- सघ की शरण इसीलिये ली जाती है कि मदमति साधक उपदेश, आदेश व सदेश मे शास्त्र विरुद्ध प्रवृत्ति न करे, महिमा पूजा के चक्कर मे अकल्प का आसेवन नही करे और साधना मार्ग में समय-समय पर प्रोत्साहन पाता रहे, ज्ञान-दर्शन-चारित्र की सरलता से वृद्धि कर सके।
- सघ शीतल घर की तरह है। सघ मे योग्य साधक स्वय अपने गुण-दोषो का निरीक्षण करता है और साधारण सा भी कही दोष दृष्टिगत हुआ कि अविलम्ब उसका शुद्धीकरण करता है।
- तप-नियम और सयम-श्रद्धा ही संघ-भवन का मुख्य आधार स्तम्भ है। अत. कल्याणार्थी के लिये सदा इस प्रकार के सघ की शरण श्रेयस्कर मानी गई है।
- राज्य शासन मे जैसे ईमानदार सैनिक आवश्यक है ठीक ऐसे ही धर्म शासन मे भी आचार्य, उपाध्याय आदि सुयोग्य शासको के साथ ईमानदार श्रावक-श्राविकाओ का सैन्य दल भी चाहिये श्रावक-श्राविकाएँ साधु-साध्वी के व्यक्तिगत लपेटे मे नही आएँ। वे सघ को मुख्य मानकर सयम के अनुरूप सेवा करे।
- सघ मुख्य है, व्यक्ति मुख्य नही। सघ सदा रहेगा, व्यक्ति सदा नही रहेगा। व्यक्ति चाहे साधु हो, साध्वी हो या श्रावक-श्राविका। व्यक्ति का रक्षण सघ द्वारा होता है। नन्दीसूत्र की स्थिरावली मे तीर्थकर भगवान की स्तुति रूप गाथा तो तीन बताई, पर सघ की महिमा आठ उपमाओ से पन्द्रह गाथाओं मे बताई गई है सघ मेरु है, सघ नगर है आदि-आदि।
- श्रावक रक्षक होता है और रक्षक का कर्तव्य है कि वह साधु-साध्वी के आहार-विहार शिक्षा-दीक्षा और ज्ञान-ध्यान मे निर्दोष मार्ग का सहयोगी रहे।
- हमे जो भी साधना करनी है जिनरजन के लिए करनी है जनरजन के लिए नही। साधना के लिए जिनरजन चाहिये, जनरजन नही। जनरजन के व्यवहार मे साधक-वर्ग मे साधना का लक्ष्य गौण हो जाता है, भले ही उनको अनेक भक्त मिल जायें। खयाल रखो, जनरजन से वाहवाही हो जायेगी, कीर्ति हो जायेगी, लेकिन आत्मोत्थान नही होगा। जिन-रजन मे आत्मा का कही पतन न हो जाए इसका चिन्तन रहता है।
- जिनरजन की रुचि वाले श्रावक अपने आत्मोत्थान के साथ सत-समुदाय को भी वीतराग भगवान और संघ की

आज्ञा-पालन करवाने मे सहयोगी होते है।

- सामान्य जनो मे औरतों से अधिक बाते करने वाला या पैसा रखने वाला सत तो आपको अपराधी रूप मे नजर आता है, पर आज्ञा का उल्लघन करने वाला उस तरह से अपराधी के रूप मे नजर नही आता। आज्ञा का विराधक कम दोषी है ऐसा नही है, आज्ञा सब व्रतो का मूलाधार है।
- हिसा, चोरी, कुशील की तरह आज्ञा उल्लघन या आज्ञा भग करना भी बड़ा अपराध माना गया है।
- सघ मे कोई साधु गलती कर जाय तो सघाधिकारी आचार्य यथोचित प्रायश्चित्त देकर शुद्धि करता है। कभी किसी को अलग भी करना होता है तो यह आचार्य के अधिकार की बात है। श्रावकगण का कर्तव्य आदेश की यथोचित पालना की व्यवस्था करना मात्र है, पर दखल श्रावक के अधिकार की बात नही है।
- साधुओ का नियम है--ध्वनिवर्धक यत्र का प्रयोग न करे, फ्लश का उपयोग न करे, फोटो नही खिंचावे। इसी प्रकार सतो के स्थान पर महिलाओ का और सतियो के स्थान पर पुरुषो का असमय मे आना जाना या बैठना वर्जित है। इन नियमो का परिपालन तभी होगा, जब श्रावको का ईमानदारी से सहयोग रहेगा।

सयम

- वाणी और शरीर के दोषो को काबू कर लेने पर मानसिक दोष धीरे-धीरे नियत्रण मे आ सकते है। मन आखिर वाणी और शरीर के माध्यम से ही तो दौड़ लगाता है। यदि काया को वश मे कर लेगे तो मानसिक पाप स्वय कम हो जाएगे। कभी किसी के मन मे गलत इरादा आया, किन्तु व्यवहार मे वाणी से झूठ नही बोलने का सकल्प होने के कारण उच्चारण नही किया, व्रत मे पक्का रहा तो वह मानसिक तरग धीरे-धीरे विलीन हो जाएगी। इसीलिए बाहर के आचारो का नियत्रण पहले करने की आवश्यकता बतलाई है।
- भगवान महावीर ने साधक को सूचना दी है कि भोजन उतना ही करना चाहिये जिससे सयम की साधना मे बाधा न पहुँचे , आवश्यकता से अधिक भोजन किया जायेगा तो शरीर मे गड़बड़ होगी, मन मे अशान्ति होगी, प्रमाद आएगा और साधना यथावत् न हो सकेगी। स्वाध्याय और ध्यान के लिए चित्त को जिस एकाग्रता की आवश्यकता है, वह नही रह सकेगी। खाने मे संयम रख कर कम खाओगे तो रोग से बचोगे। वचन पर, वाणी पर सयम रखोगे, कम बोलोगे तो राग, द्वेष एव लड़ाई से बचोगे।
- भरपूर युवा वय हो, गृहस्थ जीवन हो, शरीर स्वस्थ हो, सुन्दर रूप हो, फिर भी आदमी अपने आपको वासना से बचा ले, यह तभी हो सकता है जबकि वातावरण पवित्र हो। पवित्र वातावरण मे जो पला हो और सत्सग के सस्कारो मे जिसने वृद्धि पाई हो, वही आगे बढ़ सकता है।
- ससार मे हजारो संत जन हैं। वे अर्थ के पीछे नही दौड़ते, क्योकि उन्होने अपनी कामना को कम कर दिया। निर्वाह के लिये उनको दो समय थोड़ा भोजन चाहिये, पानी चाहिये। जहाँ कही जगह मिली, कपड़ा डाला और लेट गये। कामना अति ही स्वल्प है। दस घरो मे घूमे, न तो आपके खाने मे व्यवधान पड़ा और न हमारी जरूरत मे कमी आई। आपके घर मे मेहमान बन कर चले गये तो आप कहेगे कि महाराज जरा ठहरो, भोजन बन रहा है। लेकिन संत जन एक घर से नही लेकर थोड़ा-थोड़ा अनेक घरो से लेते है, इसलिये वे एक घर पर भार नही बनते।
- गृहस्थ के अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि मूल अणुव्रत हैं, इनके लिये माया, क्रोध, मद, मोह का

मन्द होना परमावश्यक है। जिसका क्रोध मन्द नही हुआ, लोभ मन्द नही हुआ, वह अणुव्रतो और शिक्षाव्रतो का पूरी तरह पालन नही कर सकेगा। जिसके वाणी का सयम नही होगा, वह सत्य-व्रत का पूरी तरह पालन नही कर सकेगा। इसलिये अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन मूलव्रतो की रक्षा के लिये क्षमा,शम,दम की अनिवार्य रूप से परिपालना के लिये तन, मन और वाणी पर नियत्रण होना नितान्त आवश्यक है।

- तपस्या के समय मे लोभ-लालच की मन मे लहर न आने दे। जरा स्वजन-सम्बन्धी और ज्ञाति-जनो को समाचार हो जायेगे, ससुराल वालो को समाचार हो जायेगे, मेरे दोस्त आ जायेगे, बड़े नगर मे पारणा करूँगा तो नगर वाले अच्छा बहुमान कर देगे। यदि यह भावना है कि नगर मे बड़े सघ के सामने पूर होगा तो अभिनन्दन होगा, कीर्ति होगी, इस भावना से कोई तप का पूर बड़ी जगह करता है तो वह सयम नही, असयम होगा।

■ सत-सेवा/सत्सग

- गृहस्थ का त्यागी वर्ग के प्रति धर्म-राग, प्रेम या अनुराग जितना अधिक होगा, उतना ही आरम्भ परिग्रह से गृहस्थ को दूर हटा सकेगा और शान्ति के नजदीक रख सकेगा। किन्तु साधु का आपसे ज्यादा राग हो जाए, ज्यादा निकट बढ़ने लगे, तो उचित नही होगा।
- सन्त का श्रावक-श्राविका के साथ अनुराग सीमातीत होगा तो सन्त की सयम मर्यादा को वह गौण कर देगा। परन्तु श्रावक की सन्त के प्रति अनुराग की सीमा नही होनी चाहिए। वह असीम होना चाहिए।
- धर्माचार्य त्यागी होने से गृहस्थ की सेवाओ को स्वीकार नही करते। जिन वचनो को जीवन मे उतारना और सद्विचारो का प्रसार करना ही उनकी सही सेवा है। शरीर से अयतना की प्रवृत्ति नही करना, वाणी से हित, मित और पथ्य बोलना एव मन से शुभविचार रखना उनकी सेवा है।
- जीवन-निर्माण की दिशा मे मात्र सत्पुरुषो के गुणगान से ही आत्मा लाभ प्राप्त नही कर पाता, इसके लिए करणी भी आवश्यक है और गुणीजनो को भी केवल अपनी प्रशसा भर से वह प्रमोद प्राप्त नही होता, जो कि उनकी कथनी को करनी का रूप देने से होता है।
- महाराज श्रेणिक व्रत ग्रहण नही कर सका, फिर भी सत्सग से उसको सुदृष्टि प्राप्त हो गई।
- भक्त यह नही सोचते कि त्यागियो के पास, साधको के पास, मुमुक्षुओ के पास धन-सम्पदा जैसी वस्तुएँ देने को कुछ नही है तो उनके नजदीक जाकर क्या करे। ऐसा खयाल उन व्यक्तियो को आयेगा जो त्याग और त्यागी की महिमा नही जानते।
- सत यद्यपि छद्मस्थ होते है, तीर्थंकरो की तरह पूर्ण नही होते, तथापि वे ससार को अखूट निधि देते है। लेकिन उनका देना मूकदान है।
- एक समझदार और विद्वान् पुरुष जब मूर्ख के साथ अपना दिमाग लगाता है तो उसकी विद्वत्ता मुरझाती है, विकसित नही होती और जब वह सत्सग मे बैठ कर विद्वानो के साथ सवाद करता है तो उसकी विद्वत्ता का विकास होता है। उक्ति प्रसिद्ध है - वादे-वादे जायते तत्त्वबोध. ।
- ज्ञानी पुरुषो के साथ तत्त्वविमर्श करने से ज्ञान की वृद्धि होती है। उनके साथ किया हुआ विचार-विमर्श सवाद कहलाता है और जब मूर्खों के साथ माथा रगड़ा जाता है तो वह विवाद का रूप धारण कर लेता है और शक्ति का वृथा क्षय होता है। कलह, क्रोध और हिंसा की वृद्धि होती है। तकरार बढ़ती है और स्वय की शान्ति भी

समाप्त हो जाती है।

■ सस्कार

- जिस प्रकार चतुर माली अपने बगीचे मे सफाई करते हुए पेड़-पौधो को समय पर पानी पिलाता है तथा पशु-पक्षियो द्वारा उन्हे नष्ट किये जाने से बचाता है, उसी प्रकार माता-पिता को अपने बच्चो की देखभाल भली प्रकार से करनी चाहिए।
- शैशवकाल मे बालक मे समस्त मानवीय सद्गुणो के अकुर विद्यमान रहते है। अगर उसकी सावधानी से देखभाल की जाए, तो उसमे उत्तम सस्कारो का वपन होगा और बड़ा होकर राष्ट्र का उपयोगी घटक सिद्ध होगा। यह तभी हो सकेगा कि जब अभिभावक स्वय सुसस्कारी हो।
- जीवन को सदाचार ही उन्नत बना सकता है। बुरे कार्यो का त्याग करना एव जीवन मे अच्छे कार्यो को ग्रहण करना ही सदाचार है। यह सदाचार भी हमारी अच्छी-बुरी सगति पर निर्भर है। जीवन मे हम जैसी सगति करेगे वैसा ही हमारा आचार-विचार होगा।
- जैसे पानी (स्वाति) की बूँद यदि गर्म तवे पर गिरे तो भस्म हो जाती है, लेकिन वही बूद केले के पेड़ पर गिरे तो कपूर बन जाती है, साप के मुँह मे गिरे तो विष बन जाती है और वही बूँद सागर की सीप मे गिरती है तो मुक्ता बन जाती है। उसी प्रकार हम जैसी सगति करेगे वैसा ही हमारा आचार-विचार होगा एव विनयादि गुणो की प्राप्ति होगी।
- जो मॉ-बाप बच्चो के शरीर की चिन्ता करते है, किन्तु आत्मा की चिन्ता नही करते, उनके जीवन-सुधार की चिन्ता नही करते, वे सच्चे मॉ-बाप कहलाने के हकदार नही है । वे पिड की निर्मलता की ओर ध्यान देते है, पर उस पिण्ड मे विराजित आत्मदेव की निर्मलता की ओर ध्यान नही देते। यदि मॉ-बाप को अपना फर्ज अदा करना है तो उन्हे अपने बालक-बालिकाओ के चरित्र निर्माण की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए। ।
- जब तक बालक अपरिपक्व दिमाग का है, तब तक उसे जैसा समझाओगे वैसे ही समझ जाएगा। लेकिन कई मॉ-बाप तो लाड़ प्यार के कारण बच्चो को कुछ नही कहते, वे जैसा करना चाहे, वैसा करने देते है और जब-जब जितने रुपये चाहिए तुरन्त दे देते है। इससे बच्चे बिगड़ते है।
- हर माता-पिता यह देखे कि बच्चे-बच्चियो के जीवन मे विकृति कहॉ से आ रही है। यह अच्छी तरह देखने के पश्चात् उनको समझाने का प्रयास किया जाए। समझाने-बुझाने के बाद उन्हे अपने विचार प्रकट करने का मौका दीजिए। जब उनकी समझ मे यह बात आ जायेगी कि अमुक चीज़ से उनको नुकसान है और अमुक चीज से फायदा है तो वे स्वत ही सीधी राह पर आ जायेगे। यह चीज़ उनके दिमाग मे जमा दीजिए कि जो कुछ वे कर रहे हैं, उससे धन, जीवन और समय की हानि हो रही है।
- आपके और हमारे जीवन मे जो थोड़ी बहुत अच्छाई आयी है, वह भी बिना निमित्त के नही आई है। यदि आपके लिए कोई सतो का निमित्त नही बना होता या पूर्वजो का निमित्त नही होता, घर मे अच्छा वातावरण नही होता, सत्सग नही मिलता तो जो थोड़ी बहुत अच्छाई आई है, वह आती क्या? आपने निमित्त का फायदा उठाया तो क्या आपके निमित्त का फायदा दूसरो को नही मिलना चाहिए? यदि आप निमित्त का फायदा दूसरो को नही देगे तो मै यह कहूँगा कि आप कर्जदार रह जाएंगे। इसलिए यदि अच्छा निमित्त बने तो मर्जी आपकी,

वरना बुरा निमित्त तो कम से कम मत बनिये। हर माँ, बाप, स्त्री, भाई, भतीजे आदि का कुछ न कुछ निमित्त होता है। माता-पिता की कमजोरी से बच्चो मे गलत परिणति आ जाती है। गलत निमित्त बनना अच्छा या शुभ निमित्त? शुभ निमित्त बनने के लिए जो अवसर मिले हैं, उनका पूरा उपयोग होना चाहिए।

- दुनिया भर के व्यवहार बच्चो के लिए किये जाते है। उनकी सुख-सुविधा बढ़ाने के लिए, शिक्षा के लिए, धधे मे लगाने के लिए हजारो तरह के प्रयास करते है, व्यवहार करते है। लेकिन उनके आत्म-सुधार के लिए क्या कभी आपने प्रयास किया है, या करते है?
- आप प्रातःकाल उठते ही अपने बच्चो के लिए यह तो चिन्ता करते है कि उन्होने नाश्ता किया या नही। किन्तु उनसे यह नही पूछते कि उन्होने नमस्कार मत्र का स्मरण किया या नही, सामायिक की या नही। उनके जीवन मे शुभ संस्कार बढ़ने चाहिए, इसके लिए आपने क्या किया? यदि यह खयाल नही है तो यही कहा जाएगा कि आपका बच्चो पर मोह है, अनुराग नही।
- बीज अकुरित होकर बढ़ना जानता है, लेकिन किधर बढ़ना, डालियो को किधर फैलाना, इसमे माली की बुद्धि और प्रतिभा का उपयोग लगता है, तभी पौधा सुघड़ और सुन्दर रूप धारण कर लेता है। बीज के लिए जिस तरह माली या कृषक की देखरेख रहती है, उसी तरह बालको के विकास मे माता-पिता की भूमिका होती है।
- हर क्षेत्र मे सुन्दरता के साथ सत्य और शिव भी होना चाहिए। उचित तो यह है कि पहले सत्य और शिव हो, फिर सुन्दर। यही भारतीय सस्कृति की विशेषता मानी गयी है।
- जैसे पोषक शक्ति के अभाव मे शरीर पीला और व्याधिग्रस्त होकर बेकाम बन जाता है, वैसे ही आध्यात्मिकता के अभाव मे भारतीय सतति हतप्रभ और उत्साहविहीन होती जा रही है। इसका मूल कारण है साधना की कमी और माता-पिता से प्राप्त होने वाले सुसस्कार का अभाव।
- घर मे माता-पिता का जैसा व्यवहार होता है, प्रेम या विरोध का जो वातावरण दृष्टिगोचर होता है, सन्तान के मन मे उसका प्रभाव अवश्य पड़ता है। इसीलिए बच्चे को जैसा बनाना चाहते हैं, दम्पती को स्वय वैसा बनना होगा। यदि माता-पिता स्वय विनयशील न होगे तो बच्चे कैसे विनयशील होगे? यदि पिता स्वय की बुढ़िया माँ से ठीक व्यवहार नही करे तो उसके बच्चे बड़े होने पर माँ-बाप से विनय का व्यवहार कैसे रखेगे?
- माता-पिता का यह पुनीत कर्तव्य है कि बच्चो की सद्विद्या का उसी प्रकार ध्यान रखे, जैसे उनके भरण-पोषण का ध्यान रखते है।
- यदि बालक को दृढ़ सुसस्कार दिये गये तो वह विदेश जाकर भी ठगाएगा नही और यदि सुसस्कार का बल नही रहा तो उसके भ्रष्ट हो जाने की अधिक सभावना रहती है।
- जब माताओ का समय भोजन, शृगार आदि मे चला जाए और पतियो का बाजार, आफिस-सिनेमा और क्लब आदि मे, तो ऐसे घरों के बच्चो का भगवान ही मालिक है। वे सुधरे या बिगड़े दूसरा कौन देखे? जिन बच्चो को बचपन मे धर्म-शिक्षा की घूंटी नही मिलती, बड़े होने पर उनमे धर्मरुचि कहाँ से आएगी?
- वे माता-पिता अपराधी है जो बालक को सच्चे ज्ञान से वंचित रखते है और उसे आरम्भ से ही उन्नत जीवन का पाठ नही पढ़ाते। क्योंकि बालक का दायित्व पालक पर है, बच्चे तो अबोध और अज्ञानी होते है।
- जिस घर मे धर्म के सस्कार होते हैं, सत्साहित्य का पठन-पाठन होता है और धर्म-शास्त्रो का स्वाध्याय किया

जाता है, जहाँ हसी मजाक मे भी गाली गलौच का या अशिष्ट शब्दो का प्रयोग नही किया जाता है और नैतिकतापूर्ण जीवन व्यतीत करने का आग्रह होता है उस घर का वातावरण सात्त्विक रहता है और उस घर के बालक सुसस्कारी बनते है। अतएव माता-पिता आदि बुजुर्गों का यह उत्तरदायित्व है कि बालको के जीवन को उच्च, पवित्र और सात्त्विक बनाने के लिए इतना अवश्य करे और साथ ही यह सावधानी भी रखे कि बालक कुसगति से बचा रहे।

- पिता बन जाना बड़ी बात नही है। बड़ी बात है अपने पितृत्व का सही ढग से निर्वाह करना यह बात प्रत्येक पुरुष को पिता बनने से पहले ही सीख लेनी चाहिए। जो पिता बन कर भी पिता के कर्तव्य को नही समझते अथवा प्रमादवश उस कर्तव्य का पालन नही करते वे वस्तुतः अपनी सन्तान के घोर शत्रु है और समाज तथा देश के प्रति भी अन्याय करते है। सन्तान को सुशिक्षित और सुसस्कारी बनाना पितृत्व के उत्तरदायित्व को निभाना है। सन्तान मे नैतिकता का भाव हो, धर्म-प्रेम हो, गुणो के प्रति आदरभाव हो, कुल की मर्यादा का भान हो, तभी सन्तान सुसस्कारी कहलायेगी। किन्तु केवल उपदेश देने से ही सन्तान मे इन सद्गुणो का विकास नही हो सकता। पिता और माता को अपने व्यवहार के द्वारा इनकी शिक्षा देनी चाहिए। जो पिता अपनी सन्तान को नीति धर्म का उपदेश देता है, पर स्वय अनीति और अधर्म का आचरण करता है, उसकी सन्तान दम्भी बनती है, नीति धर्म उसके जीवन मे शायद ही आ पाता है।
- विवेकहीन श्रीमन्त अपनी सन्तति को आमोद-प्रमोद मे इतना निरत बना देते है कि पठन- पाठन की ओर उनकी प्रवृत्ति ही नही होती। सत्समागम के अभाव मे वे आवारा हो जाते है। आवारा लोग उन्हे घेर लेते है और कुपथ की ओर ले जाकर उनके जीवन को नष्ट करके अपना उल्लू सीधा करते हैं। आगे चलकर ऐसे लोग अपने कुल को कलकित करे तो आश्चर्य की बात ही क्या?
- पटाखो के बदले बच्चो को यदि दूसरे खिलौने दे दिये जाएँ तो क्या उनका मनोरजन नही होगा? पटाखो से बच्चो को कोई शिक्षा नही मिलती। जीवन-निर्माण मे भी कोई सहायता नही मिलती। उनकी बुद्धि का विकास नही होता। उलटे उनके झुलस जाने या जल जाने का खतरा रहता है। समझदार माता-पिता अपने बालको को सकट मे डालने का कार्य नही करते। किस उम्र के बालक को कौनसा खिलौना देना चाहिए जिससे उसका बौद्धिक विकास हो सके, इस बात को भली-भाति समझ कर जो माता-पिता विवेक से काम लेते है, वे ही अपनी सन्तान के सच्चे हितैषी हैं।

■ सस्कृति-रक्षण

- आज हमारे वर्तमान जीवन में सामूहिकता, पारिवारिक सद्भावना, धर्मनिष्ठा और ज्ञान की आचरणशीलता टूट-टूट कर बिखर रही है और प्रत्येक क्षेत्र मे स्वार्थमूलकता, वैयक्तिक लिप्सा तथा सग्रहशीलता घर करती जा रही है। पाश्चात्य सभ्यता और भौतिकता की अतिशयता के अन्धानुकरण ने व्यक्ति-व्यक्ति मे खोखलापन, अलगाव, गैर जिम्मेदारी, फैशन-प्रियता और बाह्य आडम्बर की बलवती स्पृहा भर दी है। ऐसे समय मे व्यक्ति को नैतिक, धार्मिक, सवेदनशील, सहिष्णु, कर्त्तव्यनिष्ठ और आत्मोन्मुखी बनने की दिशा मे कारगर कदम उठाने चाहिए।

समाज-एकता

- समाज पक्ष मे आपको कारीगर बनना है, मजदूर नही। कैची नही बनकर सुई बनना है। कैची एक बड़े कपड़े को काटकर अनेक टुकड़े कर डालती है, जबकि सुई अनेक बिखरे हुए टुकड़ो को सिलती हुई बढ़ती जाती है। ऐसे ही श्रावको को अपने सघ मे एकता लाने के लिए सुई की तरह व्यवहार करना चाहिए। इसके बिना जिनशासन का हित नही हो सकेगा।
- मानव जितना ही गुणग्राहक और सत्य का आदर करने वाला होगा, उतना ही ऐक्य निर्माण-कार्य सरल एव स्थायी हो सकेगा। 'कारणाभावे कार्याभाव' इस उक्ति के अनुसार भेद के कारण मिटने पर भेद स्वय ही समाप्त हो जाते है।
- चिमटी बजाते है तो अगुली के साथ अगूठा मेल करता है तभी चिमटी बजती है। मेल नही करे तो नही बज सकती।
- भीतर मे जो क्रोध का जहर है, उस जहर को निकालकर उसके स्थान पर अमृत बरसाना है। अमृत बरसायेगे तो आपकी हृदय तत्री से आवाज उठेगी—हम आग लगाना क्या जाने, हम आग बुझाने वाले है।
- अहिसक समाज और स्वाध्याय सघ के सदस्यो का तो सकल्प होना चाहिए कि कभी भाई-भाई मे आपस मे टकराव हो भी जाये तो भीतर मे ही निपट लेगे। इस उदाहरण के अनुसार चलेगे तो बहुत प्रमोद होगा और हम समझेगे कि महावीर की वाणी ने आप पर असर किया है। ऐसी दृष्टि रखकर चलने से लाखो के जीवन मे शान्ति उत्पन्न होगी। महावीर की वाणी का यही सार है।
- समाज के लोग साथ बैठे है, कभी सभा, सोसाइटी या मीटिंग मे एक दूसरे का मत नही मिले, एक-दूसरे के साथ आपस मे बोल-चाल का मौका आ जाय, क्रोध आ जाय, तेज बोल गए तो आपका कर्तव्य है कि आये हुए क्रोध को दबा दे, शान्त कर दे।

समाज-सुधार

- सामूहिक जीवन मे परिवर्तन लाने के लिये विशिष्ट प्रयोगो की आवश्यकता होती है, वहाँ एक कोने मे बैठे रहने से काम नही चलता। सार्वजनिक जीवन मे सुधार करने की भावना वाला देखता है कि यह गदगी इस तरकीब से दूर की जा सकती है। उदाहरणार्थ होली के अवसर पर लोग आमतौर से गदी गालिया बकते हैं और गन्दे गीत गाते है। ऐसी स्थिति मे सामूहिक चिन्तन वाला, सामूहिक शुभ चेतना देने वाला कोई तरुण या कोई सस्था उसका समुचित और सफल प्रतीकार सोचेगा। वह गन्दे गीतो की जगह नयी शैली के शुभ गीत जनता के समक्ष रखेगा। वह इस विचार के दस-बीस तरुणो को तैयार कर लेगा और जब दस-बीस हो जाएगे तो अपनी टोली को और अधिक बढ़ा लेगे। इस प्रकार एक दिन वे सामूहिक जीवन को नयी दिशा मे मोड़ देने मे समर्थ हो सकेगे।
- हमारे स्थानवासी समाज मे ऐसा कोई रूप नही है जिससे साधु-साध्वी देश-विदेश जाकर धर्म-प्रचार कर सके, धर्म-ध्यान करा सके। आज कई भाई कहते हैं कि साधुजी महाराज आप यहाँ क्यो बैठे हैं, विदेशो मे जाओ और वहाँ धर्म का प्रचार करो। सभी काम हमसे करवाना चाहते है। समाज की सफाई का काम भी साधुओ से

करवाना चाहते हैं। एक बाई आई और कहने लगी-"महाराज'। मेरा पुत्र मेरा कहना नही मानता। आप उसे समझाओ" मैंने उससे पूछा-'बेटा किसका है?' तो वह बोली 'मेरा है'। जो अपने बेटे-बेटियो को नही सुधार सकते वे समाज को सुधारने की जिम्मेदारी कैसे ले सकते है?

- मैं समाज के भीतर की कमजोरियो को, बुराइयों को (अखाद्य-भक्षण, अपेय-पान, अगम्य-गमन आदि दुष्प्रवृत्तियो के द्वारा, दुर्वृत्तियो के द्वारा जो विकार समाज में प्रविष्ट हुए हैं उनको) नगे रूप में बाहर प्रस्तुत करना, समाज की शक्ति मे, समाज के मानस मे दुर्बलता लाने का कारण समझता हूँ। इसके विपरीत मै यह सोचता हूँ कि इन दुर्बलताओं को बाहर प्रकट करने के बजाय उनके उपचार प्रस्तुत कर इलाज किया जाए, जिससे कि समाज मे ऐसे विकार प्रविष्ट ही न हो तथा जो विकार प्रविष्ट हो गये है वे बढ़े नही और पुराने विकारो को, पुरानी बुराइयो को जो समाज मे व्याप्त हैं, उन्हे धीरे-धीरे प्रभावी और कारगर ढग से निकाला जाए।
- मेरे चिन्तन ने मुझे एक मार्ग प्रस्तुत किया कि यदि कोई सामूहिक कार्यक्रम समाज के सामने प्रस्तुत हो और समाज उस कार्यक्रम को अपना ले तो समाज मे व्याप्त बुराइयॉ दूर हो सकती हैं, समाज मे प्रविष्ट हुए विकार दूर हो सकते है। भाषणो से ये बुराइयॉ दूर हो जाए, ऐसी आशा नही है। व्यक्तिगत रूप से कुछ लोगो को पकड़ने से भी ये बुराइयाँ दूर नही हो सकती है। ये बुराइयॉ तो एक सबल सामूहिक कार्यक्रम को समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने से ही दूर हो सकती हैं। इसी प्रेरणा से समाज के सामने एक भावना मैंने व्यक्त की कि जो भाई किसी नैतिक बधन मे बधे हुए नही है, उनको सामायिक के सामूहिक कार्यक्रम द्वारा नैतिकता की सीमा मे, नियमो मे बाधकर सामायिक करने की शिक्षा दी जाए। इसी प्रेरणा से सामायिक सघ की स्थापना हुई। सामायिक सघ के नियम बनाये गये। एक घड़ी के लिए भाई और बहने सामायिक लेकर बैठ जाए और जो इन नियमो का पालन करे वे सामायिक सघ के सदस्य बन सकते हैं। इस प्रकार मैंने एक उपाय समाज के सामने प्रस्तुत किया। इस तरह किया जाये तो समाज मे जो बुराइयॉ घर कर गई है, उनका निकन्दन हो सकता है।
- आपको तोड़-फोड़ की ओर नही, निर्माण की ओर बढ़ना है। हमारे समाज का, एक आदर्श समाज के रूप मे निर्माण कैसे हो, इस ओर विशेष ध्यान देकर आपको बड़ी निष्ठा, तत्परता और लगन के साथ अनवरत अथक परिश्रम करना है।
- किसी को बड़ा काम मिल गया तो वह समझता है कि छोटा काम कैसे किया जाए। आस-पास की जमीन पर कचरा पड़ा है, और उसे यदि ओघे से पूंजता है तो लोग समझेगे छोटा-मोटा महाराज है। यहॉ पर जाजम पर बैठने से पूर्व यदि आपसे कहा जाए कि झाडू लगाने वाला नही आया है, इस हॉल को साफ करना है, तो आपमे से कितने भाई इसके लिए तैयार होगे?
- कोई लखपति-करोड़पति सेठ आ गया तो आप उसकी इज्जत करते है। यह आपने पैसे की इज्जत की। इसी तरह कोई शास्त्रों का ज्ञाता या विद्वान आवे और आप उसका हाथ थामकर आगे करते है तो यह ज्ञान का सम्मान होगा। इसी प्रकार कोई बारह व्रतधारी श्रावक आये और आप उसका आदर करेगे तो वह व्रत का आदर होगा।
- जब तक व्यक्ति अपने स्वय के जीवन का निर्माण नही कर लेता तब तक वह दूसरो के समक्ष खड़ा होकर सुधार की कोई बात कहेगा तो उसका स्वय का मानसिक बल एव आत्मबल अशक्त और निर्बल होने के कारण उसकी वाणी मे ओज तथा तेज का अभाव होगा। उसके कथन का कोई प्रभावकारी परिणाम नही होगा। इस

प्रकार उसके हाथ मे लिया गया समाज-सुधार, राष्ट्र-सुधार अथवा विश्व-सुधार का कार्य आगे नही बढ सकेगा। इसीलिए भगवान महावीर ने फरमाया है कि सुधार की दिशा मे सबसे पहले स्वय को सुधारो और तत्पश्चात् दूसरो के सुधार की बात करो।

- यदि पापी हमारे सद्प्रयत्नो से नही सुधर पाता तो भी उसके ऊपर क्रोध न कर माध्यस्थ भाव की शरण लेनी चाहिए। ऐसा व्यक्ति दया का पात्र है, क्रोध का नही। किसी पाप कर्म के कारण किसी भी व्यक्ति को मारने की अपेक्षा उसे समझाने या सुधारने का प्रयत्न करना अच्छा है और यदि प्रयास के बाद भी वह नही सुधरे तो तटस्थ भाव को ग्रहण कर लेना चाहिए। क्योकि समस्त प्राणियो के प्रति प्रेम, मैत्रीभाव एव दया ही मानवता का मूलोद्देश्य है।
- कोई व्यक्ति धर्म के लिए समाजसेवा या प्रचार मे अपना समस्त जीवन लगा दे, फिर भी समाज यदि उसके प्रति आदर न करे तो ऐसे व्यक्ति की सत्प्रवृत्ति आगे कैसे बढ़ेगी? कोई सोना, चादी, भूमि, भवन, पशुधन आदि परिग्रह की अपेक्षा यदि गुणो की ओर अधिक ध्यान लगावे तो ऐसे सद्गुणियो का समाज मे आदर होना चाहिए।
- कोई शीलव्रत ग्रहण करे और उसकी खुशियाँ मनाए तो वह ठीक है पर बाल-बच्चे पैदा किये, विषयो का सेवन किया, इसकी खुशियाँ मनाएँ तो वह धन का उन्माद ही कहा जाएगा।
- समाज मे जन्म, मरण एव मृत्यु पर अनेक गलत रूढ़ियाँ चल रही है, चाहे वे हानिकारक ही हो, किन्तु साधारण मनुष्य इस पर विचार नही करते। महिलाएँ तो गलत रीति-रिवाजो मे और भी अधिक डूबी रहती है। जलवा पूजना, चाक-पूजन, जात देना, ताबीज बाधना, देव और पितर की पूजा करना, मरे हुए के पीछे महीनो बैठक रखना और रोना- ये सब कुरीतियाँ समाज मे दृढ़ता से घर बनाए हुए हैं। इनके निवारण हेतु दृढ सकल्प की जरूरत है।
- समुद्र मे विशाल सम्पदा है, वह रत्न राशि को पेट मे दाबे रहता है और सीपी घोघो आदि को बाहर फेकता है। इस पर किसी कवि ने उसको अविवेकी बतलाया है। वास्तव मे यह ललकार उस समाज को है, जो गुणियो को भीतर दबाकर रखे और वाचालो को बाहर लावे। जो समाज गुणियो का आदर और वात्सल्य करना नही जानता, वह प्रशसनीय नही कहलाता।
- आवेगपूर्ण बातो से कई बार मारपीट और समाज मे विष तक प्रसारित हो जाता है। अत व्रती को व्यर्थ की पटेलगिरि या गप्पबाजी मे नही पड़ना चाहिए।
- पिछड़े एव असस्कृत जनो के सुधार के लिए कोरा कानून बना देने से कोई विशेष लाभ नही होगा। असली और मूलभूत बात है उनकी मनोभावनाओ मे परिवर्तन कर देना। मनोभावना जब एक बार बदल जाएगी तो जीवन मे आमूलचूल परिवर्तन स्वत आ जाएगा फिर उनकी सन्तति-परम्परा भी सुधरती चली जाएगी।
- अगर आप अपने किसी एक पड़ौसी की भावना मे परिवर्तन ला देते है और उसके जीवन को पवित्रता की ओर प्रेरित करते हैं तो समझ लीजिए कि आपने समाज के एक अग को सुधार दिया है। प्रत्येक व्यक्ति यदि इसी प्रकार सुधार के कार्य मे लग जाए तो समाज का कायापलट होते देर न लगे।
- जीवन के प्रत्येक कार्य मे समाज का प्रत्येक सदस्य यदि इस बात का ध्यान रखे कि उसका कोई भी कार्य दूसरे के लिये किसी प्रकार की कठिनाई पैदा करने वाला एव भारस्वरूप न हो, तो समाज मे परिग्रह-प्रदर्शन तथा

परिग्रह बढ़ाने की होड़ समाप्त हो सकती है और येन-केन प्रकारेण अधिकाधिक परिग्रह उपार्जन के पाप से समाज काफी अशों मे बच सकता है।

- आज प्राय यह देखा जाता है कि समाज मे परिग्रह-प्रदर्शन, आडम्बर और दिखावे मे धन का अपव्यय किया जाता है। परिग्रह-प्रदर्शन की सर्वत्र होड़ सी लगी हुई है, जो वस्तुत. साधारण स्थिति के स्वधर्मी बन्धुओ को परेशानी मे डालने वाली, दुःखदायी और उन पर अनावश्यक भार डालने वाली है। यही होड़ यदि सामाजिक सुधार, धार्मिक अभ्युत्थान और धार्मिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार मे लगे, तो कितने सुखद परिणाम निकल सकते हैं ? एक अति सुन्दर आदर्श समाज का निर्माण हो सकता है, जन-जन के मानस मे धार्मिक चेतना की अमिट लहर उत्पन्न हो सकती है। समाज का धार्मिक और नैतिक स्तर उन्नत हो सकता है।
- साधक को स्तुति के अमृत की तरह बिष के प्याले भी पीने पड़ते हैं। जरा-सा भी सामाजिक कार्य मे चूका कि लोग उसकी अच्छाइयाँ भूलकर निन्दा करने लग जाते है, सामाजिक जीवन का यह दूषण है। साधारण कार्यकर्ता ऐसी स्थिति मे आगे नही बढ़ता। अत शास्त्र मे कहा है — महिमा-पूजा और निन्दा-स्तुति की अपेक्षा छोड़कर साधना या कार्य करो।
- किसी राहगीर को कोई बच्चा भी कहे कि आगे काँटे या गड्ढा है, तो वह बुरा नही मानकर राजी होगा। आप भी आलोचक की बात मे लेने जैसा हो तो ग्रहण कीजिए।
- समाज-व्यवस्था के लिये सबमे भाईचारा हो तो घर की बात घर मे ही निपट जायेगी। बाहर किसी को खेल देखने का मौका न देवे।
- समाज मे कितने ही ऐसे गलत रिवाज होगे, जिनमें धनहानि, मानहानि, धर्महानि एव ज्ञानहानि भोगकर भी लोग उन्हे छोड़ने को तैयार नही होते। माता-पिता के जीते जी चुल्लू भर पानी नही देने वाले व्यक्ति मरने के बाद मृत्युभोज कर उनकी गति करना चाहते है। कैसी हँसी की बात है, घर मे शोक-रुलाई और आपके मुँह मे मिठाई, कितना लज्जास्पद दृश्य है। समाज मे नीति धर्म के शिक्षण के लिए व्यवस्था नही, फिर भी मौसर मे खर्च किया जायेगा। यह ऐसी ही स्थिति है, जैसे एक किसान के क्यारे तो सूख रहे है, पानी नही, पर नाली मे भरपूर बहा रहा है।

समाज-सेवा/सेवा

- समाज-सेवा करना हर व्यक्ति का कर्तव्य है। धन वाले धन देकर सेवा करे, दिमाग वाले दिमाग से सेवा करे। जो बोलना और प्रचार करना जानते हो वे शुभ कार्य का प्रचार करे। ऐसी मिली-जुली ताकत से आप अपनी शक्ति का दान करेगे तो समाज सुखी रहेगा। अहिसक सस्कृति सही रूप मे बढ़ेगी तो भगवान की सच्ची सेवा होगी, हमारे जैसे सत को भी प्रमोद होगा।
- आप लोग गद्दी पर बैठ कर काम चलातें है, लेकिन महाजनो की लड़कियाँ दूसरो के यहाँ पानी भरती है। दूसरो के यहाँ सिलाई का काम करती है, आटा पीसती हैं। कई ऐसी बहिनें है जो गाँवो मे गोबर चुन कर लाती है और अपना गुजर चलाती हैं। पहले घर-घर दी जाने वाली हाँती से कमजोर स्थिति वालो की गुजर चलती थी। समाज में जब उसका वितरण होता था तब किसी बुढ़िया के घर पहुँचते ही लापसी के नीचे मुहर रख कर लापसी के बहाने मुहर उसके घर पर पहुँचा दी जाती थी।

- समाज मे पचासो भाई-बहन ऐसे है जिनके खाने-पीने को भी सुबह शाम व्यवस्था बराबर नही होती है। कई भाई ठेला घुमाकर अपना पेट भरते है। महाजन की बेटी दूसरो के यहाँ रसोई करके पेट भरती है। जैसे बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएँ है वैसे ही कुछ कमजोर लोग भी है। लेकिन बूद-बूद से घड़ा भरता है, यह सोचकर उनका सहयोग करना चाहिए।
- समाज का कोई बच्चा गलत रास्ते पर चला गया है तो उससे घृणा नही करके उसे समझाने की कोशिश करे अच्छे मार्ग पर लगाने की कोशिश करे तो वह सुधर जायेगा।
- किसी समय यह कहा जाता था कि स्थानकवासियो मे खर्चा कम होता है। लेकिन आज तो लाखो रूपये खर्च होते है। सन्तो की थोड़ी सी आवाज निकलेगी तो एक-एक व्यक्ति उनके इशारे पर अपनी भूमि, कोठी और लक्ष्मी छोड़ सकते है। उनके प्रति इतनी श्रद्धा है, असर है। फिर भी हम लोग आगे क्यो नही बढ़े? श्रद्धा के साथ ज्ञान और विवेक चाहिये। इनकी कमी के कारण पैसा गलत मार्ग मे भी जाने लगता है। लाखो रुपये हर साल खाली स्थानकवासी समाज का खर्च हो जाता है। उस रुपये से कुछ वर्षो मे समाज के लोगो के लिये, बच्चो की शिक्षा के लिये, उनकी व्यवस्था के लिये कितना बडा काम हो सकता है।
- हर जैन भाई-बन्धु जो ज्ञानी है, समाज के स्तम्भ कहलाने वाले है वे इतना भी सकल्प करे कि हम १२ व्रतधारी श्रावक नही बन सकते, ५ महाव्रतधारी साधु नही बन सकते तो जो व्रती बनने वाले है, ज्ञानी बनने वाले है, धर्म के लिये जीवन अर्पण करने वाले है उनकी रक्षा करेगे। धन से , मन से, तन से और वाणी से रक्षा करेगे। लेकिन ठोकर किसी को नही मारेगे। तन से भी ठोकर नही मारेगे, मन से भी ठोकर नही मारेगे और धन्धा-बाड़ी से भी ठोकर नही मारेगे, टकरायेगे नही। यदि आप इतना सा भी सकल्प कर ले तो मै कहूगा कि इससे समाज का बडा हित हो सकता है।
- हमारा समाज-सेवा का कार्य आगे नही बढ़ता। काम करने वाले कुछ सम्मान चाहते है और काम कराने वाले चाहते है कि सम्मान किस बात का दे? "ए तो घर का टाबर है, इणा रो भी फर्ज है, म्हारे ऊपर एहसान करे कई। बाहर का आदमी होवे तो सम्मान भी देवा।" समाज के अगुआ उनको सम्मान देवे नही और काम करने वालों का नाम आवे नही। नतीजा यह होता है कि काम करने वाले, बाहरी समाज का काम करेगे। आर एस एस का काम करेगे, काग्रेस का काम करेगे, लेकिन समाज का क्षेत्र खाली रह जायेगा।
- जो भाई-बहन उपवास करते है वे अपना समय खेलो मे, प्रमाद मे, पिक्चर देखने मे नही लगावे। प्रतिक्रमण करे, आलोचना करे, सत्सग की आराधना करे। समाज-सेवा का मौका आवे तो उसे करे, लेकिन धर्म-क्रिया को नही छोड़े। आप धर्मक्रिया करते है और दूसरा ऐसा नही करता है तो उसे नास्तिक कहकर उसका तिरस्कार नही करे, उसको भी प्रेम से गले लगावे।
- समाज मे ऐसे कितने लोग है जो यह कहे कि मेरी बहने और भाई जो आर्थिक दृष्टि से कमजोर है उन भाई-बहनो की मदद करना, वात्सल्य करना मेरा काम है, क्योकि मेरे पास दो पैसे का साधन है और इनके पास नही है। इनकी मदद नही करूँगा तो मेरी हल्की होगी।
- किसी रोगी की सेवा करनी है, उसका मल साफ करना है, उसका शरीर और मल-मूत्र से खराब कपड़े साफ करने है। यह काम तभी किया जा सकेगा जबकि ग्लानि या सूग मिटेगी। जिसको यह खयाल होगा कि यह काम मेरे करने का थोड़े ही है तो वह स्वय सेवा का आनन्द नही ले सकेगा।

- मॉ-बाप बीमार हो जावे तो कुछ रुपये खर्च करके अस्पताल मे उनके इलाज की व्यवस्था कर देते है, लेकिन घर में मॉ-बाप की सेवा करना मुश्किल है। इसका मतलब यह नही कि उनकी सेवा करने वाला कोई नही है। सेवा करने वाला बेटा है, लेकिन उसकी आत्मा मे घृणा भाव हैं, इस कारण वह माता-पिता की सेवा नही कर पाता। सेवा करने वाले को भूखा भी रहना पड़े। सर्दी मे कपड़े पूरे न रहे तो सहन करना पड़े। यदि लड़का सेवाभावी है तो वह अपने मॉ-बाप के कपड़े भी साफ कर रहा है, मल-मूत्र भी साफ कर रहा है। कोई उससे यह कहे कि यह काम तुम क्यो कर रहे हो, कोई नौकर नही है क्या? तो वह कहेगा कि नौकर तो है लेकिन मेरा अहोभाग्य है कि मॉ-बाप जिन्होने मुझे जन्म दिया है उनकी सेवा करने का मौका मिला है। उनकी सेवा नही करूँगा तो किसकी करूँगा?
- जो लोग अज्ञानतावश मच्छी बेचते, शिकार करते और पशु बेचकर आपको पैसा चुकाते है, आप लोग उनको सान्त्वना देते हुए पाप की बुराई समझावे और कुछ सहानुभूति रखे तो उनका जीवन सुधर सकता है हिंसा घट सकती है और थोड़े त्याग मे अधिक लाभ हो सकता है। सम्पन्न लोगो को इस ओर ध्यान देना चाहिए।
- धन से सेवा करने वाले के द्वारा की जाने वाली मदद कभी रुक सकती है। लेकिन तन वाला, मन वाला, वाणी बल वाला, दिमाग बल वाला जो है उसके द्वारा की जाने वाली सहायता का रास्ता कभी बद होने वाला नही है।
- धर्म और शास्त्र की सेवा वही करेगा जिसके दिल मे ओज, तेज, वीरता और कर्तव्यपरायणता हो। जिसमे वीरता, तेज और ओज नही है, जो जीवन का भोग देने को तैयार नही है, वह धर्म की सेवा नही कर सकेगा।

समाधि-मरण

- अपना शरीर छूटने का काल नजदीक प्रतीत हो , उस समय ज्ञानदृष्टि को जागृत रखकर सोचना है कि शरीर और आत्मा अलग हैं। शरीर क्षणभगुर एव नाशवान है तो आत्मा अविनाशी एव ज्ञानमय है। रोग-शोक शरीर को होते है, आत्मा को नही।
- मरण से दुनिया डरती है, परन्तु ज्ञानी मरण को महोत्सव मानते है। जैसे मुसाफिर खाने को मुसाफिर मुद्दत पूरी होते ही खुशी से छोड़ देता है, ऐसे ही ज्ञानी स्थिति पूरी होते ही स्वेच्छा से शरीर का परित्याग करने हेतु तत्पर रहता है।
- ज्ञानी शरीर की वेदना से व्याकुल नही होता। वह उस समय अधिक से अधिक आत्मशुद्धि का ध्यान रखता है।
- उत्तम मरण के लिये इन्द्रियो के विषय और मन की कलुषित वृत्तियों का सर्वथा परित्याग करके ससार के समस्त प्राणिसमूह से क्षमायाचना कर निरजन निराकार परमात्मा के शुद्ध स्वरूप मे ध्यान रखना ही कल्याण का मार्ग है।
- जीवनकाल मे लगे दोषो का भगवत् चरणो मे निवेदन कर हार्दिक प्रायश्चित्त , समस्त पापो का मनसा, वचसा, कर्मणा परित्याग, जीवमात्र से क्षमायाचना कर मैत्रीभाव, पुत्र, मित्र, कलत्र और इस शरीर तक से ममता का परित्याग कर समाधिमरण का वरण करना चाहिए।
- दुर्गुणी मानव परिग्रह के पीछे हाय-हाय करते मरता है। किन्तु ज्ञानी भक्त मरते समय सद्गुणो का धन सभालता है। अतएव लड़की जैसे ससुराल से पिता के घर जाने मे प्रसन्नचित्त होती है, वैसे वह भी परलोक की ओर

हँसते-हँसते जाता है और आनदित होता है। हर मानव को ऐसी ही साधना करनी चाहिए और ऐसी तैयारी रखनी चाहिए, जिससे कि वह हँसते-हँसते इस ससार से प्रस्थान कर सके।

- जीवन सुधार से मरण सुधार होता है। जिसने अपने जीवन को दिव्य और भव्य रूप मे व्यतीत किया है, जिसका जीवन निष्कलक रहा है, और विरोधी लोग भी जिसके जीवन के विषय मे अगुलि नही उठा सकते, वास्तव मे उसका जीवन प्रशस्त है। जिसने अपने को ही नही, अपने पड़ौसियो को, अपने समाज को, अपने राष्ट्र को और समग्र विश्व को ऊँचा उठाने का निरन्तर प्रयत्न किया किसी को कष्ट नही दिया मगर कष्ट से उबारने का ही प्रयत्न किया, जिसने अपने सद्विचारो एव सद्‌आचार से जगत के समक्ष स्पृहणीय आदर्श उपस्थित किया, उसने अपने जीवन को फलवान बनाया है। इस प्रकार जो अपने जीवन को सुधारता है वह अपनी मृत्यु को भी सुधारने मे समर्थ बनता है, जिसका जीवन आदर्श होता है उसका मरण भी आदर्श होता है।
- कई लोग समझते है कि अन्तिम जीवन को सवार लेने से हमारा मरण सवर जाएगा, मगर स्मरण रखना चाहिए कि जीवन के सस्कार मरण के समय उभरकर कर आगे आते है। जिसका समग्र जीवन मलिन, पापमय और कलुषित रहा है, वह मृत्यु के ऐन मौके पर पवित्रता की चादर ओढ़ लेगा, यह सभव नही है। अतएव जो पवित्र जीवन यापन करेगा वही पवित्र मरण का वरण कर सकेगा और जो पवित्र मरण का वरण करेगा उसी का आगामी जीवन आनन्दपूर्ण बन सकेगा।

सहिष्णुता/सर्वधर्म सहिष्णुता

- ससार मे ऐसे बहुत से लोग है, जो कहते है-"जो हमारे धर्म के विरोधी है, जो हमारी आराधना को, हमारी साधना को, हमारी भक्ति को और हमारे मन्तव्यो को नही मानने वाले है, उन लोगो को अगर मार दिया जाय तो कोई पाप नही होगा।" ऐसी मान्यता मानने वाले लोग ससार मे बहुत है। ईसा को इसीलिए सूली पर चढ़ना पड़ा। लाखो लोग धर्म के नाम पर मानव के खून के प्यासे है। विदेशो मे रगभेद को लेकर आज भी आए दिन मानव द्वारा मानव का खून बहाने की अप्रिय घटनाएँ घटित होती है। लेकिन धर्म के नाम पर यह सब अनुचित होता है।
- आज के सार्वजनिक मत-भेद और झगड़ो का प्रधान कारण असहिष्णुता ही है। आज से पहले भी जैन, वैष्णव, मुसलमान आदि अनेक मत और वल्लभ, शाक्त, शैव, रामानुज आदि विविध सम्प्रदाये थी, परन्तु उनमे विचार भेद होने पर भी सहिष्णुता थी। इसी से उनका जीवन शान्ति व आराम से व्यतीत होता था।
- गाधीजी ने अपने अनेक व्रतो मे एक 'सर्वधर्म-समभाव' व्रत भी माना है। उसकी जगह 'सर्वधर्म सहिष्णुता' मान लिया जाय तो उनके मत से हमारी एक वाक्यता हो सकती है।
- विभिन्न धर्मों के मानने वाले अनेक मनुष्य प्रत्येक धर्म पर एकसा आदर भाव कभी नही रख सकते। कहने के लिये भले ही, हम सब धर्म पर सम-भाव रखते है, यह कहकर अपना उदार भाव प्रगट करे, किन्तु जब तक आप मे अज्ञानता, मोह और राग द्वेष है, समभावकी प्राप्ति कोसो दूर है और तब तक ऐसी प्रौढ़ उक्ति भी सच्ची नही हो सकती।
- आजकल लोग नेता ही बनना पसन्द करते हैं, चाहे नेतृत्व की शक्ति, गुण या क्षमता का लेश भी नही हो। सिपाही बनना कोई नही चाहता। बन्दूक धरने की अक्ल न रखते हुये भी सब जनरल ही बनना चाहते हैं।

किन्तु हरेक व्यक्ति अपने देश या समाज का मुखिया, नायक एवं नेता नही बन सकता।

- हृदय की सकीर्णता को उदारता मे, हठ धर्मिता को सहिष्णुता मे पलटने से जब विचारो मे सार बुद्धि पैदा होकर विचार-सहिष्णुता आ जाती है तब मनुष्य दूसरो के विचार से अपने विचार को मिला कर आगे बढ़ता है और देश तथा समाज का कल्याण-विधाता या नव निर्माता बनता है। यह है धर्म नीति पर चलने का मगलमय परिणाम।
- दश बीस ही नही, शत सहस्र सम्प्रदाये भी क्यो न हो, तुम घबराओ नही। हृदय को उदार बना एक दूसरे को समझने की कोशिश करो। भ्रातृत्वभाव बढाओ। प्रेम का वातावरण तैयार करो। क्षमा से हृदय को लबालब भर लो, फिर देखो सम्प्रदाय रह कर भी सम्प्रदायवाद का जहर दूर हो जायेगा। आज की सम्प्रदायो मे जो भयकर जुदाई का, परायेपन का असर प्रतिभासित होता है वह तीव्र वायु वेग मे बादल की तरह उड़ जायेगा और परस्पर के स्नेह सम्बन्ध से एक दूसरे की अभिवृद्धि होगी तथा शोभा बढ़ेगी।

साधर्मि-सेवा

- हजारो बछड़ो के बीच एक गाय को छोड़ दीजिये। गाय अपने ही बछड़े के पास पहुँचेगी उसी तरह लाखो-करोड़ो आदमियो मे भी साधर्मी भाई को न भूले।
- आज लोग आडम्बर मे, थोथे बाह्याडम्बरो मे लाखो, करोडो की धनराशि खर्च कर देते है, जबकि दूसरी ओर समाज के लाखो भाई-बहन ऐसी कमजोर स्थिति वाले है, हजारो ऐसी विधवाएँ है, हंजारो ही ऐसे होनहार बालक है, बालिकाएँ है, जो अभाव की स्थिति मे बड़े ही कष्ट से अपना गुजर-बसर कर रहे है।
- कोई भाई लखपति था, लेकिन विवाह आदि मे अधिक खर्च हो गया और कर्जा हो गया, यह बात आपको साधर्मी भाई होने के नाते मालूम है, किन्तु इस बात को बाहर प्रकट करने मे उसका व्यावहारिक रूप गिरता है तो आप उसकी कमजोरी प्रकट नही करे। इसके अतिरिक्त कोई साधर्मी भाई उदार है, व्रतधारी है, गुणी है, हजारो के बीच मे बैठा है, लेकिन लोग उसको जानते नही है तो उसके गुणो की बड़ाई लोगो के सामने करके उसको चमकाना, उसके गुणो का अनुमोदन करना अभीष्ट हो सकता है।
- जहाँ साधर्मी वात्सल्य है वहाँ किसी को देनदारी के कारण आत्महत्या करने का अवसर नही आयेगा, क्योकि जागरूक समाज किसी व्यक्ति को दुःख के कारण मरने नही देगा, हर सभव उसकी सहायता करेगा। कोई भाई बीमार है तो उसके साथ सहानुभूति दिखाने से उसका आधा रोग चला जायेगा। तन से, धन से डिगने वाले को स्थिर करना आपका काम है। मन से, श्रद्धा से डिगने वालो को मजबूत करना हमारा काम है।
- जिस भक्ति-प्रदर्शन की रीति-नीति मे स्वधर्मी भाइयो का कष्टनिवारण नही किया जाता, उनको वात्सल्य की दृष्टि से देखने का किञ्चित्मात्र भी प्रयास नही किया जाता और स्वधर्मी बन्धुओ के मुरझाये हुए मुख कमल प्रफुल्लित कर उन्हें धर्म-मार्ग मे स्थिर नही किया जाता तो उस सारे बाह्याडम्बर को विडम्बना मात्र ही समझना चाहिये। सतो की प्राचीन वाणी ने ठीक कहा है-

> न कय दीणुद्धरणं, न कय साहम्मियाण वच्छल्लं।
> हिअयम्मि वीअराओ, न धारियो हारिओ जम्मो॥

अर्थात्-सामर्थ्य शक्ति पाकर भी यदि दीनो का उद्धार नही किया, सहधर्मी भाइयो से वात्सल्य-प्रेम नही किया,

उनके दुःख को अपना दुःख समझ कर मिटाने का प्रयत्न नही किया और हृदय मे वीतराग प्रभु की आज्ञा को धारण नही किया तो सब कुछ करके भी उसने अपना जन्म व्यर्थ ही गवा दिया।

- लोग भक्ति के सही स्वरूप को समझ कर स्वधर्मियो से वात्सल्य करे, अहिसा के प्रचार मे अपनी शक्ति लगावें और पीड़ितो को बन्धुभाव से देख कर उनके दुख दूर करे तो धर्म की बड़ी प्रभावना हो सकती है। उसके बिना आडम्बरो मे करोड़ो का व्यय करना कोई अर्थ नही रखता। ऐसा प्रतीत होता है कि पापानुबन्धी पुण्य से अर्जित सम्पदा ने आज लोगो की बुद्धि पर पर्दा डाल दिया है, बुद्धि को मलिन कर दिया है अथवा मति को हर लिया है। वह लोगो मे सुमति आने नही देती। केवल भक्ति का दिखावा करने मे ही मति चलती है, शेष सभी श्रेयस्कर कार्यो मे सुमति कुण्ठित हो कर रह जाती है।
- एक ही चाबी को घुमाने से ताला बन्द होता है और उसी को घुमाने से ताला खुल जाता है। मन ही बुरे भावो से कर्म बध करता है और अच्छे भावो से कर्म तोड़ता है। ससार मे तन के प्रति, कुटुम्ब-कबीले के प्रति, भाई-भतीजो के प्रति राग की भावना से बध होता है। लेकिन देव, गुरु व धर्म के प्रति, धर्मी-ससार के प्रति, धर्मी-सघ के प्रति यदि अनुराग है तो उससे कर्मो की निर्जरा होती है, शुभ कर्मो का बन्ध होता है, ससार मे शान्ति मिलती है, परलोक मे सुख मिलता है।
- आपको एक बात यह समझनी है कि जैन सघ को ऊँचा उठाना है, जैन समाज मे शान्ति लानी है, प्रियजनो और गुरुजनो का मान रखना है तो जैन समाज को साधर्मी वत्सलता भी सीखनी पड़ेगी।
- जो देव, गुरु और धर्म पर श्रद्धा रखता है, जो अरिहन्त को देव मानता है, निर्ग्रन्थ को गुरु मानता है और केवलियो के धर्म को धर्म मानता है, ऐसे भाई को दुख मे देखकर आपके हृदय मे तड़फन आनी चाहिए। उसके रहने और खाने-पीने की व्यवस्था नही, धन्धा नही तो उसकी सहायता करनी चाहिए।
- बुजुर्गों मे ऐसी कहावत है कि पाली वगैरह कुछ ऐसे स्थान थे जहाँ पर कोई नया जैन भाई बाहर से आकर बसता तो उसको एक-एक ईट और एक-एक मुहर सोने की हर घर से दी जाती। धर्मी भाई सोचते कि हर घर से एक मुहर और एक ईट दी जायेगी तो उस भाई की आर्थिक स्थिति ठीक हो जायेगी और वह अपना धधा शुरू करके घर चला सकता है। लोग सोचते, बाहर से कोई भाई हमारे नगर मे आया है, वह इधर-उधर हाथ पसार कर नही रहे, बराबरी का भाई बनकर रहे। ऐसा समझते थे, तब जैन समाज मे सुख-शान्ति थी और समाज सब का प्रेम-पात्र था। आज भी जैन समाज को ऊँचा उठने का मौका मिलते रहना चाहिए।

सामायिक

- इस ससार मे जितने भी दुख, द्वन्द्व, क्लेश और कष्ट है वे सभी चित्त के विषमभाव से उत्पन्न होते है । इन सबके विनाश का एकमात्र उपाय समभाव है । समभाव वह अमोघ कवच है जो प्राणी को समस्त आघातो से सुरक्षित कर देता है। जो भाग्यवान समभाव के सुरम्य सरोवर मे सदा अवगाहन करता रहता है, उसे ससार का ताप पीड़ा नही पहुँचा सकता। समभाव वह लोकोत्तर रसायन है, जिसके सेवन से समस्त आतरिक व्याधियाँ एव वैभाविक परिणतियाँ नष्ट हो जाती है। आत्मा रूपी निर्मल गगन मे जब समभाव का सूर्य अपनी समस्त प्रखरता के साथ उदित होता है तो राग, द्वेष, मोह आदि उलूक विलीन हो जाते है। आत्मा मे अपूर्व ज्योति प्रकट हो जाती है और उसके सामने आलोक ही आलोक प्रसारित हो उठता है।

- सामायिक का अभ्यास वह अभ्यास है, जिससे आदमी अपने आपको चारित्र-मार्ग मे ऊँचा उठा सकता है।
- पॉच प्रकार के चारित्र मे पहला सामायिक चारित्र है। सामायिक मे सम्पूर्ण पापो का त्याग होता है। स्वाध्याय कहने से श्रुत अर्थात् ज्ञान आ गया और सामायिक कहने से क्रिया आ गई। स्वाध्याय और सामायिक में मुक्ति का मार्ग पूरा का पूरा आ गया। शास्त्रो मे 'ज्ञानक्रियाभ्या मोक्ष' इन दो मार्गो से तथा 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्ग:' इन तीन मार्गो से और तप का पृथक् उल्लेख कर 'सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र-तप' इन चार मार्गो से भी मुक्ति बताई है, वह सब इन दो मे -स्वाध्याय और सामायिक मे आ जाता है।
- दु ख का वास्तविक कारण आर्थिक विषमता नही, मानसिक विषमता है। यह मानसिक विषमता सामायिक की साधना द्वारा समताभाव लाकर मिटाई जा सकती है।
- साधना की अपेक्षा से सामायिक सम्यक्त्व, श्रुत, आगार और अनगार के भेद से चार प्रकार की होकर भी मूल मे एक ही है। गृहस्थ विषय-कषाय के प्रगाढ पक मे रहकर भी क्षणिक समभाव की उपलब्धि कर सके, राग-रोष के जोर को घटा सके, इसलिए आचार्यो ने उसे सामायिक की शिक्षा दी है। समय, उपकरण और विधि की अपेक्षा परम्परा भेद होने पर भी सामायिक के मूल रूप मे कोई अतर नही है। मौलिक रूप से आर्तध्यान, रौद्रध्यान तथा सावद्य कार्य का त्याग कर मुहूर्त्त भर समता मे रहना सामायिक है। कहा भी है-

  'त्यक्तार्तरौद्रध्यानस्य, त्यक्तसावद्यकर्मण -
  मुहूर्त समतायास्त विदु सामायिक व्रतम् ।।

- सामायिक मे कोई यह नही समझले कि इसमे कोरा अकर्मण्य होकर बैठना है। सामायिक-व्रत मे सदोष प्रवृत्ति का त्याग और पठन-पाठन, प्रतिलेखन, प्रमार्जन, स्वाध्याय, ध्यान आदि निर्दोष कर्म का आसेवन भी होता है। सदोष कार्य से बचने के लिये निर्दोष मे प्रवृत्तिशील रहना आवश्यक है।
- सामायिक-साधना करना अपने घर मे रहना है। सामायिक से अलग रहना बेघरबार रहना है । सामायिक साधना करना आत्मा का घर मे आना है। काम, क्रोध आदि विकारो से परिणत होना पराये घर मे जाना है।
- सामायिक के दो रूप है—साधना और सिद्धि। श्रुत सामायिक से साधना का प्रारम्भ और उदय होता है। वह विकास पाकर ज्ञान और चारित्र के द्वारा आत्मा मे स्थिरता उत्पन्न करती है। यह आत्म-स्थिरता ही सामायिक की पूर्णता समझनी चाहिए। इसे आगम की भाषा मे अयोगी दशा की प्राप्ति कहते हैं।
- साधक की दृष्टि से सामायिक के अनेक प्रकार किये गये हैं। स्थानाग सूत्र मे आगार सामायिक और अनगार सामायिक दो भेद हैं। आचार्यो ने तीन प्रकार भी बतलाये है—सम्यक्त्व सामायिक, श्रुत सामायिक और चारित्र सामायिक।
- सम्यक्त्व सामायिक मे यथार्थ तत्त्व श्रद्धान होता है। सम्यक्त्व की प्राप्ति होने पर ही श्रुत के वास्तविक मर्म को समझा जा सकता है। श्रुत सामायिक में जड़-चेतन का परिज्ञान होता है। सूत्र, अर्थ और तदुभय रूप से श्रुत के तीन अथवा अनक्षरादि क्रम से अनेक भेद है। श्रुत से मन की विषमता गलती है, अत श्रुताराधन को श्रुत सामायिक कहा है।
- चारित्र सामायिक के आगार और अनगार दो प्रकार किये हैं। गृहस्थ के लिए मुहूर्त्त आदि प्रमाण से किया गया सावद्य त्याग आगार सामायिक है। अनगार सामायिक मे सम्पूर्ण सावद्य-त्याग रूप चारित्र जीवन भर के लिए होता है। आगार सामायिक में दो करण तीन योग से हिंसादि पापो का नियत काल के लिए त्याग होता है,

जबकि मुनि-जीवन मे हिंसादि पापो का तीन करण तीन योग से आजीवन त्याग होता है।

- सावद्ययोगों के त्याग का नियम लेने से सामायिक एक व्रत है। इसे शिक्षा व्रत माना गया है । इसमे साधक पापवृत्ति न करने का सकल्प लेता है। फलस्वरूप उसका चित्त शान्त होता है। सम होने के साथ-साथ शान्ति बढ़ती जाती है। और शान्ति बढ़ने के साथ चित्त की साधना भी बढ़ती जाती है। चित्त की समता रूप अवस्था ही सामायिक चारित्र है।
- आप जब सामायिक करे, उस समय एक घण्टा पालथी आसन से बैठकर सामायिक का अभ्यास करना चाहिए। प्रतिदिन इस प्रकार का नियमित अभ्यास करते रहेगे तो आगे चलकर इससे आपको अपनी इन्द्रियो पर काबू पाने मे, चित्त को एकाग्र करने में बड़ी सहायता मिलेगी।
- सामायिक मे सावद्ययोगो की द्रव्य निवृत्ति तो की, पर परिवार वालो की ओर आपका मन चला गया, घर वाले याद करते होगे, अब तो जल्दी ही घर जाऊँगा, मकान की मरम्मत करवानी है। इसके साथ ही दूसरी विचारधारा चली कि बाजार से सब्जी लानी है, अमुक प्रकार की साग-भाजी बनवानी है, फल-फूल लेने है, रस निकालना है, कुए से पानी निकालना है, आदि-आदि रूप से आपका चिन्तन चला तो आपकी वह सामायिक द्रव्य दृष्टि से ही सामायिक हुई, भाव दृष्टि से नही हुई। इसलिए सामायिक पर पूरा पहुँचने के लिए अभ्यास की आवश्यकता रहती है। यदि आप निरन्तर अभ्यास करते रहेगे तो बाहर की द्रव्य विरति की तरह सावद्ययोगो की भाव से भी निवृत्ति कर सकेगे।
- सामायिक सघ वाले और स्वाध्याय सघ वाले कही इस बात को भूल न बैठे, सदा इस बात को ध्यान मे रखे कि सामायिक, बिना स्वाध्याय के शुद्ध नही हो सकती और स्वाध्याय बिना सामायिक के आगे नही बढ़ सकता। यदि सामायिक को आगे बढ़ाना है, विशुद्धिपूर्वक करना है, आध्यात्मिक प्रगति करना है, तो उसके लिए स्वाध्याय बहुत जरूरी है, यह एक अनुभूत तथ्य है। बहुत सोचने पर मुझे यह निष्कर्ष मिला है और यही निष्कर्ष मैंने आपके सामने रखा है।
- आप मे से बहुत से भाई सामायिक करने के अभ्यासी हैं, पर सामायिक की साधना का कोई दायित्व नही समझा है। थोड़ी माला फेर ली, कुछ स्तवन बोल दिये और सामायिक का समय पूरा कर लेते है। वे भूल जाते है कि सामायिक साधना की क्या विधि है, क्या व्यवस्था, क्या-क्या नियम है? सामायिक-साधना कोई साधारण वस्तु नही। वस्तुत सामायिक एक बहुत बड़ी योग-साधना है। पतञ्जलि ने पातञ्जल योग सूत्र मे योग के आठ अंग बताये है। योग के जो आठ अग यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि रूप मे बताये गये है, वे आठो सामायिक मे पूर्ण होते है।
- हमारी माताएँ सामायिक ग्रहण करने मे आपसे आगे है, पर सामायिक मे प्रमाद-सेवन मे, विकथा करने मे भी वे आपसे आगे है। वे सामायिक मे अपने घर की, पर घर की, खाने-पीने की सभी प्रकार की बाते कर लेगी। यहाँ तक कि सामायिक मे विवाह-सम्बध की बात भी पक्की कर लेगी। इसीलिए सामायिक की साधना जो एक बड़ी साधना मानी गई है, वह तेजहीन हो जाती है।
- सामायिक जैसे उच्च व्रत की साधना खिलवाड़ न बने, उपहास और आलोचना की बात न बने और उसकी विशुद्धता, शक्ति और तेजस्विता आगे बढ़े, इसके लिए स्वाध्याय परम औषधि है, बहुत बड़ा साधन है। शास्त्र ने जो 'ज्ञानक्रियाभ्या मोक्ष' कहा है, उसी को-' स्वाध्याय-सामायिकाभ्या मोक्ष' इन दूसरे शब्दो मे कहा जा सकता

है। उधर ज्ञान और क्रिया, इधर सामायिक और स्वाध्याय।))

- मन मे गर्व, क्रोध, कामना, भय आदि को स्थान देकर यदि कोई सामायिक करता है तो ये सब मानसिक दोष इसे मलिन बना देते है। पति और पत्नी मे या पिता और पुत्र मे आपसी रंजिश पैदा हो जाए तब रुष्ट होकर काम न करके सामायिक मे बैठ जाना भी दूषण है। अभिमान के वशीभूत होकर या पुत्र, धन, विद्या आदि के लाभ की कामना से प्रेरित होकर सामायिक की जाती है तो वह भी मानसिक दोष है। अप्रशस्त मानसिक विचारो के रहते सामायिक से आनन्द या लाभ के बदले उलटा कर्म बन्ध होता है।

- सामायिक के समय शारीरिक चेष्टाओ का गोपन करके स्थिर एक आसन से साधना की जाती है। चलासन और कुआसन, सामायिक के दोष माने गए है। अगर कोई पद्मासन या वज्रासन आदि से लम्बे काल तक न बैठ सके तो किसी भी सुखद एव समाधिजनक आसन् से बैठे, किन्तु स्थिर होकर बैठे। पालथी आसन या उत्कटुक आसन से भी बैठा जा सकता है, किन्तु बिना कारण बार-बार आसन न बदलते हुए स्थिर बैठना चाहिए।

- आप सामायिक मे सीधे-सादे रूप मे, सीधे-साधे वस्त्रों मे बैठे है। इससे आपके पास बैठे दूसरे सामायिक कर रहे भाई का अपमान नही होगा। पर सामायिक मे भी अगर आप अपने अग-प्रत्यग पर आभूषण लाद कर, चमकीले-भड़कीले वस्त्रालकार पहन कर बैठेगे तो इससे दूसरो का एक प्रकार से अपमान होगा।

- सामायिक करने वाले सैकड़ो हजारो भाई-बहिनो को जिस ध्यान से श्रवण करना चाहिए, जिस विधि से व्रत करना चाहिए, वे उस विधि से नही कर रहे है, इसीलिए जो आनन्द आना चाहिए वह नही आ रहा है। सामायिक करने वालो के सामने कोई करोड़पति सेठ आ जावे, कोई गवर्नर आ जावे या कोई सेल्स टैक्स का इन्सपेक्टर आ जावे तो भी उनका कलेजा हिलना नही चाहिए। लेकिन यहाँ तो कोई साधारण बाई या भाई भी पचक्खाण करने के लिए आ जावे, बाहर के चार-पॉच मित्र आ जावे तो उनकी गर्दन घूम जायेगी। गर्दन घूम गई तो आपकी सामायिक स्थिर नही होगी। यदि इस प्रकार की वृत्ति चलती रही तो आगे नही बढ़ सकेगे।

- जिस तरह घर से निकलकर धर्मस्थान मे आते है और कपड़े बदलकर सामायिक साधना मे बैठते है उसी तरह से कपड़ो के साथ-साथ आदत भी बदलनी चाहिए और बाहरी वातावरण और इधर-उधर की बातो के खयाल को भुला देना चाहिए। यदि इस तरह से सामायिक करेगे तो बहनो और भाइयो को अवश्य लाभ होगा।

- आपने सामायिक का व्रत लिया। सामायिक व्रत मे आपकी निवृत्ति किससे हो? 'सावज्जजोग पच्चक्खामि'-भगवन् ! जो भी सावद्य—पाप सहित काम होगा, उसका मै त्याग करता हूँ। त्याग कर दिया, लेकिन अगीकार किया क्या, यह आपको याद नही है। आपने सावद्य योग का त्याग किया, उसके साथ निरवद्य योग को ग्रहण करके उसका अनुपालन और आचरण भी आवश्यक है।

- माताएँ-बहिने सामायिक मे बैठी-बैठी लम्बा चौड़ा प्लान बना डालती है और अधिकांश समय बताशा, नारियल और वेश की बातो मे बिता देती है। सामायिक मे इस तरह की बाते करने से सवर-निर्जरा नही होकर राग-द्वेष बढ़ता है।

- ससार मे मानव चौबीसो घण्टे आरम्भ-परिग्रह एव विषय-कषाय में तल्लीन रहता है। उसके कर्मबन्धन को हल्का करने के लिए सामायिक साधना बताई गई है।

- जैन धर्म मे 'सामायिक' का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह सभी साधनाओ की भूमि है। पौषधादि सभी व्रत

सामायिक से प्रारम्भ होते है। तीर्थंकर भगवान् भी जब साधना मार्ग मे प्रवेश करते है तो सर्व प्रथम सामायिक चारित्र स्वीकार करते है। जैसे-आकाश सपूर्ण चराचर वस्तुओ का आधार है वैसे ही सामायिक चरणकरणादि गुणो का आधार है।

"सामायिक गुणानामाधार, खमिव सर्वभावानाम।
न हि सामायिकहीनाश्चरणादिगुणान्विता धन॥

- बिना समत्व के सयम या तप के गुण टिक नही सकते। हिसादि दोष सामायिक मे सहज ही छोड़ दिये जाते है। अत आत्म-स्वरूप को पाने की इसे मुख्य सीढ़ी कह सकते है। 'भगवती सूत्र' मे स्पष्ट कहा है—

आया खलु सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे।

अर्थात् आत्मा ही सामायिक है और आत्मा (आत्म स्वरूप की प्राप्ति) ही सामायिक का प्रयोजन है।

- सामायिक तन और मन की साधना है। इस व्रत की आराधना मे तन की दृष्टि से इन्द्रियो पर नियन्त्रण स्थापित किया जाता है और मन की दृष्टि से उसके उद्वेग एव चाचल्य का निरोध किया जाता है । मन मे नाना प्रकार के जो सकल्प विकल्प होते रहते है, राग की, द्वेष की , मोह की या इसी प्रकार की जो परिस्थिति उत्पन्न होती रहती है , उसे रोक देना सामायिक व्रत का लक्ष्य है। समभाव की जागृति हो जाना शान्ति प्राप्ति का मूल मत्र है।
- सामायिक द्वारा साधक अपनी मानसिक दुर्बलताओ को दूर करके समभाव और सयम को प्राप्त करता है। अतएव प्रकारान्तर से सामायिक-साधना को मन का व्यायाम कहा जा सकता है।
- जीवन मे सामायिक साधना का स्थान बहुत ही महत्त्व का है। सामायिक से अन्त करण मे विषमता के स्थान पर समता की स्थापना होती है। उसका अन्य उद्देश्य मानव के अन्तस्तल मे धधकती रहने वाली विषय-कषाय की भट्टी को शान्त करना है।
- जीवन मे जो भी विषाद, वैषम्य, दैन्य, दारिद्र्य, दु ख और अभाव है, उस सब की अमोघ औषध सामायिक है। जिसके अन्त.करण मे समभाव के सुन्दर सुमन सुवासित होगे, उसमे वासना की बदबू नही रह सकती। जिसका जीवन साम्यभाव के सौम्य आलोक से जगमगाता होगा, वह अज्ञान, आकुलता एव चित्त विक्षेप के अन्धकार मे नही भटकेगा।
- सामायिक की साधना के लिए द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव इन चारो की शुद्धता आवश्यक है। जो हमारी सिद्धि के भावो का, वास्तविक गुणो का कारण होता है वह द्रव्य है। जिस तन से हम सामायिक करने जा रहे है वह उद्वेलित तो नही है, उत्तेजित तो नही है, राग द्वेष से ग्रस्त तो नही है और जिन उपकरणो की सहायता से (यथा-आसन, मुहपत्ती, पूजणी, स्वाध्याय योग्य ग्रन्थ, माला आदि) सामायिक की जा रही है वे साफ, स्वच्छ और शुद्ध होने चाहिए। भावो को बढ़ाने मे वे उपकरण भी सहायक होते है। ये उपकरण शुद्ध, सरल और सादे हो। ऐसा न हो कि माला चादी की हो, पूजणी मे घूघरे लगे हो और मुहपत्ती रत्न जड़ित हो।
- द्रव्य की तरह क्षेत्र शुद्धि भी आवश्यक है। यदि आप चाहते है समता, और बैठते हैं विषमता मे तो समता कैसे आयेगी? जहा बारूद के ढेर हो, वहा कोई रसोई करने की जगह मागे तो क्या होगा ? वहा तो बीड़ी तक पीने की मनाई होती है। यदि उस निषिद्ध क्षेत्र मे कोई बीड़ी पीता पकड़ा जाता है तो वह दड का भागी होता है। जैसे कमाई के लिये दुकान है, पढ़ने के लिये स्कूल है, न्याय के लिए कोर्ट है, उसी प्रकार सामायिक के लिये भी नियत स्थान होना आवश्यक है। कई बार सर्दी के कारण लोग स्थानक में आकर सामायिक नही करते। वे

पलग के पास या रसोई घर में बैठकर सामायिक करते हैं तो समता कैसे आयेगी? विषमता के क्षेत्र मे रहकर समता की साधना नही की जा सकती।

- सामायिक साधक के लिए काल का भी अपना विशेष महत्त्व है। जिस प्रकार भोजन करने का, दवा लेने का, शरीर की आवश्यक क्रियाओ से निवृत्त होने का निश्चित समय निर्धारित होने का लाभ है, उसी प्रकार नियमित रूप से नियत समय पर की जाने वाली सामायिक का अपना विशेष लाभ है।
- सामायिक समभाव की साधना है । सामायिक साधक को प्रतिदिन यह सोचते रहना चाहिये कि उसके विषम भाव कितने कम हुए हैं, और समता कितनी आयी है ? जिस प्रकार बुखार आने पर यदि दो तीन दिनो तक दवाई लेते रहने पर वह नही उतरता है तो दवा बदल दी जाती है। इसी प्रकार आपको सामायिक करते-करते वर्षो बीत गये और मन की वृत्तियो मे कोई बदलाव नही आया तो इस सम्बन्ध मे सोचना चाहिए और प्रयत्न करना चाहिये कि क्रोध कैसे कम हो, झूठ कैसे न बोला जाय, घृणा कैसे दूर हो ? जिस प्रकार दवा रोग मिटाने के लिए ली जाती है उसी प्रकार सामायिक समता लाने के लिये की जानी चाहिये। ऐसा न हो कि दवा तो रोग मिटाने के लिये खाओ और सामायिक केवल रूढ़ि पालन के लिए करो।
- जिस व्यापार से समभाव का विघात हो, वह सब व्यापार अप्रशस्त कहलाता है। साथ ही उस समय "मै सामायिक व्रत की आराधना कर रहा हूँ" यह बात भूलना नही चाहिये। यह सामायिक का भूषण है क्योकि जिसे निरन्तर यह ध्यान रहेगा कि मै इस समय सामायिक मे हूँ, वह इस व्रत के विपरीत कोई प्रवृत्ति नही करेगा। इसके विपरीत सामायिक का भान न रहना दूषण है।
- सामायिक का पहला अतिचार मन. दुष्प्रणिधान है, जिसका तात्पर्य है मन का अशुभ व्यापार। सामायिक के समय मे साधक को ऐसे विचार नही होने चाहिये जो सदोष या पापयुक्त हो। सामायिक मे मन आत्माभिमुख होकर एकाग्र बन जाना चाहिये। एकाग्रता को खण्डित करने वाले विचारो का मन मे प्रवेश होना साधक की दुर्बलता है।
- सामायिक का दूसरा दोष है वचन का दुष्प्रणिधान अर्थात् वचन का अप्रशस्त व्यापार। सामायिक के समय आत्म-चिन्तन, भगवत् -मरण या स्वात्मरमण की ही प्रधानता होती है। अतएव सर्वोत्तम यही होगा कि मौन भाव से सामायिक का आराधन किया जाय। यदि आवश्यकता हो और बोलने का अवसर आए तो भी संसार-व्यवहार सम्बन्धी बाते नही करना चाहिये। हाट, हवेली या बाजार-सम्बन्धी बाते न करे, काम-कथा और युद्ध-कथा से सर्वथा बचते रहे। कुटुम्ब परिवार के हानि-लाभ की बाते करना भी सामायिक को दूषित करना है।
- सामायिक का तीसरा दूषण शरीर का दुष्प्रणिधान है। शरीर के अंग-प्रत्यग की चेष्टा सामायिक मे बाधक न हो, इसके लिये यह आवश्यक है कि इन्द्रियों एव शरीर द्वारा अयतना का व्यवहार न हो। सामायिक की निर्दोष साधना के लिए यह अपेक्षित है। इधर-उधर घूमना, बिना देखे चलना, पैरो को धमधमाते हुए चलना, रात्रि मे बिना पूजे चलना, बिना देखे हाथ पैर फैलाना आदि काय दुष्प्रणिधान के अन्तर्गत आते है। मन, वचन और काय का दुष्प्रणिधान होने पर सामायिक का वास्तविक आनन्द प्राप्त नही होता।
- सामायिक काल मे सामायिक की स्मृति न रहना भी सामायिक का दोष है।
- व्यवस्थित रूप से अर्थात् आगमोक्त पद्धति से सामायिक व्रत का अनुष्ठान न करने से दोष का भागी होना पड़ता है। यह पाँचवा दूषण है। सामायिक अंगीकार कर प्रमाद मे समय व्यतीत कर देना, नियम के निर्वाह के

लिए जल्दी-जल्दी सामायिक करके समाप्त कर देना, चित्त मे विषम भाव को स्थान देना आदि अनुचित हैं।

- श्वेताम्बर परम्परा मे सामायिक के पूर्व वेश परिवर्तन आदि की बहुत सी बाह्य क्रियाएँ अपेक्षित मानी जाती हैं। दिगम्बर परम्परा मे बाह्य क्रियाएँ अति न्यून हैं। श्वेताम्बर परम्परा का मन्तव्य है कि भरत, चिलाती पुत्र आदि को सामायिक बिना पाठ और बाह्य क्रिया के हुई। वे अपवाद रूप है। अन्तर की विशेष योग्यता वाले बिना बाह्य विधि के भी सामायिक कर सकते हैं, किन्तु साधारण साधक के लिये बाह्य विधि भी आवश्यक है।

- आज विविध परम्परा के लोग जब एक जगह पर धर्मक्रिया करने बैठते है, तब भिन्न-भिन्न प्रकार की नीति-रीति को देखकर टकरा जाते हैं, वाद-विवाद मे पड़ जाते है, जबकि धार्मिक-मच सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने का अग्रिम स्थान है। लोकसभा मे विभिन्न प्रकार की वेशभूषा, साज-सज्जा, बोलचाल और नीतिरीति के व्यक्ति एक साथ बैठ सकते हैं, तो फिर क्या लम्बी मुहपत्ती और चौड़ी मुहपत्ती वाले प्रेमपूर्वक एक साथ नही बैठ सकते ?

- वीतराग के शासन काल मे किसी भी सत्यप्रेमी को जो खुले मुँह बोलने मे दोष मानता हो, भले वह मुँह के हाथ लगाकर, कपड़ा लगाकर या मुँहपत्ती बाध कर यतना से बोलता हो तो एक साथ बैठ सकता है। जैसे-मुँहपत्ती बाधने वाले असावधानी से बचना चाहते है वैसे ही उसे हाथ मे रखने वाले भी खुले मुँह नही बोलने का ध्यान रखे तो विरोध ही क्या है ? विरोध असहिष्णुता से , एक दूसरे के दोष बताने मे है। मुँहपत्ती बाधने वाले को थूक मे जीवोत्पत्ति बताकर छुड़ाना और नही बाधने वाले को उसकी परम्परा के विरुद्ध बलात् बधाना विरोध का कारण है । पसीने से गीले वस्त्र की तरह गीली मुँहपत्ती जब तक मुँह के आगे रहती है, भाप की गर्मी के कारण तब तक जीवोत्पति की सभावना नही रहती। इस प्रकार दोनो के मन मे जीव रक्षा का भाव है। हिसा, असत्य, अदत्त,कुशील, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य आदि पाप कर्म का परित्याग भी दोनो का एक ही है।

- सावद्य योग या पापकारी क्रिया चाहे मन की हो, चाहे वचन की हो, जिसमे पापकारी क्रिया है, वह दण्ड का रूप है। सामायिक मे सबसे पहले सावद्य योग रूप दण्ड का त्याग होता है। शिष्य गुरु के चरणो मे निवेदन करता है कि भगवन् ! मै सावद्य योगो का त्याग करता हूँ। जिसमे पाप है, झूठ है, क्रोध है, मान है, माया है, राग है, द्वेष है, जो भी पापकारी प्रवृत्तियाँ है, दण्ड के लायक है, उनको मै छोड़ता हूँ।

- सामायिक को पैसो से नही खरीदा जा सकता। श्रेणिक राजा अपने नारकीय द्वार बन्द करने हेतु पूणिया श्रावक से सामायिक खरीदने चला गया, किन्तु क्या सामायिक का मूल्य आका जा सकता है? श्रेणिक राजा को अपने वैभव पर गर्व था। वह पूणिया श्रावक से सामायिक का मनचाहा मूल्य मागने हेतु कहने लगा। पूणिया श्रावक चुप रहा। फिर उसने श्रेणिक से कहा- सामायिक का मूल्य मुझे ज्ञात नही है । आप भगवान् महावीर से इसका मूल्य ज्ञात कर लीजिए। महावीर ने बताया कि करोड़ो सुमेरु पर्वत भी यदि दिये जाएँ तो वे सामायिक की दलाली भी नही कर सकते।

- वस्तुत सामायिक का धन वैभव से कोई सम्बन्ध नहीं है। धन-वैभव का सम्बन्ध शारीरिक सुख-सुविधाओ से हो सकता है, किन्तु आत्मा से नहीं। धन-वैभव से समता आ ही नही सकती। समता आन्तरिक विषमता को दूर करने पर आती है तथा वही आत्मा का वैभव है।

- एक भाई सादे सफेद कपड़े के आसन पर सादे वस्त्र पहिने सामायिक मे बैठा है और दूसरा भाई गलीचे का आसन लेकर बैठा है। गलीचे वाले को सामायिक का लाभ अधिक मिलेगा या उस सीधे -सादे वस्त्रों में सादे

आसन पर बैठने वाले भाई को ? एक भाई सफेद रंग की सादी सूत से बनी अथवा चन्दन की लकड़ी की माला लेकर बैठा है और दूसरा भाई चादी के मणियों की माला लेकर बैठा है। सेठ साहब अपनी उस चादी की माला को ऊपर उठाकर जोर-जोर से नमस्कार मत्र जप रहे है। इस तरह से सेठ साहब सामायिक कर रहे है या सब लोगो के सामने अपनी साहिबी का प्रदर्शन कर रहे हैं ? अथवा अपने सब भाइयो को बेईमान समझने की भावना प्रदर्शित कर रहे हैं या अपने बड़प्पन का भोडा प्रदर्शन कर रहे हैं ? सामायिक मे बैठकर भी आपका यह खयाल हो गया कि मेरी मोटाई, सेठाई लोगो को कैसे बताऊँ तो फिर आप कहाँ भगवान के चरणो मे पहुँचेगे ?

- यदि सामायिक के स्वरूप के सबध मे आप उपासकदशाग का थोड़ा सा चिन्तन-मनन करेगे तो आपको भलीभाति ज्ञात हो जायेगा कि पूर्व काल में सामायिक की साधना करते समय पूर्णत सादगी और निष्परिग्रहत्व को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है। 'उपासकदशाग' मे स्पष्ट उल्लेख है कि कुडकोलिक श्रावक ने अशोक वाटिका मे सामायिक के समय मूदडी भी उतार कर अलग रख दी। चद्दर और मूदडी उतार कर उसने सामायिक मे ध्यान लगाया। वस्तुत सामायिक में सोना, चादी, हीरे, जवाहरात के आभूषणों का त्याग होता है। परिग्रह का त्याग होता है। मुनिवृत्ति का रूप होता है। ऐसी सामायिक ही साधक को अभीष्ट होनी चाहिए।
- विषम भावो से समभावो मे आना सामायिक का लक्ष्य है। जिस प्रकार कुश्ती, दगल से शारीरिक बल बढ़ता है उसी प्रकार सामायिक से मानसिक बल मे वृद्धि होती है। ज्ञान के साथ आचरण और आचरण के साथ ज्ञान होना आवश्यक है। सामायिक मुख्यत आचार-प्रधान साधना है। पर यह आचार क्रियाकाण्ड बनकर न रह जाये, अत. इसके साथ ज्ञान अर्थात् स्वाध्याय का जुड़ना आवश्यक है। आप इस बात का ध्यान करे कि आपकी सामायिक दस्तूर की सामायिक न होकर साधना की सामायिक हो। सामायिक को तेजस्वी बनाने के लिये उसमे स्वाध्याय और ध्यान-साधना की आवश्यकता है और स्वाध्याय को जीवनस्पर्शी बनाने के लिये सामायिक का अभ्यास आवश्यक है।
- सामायिक करते समय तुम्हारा मन बाहर चला जाय तो यह समझो कि जिस चीज पर मन गया है वह भौतिक चीज मेरी नही है, उसमे ममता मत रखो।
- मन के बाहर जाने का सबसे बड़ा कारण राग है इसलिये उसको कम करो। राग कम करने का उपाय यह है कि बाहरी पदार्थों के साथ जो तुम्हारा अपनापन है, लगाव है, उसको अपना समझना छोड़ दो। यह समझ लो कि जो मेरा है वह मेरे पास है। जो दुनिया मे है, बाहर है, वह मेरा नही है।
- दूसरा बाहरी उपाय यह बताया कि सुकुमारता-कोमलता का परित्याग करो, शरीर की आतापना बढ़ाओ ताकि दु:ख सहन करने का अभ्यास कर सको। अभ्यास रहेगा तो आपत्तियो का तथा कठिनाइयो का कभी मुकाबला करना पड़े तो मन मे खेद नही होगा।
- 'कामे कमाहि कमिय खु दुक्ख।' प्रभु ने कहा कि ए साधक ! यदि मन को बाहर जाने से रोकना चाहता है तो अपनी कामना त्याग कर, कामना को वश में कर। जितनी-जितनी इच्छाएँ बढ़ेंगी उतना ही ज्यादा दु.ख भोगना पड़ेगा। इच्छाएँ बढ़ाई, तो मन साधना से बाहर जायेगा। अत. प्रभु ने कहा कि दु:ख दूर करने की कुञ्जी है - कामना दूर करना।
- सामायिक जैसी साधना को निर्मल और निर्दोष बनाकर आगे बढ़ाना है तो उसके लिये प्रभु ने कहा कि विकथा

का वर्जन करके चलो क्योकि जो आध्यात्मिक मार्ग की ओर आगे बढ़ाने की बजाय आध्यात्मिक मार्ग से पीछे मोड़ती है उस कथा का नाम विकथा है। मानव निरन्तर ऐसी कथाएँ सुनता रहता है जो राग बढ़ाने वाली है, भोग बढ़ाने वाली है, क्रोध बढ़ाने वाली है। परिणाम स्वरूप उसके मन मे राग-द्वेष की वृद्धि होती है। इसलिये प्रभु ने कहा कि जो आत्मभाव की ओर ले जाने वाली नही है, आत्मभाव से मोड़ने वाली है, ऐसी कथाओ से दूर रहो।

- आत्मा मे जब तक शुद्ध दृष्टि उत्पन्न नही होती , शुद्ध आत्मकल्याण की कामना नही जागती और मन लौकिक एषणाओं से ऊपर नही उठ जाता, तब तक शुद्ध सामायिक की प्राप्ति नही होती। अतएव लौकिक कामना से प्रेरित होकर सामायिक का अनुष्ठान न किया जाय, वरन् कर्मबन्ध से बचने के लिए, सवर की प्राप्ति के लिए सामायिक का आराधन करना चाहिये। काम, राग और लोभ के झोको से साधना का दीप मन्द हो जाता है और कभी-कभी बुझ भी जाता है। अतएव आगमोक्त विधि से उत्कृष्ट प्रेम के साथ सामायिक करनी चाहिये।
- जो साधक पूर्ण सयम धारण कर तीन करण तीन योग से सामायिक नही कर पाता ऐसे गृहस्थ को आत्महितार्थ दो करण तीन योग से आगार सामायिक अवश्य करना चाहिए। क्योकि वह भी विशिष्ट फल की साधक है, जैसा कि निर्युक्ति मे कहा है -

  सामाइयम्मि उ कए, समणो इव सावओ हवइ
  एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा।

  अर्थात् सामायिक करने पर श्रावक श्रमण-साधु की तरह होता है। वह अल्पकाल के लिये पापो का त्याग करके भी श्रमण जीवन के लिये लालायित रहता है। इसलिये गृहस्थ को समय-समय पर सामायिक साधना करना चाहिये।
- सामायिक करने का एक लाभ यह भी है कि गृहस्थ ससार के विविध प्रपचो मे विषय-कषाय और निद्रा-विकथा आदि मे निरन्तर पाप सचय करता रहता है। अत सामायिक के द्वारा घड़ी भर उनसे बचकर आत्म-शान्ति का अनुभव कर सकता है। क्योकि सामायिक-साधना से आत्मा मध्यस्थ होती है। कहा भी है-

  जीवो पमायबहुलो बहुसो वि य बहुविहेसु अत्थेसु।
  एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा॥
- सामायिक-साधना वह शक्ति है जो व्यक्ति मे ही नही, समाज और देश मे बिजली पैदा कर सकती है। व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन मे यह साधना आनी चाहिए, जिससे उसका व्यापक प्रभाव अनुभव किया जा सके।
- अगर आप अपने किसी एक पड़ौसी की भावना मे परिवर्तित ला देते है और उसके जीवन को पवित्रता की ओर प्रेरित करते है, तो समझ लीजिए कि आपने समाज के एक अग को सुधार दिया है। प्रत्येक व्यक्ति यदि इसी प्रकार सुधार के कार्य मे लग जाय तो समाज का कायापलट होते देर न लगे।

■ स्वाध्याय

- 'स्वाध्याय' शब्द का हम पद विभाग करेगे तो इसमे दो शब्द पायेगे। एक तो 'स्व' और दूसरा 'अध्याय'। इस पद विभाग का दो प्रकार से अर्थ किया जाता है। एक तो 'स्वस्य अध्ययनम्' और दूसरा 'स्वेन अध्ययनम्'। 'स्वस्य अध्ययनम्' का अर्थ है—अपने आपका अध्ययन करना, यह स्वाध्याय का एक अर्थ है। 'स्वेन अध्ययनम्' का अर्थ है, अपने द्वारा अध्ययन करना अर्थात् स्वयं द्वारा स्वय का अध्ययन करना, अपने द्वारा अपने आपको

पढ़ना। यह स्वाध्याय का दूसरा अर्थ हुआ। स्वाध्याय का एक और तीसरा अर्थ मैं आपके समक्ष रखता हूँ। वह तीसरा अर्थ करते समय 'स्वाध्याय' पद का पद-विभाग इस प्रकार करना पड़ेगा—'सु', 'आड्' और 'अध्याय'। 'सु' का मतलब है सुष्ठु अर्थात् अच्छे ज्ञान का, 'आड्' का अर्थ है मर्यादापूर्वक और 'अध्याय' का अर्थ है, पढ़ना। तो इन तीन शब्दों से बने स्वाध्याय पद का अर्थ हुआ अच्छे ज्ञान का मर्यादापूर्वक ग्रहण करना, सु अर्थात् अच्छा ज्ञान इसलिए कहा है कि ज्ञान मे दो भेद है, एक तो मिथ्याश्रुत अर्थात् मिथ्या ज्ञान और दूसरा सम्यक्त्व अर्थात् सम्यग्ज्ञान। सम्यग्ज्ञान मे केवल रोटी-रोजी कमाने का शिक्षण ही नही, बल्कि जीवन को बनाने का भी यथार्थ शिक्षण होता है।

- यदि आप चाहते हैं कि समय-समय पर दिल मे आने वाली तपन, काम-क्रोध, अहकार की उत्तेजना आपको सता नही सके। यदि आप चाहते हैं कि हमारा परिवार सतुष्ट रहे, हम संतुष्ट रहे, सुखी रहे, यदि आप ऐसा संसार बनाना चाहते है जिसमे शान्ति, सतोष, सौहार्द, सहिष्णुता और सद्भाव का साम्राज्य हो, कलह, अशान्ति और अविश्वास का लेशमात्र न हो तो आपको अपने बच्चो को 'स्व' का अध्ययन कराना पडेगा, जिस 'स्व' को समझ लेने के पश्चात् सारी दुनिया फीकी प्रतीत होगी। इस 'स्व' तत्त्व को पा लेने के बाद आत्मा स्वस्थ, शान्त और निर्मल होगी।
- अगर ज्ञान प्राप्त करना है तो वह केवल शब्द से नही होगा। पोथी पढ़कर या शब्द रटकर कोई अपने को पर्याप्त मान ले तो वह सम्यग्ज्ञानी नही होगा। सम्यग्ज्ञान प्राप्त करना है तो स्वाध्याय करो। स्वाध्याय से अपने आपको पढ़ो, अपने आप को सोचो। हमारे सामने हजारो समस्याए हो, पर उन सबका समाधान मैने स्वाध्याय और सामायिक मे ही पाया। समाज सुधार की जितनी बाते हैं वे सब इन्ही दो मे निहित है। समाज मे झगड़े क्यो होते है ? सम्प्रदाय मे झगड़े क्यो होते है ? इनके पीछे भी मूल कारण यही है कि आज समाज मे स्वाध्याय की प्रवृत्ति नही है। इन महाराज के यहाँ जाना और दूसरो के नही जाना, इस झगड़े का मूल अविद्या या अज्ञान है। उसे भी स्वाध्याय से समाप्त किया जा सकता है।
- आज विज्ञान के युग मे ससार मे विद्या बढ़ी है। उसके साथ ही साथ धर्म का ज्ञान और क्षेत्र भी बढ़ना चाहिए। पढ़ने वाले लड़के-लड़कियो की सख्या बढ़ गई, लेकिन इसके साथ ही धर्म-ज्ञान या ज्ञान-साधना की पूर्ण व्यवस्था अपेक्षित है। हर युवक इस बात का सकल्प करे-'स्वाध्याय अवश्य करूँगा। चाहे घर मे समय मिले, न मिले पर, जब तक स्वाध्याय नही करूँगा तब तक अन्न, जल नही लूँगा।' यदि स्वाध्याय को समाज धर्म बना ले तो काम सरलता से हो सकता है।
- आप में शक्ति नही हो, समझने का सामर्थ्य नही हो, ऐसी बात मै नही मानता। आप मे शक्ति है, सामर्थ्य है, हौंसला है, लेकिन आप अपनी शक्ति का उपयोग जैसा धधे में करते हैं, वैसा धर्म-ध्यान या स्वाध्याय मे नही करते। यदि दो-चार बार विलायत घूमना हो जाए तो विदेशी भाषा के शब्द ध्यान मे रखोगे। जैसी उधर आपकी तवज्जह है, ऐसी यदि इधर हो जाए तो बेड़ा पार हो सकता है।
- जिस प्रकार व्यावहारिक ज्ञान के लिए स्वयं अध्ययन करने की जरूरत है, वैसी ही जरूरत आध्यात्मिक ज्ञान के लिए भी है। सीधा सा उदाहरण है। व्याख्यान हो रहा है, तब तक तो आपने हमारी बात सुनी, लेकिन घर जाने के बाद अपने आप पढ़ने का रास्ता किसी ने नहीं बनाया तो ज्ञान के प्रकाश से वंचित रह जायेगे। जब तक स्वयं पढ़ने का अभ्यास नही करेंगे, तब तक ज्ञान का प्रकाश कैसे आयेगा? इसका यह मतलब नही है कि

आपको या आपके बच्चो को पढ़ने का समय नही मिलता, समय मिलता है, लेकिन कमी इस बात की है कि समय का सदुपयोग नही करते। आदमी को खाने के लिए समय मिलता है, कमाई के लिए अथवा आराम के लिए समय मिलता है, व्यवहार के लिए समय मिलता है, तो फिर स्वाध्याय के लिए समय क्यो नही मिलता?

- जब तक श्रद्धा का युग था, भक्ति का युग था, विश्वास का युग था, तब तक तो आप नही पढ़ते तो भी कोई हर्ज नही था। लेकिन अब श्रद्धा का युग चला गया, भक्ति का युग नही रहा। अब बुद्धिवाद का युग, विज्ञान का युग आ गया। आपके पिताजी, दादाजी, माताजी मे धर्म के प्रति कितनी श्रद्धा थी और आज आप मे कितनी श्रद्धा है? उनको देखकर आपके मन में भी आता होगा कि माताजी बड़ी धर्मात्मा है, रोज सामायिक करती हैं, धर्मध्यान करती है, उनकी तरह हमे भी करना चाहिए। इस चीज़ को आपका दिमाग क्या मजूर कर लेता है? आज के दिमाग को ज्ञान चाहिए। यह बिना स्वाध्याय के नही मिल सकता। इसलिए यदि अपनी भावी पीढ़ी को और समाज को धर्म के रास्ते पर लाना है, तेजस्वी बनाना है तो स्वाध्याय का घर-घर मे व्यापक प्रचार होना चाहिए।
- शृगाररस से सम्बन्धित उपन्यास, जासूसी-उपन्यास, हास्यरस के उपन्यास नही पढ़ने चाहिए। इस तरह के निकम्मे उपन्यास पढ़ने से दिमाग पर उलटा असर पड़ता है। समय और शक्ति का भी अपव्यय होता है। उपन्यास पढ़कर किसी मे श्रद्धा भाव आया हो या विनय भाव आया हो, ऐसा नमूना देखने को नही मिलता। उपन्यास के बारे मे आप विचार करेगे तो इसमे नफा कम है और टोटा ज्यादा है, यह मानकर चलना चाहिए। इसके बजाय यदि आप आध्यात्मिक साहित्य पढ़ेगे, धार्मिक ग्रन्थ पढेगे, सद्ग्रन्थ पढ़ेगे, अथवा महापुरुषो के जीवन चरित्र पढ़ेगे तो उनसे केवल मुनाफा ही मुनाफा होगा और घाटा कुछ नही होगा।
- जर्मन विद्वान और अमेरिकन विद्वान जैन धर्म के ग्रन्थ पढ़ते है। नही समझ मे आवे तो भी कोशिश करते है। वे जैन धर्म के आध्यात्मिक ग्रन्थों का अनुवाद करवा कर भी उनको पढ़ने मे अपना समय देते है। इसलिए कि वे उनसे ज्ञान प्राप्त करने की उत्कण्ठा रखते है। आश्चर्य तो इस बात का है कि आप घर की चीज़ की कीमत नही करते हैं, उसका मूल्य नही समझते है। बाहर के विद्वान तो लदन मे ऋषभ लाइब्रेरी खोल रहे है, क्योकि वे जैन धर्म की कद्र करते है। हमारे पुराने ग्रन्थो का सग्रह कर रहे हैं। वे लोग यह समझते हैं कि भारत मे जैन साहित्य और बौद्ध साहित्य का अमूल्य खजाना है, जो उनके वहाँ नही मिलता। उनके वहाँ ज्ञान का उदय हुआ है, जबकि भारत मे ज्ञान का उदय और विकास दोनो हुए है। इस तरह से वे लोग हमारे साहित्य की उपयोगिता समझते हैं। लेकिन हम अपने घर में निधि होते हुए भी यदि उसकी उपयोगिता नही समझ पायेगे तो ध्यान रखने की बात है कि विदेशियो के सम्मुख अपने को गर्दन नीची करनी पड़ेगी। मान लीजिए कि आप में से कोई व्यवसाय के कारण विलायत चले गये या घूमने के लिए अमेरिका अथवा जर्मनी चले गये। आप विदेशी से मिले, उनसे हाथ मिलाया तथा किसी तरह से उनको मालूम हो गया कि आप जैन हैं और वे आप से पूछ बैठे कि जैन धर्म मे क्या खूबी है? साधना क्या है? तत्त्व क्या है? इन सबके बारे मे वे आपसे १५ मिनट के लिए जानकारी चाहेगे तो क्या आप उनको जानकारी दे सकेगे? यदि आप स्वय जानकारी नही रखते तो आपको गर्दन नीची करनी पड़ेगी।
- सत्संग और स्वाध्याय जीवन को ऊँचा उठाते है। आप जीवन के परम तत्त्व को समझ कर ज्ञान और स्वाध्याय का महत्त्व घर-घर मे, मोहल्ले-मोहल्ले मे, गाँव-गाँव मे फैलाकर जन-मन को जागृत करेंगे तो अज्ञान का अंधकार

दूर होगा।

- अपने धार्मिक ज्ञान को, सैद्धान्तिक ज्ञान को समृद्ध बनाये रखने के लिए हमारे सम्यक्‌दृष्टि श्रावक-श्राविकाओ का कर्त्तव्य हो जाता है कि वे नियमित स्वाध्याय द्वारा अपने आप में ज्ञान-बल जगावे। ज्ञान-बल निर्मल होगा तो दर्शन और चारित्र बल अधिक मजबूती के साथ बढ़ेगा।
- जब मन में लौ लग जाती है तो स्वयं जगने वाला भी अधेरे मे नही रहता और दूसरो को भी अधेरे से उजाले मे लाने का प्रयास करता है। दीपक दूसरों के लिए भी उजाला करता है और स्वयं को भी प्रकाशित करता है। एक दीपक को देखने के लिए दूसरा दीपक जलाने की आवश्यकता नही पड़ती। जिस प्रकार दीपक स्वय के लिए और दूसरो के लिए प्रकाश करता है, उसी प्रकार आपका ज्ञान दीपक आपके भीतर जलेगा तो आपको उद्‌बुद्ध करता हुआ आपके अन्तर को भी प्रकाशित करेगा और अन्य जीवो को भी प्रकाशित करेगा।
- जीवन-निर्वाह की शिक्षा पाया हुआ आज का पढ़ा-लिखा युवक बिगड़े हुए नल को ठीक कर सकता है, बिजली में कही कोई खराबी हो गई हो तो उस बिगड़े हुए स्विच आदि को ठीक कर सकता है, मशीन मे कोई पुर्जा बिगड़ गया हो तो उसको ठीक बैठा सकता है, पर अपना बिगड़ा दिमाग ठीक नही कर सकता। दो भाइयो के बीच में झगड़ा हो गया, उनका जो मधुर सम्बध था वह सम्बध बिगड़ गया, तो उस बिगड़े हुए सम्बध को वह नही सुधार सकता। पिता और पुत्र के बीच किसी बात को लेकर नाराजगी हो गई, पिता से रुपया पैसा अथवा अपना हिस्सा मागने पर माग पूरी नही हुई तो उस समय मन को कैसे सम्हालना, दिमाग के बिगड़े हुए स्नायुओ को कैसे ठीक करना, यह वह नही जानता।
- अध्यापक और बालक इस बात को ध्यान मे रखे कि केवल पाठ रटकर ही सतोष नही करना। इन बच्चो के मन मे, मस्तिष्क मे, हृदय में इन पाठो के भावों को भरना है।
- क्रोध, मान, माया, लोभ की ज्वालाएँ उठ रही हैं। वे दिल-दिमाग को उत्तप्त कर रही हैं। यदि ज्ञान के जलाशय मे गोता लगाया जाए, तो इनको हम शान्त कर सकते हैं। दूसरा लाभ इससे यह है कि हमारे मन का अज्ञान दूर होगा, ज्ञान की कुछ उपलब्धि होगी, कुछ जानकारी होगी। तीसरा लाभ है प्राणी का जो तृष्णा का तूफान है, वह तूफान भी जरा हल्का होगा और तृष्णा का तूफान हल्का हुआ तो व्यक्ति मे जो अशान्ति है, घट-बढ़ है, मन मे बेचैनी है, आकुलता, व्याकुलता है वह दूर होगी।
- स्वाध्याय से हमारा ज्ञान और दर्शन निर्मल भी होता है और दृढ़ भी बनता है और जब हमारा ज्ञान एव दर्शन शुद्ध होगा, निर्मल होगा तो चारित्र मे भी आगे बढ़ना होता रहेगा और अन्ततोगत्वा हम कर्मो को काटकर मुक्ति के अधिकारी बन जायेगे।
- स्थानाग सूत्र के पांचवे ठाणे (स्थान) सूत्र ४६८ मे प्रभु ने फरमाया- "पंचहि ठाणेहिं सुत्त वाएज्जा" अर्थात् पॉच कारणों से सूत्र का वाचन करें। बहुत गहराई से चिन्तन सामने रखा-"तं जहां (१) सगहट्ठयाए (२) उवग्गहणट्ठयाए (३) णिज्जरणट्ठयाए (४) सुत्ते वा मे पज्जवयाए भविस्सइ (५) सुत्तस्स वा अवोच्छित्तिणयट्ठाए।" अर्थात् पॉच कारणों से गुरु शिष्य को वाचना देते हैं- (१) संग्रह—सूत्र का ज्ञान कराने के लिए, (२) उपग्रह—उपकार करने के लिए (३) निर्जरा के लिए (४) सूत्रज्ञान को दृढ़ करने के लिए (५) सूत्र का विच्छेद न होने देने के लिए।
- इतिहास बतलाता है कि हमारा विशाल श्रुतज्ञान विच्छिन्न क्यों हुआ। शास्त्र का वाचन, पठन और परावर्तन होता रहता है तो श्रुतहानि नहीं होती। दीर्घकालीन दुष्काल के समय जब दुर्लभ भिक्षा की गवेषणा मे श्रमणो का

श्रुत का वाचन तथा परावर्तन छूट गया तब श्रुतज्ञान की हानि हुई। आर्य भद्रबाहु के पश्चात् हमारा बहुत विशाल श्रुतज्ञान इतना क्षीण हो गया कि अन्तिम वाचना के समय तो ११ अगसूत्र भी पूर्ण रूप मे नही रह पाये। इसका कारण शास्त्र की वाचना और परावर्तन का अभाव ही तो रहा है। विपाकसूत्र ग्यारहवां अंग शास्त्र जो काफी बड़ा था, वह सबसे छोटा रह गया। इस श्रुतहानि का कारण शास्त्र की वाचना का अल्प होना ही है।

- स्वाध्याय पॉच प्रकार के हैं, जैसे- (१) वाचना, (२) प्रतिपृच्छा, (३) परिवर्तना, (४) अनुप्रेक्षा और (५) धर्मकथा। सर्वप्रथम वाचना से ही स्वाध्याय का प्रारम्भ होता है। गुरुदेव से स्वय शास्त्र का पाठ लेना, सुनना अथवा पढ़ना वाचना है। वाचना के पश्चात् शंकास्पद स्थल या भूले हुए पाठ को फिर पूछना प्रतिपृच्छा रूप स्वाध्याय है। तीसरा, पढ़े हुए पाठ का पुनरावर्तन करना परिवर्तना स्वाध्याय है। चौथा है अनुप्रेक्षा। इसमे श्रुत या पठित तत्त्व का चिन्तन करना—गहराई से विचार करना अनुप्रेक्षा है। चिन्तन के पश्चात् किसी दूसरे को उपदेश देना या समझाना धर्मकथा रूप स्वाध्याय है।
- दशवैकालिक सूत्र के नवम अध्ययन के चतुर्थ उद्देशक मे स्वाध्याय से होने वाले चार प्रकार के लाभो पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है—(१) शास्त्र पढ़ने से श्रुतज्ञान का अपूर्व लाभ होगा, इसलिए मुझे शास्त्र पढ़ना चाहिए। (२) चचल चित्त एकाग्र होगा इसलिए पढ़ना चाहिए। (३) सूत्र का अध्ययन करते समय अपने मन को स्थिर कर सकूँगा इसलिए स्वाध्याय करना चाहिए। (४) स्वय ज्ञानभाव मे स्थिर होकर दूसरे की अस्थिर आत्मा को स्थिर जमा सकूँगा, उसके सदिग्ध मन को धर्म मे स्थिर कर सकूँगा, इसलिए अध्ययन करना चाहिए। इस प्रकार श्रुत का पठन-पाठन, चिन्तन-मनन भी चित्त-समाधि का एक प्रमुख कारण है।
- स्थानाग सूत्र (५/४६८) का मूल पाठ इस प्रकार है-पचहिं ठाणेहिं सुत्त सिक्खेज्जा, त जहा-णाणट्ठयाए, दसणट्ठयाए, चरित्तट्ठयाए, वुग्गहविमोयणट्ठयाए, अहत्थे वा भावे जाणिस्सामीत्ति कट्टु। अर्थात्-पॉच कारणो से शास्त्र का शिक्षण लेना चाहिए , यथा (१) ज्ञानवृद्धि के लिए (२) दर्शन शुद्धि के लिए (३) चारित्रशुद्धि के लिए (४) विग्रह मिटाने के लिए और (५) पदार्थों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिए।
- जीवन-निर्माण एव आत्मोद्धार के लिए, समाज-निर्माण और राष्ट्र-निर्माण के लिए स्वाध्याय परमावश्यक है। वस्तुत स्वाध्याय भौतिक एव आध्यात्मिक दु:खो को समूल नष्ट करने का एक अमोघ अस्त्र है। अत· सब भाई-बहनो और स्वाध्यायियो को प्रतिदिन नियमित रूप से स्वाध्याय करना चाहिए। चित्त बड़ा चचल है। 'चित्त चित्तौड़े, मन मालवे, हियो हाड़ोती जाय' इस लोकोक्ति के अनुसार चित्त की चचलता घट-घट के अनुभव की बात है। यदि चित्त की चचलता का निरोध करके साधना करनी है तो शास्त्रों का अध्ययन करे, स्वाध्याय करें।
- स्वाध्याय के बिना त्यागी-विरागी उच्चकोटि के साधु और श्रावक नही मिल सकते। स्वाध्याय से ही चतुर्विध सघ मे ज्योति आ सकती है।
- स्वाध्याय करने से एक बड़ा फल तो यह होगा कि उससे बुद्धि निर्मल हो जाएगी। घर-घर मे जो लड़ाई-झगड़े, कलह-क्लेश और वैर-विरोध चल रहे हैं, उनकी दवा स्वाध्याय से ही मिलने वाली है। बुद्धि निर्मल होने से पाप नष्ट होगे, पुण्य का बध होगा, दया-कोमलता का उद्गम होगा एव निर्दोष दान देने की भावना जगेगी।
- स्वाध्याय केवल दूसरो के ही कल्याण हेतु, दूसरो के निर्माण हेतु या दूसरो को ही सुख प्रदान करने हेतु नहीं है, अपितु पहले वह स्व-अनुशासन, स्व- कल्याण और स्व-निर्माण की धारा लाकर फिर परहित मे, समाजहित में, विश्वहित मे साधन बनने वाली एक आतरिक प्रबल शक्ति है। स्वाध्याय 'स्व' में निहित अमोघ शक्ति है।

- स्वाध्याय से ही आप आत्म-निर्माण और समाज-निर्माण के साथ जिनशासन को समुन्नत करने में समर्थ होंगे।
- जो स्वाध्याय ज्ञानावरणीय कर्म को खपाने वाला, नष्ट करने वाला है, जिस स्वाध्याय से स्वय प्रभु महावीर तथा सभी तीर्थंकरों ने और अनन्तान्त साधको ने ज्ञानावरण एव दर्शनावरण कर्म को मूलत नष्ट करके केवलज्ञान प्राप्त किया और अनाथी मुनि जैसे सम्राट् श्रेणिक के भी पूज्य बन गये, वह स्वाध्याय हम सबके लिए परम कल्याणकारी अमोघ शक्ति है।
- अगर आप अपने आभ्यन्तर मे रही अमोघ शक्ति, जो प्रच्छन्न रूप में विद्यमान है, उसे पहचानना चाहते हैं, प्रकट करना चाहते है तो शुद्ध और एकाग्रमन से नित्यप्रति नियमित रूप से स्वाध्याय करिये। मन के कलुष को, क्लेश को मिटाने मे, समाज मे व्याप्त बुराइयो, बीमारियों को समाप्त करने मे, मानसिक दु खो को मूलत विनष्ट करने मे और आत्मा पर लगे कर्ममैल को पूर्णत ध्वस्त कर आत्मा को सच्चिदानद शुद्ध स्वरूप प्रदान करने मे सक्षम अमोघ शक्ति स्वाध्याय ही है। अत आप लोग स्व-पर कल्याणकारी स्वाध्याय का अलख जगाइये।
- स्वाध्याय के द्वारा प्रौढ़जन भी ज्ञान प्राप्त कर सकते है। इसके लिए एकाग्रता, तन्मयता और दृढ सकल्प के साथ अटूट लगन की भी आवश्यकता है। सत्प्रवृत्ति मे अनुराग और दुष्प्रवृत्ति के त्याग के लिए ज्ञान का होना अत्यावश्यक है। राम की तरह आचरण करना या रावण की तरह, यह ज्ञान के बिना नही जाना जा सकता है।
- भगवान् महावीर ने उत्तम शास्त्रो का लक्षण यह बतलाया है कि '**जं सुच्चा पडिवज्जंति तवं खंतिमहिंसय।**' जिस शास्त्र को पढ़कर या सुनकर मन को सुप्रेरणा मिले तथा क्षमा, तप, अहिंसा आदि की भावना बलवती हो वह उत्तम शास्त्र है। जैसे मुझ मे लगे काटे मेरे लिए दु.खदायक है वैसे ही दूसरो के लिए भी दु खद होगे, ऐसी भावना या उत्तम वृत्तियाँ जिसके अध्ययन से जगे, वही उत्तम शास्त्र है और ऐसे शास्त्रो के अध्ययन से ही मनुष्य मे विमल ज्ञान चमकता है और वह जीवन को उच्चतम बनाता है।
- यदि सामूहिक स्वाध्याय का रिवाज होगा, तो मन की दुर्बलता दूर भगेगी और करने योग्य शुभ कर्मों मे प्रवृत्ति एव दृढ़ता जोर पकड़ती जाएगी।
- सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक् चारित्र से ही व्यक्ति समाज, राष्ट्र और विश्व का कल्याण कर सकता है। स्वाध्याय ही इन सबका मूल है। इसके साधन से ज्ञान, दर्शन और चारित्र निर्मल रखा जा सकता है।
- धर्मशास्त्र और अच्छे ग्रन्थ, जिनसे जीवन मे तप, क्षमा और अहिसा की ज्योति जगे और योग-जीवन उत्तरोत्तर आगे बढ़े तथा भोग-जीवन घटे, उन ग्रन्थो को मर्यादा और विधि के साथ पढ़ना व पढ़ाना यही स्वाध्याय है। हाँ, इन ग्रन्थों को पढ़ने के साथ-साथ पढ़ाना भी स्वाध्याय के अर्थ मे सम्मिलित किया गया है।
- यदि प्रारम्भ में किसी शास्त्र का पठन-पाठन कर रहे है तो कुछ व्रत ग्रहण करके पठन-पाठन करना चाहिये। यदि पहले-पहल आचाराग, सूत्रकृताग अथवा अन्य किसी आगम का पठन करना हो तो किसी मुनिराज अथवा शास्त्रो के विशेषज्ञ के चरणो मे बैठ कर व्रतग्रहणपूर्वक पढ़ना प्रारम्भ करना चाहिये। यदि शास्त्र से भिन्न किसी धार्मिक पुस्तक का अध्ययन प्रारम्भ करते हैं तो इतना आदर तो होना ही चाहिये कि अर्हत् भगवान् और गुरुदेव को नमस्कार कर, विशुद्ध स्थान में बैठ कर पढ़ना प्रारम्भ करे। यदि शरीर मे बैठे रहने की शक्ति हो तो स्थिर आसन से बैठ कर ही धार्मिक पुस्तको को पढ़ना चाहिये। जिस प्रकार उपन्यासो, कथा-कहानियो की पुस्तको को सोते, उठते-बैठते, विविध आसनो से लेटे अथवा बैठे रह कर पढ़ते हैं, उस प्रकार कभी नही पढ़ना चाहिये। कुछ व्यक्ति मर्यादा की इन बातों से घबरा कर अथवा वीतराग-वाणी का महत्त्व न समझ पाने के कारण शास्त्रो का

पठन ही नही करते, जो उचित नही।

- आप सामायिक मे माला फेरिये, स्तवन पढ़िये, आपके मस्तिष्क मे उतनी तल्लीनता नही आ पायेगी, जितनी कि स्वाध्याय मे आती है। माला मे बैठने वाला व्यक्ति झुक सकता है, उसको निद्रा का झोंका आ सकता है, माला जपते-जपते आर्तध्यान भी आ सकता है। दुकान के काम-काज मे मन चला गया, किसी मुकदमे का विचार आ गया तो आपका मन उसकी ओर जा सकता है और जाप करते-करते उस विचार-प्रवाह मे बह कर प्रभु से प्रार्थना करने लग सकते है कि हे प्रभो! अब तो आपकी ही शरण है! इस प्रकार माला जपते समय आपको चिन्ता भी हो सकती है, आपकी मनोवृत्तियाँ अन्यत्र भी जा सकती है। परन्तु स्वाध्याय मे काययोग, वचनयोग और मनोयोग—इन तीनो प्रकार के योगों का उपयोग रहेगा। वस्तुत स्वाध्याय करते समय मन-मस्तिष्क, जिह्वा और ऑखो का उपयोग भी जोड़ना पड़ता है।

- स्वाध्याय करते समय आपकी ऑखे पुस्तक पर होगी। यदि थोड़ी सी भी ऑख इधर-उधर घूम गई तो पुस्तक की पक्ति छूट जायेगी और आपका स्वाध्याय का चलता हुआ क्रम टूट जायेगा। काययोग, वचनयोग और मनोयोग इन तीनो योगों के सयोजन से ही स्वाध्याय हो सकता है। इसीलिये ज्ञानियो ने कहा है कि स्वाध्याय करते समय आसन स्थिर, वाणी नियत्रित तथा मन एकाग्र होता है। मन को एकाग्र करने के लिये स्थिर आसन से बैठना अनिवार्य हो जाता है। स्वाध्याय मे मन, वचन और काय इन तीनो का योग सुसाध्य है।

- राग-द्वेष की जटिलगाठ जब तक उदय मे है और जब तक वह नही टूटती तब तक सम्यग्दर्शन नही होगा। उस रागद्वेष की गाठ के तोड़ने अथवा खोलने को ही ग्रन्थिभेद कहते है। विषय-कषायो के ग्रन्थिभेद के बिना सम्यक्त्व की प्राप्ति नही हो सकती। वस्तुत ग्रन्थिभेद का सबसे बड़ा साधन भी स्वाध्याय ही है।

- स्वाध्याय वह प्रक्रिया है, जो हमारी मनोभूमि के साथ शास्त्रीय वाणी के द्वारा अज्ञान का अन्धकार हटाने एव ज्ञान की ज्योति जगाने के लिये घर्षण का काम करती है। वह एक साधन है, जिससे हम अपने मन पर आये हुए, आत्मा पर लगे हुए अज्ञान के परदे को दूर कर सकते हैं।

- देश एव समाज के सामने दृढ़ता से खड़ा होना है, तो स्वाध्याय के सस्कार घर-घर मे प्रारभ कीजिए। अपने बच्चो मे स्वाध्याय के सस्कार डालिये। स्वाध्याय मे आप भी प्रवृत्त होइए। स्वाध्याय साधु एव श्रावक का सामान्य धर्म है। सामायिक, उपवास, यम, नियम आदि विशेष धर्म हैं, पर स्वाध्याय सामान्य धर्म है। जैसे बिना छाना पानी नही पीना, जाप करना आदि समाज-धर्म है। अगर साधु-साध्वी विराजते हैं, तो गुरु-दर्शन प्रतिदिन करना समाज धर्म है। इन्हे जैसे आपने समाज-धर्म मान रखा है, उसी तरह स्वाध्याय को भी समाज-धर्म का रूप दे। बच्चे-बूढ़े, युवक-युवतियॉ,बालक-बालिकाएँ, सभी नित्य-नियम के तौर पर इस स्वाध्याय को स्वीकार करे।

स्वाध्याय का लक्ष्य

- आप लोग स्वाध्याय के अन्तरग और बहिरग इन दोनो लक्ष्यो को लेकर चले। अन्तरग लक्ष्य स्वाध्याय का यह है कि जीवन को दूषित करने वाले मिथ्या तत्त्वो से, आत्मा को कलुषित करने वाले सभी प्रकार के कार्यो एव विचारो से अपने आपको दूर रखना तथा अन्तर्मन को शुद्ध चिन्तन, शुभ एव परम कल्याणकारी कार्यों में निरत रखना। इस आन्तरिक लक्ष्य मे प्रतिपल सजग रहने की आवश्यकता है। स्वाध्याय का बहिरग लक्ष्य है समाज-निर्माण, समाज-सेवा और शासन-सेवा का कार्य करना। इस प्रकार स्वाध्याय के दो लक्ष्य हुए—अन्तरग

लक्ष्य और बहिरंग लक्ष्य। मोटे रूप मे स्वाध्याय का तीसरा लक्ष्य बताया गया है कि समाज के हजारों बधु पर्वाधिराज पर्युषण के दिनों में धर्माराधन से वचित रहते हैं, उनके वहाँ पर्वाराधन के दिनो मे स्वाध्यायी बधुओ को भेजकर उन्हें धर्माराधन करवाना। स्वाध्याय संघ द्वारा प्रतिवर्ष अनेक स्थानों पर पर्वाराधन के दिनो मे धर्माराधन करवाने के लिए स्वाध्यायी भेजे जाते है। तथापि स्वाध्यायियों की सख्या आवश्यकता की अपेक्षा अति स्वल्प होने के कारण अनेक स्थानो के हजारो भाई इस लाभ से वचित रह जाते हैं। इस कमी को पूरा करना स्वाध्याय का तीसरा लक्ष्य है।

■ स्वाध्याय-सघ

- वर्तमान मे हमारी साधु सख्या कम पड़ रही है। त्याग-तप की तेजस्विता मद हो रही है। स्वाध्याय-सघ को खड़ा करने का उद्देश्य साधु-संघ को बल देना है। इसी दृष्टि से स्वाध्याय-सघ नामक इस सस्था का जन्म हुआ।
- हमारे गाँव तो हजारो है, समाज के सदस्यो की सख्या लाखो हैं, पर साधु-साध्वियो की सख्या इनी-गिनी रह गयी है। उन इने-गिनो मे भी, जो समाज को अपनी ओर खीच सके, ऐसे साधु-साध्वी अगुलियो के पोर पर गिनने योग्य रह गये है। तो फिर भगवान महावीर के शासन के अस्तित्व को किस प्रकार सुदृढ़ और सशक्त रखना, यह आवश्यकता हो गई। इस आवश्यकता के बढ़ते रूप मे मन को चिन्तन करने का अवसर आया कि यदि जल्दी ही इसका उपाय नही किया गया तो समाज का रक्षण नही हो सकेगा।
- आज स्वाध्याय सघ के सदस्यो की सख्या ६०० है। इससे और अधिक सख्या हो जाए तो मै केवल सख्या के बढ़ने मात्र से ही प्रसन्नता प्रकट करने वाला नही हूँ। एक ही आवाज पर, एक इगित पर शासन-सेवा मे पिल पड़ने, जुट जाने और समर्पित होने की भावना जितनी अधिक मात्रा मे होगी उतनी ही मात्रा मे मै स्वाध्यायी बधुओ का शासन हित मे अधिक योगदान मानूँगा। सख्या तो अधिकाधिक होती जाए और एक ही आवाज पर सुसगठित एव अनुशासित रूप मे शासन हित के कार्य करने की भावना नही हो तो इसे इस सस्था की सफलता नही माना जा सकता। प्रत्येक स्वाध्यायी के मन मे शासन हित व समाज सेवा के कार्यो मे सदा तत्पर रहने की भावना और लगन होना परम आवश्यक है।

■ स्वाध्यायी

- प्रत्येक स्वाध्यायी कधे से कधा मिलाकर अग्रसर होता रहेगा तो वह अपने जीवन का, समाज का और राष्ट्र का नवनिर्माण करने मे सफल होगा।
- मै किसी भी स्वाध्यायी मे कोई भी व्यसन देखना नही चाहूँगा। यदि किसी स्वाध्यायी मे कोई व्यसन होगा तो वह उसके जीवन के साथ-साथ स्वाध्याय सघ जैसी पवित्र संस्था पर भी धब्बा होगा। प्रत्येक स्वाध्यायी का जीवन निर्व्यसनी होना चाहिए, कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ने वाला होना चाहिए।
- प्रत्येक स्वाध्यायी पूर्ण निष्ठा के साथ समाज-सेवा के कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर होता रहे। कर्त्तव्यपरायणता के साथ कार्य करता रहे। अपने कार्य के फल की इच्छा नही करे। महिमा-पूजा और मान-सम्मान को विषवत् समझे। कम से कम स्वाध्याय सघ के, समाज सेवा के, जिनशासन की सेवा के अर्थात् स्व-पर कल्याण के इस पुनीत कार्य को तो किसी लौकिक फलप्राप्ति की इच्छा रखे बिना करता रहे।

- प्रत्येक स्वाध्यायी यही सोचे कि शासन-सेवा करना मेरा कर्त्तव्य है, मेरा अधिकार तो केवल निरन्तर कार्य करते रहने का ही है, न कि फल की कामना करने का। मेरा अभिनदन नही किया गया, मैंने इतना कार्य किया, फिर भी मुझे कोई सम्मान या कोई पद आदि नही मिला। ऐसे किसी भी प्रकार के फल की इच्छा करना जहर है, अतः इससे बचते रहने का हर स्वाध्यायी ध्यान रखेगा।
- षडावश्यको को अपने जीवन मे ढालकर प्रत्येक स्वाध्यायी अपने आपको चमकाते हुए दृढ़ता से चलता रहा तो कल्याण मार्ग मे आगे प्रगति कर सकेगा। उपर्युक्त बातो को चिन्तन के रूप मे आप सोचेगे, समझेगे और कार्य रूप मे परिणत्त करेगे तो आपका, समाज का और विश्व का, सभी का कल्याण होगा।
- देश और देशवासियो की रक्षा के लिए सेना की आवश्यकता होती है। यह शस्त्रधारी सेना बाह्य शत्रुओ से ही रक्षा कर सकती है, आन्तरिक शत्रुओ से नही। आन्तरिक शत्रु हैं- अनाचार, अनैतिकता, पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष, कलह आदि। इन आन्तरिक शत्रुओ से रक्षा के लिए, इन्हे दूर करने के लिए आवश्यकता है-शास्त्रधारी (श्रुतज्ञानी) सेना की।
- शास्त्रधारी सैनिक सत् शास्त्रो का अध्ययन करके, ज्ञान और चारित्र पक्ष को हृदय मे धारण करके, स्वय अपने जीवन की अनैतिकताओ को निकाल बाहर फेकते है, साथ ही आन्तरिक शत्रुओ से मुक्त होने मे अन्य लोगो के भी सहायक बनते है। इसलिए आज ससार को अनाचार, अनैतिकता, ईर्ष्या-द्वेष, कलह आदि की समाप्ति के लिए शस्त्रधारी नही, शास्त्रधारी सैनिको की आवश्यकता है।
- जो स्वाध्यायी पठन-पाठन मे प्रवेश पा चुके है, वे यह न सोचे कि वे पूरे स्वाध्यायी बन गये है। जिस तरह पहली कक्षा मे पढ़ने वाला भी विद्यार्थी कहलाता है और जब तक स्नातक नही हो जाता तब तक भी विद्यार्थी ही कहलाता है। स्नातक बन जाने के पश्चात् ही वह कहता है कि उसने पढ़ाई पूरी कर ली है। उसी प्रकार आप भी स्वाध्याय के निरन्तर अभ्यास द्वारा अज्ञान को मिटाते हुए निरन्तर आगे बढ़ते रहेगे तभी पूरे स्वाध्यायी कहला सकते हैं। इसी लक्ष्य को लेकर आपको आगे बढ़ना है।
- यह प्रमोद का विषय है कि हमारे अनेक बधु स्वाध्याय मे, स्वाध्याय शिक्षण ग्रहण करने मे प्रवृत्त हो गये हैं। जो नही हुए है जिनके मन मे जिन शासन के प्रति प्रेम है, वीतरागवाणी के प्रति श्रद्धासिक्त स्नेह है, वे स्वाध्याय मे प्रवृत हो।
- कभी-कभी ऐसा अनुभव होता है कि स्थानक मे झाड़ू स्वय स्वाध्यायी भाइयो को लगाना पड़ता है और घर-घर पर जाकर भाइयो को बुलाना पड़ता है। यदि स्वाध्यायी भाई धबरा जायेगे तो काम नही चलेगा, कही भोजन पकाने वाला नही मिलता, सार-सभाल करने वाला नही मिलता तो यह नही सोचे कि मै यहाँ पर क्या रहूँ, ऐसा सोच लिया तो सेवा नही होगी। सेवा नही होगी तो सच्चे स्वाध्यायियो के नम्बर मे पास नही होगे।
- स्वाध्यायी को किसी के दोष नही देखना है, किसी के प्रति ईर्ष्या नही जगानी है, किसी की टीका-टिप्पणी नही करनी है। अपने नियत कार्य मे निरन्तर प्रगति करते हुए निष्ठा के साथ जिनशासन और समाज की सेवा को अपना कर्त्तव्य समझ कर उत्तरोत्तर आगे बढ़ना है। कोई भी स्वाध्यायी हो, वह स्वाध्यायी आपका सहधर्मी भाई है। किसी स्वाध्याय-सघ का स्वाध्यायी हो, वह आपका स्वाध्यायी बधु है। प्रत्येक जैन आपका जैन भाई है। इसके अलावा जो दूसरे समाज के बधु है, वे भी आपके भाई है। अत किसी की आलोचना में, टीका-टिप्पणी मे पड़कर आपको अपने समय का दुरुपयोग नही करना है।

हिंसा का विरोध

- अहिंसा के प्रेमी यदि यह सोचकर चुप रह जाए कि सरकार कत्लखाना खोल रही है। उसके सामने हमारी क्या चलेगी? तो यह उचित नही है। प्रजातन्त्री सरकार प्रजा की इच्छा से चलती है और उसे चलना चाहिए । यदि प्रजा की आवाज मे बल होगा तो सरकार को अपना निर्णय बदलना पड़ेगा। कतिपय अहिंसा प्रेमियो ने कत्लखाने के खिलाफ आवाज उठाई है और वे आवाज को बुलन्द करना चाहते हैं। केन्द्र में भी विरोध हुआ है और देश के दूसरे-दूसरे हिस्सो मे भी। अहिंसा प्रेमियो का चाहे वे किसी भी धर्म, पथ या सम्प्रदाय के अनुयायी हों, कर्त्तव्य हो जाता है कि वे सगठित होकर और डटकर हिंसा का विरोध करे। उस विरोध को सरकार के कानो तक पहुचावे। सामूहिक मिलन के अवसर भी इसके लिए उपयुक्त हो सकते हैं। अगर आपकी यह आवाज कि आप देशवासी ऐसे हिंसाकृत्यो को देश के लिए अभिशाप समझते हैं, मानवता के लिए अभिशाप समझते है, बुलन्द होकर सरकार के कानो तक आवाज पहुँचायेगे तो सरकार को विवश होकर सोचना पड़ेगा।
- कुछ लोग सरकार के इस प्रकार के कृत्यो का विरोध करना 'विरुद्धरज्जाइक्कमे' अर्थात् राज्य के विरुद्ध कार्य करना समझते हैं, किन्तु यह भ्रम मात्र है। प्रजाहित की दृष्टि से राज्य ने जो मर्यादायें बनाई है, उनका अपने स्वार्थ से प्रेरित होकर अवैधानिक रूप से उल्लंघन करना दोष है। भारत-चीन सघर्ष मे भारतीय हितो के विरुद्ध चीन का साथ देना और इस प्रकार देश द्रोह करना दोष है, मगर भारतीय सविधान के अनुसार जब आपको सरकार के किसी प्रस्ताव या कानून का विरोध करने का अधिकार प्राप्त है और आप अपने उस अधिकार का सदुपयोग करते है, देश, समाज और सस्कृति की रक्षा की पवित्र भावना से विरोध करते हैं तो आप 'विरुद्धरज्जाइकम्मे' दोष के भागी नही होते। यही नही, जिस विधान को आप देश हित के, धर्म के व सस्कृति के विरुद्ध समझते हैं और जिसका विरोध करने के आप अधिकारी हैं, उसका भी अगर आप विरोध नही करते और उसे चुपचाप स्वीकार कर लेते हैं तो यह आपकी दुर्बलता है, आप के लिए कलक की बात है।